।। णमो सिद्धारा ।।

ज्ञान-महोद्धि आचार्य हेमचन्द्र-प्रणीतम्

प्राकृत-व्याक्तरगार्

[वियोदय हिन्दी न्यास्यय से हैं है वे ब्रिनीय - भाग



हि दी-व्यास्याता

स्त्रगीय, जैन दिवाकर, प्रसिद्धवक्ता, जगत्-वन्त्रंभ, प रत्न श्री १००८ श्री चौथमलजी महाराज के प्रधान शिष्य, वाल प्रक्षवारी प रत्न, श्रमण सवीय उपाष्याय नी १००८ श्री प्यारचन्द्रजी महाराज

पं. रतनलाल संघवी न्यायतीय-विशारद,

छोटो सादडी,/(राजस्यान)

प्रथम सस्करण ।

下流又本本家從一點放不野然

^{मत्य} बारह रुपुरा पचास पेंसे १२-५० वीराव्द २४६३ विकमाव्द २०२४

श्रम्भारमः नहिर् श्री नेन मवाह विवाद (जारामान)

S

.,

्रजनोदय चिट्टम

प्राकृत- व्याकरण-प्रथम-भाग पर प्राप्त कुछ एक सम्मतियो का विशिष्ट अंश

- (१) किन्तरत्न, गामीर निचारक, उपाध्याय थी अमर मुनिनी महाराज साहन रमाते हे कि —"मह हिन्टी टीका अपने कक्ष पर सर्वात्तम टीका है। प्रत्येक सूत्र का हिन्दी अय है, तो मे उदाहरण स्वरूप दिये गय समय अयोगो की विश्लेषणात्मक साधिनका है और यत्र तत्र शावस्यक शका समाधान भी है। मेरे विनार मे उक्त हिन्दो टोका के माध्यम से साधारण पाठक ो आचार्य हैमचन्द्र के प्राक्टन-स्थाकरण का सर्वांगीण अध्ययन कर सकता है।" ता १४-११-६६
- (२) प्रसिद्धवक्ता, पहित रस्न, मालव-केमरी श्री मौभाग्यनलजी महाराज साहन नखाते है कि - "आदने जो प्राकृत व्याकरण माग पहिला सरल भाषा मे तैयार किया है, वह ाकृत-भाषा के अध्यामियों के लिये बहुत उपयोगों तथा उपकारक हुआ है।" ता २३-११-६६
- (३) स्थानकतासी र्जेन छहमदागाद अपने ता ५-१६५ के अक मे प्रकाशित करता [कि -प्रा प्रन्य नु नयोजन करोने प्राक्षन भाषा ना अभ्यासिओ माटे खुबज अनुकूलता उभी करी गपी छ ते माटे प्रन्य ना योजक, सयोजक अने प्रकाशक नो सेवा सराहनीय छ '
- (४) तरुण जैन-जीधपुर अपने ता ६-७-६५ के अक मे प्राप्ति-स्वीकार करता हुआ लखता है कि — "प्राकृत-व्याकरण के ऊपर प्रियोदय हिन्दी-व्याटया नामक विस्तृत टोका की रचना करके प्राकृत-भाषा के पाठकों के हित में अत्यन्त प्रजसनीय कार्य किया है। हि दो-व्याख्या प्राष्ट्रत-माषा को समझने समझाने में पूण रूपेण सक्षप है। प्राकृत शब्दों को सावनिका का निर्माण मो पूत्र-मख्या का निर्देश करते हुए किया है, इमसे प्राकृत-व्याकरण को पढने पढाने की परिपाटो सदा के लिये मविष्य में भी सुरक्षित हो गई है।"
- (५) सुप्रसिद्ध जैन निद्वान, ग्रामीन लेखन ओर निचारन भी दलसुख माई मालब्सिया ता २३-१-६७ ने पत्र में लिखते हैं बि- 'हिंदा व्यारमा के साथ प्रकाशन जो हुना है वह प्राकृत-मापा के व्याकरण को विना किनी की सहायता के जो जिज्ञामु पटना चाहते हैं उनके लिये सहायक प्राच के रूप म अवस्य सहायक सिद्ध होगा। व्याकरण में दिय गये प्रत्येक उदाहरण की व्याकरण को दृष्टि से सिद्धि करके दिखाई है-उसने अध्येता का मार्ग सरल हो जाता है। इनका वर्षीय प्रचार हो-यही कामना है।

- (६) पाकृत-मापा के श्राद्वितीय जिद्वान प श्री नेवरदामनी अपने पोस्ट काडता २४-६ ६४ में लिखते हैं कि - 'ब्याकरण मोकनी ने मने प्रामारी क्यों हो।"
- (७) प मूर्नि श्री जिनेन्द्र निजयज्ञी लीवडी (काठियाबाड) से अपने पोग्ट काड ता. १५-१२-६६ में लिखते हैं कि - पू हमबन्द्र सूम ना ब्यावरण ने हिन्दी-विवेचन अने समजाबट्ट थी सारी रीते प्रगट करायो छे जे प्राथमिक अच्यायीआ माटे चणु उपनीगी वर्षे।"
- (二) गुनरात घुनीपरिमर्टी में व्यर्धमानधी भाषा के विशिष्ट प्रोफ्नेसर हों के व्यार जन्द्रा अपने ता १०१-६७ व ले पत्र में लिखते हैं कि 'सरल भाषा में हिन्दी अनुवाद सब के लिये उपयोगी होगा। हरे कराव्द की सिद्ध व्यानरण के सूत्रों हारा मनझाई गयी है काफी परिश्रम किया गया है। विश्व विद्यात्रययों के प्राकृत क विद्यापियों में लिये यह प्रत्य बतुन हो उपयोगी है। वसे हिंदी भाषा में यह प्रत्य अपूत है।"
- (६) प श्री श्रवासाल प्रेमचन्द्र गाह व्याक्तरण तीर्थ श्रहमदावाद अपने पत्र ता २-१-६७ में लिखते हैं कि -"आपने प्राप्टत-व्यान"ण का विस्नृत अनुवाद, उदाहरणो की व्यूतित और शब्द व बातुभो के अप वा कोश देकर ग्रांच को मुबोब बनाने का प्रयस्त किया है, जिससे विद्यार्थियो यो खूब उपयोगी बन पहणा।"
- (१०) थी मूलचन्दजी मा जैन शास्त्री-श्री महाशिरजी-राजस्थान अपने पत्र में लिगते हैं कि -''इसके उल पर प्राकृत-भाषा का जिजासु प्रपती ज्ञान-विपासा अच्छी तरह से धामस कर सकता ह । यह वहा ही उपयागी सुन्दर कार्य सपन्न हुआ है ।"
- (११) मास्टर मा श्रो शोभालालत्ती महेता उदयपुर धर्वा पास्टनाधता १९-५६६ द्वारा लियते हैं कि –' वहिला भाग जो मेरे पाम जाया, वटा सु दर एव प्रशसनीय ह । समयाने बी अच्छी रोली हैं।''—
- (१२) "सम्यादमंत" मलाना मे मुशेम्य सपादक ची रतनलालजी माह्य द्योगी अपने पत्र "सम्यादमान" के यप १७ जन २२ ना २० जबस्य ६६ में लियते हैं जि - "प्राप्टन-प्रापा के अस्यासियों के लिय यह प्रत्य बहुत लाम दायक होगा।"-
- (१३) "गुजरातु युगीवरमाटी-घहमदाबाद" ने भाषा-विनान के मर्स्याः प्रीप पर .
 "श्री ए ती भवाशी" जवने पत्र में ता '६-२-६७ वा लिखते हैं कि "प्राहत-व्याकरण लाई दी व्याख्या सहित) भरपु । ते माटे बावगी आभारी छु । बरम त श्रम सईने वर्धा मुत्री जीणवट थी। स्त्री अस्य जे जे मूत्री लागू पढ़ना होच तम नी मूति साथे बिगाइना भी समझाया है। प्राहन ना अस्माम नी कवि के लोक प्रियता श्रीष्ठी यती जाय छ त्यार् ६, प्रावर नी व्याख्या बादु व्यावन्य अस्मानी ने मूबन उर्थोगी याय तेन छ।"--

प्राक्टत-भाषा जन-भाग है। प्राक्टत का क्षत्र सस्क्टत से वही अधिव व्यापक है। धमँ, दशन, सस्क्रति, काव्य, कोष, लोक-जीवन, इतिहास, आयुर्वेद एव ज्यातिष, ग्रादि महत्व पूर्ण विषयों के ग्रनेक सहस्र प्रत्य प्राक्टत और उसकी पुत्री स्थानीय जन-भाषाओं में उपलब्द है। प्राक्टत का मूल बहुत गहुग है, ग्रतीत में बहुत दूर तक गया है। सस्क्रत में कहे जाने वाले प्राचीन वेद, उपनिषद् धादि में भी यत्र तत्र प्राक्टत-भाषा का प्रतिविद्य परिलक्षित होता है। अध्दावक विश्वामित्र, विश्वास्त्र हुरिसचंद्र, निह, शाखा आदि वर्णागम और विषयय वाले सस्क्रन-भाषा में सहस्राधिक शब्द-रूप एसे हैं जो मूलत सस्क्रत के नहीं, प्राक्टत-भाषा का उत्क्रब्ट अध्ययन किये विना भागतीय जन-जीवन एवं भारतीय-सम्क्रति की मूल धारा को ठोक तरह नहीं देवा-परखा जा सकता।

किसी भी भाषा का अध्ययन व्याकरण पर आधारित है। व्याकरण मुख है। ''मुर् व्यान् करग्गम् स्मृतम्'' व्याकरण का म्रध्ययन किय विना जो किमी भाषा का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं वे भूत में हैं। इस प्रकार का पाडित्य मूल-प्राही न होकर कैवल पत्लवप्र'ही होता है, और पत्लव ग्राही पाडित्य अपन लिये भी विडम्बना का हेतु है और दूसरो के लिये भी। यही कारण है कि भारतीय मनीपियों ने व्याकरण के अध्ययन पर अत्यिक वल दिया है। यहा व्याकरण की एक पूरी की पूरी विद्या शाखा ही वन गई है। एक व्यक्ति यदि व्याकरण साहित्य का श्रद्धयन करता चला जावे तो ग्रनुश्रुति है कि इसी में वारह वर्ष जितना दोर्घ काल लग जाय।

"द्वादश्मिर्वे पेंटपांत्रस्य श्रूयते" विष्णु शर्मा की यह सदुवित व्याकरण साहित्य की वियुत्त समृद्धि की ही परिचायिका है, अस्तु । प्राकृत-भाषा वा भी अपना स्वतन्त व्याकरण-साहित्य है, चण्ड, त्रिविकस, वरस्ति ग्राद्धि अनेक प्राचीन विद्वानों ने प्राकृत व्याकरण को रचना की हैं, राकरण प्रचारित है और उन पर अनेक टोकाएँ और उपटोकाएँ भी लिखी गई हैं परन्तु उनत्तुक्तम, हूमकरणों से नवीन मली में लिखा गया सरत, सुरम, श्रव सुरीप व्याकरण आचाय हैमचन्द्र, ते हे। श्राचार्य हैमचन्द्र, तिर्वित प्राकृत व्याक्तरण एक ही ऐसा सर्वांगोण व्याकरण है, जिससे मागधी, अर्थ मागधी, दौरसेनी, पैशाची, प्रपन्नश आदि त्राकृत की अनेकविव शाखाओं का सम्यग-परिचोध हो सकता है।

प्रस्तुत व्याकरण के प्रचावधि अनेक संस्करण प्रकाशित हुए हैं अत वे सभी ग्रपनी अपनी मूमिका पर उपयोगी भी हैं। परन्तु प्राकृत-भाषा का साधारण अध्येता भी उक्त व्याकरण से लाभ उठा समे ऐसा झा तक एक भी सम्करण प्रकाश में नहीं आया है। श्रद्धेय उपाध्याय भी प्यारच्यजी महाराज का इस आर ध्यान गया और उन्होंने बढ़े परिश्रम और अजी गभीर अध्यवन में चल पर आचाय हेमच द्र के ध्याकरण की विस्तृत हिंदी होका का निर्माण किया। यह हिन्दी होका अपने कक्ष पर मर्थोत्तम होका है। प्रयत्न सूत्र का हिंदी प्रय है, सूत्रों के उदाहरण स्वस्प दिवे गय ममज प्रयोगों की विस्त्येपणात्मक साधनिका है और यत्र नत्र ययात्रयक मका समाधान भा ह। मेरे विचार में उनत हिन्दी होका के माध्यम से माधारण पाठा भी झावाय हैमच द्र के प्रावृत-स्याकरण का मर्वागोण अध्ययन कर सकता ह।

श्रद्धय उपाध्याय त्यागचादजी महाराज से मेरा घनिष्ट परिचय ग्रहा है। एक प्रकार से व मेर प्रमिन्न स्नेही सहयोगी रहे हैं। विभिन्न विव्वरी हुई साम्प्रदायिक परम्पराओ ना विजीनीगरण में हेनु किय जाने वाल श्रमण-सध के सगठा म उनका महत्त्व पूण योगदान में कभी नहीं भून तकता हूँ। जप कभी कोई समस्या उलझो, उ होंने अपने को भूना पर भी सवाचान का मार्ग प्रस्तुन किया। व अत्याद मृदु, शात्त, एव उदार प्रकृति के मन्त थ। उपाध्याय श्रीजो को साहित्यिक अभिग्धि मो कृद्ध कम नहीं थी। साहित्यिक क्षेत्र में उनको अनेर कृतियाँ बाज भी सर्व-माधारण जिज्ञासुओ के हाथों में देखो जाती ह। उसी साहित्य-विमाण की स्वर्ण-श्राला में आचार्य शी हैमक्ष ये प्रस्तुत प्रान्न-स्थावरण का सपादन वस्तुत मुक्त-मणि-कल्प है।

उपाध्याय श्रीजी के सुयोग्य शिष्य-गरन प श्री उद्य मुनिनी सहनत धन्यवाजह ह कि जो स्वर्गीय गुष्टेव को प्रशन्त रचनाओं को जन हिताये प्रकास में ना रहे हु। यह एर प्रकार का गुष्ट-श्रुण है जिसको श्रद्धा-प्रवण भनीपी शिष्य ही बयीचित रूप से ब्रदा करते हैं एवं युगयुगातर के लिय सुचिर यशस्या बनते हु।

जैन-भवन लोहा मंडी त्रागरा १५-११-१६६६

उपाष्पाय-भमर गुनि

सम्पादकीय

≫□≪

आठ वय तक मतत परिश्रम काने पर आज ग्रन्य की परिपूणता हो रही है, यह सफल अनुभव कर हृदय प्रसन्ता के मागर म हिलोरें ले रहा है।

ग्रंच कैसा वन सना है ? इसका अनुमान तो जाता, विद्वान, अध्येता आर प्राकृत-भाषाप्रमी मज्जन-तृत्व ही कर सकेंगे। प्रयम भाग के प्रति जो श्रनुराग व्यक्त किया गया है, उनका
सामान्य परिचय "स्थाली-पुलारु न्या्य" के समान इस द्वितीय भाग में सयोजित एवं उद्घृत
सम्मतियो में किया जा सकेगा।

प्रात स्मरणीय, उपाध्याय थ्रो प्यारच दको महाराज सा के प्रति, विद्वान् मृनिराज श्री उदय मुनिजी महाराज सा के प्रति और मेरे प्रति जो कृषा-वृष्टि और विवेक प्ण अनुराग विद्वान मुनिराजो ने, पढित भाषा-दास्त्रियों ने और समाचार-पत्र के सपादकों ने प्रकट किया है, एतदय में अपनी कृतजता प्रकट करता हूँ।

थो जैन दिवांकर दिव्य ज्योति कार्यालय व्यावर के सचालक वाधुओं को भी म बार बार धन्यवाद देता हूँ, जिहोने इसको प्रकालित करने का सब भार धैये-पूर्वक अपने ऊत्तर यहण किया है।

मित्रवर प श्री वय तीलालजो सा नलवायाको भी श्रोकानेक धन्यवाद है, जिन्होने कि ग्रन्थ को छापने में और पूफ देखने मे श्राना अमून्य सहयोग प्रदान किया है।

ग्र य में रही हुई त्रुटिंगो के लिये मे समा-प्रार्थी हूँ । मुझ विश्वास है कि मेरे इस ग्रन्य का पठन-पाठन ज्यो ज्यो काल व्यतीत होता जायगा त्यो त्यो अधिकाधिक होता रहेगा ।

पुनश्च —क्रवालु अध्यता पाठक वग प्रूफ-सवधी अपुद्धिया को सुधार कर पढने की कृषा करें।

श्रहमदाबाद ता २७-१-६७ विनीत रतनलाल संघवी छोटो सादडी (राजस्थान)

सयोजक का वक्तह्य



प्राष्टत-साहित्य के प्रेमियों तथा पाठकों के हाथ में प्राकृत-स्थाकरण का यह दूसरा मा समर्थित करने हुए परम आनन्द का अनुभव हो रहा है।

प्रात बदनीय पुरुषपाद, गुरुदेव, उपाध्याय श्री १००८ श्री प्यारव दशी महारात्र श्री र शुभ हपा से सन् १६५६ के रायचूर चानुर्माम में प्रारभ किया हुआ यह बृहन्-हाय अब पूगनव सम्बन्न होकर पूर्णता को प्राप्त हुआ है, यह महान् सतोव का विषय है।

प्रयम भाग में प्रथम पाद और द्वितीय पाद का समावेश हुआ। है और द्वितीय भाग भ तृतीय पाद एव चतुथ पाद ये रूप में ग्रंथ को समाध्ति हुई है।

प्रथम भाग मे रचित हिन्दी-न्याहया कं प्रति श्रद्धेय मुनिराजों ने, प्राष्ट्रन-भाषा के विद्वा महानुभावा ने, अध्येता सत-सतियाँजों महाराज साहर ने तथा प्रमो पाठका ने जैमी आदर-भागना और प्रशस्त सम्मितियाँ प्रकट की है, जनक लिये मुझ हुप का अनुभव हुआ है, माग हो यह न्युष्टि भी हुई है कि यह व्याग्यातमक जनुवाद अपने ग्राप म पूर्णतया ग्राय व्याग्यातमक जन्म ग्राय माम जन्म ग्राय व्याग्यातमक जन्म ग्राय व्याग्यातमक जन्म ग्राय प्राय व्याग्यातमक जन्म ग्राय व्याग्याप्य व्याग्याप्य व्याग्य व्याग्

थद्धेय कवि-रत्न, उपाध्याय थी अमरचन्दजो महाराज साहव ने 'ग्राप्नृत्'' प रूप में जो भूमिका लिखने को रूपा की है, उसके लिये में आभारी हैं।

आदा है कि जान-प्रेमी पाठक याचे इस परिश्वम को ध्यान में रखते हुए धमका सदुायोग करेंगे और प्राप्टन-भाषा के निष्णात पडित बनने मे परिश्वम-चील बन रहेंग । यही णुमण्या ।

भारतीय गणतत्र दित्रम सन् १६६७ नगर सेठ का वडा अहमदाबाद

विवाद— उदयमुनि-(मिद्धान्त-शास्त्री)

प्रकाशक का निवेदन

≫ॎ⊜€€

जैन दिवाकर, प्रसिद्ध वक्ता, स्वर्गीय, गुक्देव श्री १००८ श्री चौथमलजी महाराज सा की स्मृति में स्थापित की हुई इस सम्या द्वारा प्रात स्मरणीय उपाध्याय श्री प्यारचन्दजी महाराज सा द्वारा कृत प्राकृत-व्याकरण की हिंदी व्याख्या के दो भाग प्रकाशित किये जाने पर सस्या को परम प्रसन्नता अनुभव हो रही है।

प्रकाशन काय में काफ़ी व्यय माने पर भी ग्रन्य के इस रूप मे परिपूर्ण रीति से पाठकों के हाथ में पहुँचने पर सब परिश्रम और सब व्यय सफल ही कहा जायगा, क्योंकि प्राकृत-भाषा के अव्ययन करने में यह ग्रन्थ पूज रीत्या सहायक सिद्ध होगा, इसमें दो मत नहीं हो सकते हैं।

पडित श्री उदय-मुनिजी महाराज सा सिद्धान्त-शास्त्री का सयोजक के रूप में जो सहयोग प्राप्त हुआ है, उसके लिए सस्या श्रुपना हादिक आभार प्रकट करती है।

सहायता दाताओं ने और अग्निम रूप से बनने वाले ग्राहकों ने जो प्राकृत-भाषा के प्रति ग्रपना सुन्दर ग्रनुराग प्रदक्षित किया है, उसके लिये भी सस्या श्रपनी कृतज्ञता प्रकट करती है।

सपादक के रूप में प्रन्य की जो साकार स्थिति प श्री रतनलालको स्घवी-स्यायतीर्थ— छोटी सादडी वालों ने प्रदान की है और इसके लिये जो गहरा परिश्रम किया है, उसके लिये भी हम अपना धन्ययाद प्रदान करते हैं।

साहित्य रतन, कविगाज श्री केमलाचन्द्रजी महाराज सा , सेवाभावी श्री मन्नालालाजी महाराज सा , सिद्धान्त-प्रभाकर श्री मेव्राजाजी महाराज सा , सिद्धान्त-प्रभाकर श्री मेव्राजाजी महाराज सा , तपस्वा श्री पन्नालालाजी महाराज सा आदि म्राटि सत-मुनिराजो के प्रति भी सस्या अपना हार्दिक आभार प्रकट करती हैं , जिनकी कुषा से यह कार्य सप्त हो सका है ।

साथ में प्रेमो ज्ञान-अध्यासियो से यही निवेदन है कि वे इस ग्रन्थ का समृष्तित उपयोग करें और इस महान परिश्रम को सफल बनावें-यही विनत्ति है।

> समाज-सेवक ऋभ्यराज नाहर ^{मन्त्री} श्री जैन दिवाकर दिव्य ज्योति कार्यात्तय मेवाडी बाजार, ट्यावर (राजस्वान)

प्राकृत-व्याकरण

सूत्रानुसार-विंघयानुस्रमणिका

तृतीय-पादः

कर्माक	निषय	यत्राक		पृष्ट्रांक
ę	वीष्मात्मय शब्दों के संबंध में प्रत्यय-लोप-निधि	₹ ,		1
2	प्राह्मत-भाषा के अकारान्त पुल्लिग-शब्दा में सबध			
	में विभवित-बोधन-प्रत्यया का सविधान	२ से १५	1	२
ą	प्राष्ट्रत-भाषा के इकारान्त-उकारान्त पुल्लिंग राज्यो			
	में सबद्य में विभवित-बोधन प्रत्यवों का सविधा।	१६ से २४		\$2
¥	प्राकृत-भाषा के नवुसक सिग-वारे शादी के मबब भे			
	विमन्त्रि-बोधक प्रत्यों का सविधात	२५ और २६		3=
4	प्राप्टत-मापा के स्त्रीलिंग वाले आकारात, इकाराच,			
,	हकारान्त, त्रवासन्त और क्रकारात शब्दों के मत्रध			
	म विमन्ति-बोध-प्रत्ययों ना सविधान	२७ में ३६		Y
Ę	प्राकृत-भाषा के शब्दों के सत्रोधन के एक वचन में			
	प्राप्तव्य-स्प-विवेचना	३७ मे ४२		£ E
b	विवयत राज्या म विभवित-प्रापक प्रत्ययो की			
	मयोजना होने पर अत्य स्वर की सप्यत्न-पास्ति			
	ना विधान	Υž		3 €1
=	प्राष्ट्रत-भाषा के अनुवारात घट्यों के संप्रध में विभन्ति-			
	बोधन प्रत्ययों का सविधार	४४ में ४०		50
3	'राप्रपृ" सन्द के प्राप्तत-स्पापन में विमक्ति-			• /
	बोधब-प्रस्मयों वा मशियान	४९ ग ५५		٠,
१०	ह्सा नशासात संस्कृत शब्दा में प्राहृत-स्पानर में			5,03
	विभिन्ति योधक प्राप्यो का सविद्या	प्रक्षीर ४०		6 4. 5

स्त्राक रेष्टांक

निषय

क्रमांक

११	अकारान्त सर्वनामो के प्राकृत-रूपारा त में विभवित-			
• •	बोधक प्रत्ययो का सविधान		से ६१	१ २३
१२	"किम्, तद्, यद्, एतद्, और इदम्" सर्वनामो वे	ī		
• • •	प्राकृत-स्पान्तर में विभिनतबोधक-प्रत्ययो का सविधान		७१, ८० से ८६ =	१३४
१३	"इदम्" शब्द के सबध में विभिवत-बोध-प्रत्ययो का			
• •	सविघान		से ७९	१५०
१४	"ग्रदस्" शब्द के सबस में विभवित-बोधक-प्रत्ययो	r		
•	का सविधान		से ⊏९	१६८
१५	"गुष्मद्" सवनाम शब्द के प्राकृत-भाषा में आदेश-			
. ,	प्राप्ट रूप-समूह		१०४	१७५
१६	''अस्मद्" सर्वनाम शब्द के प्राकृत-भाषा में आदेश-			
	प्राप्त रूप-समूह	१०५ से	११७	१८८
१७	सख्या-वाचक शप्दो के प्राष्ट्रत-रूपान्तर में विभक्ति-			
	प्रोधक–रूपो का सविधान	११≒ से	१२३	200
१⊏	अवशिष्ट शब्द-रूपावलि के सबध में विशेष विवरण	१२४ से	१२९	२०९
१९	द्वियचनके स्थान पर प्रहुवचन की सप्राप्ति का			
	सविधान		830	२२२
२०	चतुर्थी विभक्ति के स्थान पर पष्ठी-विभक्ति की			
	सप्राप्ति का निरूपण		१३१	२२५
78	विभिन्न विभवितयो की परस्पर में न्यत्यय-प्राप्ति तथा			
	स्थानापन्नता का सविधान	१३२ से	१३७	२२७
२२	सज्ञाओं से किया-रूप बनाने की विधि का निर्देश		१३८	२३९
२३	वतमान-काल में तीनो पुरुषो के दोनो गचनो में			
	घातुओं में प्राप्तव्य प्रत्ययों का सविद्यान	१३९ मे	१४५	२८१
58	सस्कृत-धातु "अस्" की प्राकृत-भाषा में रूप-व्यवस्था	१४६ से	१४८	२५/
२५	प्रेरणायक कियापद के रूपो का सर्विधान	१४९ से	१५३	⊃६०
२६	अकारान्त धानुओं के अन्त्य "ग्र" के स्थान पर वाल-			
	वोद्यक प्रत्ययो की सप्राप्ति होने पर "जा" शयवा "इ '			
	अथवा'ए" की प्राप्ति का निरूपण	१५४ से	१५५	২ ৬६
२७				
_	प्रत्ययो का सविधान	१६० और	- • •	544
२=	भूतकाल-विधि से संविधत प्रत्ययों का गविधान	१६२ ओर	१६३	२९३

क्रमांक	विषय ,	स्त्राक	व्यापुर
२९	सम्कृत-घातु "बस्" के भूत-कालीन रूपो का सविद्रान "विधि-जारमक" विधि से स्विधित प्रत्यपो	्रहरू ।	755
३०	ापाव—आरमक ।वाध सं संदाद्यतं प्रत्यया का सविधान	,	3.4
₹१	"मविष्यत-काल" से सर्वाधत प्रत्ययो का सर्विधान	१६५	308
₹ ६ ३२	आज्ञार्यंक ग्रादि अन्धिष्ट-लकार-विधि से सर्वधित	१६६ से १७२	३०१
7 7	प्रत्ययो का सविधान	Au 7 के Au 6	205
33	अस्वया का साववान समी लकारों में, तथा इनके सभी कालों में एवं दोनों	१७३ से १७६	3 8 5
₹ ₹	वचनो मे और तीनो पुरुषो में समान रूप से प्रयुवन	F.	
	होने वाले "जज" तथा "जजा" प्रत्ययो का सविधाः	१ ७७	323
38	कुछ एक लकारों में अकारा त के सिवाय गय स्वरान्त	(00	474
₹ 6	शुरू एक लकारा में अकारा ते के सियाय गय स्थराता धातुओं के और प्रयुज्यमान प्रस्थयों के मध्य में	ŀ	
	वैकल्पिक रूप से प्राप्त होने वाले विशरण प्रत्यय रूप		
	''ज्ज" और ''ज्जा" की समोजना का सविधान	१७≂ ⁴	ः ३२=
34	"श्रियातिपत्ति" विद्यान के लिये प्राप्तव्य प्रत्ययों का	(0%	10.
47	सविधान	१७९ और १८०	333
3€	"बतमान-फूदात" अर्थक प्रश्ययो का निरूपण	१५१	३३८
२५ ३७	"स्त्रीलिंग के सद्भाव" में वर्तमान-गृदन्त अयक	141	• •
40	प्रत्ययो मी सविवेचना	१ =२	έλο
	2(44) 41 (11444)1	, - ,	•
	तृतीय-पाद्-विषय - ग्रूची-सार	(-संग्रह	
٤	सज्ञाओं और विशेषणों का विभक्ति-रूप प्रदर्शन	१ से ५७	*
२	सर्वनाम धादों की विमक्ति-स्व-विवेतना	५८ से १२४	१२३
3	रप-मब्धी विविध-विवेत्तना	१२५ में १३०	२१=
Ŷ	वागय-रचना-प्रकार-प्रदशन	१३१ से १३७	२२५
ሂ	तियापदों या विविध-सप-प्रदशा	१३ = मे १५२	246
	चतुर्थं-पाद		
	संग्रत-धानुकों में स्थान पर प्राप्टन-भाषा में बिविध		
8	दत से आदेश प्राप्त धार्त्यों का निर्माण	१ से २५९ े	₹ (?
	and the state of the state of the	Ar # 785	X35

२ मोरगेनी-भाषा-निरमण

म।गग्री-भाषा-'वयेचना

२६० से २०६

रहार में ३०२

* ? ?

663

ሄ	पैद्याची-भाषा-वर्णन	३०३ से ३२४	४६१
ሂ	चूलिका–पैशाचिक–भाषा–प्रदर्शन	३२५ से ३२=	४७१
Ę	अपभ्रश-भाषा-स्वरूप-विधान	३२९ से ४४६	४७५
ø	प्राकृत आदि भाषाओं में "न्यत्यय" विधान	४४७	५९१
5	शेप साधनिका में "सस्कृतवत्" क्। सविधान	ጸጸረ	५६२

नोट — (१) बादश प्राप्त प्राङ्गत-पानुओं की तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा मकता है, जो कि कम से इस प्रकार हैं —-

- (१) कुछ 'तत्तम" की कोटि मी है, (२) कुछ "तदभव" रूप वाली हैं और (३) कुछ 'देशज" धेणी वाली हैं।
- (२) मूल प्राकृत-भाषा का नाम 'महाराष्ट्री'' प्राष्ट्रत है और क्षेप भाषाऐं सहयोगिनी प्राकृत-मापाऐं कही जा सकती हैं।
- (३) जैन-म्रागमो की भाषा मूलत "अध-मागधी है, परन्तु इसका आधार 'महाराष्ट्री-प्राकृत" ही है।

कमाक	निपय	स्त्रांक	ābļæ
२९	सस्कृत-घातु "अस्" वे भूत-कालीन म्पो वा सविधान	, १ ६४	789
₹o	"विधि-अात्मक" विधि से मवधित प्रत्ययो	,	,
	का सविधान	, १६५	308
₹ १	"मविष्यत-काल" से सर्वाधत प्रत्ययो का सविधान	१६६ से १७२	30\$
३२	अ।जार्थक मादि अवशिष्ट-लकार-विधि से सवधित		-
	प्रत्ययो का सविधान	१७३ से १७६	785
₹₹	सभी लकारों में, तथा इनके सभी कालों मे एव दोगों		
	वचनो में और तीनो पुरुषो में समान रूप से प्रयुवन		
	होने वाले "जज" तथा "जजा" प्रत्ययो का सविधान	<i>१७७</i> '	३२३
źR	कुछ एक सकारों में अकारान्त के सिवाय शप स्वरान्त		
	धातुओं के और प्रयुज्यमान प्रत्ययों के मध्य मे		
	वैकल्पिक रूप से प्राप्त होने वाले विकरण प्रत्यय रूप		
	"जज" और "जजा" की सयोजना का सविधान	' १७⊏	375
३५	"कियातिपत्ति" विधान के लिये प्राप्तव्य प्रत्ययों का	1	-07
	संविधान	१७९ और १८०	325 325
36	"वतमान-पृदन्त" अर्थेक प्रत्ययो का निरूपण	१०१	7 \$ 5
३७	"स्प्रीलिंग के मद्भाव" में वर्तमान-प्रदात अयव		320
	प्रत्यथो की सविवेचना	१≂२	4 ***
	वृतीय-पाद-त्रिपय-द्वची-सार	(-संग्रह	
શ	सज्ञाओं और विशेषणों का विमन्ति-एप प्रदश्चन	ं १ में ५७	,
ą	सर्वेनाम शब्दों की विभक्ति-रूप-विवना	५८ से १२४	623
₹	म्प-मवधी यिविध-यिवे गा	१२५ स १३०	२१८
¥	बाख-रचना-प्रकार-प्रदशन	१वर से १३७	250
ሂ	वित्यापरों का विविध-स्प-प्रदर्शन	१३⊏ से १⊏२ ,	২३९
	चतुर्धं-पाद•		
ę	मस्यत-धातुओं के स्थान पर प्राप्टन-मापा में दिविध		
•	दग मे आदेश प्राप्त धानुओं का स्टिंग	१ में २५९	३८६
₹	शारमे ग्री-भाषा-निक्या	२६० म र्य६	*45
5	म।गती-भाषा-विवेचना	२८३ में ३०२	260

¥	पैशाची–भाषा–वर्णन	३०३ से ३२४	४६१
ሂ	चूलिका-पैशाचिक-भाषा-प्रदशन	३२५ से ३२८	४७१
Ę	अपभ्रश-भाषा-स्वरूप-विधान	३२९ से ४४६	४७५
હ	प्राकृत आदि भाषाओं में "त्यत्यय" विधान	<i>አ</i> ጸ <i>0</i>	५९१
ς.	शेष साधनिका में "सस्कृतवत्" क्। सविधान	ጸጸS	५६२

नोट — (१) आदेश प्राप्त प्राइत-घातुआ को तीन श्रेणियों में विभाजित विया जा मकता है, जो नि कम से इस प्रकार हैं —

- (१) कुछ 'तत्सम" की कोटि की है, (२) कुछ 'तद्भव" रूप वाली हैं और (३) कुछ 'देशज" खेणी वाली हैं।
- (२) मूल प्राकृत-भाषा का नाम महाराष्ट्री" प्राष्ट्रत है और शेष भाषाएँ सहयोगिनी प्राकृत-भाषाएँ कही जा सकती हैं।
- (३) जैन-म्रागमा की भाषा मूलत "अध-मागधी" है, परन्तु इसका आधार 'महाराष्ट्री-प्राकृत" ही है।

प्राञ्चत-ज्याकरण-द्वितीय-भाग के अग्रिम ग्राहकों की ज्ञुम नामावली

डम ग्रन्य के प्रकाशन में निम्नोक्त महानुमारों ने अग्निम हर में ग्राहक पनकर हमें उत्माहित किया है; तब्नुमार उनका खामार मानते हुए उनको श्रुम नामायली क्रमशः इम प्रकार हैं: —

400)	दानवीर कर्मठ स्वर्गीय शेठ श्री माणकलाल माई श्री नायालाल भाई हस्ते	
	मेठानी श्रीमती लोलाराई माटुगा-बम्बई	प्रतियाँ ४
२७५)	श्री जुगराजजी भवरलालजी श्रीश्रीमाल सिव द्रावाद	प्रतियाँ २
२५१)	थी गौतम ज्वेलस भारत, सिकडाबाद	प्रतियाँ २३
(0 لا ج	श्रीमान् रोठ हिम्मतसाल में होगी	प्रशियाँ २३
200)	म्बर्गीय गठ श्री रामजी अदरजी हम्ते श्री कपूर बहिन तथा श्री	
	नवनीतलाल माई, माटुगा-बम्बई	प्रतियाँ १८
120)	स्वर्गीय गठ श्रो चौदमलजी सा धाणोदिया रतलाम ही पुष्य समृति मे	
	श्रो रचनवाई चाणोदिया द्वारा	प्रशिषाँ १०
220)	श्री साहेयच देशी हर्गीमलेशी	प्रतियाँ १०
११०)	श्री सास्त्र दमा दातिसामची, यादिगरी,	प्रविमाँ १०
100)	हस्ते श्रीमान् पादमनजो सा डागी, गुप्त मेंट	प्रतियाँ ९
100)	श्रीमानु रूपराहतः दोपान्दजी सोणी वाला द्वारा प्राप्त, श्रीमार्	
	माण र त देजो पाराद को धन परना सौभागवनी थो पुण्यवाई है महाई	
	तले की प्राप्ता क जानहर में, ४०३ देवनरोड़ बम्बई न ४	प्रतियों 🕏
	श्रीमान् माद्यरपदजी मोतीलानजी गांघो, (हे एम गांधी) बम्बई	प्रतियों ६
(30 5	धीमान् मोहातानको धर्यपदको याजार रोड, पुनेरी	प्रतियों 🕻

१०१)	श्रीमान् गाडमलजी तेजमलजी सुराणा, मेलापुर	प्रतियाँ	9
१०१)	श्रीमान् शभुमलजी जवरचन्दजी मेहता, माटु गा वस्पई	प्रतियाँ	٩
१०१)	श्रीमान् प्राण जीवनजी राजपालजी वोहरा, माटुगा बम्बई	प्रतियाँ	٢
१०१)	श्रीमान् नथमलजी शुभकरणजी खीवसरा, अमरावती	प्रतियाँ	٩
१०१)	श्रीमान नदलालजी जीतमलजी, बीजापुर वाला	प्रतियौ	٩
१००)	श्रीमान् हस्तीमलजी रतनलालजी बोहरा, रतलाम	प्रतियाँ	٩
55)	श्रीमान् चपालालजो चेतनप्रकाशजी, हूगर वाल वॅगलोर	प्रतियाँ	C
५५)	श्रीमान् चवालालजी गनपतराजजी ढावरिया, सिक दरावाद	प्रतियाँ	ч
५५)	श्री गुप्त भेंट,	प्रतियाँ	ų
४४)	श्रीमान चदनमलजी वोहरा की धर्म-पत्नी श्रीमती ज्ञानवाई-गाव-पीकीट-		
	जिला सिक्दरावाद	प्रतियाँ	4
५५)	श्रीमान् के पत्नालालजी मिघवी, गाव-हिमायत नगर, जिला सिक दराबाद	प्रतियां	ų
५५)	श्रीमान् घर्मचन्दजी कुदनमलजो गाव शोरापुर,	प्रतियाँ	X
५५)	श्रीमान कन्हैयालालजी चपालालजी गाव शोरापुर,	प्रतिया	4
	श्रीमान् मोहनलालजी अमृतलालजी वोहरा, गाव श्रोरापुरा	प्रतियाँ	X
५५)	श्रीमान् नेमिचदजी पारसमलजी, रायचूर,	प्रतियाँ	ų

नोट --अप्रिम प्राह्नों नी ११) रुपया प्रति पुस्तक के हिताब से भेंट कक्तांशों की सेवा मे प्रतिया प्रस्तुत की जायगी।

\$ \$ Y 0)

निवेदक-प्रकाशक

ग्रन्थानुस्रम

१ प्राष्ट्रन-स्याकरण-प्रथम भाग पर प्राप्त सम्भितयाँ २ भ्रामुस कविरत्न, गभीर विचारक पूज्य उपाध्याय श्री द्वारा

९ परिभिष्ट-भाग-धानुत्रमणिका

१० प्रत्यय-चोध ११ सक्त-चोध १२ तृतीय-पाद-कोण-मूनी १३ तृतुप-पाद-काद-मूनी श्र

विषय

ą	सम्बादकीय		v
¥	समीजक मा व्यवतव्य		c
4	प्रकाशक मा निवेदन	,	*
Ę	नूत्रानुगार-विषयानुत्रमणिका	1	\$ 0
e	भग्निम ग्राहको को शुभ नामावली		12
5	प्रावृत-व्याकरण विवादय-हि दो-ऱ्यारमा	₹ से	ધ્યુલ્

आचार्य हेमचन्द्र रचितम्

(व्रियोदय हिन्दी-व्याख्यया समलंकृतम्)

प्राकृत-व्याकरराम्

तृतीय-पाद

ब्रीप्स्यात् स्यादेवींप्स्ये स्वरे मो वा ॥ ३-१ ॥

वीप्सार्थात्वदात्वरस्य स्यादेः स्थाने स्वरादी वीप्सार्थे पदे परे मी वा अवि ॥ एकैंकम् । एकमेकः । एकमेककेण । छङ्को छङ्को । छङ्कमङ्कारिम । पत्ते । एकोकमित्यादि ॥

अर्थ — जहाँ तात्यर्थ निशेष के कारण से एक ही शब्द का दो बार लगातार रूप से उच्चारण किया जाता है, तो ऐसी पुनरुक्ति की 'बीप्ता' कहते हैं। ऐसे 'बीप्ता' अर्थक पद से यदि प्रारम में स्वर रहा हुआ हो ना बीप्ता अर्थक पद स रहे हुए विमक्ति वाचक सि' आदि प्रत्यवों के स्थान पर वैकल्पिक रूप से 'म्' आदेश को प्राप्ति हुआ करती है। वैकल्पिक पत्त होने से जहाँ विमक्ति-वाचक प्रत्यवों के स्थान पर 'म्' आदेश को प्राप्ति नहीं होगी, वहाँ पर विमक्ति-वाचक प्रत्यवों का लोप हो जायगा। उदाहरण इस प्रकार है — एकैक्स्-एक्सेक अथवा एकेक्स्।। एकेन एकेन = एक्सेक्से ॥ (पहान्तर में प्रदेष्णण)। खड़ी अड़ी = अड्रमहम्म। पहान्तर में अड्राइम्म होगा।

एफैन्स् — सस्कृत विरोपण रूप हैं । इसके प्राकुत रूप एक्षमेक और एक्ष होते हैं । इसमें सूत-सल्या-२ ६८ से दोनों 'क' वर्णों के स्थान पर द्वित्व क' वर्ण की प्राप्ति, ३-९ से वीप्सा अर्थक पर होने से वैकल्पिक'रूप से प्रथम रूप में सस्कृतीय लुप्त विभक्ति वाचक प्रत्यय के स्थान पर 'म' ब्रादेश की 🗢 प्राकृत व्याकरण 🕏

प्राप्ति, १-१४८ में द्वितीय रूप में 'वे' के स्थान पर 'o' की प्राप्ति, ३-४ से द्वितीया विमिष्ट के एक बचन में 'म' प्रत्यय की प्राप्ति और १-२३ में प्राप्त 'म' का धनुरनार होकर गम से दोनें रूप एक्फमेक्फ्रं और एक्फ्रेस्फ सिद्ध हो जाते हैं।

एकमेकी —सस्रत वृतीयान रूप है। इमका प्राफत रूप एकमेक्ने होता है। इमगे सय-संस्था २६८ से दोनों 'क' वर्णों के स्थान पर द्वित्य व' वर्ण की प्राप्ति, ३१ से बीप्सा धर्यक पर होन से मंस्तत के मनान ही प्रोहत में भी विमक्ति वाचक प्रत्यय 'टा=इन' के स्थान पर 'मृ' श्रावेश की प्राप्ति, ११ से प्राप्त इलन्त 'म' श्रादेश के साथ में श्रामे रहे हुए 'ण' स्वर को स्राध, ३६ से गृतीया विमक्ति के एक वचन में श्रकारान्त में 'टा' प्रत्यय के स्थान पर 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति स्वीर ने १४ में प्राप्त पत्यय 'ए' के पूर्व में स्थित शब्दान्त्य 'ख' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति होकर एक्फरोप्टकेण रूप सिद्ध ही जाता है।

अही अही मंख्या रूप है। इमका प्राष्ट्रत रूप चल्लगहरिम होता है। इसमें सूत्र-पर्ध्या १ १ से वीप्सा~छार्थक पर होने से प्रथम पर 'श्रह्ने' में सस्ट्रतीय सप्तमी विमक्ति वाचक प्रत्यव'हि≂इ' के स्थान पर प्राकृत में 'म्' खादेश, १ ४ से प्राप्त खादेश रूप हतन्त 'म' म खागे उद्दे हुए 'ख' स्वर को सिंप, खीर 3-११ से सप्तमी विमक्ति के एक वचन में श्रकारान्त में महरुतीय प्रत्यय 'कि=इ' (के प्यानीय रूप 'प') के स्थान पर प्राकृत में 'मिर प्रत्यय की प्राप्ति होकर अहमग्राम्मि रूप निरा हो जाता है ॥३-१९॥

श्रतः से डों: ॥३-२॥

श्रकारान्ताझाम्नः परस्य स्यादे. सेः म्याने हो भरति ॥उच्हो॥

अर्थ —प्रापृतीय पुल्लिम खकारान्त शध्यों में प्रथमा विमक्ति म मंस्ट्रतीय प्रथमा विमक्ति वापक प्रत्यय 'सि' के भ्यान पर 'डो' प्रत्यय की प्राप्ति होती है। प्राप्त प्रत्यय 'डो' में स्थित 'ड' इसंग्रफ होने में चकारा त प्राकृत शब्दों में स्थित चन्त्य श्रा की इत्सता होगर इस चन्त्य 'स' का सीप ही जाता दै चौर तरपन्नात प्राप्त गलन्त राग्द में 'टो≔चो' प्रत्यय की प्राप्ति होती है। दीसे ~टुस्≔वण्यो ॥

'कच्छो' रूप की मिद्रि सुग्र-संस्था २-१७ में की गई है ॥३- २॥

वैनस्ट. ॥३–३॥

ण्यनदोकारात्यरम्य स्यादेः से डों ना भन्नति ॥एसो एम । सी गरी । म. गरी ॥

अर्थ --मंत्रतीय गर्यनाम रूप 'एतम्' धौर 'नम्' हे पुल्लिय रूप 'च्यीर 'म ' हे प्राप्तनीय प्राप्त मुस्तिय रूप 'एम' स्वीर मा माप्रथमा विमक्ति काएक बचा में प्राप्तस्य प्रयय 'बान्सो' सी प्राप्ति वैद्यालिक रूप से हुचा करती है। जैसे -एप = पसी क्षयवा एम। म नर न्मो खरी अपवा स परा ॥ 'एसी' रूप की सिद्धि सूत्र-मख्या ?-११६ में की गई है। 'एस' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-३१ में की गई है। 'सी' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-१७७ में की गई है। जरी' रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या १-२२९ में की गई है। 'स' रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या १-१७७ में की गई है।३-३॥

जस्–शसोलु क् ॥३–४॥

श्रकारान्तानामनः परयो : स्यादिसंबन्धिनो र्जस्-शसोर्ज्ज ग् मति ॥ वच्छा एए वच्छे पेच्छ ॥

अर्थ —श्रकारान्त प्राष्ट्रत पुल्लिंग रार्व्से में प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में श्रीर द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में क्षम से सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'जस्' श्रीर शस्' का लीप हो जाता है। इस प्रकार प्रथमा विभक्ति में 'जस्' प्रत्यय का लीप हो जाने के परचात् सूत्र-सख्या ३-१२ से प्रत्य्य 'श्र' के स्थान पर 'श्रा' की प्राप्ति होती है। जैसे -ग्रुचा एते=वच्छा एए । इसी प्रकार स द्वितीया विभक्ति में भी 'शस्' प्रत्यय का लीप हो जाने के परचात सूत्र मख्या ३-१२ से श्रन्त्य 'श्र' के स्थान पर 'श्रा' को प्राप्ति होती है एव कभी सूत्र-सख्या ३-१४ से श्रन्त्य 'श्र' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति होती है। जैसे —ग्रुचान् परय=(बच्छा श्रथवा) वच्छे पेच्छ श्रथात् पृत्तीं को देखो ॥

हुक्षा —सन्हत्त रूप हैं। इसका प्राष्ट्रत रूप वच्छा होता है। इसमें सूत्र-सख्या १-१२६ से 'ऋ' थे स्थान पर 'छ' की प्राप्ति, २-६ से प्राप्त 'छ' के स्थान पर 'छ' की प्राप्ति, २-६ से प्राप्त 'छ' की द्वित्व 'छू छ' की प्राप्ति, १-६० से प्राप्त पूर्व छ' के स्थान पर 'च' की प्राप्ति, २-४ से प्रथमा विभक्ति में, छकारान्त पुल्लिंग के बहुवचन में प्राप्त प्रत्यय 'जस्' का लोप और हैं-१२ से प्राप्त एव लुप्त 'जस्' प्रत्यय के पूर्वस्य शब्दान्त्य 'छ' को दीर्घ स्वर 'खा' की प्राप्ति होकर रूच्छा रूप सिद्ध हो जाता है।

एते — सस्कृत सर्वनाम रूप है। इसका प्राकृत रूप एए होता है, इसमें सून-सरुवा १-१७७ से 'त' का लोग होकर 'एए' रूप सिद्ध हो जाता है। खथवा १-११ से मूल सस्कृत शब्द 'एतत् 'म स्थित खन्त्य हतन्त व्यक्षन 'त' का लोप, १-१७७ से द्विवीय 'त्' का लोप, १-४० से प्रथमा विमक्ति के बहु वचन मे सस्कृतीय प्रत्यय 'जस' के स्थान पर प्राकृत में 'डे' प्रत्यय की प्राप्ति, प्राप्त प्रत्यय 'डे' में स्थित 'ड्' इस्तज्ञक होने से अपन रूप 'एअ' में स्थित खन्त्या 'ख' की इस्तज्ञा होकर इम 'ख'का लोप और तस्प्रधात् प्राप्त रूप 'ए + ए=एए' की सिद्ध हो जाती है।

रुझान् —सस्कृत रूप है। इसका प्राकृत रूप बच्छे होता है। इसमें 'बच्छ' रूप तक की सिद्धि उपरोक्त इसी सूत्र-श्रतुसार (जाननो), ३-४ से द्वितीया विमक्ति के बहु बचन में प्राप्त प्रत्यय 'शस' का लीप चौर २-१४ में प्राप्त एव लुप्त मत्त्वय 'रास्' के पूत्र स्य शब्दान्त्य 'ख' के स्थान वर 'ए' का पाणि हाकर पच्छे रूप बिद्ध हो जाता है।

'विच्छ' --रूप की सिद्धि सूत्र-सरमा ?-?? में की गई है। ३-४॥

्रश्रमोस्य ॥ ३--५ ॥

श्रवः परस्यामीकारस्य छुग् मनवि ॥ वच्छं पेच्छ ॥

अर्थ —श्रवारान्त म द्वितीया विभिषत के एक वचन में सस्त्रतीय प्रस्तव 'श्रम्' में श्रियत श्रावि ग्यर 'श्र' का प्राष्ट्रत में लोप हो जाता है श्रीर शेष 'मृ' श्रस्तव की ही प्राष्ट्रत में प्राप्ति होती हैं । जैसे — पृत्तम् परव ≃ वच्छ पेच्छ श्रयान पृत्त को देखो ।

'क्च्छ' —रूप की सिद्धि स्त्र-संख्या१-२४ में की गई है। 'क्च्छ'---क्रियापद रूप की सिद्धि सूत्र-सच्या १-२४ में की गई है॥ ३-४॥

टा-ग्रामो र्गः ॥३-६॥

थतः परस्य टा इत्येतस्य पष्ठी-पहुवननस्य च धामी यो माति ॥ वन्द्रेष । वच्छाय ॥

जर्थ — अवगरान्त राष्ट्रों में हतीया विभवित के एक यथा में संस्कृतीय प्रत्य 'दा' के स्थान पर भाष्ट्रत में 'ज' प्रत्यय की ध्यादेश रूप से आित होती है ज्य सूत्र महत्या है रेष्ट में प्रान्त प्रत्य 'पा के पूर्वस्य शब्दात्म्य 'पा' के स्थान पर 'पा' की प्राप्ति होता है। दौसे -पृष्ठेण = बन्दोष्ट। इसी भकार में ध्यानस्त शब्दों मं पच्टी विभवित के यह धपन में संस्कृतीय प्रत्यय 'खात्ने' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'ज' प्रत्यय की धादेश रूप से प्राप्ति होती है एवं सूत्र संस्कृत है से प्राप्त प्रत्य 'पा' के पूर्वस्य रूप 'पा' के स्थान पर दीर्घ स्वर 'था की प्राप्ति होती है। जैसे - प्रचाणाम्-चण्याण धर्मा वृद्धां पर ध्याना एची की।

'कच्छेण' रूप की मिद्धि सून मंद्रया १-४० म की नई है।

मुसानास—मन्द्रत पर्यात रूप है। इसको प्रापृत रूप करदाय होता है। इसके 'वण्य' रूप तक की मिदि स्व-सन्द्रपा वे ४ के ब्युमार ('गानना), ३ ६ से पर्या विकरित के बहुवयन से सीस्टर्नेत प्रस्ता 'बाम्' के स्वानिय रूप 'नान' व स्थान पर प्रापृत से 'च' प्राप्य की ब्यादेश मानि, कीर ३ १२ से मान्य बत्य ग्य' के पूर्वत्व सारहान्त्व 'च क स्वान पर बीपीस्वर 'बा' की प्राप्ति होवर व प्राप्ता रूप निद्य हो वाला है। १३—६॥

भिसो हि हिं हिं ॥३-७॥

श्रतः परस्य भिमः स्थाने केनलः मानुनासिकः मानुनारश्र हि भैवति ॥ वन्छेहि । यन्छेहिँ वन्छेहिं क्या छाही ॥

अर्थ — अकारान्त शब्दों में स्तीया-विभवन के बहु त्रचन में सस्कृतीय प्रत्यय मिस्' के स्थान पर प्राक्षत में कभी केवल हि' प्रत्यय की खादेश रूप में प्राप्ति होनी है, कभी सानुनासिक 'हि' प्रत्यय की खादेश प्राप्ति होनी है, तो कभा मानुस्तार हि' प्रत्यय को खादेश प्राप्ति हुआ करती है, एव स्वृत्त सख्या ३ ११ से मास्त प्रत्यय 'हि',हिं के पूर्वस्य शब्दान्त्य 'ख' के स्थान पर 'ए' को प्राप्ति हो जाती है। जैसे -मुत्ते कना खाया≔वच्छोह खथवा बच्छोहिँ खथवा बच्छोहि क्या खाही खर्यात वृत्तों द्वारा की हुई खाया॥

युक्तै —मस्तृत वृत्तीयान्त बहु वचन कर है। इसके प्राकृत रूप वच्छेहि, बच्छेहिँ और वच्छेहिँ होते हैं। इतसे "बच्छ" रूप तक की सिद्धि सूत्र-सख्या ३-४ के श्रानुसार (जानना), ३-७ से एतोया विमक्ति के बहु वचन में मस्तृतीय प्रत्यय 'सिस्' के स्थानीय रूप 'येस्' के स्थान पर प्राकृत में कम से एव वैकल्पिक रूप से 'हिं, हिँ हिं प्रत्ययों की प्राप्ति और ३-१५ से प्राप्त प्रत्यय हैं। श्रायत पर्दे श्रीर 'हिं' छे पूर्वस्थ 'बच्छ' श्राव्दान्त्य 'श्रा' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति होकर कम से 'बच्छोहिं' 'चच्छोहिं' श्रीर 'क्चोहिं' हमें की सिद्धि हो जाती है।

'कया' रूप की सिद्धि सूत्र-सप्त्या ?-२०४ में की गई है। 'छाहां' रूप की सिद्धि सूत्र-सप्या-१-२४९ में का गई है।। २-७॥

डसेस् त्तो-दो दु-हि-हिन्तो-लुकः ॥३-⊏॥

श्रतः परस्य हसेः चो दो दृ हि हिन्तो लुक् इत्येते पढादेणा भगन्ति ॥ वन्छचो । बच्छाश्रो । बच्छाउ । बच्छाहि । वच्छाहिन्तो । वच्छा ॥ दकार करण भाषान्तरार्थम् ॥

अर्थ — अकारान्त शर्दों में पचमी विमक्ति के एक वचन में सस्क्रतीय प्रत्यय 'डॉम' के स्थानीय रूप 'आत्' के स्थान पर प्राफ्त में 'तो', 'वो = श्रो, 'ढु = ड', 'हि' और 'हिन्तो' प्रत्ययों की कम में आदेश-प्रिम होती है और कमी कमी इन प्रत्ययों को लोग भी ही जाता है, ऐसी अवस्था में मूल शाद रूप के अन्त्य हस्य स्वर 'थ' के स्थान पर स्प्र सख्या दे-१२ से 'आर' की प्राप्ति होकर प्राप्त रूप पचर्मा विमक्ति के धर्य को प्रदर्शित कर देता है। यों पचमी विमक्ति के एक वचन में अकारान्त में छह रूप हो जाते हें। पाँच रूप तो प्रत्यय जिन होते हैं और छट्टा रूप प्रत्यय लोग से होता है। इन उह ही रूपों में स्त्र सख्या १-१२ से प्रत्यों को क्रांमक रूप से सयोजना होने के पहल शब्दानन्य 'आ' के स्थान पर दीर्य

रसर 'था' की शामि हा जाती है। 'चो' प्रत्यय को सयोजना में 'था' के स्थान पर 'था' की प्रापि होहर पुनः सन मन्या १-म४ से 'था' क स्थान पर 'घ' हो जाया करता है। उदाहरण इस प्रकार है:--प्रशृत् =वच्छत्तो. वच्छावा, वच्छाव, वच्छाहि वच्छाहिन्तो श्रीर वच्छा श्रवांत वृत्त से । 'से' श्रीर 'सु' प्रत्ययों में स्थित 'दकार' अन्य मापा 'शीरसेनी' के पचमी विमण्डिक एक वचन की रियति की प्रश्तिन करने क लिये न्यक क्या गया है, तदनुसार प्राष्ट्रत में स्त्रमायत अथवा सुत्र संख्या १ रू से 'दू' का लोप करक शेप 'बो' और 'व' प्रत्यचों का ही प्राष्ट्रन-रूपों म संयोचना की जाती है। यह चन्तर अपवा विशेषता ध्यान में रहनी चाहिये।

यक्षात्.—सस्टून पञ्चम्यन्त रूप है। इसके प्राप्तुन ६व वच्छत्तो, यनप्राच्नो, वन्द्राच्ने, वन्द्राच्ने, वच्छाहिन्तो और बच्छा हाते हैं। इनम वच्छ' रूप तरु की साधनिका सूत्र-सत्या ३-४ क चाुनार, ३-१२ से प्राप्त रूप 'यन्छ' में स्वित धन्त्य हुम्ब स्वर 'ख' के स्वान पर दाघ स्वर 'खा' की प्राध्ति भीर 3-द से पचमी विमिक्त के एक वचन में बम से 'ची', 'खो', 'ड', 'हि, 'हिन्ता' खीर 'प्रत्यय-तीप' की प्राप्ति हाकर कम से पच्छत्तो, पच्छाओ। पच्छात, पच्छाहि, वच्छाहिन्तो और वच्छा हव मिक्ष हो जाते हैं। प्रथम रूप 'बन्द्रता' में यह विशेषता है कि अवशक्त शीत से प्राप्तका रूप 'बन्द्राता।' में मदानार्या १-दर्श से पन दीर्घ स्वर 'खा' के स्थान पर द्वार स्वर 'ख' की' प्राप्ति हाकर 'बण्डाती रत्प (हो) मिद्ध होता है ॥३-८॥

भ्यसस् चो दो हु हि हिन्तो सुन्तो ॥३--६॥

श्रतः परस्य स्वासः स्वानं ची दो, दू, हि, हिन्तो, मुन्ता इत्यादेशा मदिना ॥ वृत्तेम्पः । नच्छत्तो । पन्छामो । पच्छाउ । वन्छाहि । यच्छेहि । वन्छाहिन्ता । यच्छेहिन्ती वच्छासन्तो । वच्छेमुन्तो ॥

शर्थ - धवारान्त राष्ट्रों में पामी विमहित है बहुवयन में मेरहताय प्रत्यम अयम=अस स्थान वर बाहत म कम में 'सी', 'री=घी , दू=र', 'हि, 'हिन्ती' श्रीर 'सुन्ती' परवर्ण की व्या पालि होती है। मूत्र गंन्या ३ १२ में 'त्तो' प्रत्यव, 'हो' प्रत्यव शीर 'व' प्रत्यव के पूर्व राज्यानव रा स्वर' 'बा' के स्थान पर दीर्घ रतर 'ब्या' की प्रान्ति होती है। 'क्यें प्रत्यव की सबीतना में यह विरेत है कि 'चा' की प्राप्ति होन पर पुन सुग्र-संट्या १-दर म 'खा' के स्थान पर 'ख' हो जाता है। इ धवार में गीरे, 'दिन्ता' चौर 'सुन्ती' प्रत्ययां के सम्बन्य ने यह दियान है कि मूच-मारणा ने ११ शास्त्रात्त्व 'स' ६ रतान पर रसी 'धा' का मालि ताती है ता कमा सूत्र-संदर्भ दे-१४ में 'धा है स्व क क की की दारित भा हा जाती है। वर्ष कि किलो बीर 'बुक्ती' प्रापती के बेंग में मझारा ठ छ के ह्यु हुव ही आग है। तहनुसार सूत्र मिलाकर चंचमी दिमाइन के बहुबपन में कहाराज में छी। especial against the contract and an action of the action

होते हैं, जो कि इम प्रकार हैं —पृत्तेश्य =(१) वच्छत्तो, (२) वच्छात्रो, (३) वच्छाउ, (४) वच्छाहि, (४) वच्छाहि, (६) वच्छाहिन्तो, (७) वच्छोहिन्तो, (५) वच्छाहिन्तो श्रीर (६) वच्छोदुन्तो श्रर्थात पृत्तों से ॥

ृष्ट्रकेश्य — मस्कृत पञ्चम्पन्त बहुवचन रूप है। इसके प्राफ्टत रूप वच्छत्तो, वच्छाओ, वच्छाओं, व

द्वितोय और एनीय रूप-(यच्छाचो एव वच्छाड) में सूत्र-सख्या ३ १२ से वच्छ शब्दान्त्य 'अ' के स्थान पर 'खा' को प्रास्ति, ३ ६ से कम से 'दी' श्रीर 'तु' प्रत्ययों की प्रास्ति श्रीर १-१०० से प्रास्त प्रस्ययों में स्थित दु' का लाप होकर कम से यच्छाओ और वच्छाउ रूपो की मिद्धि हो जाती है।

शेष चौथे रूव से लगाकर नवने रूव तक में सुत्र सख्या ३ १३ से तथा ३-१४ से वच्छ शब्दान्स्य 'त्र' के स्थान पर क्रम से एव वेंकिन्पक रूप से 'छा' अथवा 'ए' की प्राप्ति और ३ ६ से क्रम से 'हि' 'हिन्तो' और 'सुन्तो' अत्ययों की प्राप्ति होकर यथा रूप एच्छाटि, पच्छेहि, पच्छाहिन्तो, वच्छेहिन्तो एच्छाह्नितो और रुच्छेमुन्तो रूपों की सिद्धि हो जाती है ॥३-६॥

्रङसः स्तः ॥३-१०॥

अतः परस्य डमः सयुक्तः मो भगति ॥ पिश्रस्स । पेम्मस्म । उपकुम्भ शैत्यम् । उप-कुम्भस्म सीअलचरा ॥

अर्थ —अज्ञागन्त राव्हों में पष्टी विमित्त के एक बचन में सहक्तीय प्रत्यय 'इस् के स्थानीय रूप स्व' के स्थान पर प्राकृत में संयुक्त 'स्म' प्रत्यय की आदेश प्राप्ति होती हैं। जैसे —प्रियस्त = पिश्रस्त आर्यात् प्रिय का। प्रेमण् =पेम्मस्स आर्यात् प्रेम का और उपकुम्म शैत्यम् = उपकुम्मस्स सीश्रल- चित्र प्रयोत् गृत्व नामक लघु वृज्ञ विशेष की शीतलता को (देखो)।

प्रियस्त —सरहत पष्डवन्त रूप है। इमका प्राञ्चत रूप पिश्वस्त होता है। इममें सूत्र सरता २-७६ से 'र्' का लोप, १-१७० से 'य्' का लोप श्रीर ३-१० से पछी विमस्ति के एक वचन में सस्कृतीय प्रत्यप 'स्य' के स्थान पर प्राञ्चत में 'स्स' पत्यय की श्रादेश प्राप्ति होकर विशस्त रूप सिद्ध हो जाता है।

प्रेमण मस्कृत पण्डान्त रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप पेम्मसम होता है। इसमें सून-सस्त्रा २ ७६ से 'र' को लोप, २ ६८ से 'म' की द्वित्व 'म्म' की प्राप्ति, २ ७८ से मूल मम्हृतीय रूप 'प्रेमम्' में स्थित ('ण्' के पूच रूप) 'म' का लोप, और ३ १० से सरकृतीय पष्ठी पिमक्टि वाचक प्रत्यय 'इस्' के स्थानीय रूप 'खम्' के स्थान पर प्राकृत में 'स्म्र' प्रत्यय की प्राप्ति होकर पेम्मरत रूप मिद्र हो नाता है।

उपयुम्मम मेर्ट्न रूप है। इमका ब्राइन रूप चयदुम्मस्म होता है। इसमें सूत्र मेर्ट्स १०६० में 'प' के स्थान पर 'व की प्रास्ति, ३-१३४ से मर्ट्डनीय द्विनीया विभक्ति के स्थान पर प्राष्ट्रन में पण विभक्ति की प्राप्ति तण्तुमार ३-२० से सर्ट्डनीय द्विनीयां विभक्ति के प्रस्त्य 'क्षम्=न' क स्थात पर श्राह्य म पच्छी विभक्ति याचक प्रस्त्य 'स्म' की प्राप्ति हाकर उपकुम्मन्स रूप सिद्ध हा आता है। '

शित्यम=र्यावक्ष्यम् मस्कृत रूप है। इनका प्राकृत रूप माध्यनत्तर्ग होता है। इनने मृद् परवा , १२६० से 'गृ' के स्थान पर 'म्' का प्राप्ति, ११७० से 'त' का लोप, २-१४४ से 'रा' प्रत्या व स्थान पर प्राकृत में 'त्त्रण' प्रस्यय की श्रादेश प्राप्ति ३-८ से द्विताया विभक्ति के एक व यान में 'म्' प्रत्यय का प्राप्ति श्रीर १-२३ से प्राप्त प्रस्थय 'म् का श्रमुखार हो≎र सीशलत्तर्ण रूप मिद्ध हो नाता दें ॥१-१०॥

हे मिम हैं। ॥३-११॥

श्रवः परस्यटेहिन् एकारः मयुक्तो मिश्र मरति ॥ वन्त्र । वन्त्रिम्म ॥ देवम् । देनिम्म । तम् । तम्म । श्रवः द्वितीया-वृतीययोः मत्तमी (३-१३४) इत्यमो टिः ॥

अर्थ —प्राकृत व्यकारान्त राह्में में सप्तमी विमिष्त के एक वचन म मग्हृतीय प्रस्य 'एटड के यात पर 'हे' बीर सयुक्त मिम' प्रत्यय की माध्य हीता है। प्राप्त प्रत्यय के में 'ह्' इस्तेन के रोग में मूल व्यकारान्त राह्में में स्थित व्यन्त्य 'व्य' स्वर की इन्समा रोकर उपन 'क्' का लाव राजा है, तर्वभात प्राप्त रूपने रूप में 'प' प्रत्यव की स्थापना ही जाती है। जैसे —पृष्ठ-वर्ष्ट्रे कीर यव्यक्ति स्थापना प्राप्त में । सूल सत्या वर्षा के स्थापना ही कि प्राष्ट्राच राह्में में क्मे कमा स्वर्धी विभिन्न के प्रत्यवों के क्यान पर डिजीया विभिन्न के प्रत्यवे का विभाग होगा हमा मा दाना जाती है भये पत्र विभान प्राप्त हिनीया विभिन्न के प्रत्यवे को विभाग होगा हमा मा दाना जाती है भये का विभाग होगा है। कीम-भूबे=विवाद व्यववा देवीम व्यवी देवीम व्यवी होगा कि स्वर्ध मत्यवा तरिन व्यवि हमा रोग है। कीम-भूबे=विचा व्यववा तरिन व्यवि हमा रेव्य हमा रेव्य के स्वर्ध में स

पूर्त संश्ट्य महत्त्वात राष्ट्र है। इसके बासून रूप वर्षों और वर्ष्यांना रूप है। इसी 'वर्ष्य' ह्यू तक का मार्था का सूत्र संज्या है ४ के कतुमार है ११ में मनमी विभाद के एक वर्षन में हम स 'प्रा क्षीर 'नेम' प्रस्य की प्राप्ति राहर का से वर्ष्य कीर वर्ष्यान्य रूप सिंह हो गार्थ है। हेने सस्कृत सप्तम्यन्त रूप है। इस के प्राक्तन रूप देवम् खोर देविन होते हैं। इस से से प्रथम रूप में सूत्र सख्या ३-१३७ से सप्तमी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का विधान एव तरतुमार ३-४ से द्वितीया विभक्ति वाचक प्रत्यय म्' की प्राप्ति होकर प्रथम रूप देवन सिद्ध हो जाना है। द्वितीय रूप (देवे=) देविम्म में सूत्र सरत्या ३-१९ से मत्रमी पिमक्ति के एक वचन में मस्क्रतीय प्रत्यय 'डि=३' के स्थान पर प्राकृत में 'मिम' प्रत्यय की खादेश प्राप्ति होकर देविम्म रूप सिद्ध हो जाना है।

तिसम् सस्कृत सर्वताम सप्तम्यन्त रूप है। इन के प्राकृत रूप तम् और तिम्म होते हैं। इन में से प्रथम रूप में सूत्र सख्या ३ १३७ से सममी विभक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का विधान, तद्मुसार ३ ४ से सस्कृतीय सप्तमी-विभक्तिकोषक प्रत्यय 'स्तिन' के स्थान पर प्राकृत में द्वितीया विभक्ति चाचक प्रत्यय 'म्' की प्राप्ति हो कर प्रथम रूप 'तन् सिद्ध हो जाता है। द्वितीय रूप (तिसम्=) तिम्म में सून सख्या १-११ से मूल मस्कृत सर्वनाम रूप 'तन् में स्थित अन्त्य हलन्त क्यञ्जन 'त्' का लीप और ३-११ में सप्तमी विभक्ति के एक वचन में सस्कृतीय प्रत्यय 'डि' क स्थानोय रूप 'सिन्न' के स्थान पर प्राकृत में 'म्मि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप 'तिम्म' सिद्ध हो जाता है। ३-११॥

जस्-शस्-इसि-त्तो-दों-द्वामि दीर्घः ॥२-१२॥

एपु अतो दीवों भगित ॥ जिस शिस च । वच्छा ॥ हिस । वच्छाधो । वच्छाछ । वच्छाहि । वच्छाहिन्तां । वच्छा ॥ चो दो दुषु ॥ वृत्तेभ्यः । गच्छवो । हस्मः मयोगे (१-८४) इति हस्यः ॥ वच्छाछो । वच्छाउ ॥ आभि । वच्छाया ॥ हिसनैंग मिद्धे चो दो दु ग्रह्णं भ्यसि एरवग्रावनार्थम् ॥

भात प्रत्यय 'ए' की प्राप्ति होने पर भी अन्त्य 'श्र' स्वर को दार्घ स्वर स्था' को प्राप्ति हो जाती है। बैंक-युत्तानाम्=वच्ह्रास । मूल मूत्र में बादे 'ह मि' इतना ही उन्नेख कर देते तो मी पंचमी विमन्ति के एड वचन में अगरेश-प्राप्त शरवर्ष की प्राप्ति क्षेत्रे पर 'ख' को 'खा को प्राप्ति होती है।। वेना वर्ष व्यक्ति व्यक्त हा जाता, परन्तु पनमी विभक्ति के एक वचन में श्रीर बहुवचन में 'ना, हो, हू, हि श्रीर हिन्में' प्रत्ययों की एक रूपता है. एप इस प्रकार का एक रूपना होन पर भा जहीं योनी वस्तों में चास्त्य 'का' को 'खा' की प्राप्ति होती है यहाँ बहुव वस में 'हि' और 'हिन्तो' प्रत्यय की संबोचना में सब संदर्ध ३ १३ एव ३ १५ से पैक्लिफ रूप से 'ख' का 'खा' की प्राप्ति भी हो जाया करता है। इस प्रकार मुच-सुव म 'तो' 'न' श्रीर 'द' प्रहण करके पद्ममी--बहुवचन के गण पायया 'ति' 'हिन्तां' स्रीर 'सन्ता' मं 'म' ह स्थान पर 'ए' की मानि मैं कल्पिक रूप से हानी हैं-ऐया विशेष खर्य प्रति-खनित करने के लिय 'ती. 'दी' एव 'हु' प्रत्यया का मृत-मृत्र में स्थान दिया गया है। जैसे -वृद्दीस्य =यण्डाहि श्रीर यण्डीहि तथा थक्याहिन्तो श्लोर पर्न्योहिन्तो । इस प्रकार प्रचानी के एक वचन में 'एरव' का निषेत्र बरन के लिये और यहवपार में 'एरव' का विधान करने के लिये 'ता', दो धीर दू प्रत्यवों का उठनंत्र किया है।

'यन्छा' रूप की मिद्धि सूत्र मंख्या है-४ में की गई है।

'यच्छाजो', 'यच्छाउ', 'यच्छाहि', 'यच्छाटिन्तो' छौर 'यच्छा' रूपी की मिदि सूत्र मन्या ह-८ में की गई है।

'यरछत्ता', 'यरछानी' श्रीर 'यरछाउ' बहुवयनान्त रूसं की मिदि सूप-मंन्या है-र में को गई है।

'शब्द्याण' रूप को मिद्धि सूत्र-सन्त्या है-ह में का गई है। ३-६-॥

भ्यमि वा ॥ ३-१३ ॥

श्यमादेशे परे श्रती हीर्यों वा मनति ॥ यन्त्राहिन्ती । यन्त्रहिन्ती । यन्द्रामुन्ती । दन्तें मन्तो । बच्छाहि । बच्छेहि ॥

क्षर्य -पंचमी महुबान के मक्त्रीय प्रस्त्व 'द्रवस' के स्थान प्रामापूत्र में बादेश प्राप्त प्राप्त 'हिन्ती', 'तुन्ती' और 'हि' के पूर्वस्य शादास्य त्यत्र स्वर 'वा' के स्थान यह पैकल्विक रूप में 'व्या' वी भागि होतो है। एवं मुन्नमध्या ३ १४ स वैत्तिवर्क वस होते से 'स' के स्थान वर 'फ' की प्राप्ति मी हुव्या करनी है। शैमें --इगम्य=वरप्रातिली याववा वर्णेतिन्ता, वश्यामुला राववा वर्णेतुम्ली श्रीर बक्दारि क्षमचा बन्देहि॥

पूर्वभग --मंद्रायवस्यान अनुवान रूप है। इसके धाइत रूप वन्यानियो, वन्येतियो, संरद्वासून्ता, वरद्वेसून्ता, वरद्वाहि सीर वर्णाहि होत है। इपमें 'वरदा' रच तक की मार्थनिका १-५ के

٥٥٥٥٥١ ١١٥٥ مناها ١٥٥٥٥١٥٥٥٥٥٥٥٥٥٥٥٥٥٥٥٥١٥٥١ ماماه

श्रमुसार, ३-६ म पचमी विभक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्रध्यय 'भ्यस्' के स्थान पर 'हिन्ते।' 'सुन्तें।' श्रीत्र 'हि' प्रस्थयों की क्रमिक आदेश-प्राप्ति, ३-१३ और ३-१५ से 'वच्छ' शब्दान्त्य हस्व स्वर 'ख' के स्थान पर वैश्वितक रूप से तथा क्रम से 'आ' अथवा 'ए' की प्राप्ति होकर वच्छाहिन्तो, वच्छोहिन्तो, वच्छोहि स्वर्षे की सिद्धि हो जाती है।

्ट्राग्-शस्येत् ॥ ३-१४॥

टादेरी से शसि च परे श्रस्य एकारी भगति ॥ टास । वच्छेस ॥ सेति किम् । श्रप्पसा श्रप्पसित्रा । श्रप्पसद्भा । शस । वच्छे पेच्छ ॥

अर्थ -प्राकृतीय श्रकारान्त राख्यें में तृतीया विभक्ति के एक बचन में सस्कृतीय प्रत्यय 'टा' के स्थान पर 'ए' की प्रादिश-प्राप्ति होने पर्र श्रन्त्य 'श्र' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति हो जाती हैं । जैसे − धृत्तेन = बच्छेण श्रथीत् धृत्त से । इसी प्रकार से द्वितीया विभक्ति के बहु बचन में भी सस्कृतीय प्रत्यय 'जस्' के स्थान पर नियमानुभार लोप स्थिति' प्राप्त होने पर श्रन्थ 'श्र' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति हो जाती हैं। जैसे −पृतान परय≃ाच्छे पेण्ड श्रथांतृ धृतों को देखों।

प्रक्रन - रहाेथा विभक्ति के एक वचन में 'ण' श्रादेश-प्राप्ति होने पर ही श्रन्त्य 'श्र' के स्थान पर 'ण' की प्राप्ति हाती हैं, ऐसा क्यों उल्लेख किया गया है ?

उत्तर - 'खात्मा=द्राप' खादि शह्वों में तृतीया विमक्ति के एक बचन में सस्कृतीय ब्रत्यय 'टा' के स्थान पर सूत्र-सख्या ३-४४, २-४६ और ३-४७ से 'खा', 'णिखा' और णह्खा' प्रत्ययों की खादेश- 'माप्ति होता है, तर्नुसार तृतोया विमक्ति एक घचन में सूत्र-सख्या ३-६ के खनुसार 'टा' के स्थान पर प्राप्तव्य 'ण का खमाव हा जाता है और ऐसा होने पर शब्द खन्त्य 'ख' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति नहीं होगो ! इसलिये यह मार-पूर्वक कहा गया है कि ण' खादेश-प्राप्ति होने पर ही 'ख' को 'ए' की प्राप्ति होता है, खन्यया नहीं । जैसे -खात्मनाः खप्पणा, खप्पणिखा और खप्पणइखा खर्यात् खात्मा से ।

'चच्छेण' रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या ३-५ में की गई है।

आत्मना सरकृत तृतीयान्त एकवचन रूप हे। इसके प्राकृत रूप छापणा, छापणिखा छोर छापणाइमा होत हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र-सख्या १ ८४ से छादि दीर्घ स्वर 'छा' के स्थान पर हस्व स्वर 'छा' को स्थान पर हस्व स्वर 'छा' को प्राप्ति, २ ४१ से सपुक्त व्यञ्जन 'त्म' के स्थान पर 'प' की छादेश-प्राप्ति, २ ८६ मे छादेश-प्राप्त 'प' को दिल्व 'प्प' की प्राप्ति, ३ ४६ से प्राप्त रूप 'छप्प' में 'छाण' का सयोग, १ ८४ से प्राप्त स्वगेग रूप खाण' में स्थित दीर्घ स्वर 'छा' के स्थान पर हस्व स्वर 'छ' की प्राप्ति, १ ९० में 'छप्प' में स्थित छन्त्य 'छ' स्वर के छागे 'छप्प' का 'छप्प' होने से लोप, छीर ३-६ से प्राप्त सम्हतीय

प्रत्यय 'टा' में स्थित ट' को इत्मंशा होने में 'ट' का कीप होकर होन प्रत्यत 'खा' की प्रान्ति हे कर अध्यक्षा रूप मिद्ध हो जाता है। खयबा ३ ४१ से पूर्व सिद्ध 'खप्प' हारह में हो एवाया विभिन्न के एक बचन में 'राजन बन स्थारनन राव्ह-सहमाबान्' संस्कृतीय प्रत्यव 'टा' के स्थान पर 'णा' खाइरा की प्राप्त होकर (अध्यक्षा) रूप मिद्ध हो जाता है।

^

द्विनोय चौर स्तोय रूप (खोसना=) श्राप्तिच्या तथा खापणुइचा में 'क्षप' रूप तर हो मायनिका प्रथम रूप वत्, और ३ ५७ से स्तीया-विमक्ति के एक पत्तम में 'दो' प्रत्यय के स्वात पर 'णिया' चौर 'णइचा' चावेरा-प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप 'अप्पणिआ' चौर 'अप्पणइआ विद्व हो जाते हैं।

षच्छे रूप की मिद्धि मूत्र संख्या ई-४ म की गई है। पेच्छ रूप की सिद्धि मृत्र सक्या १ हुई में की गई है।।३ -१४॥

भिस्भ्यस्सुपि ॥३-१५॥

ण्यु व्यतः ए भैनति ॥ मिस् । यच्छेहि । यच्छेहिँ । यच्छेहि ॥ स्यम् । यच्छेहि । यच्छेहिन्तो । यच्छेपुनो ॥ सुप् । यच्छेपु ॥

शर्य —प्राष्ट्रनीय चवारान्त शर्शे में एनीया विमक्ति के बहुवया में प्रायय 'मिम्' में चार्या-प्राम 'हि, हिं चौर हिं' की प्राप्त होने पर, पंचमी विभक्ति के बहुवया के पत्यय 'प्र्यम्' के चार्या-शा-रूप 'हि, हिन्छो चौर सुन्तों' की प्राप्ति होने पर चौर मगगा विभ क य बहुवयन के प्रायय 'हुउ' के चार्या-प्राप्त रूप 'सु' की प्राप्त होने पर शर्द-भान्य स्पर 'ख' य त्यान पर 'ठ' की प्राप्ति हो जानी है । हैसे 'मिस्' का दशहरण —एगे नवयदें हि, वर्ष्ट्रोह 'जौर सम्युहि सर्यान सुत्ते से । 'प्राप्त' का वशहरण पुत्तेभ्य नवयदें हि, वर्ष्ट्रोहन्तो चौर वर्ष्ट्रोसु खर्यान सुत्तों से । 'सुप्' का चशहरण —प्रपेतु-वर्ष्ट्रोन चर्यान हर्ष्टों पर चयवा हर्सो से।

'क्च्छाहि', 'क्च्छोहि' और 'क्च्छाहि' गुरुवान्त बहुरमा वासे हमी की मिद्धि सूम-संगता इ-७ में की गई है।

'कस्त्रक्षि', 'कस्त्राहिस्मो' सीर 'कस्त्रकुत्मो विनयमत बहु सपन वान गरी का मिदि सूत्र-संस्था हन्द में को गई है। क्स्त्रनु रूप वो मिदि सूत्र-मेग्या रेन्स्थ म वी गई है। इस्त्रम

इद्देतो दीर्घ ॥३-१६॥

इरारस्य उहारम्य च भिन् स्मम्मुष्य पृथ्व दीया मन्ति॥ भिन्। निरीदि । वुडीदि । दहीदि । नहदि । पेर्ट्दि । महदि स्पं ॥ स्टन् । विरीको । वुदीको । दहीको । नहकी । ARCHER STEELS OF THE SE

धेण्यो । महूबो झानझो ॥ एव गिरीहिन्तो । गिरीसुन्तो आगयो इत्याद्यपि ॥ सुप् । गिरीसु । युद्धीसु । दहीसु । तहसु । धेण्यु । महून् ठिय्र ॥ कचित्र भगति । दिश्र-भूमिसु दाण-जलोन्लिश्राह ॥ इद्गत इति किम् । वच्छेहि । वच्छेसुन्तो । वच्छेसु । मिस्म्यस्सु पीत्येव । गिरिंतरु पेच्छ ॥

अर्थ —प्राष्ट्रतीय ह्रस्व इकारान्त और उकारान्त पुल्लिग, नपु सक लिंग और स्नीलिग राव्हों में एतीया विभक्ति के बहुवचन में संस्कृताय प्रत्यय 'भिम्' के स्थान पर आदेश-प्राप्त 'हि, हिँ और हिं प्रत्ययों की प्राप्ति होने पर एव पचमा विभक्ति के बहुवचन में संस्कृतीय-प्रस्थय 'भ्यम्' के स्थान पर आदेश-प्राप्त 'ओ, ज, हिंता और सुन्तो प्रत्ययों की प्राप्ति होने पर और सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में संस्कृतीय प्रस्थय 'सुप्' के स्थान पर 'सु' प्रत्यय दी प्राप्ति होने पर ह्रस्व धन्त्य स्वर 'इ' का ध्ययन 'ख' का दीर्घ स्वर 'ई' और 'क' यथा कम से हो जाते है। जैसे — 'भिम्' प्रत्यय से सर्वावत उदाहरण — गिरिमि =िगरीहिं, बुद्धिमि =बुद्धोहिं, दिधिम = दहाहिं, तन्निम = तहहिं, धेनुमि = धेगुहिं और मधुमि छतम=महुहिं कय। इत्यदि।

'भ्यस्' से सबिधत उदाहरण —िगरिभ्य =िगरीची, गिरीहिन्तो और गिरीसुन्तो । बुडिभ्य = बुडिखो । विधम्य-=दिश्यो । तरुभ्य=वरुखो । वेद्यम्य =चेप्पूळो और मधुभ्य चागत = महुको चागको । इत्यादि । 'धुप्' से सबिधत उदाहरण —िगिरेषु =िगरीसु । बुडिपु = बुढीसु । विधपु = दिशेषु = दिशेषु = तरुसु । वरुपु = तरुसु । वरुपु = सेप्पुसु और मधुपु स्थितम् = महुसु ठिव्य । इत्यादि । किन्ही शब्दों में 'सु' प्रत्यय की प्राप्ति होने पर हस्व व्यन्त्य 'इ' व्यथवा 'व' का होगे 'ई' व्यथवा 'क' नही भी होता है । जैसे —िहज-भूमिपु दान -जलाई किन्ती क्योन पर हस्व क्यादि । किन्ही शब्दो के स्थान पर हस्व इक्तरान्त स्प कायम रह कर 'भूमिसु' रूप ही दृष्टि-गोचर हो रहा है, वो व्यन्यत्र भी जान होना चाहिये।

प्रक्रन—'इकारान्त' 'उकारान्त' रुघ्दों में हा 'भिस्, भ्यस् श्रीर सुप्' प्रत्ययो के प्राप्त होने पर अन्त्य इस्व स्वर के स्वान पर दीर्घ स्वर हो जाता है ऐसा क्वों लिखा है ?

उत्तर — नो प्राकुट शब्द 'इकारान्त' श्रयवा 'उकारान्त' नहीं है, उन शब्दों में 'भिस्, भ्यस् श्रोर 'सुप्' प्रत्ययों की प्राप्ति होने पर भी श्रन्त्य हस्व स्तर का दीर्घ स्तर नहीं होता है, श्रत ऐसा विधान फेवल इकारान्त श्रीर उकारान्त शब्दों के लिये ही करना पड़ा है। जैसे — कृत्ते = वन्त्रेहि, वृत्तेभ्य = बच्छेसुन्तो श्रीर वृत्तेषु=वच्छेसु। इन उदाहरणों में 'वच्द्र' शब्द के श्रन्त्य हस्व स्तर 'श्र' को दीघ स्तर 'श्रा' को प्राप्ति नहीं हुई है। इस प्रकार हस्य से दीर्घता' का विधान केन्नल इकारान्त श्रोर उकारान्त शब्दों के लिये ही है, यह सिद्ध हुआ।

परन — 'भिन्, भ्यम् और सुप्' प्रत्ययों के प्राप्त होने पर ही हस्त्र 'हकारान्त' और हस्य 'वकारान्त' के क्षत्र्य 'स्वर' को दीर्घता होती है, ऐमा चरलेख क्यों किया गया है ? प्रत्यय 'टा' में स्थित 'ट' की इत्सद्धी होने से 'ट' का लोप होकर रोप प्रत्यय 'खा' की प्राप्ति होकर अप्पणा रूप सिद्ध हो जाता है। ख्रयया ३-५१ से पूर्व सिद्ध 'ख्रप्प' राव्ह में ही तृतीया निर्मात के एक वचन में 'राजन वन ध्यासन राज्द सद्दमानान्' सस्कृतीय प्रत्यय'टा' के स्थान पर 'णा' प्रादेश की प्राप्ति होकर (अप्पणा) खप सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय खीर तृतीय रूप (खात्मना=) खप्यिखा तथा खप्पण्डधा में 'कप्प' रूप तक में साधनिका प्रथम रूप वत्, खीर रे-५७ से तृतीया-विभक्ति के एक वचन में 'टी' प्रस्यव के स्थान पर 'खिखा' खीर 'णइखा' खादेश-प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप 'अप्पणिआ' खीर 'अप्पण्डभा' भिद्र हो जाते हैं।

वच्छे रूप की सिद्धि सुत्र सख्या ३-४ में की गई है। वेच्छ रूप की मिद्धि सुत्र सख्या १ २३ में की गई है।।३-१४॥

भिस्भ्यस्सुपि ॥३-१५॥

एपु द्यत ए भीवति ॥ भिम् । वच्छेहि । वच्छेहि । वच्छेहि ॥ स्यस् । वच्छेहि । वच्छेहिन्तो । वच्छेसुन्तो ॥ सुप् । वच्छेसु ॥

अर्थ —माछतीय धकारान्त राव्हों में एतीया विमक्ति के बहुवचन के मध्यय 'मिम्' पे धावेरा-प्राप्त 'हि, हिँ और हिं' की प्राप्ति होने पर, पचनी विमक्ति के बहुवचन के प्रस्यय 'म्यस्' के धादेरा-प्राप्त रूप 'हि, हिन्तो और सुन्तो' की प्राप्ति होने पर खौर सप्तमो विभक्ति के बहुवचन के प्रस्यय 'सुप' के धादेश-प्राप्त रूप 'सु' की प्राप्ति होने पर शब्द-प्रन्त्य स्वर 'झ' के खान पर 'ए' की प्राप्ति हो जाती हैं । जैसे 'मिस्' का चराहरण —एवै =वच्छेहि, वच्छेहिँ 'गौर वच्छेहिं खर्थात एतों से । 'म्यस्' का चराहरण एत्तेभ्य =वच्छेहि, वच्छेहिन्तो और वच्छेमुन्ता धर्यात एतों से । 'सुप्' का चराहरण —एचेषु=वच्छेष्ठ अर्थात एतों पर ध्यवा एतों में।

'यच्छोहि', 'यच्छोहि' और 'यच्छोहि' तृतीयान्त बहुवचन वाले रूपों की सिद्धि सूत्र-सख्या ह-७ में की गई है।

'षच्छेहि', 'षच्छेहिन्तो' श्रीर 'षच्छेतुन्तो' पवम्यन्त बहु बचन वाने रूपों की सिद्धि सून-सरया ३-९ में की गई है। षच्छेतु रूप की सिद्धि सून-सरया १-२७ में की गई है।३-१५॥

इद्दुतो दीर्घः ॥३-१६॥

इकारस्य उकारस्य च भिम् स्यस्तुप्त परेषु दीवो भगति॥ भिस्। गिरीहि । युद्धीहिं। दहीहिं। तहहिं। घेणुहिं। मृहहिं कय ॥ अयस्। गिरीश्रो । युद्धीश्रो । दहीश्रो । तहश्रो । UNBORDED & C. C. AND ANDRE & SANCE BO

धेणुयो । महुयो थागत्रो ॥ एव गिरीहिन्तो । गिरीसुन्तो श्रागत्रो इत्याद्यपि ॥ सुप् । गिरीसु । बुद्धीसु । दहीसु । तरूसु । धेणुसु । महुन् ठित्र ॥ कविन्न गरित । दिश्र-भूमिसु दाण-जलोग्लियाइ ॥ इदृत इति किम् । वच्जेहि । वच्जेसुन्तो । वच्जेमु ॥ मिस्प्यस्सु पीत्येव । गिरितरु पेच्छ ॥

अर्थ —प्राकृतीय ह्रस्व इवारान्त और उकारान्त पुरिता, नपु सक लिंग और स्त्रीतिग शब्दों में एतीया विमक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्रत्यव 'भिस' के स्थान पर आदेश-प्राप्त 'हि, हिँ और हिं प्रत्यों की प्राप्ति होने पर एव पचमा विम क्त के बहुवचन में सस्कृतीय-प्रायय 'प्र्यस्' के स्थान पर आदेश-प्राप्त 'खो, ज, हिंतो और सुन्तो' प्रत्ययों की प्राप्ति होने पर और सप्तमी निमक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्रत्यय 'सुप्' के स्थान पर 'सु' प्रत्यय की प्राप्ति होने पर ह्रस्व अन्त्य स्वर 'इ' का अथवा 'अ' का दीर्ष स्वर 'ई' और 'क' यथा कम से हो जाते हैं । जैसे —'भिस्' प्रत्यय से सर्वायत उदाहरण — गिरिमि =िगरीहिं, बुद्धिमि =बुद्धीहिं, दिधिम = दहीहिं, तर्भम = वरुहिं, धेनुभि = धेणुहिं और मधुमि छतम =महिंह क्य । हत्यादि ।

'श्यस्' से सविधत उदाहरण —िगरिश्य =िगरीची, गिरीहिन्तो और गिरीमुन्तो । वुद्धिस्य = बुद्धिको । दिधस्यः=इहीको । तरुभ्यः=तरुको। धेतुभ्य =धेराको चौर मधुभ्य आगत =महूको लागको । हत्यादि । 'धुप्' से सविधत उदाहरण —िगरिषु =िगरीमु । बुद्धिपु=चुद्धीमु । दिधपु=दहीमु । तरुपु= तरुमु । धेतुपु=धेरामु और मधुपु स्थितम =महूमु ठिल्य । इत्यादि । किन्ही किन्ही शब्दों में 'मु' प्रत्यय की प्राप्ति होने पर हाच लान्य 'ष्ट्र' लायना उ' का दीर्घ 'ई' लायना 'ऊ' नहीं भी होता है । जैसे —िद्धज-भूभिपु दान -जलाद्रीकृतानि =दिल्य-भूभिमु दाण-जलोहिलापाइ । इस उदाहरण में 'भूमोमु' के स्थान पर हस्त इकारान्त रूप कायम रह कर 'भूमिमु' रूप हो दिष्टि-गोचर हो रहा है, यों खन्यम भी जान जैना चाहिये।

प्रश्न-'इक्तारान्त 'वकारान्त' रष्टों में ही 'भित्, भ्यस् और सुप्' प्रत्ययों के प्राप्त होने पर अन्त्य इत्य स्तर के स्थान पर वीर्ष स्वर ही जाता है ऐसा क्यों लिखा है ?

उत्तर — जो प्राफ्ट राब्द 'इकारान्त' श्रयवा 'उकारान्त' नहीं है, वत शब्दों में 'भिम्, भ्यम् श्रीर 'सुप' प्रत्यों की प्राप्ति होने पर भी श्रान्त्य हस्व स्तर का दीर्घ स्तर नहीं होता है, खत ऐमा विधान फेवल इकारान्त श्रीर उकारान्त शब्दों के लिये ही करना पड़ा है। जैसे — बुत्तें = नन्त्रेहि, वृत्तेभ्य = बच्छेसुन्तो श्रोर यृत्तेषु=बच्छेसु। इत बदाहरणों में 'बच्ड' शब्द के श्रत्य हस्य स्तर 'श्र' को दीघ स्तर 'श्रा' को प्राप्ति नहीं हुई है। इस प्रकार हस्य से दीर्घता' का विधान केनल इकारान्त श्रान्ते के लिये ही है, यह सिद्ध हुआ।

परन — भित्, भ्यत और सुन्। प्रत्ययों के प्राप्त होने पर ही हस्त्र 'ईकारान्त' और हस्त्र 'चकारान्त' के ब्रन्त्य 'स्वर' को दीर्घता होती हैं, ऐमा उरुतेल क्यों किया गया है ? उत्तर -यदि हत्व इकारान्त खोर उकारान्त शब्दों म 'भिस् भ्यस् छोर' सुप'प्रत्ययों के श्रविति जन्य प्रत्यया की प्राप्ति हुं• हो तो इन शब्दों क श्रन्त्य हृदर स्वर को बोर्चता की प्राप्ति नहीं हाती हैं। होने —िगिरम श्रयया तरुप् प्रय=िगिरि श्रयया तरु पण्ड । इन उदाहरणों में द्वितीया-विभक्ति के एड घचन का 'म्' प्रत्यय प्राप्त हुश्या, और 'भिस भ्यम् श्रयया सुप प्रत्ययों मा श्रभाव है, तद्तुसार इनमें हस्व स्वर के स्थान पर ₁।घ स्वर की प्राप्ति भा नहीं हुड हैं। यो श्रन्थत्र मी विचार कर लोगा चाहिये।

िगरिभि सम्छन रहायान्त बहुवचन रूप है। इस हा प्राकृत रूप गिरीहिं होता है। इसमें सूत्र स्टया २-१६ म सूत् [गरि शब्दा त (!हृहाय' इस्म स्वर 'इ क स्थान पर दाध ई' को प्राप्त खीर ३७ से रहतीया विभाक्त क बहुवचन में सरकृतीय प्रत्यय '(भसु के स्थान पर प्राकृत म हिं' प्रत्यय को प्राप्ति होकर गिरीहिं रूप (सद्ध हो जाता है।

बुद्धिभि — संग्रत स्तीयान्त बहु ज्यन रूप है। इसका आकृत रूप बुद्धिहि होता है। इसमें सूत्र-सख्या देन१६ स खोर १-७ सं 'गिरीहिं' के ममान ही साधनिका की प्रास्ति होकर *सुन्धिर्दि* रूप सिद्ध हो जाता है।

द्धिमि — सस्कृत सुरीधानत बहुत्त्वन मव ह । इमका आकृत रूप दहीहिं होता है । इममें सूत्र-सस्का १-१८७ से 'घ्' के स्थान पर ह' की आपन खीर रोप-साधनिक सूत्र-सस्का ३-१६ वय १-७ से 'गिरीहि' क समान ही होकर *कृष्टीहिं रूप मिख* हो जाता है ।

तकभि —मस्त्रत तृतीयान्त बहुवचन रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप तरुद्धि होता है। इसमें सूत्र-सन्या ३-१६ में खीर ३-७ से 'गिरोहि' के समान हो साधनिक की प्राप्ति होकर तन्त्रिहें रूप सिद्ध हो जाता हैं।

धेनुभि — सस्कृत तृतीयान्त बहु यचन रूप हैं। इमका प्राकृत रूप घेसाहि होता है। इसमें सूत्र-सत्या १-- २८ से 'म' दे स्थान पर 'ण' की प्राप्ति जीर गेप माधनिका मृत्र सख्या ५-१६ एव ३-७ से 'गिरोहिं' के समान ही होकर थेणुर्हिं रूप सिद्ध हो जाता है।

ग्राभि —सम्हत तृतीयान्त बहुबचन रूप हैं। इसना प्राष्ट्रत रूप महुदि होता है। इसमें सूप्र-सरया १-१८७ सं 'य' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति चीर रेप माधनिका ३-१६ एव ३-७ से 'गिरीहिं' के समान हो होकर महुदि रूप सिद्ध हो जाता हु।

क्य रूप की मिद्धि सूत्र-सरया ?-१75 में की गई है।

गिरिस्य —सस्त्रन पचन्यन्त बहुत्रचन रूप है। इसने प्राष्ट्रन रूप गिरीषो, गिरीहिन्तो और सिरीहुन्तो होते हैं। इनमें सूत्र सत्या ३-१६ से मृत 'गिरि' शटरान्त्य हम्त स्वर 'इ' को दीर्घ स्वर 'इ' की प्राप्ति और १६ से पचमी विभक्ति बोजक प्रत्यय 'खो, हिन्तो, और सुन्तो'की क्रमिय-प्राप्ति होकर क्रम से गिरीजा, गिरीहिन्तो एव गिरीसुन्तो रूपों पी सिद्धि हो जाती है। or c c

बुद्धिन्य माकृत पञ्चनस्यन्त बहुवचन रूप हें । इसका प्राकृत रूप चुद्धीको होता है । इसमें सृत्र-मरया ३ १६ क्षीर ३ ६ से 'गिरीको के समान हो सार्धानका की प्राप्ति होकर बुद्धीको रूप सिद्ध हो जाता है ।

A MARKAGA CANADA CAN

द्धिम्य सस्कृत वञ्चम्यन्त बहुवचन रूप हैं। इसका प्राकृत रूप व्हीओ होता है। इसमें सूत्र-सख्या १ ९८७ से 'घ' के स्थान पर 'ह' को प्राप्ति और ३-१६ तथा ३-६ से 'गिरीओ' के समान ही साधनिका की प्राप्ति होकर क्टोओं रूप सिद्ध हो जाता हें।

तरुम्य संस्कृत पञ्चस्यन्त बहुवचनरूप है। इसका प्राकृत रूप तरूखो होता है। इसमें सूत्र सरया ३ (६ खोर २ ६ से 'गिरोखो' के समान हो साधुनिका की प्राप्ति होकर तरूओं रूप सिद्ध हो जाता है।

धेनुभ्य संश्वत पञ्चस्यन्त बहुवचन रूप है। इसका प्राक्वत रूप घेतुओ होता है। इसमें सून-सरवा १२२८ से 'न्' क स्थान पर ण' की वाति श्रीर ३ १६ तथा ३-६ से गिरीओ' के समान ही रोप साधनिका की प्राप्ति होनर प्रेणुओं रूप सिद्ध हो जाता है।

मधुम्य सरकृत पञ्चम्थन्त बहुबचन रूप है। इसका प्राकृत रूप महूत्र्यो होता है। इसमें सूत्र-सरन्या १-८० से 'ष्' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति श्रीर ३-१६ तथा ३ ६ से 'गिरीश्रो' के समान ही शेप साधनिका की प्राप्ति हावर महूजी रूप सिद्ध हो जाता है।

आगओ रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-२६८ में की गई है।

मिरियु सस्कृत मक्षम्यन्त बहुवचन रूप है। इसका शक्तत रूप गिरीसु होता है। इसमें सूत्र सट्या ३-१६ से हितीय हरा स्तर ह' के स्थान पर दोर्घ स्तर 'ई' की प्राप्ति, खोर १-२६० से 'प्' के स्थान पर 'स' का प्राप्ति होकर मिरीसु हैप सिद्ध हो जाता है।

क्वादिष्ठ सस्कृत सम्म्यन्त बहुवचन रूप है। इसका प्राकृत रूप बुद्धोसु होता है। इसमें सूत्र-मग्च्या ३ १६ से 'इ' के स्थान पर ई' की प्राप्ति और १ २६० से 'प' के स्थान पर 'स्' को प्राप्ति होकर बुद्धांसु रूप मिद्ध हो जाता ई।

दिष्टु सस्कृत सप्तम्यन्त बहुवचन रूप है। इसका प्राक्तत रूप दशीसु होता है। इसमें सूत्र सर्खा १-१८७ से घ् के स्थान पर 'ह् को प्राप्ति, ३-१६ से 'इ' के स्थान पर 'ई' का प्राप्ति खौर १ २६० से 'प्' फे स्थान पर 'सु' की प्राप्ति होकर इट्टोक्ट रूप सिद्ध हो जाता है।

तरुष्ट सरुष्ट समस्यन्त बहुनचन रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप तरुख होता है। इसमे सून सरुवा १-१६ से प्रथम 'च' के स्थान पर दीर्घ 'क' की प्राप्ति खोर १-२६० से 'प्' के स्थान पर 'स्' की प्राप्ति होनर तरुष्ट रूप सिद्ध हो जाता है।

थेनुषु —सस्वृत सप्तम्यन्त बहुवचन रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप घेणुसु होता है। इसमें सूत्र-

/A. A. . A. COCC. TOO AAO OO OO OO OO

उत्तर -यदि हाव इकारान्त श्रीर उकारान्त शब्दो म 'मिस् भ्यस् श्रीर' सुप'पत्ययों के श्रीरिक्ष श्रन्य प्रत्यया की प्राप्ति हुइ हो तो इन शरों के श्रन्त्य ह्रस्य स्वरं को दीर्घता की प्राप्ति नहीं होता है। जैमे -- गिरिम श्रथवा तरुम् पण्य-निर्गि श्रयवा तरु पेष्य । इन उदाहरखों में द्वितीया-विमक्ति के एक वचन का 'म' प्रत्यय वास्त हुआ, श्रीर 'विस , +यम अथना सुप प्रत्ययों का अभाव है, तद्सुसार हत्यें हस्य स्वर के स्थान पर दीर्घ स्वर की प्राप्ति भा नहीं हुई हैं। यों अन्यन मी विचार कर लना चाहिया

िगरिभि सम्हत तृतायान्त बहुवचन हव है। इमजा प्राकृत हव गिराहि होता है। इसमें सुव सख्या ५-१६ से मृल गिरि शब्दात (बहताय' इस्व स्वर 'इ के स्थान पर दाध ई' की प्राप्त और ३७ से सुतीया विभाक्त के यह उचन म सरक्षतीय प्रत्यय 'भिस के स्थान पर प्राकुन में हिं' प्रत्यय को प्रावि होकर गिरीहिं रूप सिद्ध हो जाता है।

बुश्चिमि —सस्कृत वृतीयान्त बहु वचन रूप हैं। इमका प्राष्ट्रत रूप बुद्धिहि होता है। इसमें सूत्र-सर्या २-१६ से और ५-७ स 'गिरीहिं' के समान ही साधनिका की प्राप्ति होकर वाकिन रूप पिद हो जाता है।

दक्षिमि - सस्कृत स्तीयान्त बहुवचन रूप है। इमका प्राकृत रूप दहीहि होता है। इममें सुन्न-सर्या १-१८७ से 'घ' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति श्रीर रोप-मार्थानक सुत्र-सख्या ३-१६ एव १-७ से 'गिरीहि' के समान ही होकर दृष्टीहिं रूप सिद हो जाता है ।

तराभि --सरहत वृतीयान्त बहुवचन रूप हैं। इसका प्राकृत रूप तरुहिं होता है। इसमें सूत्र-सरया ३-१६ से धीर २-७ से 'गिरीहि' के समान ही साधनिक की प्राप्ति होकर तहाई रूप सिद्ध हो जाता है।

धनाम -- सर्यान तृतीयान्त वह वयन रूप है। इसका प्रापृत रूप घेएहिं होता है। इसमें सूत्र-सरवा १--२= सं न्' के स्थान पर 'ण' भी प्राप्ति श्रीर रोप साधनिका सून सरवा ४-१६ एव ३-७ से 'गरीहि' क समान ही होकर धेणूर्डि रूप सिद्ध हो जाता है।

मधुभि —मस्टत रतीया त बहुवचन रूप है। इस हा प्राष्ट्रत रूप महूहि होना है। इसमें सूत्र-सहया १-१८७ स 'ध' के स्थान पर 'ह' की प्रास्ति खोर हेप साधनियो ३-१६ एव ३-७ से 'गिरीहिं' के ममान ही हो कर महाई क्व सिद्ध ही जाता है।

क्य रूप की मिद्धि सूत्र-साथा १-१२६ में की गई है।

गिरिन्य -सस्कृत पचम्यन्त बहुवचन रूप है। इमने प्राकृत रूप गिरीछी, गिरीहिन्ती और गिरीपुन्तो होते हैं। इनमें सूत्र सरया ३-१६ से मूल 'गिरि' शब्दान्त्य द्वग्व स्वर 'ह' को दीर्घ स्वर 'इ' का भाप्ति और ३६ से पचनी विमक्ति बोधक प्रत्यय 'खो, हिन्तो खीर सुन्तो'की क्रमिक-प्राप्ति होकर क्रम से गिरीजी, गिरीहिस्ती एव गिरीमुस्ती रूपें को सिद्धि हो जाती हैं ।

शृद्धिस्य मश्कृत पड्यस्यन्त बहुवधन रूप हैं। इमका प्राकृत रूप बुद्धीश्रो होता है। इसमें सन्न -मर्या ३ १६ और ३-६ से 'गिरीओं के समान हो सार्यानका की प्राप्ति होकर बुद्धीओं रूप सिद्ध हो जाता है।

दिशस्य सरकत वञ्चम्यन्त बहुवचन रूप है। इसका प्राकृत रूप वहीत्री होता है। इसमें सूत्र-सरवा १-१८७ से 'ध' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति और ३-१६ तथा ३-६ से 'गिरीजो' के समान ही साधनिका की प्राप्ति होकर दहीं की रूप सिद्ध हो जाता है।

तरुम्य मस्कृत पञ्चम्यन्त बहुउचन रूप है। इसका प्राकृत रूप तरूओ होता है। इसमें सूत्र-सख्या ३ (६ श्रीर ३ ६ से 'गिरीश्री' के समान ही साधुनिका की प्राप्ति होकर तहुओं रूप सिद्ध ही जाता है।

धेनुम्य संग्रुत पञ्चम्यात बहुवचन रूप है। इसका प्राकृत रूप धेरा हो होता है। इसमें सूत्र-सल्या १ २२ द में न' के स्थान पर 'ण' की प्राप्ति श्रीर ३-१६ तथा ३ ६ से गिरीश्री' के समान ही शेप साधनिका की प्राप्ति हो रर धेणओं रूप सिद्ध हो जाता है।

मधुम्य सरकृत पञ्चम्यन्त बहुबचन रूप है। इमका प्राकृत रूप महुत्रो होता है। इसमें सूच-सख्या १-रूप से 'घ' के स्थान पर 'ह्' की प्राप्ति और ३-१६ तथा ३ ६ से 'गिरीको' के समान ही शेप साधनिका की शांति होकर महओ रूप सिद्ध हो जाता है।

भागओं रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-२६८ में की गई है।

गिरियु सस्कृत महम्यन्त बहुवचन रूप है। इसका शकुत रूप गिरीसु होता है। इसमें सूत्र सट्या ३ १६ से द्वितीय हरत स्वर ह' के स्थान पर दोर्घ स्वर 'ई' की प्राप्ति, श्रोर १-२६० से 'प' के स्थान पर 'स' का प्राप्ति होकर गिरीस हव मिद्ध हो जाता है।

शबिए सस्तृत सप्तम्यन्त बहुबचन रूप है। इसका प्राकृत रूप बुद्धोसु होता है। इसमें सूत्र-सख्या ३ १६ से 'इ' के स्थान पर 'ई' की प्राप्ति श्रीर १-२६० से 'प' के स्थान पर 'स' की प्राप्ति हो कर द्वर्द्धाः ह्वप मिद्ध हो जाता ह ।

द्रिपृष्टु सस्ट्रत सप्तम्यन्त बहुवचन रूप है। इसका प्राकृत रूप दहीस होता है। इसमें सूत्र सख्या १ १म७ से घु के स्थान पर 'ह की पाप्ति, ३ १९ से इ' के स्थान पर 'ई' की प्राप्ति और १ २६० से 'प' फे स्थान पर 'स्' की प्राप्ति होकर दहाँस रूप सिद्ध हो जाता है।

तरुप सरकृत मतम्यन्त बहुउचन रूप है। इसका प्राकृत रूप तरुस होता है। इसमे सूज-सरवा ३ १६ से प्रथम 'उ के स्थान पर दीर्घ 'ऊ' की प्राप्ति ध्योर १-२६० से 'प्' के स्थान पर 'स्' की प्राप्ति होकर तहन हुप सिद्ध हो जाता है।

धेनुषु —सस्मृत सप्तम्यन्त बहुवधन रूप है। इसका प्रापृत रूप घेरासु होता है। इसमें सूत्र-

^^०००० वे 'न' के स्थान पर 'ण्' की प्राप्ति, ३ १६ से प्रथम 'न' के स्थान पर दोर्घ 'न' की प्राप्ति सार्त्या १-२२० से 'न' के स्थान पर 'ण्' की प्राप्ति, ३ १६ से प्रथम 'न' के स्थान पर दोर्घ 'न' की प्राप्ति स्वीर १-२६० से 'प के स्थान पर 'स' की प्राप्ति होकर छेणूस रूप सिद्ध हो जाता है।

मधुषु —सन्छत सप्तम्यन्त बहुबचन रूप है। इसका प्राकृत रूप महून् होना हे । इसमें स्पन् सच्या १-१८० से 'धृ' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति, ३-१६ से प्रथम 'ड' के स्थान पर दार्च क' की प्राप्ति श्रीर १-२६० से 'पृ' के स्थान पर 'सृ' की प्राप्ति होकर महूनु रूप सिद्ध हो जाता है।

स्थितम् —मस्कृत विशेष्ण रूप है। इसका प्राकृत रूप दित्र होता है। इसमे सुन मध्या ८१६ से 'स्था' के स्थान पर 'ठा' खादेरा, दे-१४६ से प्राप्त रूप 'ठा' मे स्थित अन्त्य आ' के स्थान पर इ' की प्राप्ति, १-१७० से कुदन्तीय विशेषणात्मक प्रत्यय 'त' का लोप, १ २४ से प्रयमा विभक्ति क एक नचन में खकारान्त नपु सकर्लिंग में 'सि' प्रत्यय के स्थान पर म्' प्रत्यय की प्राप्ति खोर २ २५ से प्राप्त 'म्' का खाइसार होकर ठिंग रूप सिद्ध हो जाता है।

हिज-भूमियु:- सस्कृत सप्तम्यन्त बहुवचन रूप हैं। इसमा प्राकृत-रूप दिश्र भूमियु होता है। इसमें सूत्र सख्या २ ७६ से 'व्' का लोप, १-१७७ से 'ज्' का लोप श्रीर १ २६० से 'व्' के स्थान पर 'स्' की प्राप्ति होकर दिश भूमियु रूप सिद्ध हो जाता है।

दान-जलादीकृतानि —सस्कृत विशेषण रूप हैं। इनका प्राकृत रूप दाण-जलोहिल खाई होसा है। इसमें सून सख्या १ २२६ से 'त' के स्थान पर 'ण' की प्राप्ति, १ ६२ से 'खार्ट्री' में स्थित 'खा' के स्थान पर 'खो की प्राप्ति, १ १० से 'जल' में 'ल' में स्थित अन्त्य 'ख' का लोप, २ ७६ से रेंफ रूप 'र्' का लोप, २-७७ से दितीय 'द्' का लोप, १-२४४ से शेप 'र् के स्थान पर 'ल' आदेश, १-६६ से खादेश प्राप्त 'ल्' को दित्य 'ल्ल' की प्राप्ति, १ ६४ से दीर्घ स्वर 'ई' के स्थान पर इस स्वर 'इ' की प्राप्ति, १ १० से से लिए से 'ख' को लोप, १-१० से लुग्त 'क्' में से शेप रहे हुए 'छ' का खागे 'खा' की प्राप्ति, १ १७७ से 'फ' खीर 'घ' का लोप, १-१० से लुग्त 'क्' में से शेप रहे हुए 'छ' का खागे 'खा' जो जाने से लोप प्रयाप १-५ से 'ख' के साथ में 'खा' की सीधि होकर दोनों के स्थान पर 'खा' की प्राप्ति, खीर ३ २६ से प्रथमा खथया दितीयों निमक्ति के बहुन्यन के सरकृतीय प्रत्यय 'नि' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर दाण-जलाोस्थमाइ रूप सिद्ध हो जाता है।

षच्छीईं रूप की सिद्धि सून सप्या है-७ में की गई है। षच्छेमुन्ती रूप की सिद्धि सून सप्या है-९ में की गई है। षच्छेमु रूप की सिद्धि सून सप्या है १५ में की गई है।

गिरि हव की सिद्धि सुत्र सख्या १-२३ में की गई है।

तरुम् सस्कृत द्वितीयान्त रूप है। इसरा प्राकृत रूप तरु होता है। इसम सूत्र सख्या ३-४ से द्वितोया विभक्ति के एक वचन में 'म् प्रत्यय की प्राप्ति और १-२३ मे प्राप्त 'म' का खनुस्वार होकर तरु रूप सिद्ध हो जाता है।

पेच्छ रूप की सिद्धि सूत्र-सन्या १-२ में का गई है ॥३ १६॥

चतुरो वा ॥३--१७॥

चतुर उदन्तस्य भिम् भ्यम्-सुप्सु परेषु दीघो वा भगति ॥ चऊहि । चऊछो । चडको । चऊस चडस ॥

अर्थ — 'चतुर ' सस्तृत शुरू के प्राकृत रूपान्तर 'चड' में मृतीया विभक्ति के बहुउचन के प्रत्यय 'मिस्' के खादेश-प्राप्त प्रत्यय 'हि हिँ खोर हिं' को प्राप्ति होने पर, पचमी निमक्ति के बहुउचन के प्रत्यय 'प्रस्त्य' के खादेश प्राप्त प्रत्यय हिं' हिन्तों सुन्ता' खादि की प्राप्ति होने पर खौर सप्तमो निमक्ति के बहुवचन के प्रत्यय 'सुप' के खादेश प्राप्त प्रत्यय 'सुप' के प्रयाप स्वर्ध 'क्र' की प्राप्ति होने हैं । जैसे —चतुर्भिः=चऊहि खयना चवहि, चतुर्भ्य =चऊछो खयना चवहों प्रत्या चवहि, चतुर्भ्य =चऊछो खयना चवहों श्रीर चतुर्पुः=चऊछो खयना चवहों ।

चतुर्भि सम्झत तृतीयान्त सख्या वाचक बहुवचन-विशेषण रूप है। इमके प्राक्त रूप चऊहि धोर चडिह हाते है। इनम सूत्र-सख्या १-११ से मूल सम्झत राष्ट्र 'चतुर' में स्थित खान्त्य हलन्त ब्यञ्जन 'र्' का लोप, १-१७७ से त' का लोप, १-१७ से शेप 'उ' को वैम्लियक रूप से ीर्घ 'ड' की प्राप्ति, खोर ५ फे से तृतीया विभक्ति के बहुनचन में सम्झताय प्रत्यय 'मिस्' के स्थान पर खादेश-प्राप्त 'हि' प्रत्यय का प्राप्ति होकर कम से शोनों रूप चऊहि खोर चडाह सिद्ध हो जाते हैं।

चतुर्भ्य सर्फ़त पद्धम्यन्त सरया वाचक बहुत्रचन-विशेषण रूप है। इनके प्राकृत रूप चळचो छौर चबचो होते हैं। इनमें 'चऊ' छौर 'चड' तक की साधनिका इसी सूत्र में कृत उपरोक्त रीति -चतुसार, खौर ३ ६ में पचना विभक्ति के बहुत्रचन में सरकृतीय प्रत्यय भ्यम्' के स्थान पर छाडेश आप्त 'खो' प्रत्यय की प्राप्ति हाकर कम में होनों रूप चळको छौर चड़कों सिद्ध हो जाते हैं।

चतुर्ष्ट्रं सन्छत सप्तम्यन्त सन्या वाचक बहुवचन विशेषण ६० है। इसके प्राकृत रूप चक्रमु श्रीर चउतु होते दें। इनमें 'वक' थौर 'चव' तक को साधनिका इसी सूत्र में उपरोक्त रीति श्रमुमार श्रीर १२६० से 'प्' के स्थान पर 'स् को आप्ति होकर क्रम से दोनों रूप चक्रमु और चउनु सिद्ध हो जाते हैं।।३-१७॥

लुप्ते शसि ॥३--१⊏॥

इदुतीः शिंस लुप्ते दीवों मनति ॥ गिरी । उदी । तहः । घेण् वेच्छ ॥ लुप्त इति किम ।

थेनु - संस्कृत द्वितीयान्त बहुवचन रूप है। इसका प्राकृत रूप घेलु होता है। इसमें सब सल्या १-२२८ से 'न्' क स्थान पर 'णू' की प्राप्ति, ३-३ से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन भ 'शस्' प्रत्यय का -प्राप्ति होकर प्राप्त प्रत्यय का लोप छोर ३ १८ से प्राप्त प्रत्यय 'शस' का लोप होने से श्रान्य हरूर हार

'ड' को होई धर 'ड' की प्राप्ति होकर धेण रूप मिद्ध हो जाता है। पिच्छ' — रूप की मिद्धि मूत्र सख्या १ २३ में की गई है।

'कच्छे' — रूप की सिद्धि सूत्र सख्या हु ४ में की गई है। ३ १८॥

अक्लीवे सी ॥३-१६॥

इद्तो क्लीने नपुंसकादन्यत्र सौ दीर्घो भनति ॥ गिरी । बुद्धी । तरु । घेए ॥ श्रम्लीय इति किम् । दहिं । महु ॥ सामिति किम् । गिरिं । बुद्धि । तरुं । घेणुं ॥ केचिच दीर्घरम् विकल्प्य तदमावपचे सेमदिशमपीच्छन्ति । अगि । निष्टि । वाउ । निष्ट ॥

अर्थ —प्राफ़तीय इकारान्त श्रीर उकारान्त शब्दों में से नपु सक लिंग वाले शब्दों को छोड़कर रोप रहते वाल पुल्लिंग छोर स्त्रांलिंग राग्दों म प्रथमा विमक्ति के एक वचन में प्राप्त होने वाले 'मि' प्रत्यय के स्थान पर चन्त्य हरून स्वर 'इ' को खथवा 'ख' को दोर्घ 'ई' की खथवा दोर्घ 'ऊ' की यथा कम

से प्राप्ति होती है। साराश यह है कि इकारान्त जकारान्त पुल्लिंग प्रथवा स्त्रीलिंग शब्दों के चान्त्य हस्य स्वर को प्रथमा विभक्ति के एक वचन म 'सि' प्रथ्य का लाप हो कर दीर्घ स्वर की प्राप्ति होती है। जैसे —गिरि भागी, बुद्धि श्वदा, वह श्वीर घेन श्वेण प्रत्यादि ।

प्रदम ---इकारान्त अथवा चकारान्त नपु सक लिंग वाले शब्दों का निपेध क्यो विया गया है रि उत्तर —इकारान्त द्यथवा उकारान्त नपु सक लिंग वाले शब्दों में प्रथमा विमक्ति के एक वचन

में सत्र-मद्या ३ २५ के विधान से प्राप्त प्रत्यय 'सि' के स्थान पर हलन्त म' की प्राप्ति होती है, ब्रातः ऐसे तप सकतिंग वाले शब्दों म प्रथमा विमत्ति के एक वचन में पुल्लिग खयवा स्त्रीलिंग में प्राप्त होने

वालो दीर्घना का खमाव प्रदर्शित करना पड़ा है। जैसे —दिघम्=दहि श्रीर मधुम्=मद्ध इत्वादि। प्रकृत -- मूल सूत्र में 'सी' श्रार्थात् 'मि' प्रस्वय के प्राप्त होने पर श्रान्य हुता स्वर 'इ' को श्रायता

उत्तर —इकारान्त श्रीर उकारान्त पुल्लिंग श्रथवा स्त्रीलिंग शब्दों में श्रन्त्य हम्ब स्वर की

'ड' को बोर्घता की प्राप्ति होती है, ऐमा व्यों लिया गया है ?

दीर्घता 'मि' प्रत्यय के प्राप्त होने पर होती है, न कि द्वितीया विभक्ति के एक बचन में 'म' प्रायय की शान्ति होने पर । जैसे —िगरिम्=िगरि अर्थात् पहाड़ को, बुढिम=बुद्धि वर्थात् बुद्धि को, तहन्≈तह वर्धात वृत्त को छीर धेतुप=धेरा अर्थात गाय को, इत्याति। इन चनाहरणों में द्वितीय निमक्ति-बोधक 'म्'

प्रत्यय की पादित होने पर अन्त्य हृश्व स्वर क्यों का त्यों ही बना रहा है, जबकि प्रयमा विभक्ति के एक बचन में अन्त्य हृश्य श्वर दोई हो जाता है, ऐमा अन्तर प्रदर्शित करने के लिये ही मूल सूत्र में 'सौ' धर्थात 'सि' श्ल्यय के परे रहने पर इस प्रकार को उन्लेख करना पड़ा है।

कोई कोई प्राकृत मापा के विद्वान ऐसा भी मानते हैं कि इकारान्त खौर दकारान्त पुल्लिंग ख़थवा रत्नीलिंग राष्ट्रों में प्रथमा विभक्ति के एक वचन में 'सि' प्रत्यय के स्थान पर वैकल्पिक रूप से हलन्त 'मू' ख़ादेश की प्राप्ति भी होती हैं। ऐसी स्थिति में खन्त्य इग्व स्वर को दोर्पता की प्राप्ति भी नहीं होगी। इस प्रकार 'मि' प्रत्यय के ख़भाव में दीर्घता की प्राप्ति भी नहीं होगी। इस प्रकार 'सि' प्रत्यय के ख़भाव में दीर्घता का मो ख़भाव करके प्रथमा-विभक्ति वाधक 'मू' प्रत्यय की ख़ादेश रूप कल्पना वैकल्पिक रूप से करते हैं। जैसे - ख़िंग = ख़िंग, निष्य = निर्ह, वायु =वाड ख़ीर विधु ख़यवा विभु = विदु। इत्यदि। इन उदाहरणों में प्रथमा विभक्ति बोधक 'सि' प्रत्यय के स्थान पर 'मू' रूप प्रत्यकों कल्पना की गई है। किन्तु यह ध्यान में रहे कि ऐसे रुपों का प्रचलन ख़त्यल्य है-गौण है। 'बहुलाधिकार' से ही ऐसे रूपों को कहीं कहीं पर स्थान दिया जाता है। सर्व-सामान्य रूप से इनका प्रयक्त नहीं है।

गिरि -सस्कृत प्रथमान्त एक वचन रूप है। इसका प्राकृत रूप गिरी होता है। इसमें सूत्र-सख्या ३ १६ से प्रथमा विभक्ति के एक वचन में सस्कृतीय प्रत्यय 'सि' के स्थान पर खन्त्य हुस्व स्वरु 'इ' को दीर्घ स्वर 'ई' की प्राप्ति होकर गिरी रूप सिद्ध हो जाता है।

चुन्हि —सस्कृत प्रथमान्त एक वचन रूपं है। इसका प्राफ़्त रूप युद्धी होता है। इसमें सूत्र-सख्या ११६ से प्रथमा त्रिमिक्त के एक बचन में 'सि' के स्थान पर अन्त्य 'ह' को 'ई' की प्राप्ति हाकर चुद्धी रूप सिद्ध हो जाता है।

तरू सम्छत प्रथमान्त एक वचन रूप है। इसका प्राफ़्त रूप तरु होता है। इसमें सूत्र सख्या ३-१६ से प्रथमा विमक्ति के एक वचन में 'सि' के स्थान पर धन्त्य 'ख' को 'ऊ' की प्राप्ति होकर तरू रूप सिद्ध हो जाता है।

धेतु सम्छत प्रथमान्त एक बचन रूप है। इसका प्राकृत रूप धेसू होता है। इसमे सूंन सत्या १-२२८ से 'न्' के स्थान पर 'स्ए' की प्राप्ति श्रीर ३-१६ से प्रथमा विमक्ति के एक चचन में 'सि' के स्थान पर श्रन्त्य 'ड' को 'ऊ' की प्राप्ति होकर थेणू रूप सिद्ध हो जाता है।

दृष्टिम् सस्कृत प्रथमान्त एक षचन रूप है। इसका प्राफ़ृत रूप दृष्टि होता है। इसमे सूत्र-संन्या १९८० से 'प्' के स्थान पर 'ह्' की प्राप्ति, ३२४ से प्रथमा विभक्ति के एक बचन में 'सि' प्रस्वय के स्थान पर 'म् प्रस्वय को प्राप्ति खौर १-२३ से प्राप्त हतन्त प्रस्वय 'म्' अनुस्वार होकर दृष्टि रूप सिद्ध हा जाता है।

मधुम् सस्कृत प्रथमान्त एक वचन रूप है। इसका प्राकृत रूप महु होता है। इसकी साधनिका 'दिहें के समान हो होकर मधु रूप सिद्ध हो जाता है

'गिरिं' रूप की सिद्धि सूत्र संख्या १-२३ में की गई है।

दुर्ज्विस सम्झत दितीयान्त एक षधन रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप दुद्धि होता है। इसमें सून सख्य ५-४ से दितीया विभक्ति के एक षघन में मं प्रत्यय की प्राप्ति और १ -३ से प्राप्त प्रत्यय 'म्' का शतुखार होकर दुर्ज्वि रूप सिद्ध हो जाता है।

तरुम सस्कृत द्वितीयान्त एक यचन रूप है। इसका प्राकृत रूप तरु होता है। इसकी सावनिक चपरोक्त 'युद्धि' के समान ही होकर तरु रूप सिद्ध हो जाता है।

धेनुम् —सस्कृत द्वितीयान्त् एक वचन रूप ईं। इसका प्राफुन रूप घेग्यु, होता है। इसमें सूक् सख्या १२२८ से 'न्' के स्थान पर ण्' वा शांति और शेष साधनिका का वपरोक्त 'युर्ढि' के समान ह होकर धेणु रूप सिद्ध हो जाता हैं।

अभिन -मस्कृत रूप हैं। इसका व्यार्प प्राकृत रूप व्यामि होता है। इसमें सूत्र-सख्या २-७८ से 'न का लोप, २-८६ से लोप हुए 'न' के पश्चात् रोप रहे हुए 'ग' को दित्य 'म्ग्' को प्राप्ति क्यौर ३ १६ की शृत्ति से प्रथमा विभक्ति के एक वचन में सि' प्रत्यय के स्थान पर 'म्' व्यादेश को प्राप्ति होकर अभिग रूप सिर हो जाता है।

निष्ठि —सस्टूत रूप है। इसमें खाप प्राकृत रूप निर्दि होता है। इसमें सूत्र सख्या १-१८० र 'घ्' के स्थान पर 'ह्' की प्राप्ति खोर ३ १६ भी छुत्ति से,प्रथमा विभक्ति के एक यचन में 'सि' प्रत्यय व स्थान पर 'म्' खादेश की प्राप्ति होनर निर्दि रूप सिद्ध हो जाता है।

यायु,— संश्वत रूप हैं। इसका श्राप प्राकृत रूप यात होता है। इसम सूत्र संस्था २ उद्य से 'व् का लोप और ३-१६ की पृत्ति सं अधमा विभोक्त क एक वचन म 'सि प्रत्यय के स्थान पर 'म्' आदेश हा प्राप्ति होकर याउ रूप सिद्ध हो जाता है।

हिसु —संस्कृत रूप है। इसका श्राप प्राष्ट्रत रूप बिहु होता है। इसमें सूत्र मस्या १ १८० से प्र' के स्थान पर 'ह् भी प्राप्ति शौर ३ १६ भी प्रत्ति से प्रथमा विभक्ति के एक वचन में मि' प्रत्यय के स्थान पर 'म' खादेश का प्राप्ति होनर स्विटु रूप सिद्ध हो जाता है। २-१६ ॥

पु सि जसो डउ डग्रो वा ॥३-२०॥

इद्रुत इतीह पश्चम्यन्तं मनस्यते । इद्रुवः प्रस्य नतः पु सि यउ यथो इत्यादेणी हिर्त। वा भवतः ॥ प्रमाउ यम्मथो । वायउ वायथो चिट्ठन्ति ॥ पत्ने । थमिग्वो । नाउणो ॥ येपे थदन्तवत् मावात् यम्मी । नाऊ ॥ पु मीतिकिम् । दुदीयो । धेण्यो । दहीई । सहुई ॥ अस इति किम् । श्रम्मी । थम्मिको । वाऊ । वाउको पेन्छह् ॥ इद्गुत इत्येय । वन्छा ॥

अर्थ —इस मूल-सूत्र में 'इकारान्त उकारान्त से 'ऐसा वल्लेख नहीं किया गया है, कत श्रर्थस्पष्टीकरण ये उद्देश्य से 'इदुत' = इकारान्त उकारान्त शब्दों से ऐसा पद्ममी बोधक सद्यध वाचक
अध्याहार कर लेना चाहिय । तदतुमार इकारान्त उकारान्त पुल्लिंग प्राफ्ठत रान्दों में प्रथमा विभक्ति के
बहु वचन के प्रत्यय 'जस्' के स्थान पर वैकलिस्क रूप से 'उउ' और 'उओ' प्रत्ययों की आदेश-प्राप्ति
हुआ करती है। आदेश प्राप्त प्रत्यय 'उउ' और 'उओ' में स्थित 'इ' इस्तइक होने से शब्दान्त्य 'इ' और
'उ' की इस्तहा होकर इन 'इ' और 'उ' का लोप हो जावा है तथा आदरा-प्राप्त प्रत्ययों का रूप भी
अउ' और 'अओ' रह जाता है । जैसे —अम्नय = अम्मउ और अम्मआ। वायव विष्ठन्ति=वायव
वायक्षों चिट्टान्त । वैकल्पिक पक होन से सुत्र सत्या ३ २२ के अनुसार (अम्नय =) अभिगणों और
(यायवः) वावणों रूप मो होते हें। 'अउ' और 'अओ' तथा 'णो' आदेश-प्राप्ति के अभाव में प्रथमा
विभक्ति क बहुवचन में अकारान्त पुल्लिंग शब्दा-रूप के समान ही सूत्र सख्या ३-४ से 'जस्' प्रत्यय की
प्राप्ति और लोप अम्हवा प्राप्त होकर तथा सुत्र सख्या ३ र२ से अन्त्य हस्व स्वर 'इ' अयवा 'उ' को
दोषेता की प्राप्ति होकर अम्मी 'बोर 'वाज' रूप भी होते हें। इस प्रकार इन्गरान्त और उकारान्त
पुल्लिंग शब्दों के प्रथमा विभाक्त के बहु वचन में चार चार रूप हो जाते हैं, जोकि इस प्रकार हैं —अम्मय =
घगात, अम्मओ, अस्मिणों और अम्मी। वायव = नायव, वायको, वावणों और वाजः॥

प्रकृत'—इकाशन्त एकारान्त पुल्लिंग शब्दों में ही 'खडा' और 'खडां' खादेश-प्राप्ति होती है, ऐसा बल्लेख क्यों किया गया है ?

उत्तर —स्त्री लिंग वाचक श्रीर नपु सक लिंग वाचक इकारान्त उकारान्त शहरों में 'तस' प्रत्यय की प्राप्ति होने पर 'श्रव' श्रीर 'श्रवो' आदेश प्राप्ति का अभाव है, अत पुल्लिंग शहरों में ही इन 'श्रव' श्रीर 'श्रवों' आदेश प्राप्ति का अभाव है, अत पुल्लिंग शहरों में ही इन 'श्रव' श्रीर 'श्रवंं' का सद्भाव होने से 'पु सि' ऐसे शब्द का मृल सूत्र में उन्लेख करना पड़ा है। जैसे -बुद्धय = बुद्धों श्रो, पेनव =धेराह्मों, देपीन =दहीइ श्रीर मधूनि = महूद इत्यादि । इन छदाहरणों में पुल्लिंगत्व का श्रमाव होने से श्रीर 'श्रवं' श्रीर 'श्रवंं' श्रीर 'श्रवंं स्त्रों' का सद्माव होने से 'श्रवं का तात्पर्यं विशेष जान लेना चाहियं।

मन्न —प्रथमा विभक्ति बोषक 'जस्' प्रत्यय की प्राप्ति हाने पर ही 'अट' और 'अखो' खादेश-माप्ति होती है, ऐसा क्यों कहा गया है ?

जत्तर — प्रथमा विभक्ति बोषक प्रत्यय 'जस्' के श्रविरिक्त द्वितीया विभक्ति बोषक 'शस्' प्रत्यय को प्राप्ति होने पर श्रयया श्रम्य विभक्ति बोषक प्रत्ययों की प्राप्ति होने पर भी उन अत्ययों के स्थान पर 'खड' श्रोर 'श्रश्नो श्रादेश-प्राप्ति नहीं होती हैं। खत 'खड' 'श्रीर 'श्रश्नों' खादेश-प्राप्ति केवल 'जस्' प्रत्यय के स्थान पर ही होती है, ऐसा तात्यर्य प्रदर्शित करने के लिये ही मूल-सूत्र में 'जसों' ऐसा उन्लेख

प्रश्न इस सूत्र की गृत्ति में श्रादि में 'इकारान्त' और 'उकारान्त जैसे राव्हों के उल्लेख करने का क्या तास्पर्य-विशेष है ?

उत्तर — 'जस्' प्रत्यय की मिति 'इकारान्त' और 'वकारान्त' राट्रों के श्रातिरिक्त 'श्रकारान्त' आदि कन्य राघ्यों में भी होती है, श्रव सूत्र-सच्या २ २० से 'जस्' प्रत्यय के स्थान पर होने वाली 'श्रव' और 'क्षश्रो' आदेश-प्राप्ति केवल इकारान्त और उकारान्त राघ्यों में ही होती है। श्रकारान्त आदि राध्यों में नहीं हुआ करती है। ऐसी विशेषता प्रत्य करने के लिये ही युक्ति के प्रारम्भ मं 'इकारान्त' और 'वकारान्त पद्मी संयोजना करनी पड़ी है। जैसे -प्रसा=तष्ट्या। इस वदाहरण से प्रनात होता है कि जैसे-श्रमण और श्रमणों तथा वायव और वायथो रूप बनते हैं, वैसे 'वष्ट्रव' और 'वष्ट्रआ' रूप प्रथमा विमक्ति के बहुवचन में नहीं बन सकते हैं। इम प्रकार इस सूत्र में और वृक्ति में लिखित 'पु सि, 'जसी' और 'इदुव ' पश्चे की विशेषता जाननी चाहिये।

अगनय सत्कृत प्रथमा रूप है। इसके प्राकृत रूप आगात, आगाओ और धामिणो होते हैं। इसमें से प्रथम दो रूपों में सूत्र-सख्या र-७८ से 'न्' का लोप, 5-८६ से लोप हुए 'न' के पथ्यात रोप रहे हुए 'म' को दिल 'म्म' को प्राप्ति, रे-२० से प्रथमा विमक्ति के बहुवचन में सत्कृताय प्रत्यय 'जस्' के स्वानीय रूप 'खस्' के स्वानीय रूप 'खस्' के स्वानीय रूप 'खस्' के स्वान पर प्राकृत म वैकित्यक रूप स 'ढड' और 'ढखा' आदेश-प्राप्ति, आदेश-प्राप्ति, कादेश-प्राप्त प्रत्यय 'ढड' और 'ढखां' खोरा-प्राप्ति, आदेश-प्राप्त प्रत्यय 'ढड' और 'ढखों' की श्रम' स्वान्त्य स्वर 'इ' की इस्तक्षा होकर लोप एव खत में रे-२० से प्राप्त प्रत्यय 'खड' और 'खओं' की श्रम' में सचोजना होकर कम में एव वैवत्यिक रूप से दोनों रूप अग्गउ और अग्गओं सिद्ध हो जाते हैं।

अनिगणी रूप की सिद्धि सूत्र-संख्या १-२७ में की गई है।

थायय — मस्कृत प्रथमान्त रूप है। इसके प्राकृत रूप याय । वायकी और धानणी होते हैं। इसमें से प्रथम दो रूपों में सूत्र संख्या दे २० से सरकृतीय प्रथमा विभाक्त घोषक प्रत्यय 'अस्' क त्यानीय रूप 'अस' के स्थान पर प्राप्टत में 'ढड' और 'ढखो' प्रत्यों की वैकत्विक रूप में खादेश प्राप्ति, खादेश प्राप्त प्रय्य 'ढड' खोर 'ठखों में स्थित 'ढ' इत्सद्यक होने से मून शन्द 'पायु में स्थित खन्त्य स्वर'ड' की इत्सद्या होकर लोप एव तत्यधात शेष रहे हुए 'वायु' रूप में एम से से 'खड' और 'थखों। प्रत्यों- की

सयोजना होकर प्रथम के दो रूप कम से एव वैकल्पिक रूप से 'वायड' श्रीर 'वायओं' सिद्ध हो जाते है ।

नृतीय रूप (वायव =) वाउणो में सृत्र सख्या २ अद से 'यु' का लोप श्रीर ३ २२ से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में संस्कृतीय प्रत्यय जस के स्थानीय रूप 'अस' के स्थान पर प्राकृत में 'णा' प्रत्यय की चैकल्पिक ह्म से आदेश प्राप्ति होकर वतीय रूप 'चाउणी' मिद्ध हो जाता है।

अगनया--सारकृत प्रथमान्त रूप है। इनका पाउत रूप श्रमो होता है। इसमें सूत्र सख्या २ ७५ से 'न्' का लीप, २ ८६ से शेप 'म' की द्वित्व 'मा' की प्राप्ति, ३-४ से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में प्राप्त प्रत्यय 'जस्' का लाप श्रीर ३-१२ से प्राप्त एव लुप्त प्रत्यय 'जस' के कारण से श्रन्त्य हस्य स्पर 'इ' की दीर्घ स्वर ई' की प्राप्ति होकर प्रथमानत रूप अम्मी सिद्ध हो जाता है।

चायच --सरकृत प्रथमान्त रूप है। इसका प्राकृत रूप बाऊ होता है। इसमें सूत्र सख्या २ ७५ से 'य' का लोप, ३ ४ से प्रथमा विमक्ति के वहत्रचन में प्राप्त प्रत्यय 'जम' का लोप श्रीर ३-१२ से प्राप्त एव लुप्त प्रत्यय 'जल' के कारण से अन्त्य द्वश्य स्वर 'उ को शीर्घ स्वर 'ऊ' की प्राप्ति होकर प्रथमान्त रूप राज सिद्ध हो जाता है।

बुद्धय - मस्कृत प्रथमान्त बहुवचन रूप है। इसका प्राकृत रूप बुद्धीको होना है। इसमें सूत्र-सच्या ३ २७ से अन्त्य हम्ब १४र 'इ' को टार्घता की प्राप्ति के साथ 'खो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर वसीओ स्प सिद्ध हो जाता है।

धेनच - सम्बत प्रथमानत बहुतचन क्रव है। इनका प्राकृत रूप घेरा त्रो होता है। इनमें मूत्र-सख्या १- २८ से 'न' को ण को प्राप्ति श्रीर ३ २७ से सस्क्रताय प्रथमा विभक्ति नाधक प्रत्यय 'जम' के स्थानीय रूप 'श्रस' के स्थान पर प्राकृत में श्रन्त्य हुस्य स्वर 'ख' को दीघ 'क की प्राप्ति के साथ 'खा' प्रत्यय की प्राप्ति होकर धेंगुओं रूप सिद्ध हा जाता है।

इधीनि मस्टत प्रथमान्त रूप है। इसका प्राफ्टन रूप दहीइ होता है। इसमें मूत्र-सख्या १-१-७ से 'ध्' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति और ३ २६ से प्रथमा विभक्ति के बहुउचन में नषु मक लिंग में सस्कृत मत्यय 'जसु' के स्थानीय रूप श्रन्त्य स्तर की दीर्घता पूर्वक 'नि' के स्थान पर आकृत में श्रन्त्य स्तर की दीर्घता के साथ 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर दहाँड रूप सिद्ध हो जाता है।

मधनि सस्कृत प्रथमान्त रूप है। इसका प्राकृत रूप महुद्द होना है। इसमें सूत्र-सन्या १-१८७ से 'घ' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति और ३-२६ से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में नपु सक लिंग में सस्टून प्रत्यय 'जसु के स्थानीय रूप 'खन्त्य स्वर की दीर्घता पूर्वक 'नि' के स्थान पर प्राव्धत में खन्त्य स्वर की दीय ता के साथ 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर महर रूप सिद्ध हो जाता है।

अगनीन सस्कृत द्वितीयानत रूप है। इनक प्राष्ट्रत रूप आगी और श्रामिणों होते हैं। इनमें से प्रयम रूप में सूत्र-सख्या २-७८ से 'न' का लोव, २-६ से रोप 'गृ को द्विरत 'गगृ' का प्राप्ति, ३-५ स द्वितीया विभक्ति के बहुत्रवन में सस्कृतीय प्रयय रास्' को प्राप्ति होकर लोप, और २-१२ से प्राप्त ज्वं लुप्त प्रत्यय 'रास्' के कारणों से श्रन्त्य हस्य स्तर ह' को दीर्घ स्वर 'ई' की प्राप्ति होकर अग्गी भिद्ध हा जाता है।

द्वितीय रूप-(अपनीम्=) श्रमिणों में 'श्रमिग' तक की साधनिका उपरोक्त रूप के समान, और ३-२२ से द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में सन्द्वतीय प्रत्यय 'शम्' के स्थान पर प्राकृत में 'णो' प्रायय की श्रादेश-प्राप्ति वैकाल्पक रूप से होकर द्वितीय रूप अग्निगणों मी सिद्ध ही जाता है।

षायन मंस्ट्रन द्विनोयान्त रूप हैं। इसके प्राक्त रूप बाक स्त्रोर बाजको होने हैं। इसमें से प्रधम रूप में स्त्र-सरया-र-७५ से 'यू का लोप, १-४ से दिनीया विभक्ति के बहुरचन में सस्त्रनीय प्रत्यय 'शस्' के स्थानीय रूप 'अन्त्य स्वर का शीर्घता पूर्वक' न' की प्राप्ति होकर लोप स्त्रीर १-१२ से प्राप्त पूर्व हुप्त प्रत्यय 'शस' के कारक से स्वन्य इस्व स्वर 'च' को दीर्घ स्वर क' को प्राप्ति होकर प्रथम रूप वाक सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप (वायून्=) बादणो में <-७८ से 'य्' का लोप श्रीर ३-२२ से शेप रूप 'याव' में द्वितीया विभक्ति वे बहुवचन में संस्कृतीय प्रत्यव शास्' के स्थान पर प्राकृत में 'खो' प्रत्यय की श्रावेश-प्राप्ति चैंकिन्तिक रूप से होकर द्वितीय रूप याउणो भी सिद्ध हो जाता है।

धच्छा रूप की मिद्धि सूत्र-सख्या है-४ में की गई है ॥१-२०॥

वो तो डवो ॥३-२१॥

उदन्तान्वरस्य जमः पुंमि हित् श्रवो इत्यादेशो वा भगति ॥ साहवो । पचे । साहथो साहउ । माहू । माहुणो ॥ उन इति ग्रिम् । वच्छा ॥ पुमीत्येव । घेण् । महूइ ॥ जस इत्येव साहुणो पेच्छ ॥

अर्थ —प्राष्ट्रनीय वकारान्त पुल्निन शहरों में प्रथमा विभक्ति के बहुवयन में संश्वीय प्रत्यव 'जस् 'के स्थान पर वें बहिय करण में 'उबी' प्रत्यव की आदेश-प्राप्ति हुआ करती है। आदेश-प्राप्त प्रत्यव 'असे' में 'द' इसक्षक होने में देप प्राप्त प्रत्यव 'अयो' में 'द' इसक्षक होने में देप प्राप्त प्रत्यव 'अयो' में पूर्व में उकारान्त राज्यों में अन्त्य रसर 'उ' ही इस्तंद्वा होवर दम उ' ना लाप होने में ताता है एन तत्याना 'अयो' प्रत्यय को संयोजना होती है। जैसे — साधव = माहबो । वैविल्यक पत्त होने में सूत्र-मत्य्या ३-२० में (साधव =) माहबो और साहब कर मा होते हैं। सूत्र सत्या ३-२ में स्वाप्त में स्वाप्त में स्वाप्त के प्रत्या ३-२ में (साधव =) साहुं जो हम प्रकार है — (माधव =) साहुं हो यो प्रथमा विवक्ति के बहुवयन में 'माहु' के पाँच कर हो जोवे हैं जो कि इम प्रकार है — (माधव =) साह्यों, साहबों, साहबों, साहबों, साहबों श्रीर साहुं खोर साहुं थो। ॥

sought the fire of the fire of the fire of a conditional

प्रश्न —'दकारान्त' शब्दों में ही प्रथमा बहुबचत में 'ग्रवो' खादेश की प्राप्ति होती है, ऐसा क्यों क्हा गया है ?

उत्तर —क्योंकि 'श्रकारान्त' श्रथवा 'इकारान्त' में प्रथमा बहुवचन में 'श्रवो' श्रादेश-प्राप्त प्रत्यय की उपलिष्य नहीं है एव केवल 'उकारान्त में हा 'श्रवो' प्रत्यय की उपलिष्य है, श्रतएव ऐसा विधान बनाना पड़ा है कि केवल प्राकृतीय उकारान्त शब्हों में ही प्रयमा विभक्ति के बहुवचन में 'श्रवो' श्रादेश प्राप्त प्रत्यय विशेष होता है। जैसे -पृजान् = वच्छा। यों वच्छवो' रूप का श्रमाव (सद्ध होता है।

प्रकृत -- 'दकारान्त पुल्लिग' में हो 'ख्रवो' प्रत्यय श्रिधक होता है, ऐसा मा क्यों कहा गया है ?

उत्तर —उकारान्त स्नोलिंग और नपु सक लिंग बाले भी राज्य होते हैं, ऐसे शब्द खकारान्त होते हुए भी इनमें 'पुल्जिंगरन का खभाव होने से 'खवा' प्रत्यय का इनके लिये भी खभाव होता है, ऐसा विशेष तात्यय वतलाने के लिये ही 'पुल्लिंगत्व' का विशेष विधान किया गया है। जैसे —धेनव =धेणू खौर मधूनि=महुड । ये उदाहरण उकारान्तात्मक होत हुए भी पुल्लिंगात्मक नहीं होकर क्रम से स्नालिंगात्मक खौर नपुसक लिंगात्मक होने से इनमें 'खवा' प्रत्यय का खभाव जानना चाहिये।

प्रश्न --प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में 'जस्' श्रत्यय के स्थान पर ही 'श्रवा' आदेश-प्राप्त प्रत्यय वैकहिवक रूप से रोता है, ऐमा भी क्यों कहा गया है ?

क्यों कि 'श्रवों' श्रादेश प्रांत्व प्रत्ययं के बल प्रथमा विमक्ति के बहुवचन में 'जस्' मत्ययं के ा है, अन्य विमक्तियों के प्रत्ययों के स्थान पर 'श्रवों' श्रादेश-प्राप्ति नहीं होती है, ऐसा प्रतृशित करने के किये ही 'जस्' का उन्तेल करना पड़ा है। जैसे —साधून् प्रय=धाहू (श्रयवा) साहुणों पेच्छ । इस उदाहरण में द्वितीया-विमक्ति के बहुवचन में शस्' प्रत्यय के स्थान पर 'श्रवों' आदेश प्राप्त प्रस्यय का अभाव प्रदर्शित हा रहा है, क्यों कि ऐसा विधान नहीं है। अत यह प्रमाणित किया गया है कि 'श्रवा' आदेश-प्राप्त प्रत्यय का विधान केवल प्रथमा बहुवचन म ही होता है, यह भी पुर्तिलग में ही और केवल उन्तरान्त में ही हो सकता है।

साध्य सरकृत प्रथमान्त बहुववन रूप है। इमके प्रोक्त रूप साह्यो, साहयो, साहय, माहू श्रीर साहुणो होते है। इनमें सून-सख्या १-१८० म 'घ' के स्थान पर 'ह्' की प्राप्ति, तरप्रधात प्रथम रूप में सून-मरया-३-०१ से सरकृतीय प्रथमान्त बहुत्रचन के प्रत्यय 'जस्' के स्थान पर वैकल्पिक रूप से 'डयो' खाइरा-प्राप्ति, प्राप्त प्रत्यय 'डवों में 'ड इस्सहक होने से 'साहु' में स्थित खन्त्य स्वर 'ड' यो इस्महा होकर 'च' का लोप एव प्राप्त रूप 'साह्' में 'ख्राने प्रत्यय की सयोजना होकर प्रथम रूप इ को सिद्ध हो जाता हैं।

द्विटाय श्रीर तृतीय रूप 'साहस्रो' एव 'साहड' में मृत्र-मख्या २२० से मस्तृताय प्रथमान्त यहु-चयन के प्रत्यय 'जस्' के स्यान पर वैकल्पिक रूप से 'डम्बो' श्रीर 'डउ' श्रादेश प्राप्ति, प्राप्त प्रत्यय

चतुर्थ रूप 'साहू' में सून-सख्या १-४ मे सर्रुतीय प्रथमान्त बहुन न के प्रयय 'नम' का प्राणि होकर लोप तथा २ १२ से प्राप्त एव लुप्त 'जस्' प्रस्यय के कारण से श्रम्त्य इस्व स्वरं उ' का नीर्ष स्वर 'क्र' की प्राप्ति होकर चतुर्थ प्रथमान्त यहुनचन रूप साह मो सिद्ध हो जाता है।

पचम रूप 'माहणो' में सुत्र-सल्या ३ २२ से संस्कृतीय प्रथमान्त बहुत्रचन के प्रत्यय 'जन' क स्थान पर वे कहिपक रूप से 'जो' आदेश-प्राप्ति होकर पचम रूप साहुणों भी सिद्ध हो जाता है।

"थच्छा" (प्रथमान्त बहु वचन) रूप की सिद्ध सूत्र-सख्या ३-४ में की गई है।

धेनव साकृत प्रथमान्त बहुषचन रूपं है। इसका प्राकृत रूप घेलू होता है। इसमें सूँत सन्या १-२२८ से मूल रूप 'घेनु' में स्थित 'न्' का 'ण्', ३-४ से प्रथमा विभक्त के बहु वचन में प्राप्त संस्कृताय प्रत्यय 'चस' का लोप खाँर ३-१२ से प्राप्त एव लुत 'जस' प्रत्यय के कारण स खन्त्य हुन्य स्थर 'च था दीर्घ स्तर 'ऊ' की प्राप्ति होकर प्रथमान्त बहुत्चन रूप प्रेणू सिद्ध हो जाता है।

'मट्टुड रूप की सिद्धि सूत्र-मख्या है-रिo में की गई हैं।

साध्य सस्ट्रत द्वितीयान्त रूप है। इसक प्राष्ठत रूप साहृ श्रीर साहुणो होत हैं। इनमें सूत्र-सस्या ११८० से मूल रूप 'साधु' में स्थित 'ध्' क म्यान पर 'ह' का प्राप्ति, तपत्रातृ प्रथम रूप स् सूत्र-सस्या ३४ से द्वितीया विभक्ति के बहुवधन में प्राप्त सस्कृतीय प्रत्यय 'शम्' का लाव श्रीर ३१३ से प्राप्त एव लुप्त 'शम्' प्रत्यय के कारण से श्वन्त्य हस्त्र स्वर 'उ' को दीर्घ स्वर ऊ' को प्राप्ति हावर द्वितीयान्त सहययन रूप साहू' मिद्ध हो जाता है।

हितीय रूप 'साहुणा' में सूत्र-संख्या ३ २२ से हितीया विमक्ति के बहुत्रपत में प्राप्त सस्हतीय प्रस्यय 'शस्' क म्यान पर प्राष्ट्रत म पुल्लिग वैकित्पक रूप से छा' प्रस्यय का श्वादरा प्राध्ति होकर हितीय रूप साहुणों निद्ध हो जाता है।

विच्छ (किया पर के) रूप की मिदि सूत्र-सख्या १-२३ में का गई है ॥ ३-२६ ॥

जस्–श्सोगो वा॥ ३–२२॥

इदृतः परयो र्जम्-शर्माः पुंचि रो इत्यादेशी सत्रति॥ गिरिशो तरुणी रहन्ति पंच्छ था। पत्ते । गिरी। तरु ॥ पुंचीत्येव । दहीडं । महुड ॥ जम्-शसी रिति फिस्। गिरिं। वर्ष्टं॥ concert the service of the service was the service was the

द्धुत इत्येव । वच्छा । वच्छे ॥ जस्-शसोरिति हित्यमिद्धुत इत्यनेन यथासख्या भागार्थम् । दवस्रचरस्रत्रे पि ॥

अर्थ — प्राष्ट्रतीय इकारान्त उकारान्त पुल्लिंग शब्दों में प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्राप्त प्रस्य 'जस्' के स्थान पर और द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्राप्त प्रस्य 'शस' के स्थान पर वैंकिल्पिक रूप में 'णो' आदेश की प्राप्ति होती है। जैसे — गिरय प्रथवा तरव राजन्ते= गिरिणो अथवा तरुषो रेहिन्त अर्थात् पर्वत श्रेष्णियाँ अथवा वृत्त ममूह सुशोभित होते हैं। इम उदाहरण में सरकृतीय प्रथमा बहुवचन के प्रस्य जस्' के स्थान पर शकृत म 'णो' आदेश को प्राप्ति हुई है। द्वितीया विभक्ति का उदाहरण इस प्रकार हैं — गिरोन् अथवा तरुन पर्य=गिरिणो अथवा तरुणो पेच्छ अर्थात् पर्वत-त्रे शियाँ को अथवा वृत्तों को देखो। इस उदाहरण म सस्कृतीय द्वित्रोया विभक्ति क महुन्व चन के प्रस्यय 'शस्' के स्थान पर प्राकृत में 'णो' आदेश को प्राप्ति हुई है। वैकल्पिक पत्त होने से गिरय और गिरोन का प्राकृत रूपान्तर 'गिरी' भी होता है। इसी प्रकार से सरव और तरुन का प्राकृत रूपान्तर 'तरु' भी होता है।

परन — इकारान्त बकारान्त पुल्लिग शब्दों में ही 'जस्' श्रीर 'शस्' के स्थान पर 'णा' आदेश प्राप्ति होतों है, ऐसा क्यों कहा गया है ?

उत्तर — इकारान्त उकारान्त शब्द नपु सक लिंग वाले और स्त्रीलिंग वाले भी होते हैं, ऐसे रान्द्रों में 'लस्' और 'शस् क स्थान पर णो' आदेश-प्राप्ति नहीं हुआ करती हैं। जैसे — द्वीनि-द्वहीइ और मबूनि = महूइ। इन नपु सक लिंग जाले उदाहरणों में प्रथमा और द्वितीया में जस्' तथा 'शस्' के स्थान पर 'णो' आवेश-प्राप्ति नहीं होकर 'इ' आवेश-प्राप्ति हुई हैं। ह्योलिंग के उदाहरण - शुद्ध में और चुद्धों नथा धेनव और धन्द्र-चेस्प्र। इन इकारान्त ओर उकारान्त लोलिंग जाले शब्दों में प्रथमा और द्वितीया में जस्' तथा शास' के स्थान पर 'णो' आवेश-प्राप्ति नहीं हो हर अन्त्य स्वरं को हा आवेश हत् से दीघता की प्राप्ति हुई है। यों समम लेंग चाहिय कि केवल पुल्झिंग इकारान्त उका रान्त शब्दों में ही 'अम' तथा 'शस' के स्थान पर 'णो' आवेश प्राप्ति वैक्टिवर हत् से हुआ करती हैं।

भरन - जस' और 'शम ऐसा उल्लेख क्यों किया गया है ?

उत्तर — इकारान्त उकारान्त पुल्लिग शर्ध्यों के सभी विभक्ताय बहुवचतीय रूवा म से केवल प्रथमा श्रीर द्वितीया विभक्ति के बहुउचतीय रूर्पा में ही प्या' श्रादेश प्राप्त प्रत्यय का प्राप्ति हुत्रा करती है, श्रन्य किसी भी विभक्ति के बहुवचन में 'णो' श्रादेश-प्राप्त प्रत्यय की प्राप्ति नहीं होती है, ऐसा विशेषता पूर्वक तात्पर्य प्रदर्शत करने के लिये ही 'जस' श्रीर 'शत' का नाम-निर्नश करना पड़ा है। जैसे -िगरिम् श्रथवा तरुम् —िगरिं श्रथवा तरु याने पहाड़ को श्रथवा हुत का, इन वशहरणों में द्वितीया विमक्ति के एक वचन का प्रत्यय 'म्' प्राप्त हुआ है, न कि 'णो' श्रादेश-प्राप्त प्रस्वय, श्रवएव सुत्र में

~~><<><<>>>>>

बिल्लिपित जम' श्रीर 'शस्' के बल्लेख का तात्वर्य समम्म लेना चाहिये।

प्रकृत --सूत्र की पृत्ति के प्रारम्भ में 'इकाशन्त' छोर 'उकारान्त' कहते का क्या नात्वर्ध है।

उत्तर —प्राप्तत में श्वकारान्त श्वादि शब्द भी होते हैं, परन्तु (इकारान्त श्वोर कपारान्त श्वादे के श्वादिश्का ऐसे शब्दों में 'जस्' श्वीर 'रास्' के स्थान पर 'णो' श्वादेश मास प्रत्यय की प्राप्त नहीं हान है, ऐसा विशेष तात्वर्ष प्रदर्शित करन के लिये ही दुन्ति के पारम्म मं 'इकारान्त' श्वोर 'उकारान्त' नैसे पारद-विशेषों को लिखना पढ़ा है। जैसे —पृश्ता = रण्डा और वृत्ताम= रण्डे। यह उदाहरण श्वारान्ता स्पक्त है, तथा इसमें कम से 'जस' श्वीर 'शम' की प्राप्ति हुई है, परन्तु प्राप्त प्रत्यम 'जस' श्वीर 'शम् के स्थान पर 'णो' श्वादेश-प्राप्त प्रत्यय का श्वमाग है, तस्तुमार यह ध्योन में रण्या पाढ़िय कि प्राप्तत में श्वारान्त श्वादि शाय्त में श्वारान्त श्वाद श्वाद स्थान में रण्या पाढ़िय कि प्राप्तत में श्वारान्त श्वाद श्वाद श्वाद स्थान पर 'णो' श्वादेश-प्राप्त प्रत्यय की प्राप्त हुं श्वात सरती है, श्वन्य किसी भी विभक्ति के यह चन्त के प्रत्यय के स्थान पर 'णो' श्वादेश-प्राप्त प्रत्यय की प्राप्ति हुं श्वात सरती है, श्वन्य किसी भी विभक्ति के यह चन्त के प्रत्यय के स्थान पर 'णो' श्वादेश-प्राप्त प्रत्यय की प्राप्ति नही होती है।

मृत-सूत्र में 'जस शमी ' ऐसा जा द्वित्व स्वात्मक उल्लेख हैं, इसकी यथा प्रम से 'इकारान्व' छोर 'उकारान्व' शत्रों मं संयोजित किया जाना चाहिये, दोनों का दोनों मं क्रम स्थावित कर इता चाहिये। ऐसा यथा-सन्यात्मक भाष प्रदिशित करने के लिये ही 'हित्य' रूप से 'जस शमी ' का चल्लेख किया गया है। यही वरिवाटी खागे खाने वाले सूत्र-सर्या ३-२३ के सम्बन्ध म मी जानना चाहिये, जैसा कि प्रययार ने वृत्ति में 'क्तर-स्ट्रोव' यद का निर्माण वरके खपने मन्तव्य को प्रदशित किया है।

भिरय मस्कृत प्रथमान्त यहुवचन का रूप है। इसने प्राष्ट्रत रूप गिरिणो श्रोर गिरी होते है। इसने से प्रथम रूप मस्कृत प्रथमान्त यहुवचन का रूप है। इसने से प्रथम रूप मस्कृतिय प्रस्यय 'वार्' के स्थान पर प्राष्ट्रत में गो' श्रादेश-प्राप्त होकर गिरिणो रूप सिद्ध हो जाता है। द्वितीय रूप में स्थन पर प्रथम प्रथम विभक्ति के बहुवचन में साह्तीय प्रस्यय 'वार्' का लाप श्रीर ३-१२ से प्राप्त पत्र कुप 'वार्' का लाप श्रीर ३-१२ से प्राप्त पत्र कुप 'वार्' का लाप श्रीर ३-१२ से प्राप्त पत्र कुप 'वार्' का लाप श्रीर ३-१२ से प्राप्त पत्र कुप 'वार्' का लाप श्रीर ३-१२ से प्राप्त पत्र कुप 'वार्' को वार्च हो।

राजनी साष्ट्रन शक्सक किया पर का बहुवचनान्त रूप है। इसका प्राष्ट्र उरूप रेहन्ति हीती

८६० ८.० ६८८८ ६८८ १८८ १८८ १८८० १८८०० १८८०० १८८०० १८८०० १८८०० १८८०० से सस्कृतीय 'राज' घातु के स्थान पर 'रेह्' श्रादेश, ४-२३६ से प्राकृत हलन्त धातुर्क्यों क विकरण प्रत्यय 'ख' की प्राप्ति, खौर ३-१४२ से वर्तमान काल के बहुवचन में प्रथम पुरुप में न्ति' प्रत्यय की प्राप्ति होकर रेहान्ति रूप सिद्ध हो जाता है।

गिरिणो (द्वितीयान्त बहुवचनान्त) रूप की सिद्ध सूत्र-सख्या हे-१८ में की गई है।
तरुणो (द्वितीयान्त बहुवचनान्त) रूप की सिद्ध सूत्र-सख्या हे-१८ में की गई है।
पेच्छ (क्षिया पर) रूप की सिद्ध सूत्र सख्या १-१३ में की गई है।
गिरी (द्वितीयान्त बहुवचनान्त) रूप की सिद्ध सूत्र सख्या हे-१८ में की गई है।
तरु (द्वितीयान्त बहुवचनान्त) रूप की सिद्ध सूत्र-सख्या हे-१८ में की गई है।
एडिह (प्रथमान्त बहुबचनान्त) रूप की सिद्ध सूत्र-सख्या हे-१० मे की गई है।
एडिह (प्रथमान्त बहुबचनान्त) रूप की सिद्ध सूत्र-सख्या हे-२० मे की गई है।
गिरी रूप की सिद्ध सूत्र-सख्या १-१३ में की गई है।
एडिह रूप की सिद्ध सूत्र-सख्या १-१३ में की गई है।
एडिह रूप की सिद्ध सूत्र-सख्या १-१४ में की गई है।

डिस-डसो: पुं-क्लीवे वा ॥ ३--२३॥

पुर्ति क्लीवे च वर्तमानादिदुतः परयो है सि हसोर्थो वा भगति ॥ गिरियो । तरुयो । दिश्यो । महुयो आगजी विभारो वा । पत्ते । हसेः । गिरीक्षो । गिरीउ । गिरीहिन्तो । तरुजी । तरुउ । तरुहिन्तो ॥ दिलुको निपेरस्पेते ॥ उसः । गिरिस्त । तरुस्म ॥ इसि इसो रिति किम् । गिरिया । तरुया कय ॥ पुक्लीग इति किम् । बुद्धीआ । धेणुआ लद्धं मिमिद्धि वा । इदुत इत्येव । कमलाओ । कमलस्स ।

अर्थ — प्राप्तिय इकारान्त चकारान्त पुल्लिंग छोर नपुसक लिंग शहरों में पथमी विमक्ति के एक वचन म सरक्रतीय प्रत्यय 'हिस' क स्थानीय रूप 'छस्' के स्थान पर वैकल्पिक रूप से (प्राष्ट्रत म) 'णो' छादेश की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार से इन्हों प्राक्ततीय इकारान्त वकारान्त पुल्लिंग छौर नपुसक लिंग रात्रों में पष्टी विभक्ति के एक वचन में सस्क्रतीय-प्रत्यय 'हस्' के स्थानीय रूप 'छम्' के स्थान पर मी वैकल्पिक हप से (प्राष्ट्रत में) 'रहो' छोदेश की प्राप्ति होती है। पुल्लिंग वाले इकारान्त

खयवा एकारान्त के प्वमी विभक्ति के एक वचन का उदाहरण —िगरे ध्ययवा तरो धागत =िगरिणे ध्ययवा तरेणो धागको पहाड़ से खया प्रस्त म धाया हुआ है। इकारान्त ध्यया उकारान्त क प्रतिकार में पण्ठी विभक्ति के एक वचन का उदाहरण —िगरे ध्ययवा तरा निकार =िगरिणो ध्ययवा तरा विकार =िगरिणो ध्ययवा तहा का ध्ययवा प्रस्त का उदाहरण —द्दन ध्यया मधुन धागतः =दिहिणो ध्ययवा महुणो धागधो ध्यात दृशे से ध्ययवा मधु मे ध्याया हुआ। (शाम हुआ। धृन धागतः =दिहिणो ध्ययवा मधुन धागतः =दिहिणो धागधो ध्यात दृशे से ध्ययवा मधु मे ध्याया हुआ। (शाम हुआ। है। इतो प्रकार से नेषु सक लिंग वाले इहारान्त ध्यया उकारान्त के पण्ठी विमक्ति के एक वचन का उदाहरण —व्दन ध्यया मधुन विकार =दिहिणो धायवा महुणो विधारो प्रधीत देशे का ध्ययवा मधु का विकार है। इन उदाहरणों में पुरिलग म प्य नेषु मक लिंग में पचगी थिभक्ति के एक वचन में धौर पण्ठी विमक्ति के एक वचन से धीर पण्ठी विमक्ति के पण्ठी विमक्ति विमक्ति के पण्ठी विमक्ति के पण्ठ

वैकल्पिक पत्त होने से पचर्मा विभक्ति के एक वचन में इकारान्त में सून-मंन्या ३ द से 'निरीको, निरीड और निरीहिन्तो' रूप भी होते हैं। उकारान्त में भी पचमो विभक्ति के एक वचन में सून-सख्या ३-द से पास्त होने वाले मुन्त-सख्या ३-द से पास्त होने वाले प्रस्तय 'हि' और 'लुक्' का सून-सन्या ३ १२६ और २-१-७ में निषेध किया जायगा, वर्नुमार इकारान्त ककारान्त में पास्त में प्रस्ता में पास्त के एक वचन में 'हि' और 'नुक् प्रस्तय का स्थमाय जानना।

पर्छा विमक्ति के एक बचन में भी इकारान्त और उद्यारान्त में उपरोधत 'णो' श्राद्श प्राप्त प्रत्यय की स्थिति वैकरिषक होने से स्त-सत्या ३-१० से सस्क्रतीय प्रत्यय 'दम्' के स्थान पर 'सम' प्रत्यय की प्राप्ति हुआ करती हैं। जैसे —िगरें = गिरिस्म खर्यान् प्राप्त का और तरो = तम्सम ऋषोत पृत्त का ।

प्रकृत —इकारान्त खथवा उकारान्त पुल्लिग खौर नयु मक लिंग वाले राट्सें में पचमी विमित्रत खौर पट्टी विमित्रत के एक बचन में कम स प्राप्त सस्कृतीय प्रत्यय 'रुमि' खौर इस्' के स्थान पर 'णो' प्रत्यय होती है, ऐमा क्यों वहा गया है ?

उत्तर.—इकारान्त अथवा उकारान्त में पंचगी विभवित के एक वचन के श्रीतिरिवत श्रीर पष्टा विभिवत के एक वचन के श्रीतिरिवत 'श्रन्य कियों मो विभिवत के एक वचन में प्राष्ट्रत में 'णो' अत्वय की प्राप्ति नहीं हुआ करती है, इसीतिये 'इसि' श्रीर 'इस्' का उत्तेष करना पहा है । जैसे —िगिरिणा अथवा तरुणा हृत्य-गिरिखा अथवा तरुणा क्य अर्थात पहाड़ म अथवा हुए से किया हुई है। इस उदाहरण में प्रतीत होता है कि पचमी अथवा पटी विभक्ति के एक वचन क श्रातिरिवत आय किया मी विभक्ति के एक वचन में इकारान्त और एकारान्त राग्हों में 'णो' मत्वय का श्रमाय ही हागा है।

प्रदन--- पुल्लिन अथना नपु सक लिंग याले इकारान्त और एकारान्त शन्दों म 'हिंस' बीर

sever ever occues recorrence excursors exceptions

'इस' के स्थान पर 'णो' क्यादेश प्राप्ति होती है, ऐसे इस विधान में 'पुल्लिगत्व' का स्त्रौर नपु सक-लिगत्व का क्थन क्यों किया गया है ?

उत्तर -इकारान्त श्रीर उकारान्त राव्हों में 'कोिलिंग' वाले राव्हों का भी श्रन्तमाँव होता है, किन्तु ऐसे 'क्षीलिंग' वाले इकारान्त श्रीर उकारान्त राव्हों में 'इमि' श्रीर 'इम्' के स्थान पर 'खो' की प्राप्ति नहीं होती है, अतएव इन कीिलंग वाले राव्हों के लिये 'इसि' श्रीर 'इस्' के स्थान पर 'खो' श्रीहेश प्राप्त प्रत्यय को श्रमाय प्रदर्शित करने के लिये 'पुलिंग श्रीर नपु सक लिंग' जैसे शब्दों का उल्लेख करना पड़ा है। 'रत्र लिंग' से सवधित उदाहरख इस प्रकार हैं —पचमी विमक्ति के एक वचन का ट्रष्टान्त — पुद्धवा श्रयवा धेन्या लव्ह श्रयां तुद्धि से श्रयवा गाय से प्राप्त हुआ हैं। पण्डी त्रिमिक्त के एक वचन का ट्रष्टान्त — युद्धवा श्रयवा धेन्या समृद्धि =युद्धिश्र श्रयवा धेणूश्र सिमिदी श्रयांत बुद्धि की श्रयवा गाय की समृद्धि है। इन उटाहरखों से प्रतीत होता है कि इकारान्त श्रीर उकारान्त स्त्रीलिंग वाले शब्दों में 'इसि' श्रीर 'इस्' के स्थान पर 'खो' श्रादेश प्राप्त प्रत्यय का श्रमाव होता है।

मञ्च —'इकारान्त' और 'उकारान्त' ऐसे शब्दों को उल्लेख क्यों किया गया है ?

उत्तर —इकारान्त श्रार उकारान्त के श्राविरिक आकारान्त वधा अकारान्त राष्ट्र मी होते हैं, इतमे भी 'इति' श्रीर 'इत् ' द्रत्यों की प्राप्ति होती हैं, परन्तु जैसे इकारान्त श्रीर उकारान्त में 'इति' श्रीर 'इत् ' द्रत्यों की प्राप्ति होती हैं, परन्तु जैसे इकारान्त श्रीर उकारान्त में 'इति' श्रीर 'इत् ' के स्थान पर 'णो प्रत्यय की आदेश प्राप्ति होती हैं, वेती 'णो' आदेश-प्राप्ति 'आकारान्त और 'अकारान्त' अते 'इकारान्त' अते 'इकारान्त' की वहती हैं होती हैं, ऐसा भेद प्रदर्शित करने के विषे ही वृत्ति में 'इकारान्त' और 'अकारान्त' जैसे श्रव्यों का उत्तेष करना पदा हैं। जैसे -कमलस्य क्षार्यों का उत्तेष करना पदा है। जैसे -कमलस्य श्राप्ति कराति होती हैं परन्तु ऐसा होते पर भी प्राप्त प्रत्ययों 'इति' श्रीर 'इत् ' परन्तु ऐसा होते पर भी प्राप्त प्रत्ययों 'इति' श्रीर 'इत् ' परन्तु ऐसा होते पर भी प्रत्य प्रत्ययों 'इति' श्रीर 'इत् परनार इकारान्त श्राप्ति कारान्त श्रव्यों में ही 'इति' एव इत्' के स्थान पर 'णो' आदेश प्राप्ति होती हैं, ऐसा विधान सिद्ध हुआ।

िरि सस्कृत एक वचनात्मक पचम्यन्त रूप है। इसका प्राकृत रूप गिरिएो होता है। इसमें स्त्र-सख्या ३२३ से मूल शब्द 'गिरि' में सस्कृतीय पचमी विभक्ति के एक वचन म प्राप्त प्रत्यय 'इसि' फे स्थानीय रूप 'क्रस्' के स्थान पर प्राकृत में 'गो' ख्रादेश प्राप्ति होकर *गिरिणो रूप* मिद्ध हो जाता है।

ं तरी सहक्त एक वचनान्त पंचम्यन्त क्य है। इसका प्राकृत रूप तक्त्यो होता है। इसमें सूत्र-सत्या ३ २३ से मूल शस्द 'तह' में संस्कृतीय पचमी विभक्ति के एक वचन में प्राप्त प्रस्यय प्राप्त' कं स्यानीय रूप 'खस्' के स्यान पर प्राकृत में 'जो' आदेश-प्राप्ति होकर तरूजो रूप सिद्ध हो जाता है।

दृष्त' सर्छत एक वचनान्त पचन्यन्त रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप दृष्टिणो होता है। इसमें सूत्र मच्या १--१८० से मूल शब्द 'विव' में स्थित 'ध्' के स्थान पर 'ह्' की प्राप्ति, चौर ३-२३ से प्राप्त हर 'दिह' में संस्कृतीय पचमी विभिष्त के एक वचन में प्राप्त प्रत्यय 'इसि' क स्थानीय रूप 'धम्' के स्थान पर प्राकृत में जो' खादेश-प्राप्ति होकर दहिणों रूप मिद्ध हो जाता है।

मधुन संस्कृत एक वचनान्त पचन्यन्त रूप है। इसका प्राकृत रूप महणो होता है। इसमें सूत्र सम्या १-१८७ स 'घ्' के स्थान पर 'ह्' की प्राप्ति श्रीर ३-२३ से प्राप्त रूप 'महु' म सम्कृतीय पत्रवा विभक्ति के एक वचन में प्राप्त प्रत्यय 'द्रिम' के स्थानीय रूप 'खसु' के स्थान पर प्राकृत में 'खा' श्रादेश-प्राप्ति होकर महणी रूप मिद्र हो जाता है।

अागओ रूप की सिद्धि सूत्र-मत्या १-नं०९ में की गई है।

विकार मरहत रूप है। इसका प्राञ्चन रूप विकारों होता है। इसमें सूत्र-संख्या १-१०० से 'क' का लोप और ३-२ में प्रथमा विभक्ति के एक वचन में श्रकारान्त पुल्लिग में संस्कृतीय प्रत्यय 'िष' के स्थानीय रूप विसर्ग के स्थान पर 'थो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर विभारो रूप मिद्र हो जाता है।

गिरे सस्कृत एक वयनान्त पंचम्यन्त रूप है। इमके प्राकृत रूप गिरीश्रो, गिरीउ श्रीर गिरी हिन्ती होते हैं। इनमे सूत्र सख्या २-१२ से मूल शब्द 'गिरि' में रियत खन्त्य हस्त्र स्वर 'इ' को दीर्घ स्वर 'ई' की प्राप्ति और ३-⊏ से सरकृतीय पचमी विभक्ति क एक वचन में शाप्त प्रत्यय 'इसि वे स्थानीय रूप 'खस' के स्थान पर प्राकृत में कम से 'दो=थो', 'दु=उ' और 'हिन्तो' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर कम से चीनों हप गिरीओ, गिरीउ घौर गिरीदिन्तो मिद्र हो जात हैं।

तरा सामृत एक यचनान्त पाक्यन्त रूप है। इनके प्राकृत रूप तरुको, तरूव श्रीर साहिन्ती होते हैं। इनमें सूत्र-सदया ३-१० से मूल शब्द 'तठ' मं स्थित फन्त्य हस्य स्वर 'त' को दीर्घ स्वर 'ऊ' की भारत कोर ३ म से सरहतीय पचर्मा विभवित के एक वचन में प्राप्त प्रत्यय 'इसि' के स्थानीय रूप 'द्यस' के स्थान पर प्राष्ट्रत म क्रम से 'हो=को', 'हु=व' छौर 'हिन्ती प्रत्यवों की प्राप्ति होकर क्रम म त्तीनों रूप तक्षी, तन्त श्रीर तक्दिन्ती सिद्ध हो पाते हैं।

मिरे सामृत एवं बचना त पष्टवात रूप है। इसके प्राष्ट्रन रूप गिरिणो श्रीर गिरिस्म होते हैं। इनमें से प्रथम रूप मे सूध-सच्या -२३ से मरहताय पच्छी विर्माक्त के एक वचा में प्राप्त प्रत्यय मन् के स्थानीय रूप 'द्यम प स्थान पर प्राष्ट्रत म णा आदेश प्राप्ति होचर प्रथम रूप मिरिणो सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय स्त्य (गिरें≔) गिरिश्म में सुत्र-मख्या दे १० से संस्कृतीय पत्नी विमक्ति के एक वयन में प्राप्त प्रस्पय इस के स्थानीय रूप 'छम्' के स्थान पर प्राकृत में 'स्स' प्रस्यय की प्राप्ति हो इर डिनीय acq गिरिस्स मिद्ध हो जाता है।

docerno a suc a car and cocamonstoratherative cocamons

तरी सरकृत एकवचनान्त पट्यन्त रूप हैं। इसके प्राकृत रूप तहणी छौर चहरस होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में स्त्र-सख्या ३-२३ से संस्कृतीय पटी विभक्ति के एक वचन में प्राप्त प्रत्यय 'इस्' के स्थानीय रूप 'श्रम् के स्थान पर प्राकृत में 'णो' खादेश-प्राप्ति होंकर प्रथम रूप तहणो सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप-(तरो ≈) तरुस्स में सूत्र-सख्या ३-१० से सस्कृतीय पष्ठी विभक्ति के एक वचन में प्राप्त प्रस्यय 'इस्' के स्थानीय रूप 'छस्' के स्थान पर प्राकृत में 'स्स' प्रस्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप तरुस्त सिद्ध हो जाता है।

भिरिणा संस्कृत एतीयान्त एक वचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप (भी) गिरिणा होता है। इसमें सूत्र-सख्या २-२४ से एतीया विभक्ति के एक वचन में संस्कृतीय प्राप्त प्रत्यय 'टा' के स्थानीय रूप 'णा' के स्थान पर प्राकृत में भी 'णा' प्रत्यय की प्राप्ति होकर गिरिणा रूप सिंद्ध हो जाता है।

तरुणा सस्कृत तृतीयान्त एक वचन का रूप है। इसका प्राफुत रूप (भी) तरुणा ही होता है। इ.मर्से सून-सख्या ३-२४ से सस्कृतीय तृतीया विभक्ति के एक वचन में प्राप्त प्रत्यय 'टा' के स्थानीय रूप 'णा' के स्थान पर प्राफुत में भी 'खा' प्रत्यय की प्राप्ति होकर तरुणा रूप भी विद्व हो जाता है।

कंच रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या १-१२६ में की गई है।

बुद्ध्या साकृत पचमी विभक्ति के एक वचन को और पर्ध्वी विभक्ति के एक वचन को रूप है। इसका प्राकृत रूप बुद्धीय होता है। इसमें सूत्र-संख्यी-३-२६ म सस्तृतीय पचमी विभक्ति के एक वचन में प्राप्त प्रत्यय 'इसि' के स्थानीय रूप 'ख्रस्=ख्रास' के स्थान पर और पछी विभक्ति के एक वचन में प्राप्त प्रत्यय 'इसि' के स्थानीय रूप 'ख्रस्=ख्रास्' के स्थान पर प्राकृत में मूल रूप 'बुद्धि' में स्थित ख्रान्त्य हस्य स्वर 'इ' को दीर्घ 'ई' की प्राप्ति करते हुए 'ख' प्रत्यय की प्राप्ति होकर (दोनों विभक्तियों में द्वादीय रूप सिद्ध हो जाता है।

धन्यां सस्कृत पर्वमी विभिन्न के एक वचन का और पट्टी विभिन्न के एक वचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप घेणुश्च होता है। इसमें सूत्र-सरया १--२६ से 'न' के स्थान पर 'ण्' की प्रास्ति और ३-२६ से सस्कृतीय पचमी विभक्ति के एक वचन में प्राप्त प्रत्यय 'इसि' के स्थानीय रूप 'अस्' 'कं स्थानीय रूप 'अस्' 'कं स्थानीय रूप 'अस्' के स्थानीय रूप 'अस्' के स्थानीय रूप 'अस्' श्रास्' के स्थानीय रूप 'अस्' आस्' के स्थान पर प्राकृत में मूल रूप घेणु में स्थित अन्त्य इस्व स्वर 'व' को दीर्घ 'ऊ' की प्राप्ति करते हुए' 'अ' प्रस्य की प्राप्ति होकर (दीर्जी विभक्तिकी) म घेणुल रूप मिद्ध हो जाता है।

लब्ध म् संस्कृत विशेषण रूप है। इसका प्राकृत रूप लढ़ होता है। इसमें सूत्र-मरया २-७६ से 'प्' का लोप, २ न्ह से लोप हुण 'व्' के प्रवात रोप रहे हुम् 'घ्' को द्वित्व 'घ् घ्' की प्रान्ति, २ ६० से प्राप्त पूर्व 'घ' के स्थान पर 'द्' की प्राप्ति, २-२४ से प्रथमा निमक्तित के एक यचन में कहातन नपु सक लिंग में सस्क्रतीय-प्रत्यय 'सि' के स्थान पर 'म्' की प्राप्ति कीर १-२३ से प्राप्त 'म्' का अनु-स्थार होकर प्राकृत रूप लस्तु सिद्ध हो जाता है।

सिमदी रूप की सिद्धि सूत्र सम्या १-४४ में की गई है।

कमछाया सस्कृत प्यमी विभक्ति के एक वचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप कमलाओ होग है। इसमें सूत्र-सम्ब्या ३ म से पंसमी विभक्ति के एक वचन में सरकृतीय प्राप्त प्रत्यय 'हसि' के स्थान १ रूप 'अस्-या' के स्थान पर शक्कत में 'दो=थो' प्रत्यय की प्राप्ति हाकर प्राप्तृत रूप कमलाओं विद्व हो जाता है।

कमलस्य संस्कृत पण्डयन्त एक घचन रूप है। इसका प्राकृत रूप कमलस्स होता है। इसमें मूब-सख्या ३-१० से पण्डी विमक्ति के एक घचन में सस्कृतीय प्राप्त अत्यय 'इस्' के स्थानीय रूप-'चसन्य के स्थान पर प्राकृत में 'स्स' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राकृत रूप कमलस्स सिद्ध हो जाता है।। ३-२३॥

टो ए। ॥३--२४॥

पुंचलीचे वर्तमानादिदुवः परस्स टा इत्यस्य या मनति ॥ गिरिया । गामियाया । यलपुया । तरुया । दिह्या । महुया ॥ ट'इति किम् । गिरी । तरू । दिहं । महुं ॥ पु क्लीप इत्येव । चुद्धीश्र । घेसूश्र कय ॥ इदृत इत्येव । कमलेस ॥

शर्थ —प्राक्षतीय इकारान्त वकारान्त पुल्लिंग छीर नमु मह लिंग बाचक राह में में सूनीय विमक्ति के एक बचन से मस्ट्रिय प्रत्यय 'टा' के स्वान पर प्रोष्टन में 'एग' प्रत्यय की प्राप्ति होती है। जैसे —िगिरिणा =िगिरिणा अर्थात पर्यंत से, प्रामण्या = गामिषणा=प्राप्त में रतानी से, अयया नाई में, खलव्या=प्रत्युणा प्रर्थात माह देने नाले पुरुष से, तहगा-तरुणा अर्थात एक से, दम्ना=द्रिणा अर्थात इही से खीर ममुना=महुणा अर्थात मधु से। इन वदाहरणों में स्त्रीया बिगक्ति के एक बचन में प्राष्ट्रन में 'पा' प्रत्यय की प्राप्ति हुई है।

प्रकृत — ख्तीया विमिष्ठिके एक यचन में प्राप्त संस्कृतीय प्रस्थय 'टा' के स्थान पर ही 'जा' होता है, ऐसा क्यों क्ला गया है ?

उत्तर — एतीया विमक्ति के एक यचन के काविरिक्त किसी भी विमक्ति के किसी भी बान के प्रत्यों के स्थान पर 'णा' प्रत्यय की प्राप्ति नहीं होती है, ऐसा प्रदर्शित करने के लिये ही लिखा गया है कि 'टा' प्रत्यय के स्थान पर 'णा' प्रत्यय की पालित होती है। जैसे — गिरिः—गिरी कार्यात् पहाइ, टर्ड सरू क्यात् हुए, दिन्दिह क्यांद्र दही कीर मञ्जनमु कर्यात् ससु । इन चदाहरखी में 'खार' प्रत्य का

प्रकन'- पुहिन्तम ख्रीर नपु सक लिम' ऐसे शब्दों का उन्लेख क्यों किया गया है ?

उत्तर — इकारान्त और उकारान्त शब्द खोलिंग वाचक भी होते हैं परन्तु उन इकारान्त और उकारान्त स्त्रीलिंग वाचक शब्दों में तृतीया विभक्ति के एक वचन में टा प्रत्यय की प्राप्ति होने पर भी इस प्राप्तव्य 'टा' प्रत्यय के स्थान पर 'णा' की खादेश-प्राप्ति नहीं होती है, अस 'टा' के स्थान पर 'णा' खादेश-प्राप्ति केवल पुल्लिंग और तपु सकलिंग वाले राब्दों में हा होती है, यह बतलाने के लिये हो पुल्लिंग और तपु सक लिंग जैसे शब्दों का सूत्र की वृत्ति के प्रारम्भ में प्रयोग किया गया है। जैसे -बुद्धया-बुद्धी अ बुद्धि से धेन्या कुनम्-धेग्रुख कथ अर्थात् गाय से किया हुआ है। इन उदाहरणों में तृतीया विभक्ति के एक वचन का 'टा' प्रत्यय प्राप्त हुआ है, परन्तु 'टा' के स्थान पर 'णा' नहीं हो कर सूत्र-सख्या रे-रह से 'खा' प्रत्यय की प्राप्ति हुई है, यो अन्यप्त भी जान लेना चाहिये।

परन -'इकारान्त श्रीर उकारान्त' ऐसा उल्लेख क्यों किया गया है ?

उत्तर — इसमें ऐसा कारण है कि प्राष्ट्रत में खकारान्त तथा खाकारान्त खादि रान्द मी होते हैं, परन्तु उनमें भी 'टा' के स्थान पर 'णा' खादेश-प्राप्ति नहीं होती है, खत इकारान्त और उकारान्त जैसे रान्तें का प्रयोग करना पड़ा है। जैसे —कमलेन=कमलेख खर्यात कमल से।

गिरिणा रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ?-P? में की गई है।

यामण्या संस्कृत एतीयान्त एक बचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप गामणिणा होता है। इसमें सून-सरुया २-७६ से 'र' का लोप, ३-४३ से मूल शब्द 'मामणा' में स्थित दोर्घ स्वर 'ई' के स्थान पर प्राकृत में इस्व स्वर 'इ' की माप्ति और ३-४३ से एतीया विभक्ति के एक उचन में संस्कृतीय प्राप्त प्रत्यय 'टा' के स्थानीय रूप 'आ' के स्थान पर प्राकृत में 'णा प्रत्यय की प्राप्ति गेकर मामणिणा रूप सिद्ध हो जाता है।

खंडच्या सम्कृत तृतीयान्त एक वचन रूप है। इसमा प्राकृत-रूप खलपुणा होता है। इसमें सूत्र-सख्या रे ४२ से मृत रात्र 'खलपू' में स्थित दोर्घ रत्र 'क्र' के स्थान पर प्राकृत में द्वांव स्वर 'क्र' की प्राप्ति कौर २-२४ से तृतीया विभक्ति के एक वचन में सम्कृतीय प्राप्त प्रस्यय 'दा' के स्थानीय रूप 'खा' के स्थान पर प्राकृत में 'णा' प्रस्थय की प्राप्ति होकर खळपुणा रूप सिद्ध हो जाता है।

तरणा रूप की सिद्धि सुत्र-सख्या ३-२३ में की गई है।

दन्ता सरकृत रतीयान्त एक बचन रूप है। इसका प्राकृत-रूप दक्ष्णि हाता है। इसमें सूत-मख्या १-१८० से मूल-राष्ट्र 'दिथ' में स्थित 'घ्' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति 'प्रार १-२४ से रातीया विमक्ति के एक वचन में संस्कृतीय प्राप्त प्रत्यय 'टा' के स्थानीय रूप आ' के स्थान पर प्राकृत में 'का' अत्यय की व्यादश-प्राप्ति होकर दृष्टिणा रूप सिद्ध हो जाना है।

मधुना संस्कृत कुतीयान्त एक वचन ग्या है। इसका प्राष्ट्रत रूप महुणा होता है। इसमें स्थ-सक्या-१-१८७ से 'घ्' के स्थान पर 'ह्'की प्राप्ति श्रीर ३ न्४ से कुतीया विभक्ति के एक वचन में संस्कृतिय प्राप्त प्रस्वय 'टा' के स्थानीय रूप 'ना' के स्थान पर प्राष्ठत में प्या', प्रत्यय की प्राप्ति होकर महुणा रून सिद्ध हो जाता है।

गिरी रूप की सिद्धि सूत्र-मध्या हं-१९ में की गई है।

तरू रूप की मिद्धि सूत्र-सख्या ह-१९ में की गई है।

वृहिं रूप की सिष्दि सुत्र-सख्या है-१९ में की गई है।

महं ह्रप की मिद्दि सूच-सख्या है-१९ में की गई हैं।

द्युद्धमा सस्ट्रत सृतीयान्त एक यचन रूप हैं। इसका प्राफ्टत रूप शुक्तीश्र होता है। इसमें सूत्र-सस्वा ३ २६ से सृतीया विभक्ति के एक यचन में संस्कृतीय प्राप्त प्रत्यय 'टा' के स्थानीय रूप'धा'के स्थान पर प्राष्ट्रित में खन्त्य हस्य स्वर 'इ' को दीप स्वर 'ई की प्राप्ति करत हुए 'ख' प्रस्यय की प्राप्ति होकर सुद्धीन रूप सिम्द हो जाता है।

्रिस्मा मंस्टत तृतीयान्त एक वचन का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप घेणुआ होता है। इसमें स्पृत्र सरवा १-२०६ से मूल रूप 'घेलु' में स्थित 'न् के स्थान पर 'ण्' को प्राप्ति छीर ३ २६ में स्पृतीय विमक्ति के एक वचा में सस्तृतीय प्राप्त प्रयय 'टा' के स्थानीय रूप 'खा' के स्थान पर प्राकृत में आत्य इस्य स्वर 'उ' को दीर्घ स्वर 'ऊ' की प्राप्ति करते हुए 'ख' प्रत्यय की प्राप्ति हानर घेणुआ रूप मिन्द हो जाता है।

बय रूप की मिथ्दि सूत्र मंख्या १-१२६ में की गई है।

क्यांक्रन सस्यून क्वीयान्त एक वयन रूप है। इसका प्राष्ट्रन रूप कालेण होता है। इसमें मूर्य संन्या २-६ से क्वापा विभक्ति के एक यान में संस्कृतीय शास्त्र भवाय 'टा' के स्थान पर प्राष्ट्रन में 'व' प्रस्यय की प्राप्ति कीर ३-१४ से प्राप्त प्रस्यय 'व' के यूर्व में स्थित शहरान्त्य 'ख' के स्थान पर 'प' की प्राप्ति होकर कमलेण रूप सिन्द हो जाता है ॥३-२४॥

वलीवे स्वरान्म् से: ॥ ३-१५॥

क्लीचे वतमानात् स्वरान्तात्राम्नः छेः स्थानं म् गपति ॥ मण । पेम्म । दर्दि । मर्द्र ॥

अर्थ — प्राकृतीय नपु मक लिग वाले स्वरान्त शारों में प्रथमा विमक्ति के एक वचने मे सस्कृतीय प्रत्यय 'सि' के स्थान पर प्राकृत में 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति होती है। जैसे — वनम्=वर्ण । प्रेम=पेम्म । द्विम=दृहिं। मुख्यमहुं॥

संस्कृत इकारान्त उकारान्त नयु सक लिंग वाले शब्दों में प्रथमा विभक्ति के एक वचन में संस्कृतीय प्राप्त प्रत्यय 'म्' का लोप हो जाता है, तदनुमार प्राफ्त में भी इकारान्त उकारान्त नयुं सक लिंग वाले शब्दों में प्रथमा विभक्ति के एक वचन म सूत्र सरया ३-०५ से प्राप्त होने वाले प्रत्येय 'म' का भी वैकित्यक रूप से लोप हो जाया करता है। जैसे —दिष=दिह श्रीर मधु=महु। इन रूपों की स्थिति संस्कृत में सिद्ध रूपों की श्र्येषा से जानना। कोई कोई खाचार्य प्राप्त में प्रथमा विभक्ति के एक वचन में नयु सक लिंग में प्राप्त प्रत्यय 'म्' के स्थान पर खानुनासिक की भी प्राप्ति भी स्वीकार करते हैं, वदनुसार उनके मत से 'दिष' का प्राप्तत प्रथमान्त एक वचनान्त रूप 'दिहें' भी होता है। इसी प्रकार से 'मधु' का 'महु' जानना।

परन - मूल सूत्र में 'क्लीवे' अर्थात् 'नपु सक में' ऐसा उल्नेख क्यों किया गया है १

उत्तर — इसका कारण यह है कि प्राष्ट्रतीय पुल्लिंग श्रीर स्नोलिंग वाले राव्हों में प्रयमा विमक्ति के एक वचन में सक्ट्रतीय प्राप्तव्य 'मि' के स्थान पर 'म्' प्रथ्य की प्राप्ति नहीं होती हैं, 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति नहीं होती हैं, 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति केवल नपु सक लिंग वाल रान्हों में हो जानना, ऐसा निश्चित विधान करने के लिये ही मूल सूत्र में 'क्लीपे' पर का उक्लेख करना पड़ा है। जैसे — चाल = बालो क्रथीत् बालक श्रीर बाला = बाला श्रार्थात् लड़की। ये उदाहरण कम से पुल्लिंग रूप श्रीर स्त्रीलिंग रूप है, इनमें प्रथमान्त एक वचन में 'म्' प्रत्यय का श्रमाय प्रदर्शित करते हुए यह बतलाया गया है कि प्रथमान्त एक वचन - में नपु सक लिंग में ही 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति होती है। श्रन्य लिंगों में नहीं।

पदन -मूल सूत्र में 'स्वरात्' शब्द के उल्लेख करने का विशेष तात्पर्य क्या है ?

उत्तर —साहत स श्रकारा त तपु मक लिंग बाले राष्ट्रों में ही प्रथमा विभक्ति के एक बचन में 'सि' प्रत्यय के स्थान पर 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति होती है और श्रन्य इकारान्त उकारान्त नपु सक लिंग बाले राष्ट्रों में इस प्राप्त प्रस्वय 'सि के स्थानीय रूप 'म्' का लोग हो जाता है, परन्तु प्राकृत में ऐसा नहीं होता है, अतान्य प्राफ्ततीय श्रकारान्त, इकारान्त श्रीर उकारान्त सभी राष्ट्रों में नपु सक लिंगात्मक स्थिति में सस्कृतीय प्रीप्त प्रत्यय 'सि' के स्थान पर 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति होती है। ऐसी विरोपता भत्तलाने के लिये हो मूल सूत्र में 'स्वरात' पर का उन्लेख किया गया है। जो कि 'श्रकारान्त, इकारान्त श्रीर प्रकारान्त हो शोतक है। यो प्रयुक्त श्रष्टों की विरोपता जान लेनी चाहिये।

एणं रूप की मिद्धि सूत्र-मख्या १-१७२ में की गई है।

पेम्म रूप की सिद्धि सूत्र-सख्यो ?-१८ में की गई है।

वृद्धिं रूप की सिद्धि सूत्र सरया ३-१९ में की गई है।

मह रूप की सिद्धि मून सख्या है १९ में की गई है।

दृष्टिं सस्छत प्रथमान्त एक बचनान्त रूप है। इसका प्राकृत रूप दृहि होता है। इसमें सूत्र-सं या १-१८७ से 'घ्' के स्थान पर 'ह ' की प्राप्ति श्रीर ४-४४८ से प्रथमा विमक्ति के एक बचन में सस्हतीं रूप बन्न प्राप्त प्रत्यय 'सि' का लोप शेकर दृष्टि रूप सिद्ध हो जाता है।

मसु सरहत प्रथमान्त एक वचनान्त रूप है । इसना प्रान्तत रूप गहु होता है । इसनी सायितज्ञ स्परोक 'दक्षि' के समान हो होकर महु रूप सिद्ध हो जाता है ।

हिंध संस्कृत प्रथमान्त एक बचनान्त रूप है। इसका 'ख्रावें' प्राष्ट्रत रूप वहिँ होता हैं। इसकें सूत्र संत्या १-१८० से घ्' के स्वान पर 'ह्' को शक्ति खोर ३-२४ की शृचि स प्रथमा विमक्ति केण्ड बचन में खार्च-प्राष्ट्रत में 'खननासिक' की प्राप्ति होकर 'दहिँ' रूप सिद्ध हो जाता है।

मधु मस्कृत प्रथमान्त एक वचनान्त रूप है। इसका 'श्रापी' प्राफ़न रूप महुं होता है। इसक साघनिका चपरोक्त 'दहिं' के समान ही होकर महुँ रूप सिद्ध हो जाता है।

थाल संस्कृत प्रथमान्त एक ययनान्त रूप है। इसका प्राष्ट्रन रूप यात्री होता है। इसमें सूत्र सच्चा २-२ से प्रथमा विमक्ति के एक बचन में खकारान्त पुल्तिग में संस्ट्रनीय प्रत्यय 'सि' के स्थान वर प्राष्ट्रत में 'को' प्रत्यय की प्राप्ति होकर पाली रूप सिद्ध हो जाता है।

षाम सस्टत प्रथमान्त एक बचनान्त रूप है। इनना प्राष्ट्रत रूप मा बाला ही होता हैं। इनने सूत्र सरया ४-४४= से प्रथमा-विभक्ति के एक बचन में स्त्रीलिंग में सरहताय प्रस्वय सि=सृ' की प्राणि खौर १११ से प्राप्त हलन्त व्यक्षन 'म्' का लोप होकर प्रथमान्त एक बचन रूप स्त्रीलिंग पर बाला विद्र हो जाता है।। ३-२४।।

जस्-शस्-इॅ-इं एायः सम्राग्टीर्घाः ॥ ३–२६ ॥

क्लोवे वर्तमानाशास्तः परयोर्जेस्-शतोः स्थाने सातुनामिक-सातुस्वाराविकारी विश्वादेशा मरन्ति समान्दीर्पाः । एपु सन्सु पूर्व स्वरस्य दीर्घत्यं विश्वीयते करवर्षः ॥ इँ । जार्र वयणाई सम्हे ॥ इ । उस्मीलन्ति पङ्कपाई निष्ठन्ति पेन्द्र या । दहीई हुन्ति जेन या । मह्यं सुख या ॥ रिप । फुन्लन्ति पङ्कपायि गेगह या । दुन्ति दहीकि जेम या । एवं महुक्ति ॥ क्तीह इत्येव । बच्छा । बच्छे ॥ सस्-गम् इति विम् । सुई ॥ 00,000,000 - 1100 11 2100, 220,00 200,004 2001, 2001, 20 20,000 2 20,000

अर्थ -प्राकृत भाषा के श्रकारान्त, इकारान्त श्रीर उकारान्त नयु मक लिंग वाले सन्दों में प्रथमा विमक्ति के बहुतचन में संस्कृतीय प्रत्यय 'जस्' के स्थान पर श्रीर द्वितोया विभक्ति के बहुवचन में 'शस' प्रत्यय के स्थान पर प्राकृत में कम से अनुनासिक सहित 'हैं' प्रत्यय अनुस्नार सहित 'हे' प्रत्यय श्रोर 'णि प्रत्यय की श्रादेश-प्राध्ति होती है। क्रम से प्राध्त होने वाले इन ई, इ श्रीर णि' प्रत्ययों के पूबस्य शध्यान्त्य हुस्व स्वर को नियमित रूप से 'दीर्घत्व' की प्राप्ति होती है। ध्रथीत शब्दान्त्य स्वर को दीर्घ करने के पश्चात ही इन प्राप्त होने वाले प्राययों 'हैं, इ णि' में से कीई सा भी एक प्रत्वय सयोजित कर दिया जाता है और ऐसा कर देने पर प्रथमा विमिक्त के बहुवचन का अथवा द्वितोया-विभिक्त के बहुबचन का अर्थ प्रकट हो जाता है। जैसे - हैं' का उदाहरण --यानि बचनानि अभाकम्=जाहें वयणाइँ श्रम्ह श्रयीत् (प्रथमा में) हमारे जा वचन हें श्रथवा (द्वितोया में) हमारे जिन वचनों की ! 'इ' का उदाहरण -उन्मीलन्ति पद्धजानि=उम्मीलन्ति पद्धयाद श्रर्थात कमल खिलते हैं, पद्धजानि विष्ठन्ति=पङ्कयाइ चिट्टन्ति श्रर्थात् कमल विद्यमान हें। पङ्कजानि परय=पङ्कयाइ पेच्छ स्रर्थात् कमर्लो को देखो । दधीनि भवन्ति (अथवा सन्ति)=दहीइ हुन्ति अर्थात् दही है । दधीनि भुक्त≈दहीइ जीम धर्यात दही को खाश्रो । मधुनि मुख्य धर्यात शहर की छोड़ दो-(रहने दा-मत खास्रो)। 'णि' का उदाहरण -फ़ल्लन्ति पङ्कनानि = फ़ल्लन्ति पङ्कयाणि स्रर्थात् कमल विलते हैं। पङ्कजानि गृहाण=पङ्कयाणि गेएह श्रर्थात कमलों को प्रहण करो । दधीनि मवन्ति=दहीणि हुन्ति श्रर्थात दही है। द्यीनि मुख=द्हीणि जैम अर्थात् दही को खास्रो। मधूनि मुन्तः=महूणि जैम स्पर्धात् शहर को सास्रो इन उदाहरणों में कम से इँ, इ श्रीर णि' प्रत्ययों का प्रयोग बतलाया गया है।

प्रकृत —सूत्र की शृत्ति के प्रारम्म में 'क्लीवे व्यर्थात् 'नपुसक लिंग में' ऐसा वल्लेख क्यों किया गया है रि

उत्तर जो प्राकृत-शरू नपु सक लिंग वाले नहीं हो कर पुल्लिंग श्रयम ख्रोलिंग वाले हैं, उत रान्दों में 'जस'-श्रयवा शम' के स्थान पर 'इँ, इ श्रीर णि' प्रत्ययों को प्राप्ति नहीं होता है श्रयोत् केवल नपु मक लिंग वाले शब्दों में हो इन इँ, इ श्रीर खि' प्रत्ययों की प्राप्ति हुआ करता है, यह 'श्रय्ये पूर्ण विधान' प्रस्थापित करने के लिये हो सूत्र की बृत्ति के प्रारम्म में 'क्ज़ीने' शब्द का उल्लाद करना पड़ा है। जैसे —मृत्ता≔वच्या श्रीर बृत्ताच=वच्छे, ये उदाहरण कम से प्रथमान्त बहुन्चन बाले श्रीर द्वितीयात बहुवचन वाले हैं, क्लिन्तु इनका लिंग पुल्लिंग ई, श्रवएव इनमें 'इँ, इ श्रीर णि' प्रत्ययों का श्रमाध है। यों इनकी प्रारस्वरिक-धिशेषता को जान लेना चाहिये।

परन -सूत्र के शारम्भ में 'जम् शस्' ऐसे शन्शें को प्रयोग करने का ज्या तास्वर्य विशेष है ?

उत्तर — इसमें यह रहस्य रहा हुआ है कि प्राकृत भाषा के गपु मक लिंग बाले शब्दों में हैं, इ ओर णि' प्रत्ययों की प्राप्ति प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में ही और दिलीया विभक्ति के बहुवचन में ही होती है, अन्य किमी भी विभक्ति के (सबोधन को छोडकर) किसो भी वचन में इन 'इं, इ और गेण्ह रूप की मिद्धि सूत्र सख्या ?-१९७ में की गई है।

द्रभी नि — मस्कृत रूप है। इसका प्राकृत रूप द्दीणि होता है। इसमें सूत्र सख्या १ १६० स ए सस्कृत रूप 'दिधि' में स्थित 'घ' के स्थान पर प्राकृत में ह् ' चादेश चौर २-०६ से प्रथमा चयया द्विशर विभक्ति के बहुवचन में संस्कृतीय प्रत्यय 'जस' जीर 'शास' के नतु सक लिगासक स्थानीय रूप 'सि' इ स्थान पर प्राकृत में व्यन्त्य हरन स्वर 'इ' को दोर्घ स्नर ई' को प्राप्ति कराते हुए 'शण प्रत्यय को मृत्रि होकर प्राकृत रूप दृष्टीणि सिद्ध हो जाता है।

'हुन्ति' - रूप की मिद्धि इसी सूत्र में उपर की गई है।

'जेम' - रूप की सिद्धि इसी सूत्र में उपर की गई है।

मधूनि — सस्द्वत का रूप है। इसका प्राष्ट्रत का मधूणि होता है। इसमें सूत्र-संद्या १ १८० रं मूल सस्द्वत रूप 'मधु' में स्थित 'घ' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'र्' खादेश श्रीर ३ २६ से प्रथमा श्वस्व द्वितीया विमक्ति के बहुवपन में सस्ट्वीय प्रस्वय 'जम्' खीर 'आस्' के नयु मक िगासक स्थानाय रू 'मि' के स्थान पर प्राष्ट्रत म खन्त्य हम्म स्वर 'ज' को दीर्घ स्वर 'क' को प्राप्ति कराते हुए 'णि' भाव्य मी प्राप्ति होकर प्राष्ट्रत रूप मद्दाणि सिद्ध हो जाता है।

यच्छा रूप की सिक्षि सन्न सख्या है-४ में की गई हैं।

एच्छे रूप की सिद्धि सुन-सन्त्या F-8 में की गई है।

छुरतम् सस्छत रूप है। इसका प्राकृत रूप सुह होता है। इसमें सूत्र संख्या १-१८० से 'क्' इंदान पर 'ह' खादेश खौर १-२५ से प्रथमा पिमक्ति के एक बचन में खादारान्त नपु सक किंग में संस्ताव प्रथम (सि' के श्यान पर प्राकृत में 'म' खादेश एव १-२३ से प्राप्त 'म' का खनुस्थार होकर रह रूप किंग जाता है। खयवा सूत्र-संस्था ३-५ से द्विनीया विभक्ति के एक बचन में 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति और १-२३ से प्राप्त प्रत्यय 'म्' का खनुस्थार होकर द्वितीया-विभक्ति के एक बचन में प्राकृतीय रूप रूर्व सिष्द हो जाता है। ३-२६ ॥

स्त्रियामुद्देतो वा ॥ ३--२७॥

स्त्रियो वर्तमानानाम्नः परयोर्जस्-ग्रसोः स्थाने प्रत्येक्ष्म् उत् श्रोत् इत्येता सप्राग्दीर्श या भतवः ॥ वचन-भेदो यया-संख्य निष्क्यर्थः ॥ मालउ मालाश्रो । ग्रद्धी उ ग्रद्धीश्रो । सरीउ सहीश्रो । येगुउ घेगुश्रो । यहुउ षहुया । पर्च । माला । ग्रुद्धी । मही । घेगु । यह ॥ नियामिति किम् । यच्छा । जम्-ग्रम इत्येत । मोलाए कर्य ॥

अर्थ'-प्राकृत-मापा के श्राकारान्त, इकारान्त, उकारान्त, ईकारान्त श्रीर ककारान्त स्त्रीनिंग ाले शब्दों से प्रथमा विभक्ति के बहुचन के प्रत्यय 'जस' के स्थान पर ऋौर द्वितीया विभक्ति के बहुब बन हे प्रत्यय 'शस' के स्थान पर-चैकल्पिक रूप से 'उत्=उ' और 'श्रोत्=ओ' प्रत्ययों को प्राप्ति होती है। अर्थात प्रथमा श्रीर द्वितीया विभक्ति म से प्रत्येक के बहुउचन में क्रम से तथा वैकल्पिक रूप मे 'उ' श्रीर श्रो' ऐसे दो दो प्रत्ययों की प्राप्ति होती है। साथ में यह मी ध्योन में रखना चाहिये कि इन 'रु' श्रय **ा** छो' प्रत्ययों का प्राप्ति के पूर्व राज्यान्त्य हुन्य स्वर को दीर्घ स्वर की प्राप्ति हो जाती है। अर्थात् हस्व कारान्त को दोर्घ ईकारान्त की प्राप्ति होती हैं एव इस्य उकारान्त दोर्घ ऊकारान्त में परिएात हो राता है। वृक्ति में 'प्रत्येकम' शब्द को लिखने का यह तात्वर्य है कि स्त्रीलिंग वाले समी शब्दों में श्रीर ाथमा द्वितीया के बहुयचन में-(दोनों विभक्तियों में) ⁴3' श्रोर 'श्रो' प्रत्ययों की क्रम से नथा वैकल्पिक त्व से प्राप्ति होती हैं। जैसे —श्राकारान्त स्त्रालिंग का उदाहरण -माला =मालाउ श्रीर मालाश्रो, कारान्त स्त्रोलिंग का उदाहरण —बुद्धय श्रोर बुद्धी =बुद्धीउ श्रीर बुद्धीश्रो, ईफारान्त स्त्रीलिंग का उदाहरण —सख्य श्रौर मखो≔महोउ श्रौर सहीश्रो, उकारान्त स्त्रीलिंग का खदाहरण —घेनव श्रौर बेनू.=घेरारू श्रीर घेरारूश्रो, एव ऊठारान्त स्त्रीलिंग का उदाहरण —वध्व श्रीर वधू ≔बहूउ श्रीर बहुआ। वैकिटिपक पद्म होने से इन्हीं उदाहरणों में कम से एक एक रूप इस प्रकार भी होता ई —माला, बुद्धी, सही, घेरा, और वह । ये रूप प्रथमा और द्वितीया विभक्ति के बहुवचन के जानना, यों स्त्रीलिंग वाले शब्दों में प्रथमा तथा द्वितीया विमक्ति के बहुत्रचन म ख्वें की समानता तथा एक रूपता है।

प्रश्न -मूत्र के प्रारम्भ में 'रित्रयाम्' अर्थात खोलिंग वाले शब्दों में' ऐसा उल्लेख वर्धों किया गया है ?

उत्तर —जी प्राकृत शब्द स्त्रालिंग बाले नहीं होकर-पुल्लिंग वाले श्रथमा नपु सक लिंग बाले हैं. खनमें प्रथमा श्रयवा द्वितोया विमक्ति के बहुव चन में 'जस' श्रथवा शस' प्रस्वय की प्राप्ति होने पर 'ख' न्धीर 'श्री' प्रत्ययों की इनके स्थान पर श्रादेश-प्राप्ति नहीं हाती है। 'ब अथवा 'श्री' की श्रादेश प्राप्ति फेवल स्त्रीलिंग वाल शब्दों के लिय ही है, ऐसा स्पष्ट-विधान प्रस्थापित करने के लिये ही सुत्र के प्रारम्म में 'रित्रयाम्' जैसे शब्द को रखने की द्यावश्यकता हुई है। जैसे —वृत्ता = पण्डा स्त्रीर वृत्तान = वण्छा। इन उदाहर्णों से विदित होता है कि पुल्लिंग में 'जम व्यथना शस' के स्थान पर 'उ' व्यीर 'खा' प्रत्ययों की चादेश प्राप्ति नहीं होतो है।

परन - 'जस' खथवा शस्' ऐसा भी क्यों कहा गया है ?

उत्तर - स्त्रीलिंग वाने शब्दों में 'ठ' श्रीर 'ब्रो' श्रादेश रूप प्रत्ययों की प्राप्ति 'जस' श्रोर 'शस' फे स्थान पर ही होती है, श्रन्य किमी भी विभक्ति के प्रत्ययों के स्थान पर 'ड' स्थया 'ख्रो' की श्रादेश-प्राप्ति नहीं होतो है। जैसे -मालाया कृतम्=मालाण कर्य खर्थात् माला का बनाया हुन्ना है। यहाँ वर पर्धा विभक्ति के एकवचन का उदाहरण दिया गया है, जिसमें चतलाया गया है कि सूत-सदया ३-२६ मे

'हम्' के स्थान पर '॰' का प्राप्ति हुई है, न कि च' ख्रथवा 'ख्रो' की, वों यह सिदान्त िफ़ित (द्रा गया है कि ,जस शस्' के स्थान पर ही 'च' खीर 'ख्रो' प्रत्यवों की खादेश-प्राप्ति होती हैं, खादप्र न्हा। इमीलिये वृत्ति में 'जस् खीर शम' का बल्लेख करना पढ़ा है ।

प्रवर्मी विमक्ति के एक बचन में और बहुजचन में स्त्रीलिंग वाले शहरूं में लो 'ख' और 'क्षां प्रस्वय दृष्टि गोजर होते हैं, उनकी प्राप्ति सूज-संग्या २-- श्रीर २६ में चिल्तिस्ति 'हु' और 'श्रों ने निष्पत होती है, अतग्य जस् शस क स्थान पर 'उ और 'ओ' श्रावेश प्राप्ति वतलाना निष्हलं है। इमी प्रकार में सोंग ने के बहुबचन म स्त्रालिंग बाले शर्मों में 'उ' और 'शो' की चल्लिय मो निष्हलं ही है, क्यों कि 'सोंग में चल्लिय मो निष्हलं ही है, क्यों कि 'सोंगन-रूपों' की प्राप्त प्रस्ता होता है और यह सिद्धान्त मर्वमान्य है, ब्रतण्य स्विद्ध 'हुवा कि 'जस्-शम्' के स्थान पर ही 'उ' 'ओ' की स्वारंग-प्राप्ति होती है, खन्यज नहीं।

माला सस्कृत प्रयमान्त द्वितीयान्त बहुवचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप मालाव, मानावा गौर माला होते हैं। इनमें से प्रथम और द्वितीय रूपों में सूत्र संस्था ३२० मे मस्कृतीय प्रयमा-द्वितीया विमक्ति के बहुवचन में प्राप्त प्रत्यय 'उस रास् के स्थानीय रूप 'अम्' के स्थान पर प्राकृत में वैकल्पिक हा रूप से और क्रम से 'उ' तथा 'ओ' प्रस्थयों की ज्यादेश प्राप्ति होकर वम से दो रूप मालाव और मालाको सिद्ध हो जाते हैं।

हतीया रूप-(माला =)माला में सूत्र सरयारे ४मे मंश्कृतीय प्रथमा द्विनीया विमक्ति के बहुबचन में प्राप्त प्रत्यय 'जस्- राम्' का प्राकृत म लीव होकर कृतीय रूप गाला मिद्ध हो जाता है।

युवय कीर उसी संस्टन प्रयानन हितीयान्त बारायन के समिक रूप है इन दोनों है (मिम्मिलिन) प्राष्ट्रन रूप बुद्धीन, बुद्धीको और बुद्धी होते हैं। इनमें में प्रथम और हितीय रूप मंसूप्र- संस्था २ च्य से मस्ट्रनाय प्रयमा-दिनोया विभक्तिक रूप में मान प्रत्यय 'जम्' रात' के स्थानिक के बहुयान में प्राप्त प्रत्यय 'जम्' रात' के स्थानिक रूप 'जम् के स्थान पर प्राप्टन में वैकल्पिक रूप से और सम से 'उ' तथा 'ज्ञा' प्रत्ययों की कारिए प्राप्ति होकर राष्ट्रान्त्य हथा स्था दाप करते हुए कम से प्रथम के दी रूप प्रस्ति उसीर प्रकाशि पिक हो जाते हैं।

एतीया रूप--(गुद्धय श्रीर बुद्धी =>) गुद्धी में सूत्र संस्था-३४ से संस्कृतीय श्रवमा डिजीवा विमाणि के बहुवारा में प्राप्त प्राप्त अस-रान्' का प्राष्ट्रत म लोप और ३१२ से तथा ३१८ स प्राप्त वर्ष गुप 'जम-शन के कारण म अन्त्य इन्द्र स्वर 'ई' को दीर्घ स्वर 'ई' की प्राप्ति होकर स्त्रीय रूप भुद्धी थिद्ध हो जाना ईं।

सक्य भीर सर्गा मंस्ट्रन प्रथमान दिनोयान बहुबात ने झमिक रूप हैं। इत् होनी हे (बिन्तिमन) प्राप्तन रूप मधीत, सरीक्षो स्त्रीर मशी होते हैं। इत्तों स प्रथम भीर दिनीय हमीं में मुब्त मध्या १-१८३ स मूल संस्ट्रत रूप 'सर्का' में स्थित 'स्' के स्थात पर 'स्' के प्राप्ति कीर ३०० से

तृतीय रूव—(मल्य और मली =) सही मे सूत्र सख्या ३-४ से संस्कृतीय प्रथमा-द्वितीया विभक्ति के बहुउचन में प्रास्त प्रत्यव 'जस्-रास्' का प्राकृत में लोप होकर तृतीय रूप सही सिद्ध हो जाता है।

छेनच और छेन्न सम्झत प्रथमान्त द्वितीयान्त बहुतचन के क्रमिक रूप हैं। इन दोनों के सम्मिलित राक्त यप घेणुउ, घेणुओ और घेणु होते हैं। इनमें सुत्र सख्या १-२२८ से मूल सस्झत रूप 'धेनु' में स्थित न' के स्थान पर 'ए। की प्राप्ति, तन्परचात् प्रथम दो रूपों में सूत्र—सख्या ३ रण्से सम्झतीय प्रथमा दितीया विभक्ति के बहुवचन में प्राप्त प्रत्यय 'अस-रास्' के स्थानीय रूप 'अस्' के स्थान पर प्राफुत में अन्त्य क्रम स्वर 'क को दोर्घ स्वर 'क' की प्राप्ति कराते हुए वैकल्पिक रूप से और क्रम से 'क' तथा 'श्रो' प्रस्थयों की आदेश-प्राप्ति होकर क्रम से प्रथम दो रूप छेणूड और छेणूओ सिद्ध हो जाते हैं।

त्तीय रूप-(धेनव और धेनू.-) बेलू में सूत्र सर्प्या ३-४ से सस्कृतीय प्रथमा-विमक्ति से बहु-धवन में प्राप्त प्रस्वय 'जस-शस्' का प्राफ्त में लोप श्रीर ३ १२ से सथा ३-१८ से माप्त एव लुप्त 'जस् रास् के कारण से श्रन्त्य दृश्व श्वर 'व' को दीर्घ स्वर 'क' की प्राप्ति क्षकर तृतीय रूप धेणू सिद्ध हो जाता है।

षध्य श्रोर षष्ट सस्कृत प्रथमान्त-द्वितीयान्त बहुवचन के क्रामिक रूप हैं। इन दोनों के (सिम्मिलित) प्राकृत रूप बहुत, बहुबो और बहु होते हैं। इनमें मृत्र सम्बा १ १८० से मृत्र सम्कृत-रूप 'वध्' में स्थित 'ध' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति, तत्पश्चात प्रथम दो रूप में सूत्र-सख्या ३-२० से सस्कृतीय प्रथमा-द्वितोया विभक्ति के बहुवचन में प्राप्त प्रत्यम 'जस-रास' के स्थानीय रूप 'श्राम्' के स्थान पर माकृत में वैकल्पिक रून से श्रीर क्रम से 'थ' तथा 'थ्यो' अत्ययों की ध्यादेश प्राप्ति हाकर क्रम से प्रथम थे। रूप चहुत्र श्रीर चहुनों सिद्ध हो जाते हैं।

रतीया रूप-(वस्त्र श्रीर वधू =) वहू में सूत्र सख्या ३-४ से सस्क्रतीय प्रथमा द्वितीया विमक्ति के बहुवचन में प्राप्त प्रत्यय 'जन् यास्' का प्राष्ट्रत में लोव होकर रातीया हव शहू सिद्ध हो जाता है।

षच्छा रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या है-४ में की गई है।

मालाया सम्हत पण्डयन्त एक वषन रूप है। इमका प्राक्षत रूप मालाए होता है। इममें सूत्र सन्त्रा १-२६ से सस्त्रतीय पद्यो विभक्ति के एक वचन में माप्त प्रत्यय 'इस्' के स्थानीय रूप 'श्रास्ट्या' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'त' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राक्षत रूप *माला*ए मिद्ध हो जाता है।

क्य रुप की सिद्धि सूत्र नसदया १-१२६ में की गई है।। ३-२७॥

र्डतः से श्चा वा ॥ ३-२८॥

स्त्रिया वर्तमानादीकारान्तात् सेर्जस्-शसोश्रस्थाने श्राकारी वा मनति ॥ एग इसन्तीया । गोरीया चिट्टन्ति पेच्छ वा । पर्ते । इसन्ती । गोरीयो ॥

अर्थ --प्राकृत-भाषा म दीर्घ ईकारान्त स्त्रीलिंग वाले शब्दों में साक्तीय प्रथमा विमक्ति है एक वचन में प्राप्तव्य पत्यय 'सि' के स्थान पर चैंकिल्पिक रूप से 'आ' आदेश की प्राप्ति होती है। जैस -एपा हसन्ती=एसा हमन्त्रीत्रा त्र्यांत यह हैंमती हुई । वैकिटवक पत्त होने मे 'हमन्ती' (ब्र्यात हॅमती हुई) क्षप भी प्रथमां निभक्ति के एक बचन में बनता है। इसी प्रकार से उन्हीं ईकारान्त स्त्रीलिंग वाले शर्धा में संस्कृतीय प्रथमा निभक्षित के बहुनचन में प्राप्तव्य प्रथय 'जस' के स्थान पर और द्वितीयां विभक्ति के बहुबचन में प्राप्तब्य पृत्यय 'शम्' के स्थान पर भी वैकलिपक रूप से 'खा' खादेश की प्राप्ति हुआ काती है। जैसे —'जम्' का उदाहरण गौर्थ तिप्रन्ति=गोरीथा चिट्ठन्ति, बैकटिपक पत्त में -गोरीयो चिट्ठन्ति श्चर्यात सन्दर स्त्रियाँ विरातमान हैं। 'शस्' का उदाहरण -गौरी परय=गौरीश्चा पेच्छ, वैकल्पिक पत में -गोरीको पेच्छ अर्थात सुन्दर स्त्रियों को देखो। इन ददाहरणों में यह प्रदर्शित किया गया है कि -'सि', 'जस' न्त्रीर 'शस' के स्थान पर नैकरिपक रूप से ईकारान्त स्त्रीलिंग वाले शब्दों में 'आ' आदेश हुं आ करता है।

एसा रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या १-३३ में की गई है।

हसन्ती संस्कृत प्रथमान्त एक वचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप हसन्तीत्रा और हमन्ती होते हैं। इसमें सत्र-संख्या ४-२३६ से मृल प्राकृत हलन्त चातु 'हम्' में विकरण प्रत्यय 'श्र' की प्राप्ति,३-४६९ से वर्तमान छुतुन्त रूप के धर्य में प्राप्त घातु 'हम' म 'न्त' प्रस्यय की प्राप्ति, ३-३१ से प्राप्त रूप 'हमन्त' में स्त्रीतिंगार्थक प्रस्यय 'डी' की प्राप्ति, तदतुमार प्राप्त प्रत्यय 'डी' में स्थित घ' इमनक होने से शेप प्रत्यय 'ई' को प्राप्ति के पूर्व 'हमन्त' रूप में मे खन्त्य हरन न्वर 'ख' को इत्सवा, होकर 'ख' का लोप एव प्राप्त हलन्त 'इसन्त' म उत्त स्त्रीलिंग वाचक प्रत्यय इ' की मयाजना होने म 'हसन्ती' रूप की पाप्ति, तत्प्रधात प्राप्ट रूप 'हमन्ती' म सूत्र सच्या ३-२= से मम्हतीय प्रयमा विमिक्ति के एक वचन में प्रोप्तब्य प्रत्यय 'मि के स्थान पर आ' आदेश रूप प्रत्यय को प्राप्ति होकर प्रथम रूप हसन्तीभा सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप-(इसन्ती=) इसन्ती में सूत्र मंख्या ३-१६ ने प्राप्तव्य प्रत्यय 'मि' के स्थान पर द्यन्त्य स्वर का दीर्घता की प्राप्ति रूप 🔭 🤉 हपनी सिद्ध हो जाता है।

गीर्थ -संरक्त प्रथमान्त रू। गोरीया और गोरी⁹ की प्राप्टि होते हैं। इनमें सूत्र सन्या १-४ से मूल

तत्पञ्चात् प्रथम रूप में सूत्र-सख्या ३-२८ से श्रथमा त्रिमक्ति के बहुत्रयन में सस्क्रजीय प्रत्यय 'जस्' के स्थानीय रूप 'श्रस्' के स्थान पर प्राकृत में 'श्रा' श्रादश रूप प्रत्यय की प्रास्ति हो कर प्रथम रूत 'गोरीओ' सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय स्व-(गीर्र =) गोरीश्रो में सूत्र-सख्या ३-२० से प्रथमा विमन्ति, के बहु वचन में सम्कृतीय प्रत्यय 'ज्ञस् क स्थानाय रूप 'श्रस्' के स्थान पर वैकल्पिक रूप से 'श्रो' श्रादेश रूप प्रत्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप गोरीशो सिद्ध हो जाता है।

गौरी —सस्कृत द्वितीयान्त बहुवचन रूप है। इसके प्राकृत रूप गोरीखा और गोरीखा होते हैं। इन दोना द्वितीयान्त बहुवचन वाले रूपों की सिद्धि चपरोक्त प्रथमान्त बहुवचन वाले रूपों के समान ही होकर क्रम से दानों रूप गोरीखा तथा गोरीखो सिद्ध हो जाते हैं।

चिहन्ति रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-२० में की गई है। पेच्छ रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-२२ में की गई है।

'चा' (श्रव्यय) रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-५७ में की गई है। ३-२८॥

टा-डस्-ड रदादिदेझा तु डसे ।। ३-२६॥

स्त्रिया वर्तवानान्नाम्नः पोषा टाडमहीनां स्थाने प्रत्येकम् श्रव् श्रात् इत् एत् इत्येते चत्वार श्रादेशाः सप्ताग्दीर्घा भगन्ति । हमेः पुनरेते सप्ताग्दीर्घा वा भगन्ति ।। मुद्धात्र । मुद्धात्य । मुद्धात्र । मुद्धात्य । मुद्धात्र । मुद्धात्र । मुद्व

डकारान्त स्त्रीलिंग —धेन्वा =धेण्य-धेण्या-धेण्य-धेण्यः, धेण्या, धेण्या, धेण्या श्री धेण्यिति।

ऊकारान्त स्त्रीलिंग —वध्वा श्वागत≔वह्श्य-वह्श्या-वह्द्र- वह्ण, बहुत्तो, बहुव, बहुश्रो श्री बहुईितो श्रागञ्जो = बहु से श्राया हुश्रा है ।

इकारान्त कोलिंग का एक खोर वदाहरण पृ'ता में इन प्रकार दिया गया है — स्त्या = रईखो-रईख-रईहिन्तो खर्मात् रित से। इन वदाहरणों में यह प्यान रह कि हृद्र इकारान्त खोर हुस्त उकारात्र सब्दों में प्राप्तव्य प्रत्ययों के पूर्व में स्थित हुस्त स्वर का दीर्घ स्वर की प्राप्ति हो जातो है। किन्तु 'तो प्रस्यय में पूर्व का हुस्त स्वर दीर्घता को प्राप्त नहीं होकर हुस्त का हुस्त हो रह्ता है तथा सूत्र सख्या १ म्ह से खन्त्य दीर्घ स्वर 'तो' प्रत्यय की प्राप्ति होने पर हुस्त हो जाता है। जैसे — मालत्तो, बुद्धितो, सिहतो झौर बहुत्तो।

प्राकृत-भाषा के स्त्रीलिंग वाले शब्दों को शेष विमक्तियों के रूपों की रचना सूत्र-सच्या ३ १२४ के विधानानुसार अकारान्त शब्दों के समान समक लेनी चाहिये।

सून-सख्या ३ १२ में कहा गया है कि-प्रथमा विमक्ति के बहुवचन का प्रत्यय 'जस्' प्राप्त होते पर, हितीयो विमक्ति के बहुवचन का प्रत्यय 'शस्' प्राप्त होने पर, पर्यमी विमक्ति के एक वचन के प्रत्यय 'खो, छ, हिन्तो' प्राप्त होने पर, पर्यमी विमक्ति के बहुवचन के प्रत्यय 'खो, छ, हिंतो, सुन्तो' प्राप्त होने पर हृस्य स्वर को दीर्घता प्राप्त होती है, यही विचान क्यालिय राव्हों के लिय मा इन्हीं विमक्तियों के ये प्रत्य प्राप्त होने पर जानना, तदनुमार स्त्रालिय वाले शस्त्रों में भा प्रयमा-द्विनीया के बहुत्यन में, पत्रमी विमक्ति के एक वचन में खीर बहुवचन में पतान्तर में मा द्वस्त्र स्वर को दीर्घता की प्राप्ति होती है।

प्रकृत —पृत्ति के प्रारम्भ में 'स्त्रीलिंग वाल शक्तों मे' ऐसा शब्द क्यों कहा गया है ?

उत्तर — इसमें यह तात्वर्य है कि जब प्राकृत-माया क स्त्रालिंग वाले शहरों में तृतीया विमिष्ठ के एक बचन का प्रत्यव प्राप्त होता है अथवा पंचमी पछा, श्रीर मममी विमिष्ठ के एक बचन का प्रत्यव प्राप्त होता है, तो इन प्रत्यवों के स्थान पर केवल स्त्रालिंग वाल शहरों म ही 'श्र-श्रा-इ-प्' प्रत्यवों की कादेश प्राप्ति होती है। नयु सकलिंग वाले खयवा पुल्निंग वाले शहरों में उक्त विमिष्टियों के एक यचन के प्रत्यव प्राप्त होती है। नयु सकलिंग वाले खयवा पुल्निंग वाले शहरों में उक्त विमिष्टियों के एक यचन के प्रत्यव प्राप्त होने पर इन प्रत्यवों के स्थान पर 'म श्रा इ-प' प्रत्यवों की श्रादेश-प्राप्ति नहीं हाती है। एमा विधान प्रदर्शित करने के लिये ही पृष्ति के प्रारम्भ म 'र्मालिंग वाल शहरा म' ऐसा उन्लेख बरना पड़ा है। वैसे पुल्लिंग शब्द का बदाहरण इस प्रकार हैं — स्त्राया विभक्ति के एक वचन में — 'बच्छेण', पचनी विभक्ति के एक रचन में वच्छम' श्रीर समगी विमक्ति के एक बचन में

स्त्रीलिंग वाले शब्दों के समान 'बच्छाश्च-वच्छाश्चा-वच्छाइ-वच्छाए' रूपों हस्य वृत्ति के प्रारम्भ में उल्लिखित 'स्त्रिया' शब्द से जानना ।

में 'टा-डम् डि-डिस' ऐना क्यों लिखा गया है ?

्ष्पं भी आदेश-प्राप्ति केनल 'टा-इन् हि इ से' के स्थान पर हो होती है, ख-आ-इए' आदेश-प्राप्ति नहीं होती है, ऐना सुनिक्षित्र विधान प्रदर्शित । इन् हि इसि' का उल्लेख करना आवश्यक ममका गया है। इन के समर्थन — सुधा= सुद्धा, चुद्धि = युद्धी, सखो= सही, धेतु = धेणु और वधू = यहू। इन कि एक वचन का प्रत्यय 'सि' प्राप्त हुआ है, और उक्त प्राप्त प्रत्यय 'सि' का होकर इनके स्थान पर अन्त्य हुन्ब स्वर को दार्धता प्राप्त हुई हैं, न कि 'अप्रा । अतएव यह सिद्ध करने के लिये कि 'अ आ इ ए' रूप आदेश-प्राप्ति केनल । पर ही होती है, न कि अन्यत । इसी रहस्य को समकाने के लिये सूत्र में 'टा-करना पड़ा है।

सुम्पया सस्छत कृतीयान्त एक वचन का रूप है। इसके प्राक्षन रूप मुद्धा अनुद्धाइ और भुद्धाय होते हैं। इनमें सून-सख्या २००० से मूल सस्छन रूप मुगा में स्थित इनन्त 'ग्' का लाप, २००० से 'ध्' को द्वित्त 'प्प्' की प्राप्ति, २६० से प्राप्त प्राष्ट्रत रूप स्थान पर 'द' को प्राप्ति और ३-२६ से प्राप्त प्राष्ट्रत रूप 'युद्धा' में सस्छत के कृतीया विभक्ति के एक वचन में प्राप्तन्य प्रत्यय 'दा' के स्थान पर प्राष्ट्रत में कम से 'ख', 'इ' और 'ए' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर कम से तीनों प्राष्ट्रन रूप मुद्धान, मुद्धाइ और मुद्धाण सिद्ध हो जाते हें।

सुरधाया सस्कृत पष्टयन्त एक बचन का रूप हैं। इसके प्राकृत रूप सुद्वाय, सुद्वाइ श्रीर सुद्वाए होते हैं। इनमें मूल सम्कृत रूप 'सुग्धा=सुद्धा' की सिद्धि उपरोक्त रीति अनुमार, तत्पश्चात् सूत्र सख्वा ३ २६ से सस्कृत के पच्छी विमक्ति के एक वचन में प्राप्तव्य प्रत्यय 'इस्' के स्थान पर प्राकृत में क्रम से 'श्रन्द ए' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर क्रम से तीनों प्रीकृत रूप सुद्धान सुद्धान श्रीर सुद्धाए सिद्ध हो जाते हैं।

सुरधायाम् साकृत सप्तम्यन्व एक वचन का रूप है। इसके प्राकृत रून मुद्राश्च, मुद्राइ श्रीर सुद्राए होते हैं। इन मूल साकृत रूप 'सुग्वा = मुद्रा' को सिद्धि उपरोक्त रीति श्रातुमार, तत्वश्चात् सून्न साक्या ३-२६ से सास्कृत के सप्तमी विभक्ति के एक वचन में प्राप्तव्य प्रत्यव 'डि' के स्थान पर प्राकृत में कम से 'बाइ ए' प्रत्यवों की प्राप्ति होकर कम से तीनों प्राकृत रूप मुद्धाश सुद्धाह श्रोर सुद्धाए मिद्ध हो जाते हैं।

'सह' रूप की सिद्धि मृत्र सख्या १-१८७ में की गई है।

'ठिअ' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-१९ में की गई है।

'श' म्दप की सिद्धि सूत्र सख्या १ ९७ में की गई है।

सुनिधकपा संस्कृत सृतीयान्त एक यचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप मुख्यियान, मुख्यिया और मुख्यिपाए होते हैं। इसमें सूत्र-संख्या २ ७० से मृत संस्कृत रूप 'मुग्विका' में स्थित 'ग्' का लाए २ ८६ से 'श्' को द्विरा 'श्यू की प्राप्ति, २ ६० से प्राप्त पूर्व 'भ्' के स्थान पर 'द्' की प्राप्ति, १ १७० से 'क' का लोप तत्परचात प्राप्त गण्डत रूप 'मृद्धिया' में सूत्र संख्या ३-२६ से संस्कृत के सुतीया विमिष्ठ के एक वचन में प्राप्तव्य प्रत्यय 'टा' के स्थान पर प्राप्तृत में कम से 'ब्र इप प्रत्ययों की प्राप्ति होड़ा सुद्धियान, मुद्धियान, मुद्धियान,

कमालिकया, फमलिकाया और फमलिकायास कम से सस्कृत तृतीया पट्टी सस्तमी विभिन्न के एक वचन के रूप है। इन मभी के प्राफ्टन रूप कमलिखाझ, कमलिखाइ और कंमलिखाए होते हैं। इन स्मूत सस्वा ११७० से मूल सस्कृत रूप 'फमलिका' में स्थित द्वितीय 'क' का लोप और ३-२६ से महुत तृतीया विभक्ति के एक वचन में प्राप्तव्य पत्थ्य 'दा' के स्थान पर, पट्टी विभक्ति के एक वचन में प्राप्तव्य प्रस्थय 'इस्' के स्थान पर खीर सस्तमी विभक्ति के एक वचन में प्राप्तव्य प्रस्थय 'इस्' के स्थान पर खीर सस्तमी विभक्ति के एक वचन में प्राप्तव्य प्रस्थय 'इस्' के स्थान पर 'ख इस' प्रस्थायों की क्रम से प्राप्ति होकर प्रस्थेक के तीन तीन रूप 'फमलिआ' फमलिआइ और फमलिआई सिद्ध हो जाते हैं।

युद्धचा संस्कृत तृतीयान्त एक वचन का रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप युद्धीया, युद्धीया युद्धीह खीर युद्धे होते हैं। इनमें सूत्र सख्या ३ २६ में मस्कृतीय तृतीया तिमस्ति के एक वचन में प्रास्तव्य प्रस्थय टा' कें खें पर प्राकृत में 'ख-त्रा इ ए' प्रस्थयों को कम में प्रास्ति एवं इसी सूत्र से श्वन्त्य इस्त्र स्वर इ' को दीर्घ स 'ई' का प्रास्ति होकर कम से चारों रूप युद्धीय-युद्धीया-युद्धीय और युद्धीए सिद्ध हो जाते हैं।

युक्त्या. सस्टत पष्टय'त एक बचन का रूप है। इसके प्राक्टत रूप बुद्धीय बुद्धीया, बुद्धीय होते हैं। इनमें सूत्र सत्या ३-२६ से संस्कृतीय पष्टी विभक्ति के एक बचन में प्राप्तव्य प्रस्य के स्थान पर प्राप्टत में 'श्र क्षा इ ए प्रस्थ्यों की क्षम से प्राप्ति और इसी सुत्र से खन्त्य स्थर 'इ' की 'श्र की प्राप्ति होकर कम से चार्र रूप युद्धीय बुद्धीई श्रीर बुद्धीय सिद्ध हों जाते हैं।

पुख्याम सस्दत्त सप्तस्यन्त एक वचन रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप-युद्धीश्र, बुद्धीश्रा, युद्धीह श्री बुद्धीम होते हें। इनर्रा साधनिका भी मूत्र सन्या ६-२६ से ही उपरोक्त रीति स होकर पार्री रूप क्रमः बुद्धीश्र-युद्धीशा-युद्धीह श्रीर युद्धीय सिद्ध हो जाते हैं।

"क्य" रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या १-१२६ में की गई है।

विभव' संस्कृत रूप है। इनका प्राकृत रूप विहवो होता है। इनमें सूत्र-सख्या १-१५० से "म" के स्थान पर 'ह" की प्राप्ति और '-र में वथमा विभाक्त के एक वचन में संस्कृतीय प्रत्यय "सि" के स्थान पर अकारान्त पुल्लिंग में "श्रो" प्रत्यय को प्राप्ति हाका विहलो रूप मिद्ध हो जाता है।

'ठिअ' रूप की मिद्धि सूत्र सख्या ?-११ में की गई है।

'वा' (भ्रव्यय) रूप की सिद्धि सूत्र मरया १-६७ में की गई है।

सख्या सम्कृत तृतीयान्त एक वचन का रूप है। इमके प्राकृत रूप सहीत्र, सहीत्रा, सहीह और महीत होते हैं। इनमें सब सख्या १ १६७ में मूल सम्कृत रूप 'सर्खा' में स्थित 'ख' के स्थान पर 'ह ' की प्राप्ति और ३-२६ से सस्कृतीय तुनीया विभक्ति के एक बचन में प्राप्तव्य प्रत्यय 'टा' के स्थान पर प्राकृत में कम से- 'श्र श्रा इ ए' प्रत्ययों की प्राप्ति हो कर कम से चारों रूप 'सहीश-सहीश और सहिए' सिद्ध हो जाते हैं।

सल्या सन्तत प्रध्यन्त एक वचन रूप है। इसके प्राकृत रूप सहीश्र सहीश्रा सहीइ और सहीप होते हैं। इनमें 'सहो' रूप की साधनिका उपरोक्त रोति से और ३-२६ से सन्कृतीय पष्टयन्त एक वचन में प्राप्तन्य प्रत्यय 'इस' के स्थान पर प्राकृत में क्रम से 'श्र श्रा इ ए' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर क्रम से चारों रूप 'सहीअ-सहीआ-सहीड श्रीर सहीए' सिंद्र हो जाते हैं।

'कय' रूप को मिद्ध सत्र सख्या १-१२३ में की गई है।

'चयण' रूप का मिद्धि मूत्र-सख्या १-२२८ में की गई है।

'ठिश अप की सिक्षि मृत्र सख्या ?-१९ में की गई है।

धेन्वा सस्कृत तृतीयान्त एक वचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप धेसुख, धेसुखा, धेसुड छीर घेराए होते हैं। इनमें सूत्र सख्या १-२०८ से मूल सरकृत शब्द 'घेनु' में स्थित 'न्' के स्थान पर 'रा' की प्राप्ति, ३--९६ से सस्कृतीय वृताया विमक्ति के एक वचन म प्राप्तव्य प्रत्यय 'दा' के स्थान पर प्राकृत में क्रम से 'य त्रान्ड ए' प्रत्वर्या की प्राप्ति श्रीर इमी सूत्र से अन्त्य हुस्त्र स्वर 'व' को दार्घ स्वर 'क' की प्राप्ति होकर कम से चारों रूप 'वेणुज, वेणुआ, वेणुड़ और वेणुए मिद्ध हो जाते है।

धेन्या संस्कृत पष्ठय त एक बचन का रूप है। इसके प्राकृत' रूप घेलुबा, घेलुबा, धेलुड और घेराए होते हैं। इतम घेरा रूप की साधितका उपगेक्त शीत से एव सूत्र-सख्यां ३ रहें से ही वप्ठी विमक्ति के एक वचन में सन्मृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'इस्' के स्थान पर प्राकृत में 'ध्य-खा इ ए' प्रत्ययों की क्रमिक प्राप्ति और इमी सुन से अन्त्य स्वर की दीवता की प्राप्ति होकर क्रम चारों रूप धिणूज-धणुओं-थेणुइ और थेणुए' सिद्धं हो जाते हैं।

धेन्याम् सस्कृत सप्तन्यन्त एक वचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप घेणूषा, घेणूषा,

'कय' रूप की सिद्धि सूत्र सरया १-१२६ में की गई है।

'हुद्ध' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या २-७७ में की गई है।

'ठिअ' रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या ? १६ में की गई है।

वध्या सस्कृत एतोयान्त एक वचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप बहुझ, बहुझा, बहुइ और बहुए होते हैं। इसमें सूत्र संख्या १ १८७ से मूल सम्कृत रूप 'वधू' में स्थित 'ध' के स्थान पर 'ह' की पानि और, ३-२६ से सम्कृतीय एतीया विभक्ति के एक वचन में प्राप्तव्य प्रायय 'टा' के स्थान पर प्राकृत में क्रम से 'ध-आ इए' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर कम से चारों रूप 'वहुझ, वहुआ, वहुआ, वहुआ और वहुए' मिन्प हो जाते हैं।

् बध्या सस्कृत पष्ठयन्त एक बचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप बहुध, बहुधा, बहुध और बहुए होते हैं इनमें 'बहु' रूप की प्राप्ति उपरोक्त रीति से एव ३ २६ से सस्कृतीय पष्ठयन्त एक वचन में प्राप्तन्य प्रत्यय 'उस्' के स्थान पर प्राकृत में क्रम से 'श्र श्रा इ ए' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर क्रम से चार्र रूप बहुज, बहुआ, बहु और बहुए सिद्ध हो जाते हैं।

वध्याम् सस्त्रत सप्तम्यन्त एक वचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप वहूत्र, बहूत्रा, यहूद्र श्रीर वहू्ए होते हैं। इन रूपों की साधनिका उपरोक्त रोति से श्रीर ३-१६ से सप्तमी विमक्ति के एक वचन में सस्त्रतीय प्रत्यय 'डि' के स्थान पर प्राकृत में कम से 'श्र श्रा इ ए' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर कम से चार्र रूप वहूज, यहूजा, वहूद्र श्रीर वहूए सिद्ध हो जाते हैं।

'क्य' रूप का सिद्धि सूत-सरया १-१२६ में की गई है।

भणनम् सन्छत रूप है। इसका प्राकृत रूप भवणं होता है। इसमें सूत्र मख्या १२०८ से 'न' के स्थान पर 'रा' की प्राप्ति, ३-२४ से प्रथमा विभिन्त के एक वचन में अकारान्त नतु सक विग में मह्द्रनीय प्रत्यय 'मि' के स्थान पर 'म्' प्रथय की प्राप्ति और १२३ से प्राप्त 'म्' का अनुस्वार होकर भषण हव सिद्ध हो जाता है।

'िट में की सिंहि सूत्र सरया ३-११ में की गई है।

सुराधा —सस्तृत पद्मान्यन्त एक वचन रूप है। इसके प्राञ्चत रूप मुद्धार्थ, मुद्धार, मुद

सुस्या —सस्कृत पद्मन्यत्त एक वचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप सुद्धीश्र, युद्धीश्र, युद्धीश्र, युद्धीश्र श्रीर युद्धीय होते हें। इनमें सूत्र-सख्या ३-२६ से सम्कृतीय प्रत्यय 'ङक्षि' के म्यान पर प्राकृत में 'श्र श्रा-इ ए' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर एव श्रान्य इस्म स्वर 'इ' को इसी सूत्र से 'ई' को प्राप्ति होकर क्रम से चारों | रूप युद्धीश-युद्धीशा-युद्धीइ श्रीर युद्धीय सिद्ध हो जाते हैं।

च्छ्या.—सस्कृत पद्मन्यन्त एक बचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप सदीझ, सदीघा, सदीह "और सदीए होते हैं। इसमें 'सदी' रूप तक की साधितका इमी सूत्र में वर्णित रोति अनुनार और ३२६ से मस्कृतीय प्रत्यय 'दिम' के स्थान पर प्राकृत म 'श्राश्चा इप' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर कम से चारों रूप 'सहीश-सहीशा सदीइ और सदीए' सिद्ध हो जाते हैं।

् भन्ना —सस्कृत पञ्चम्यन्त एक वचन का रूप हैं। इमके प्राकृत रूप घेणूश, घेणूशा, घेणूशा स्वाधित होते हैं। इनमें 'घेणु' रूप तक को सार्थानका उत्पर इसी सूत्र में विर्धाण रीति श्राप्ता श्रीर ३-२६ से श्रादि के चार रूपों में सरकृतीय पचमी विभक्ति के एक त्रचन में प्राप्ताच्य प्रत्येय पचमी विभक्ति के एक त्रचन में प्राप्ताच्य प्रत्येय पत्री की प्राप्ति एव इमी सूत्र से प्राप्ताच्य प्रत्येय की प्राप्ति एव इमी सूत्र से अन्त्य हुस्य स्वर हो को दीर्घ स्वर 'क्र' की प्राप्ति होकर श्रादि के चार रूप 'घेणूश घेणूशा प्रेणूश श्रीर धिष्ट हो जाते हैं।

अन्त के तीन रूपों में सूत्र सख्या ३-१२४ के अधिकार से एव ३-५ के विधान से प्यमी विमक्ति के एक वचन में "श्री-उ हिन्ती" प्रत्ययों की क्रमिक प्राप्ति तथा ३ १२ से अन्त्य हुस्व स्वर ' च'' को दीर्प स्वर "ऊ" की प्राप्ति होकर अन्त के तीन रूप "धणूओ, धणूड और धणूहिन्ती" मी सिद्ध हो जाते हैं।

्र प्रच्याः सस्कृत पञ्चन्यन्त एक चचन रूप है। इसके प्राकृत रूप,वहूबा, वहूबा, वहूब् और वहूप् ते होते हैं। इनमें "बहू" रूप तक की सिद्धि इसी सूत्र में वर्षित रीति अनुसार और ३-२६,से सस्कृतीय पञ्चमी विमक्ति के एक वचन में प्राप्तव्य भत्यय "डिमि" के स्थान पर प्राकृत में क्रम से "झ आ-इ ए" प्रत्ययों की प्राप्ति होकर चारों रूप क्रम से *"वहुभ-चहुशा-चहुह* और चहुए" सिद्ध हो जाते हैं।

"आगओ" रूप की मिद्धि सूत्र सख्या १-२०९ में की गई है।

रत्या सस्कृत पञ्चम्यान्त एक वचन का रूप है। इस के प्राकृत रूप रईझो, रईन श्रीर रईहिन्तो

वात है। इस म सूत्र संदेश रिन्धा रिन्धि से सून्य संस्कृत शब्द "रात" मा स्थत "त् का लाव, इस सास्वर पक्समी विभक्ति के वचन में मामन्य प्रत्यव "इसि" के स्थानपर प्राकृत में कम से 'खो, उ और हि प्रत्ययों की प्राप्ति खौर ३ १० से शब्दान्त्य हुस्व स्वर 'इ' को दीर्घ स्वर 'ई' को प्राप्ति होकर कम से व रूप 'रईको, रईज, श्रोर रईहिन्तों' सिद्ध हो जाते हैं।

'बच्छेण' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-२७ में की गई है।

'बच्छस्त' रूप की सिबि सूत्र-सख्या १ २४९ में की गई है।

'षच्छाम्म' रूप की सिद्धि सुत्र-सख्या ३-११ में की गई है।

'घच्छाओ' रूप की सिढि सूत्र सख्या ?-१२ में की गई है।

अथ्या— सस्कृत प्रथमान्त एक बचन रूप है। इसमा प्राकृत रूप मुद्धा होता है। इसमें सूत्र ^{सर} २ ७७ से इलन्त 'ग' का लोप, २ =६ से 'घ्' मो द्वित्व 'घ् घ्' को प्राप्ति, २-६० से प्राप्त पूर्व 'घ्, पे स्प पर 'द्' की प्राप्ति, ४ ४४ = से सस्कृतीय प्रथमा विभक्ति के एक बचन में प्राप्तव्य 'स्ति' ('द' ' इत्सद्धा होने से) स्' की प्राप्ति, और १-११ से प्राप्त अन्त्य इलन्त 'स्' का लोप होकर प्राकृत है मुद्धा सिद्ध हो जाना है।

' बुद्धी' — रूप की सिद्धि सूत्र सरया है १८ में की गई है।

सावी — सम्कृत प्रथमोन्त एक त्रचन रूप है। इसका शक्कत रूप सही होता, है। इसमें स्व सङ्बा १-१८० से 'ख्' के स्थान पर ह्' की प्राप्ति, ४ ४४८ से सम्कृतीय प्रथमा विभक्ति के एक चपत प्राप्तब्य भत्यय 'सि= ('इ' की इत्सद्वा होने से) = स्' की प्राप्ति और १-११ मे प्राप्त अन्त्य हतन्त ' का लोप होकर प्राकृत रूप सदी सिद्ध हो जाता है।

भणू - रूप की सिद्धि सूत्र संख्या 🗗 省 में की गई है।

र १८० सं 'घ' के स्थान पर '६' की श्राप्ति, ठ-४४= से संस्कृतीय प्रयमा विमक्ति के एक बचन में प्राप्ति ११८० से 'घ' के स्थान पर '६' की श्राप्ति, ठ-४४= से संस्कृतीय प्रयमा विमक्ति के एक बचन में प्राप्ति प्रस्यय 'सि= ('ड' की इत्मेंबा होने से) स् की प्राप्ति श्रीर १११ से प्राप्त श्रन्त्य हलन्त 'स्' का ही होकर प्राष्ट्रत रूप 'घट्ट' मिद्ध हो जाता है। १-२६॥

-नात ञ्रात् ॥३–३०॥

स्त्रिया वर्तमानादादन्तानाम्नः परेषां टा 'हम् हि इसीनामादादेशो न भवि ॥ मालाश्च । मालाइ ! मालाए कर्यसुई ठित्र व्यागयो वा ॥

अर्थ --प्राफ़त भाषा में श्राकारान्त स्त्रीलिंग शब्दों में तृतीया-विभक्ति के एक वचन में, पचमी विमक्ति के एक बचन में, पष्ठी विमक्ति के एक वचन में श्रीर सप्तमी विमक्ति के एक वचन में सस्क्रतीय प्राप्तत्व प्रत्वव 'टा-इसि-इस और डि' के स्थान पर सत्र सख्या ३-२६ से जो क्रमिक चार श्रादेश-शाम प्रत्यय "श्र का इ श्रीर ए" प्राप्त होते हैं, उनमें से "श्रा" प्रत्यय की प्राप्ति नहीं होती है। किन्तु तान श्रत्यवों की ही प्राप्ति होती है जो कि इस प्रकार हैं - "श्र इ श्रीर ए । साराश यह है कि श्राकारान्त स्त्रीलिंग में 'श्रा' प्रत्यय नहीं होता है जैसे -क्रमिक उदाहरण -तृतीया विभक्ति के एक वचन में -मालया कृतम्=मालाश्च, मालाइ श्रीर मालाए क्य, पचमी विभक्ति के एक वचन में -मालाया श्रागत = मालाश्च, मालाइ श्रीर मालाए श्रामश्रो। वैकल्पिक पत्त होने से मालत्तो, मालाश्रो, मालाउ श्रीर मालाहिंनो व्यागश्रो भी होते हैं।

पष्ठी वमक्ति के एक वचन में -मालाया सुर्खं =मालाश्र, मालाइ श्रीर मालाए सुह। सप्तमी विभक्ति के एक वचन में -मालायाम् श्यितम्=मालाख्य, मालाइ, मालाए ठिखा । इस प्रकार से सभी आका-रान्त स्त्रीलिंग रूपों में 'श्र इ-ए' प्रत्ययो की ही प्राप्ति जानना श्रीर 'श्रा' प्रत्यय का निषेध सममता ।

मालया-मालाया न्मालाया मालायाम् सरवृत्त क्रमिक वृतीयान्त पञ्चम्यन्त-वष्ठयन्त धौर सप्तम्यन्त एक वचन रूप हैं। इन सभी के स्थान पर प्राकृत में एक रूपता, वाले ये तीन रूप 'मालोध-मालाइ श्रीर मालाए होते हैं। इनमें सूत्र सख्या १२६ से सरक्त्तीय क्रमिक-प्रत्यय 'टा इसि इस्-डि' के स्थान पर त्रादेश रूप 'ध्य त्रा इ और ए' प्रत्ययों की क्रमिक प्राप्ति श्रीर ३-३० से 'छा' प्रत्यय की निषेध-श्रवस्था प्राप्त होकर क्रांमक तीनों रूप 'मालाभ मालाइ श्रीर मालाए' उपरोक्त सभी विमक्तियों के एक वचन में सिद्ध हो आते है।

'कय' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ १२६ में की गई है। 'सह' रूप की सिद्धि सत्र सरया है-हह में की गई है। आगओ' रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या ? २०९ में की गई है। 'ठिअ' रूप की मिद्धि सूत्र सरया ह-१६ में की गई है। 'चा' (श्रव्यय) रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-५७ में की गई है ॥३-३०॥

1

प्रत्यये डीर्न वा ॥३-३१॥

ष्यणादि धत्रेण-(हे॰ २-४) प्रत्यय निमित्तो यो डीहक्तः स स्त्रियां वर्तमानान्नाम्नोः षा भवति ॥ साहर्षा । ५ कुरुचरी । पचे । अवत् (हे०२-४) इत्याप् । साहर्षा ॥ करुचरा ॥

अर्थ,--प्राष्ट्रत भाषा के पुल्लिंग श्रयया न्यु सक लिंग वाले शब्दों को नियमानुसार स्मालिंग में परिवर्तन करने के लिए हेमचन्द्र व्याकरण के सुत्र सख्या २८४ से संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रस्थय 'स्न=ई' ढे स्थान पर (प्राष्ट्रत में) 'ई' की प्राप्ति चैकल्पिक रूप से होती है। जैसे - (साधन + ई =) माधनी-साहण अथवा नेकल्पिक पत्त होने से साहणा। (कुरुचर + ई=) कुरुचरी=कुरुचरी अथवा वैकल्पिक पद्म हान स कुरुचरा। इन चदाहरणो में 'स्त्रीलिंग प्रस्पय' रूप से दीर्घ 'ई' श्रीर 'आ' की क्रमिक रूप से प्राप्ति हा है। घत इस सूत्र में यह सिद्धान्त निश्चित किया गया है कि प्राकृत-भाषा में 'स्त्रीलिंग रूप' निर्माण करने में निल्य 'ई' की ही प्राप्ति नहीं होती है, किन्तु 'खा' की प्राप्ति भी हुआ करती है ।

(साधन + ई)= साधनी संस्कृत प्रथमान्त एक वचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप साहणी और साहणा होते हैं। इनमें सूत्र सट्या १-१८० से 'ध्' के स्थान पर 'ह्' की प्राप्ति, १-२२= से 'न्' इ स्थान पर 'ण' की प्राप्ति, ३ ३१ से 'स्त्रीलिंग रूपार्थंक होने से' स्त्री प्रत्यय 'ई' की चैकल्यक प्राप्ति होने से (साधन में) कम से 'ई' छोर 'छा' प्रत्ययों की प्राप्ति छोर १११ में प्रथमा विभक्ति के एक वचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'सि=स् का प्राफ़्त में लोप होकर कम से दोनों रूप साहणी धीर साहणा सिद्ध हो जाते हैं।

(सहस्वर + ई=) कुरुवरी देशज प्रथमान्त एक वचन का रूप है । इसके प्राकृत रूप कुरुपरी श्रीर क़रुचरा होते हैं। इनमें सूत्र संरया ३ ३१ से 'स्त्रीलंग रूपार्थक होने से' स्त्री-प्रत्यय 'ई' की वैकल्पिक प्राप्ति होने से -(कुठचर=में) कम से 'ई' और 'था' प्रत्यवों की प्राप्ति और १-११ से प्रथमा विमक्ति के एक वचन में सरहतीय माप्तव्य प्रत्यय 'सि=म' का प्राकृत में लोप होकर कम से दोनों रूप कुरुचरी और कुरुचरा सिद्ध हो नावे हैं। 3 3811

श्रजातेः पु'सः ॥३–३२॥

अजातिवाचिनः पुल्लिङ्गाव् स्त्रियां वर्तमानात् छीर्या भवति ॥ नीली नीला । काली काला । हमनायी हसमाया । सुप्पयही सुप्पयहा । इमीए इमाए । इमीर्ग इमार्ग । एईए एम्राए । एईएं एम्राग । श्रजातेरितिकम् । करिणी । श्रमा । एलया ॥ स्रप्राप्ते-विभाषेयम् । तेन गोरी कुमारी इत्यादी संस्कृतनिहत्यमेन छी: ।

अर्थ —जाति वाचक सहा बालों के व्यतिरिक्त संज्ञान वाले, विशेषण वाल, और मर्बनाम बाजे शब्दों में पुल्लिंग से स्त्रीलिंग रूप में परिवर्तन करने हेतु 'ही = ई' प्रत्यय की प्राप्ति वैक्लिपक रूप से हथा करती है। जैसे -तीला-तीली थयवा नीला, काला = काली अथवा काला, हतमाना = हममाणी स्वयंबा हमनाणा, शूर्पणला=मुत्पणही अथवा मुत्पणहा, अनयां=इमार्प अथवा हमाण अर्थात इस (न्त्री) के द्वारा. आसाम्=इमीरां अथवा इमाण श्रयीत इन (रित्रयों) का, एनया=रईए अथवा एखाए अर्थात इस

प्रकृत —जाति बाचक खाकारान्ति स्त्रीलिंग शब्दों में खन्त्य 'खा' ध्रत्यय के स्थान पर 'हैं' प्रस्यय की प्राप्ति का तिषेव क्यों किया गया है ?

उत्तर —जाति वाचक आकारान्त स्त्रीतिंग में अन्त्य 'आ' को 'ई' को प्राप्ति कमी मी नहीं होती है, इसी प्रकार से 'ईकारान्त' को भी 'प्राकारान्त' की प्राप्ति नहीं होती है। अत्वर्ण्य उसकी प्राप्ति नहीं होती है। अत्वर्ण्य उसकी प्राप्ति का निपेच हो प्रदर्शित करना आवश्यक होने से 'अजात' अर्थात् 'नाति वाचक स्त्रीलिंग शब्दों को छोड कर' ऐसा भूल-सूत्र में विधान करना पड़ा है। जैसे —करिणी = किणी अर्थात् हिंथनी। यह उदाहरण ईकारोन्त स्त्रीलिंग का है, इसमें 'आकारान्त' का अभाव प्रवर्शित किया गया है। अजा-अथा अर्थात् वकरी और एतका=एत्वया अर्थात् वंडी इलायंची; इत्यादि इन उदाहर्ग्णें से अतीत होतो है कि आकारान्ते जाति वाचक स्त्रीलिंग शब्दों के प्राकृत-एत्वान्तर में अन्त्य 'आ' को 'ह' की प्राप्ति नहीं होतो है। यो यह सिद्धान्त निर्धारित हुआ कि जाति वाचक स्त्रीलिंग शब्दों के अन्त्य 'आ' को 'आ' को 'आ' हो रहता है तथा यदि अन्त्य 'ई' हुई वो उस 'ई' को मी 'ई' ही रहती है।

प्राकृत भाषा में अनेक स्त्रीलिंग राज्य ऐसे भी षांचे जाते हैं, जो कि जाति वाचक नहीं है, फिर भी जनम अन्त्य 'आ' का श्रमाव है और अन्त्य 'ई' का सद्माव है, ऐसे राष्ट्रों के सबस में युक्ति में कहा गया है कि 'उन राज्यों को विभाषा वाले—अन्य भाषा वाले' जानना, अर्थात ईकारान्त स्त्रीलिंग वाले ऐसे राष्ट्रों को अन्य भाषा साथे हुए एव प्राकृत भाषा में 'रुढ़ हुए' जानना। जैसे —गौरी=गौरी और कुमारी-इमारी। ऐसे राष्ट्र प्राकृत भाषा में रुढ जैसे हो। गये हैं, और इनके थेकल्पिक रूप 'गौरा अथ्या हुमारी' जैसे नहीं वनते हैं। ऐसे नित्य ईक्रारान्त शब्दों में सस्कृत के समान हो 'र्श्वालिंग वाचक' प्रत्य 'ई' की प्राप्ति ही हुआ करती है।

नीटा —सँम्छत रूप हैं। इसके प्राकृत रूप नीली थीर नीला होते हूँ। इनमें सूत्र सख्या '३'३२ से 'स्त्रीलिंग बाचक अर्थ में' अन्त्य 'आ' के स्थान पर वैत्रल्पिक रूप से 'ई' की प्राप्ति होकर क्रम से दोनों रूप 'नीली' और 'नीला' सिद्ध हो जाते हैं।

पाळा —सस्कृत रूप हैं। इनके प्राष्ट्रत रूप कालो और काला होते हैं। इनमें सूप्र मख्या 2-३२ से 'स्त्रीलिंग वाचक अर्थ में' अनत्य 'मा' के स्थान पर प्रकृतियक रूप से 'ई' की प्राप्ति होकर क्रम से दोनों रूप 'कार्ट'।' और काळा सिद्ध हो जाते हैं।

ंदसमाना —सम्कृत रूप है। इमक प्राकृत रूप हममाणा और हममाणा होते हैं। इनम सूत्र-

जुर्गणाया — मस्कृत रूप है। इस ते प्राकृत रूप सुप्तणही जीर सुप्तणही होते है। इस में सूत्र संद्या १ २६० से 'श्' के स्थान पर स की प्राप्ति, १-इस से दीर्घ स्तर 'ज्ञ' के स्थान पर हाव स्तर 'ज' के प्राप्ति, १ ५६ से र्षा कोष, २ ६६ से लीप हुए 'र' के प्राप्ति, २ ५६ से र्षा लोप, २ ६६ से लीप हुए 'र' के प्राप्ति, २ ५६ से र्षा लोप, २ ६६ से लीप हुए 'र' के प्राप्ति, २ ५६ से 'स्त्रीलिंग वोचक छार्थ' में अन्त्य 'धा' क स्थान पर चैकल्पिक रूप से 'ई' की प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप मुज्जणही छौर सुज्जणही बिढ हे साते हैं।

अनया सस्कृत तृतीयान्त एक वचन रूप है। इसके प्राकृत रूप इमीए और इमाए होते हैं। इसे सृत्र सस्या-३ ७० से "इदम्" सर्वनाम के स्त्रालिंग रूप "इयम्" के स्थान पर प्राकृत में "इमा" रूप है प्राप्ति, ३-३२ से "द्रीलिंग वाचक-कर्यं" में "प्राप्त "खा" के स्थान पर वैकल्पि रूप से "ई" की प्राप्ति, ३-३२ से स्कृतीय तृतीया विभक्ति के एक वचन में प्राप्तव्य पत्यय "टा" के स्थान पर 'ए" है प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप इमीए और इमाए सिद्ध हो जाते हैं।

आसाम् संस्कृत प्रयन्त बहुवचन सर्वनाम का रूप है। इसके प्राकृत रूप इमीर्ण और इमार्ट होते हैं। इनमें सूत्र-सख्या ६-७२ से "इत्तृ" सर्वनाम के स्त्रीलिंग रूप "इयम्" के स्थान पर प्राकृत में "इमा" रूप की प्राप्ति, ३२ ने से "स्त्रीलिंग वाचक अर्थ" में अन्त्य "आ" के स्थान पर वैकित्पक रूप है "ई" की प्राप्ति, ३६ से संस्कृतीय पद्मी विमित्तय के बहु वचन में प्राप्त प्रत्यय "आन्" वे स्थान प प्राकृत में "ण" प्रत्यय की आदेश-माप्ति और १२७ से प्राप्त प्रत्यय "या" पर अनुस्वार की प्राप्ति होड़ा कम से दोनों रूप इमीण और इमाण सिद्ध हो जाते हैं।

णतया सस्तृत तृतीयान्त एक वचन सर्वनाम रूप है। इसके प्राष्ट्रत स्पर्श्त और एकाए हो हैं। इसमें सून सख्या १११ मूल मस्त्रत सर्वनाम "वतन्" में स्थित अन्त्य इल त "त" का लोप, १-६७ से दिलीय 'त' का लोप, ३ ३१ वी वृत्ति से और ३-३२ से "स्त्रीलिंग यापक अर्थ" में कम से और वैकल्पिक रूप से रोप अन्त्य "आ" के स्थान पर "आ" एवं "ई" की प्राप्ति और ३ २६ से मंस्त्रीय एतीया विमन्ति के एक वचन में प्राप्तव्य "टा" के स्थान पर "ण" की प्राप्ति होकर कम से होते स्त्रप एईप और एता सिक्ष हो जाते हैं।

आसाम् संस्कृत पष्टयन्त चहुवचन सर्वनाम स्त्रोलिंग रूप है। इसक प्राष्ट्रत रूप पर्दर्ण कीर पद्माण होते हैं। इनमें "प्रदे" कौर "ण्डा ' रूपों की साधनिका वयरोक्षत इसी सूत्र में वर्णित रीहि क्षानुसार, ३-६ से संस्कृतीय पष्टी विमक्ति के बहु वचन में प्राप्तव्य प्रत्यय "झाम्" के स्थान पर प्राप्टन

करिणी संस्कृत स्त्रीतिंग का रूप है। इसका प्राक्कत रूप (भी) करिणी ही होती है। इसमें सूत्र संख्या ४ ४४६ से यथा रूप वत् स्थिति की प्राप्ति होकर करिणी रूप सिद्ध हो जाता है।

अजा सम्कृत रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप श्रया होता है। इसमें सूत्र सख्या १-१७७ से 'ज्" का लोप स्त्रीर १ ६८० से लोप हुए "ज्" के परचात् रोप रहे हुए "श्रा" के स्थान पर "या" की प्राप्ति होकर अया रूप सिद्ध हो जाता है।

' एलका सस्कृत रूत' है। इसका प्राकृत रूप एलया होता है। इसमें सूत्र सख्या १-१७० से "क" के परचातृ शेप रहे हुए "आ" के त्यान पर "या" की प्राप्ति हो कर एलया रूप सिद्ध हो जाता है।

गौरी संख्व रूप है। इसका प्राकृत रूप गारी होता है। इसमें सूत्र संख्या १ १४६ से "औ" के स्थान पर "ओ" की प्राृत होकर गोरी रूप सिद्ध हो जाता है।

कुमारी सम्कृत रूप है। इसका प्राकृत रूप (भी) कुमारी ही होता है। इसम सूत्र सख्या ४ ४४५ से यथा रूप वत्त स्थिति की प्राप्ति होकर कुमारी रूप सिद्ध हो जाता है।

किं-यत्तदोस्य मामि ॥ ३-३३ ॥

"सि अप् आप्" विजिते स्यादौ परे एभ्यः स्त्रिया डीर्याभवति ॥ की ओ । का ओ । की ए । की ए । की छा । का छा । एव । जी यो । जाओ । ती ओ । ताओ । इत्यादि ॥ अस्य मामीवि किम् । का । जा । या । का जं । त । का छा । वा ए ॥

अर्थ —सस्कृत सर्वनाम 'िक्म्", ''यत' जीर "तत" के प्राक्त स्त्रीलिंग रूप ''का", ''ता'' जीर ''सा अथवा ता'' में प्रथमा विमक्ति के एक वचन के प्रत्यय 'श्विम', द्वितीया विमक्ति के एक वचन के प्रत्यय 'श्वम' और पढ़ी विमक्ति के बहु बचन के प्रत्यय 'श्वाम' के श्वान पर प्राप्तच्य प्राक्त के प्रत्यय 'श्वम' और पढ़ी विमक्ति के बहु बचन के प्रत्यय 'श्वाम' के श्वान पर प्राप्तच्य प्राक्त के लेक प्रत्य प्राप्त होने पर इन श्वाकारान्त 'का-जा सा अथवा ता' सर्वनामों के श्वन्य श्वा' के श्वान पर वैकल्पिक रूप से 'ई' की प्राप्ति हो∓र इनका रूप 'की जी और तो' भी हो जाया करता है। इनके क्षिक उदाहरण इम प्रकार हैं —का =कीओ अथवा काओ, कया=ठी श्रीर वा,=वीओ अथवा जाओ और वा,=वीओ अथवा जाओ इत्यादि॥

पष्त — 'सि, 'खम्' खोर 'खाम' प्रत्ययों की प्राप्ति होने पर इन खाकारान्त सवनामों में खर्षात 'का' जो सी सा खयवा ता' में झन्त्य 'खा' के स्थान पर 'ई' की प्राप्ति नहीं होती है, ऐमा वयों कहा गया है ?

उत्तर --चूँकि प्राकृत-साहित्य मे अथवा प्राकृत भाषामें इन आकारान्त सर्वनांभी में भिन 'श्रॉम्' घेरे 'श्राम्' प्रत्ययों के प्राप्त होने पर श्रन्त्य 'श्रा' की स्थिति त्यों की त्यों ही बनी रहेनी है, श्रतहा ऐसा ही विधान करना पड़ा है कि प्रथमा विभक्ति एक वचन में. दितीया विभक्ति के एक वचन में श्रीर पष्टी विमक्ति के बहु बचन में इन श्राकाशन्त सर्वनामों के श्रनय 'श्रा' को 'ई' को प्राप्ति वैशन्ति रूप से मी नहीं होती है। उदाहरण इस प्रकार हैं —का=का; काम्=क श्रोर कासाम्=काण, या=का, याम=ज श्रीर यासाम=जाग्, सा=सा, ताम = त श्रीर नामाम=ताग् ॥

का. सरकृत स्वालिंग प्रथमा-द्वितीया बहुवचनान्त सर्वनाम रूप है, इक्ते प्राकृत रूप कीश्री श्रीर श्रीर काश्रो होते हैं। इनमें सूत्र सख्या १-११ से मृल सस्कृत शब्द 'किम्' में श्रियत श्रन्त्य हल त व्यवन 'म' का लोप. 3 ३१ छौर ३-३३ से रोप रूप 'िक' में बैंकिल्पिक रूप से तथा क्रम से 'स्त्रोलिंग छर्थब प्रत्यर' 'ही' खीर 'खाप = थां' की प्राप्ति, प्राप्त प्रत्यय 'धी' श्रथवा 'श्राप=श्रा' के प्रवेश्य 'कि' म श्रित 'र की इत्सहा होने से लोप होकर कम से 'की' और 'का' रूप की बोदित, और श्रीर अ से प्रथमा एवं द्वितीया विमक्ति के बह यचन में संस्कृतीय प्रत्यय 'जस-शंस के स्थान पर प्राकृत में 'क्षो' प्रत्यय की स्नारा प्राप्ति होकर क्रम से दोनों रूप फीओ खीर काली सिद्ध ही जाते हैं।

क्या संख्त सुतीयान्त एक वचन स्त्रीलिंग सर्वनीम की रूप है। इनके प्राकृत रूप कीए और काए होते हैं। इससे 'की' श्रीर 'का' तक रूप की माधनिका वपरोक्त रीति श्रामार श्रीर ३ वस तंतीया विमर्वित के एक बचन में सस्ट्रतीय प्राप्तब्य भत्यय टा' के स्थान पर पाकत में 'क' शस्त्रया आदेश प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप कीए छोर काए सिद्ध हा जाते हैं।

भास सरकत सप्तन्यन्त बहुंबचन स्त्रीलिंग मर्चनाम का रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप कीसु भी कास होते हैं। इनमें 'की' और 'का' तक रूप की माधनिका चपरोक्त रोति अनुमार और ४-४४= सप्तमी विमक्ति के यह यथन में संस्कृताय प्राप्तन्य प्रत्यय 'सु' के स्थान पर शहर में भी 'सु' प्रस्वय है प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप की सु और कामु सिद्ध हा जाते हैं।

या सस्केत स्त्रांतिंग प्रथमा ब्रिलीया बेहुवचनान्त सर्वनाम का रूप है। इसके प्राकृत रूप जीव भीर जाको होते हैं। इनमें सूत्र मख्या १-११ से मूलं संस्कृत शन्द 'यत् में स्थित श्रन्य इक्षात 'त् क स्तोप, १-२४१ से 'य' के स्थान पर 'अ' की प्राप्ति, ३ ई१ और ३३३ से 'म्प्रीलिंग अर्थक प्रत्यय' 'डी खीर 'खाप' की केम से प्राप्ति, वर्तुमार डी' और 'खा' प्रत्यय प्राप्त होने पर प्राप्त प्राफ्त रूप 'अ में स्थित ऋन्त्य 'श्र' की इत्नंबा होने से छोप होकर कम से 'जी और 'जा' रूप की प्राप्ति एव रेने उ भयमा तथा द्वितीया विमिक्ति के महुवर्षन में मरहतीय प्रत्यय 'नस्-शस्' के श्यान पर प्राहृत में 'डा श्रत्यय की आदेश प्राप्ति होकर ग्रम से दोनों रूप जीको और जाको मिद्र हा जाते हैं।

ता संस्कृत स्त्रीलिंग प्रथमा द्वितीया बहुवर्चनान्त सर्वनाम का रूप है।। इसके प्राकृत रूप तीखी श्रीर ताथा होते है । इनमें सूत्र मख्या १-११ से मूल सरकृत शब्द तर्त्' में श्थित अन्त्य इतन्त व्यञ्जन "त्" का लोप, २-३१ और ३ ३३ से "स्त्रीलिंग अर्थक प्रत्यय" ''डी' और''आप्≕मा" की कम से

श्राप्ति, तदनुमार "डां" और "छा" प्रत्यय प्राप्त होने पर प्रीप्त प्रोकृत रूप "त" में स्थित छन्त्य 'श्र' की इत्सज्ञा होने से लोप होकर कम से "ती" श्रीर "ता" रूपो की प्राप्ति एव ३ २७ से प्रथमा तथा द्वितीया विभक्ति के बहु वचन में संस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'जस-शस्' के स्थान पर प्राकृत में 'स्रो'

प्रत्यय की प्रोप्ति होकर कम से दोनों रूप तीओ श्रीर ताओ सिद्ध हो जाते हैं।

"का" संस्कृत प्रथमा एक वचनान्त स्त्रीलिंग सर्वनाम का रूप हैं। इसका प्राकृत रूप भी "का" ही होता है। इसमें सूत्र सख्या १-११ से मूल सस्कृत शब्द "किम" में स्थित, अन्त्य हलन्त ब्यव्जन 'म" का लोप, ३ ३१ से 'श्रीलिंग अर्थक प्रत्यय' "आप = आ", की प्राप्ति, तदनुसार पूर्व प्राप्त प्राकृत रूप "कि" में स्थित अन्त्य स्वर 'इ' की इत्सज्ञा होकर लोप एव रोप हलन्त "क' में प्राप्त प्रत्यय "बा' की सिंध होकर "का" रूप की प्राप्ति, ४-४४ में प्रथमा विभक्ति के एक वचन में संस्कृतीय प्रत्यय "सि=स" की प्राप्ति और १११ से अन्त्य प्राप्त हलन्त प्रत्यय रूप व्यञ्जन "स" का लोप होकर "का" रूप सिद्ध हो जाता है।

"था" संस्कृत प्रथमा एक वचनान्त स्त्रीलिंग सर्वनाम का रूप है। इसका प्राकृत रूप "जा" होता है। इसमें सूत्र सख्या १ ११ से मूल संस्कृत शब्द "यत्" में श्वित अन्त्य हलन्त व्यञ्जन "त्" का सोप, र २४। से "य' के स्थान पर "ज" को प्राप्ति, ३३१ से 'स्त्रीलिंग प्रर्थं क प्रत्यय" "श्राप"= 'त्रा' की प्राप्ति, तद्वुसार पूर्व प्राप्त प्राकृत रूप ''ज'' में स्थित अन्त्य स्वर ''अ'' की हत्सज्ञा होकर लोप एव शेष हतन्त 'ज" में प्राप्त प्रत्यय "आ" की सिंध होकर 'जा ' रूप की प्राप्ति, ४-४४८ से प्रथमा विमक्ति के एक यचन में संस्कृतीय प्रत्यय ''सि = सुकी प्राप्ति और १-१। से अन्त्य प्राप्त हल त प्रत्यय रूप व्यञ्जन "सु ' का लाव होकर "जा" रूप सिद्ध हो जाता है

"सा" स्त्रोतिंग सर्व नाम रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-२३ में की गई है।

"काम"सस्कृत द्वितीयान्त एक बचन स्त्रीलिंग सर्व नाम रूप है । इसका प्राकृत रूप "क" होता हैं। इसमें सूत्र सख्या ३-३६ से मूल सम्क्रत स्त्रीलिंग रूप ''का' में स्थित ''श्चा' के स्थान पर ''श्चा' की प्राप्ति कोर ३ ५ से द्वितीया विभक्ति के एक वयन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय "अम्" के स्थान पर "म्" की प्राप्ति एव १-२३ से प्राप्त 'म्" का अनुस्वार होकर "क" रूप सिद्ध हो जाना है।

"याम्" मन्छतद्वितीयान्त एक बचन स्त्रीलिंग सर्वनाम का रूप है। इसका प्राकृत रूप "ज" होता है। इसमें सूत्र सब्या १ १६ से मृल संख्रत स्त्रीलिंग रूप "ग्रा" में स्थित ' ऋा ' के स्थान पर "म्र" की प्राप्ति, १२८४ से प्राप्त "ब" के स्थान पर "ल" की प्राप्ति, और शेव सार्वानका उपशेक्त 'क' फे समान ही दोकर 'ज' रूप सिद्ध हो जाता है।

"ताम्" सस्छतः द्वितीयान्त एक घषन न्ह्यीलिंगः सर्वनाम का रूप, है। इसका प्राहृत रूप ' होता है इसमें सूत्र सख्या २-३६ म मूल सस्छत स्त्रीलिंग रूप 'वा' में स्थित "व्या", के स्थान पर 'क" प्राप्ति श्रीर शेष साधनिका वधरोक ' क ' के समान ही होकर "त" रूप सिद्ध हो जोता है।

"कासाम्" सस्कृते पृष्ठयंन्व चेंद्वेवचन स्त्रीलिंग सेवंनीम का रूप है। इसको प्राकृत रूप "का हीता है। इसमें सूत्र-सर्व्या-३-६ से मूल सर्कृत स्त्रीलिंग रूप "का" के प्राकृत रूप "का" में संस्त्र पृष्ठी विभक्ति के बंद्व विचने में श्रीतव्ये प्रत्येय "खाम्" के संस्कृत विधानानुसार प्राप्त स्थानीय रूप "का के स्थान पर प्राकृत में "मे" प्रत्येय की ग्रोति ही कर "कार्ण के स्थ मिद्ध ही जाता है।

''वासो में सिर्कृते पंष्ठयन्त बहु बचन स्त्रीलिंग सर्वनाम की रूप हैं। इसकी प्राकृत रूप 'जा होतों है। इसमें सूत्र-सर्ख्या १ २४५ से ''य' के स्थान पर ''ज' की प्राप्ति और ३६ से सन्द्रतीय प त्रिक्रीक के बंहुं चंचन में प्राप्तित्य पैत्यय ''खांम्ंं≟साम् के स्थान पर प्राकृत में ''या' प्रस्तर्य की प्रा होकर ''जोण" रूप सिद्ध हो जाता है।

"तासाम्"सम्कृत पष्टयन्त बहु वचन स्त्रीलिंग सर्वनाम का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप "जा होता है। इसमें सूत्र-संख्या ३ ६ से सम्कृतीय पष्टी विभक्ति के बहु यचन में प्राप्तव्य प्रस्यय "ब्राप्त साम के स्थान पर प्राकृत में "ख" प्रत्यय की प्राप्ति होकर "ताय" रूप सिंख हो जाता है। ३ स्थ

- छायां-हरिद्रयोः ॥ ३-३४ ॥

श्चनयों राष्-प्रसङ्गी नाम्नः खिया डीर्मा सनति ॥ छाडी छाया । इलही इलहा ॥

कार्थ — संग्रित कीलिंग शरू 'छाया' और 'हिरद्रा' के प्राफ्त रूपान्तर में अन्त्य आ' के खा धरे सैकल्पिक रूपें से 'डीं=ई' की प्राप्ति होती है। जैसे — छाया=छाही और छाया तथा हारद्रा=ला और हलहा। सस्प्रत में 'छाया' और 'हिरद्रा' नित्य रूप म श्रीकारान्त क्रीलिंग हैं, जब कि वे शे प्राफ्त में बैकल्पिक रूप से 'ईकारान्त' हो जाते हैं, इसीलिये ऐसा विधान बनाने को आवर्षर' पत्ती है।

'छोही' खीर 'छायों' रुंपों की मिडि सूथ संख्या १-२४९ में की गई है। 'हर्छही' खीर 'हरेंहों' स्ंपों की सिडि सूत्र सख्या १-८८ में का गई है। ॥१-३४॥ '

म्बसादेडी ॥ ३-३५॥

स्वसादेः स्त्रिया वर्तमानात् डा श्रत्ययो भवति ॥ ससा । नयन्दा । दृढिणा दुहिच्याहि । दृहिचासु । दृहिच्यानसुधो । गउथा ॥ े अर्थ'-स्वस्ताननस्ट और दृहितुः त्रादि ऋकारान्त स्त्रीलिंग शब्शें के प्राकृत रूपान्तर से श्चन्त्व 'ऋ' के स्थान पर 'डा=आ' प्रत्यय की प्राप्ति होती है। प्राप्त प्रत्यय 'डा' में ड' इत्सड़क होते से अकारान्त शब्दों के अन्त्य 'ऋ' का लीप होकर तत्परचात उसके स्थान पर 'खा' प्रत्यय की पाप्ति होने से ये शब्द शकत में आकारान्त स्त्रीलिंग वाले बन जाते हैं। जैसे -स्वस्=सप्ता, ननान्द्र,= नणन्दा दुहिर = दुहिश्वा, दुहिर्मा=दुहिश्वाहि, दुहिरपु=दुहिश्वासु श्वीर दुहिर-सुत =दुहिश्वा-सुश्वी। इत्यादि।

'गडन्ना' शब्द 'गउन्,' से नहीं बना है, किन्तु सूत्र-सख्या १-४४ में वर्णित 'गवय' से बनता है श्याबा १ १५८ में वर्णित 'गो' से धनर्ता है. इसी प्रकार से अन्य श्राकारान्त शब्दों के सवध में भी विचार कर लेना चाहिये. जिससे कि भ्रान्ति न हो। इसी विशेषता की प्रवट करने के लिये उरकारान्त स्त्रीतिंगे शब्दों के प्रसंग'में इस 'गर्जन्ना' शब्द की भी लिखना धावश्यकं संमन्ता गर्या है।

स्वता संस्कृत के स्मम शब्द के प्रथमान्त एक वेचन का स्मीतिंग का रूर्व है। इसका प्राकृत रूप 'ससां' होता हैं। इसमें सूत्र सर्या १-१७७ से वृ' का लोप, ३ ३५ से खन्त्य 'ऋ' के स्थान पर 'खां' की प्राप्ति, ४ ४४६ से प्रथमा विभवित के एक वचर्न में सस्कृतीय 'सि = स' की प्राप्ति छौर १८११ से शाप्त प्रत्यय से का स्रोप होकर ससा रूप सिद्ध हो जाटा है।

ननान्द्रा संस्कृत के 'ननान्द्र' शब्द के प्रथमान्त एक वचन का रंग्रीलिंग रूप हैं। इसका प्रीकृत रूप "नणन्दा" होता है। इसमें सूत्र-सर्या-१-२२= से द्वितीय "न" के स्थान पर "ण" की प्राप्ति, १-५४ से "आ" के स्थान पर "श्र" की प्राप्ति, ३-३५ से अन्त्य "श्रू" के स्थान पर "श्रा" की प्राप्ति, और शेप साधनिका उपरोक्त "ससा" के समान ही कम से सूत्र-सख्या ४-४४८ से एव र-११ सुँहोकर *'नणन्दा'* रूपं सिद्ध हो जाता है।

र्भ "द्वाहेंगा" रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या २-१२३ में की गई है ।

द्रहिल्मिं संस्कृत त्तीयान्त बहुवचन स्त्रीलिंग का रूप है। इमका प्राकृत रूप दुहिश्राहिं होता है। इसमें सूत्र सरया १-१७३ से "त ' कालोप, ३-३४ से लोप हुए "त्" के पश्चात शेप रहे हुए "ऋ" के स्थान पर "आ" की प्राप्ति और ३-७ से सस्क्रनीय छतीया-विभक्ति के बहु वचन में प्राप्तव्य प्रत्यय "भि ' के स्थान पर प्राकृत में "हिं" प्रत्यय की आदेश प्राप्ति होकर दुहिआर्टि रूप सिद्ध ही जाता है।

द्वहित्रप्र संस्कृत संप्तम्यन्त बहुवचन स्त्रीलिंग रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप दुविष्ठास होता है। इसमें "दुहिखा" रूप की साधनिका उपरोक्त रीति अनुसार खीर ४-४४८ से सप्तमी विभिन्ति के मह बचन में सस्कृतीय प्राप्तब्य प्रस्यय "सु" की प्राकृत में भी प्राप्ति होकर द्वाहिआस रूप सिद्ध हो जाता है।

े. इहितु कुत सरहत तलुरुष समामात्मक प्रथमान्त एक वचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप

नहीं ।

दुहिश्रा-सुत्रों होता है। इसमें "दुहिश्रा" रूप की साधिनका उपरोक्त रीति अनुसार १-१०० से द्विते "त्" का लोप खोर ३-९ से प्रथमा विमक्ति के एक वचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्य "सि" केशा पर "खा" प्रत्यय की प्राप्ति, "सुत्रा" के श्रन्त्य "ख" की इस्तिज्ञा होकर लोप एवं तत्वरचात् "दा" प्रत्यय की उपस्थित होकर दृष्टिशा—सभी रूप सिद्ध हो जाता है।

"गउआ" रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या १-५४ में की गई है । ३-३४

हृस्वो मि ॥ ३-३६ ॥

स्त्रीलिंगस्य नाम्नी मि परे हस्तो भवति ॥ मार्ल । नई । वहु । हसमाणि । इसमार पेच्छ ॥ अमीति निम् ॥ माला । सही । वहु ॥

क्षर्यं -प्राकृत-मापा में खाकारान्त, दीर्घ ईकारान्त और दार्घ ऊकारान्त श्रीकिंग शन्ते में द्वितीया विभक्ति के एक वचन का प्रत्यय "ब्रम्≍म" प्राप्त दाने पर दीर्घ स्वर का हस्व स्वर दो जाता है। जैसे,- साकृत-मालाम का प्राकृत म माल, नदाम्=नद्द, यधूम= बहु, इसमानीम्= इसमाणि,, इसमानीम् प्रस्य=हसमार्थ पेक्ट । इस्यादि।

प्रकृत'- ''दोर्घ स्वरान्त स्त्रीतिंग शस्त्रों में द्वितीया विभक्ति बोधक एक वधन म्'' प्रत्यय प्राप्त स्त्रे पर दोर्घ स्वर का द्वस्व स्वर हो जाता है'' ऐना क्ष्यों कहा गया है ?

उत्तर -क्योंकि प्रथम। खादि खन्य विमिन्त नोषक प्रत्ययों के प्राप्त होन पर स्त्रीलिंग में द्राप्त स्वर का द्वस्व स्वर नहीं होता है, किन्तु हरनता को प्राप्ति केवल द्वितीया विमिक्त के व्यवयन के प्रत्यय की प्राप्ति होन पर हा होती है, खतण्य ऐस विधान का उल्लेख करना पड़ा है। जैसे माना = माला, सकी सही और यमु =वहू। इन उदाहरणों में प्रथमान्त एक वचन का प्रयय प्राप्त हुखा है, किन्तु क्रान्त रूप क्ष्य की हुस्य स्वर को प्राप्ति नहीं हुई है, इससे प्रमाणित होना है कि खाय दीर्घ स्वर क स्थान पर हुख स्वर की प्राप्ति केवल दिवीया विभावन के प्रस्थय की प्राप्ति होने पर ही होती है, अपया

माशाने सरहत द्वितीयान्त एक वचन स्त्रीतिंग रूप है। इसका प्राष्ट्रन-रूप माल होता है। इसमें मृत्र सन्या ३ ३६ से द्वितीय "का" के स्थान पर "का" की प्राप्ति, ३ ४ से द्विनीया विमर्षित के एक यचन मे "म्" प्रत्यय की प्राप्ति खीर १-२३ से प्राप्त प्रत्यय की "म्" का खनुस्तार होकर "मास" रूप मिद्ध हो जाता है।

मदीम संस्कृत द्वितीयान्त एक वचन स्त्रीतिंग रूप है। इसका प्राकृत रूप नइ होता है। इसमें सूत्र संख्या १-१७० से 'द्' का लोव, ३ ३६ में दोर्घ ईकार के स्थान पर हस्य "इकार" की प्रास्ति, ३ ४ से द्वेतीया विमक्षित के एक वचन में ''म्'' प्रत्यय की प्राप्ति श्रीर १-२३ से प्राप्तः' म्'' को श्रनुस्वार होकर *न*इ रूप सिद्ध हो जाता है।

षधूम् सस्कृत द्वितीयान्त एक बंचन का स्त्रीलिंग रूप है। इनका प्राकृत रूप बहु होता है। इसमें सूत्र सख्या १-१८० से "ध्" के स्थान पर "हं' की प्राप्ति, ३-३३ से दोवं "ऊकार" के स्थान पर इस्व "उकार" की प्राप्ति, ३ ४ से द्वितोया विभक्ति के एक प्रचन में "म्' प्रत्यय की प्राप्ति और १२३ से प्राप्त "म' का श्रमुस्वार होकर बहु रूप सिद्ध हो जाता है।

हसमानीम् सस्कृत द्वितीयान्त एक वचन स्वीतिग का विशेषण रूप है। इसका प्राकृत रूप हममाणि होता है। इसमें सूत्र-सख्या ३ ९८९ से प्राकृत पातु 'इस' में संस्कृतीय वर्तमान करन्त में प्राप्तव्य पत्यय ''आनच्" के स्वानीय रूप ''मान" के स्वान पर प्राकृत में ''मान" आदेश प्राप्ति, ३-३१ से तथा ३ ३२ से प्राप्त प्रत्यय ''माण्" में रंगीतिग अर्थक प्रत्यय ''हो=ई ' की प्राप्ति, एव प्राप्त स्त्रीतिंग-अर्थक प्रत्यय ''हो" में ''ह" इसहक होने से प्राप्त प्रत्यय ''माण्" में अन्त्य ''आ" की इस्मंहा होकर लीप तथा 'ई" प्रत्यय की हतन्त ''माण्" में स्वोजना होकर ''हतमाण्यो' रूप की प्राप्ति, ३-३६ से दीर्घ 'ईकार' के स्थान पर हस्व ' इकार" की प्राप्ति, ३ ४ से द्वितीया विमक्षित के एक वचन में ''म्'' प्रत्यय की प्राप्ति देश से प्राप्त 'भू का अनुस्वार होकर हसमाणि रूप किछ हो जाता है। '

हसमानाम् सस्कृत द्वितीयान्त एक वचन म्त्रीलिंग का विशेषण रूप है। इसका प्राफ्ठत रूप हसमाण होता है। इसमें "हममाण्" तक की साधिनका चवरोक्त रीति-अनुसार, ३३१ की शृत्ति से प्राप्त रूप "हसमाण्" में स्त्रीलिंग खर्यक प्रत्यय "ख" की प्राप्ति, तस्तुसार प्राप्त रूप "हसमाणा" में १-३६ से ख्रास्य "खा" के स्थान पर "खा" की प्राप्ति, २-५ से द्वितीया विमित्रित के एकवचन में "म्" प्रत्यय की प्राप्ति खौर १-२३ से प्राप्त "म्" का खनुस्वार होकर "हसमाणे" रूप सिद्ध हो जाता है।

पे छ ' (कियापर) रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ २३ में की गई है।

"माला" रूप की सिद्धि सूत्र-सख्यो ? १८२ में की गई है।

"सही" हव की सिद्धि सूत्र सख्या २-२९ में की गई है।

"यह" रूप की सिद्धि सुत्र -सख्या ३-२९ में की गई है। ३--३६॥

नामन्ज्यात्सी मः ॥ ३-३७॥

यामन्ज्यार्थात्वरे सी सति क्लीके स्तरान्म् सेः (३-२५) इति यो म् उक्तः स न भवति ॥ हे तथ । हे दहि । हे महु । अर्थ — प्रथमा विमक्ति के प्रत्यों की प्राप्ति सबोधन अवस्था में भी हुआ करती है, हतुवत्त प्राकृत—मापा के नतु सक लिंग वाले शर्यों में सबोधन अवस्था में प्रथमा विमक्ति के एक ववन ने प्राप्तव्य प्रत्यय "सि" के स्थान पर सूत्र—सख्या ३-२४ के अञ्चलार (प्राकृत में) प्राप्त होने वान 'प्र' आवेश-प्राप्त प्रत्यय का स्थमाव हा जाता है। स्थान नतु सक लिंग वाले शर्यों में सबाधन क यंपन में प्रथमा में प्राप्तव्य प्रत्यय "म्" का स्थमात्र होता है। जैसे — हे तुण=हे तुण, हे इधि=हे , स्रोर हे मुख्य=हे मह हत्वादि।

हे तृण ! संस्कृत सबोधन एकषचनान्त नपु सक लिंग रूप है। इसका प्राकृत रूप "हेतए होता हैं। इसमें सूत्र-सदया र-१२६ से "ऋ" के 'स्थान पर "ध" की प्राप्ति और र-३७ से १० के समान ही सबोधन से एक बचन में प्राप्तन्य "सि" के स्थान पर आने वाले "म्" प्रत्यय 'का श्रम्म होकर "ट्रिनण" रूप सिद्ध हो जाता है।

हे द्विप ! सस्कृत सबोधन एक जनवान्त नतु मक लिंग का रूप है। इसका प्राकृत रूप 'हे गई। होता है। इसमें सूज सख्या !-१८० से घ्' के स्थान पर 'ह्' की प्राप्ति और ३-३७ से प्रयमा इसमान ही सबोधन के एक वचन में प्राप्तय प्रत्यव 'सि' के स्थान पर खाने वाले 'म्' प्रायय का होकर 'हे दृष्टि' रूप सिद्ध हो जाता है।

हे अधु ! सस्कृत सबोधन एक वचनान्त नतु तक लिंग का रूप है । इसका प्राकृत रूप "हे गड्ड" होता है । इसमें सृत्र सख्या १-१८७ में "ध" के स्थान पर "ह" की प्राप्ति छौर ३-३७ से प्रयमा ६ समान हो सबोधन के एक वचन में प्राप्तब्य प्रत्यय "सि" के स्थान पर छाने वाले "म्" प्रस्यय जन्माव होकर "हे महु " रूप सिद्ध हो जाता है । ३-३०॥

डो दीघों वा ॥ ३--३८॥

आमन्त्रपार्यात्वरं सी सित थतः सेडीं (३-२) इति यो नित्यं डो: प्राप्तो यथ सी (३-२६) इति इदृतीरकारान्तस्य च प्राप्तो दीर्घ म वा मवति ॥ हे देव हे देते हे स्प्रमा-समण हे समा-प्रमणो । हे अन्त्र हे अन्त्रो ॥ दीर्घः । हे हरी हे हरि । हे गुरु । जाह-निमुद्धेण पट्ट । हे प्रमो इत्यर्थः । एव दोषिण पट्ट जिप्र-लोण । प्र हे पहु । एए प्राप्ते विकन्नः ॥ इहत्व प्राप्ते हे गोश्रमा हे गोश्रम । हे क्रामवा हे साम रहे चफ्तल्या । रे रे निर्मिण्या ॥

गर्थ —प्राष्ट्रत मापा के चकारान्त पुल्तिम राखों म संबोधन चवस्या में प्रथम। विमिट ह एक्ष्यचन में सूत्र सरवा ३-२ के चतुमार पाप्तब्य शत्यय "मि" के स्थान पर काते वाले "की प्रत्यय की प्राप्ति कभी होती है, श्रीर कभी कभी नहीं भी होती है। जैसे — हे देव !=हे देव । श्रयवा हे देवे ! . हे ज्ञमा-श्रमण !=हे खमा-सम्सा [।] श्रयवा हे खमा-समसो [।], हे श्रायं [!]=हे श्रवन [।] श्रयवा हे श्रक्तो ।

इसी प्रकार से प्राकृत-भोषा के इकारान्त तथा उकारान्त पुल्लिंग शब्दों में सबीधन व्यवस्था में प्रथमा-विभक्ति के एक वचन मे सूत्र सख्या ३-१६ के श्रतुसार प्राप्तध्य प्रत्यय "सि" के स्थान पर मान्त होने वाले "अन्त्य हस्य स्वर को दीर्घत्व" की प्राप्ति कमी होती ई श्रीर कमी नहीं भी होनी है। जैसे --हे हरे !=हे हरी ! अथवा हे हरि !, हे गुरो !=हे गुरू ! अथवा हे गुरू !, जाति विशुद्धेन हे प्रभो।=जाइ-विसुद्धेण हे पहूं। इसी प्रकार से दूमरा चटाहरण इस प्रकार है — हे द्वौ जित लोक। प्रभो !=हे दोरिए जिय-लोए पह ! अर्थात हे दोनों लोको को जीतने वाले, ईश्वर ! अथवा वैकल्पिक पद्म में 'हे प्रभो ।' का 'हे पह' भी होता है। इस प्रकार से इकारान्त खीर चकारान्त पहिला शब्दों में सबोधन श्रवश्या के एक वचन में श्रम्त्य हरव स्वर को दीर्घत्व का प्राप्ति चैकित्पक रूप से हन्ना करती है। १

श्रकारान्त पुल्लिंग शध्रों में भी सबोधन श्रवस्था के एकवचन में प्रथमा विभक्ति के एक वचन के प्रमुमार प्राप्तब्य प्रत्यय 'खा' के खमाब होने पर अन्त्य 'ख्र' के स्थान पर 'ख्रा' की प्राप्ति वैकल्पिक रूप से हुआ करती है। जैसे -- हे गौतम !=हे गोश्रमा ! श्रथवा हे गोश्रम ! हे करयप ! हे कासवा ! श्रयवा है फासव । इत्यादि । इस प्रकार उपरोक्त विधि विधानानुसार सबोधन-श्रवस्था के एकवचन में प्रकारान्त पहिला शब्दों में तीन रूप हो जाते हैं, जो कि इम प्रकार हें -(१) 'क्रों' प्रत्यय होने पर. (२) वैकल्पिक रूप से 'श्रो' प्रत्यय का श्रमाव होने पर मूल रूप की यथावत स्थिति श्रीर (३) अन्त्य 'श्र' के स्थान पर वैकिल्पिक रूप से बीर्घत्व की प्राप्ति होकर 'श्रा' की उपस्थिति। जैसे — हे देवं । हे देवा । हे देवो । हे स्तमा समस्य । हे खमासमस्य । हे खमासमस्यो । हे गोद्यम । हे गोखमा हे गोश्रमो ! इत्यादि ! विशेष रूप खकारान्त पुल्लिंग शब्हों में भी सबोधन खबस्या के एक वचन में "ओ" प्रत्यव के श्रभाव होने पर श्रन्त्य "श्र" को बैकल्पिक रूप से 'श्रा" की प्रास्ति हुआ करती है। जैसे - रे!रे! निष्फलक! = रें!रे! चप्पलया! अर्थात् अरें! अरें। निष्फल प्रवृत्ति करने वाले । रे ¹ रे ¹ निर्फृणक ! = रे ¹ रे ¹ निम्धिणया ¹ ऋथीत् ऋरे ¹ ऋरे ¹ द्याहीन निष्ठर इन उदाहरणों में सबोधन के एक वचन में श्रन्त्य रूप में "श्रास्व" की प्राप्ति हुई है। पत्तान्तर में "रे । चप्फलया ! छौर रे ! निन्धिणय ! " भी हाते हैं। यों मन्सोधन के एकवचन में होने बाली विशे पताओं की समझ लेनी चाहिये।

हें देव! सरकृत सबीधन एक वचन को रूप है। इसके प्राक्तत रूप है देव! और हे देवी। होते हैं । इनमें सूत्र सरया ३−३⊏ से सम्बोधन के एक वचन में प्रथमा विमक्ति के श्रतुसार प्राप्तरय प्रत्यव 'क्षों' की वैकल्पिक रूप से प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप-है देन और हे देनों सिद्ध हो जाते हैं। हे श्रमा-श्रमण ! संस्कृत सबोघन एक बचन रूप है। इसके पाकृत रूप हे समा ममण और हे हमा समस्यों होवे हें। इनमें सूत्र-सत्या २-३ से 'च' के स्थान पर 'क' की प्राप्ति, २७६ से 'श' में स्थि 'टू' का लोप, १-२६० से लोप हुए 'टू' के परवात रोप रहे हुए 'श' के स्थान पर 'स' की प्राप्ति चीर ३३८ से सबोघन के एक बचन में प्रथमा विमक्ति के श्रमुमार प्राप्तस्य प्रत्यय 'श्रा' की बौकिता रूप से प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप ह स्थमा समण ! और हे स्थमा-समणों सिद्ध हो जाते हैं।

हें आर्य । सम्झत सबीयन एकवचन का रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप हें काज । और हे अहजो । होते हैं। इनमें सूत्र सल्या-१-८४ से दीर्घ स्वर 'छा' छे स्थान पर 'छ' की प्राप्ति, २२४ स संयुक्त व्यञ्जन 'यें' के स्थान पर 'ज' की प्राप्ति; २-८६ से प्राप्त 'ज' को दिख 'उन' की प्राप्ति कैंग ३-२८ से संबोधन के एक वयन में प्रथमा विभक्ति के खनुसार प्राप्तव्य प्रत्यय 'खो' को वैक्षित्रक रूप से प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप हे अवजा। खोंग है अब्जो सिद्ध हो जाते हैं।

हे हरें /सल्कृत सबोधन के एकवचन का रूप है। इसके प्राक्षत रूप हे हरी रे और हे हरि हो हैं। इसमें सूत्र मदया ३-३- से सबोधन कार बचन में प्रथमा विभक्ति के ब्रानुसार मूल संस्कृत रूप 'हरि' में स्थित बन्स्य हरेव स्वर 'इ' को बैकल्पिक रूप सार्ग्य 'ई' की प्राप्ति होकर कम से दोनों रा हो हरी / और हे हरि / सिद्ध हो जाते हैं]

हे गुरू / सत्कृत संबोधन के एक बचन का रूप है। इसके प्राइन रूप हे गुरू ! और हे गुरू ! होते हैं। इसमें सूत्र सत्वया २-१८ से संबोधन के एकबचन में प्रथमा विभक्ति के खनुसार मूल संस्त रूप 'गुरू' में स्थित खन्त्य हस्त्र स्वर 'च' को वैकल्पिक रूप से दोर्च 'ऊ' की प्राप्ति होकर कम से होने रूप है गुरू ' और हे गुरु ! सिद्ध हो जाते हैं।

ज्ञाति-विद्युचेन सर्कत वृतीयान्त एक्यचन का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप 'जाइ-विमुद्धेर' होता है। इसके सून-सल्या १८६७ में 'त्' का लोप, १८६० से रा के स्थान पर 'स्' को प्राप्ति ६ से सृतीया विर्मात के एक्यचन में मस्ट्रनीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'टा' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'ण' धारेर प्राप्ति खौर ३-१४ स आदेश प्राप्त प्रत्यय 'ण' के पूर्वस्य शब्दान्त्य 'ख' के स्थान पर 'ण' की प्राप्ति होकर 'जाइ विसुचेण' रूप सिद्ध का जाता है।

हे प्रभो । सरहत संयोधन व एक वचनं का रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप हे पहूं! हीर हे बहु! होते हैं। इस में सूत्र संक्या :-अह से 'र' का लीव, १ १८अ में 'मू' के स्थान वर 'ह' की फ़्राब्रि कीर ३-३८ स संबोधन के एक वचन में प्रथमा विभावत के श्रतुमार मृत सरहत रूप 'प्रमु' में स्थित कारय हरव स्थर 'ठ' को बैकल्पिक रूप से द'म स्तर 'ठ' की प्राध्ति होकर क्या से दोनों रूप 'हे ब्यू' 'स्त्रीर हे पहुं' सिद्ध हो जाते हैं।

दी संख्त का विरोपण रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप दौरिण होता है। इसमें सूत्र-मेटपा

(है) जित लोक ' सस्कृत विशेषणात्मक सबोधन के एक वचन का रूप है। इसका प्राफ्त ' अपना मागधी) रूप (ह) जि व्य-लोप होता है। इममें सूत्र सख्या १-१९७ से 'तृ' और 'कृ' का लोप 'चूंगिर ४-२६० से सम्राधन के एक वचन में (मागधी-भाषा में) संस्कृतीय प्राप्तव्य मृत्यय 'सि' व्यागे 'रहेंगे पर अन्त्य 'श्र' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति एव ४-४४६ से संस्कृतीय सबोधन स्थिति के समान ही प्राफ्त में में प्राप्त प्रत्यय 'सि' का लोप होकर अधवा १-११ से अन्त्य हतन्त व्यव्जन 'सि स् स् का तृत्वा होतर होता है।

े हे मैतिम ! सस्कृत मबोधन के एकवचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप हे गोश्रमा श्रीर हे गोश्रम होते हैं। इनमें सूत्र सख्या ?-१७० से 'त्' का लोव, १-१५६ से 'खी' के स्थान पर 'खो' की प्राप्ति, क्ष्मीर २-२८ से संबोधन के एकवचन में अन्त्य हृस्य स्वर 'ख' को वैकलियक रूप से दीघे 'खा' की प्राप्ति ;होकर कम म दोनो रूप है गीअमा ' और हे गीअम ! सिद्ध हो जाते हैं।

ह क़रूपण 'सस्कृत सबोधन के एकवचन का रूप है। द्वसके प्राकृत रूप है कासवा ' खौर हे कासव ' होते हें ' इनम सूत्र सख्या १ ४३ से 'क' में रहे हुए 'ख' को दीर्घ 'खा' को प्राप्ति, २~७८ से 'य' ' का लाप, १ २६० से लाप हु०'यू' के प्रचात् रोप रहे 'रा' के स्थान पर 'स्' की प्राप्ति, १- २३१ से 'प' के स्थान पर 'व' की प्राप्ति खौर ३-३८ से सबोधन के एकवचन में ख्रान्स्य हुस्व स्वर 'ब' का वैक्वियक किय से दीर्घ 'खा' की प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप हे कासचा ! खौर है कासच ' सिद्ध हो जाते हैं।

दे र निष्फ्रटक ' सरहत सबोयन के एकवचन का रूप है। इसका (आदेश प्राप्त) देशज इरूप दें ! दें) चप्फलया ! होता है। इसमें सूत्र-सख्या २-१७४ से सम्हत सपूर्ण शब्द 'निष्फ्रल' के स्थान है पर देशन प्राकृत में 'चप्फन' रूप की आदेश प्राप्ति, प्र-१६४ से प्राप्त 'चप्फ्ल' में 'स्व आर्थक' प्रत्यय है 'क' की प्राप्ति, १-१७७ से प्राप्त कृ' का लोग, १-१६० से लोग हुए 'क' के प्रचात् शेष रहे हुए 'क' है स्थान पर 'य' की प्राप्ति और ६-२८ से सबोधन के एकवचन में अन्त्य 'ख' के स्थान पर दीर्घ 'क्या' की प्राप्ति होकर दें ' दें 'चप्फ्र*च्या* ' रूप सिद्ध हो जोता है।

ाः रे 'रे 'निर्मुणका। साकृत के मबोधन का एक यचन रूप है। इसका प्राकृत (देशज) रूप । दे 'रे 'तिनिर्म्याया होता है। इसमें सूत्र मख्या २-७६ से रेफ रूप 'र्' का लोप, १-१०६ से 'श्वर्ट । के स्थान पर 'इ की प्राप्ति, २-६६ से लोप हुए 'र' के पचान् रोप रहे हुए 'घ्' की द्वित्व 'घ्प की । प्राप्ति, २-६० से प्राप्त पूर्व 'प्' के स्थान पर 'ग' की प्राप्ति, १-१७७ से 'क' का लोप, १-९८० से लोप हुए 'क्' के परचान् रोप रहे हुए 'ख' के स्थान पर 'य' की प्राप्ति और १-३८ से सबोधन के एक्ट्रचन में कु अन्त्य 'ख' के स्थान पर दीर्घ 'आ' की प्राप्ति होकर रे ! रे ! निर्म्चणका रूप मिद्ध हो जाना है। ३-३८॥ है श्रमा-श्रमण ! संस्कृत सबोधन एक बचन रूप है। इसके पाकृत रूप हे स्वान्मण श्रीर है कर समणो होवें हैं। इसमें सूत्र-सच्या र-३ से च' के स्थान पर 'ख' की श्राप्ति, ।२०७६ से 'श' में ति। 'र्' का लोप, १-२६० से लोप हुए 'र्' के परचात शेप रहे हुए 'श' के स्थान पर 'स' की श्राप्ति के ३३८ से सबोधन के एक यचन में श्रयमा विभक्ति के श्रनुसार प्राप्तव प्रत्यय 'खो' की देनेन रूप से श्राप्ति होकर कम से दोनों रूप हे लगा समण ! और हे लगा-समणो - शिव्ह हो बाव है।

हें आयें! सस्कृत सचीयन एकवचन का रूप हैं। इसके प्राफ्त रूप है खानी! है खन्जी! होते हैं। इनमें सूत्र-संख्या-१~=४ से दीर्घ स्वर 'खा' के स्थान पर 'ख' की प्राप्ति, १२४ समुक्त व्यक्षन 'यें' के स्थान पर 'ज' की प्राप्ति, १-=६ से प्राप्त 'ज' को दिख 'ज्ज' की प्राप्ति के स्वर्माय की प्राप्ति के स्वर्माय की प्राप्ति के स्वर्माय की प्राप्ति के स्वर्माय प्राप्तव्य 'खों' की " रिस्त से प्राप्ति के प्रमुक्ता स्वर्म से दोनों रूप हे अच्चा । खों है अच्चा सिद्ध हो जाते हैं।

हे हरें । इसके प्राफ्त सबोधन के एक प्रचन का रूप है। इसके प्राफ्त रूप हे हरी । और हे हरि ? हैं । इसमें स्ट्र-सर्या ३-३= से सबोधन के एक प्रचन में प्रथमा विमक्ति के श्रामुगर मूर्ल सहज रूप 'हरि' में स्थित श्रान्य हस्य स्टर 'ह' को बैकल्पिक रूप स दीर्घ 'ई' की प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप हिए । और हे हरि ' सिद्ध हो जाते हैं !

हे गुरू । सन्छत सर्वोधन के एक वधन का रूप है। इसके प्राष्ट्रन रूप हे गुरू । और हे गुरू । होते हैं। इसमें सूत्र सख्या ने नेन में सबीधन के एकवधन में प्रथमा विभक्ति के खामार मूल सी।' रूप 'गुरू' में स्थित अन्त्य हरम स्वर 'त' को चैकल्पिक रूप मे दोर्घ 'क्र' को प्राप्ति हाकर का में रेने रूप हे गुरू । और हे गुरु । सिद्ध हो जाते हैं।

जाति-षिश्येन सरकत एतीयान्त एकवयन का रूप है। इसवा प्राक्ष्त रूप 'जाइ-विद्विदेशें होता है। इसमें सून-सख्या १-१७५ से 'त्' का लाप, १-२६० से श के स्थान पर 'स्' की प्रान्त ३-६ से सुतीया विभक्ति के एकवयन में सरकृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'टा के स्थान पर प्राक्ष्त में 'ल' धार प्राप्ति बीर २-१४ स ब्हादेश प्रान्त प्रस्थय 'ल' के पूर्वस्य शब्दान्त्य 'क्ष' के स्थान पर 'ए' की प्रा¹⁷ होकर ''जाइ वित्तुस्थिण'' रूप सिद्ध हा जाता है।

है प्रभी ' सस्हत संबोधन के एक वचन का रूप है। इसके प्राष्ट्रन रूप हे कू की है पहु। होते हैं। इन में सूत्र मच्या उ-७६ से 'र' का लोप, १-१८७ से 'म्' में स्थान पर 'ह' की, प्राप्त और ३ ३८ से संबोधन के एक बान में प्रथमा विभवित के अनुमार मूल सस्टन रूप 'शर्ड' में लिं अस्त्य द्वस्य स्थर 'उ' को बैंकलिय रूप से द'च स्थर 'ऊ' की प्राप्ति होइन क्रम से नेनां रूप 'हे प्रध्नी हे पहुं। मिख हो नाते हैं।

ही मंश्चित का विशेषण रूप दे। इसका प्राष्ट्रत रूप दीविण दीता है। इसमें सप-नंटवी

ैं (हे) जित लोक ' सस्कृत विशेषणात्मक संयोधन के एक वचन का रूप हैं। इसका प्राकृत खबना मागबी) रूप (ह) जि ख-जोप होना है। इममें सूत्र सख्या १-१७० से 'त्' और 'क्' का लोप 'ब्रीर ४-२६० से सवाधन के एक वचन मे-(मागधी-भाषा में) सस्कृतीय प्राप्तव्य 'प्रस्य 'सि' आगे , इस्ते पर खन्त्य 'ख' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति एवं ४-४४६ से सस्कृतीय संबोधन स्थिति के समान ही , पाकृत में मी प्राप्त प्रस्यप 'सि' का लोप होकर खथवा १-११ से खन्त्य हतन्त व्यव्जन 'सि = स्' का , जाप होकर प्राकृताय (खथवा मागधीय) संबोधन के एक वचन में 'हे जिअ-लोप' रूप सिद्ध होता है।

है गीतम ! सस्कृत सबोधन के एकवचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप हे गोश्रमा श्रीर हे गोश्रम होते हैं। इनमें सूत्र सख्या ?-? अ से 'त्' का लीप, १-१५६ से 'श्री' के स्थान पर 'श्री' की प्राप्ति. श्रीर २-२८ से सबोधन के एकवचन में श्रन्त्य हस्त्र स्वर 'श्र' को बैकल्पिक रूप से दीर्घ 'श्रा' की प्राप्ति होकर क्रम से दोनों रूप हे गीअमा ! श्रीर हे गीअम ! सिद्ध हो जाते हैं।

हि क्रुयम ' सस्कृत सबोघन के एकवचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप हे कासवा ' और हे कासव ' होते हें ' इतम सूत्र सख्या-र ४३ से 'क' में रहे हुए 'ब्र' को दीर्घ 'ब्या' को मासि, २-ंब्द्र से 'य' 'कः लाप, १२६० से लाप हु०'य्' के परचात् रोप रहे 'श' के स्थान पर 'स्' की प्राप्ति, १- २३१ से 'प' के स्थान पर 'व' की प्राप्ति और ३-३८ में सबोघन के एकवचन में ख्रन्त्य हस्व स्वर 'ब्र' का वैकल्पिक केरूप से दीघ 'ख्या' की प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप हे कासवा ' और है कासवा ' सिद्ध हो जाते हैं।

रेरे निष्कलक ! सस्कृत सबोधन के एकवचन का रूप है। इसका (खादेश प्राप्त) देशज इस्प रें ! रें! वर्फलया ! होता है। इसमें सून-सख्या २-१७४ से सम्कृत सपूर्ण शब्द 'निष्फल' के स्थान पर देशज प्राकृत में 'वष्फन रूप की खादेश प्राप्ति, ४--१६४ से प्राप्त 'वष्फ्ल' में 'स्व खर्थक' प्रस्वय वृ'क' की प्राप्ति, १-१७७ से प्राप्त क्' का लोप, १--१८० से लोप हुए 'क्र' के परवात् रोप रहे हुए 'ख्र' के स्थान पर 'य' की प्राप्ति और १-३८ से सबोधन के एकवचन में खन्त्य 'ख्र' के स्थान पर दीर्घ 'ख्रा' की प्राप्ति होकर रे 'रे 'चप्फलया ' रूप सिद्ध हो जोता है।

रे ! रे ' निर्मुणक ! साकृत के सबोधन का एक बचन रूप है । इसका प्राकृत (देशज्ञ) रूप से पेरे पित्राची के पित्राची के पित्राची के पित्राची के पित्राची के से पेरे रेफ रूप 'र्' का लोग, १-१२८ से 'र्फ्र' के परचात शेष रहे हुए 'घ्' को हित्य 'प्र्य की क्षेत्र 'प्रय की क्षेत्र प्रयान पर 'ह' को अगि, १-१८० से लोग हुए 'र्' के प्रयान पर 'श' की प्राप्ति, १-१८० से लोग हुए 'र्फ्र' के प्रयान पर 'ग' की प्राप्ति, १-१८० से लोग हुए 'र्फ्र' के रूपान पर 'ग' की प्राप्ति और १-३८ से सबीधन के एकवचन में कुण के प्रयान पर दीर्घ हुए 'र्फ्र' के रूपान पर दीर्घ हुए 'र्फ्र' के रूपान पर दीर्घ हुए 'र्फ्र' के रूपान पर दीर्घ की प्राप्ति होकर रे 1 रे 1 निर्मुणका रूप सिद्ध हो जाता है । ३-३८॥

च्यतोद्वा ॥ ३-३६ ॥

घटकारान्तम्यामन्त्रणे सी परे श्रकारोन्तादेशो वा भवति ॥ हे पितः । हे पित्रः हे दातः । हे दाय । पत्ने । हे पिश्ररं । हे दायार ॥

अर्थ प्यकारान्त राष्ट्रीं के (प्राक्टत-रूपान्टर में) मबोधन के एक वयन मणास्व्य प्रत्य 'सि' का विधानानुमार लोप होकर शब्दान्य 'स्वर महित व्यक्षन' के स्थान पर वैकल्पिक रूप म 'ऋ' खादेरा की प्राप्ति होती हैं। जैसे हे पित≔ हे पिश्च श्रीर वैकल्पिक पत्त में हे विधार। दूसरा बदाहरण इम प्रकार हैं-हे दात.≕हे दाय! श्रीर' बैंकल्पिक पत्त में हे दायार गहोता है।

हे पिन 1 संस्कृत संबोधन के एकवचन का रूप है। इसके प्राप्टत रूप हे पिछा । की हैं पिछार होते हैं। इसमें से प्रथम रूप मंसून-सन्या ३ ३६ से 'स्वर महित क्यञ्जन त' के स्थान ९ 'छा की प्राप्ति और १-११ से अन्यय हलन्त व्यञ्जन रूप पित्तमं का लोग हा कर "है पिका"। रूप कि हो जाता है। द्वितीय रूप में सून मख्या ३-८० से स्वर महित व्यञ्जन त' के स्थान पर 'छा आहेशा की प्राप्ति और १-९१ से अन्यय हलन्त रूप विभाग का लोग हो कर द्वितीय रूप 'है पिकां सिद्ध हो जाता है।

े हे जात ''संस्कृत मयोधन के एक यजन का रूप है। इनके प्राप्तन रूप हे दाय। है हे ज्ञासर! होते हैं। इनमें से प्रयम रूप में सूत्र-सत्या रे ३६ में 'स्वर' सिहत व्यक्षत त के प्राप्त प्रां की प्राप्ति और १-१२ से अन्त्य १ व्यक्षत रूप विमर्ग का लोग होकर प्रयम रूप 'हे ज़ाय' 'सिछ मो जाता है। डितीय रूप में मूर्व संख्या-१-१७० में मूल संस्कृत शान 'दाल' निर्धा 'त' का लाग, रे-८४ से संबंधन के एक बनान हें होते 'स्प्र' के स्थान पर 'आरं आरंग का प्राप्ति, और १-१० से प्राप्त 'सार' में स्थित 'का कर प्राप्त 'प्रा' की स्थात स्थार' में स्थित 'का कर होतीय रूप 'हा स्थार' में सिख हो जाता है। ३-३६॥

नाम्न्यरं वा ॥ ३-४० ॥

े श्रादन्तस्यामन्त्रयो भी परे नाम्नि मंत्राया विषये यर इति अन्तादेशो या मनित हे पितः । हे पिश्चरं । पत्रे । हे पिश्च ॥ नाम्नीति किम् । हे कर्ताः । हे कत्तार ॥

अर्थ परकारान्त शन्ती के (प्राष्ट्रवेन्स्मान्तर में ' भयोषन के गवधपत में प्राप्तव्य प्रस्पव 'वि का विभानानुमार कींव रोकर खन्त्य 'ग्रर' क स्थान पर वैव्हित्य रूप में 'श्रर' आदेश की प्राप्ति होती है वरन्तु इनमें एक शर्त यह है कि वेसे स्टबारान्त सम्द रूद महा रूप होते पाहिये, गुणवापक स्वस्तां •••••••••••••• त्र्यावाचक ऋकारान्त सज्ञा वाले शब्दों के सबोधन के एक वचन में इल सूत्रा-सुसार प्राप्तव्य 'श्रार' श्रादेश की प्राप्ति तहीं होती । इस प्रकार की विशेषता सूत्र में डिल्किबित 'नान्नि' पद के श्राधार से समक्तनी चाहिये । जैसे हे पित =हे पित्रग्र) वैक्रिविक पत्त होने से 'हे पिश्व' भी होता है ।

प्रकृत'—रुद्ध सझा वाले ऋकारान्त शब्दी के सबीवन के एक वचन में ही 'श्रर' आदेश की प्राप्ति होती है, ऐमा क्यों कहा गुवा है ?

उत्तर —जी रुढ सहा वाले नहीं होकर गुण वाचक अथवा किया वार्षक अधकारान्त सहा रूप शब्द हैं, उनमें सबोधन के एकवचन में अर' आदेश प्राप्ति नहीं होंती हैं, ऐमी विशेषता बतलाने लिये ही 'नाम्नि' पर का उल्लेख किया जोकर सबोधन के एकवचन में 'बर' आदेश प्राप्ति का विचान रुढ़-सज्ञा वाले शब्दों के लिये ही निश्चित कर दिया गया है। जैसे कि किया वाचक सब्रा के सबीधन के एकवचन का उदाहरण इस प्रकार हैं/—है कर्त =हे क्चार। 'है विश्वर' के ममोन 'हे कब्रर' रूप नहीं भृता है यों रुढ वाचक संज्ञा में 'मबोधन एकवचन की विशेषता' समक लेनी चाहिये।

"हे पिअर" रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ३-३६ में की गई है।

"हे पिअ" रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या *३-३*९ में की गई है।

' हे फर्त' ' सस्कृत सर्वोधन के एक बचन का रूप है। इमका प्राकृत रूप हे क्तार ! होता है। इसमें सूत्र-संख्या-र-८६ से रेफ रूप 'र' का लोप, २-८६ से लोप हुए 'र्' के परचात रोप रहे हुए 'त्' को हित्व 'त्त' को प्राप्ति, ३-४५ से मूल सम्कृत राष्ट्र 'क्ट्' म स्थित ख्रत्य 'त्र्र' के स्थान पर प्राकृत में 'ख्रार' ख्रादेश-ध्राप्ति ख्रीर १-१२से सस्कृतीय सबेधन के एकवचन म प्राप्त ख्रन्त्य ह्लन्त ख्य-जन रूप विसर्ग को लोप होकर 'हे क्तार '' रूप मिद्ध हो लाता है। ३ ४०॥

वाप ए ॥ ३-४१ ॥

श्रामन्त्रयो सौ परे माप एरव वा भनित ॥ हे माले । हे महिले । श्रविता । पित्र । पत्रे । हे माला । हत्यादि ॥ श्राप इति किम् । हे पिउच्छा । हे माउच्छा ॥ बहुलाधिकारात् ववनिदोत्त्वमपि । श्रममो मणामि भणिए ।

अर्थ'—'धाप' प्रत्यय वाले खाकारान्त म्होलिंग शब्दों के प्राष्ट्रत-रूपान्तर में सबोधन के पक्षपन म सस्कृतीय प्राप्तव्य पत्यय 'सि' के स्थान पर वैकल्पिक रूर से 'प' की धादेश प्राप्ति होती है। जैसे —हे माले व्हे माले, हे महिलें = हे महिले, हे आर्थिके व्यायकें प्राप्ति है। व्यापकें प्राप्ति होता हे सार्थिके च हे पिकार पद्धान्तर में कम से ये रूप होगे च्हे माला, हे महिला, हे धानिया और

हे पश्चित्रा । इत्यादि ।

प्रश्नें.—'आप्' प्रत्यय वाले आकारान्त स्त्रीलिंग शर्व्हों हे ही सबोधन के एकवान में के की प्राप्ति होती है, ऐसा उल्लेख क्यों किया गया है ?

उत्तर — जो स्त्रीलिंग राज्ञ 'श्राप्' प्रत्यय से रिश्त हाते हुए मी खाकारान्त हैं, वनमें सवी ति क एकवचन म ख्रन्य रूप से 'ए' की प्राप्ति नहीं होती है, इतिलये 'श्राप्त' प्रत्यान्त खाकारान्त रंगीलिंग राष्ट्रीं के सम्बन्ध में 'मबोधन क एकवचन में' उपरावत विधान सुनिर्धित करना पृष्ठा है से — हे पितृ स्वस । = ह पितृ स्त्रा । है, न कि 'ह पितृ स्त्रा । = हे मातृ स्त्रा । होता है, न कि 'ह पितृ स्त्रा । होता है, न कि 'ह मातृ स्वस । = हे मातृ स्त्रा । होता है, न कि 'ह पितृ स्त्रा ।

'बहुल' सूत्र के श्रधिकार से किसी किसी श्राकारान्त प्रामृत रत्नीलंग राष्ट्र के संबोधन क एकवचन में श्रन्त्य 'श्रा' के स्थान पर 'श्रा' की प्राप्ति होती हुई भी पाई जाती है। खैसे —हे क्रस्म भिण्तान मण्यामि ≔हे श्रम्मो ! मण्यामि मण्याण ! श्र्यांत हे माता ! में पढ़े हुए को पढ़ता हूँ। यहां प्र सरकृत श्राकारान्त स्त्रीलिंग शस्य 'श्रम्मा' के शकृत रूप 'श्रम्मा' के संबोधन के एकवचन में श्रम्य 'ख' क स्थान पर 'खो' की प्राप्ति हो गई ई, यों श्रम्य किसी किमी श्रोकारान्त स्त्रीलिंग याले शक्ष्र सबस्य में भी सम्मक लेना पाहिये।

हे मार्छ ! सस्कृत सबोधन क एक उचन का रूप है। इसका प्राक्ठत रूप भी है मार्ल ! हो होता है। इसमें सूत्र सन्या २ ४१ से मूल प्राक्ठत शब्द 'माला' के संबोधन के एक बचन में खन्त्य 'खा' के खान पर ए' की प्राप्ति खोर १-११ से संस्कृतीय प्राप्तच्य प्रस्तय 'स' का प्राक्टत में भी संस्कृत के समान है। लोप हाद र हि मार्छ ' रूप सिद्ध हो जाता है।

हे महिले ! मस्तूत मंबीधन के एक्ष्यचन का रूप है। इसका प्राफ्त रूप भी है महिने कि हाता है। इसमें भी सूत्र मन्या २-४१ से चौर १११ से उपरोक्त 'त' माले' के मनान हो साधितम की प्रास्ति होकर हे महिले ' रूप मिछ हा जाता है।

हे आगयके! मंखूत मबोघा एक बान रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप हे काहर होता है! इसमें सूत्र मंदवा १-दर से 'झा' के स्वान पर 'झ' का प्राप्ति, २२४ में संयुष्टत प्रयुक्त 'ब के स्वान पर 'झ' का प्राप्ति, २२४ में संयुष्टत प्रयुक्त 'ब के स्वान पर 'ज' की प्राप्ति, २१७० में 'क् 'का शोच बौर ११ से सुल सहत्त शब्द 'खार्यिका' में स्वित सन्त्य 'का' के स्थान पर सबोपन के एक्सपन में संस्कृत के ममान है। 'ए' की प्राप्ति होकर है अजियर रूप सिद्ध ही जाता है।

र्ट्र आर्पेसे ! संस्कृत संबोधन के एक्वचन का रूप है। इसका प्राष्ट्रत कर हूं करित्रण होता है। इसमें सूत्र सक्या १ नक्ष से 'का' के स्थान पर 'का' को भाषि, २ २४ से संतुष्ट क्**बान** 'ब' क स्थान पर 'ज' को प्राप्ति, २ न्ह से प्राप्त 'ज' को द्वित्य 'का' को प्राप्ति, २-१०० से प्राप्त 'क' स सामस क्यें 'हैं' ***************** को प्राप्ति, १-१७७ में 'कृ' का लीप श्रीर ३४' से मृल सस्क्रन शब्द 'श्रार्थिका में स्थित श्रान्य 'श्रा' के स्थान पर सदीधन के एकदवन में सस्कृत के ममान ही 'ए' की प्राप्ति होकर 'हे अजिए' रूप सिद्ध हो जाता है।

हे प्राधिक ' सस्कृत सबोधन के एकपचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप हे पिडनए ! होता है इससे सूत्र सख्या-२-७६ से प्रथम 'र्' का लोप, १-५४ से 'खा' के स्थान पर 'ख' की प्राप्ति, रं-२४ से सयुक्त व्यञ्जन 'यू ' के स्थान पर 'ब ' की प्राप्ति, २-६ से प्राप्त 'ख' को दित्व 'डज ' की प्राप्ति, १-१,७७ से 'क्' का लोप खीर ३-४१ से मूल सस्कृत राब्द 'प्रार्थिका' में स्थित ख्रान्त्य 'खा' के स्थान पर सबोधन के 'एकवचन में सस्कृत के समान ही 'ए' की प्राप्ति होकर 'हि पिक्तप्र" रूप सिद्ध ही जाता है।

हे माले ' सस्कृत सबोधन के एकवजन का रूप है । इमका प्राकृत रूप हे माला [†] होतां है । इपमें सूत्र सख्या २--८१ से सबोधन के एकवजन में मूल शब्द 'माला' के ऋन्त्य 'खा' को 'यदा स्थिति रूप बतु' खर्यात उच्चों की त्यों स्थिति' की प्राप्ति होकर हे *माला रू*प सिद्ध हैं। जाता है ।

हे विनुत्स्वस । संकृत समोधन एकवधन रूप है। इसका शकृत रूप हे पिउन्छा ! होता है। इसमें सून सक्या २-७० से 'त्' का लोप, ?-१११ से 'त्रः' के स्थान पर 'उ' की प्राप्ति, २-१४१. से 'ख्रसू-के स्थान पर 'छा' खादेश-प्राप्ति, २ न्ध से प्राप्त 'छा को द्वित्व 'छ छ' की प्राप्ति, २ ६० से प्राप्त पूर्व 'छ' के स्थान पर 'च' का प्राप्ति, और ६४१ से समोधन के एकवचन में खन्त्व 'ख्रा' को स्थिति चर्यों की त्यों कायम रह कर हे विउच्छा रूप सिद्ध हो जाता है।

हे मातृ-स्वतः । संग्नृत सबोधन के एक्ववन का रूप है। इसका प्राक्त रूप हे मानच्या होता है। इसकी साधनिका उपराक्त 'है पिउच्छा'-में प्रयुक्त सूर्वों के श्रतुपार हो होकर ''हे माउच्छा'' रूप सिद्ध हा जाता है।

ष्टे अस्य 'सम्क्रन सबीवन के एकवचन का रूप है। इसका माकृत रूप हे ध्वन्तो 'होता हैं। इसमें सूत्र-सन्या २ ०६ से 'प्' का लोप, २-६६ से लोप हुए 'ब्' के परचात रोप रहे हुए 'म' को दित्व 'स्म' की प्राप्ति और ३ ४४ की चृति से सबीधन के एकवचन में प्राप्त प्राफ्तन रूप 'ध्वम्मा' के ध्वन्त्य 'ध्या' के स्थान पर 'श्वा' का प्राप्ति होकर 'हे अस्यो ' 'रूप सिद्ध हो जाता है।

भणामि संस्कृत मकर्मक कियापर का रूप है। इसका प्राकृत रूप भी भणामि होता है। इसमें स्व-सख्या ४-२३६ से हलन्त घातु 'भण्' में विकरण प्रत्यय 'श्र' की प्राप्ति, ३१४४ से प्राप्त विकरण प्रत्यय 'श्र' के स्थान पर 'श्रा' की प्राप्ति और १-१४१ में वर्तमान काल के एतीय पुरुष के एकवचन में 'भि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर 'भणामि' रूप सिद्ध हो जाता है।

भणितान् सस्तृत कुन्तात्मक विशेषण द्वितीयान्त बहुवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप भणिए होता है। इसमें सूत्र मख्या ४ २३६ से, हल्ल घातु मण्' में विकरण प्रत्यय 'ख्र' की श्राप्ति,

हे पहिनद्या । इस्यादि ।

प्रकृत.—'आप्' प्रत्यय वाले आकारान्त स्त्रीलग शब्दों दे ही सबीर्धन के एकउचन में ए की प्राप्ति होती है. ऐसा बल्लेस क्यों किया गया है ?

उत्तर —जो स्त्रीलिंग शब्द 'श्राप्' प्रत्यय से रिहत होते हुए भी श्राकारान्त हैं, वनमें सबीस के एकवधन म श्रान्य रूप से 'ए' की प्राप्त नहीं होती हैं, इसिलये 'श्राप' प्रत्यवान्त श्राहाशन्त स्त्रीलिंग शब्दों के सम्बन्ध में 'सबीधन क एकवधन में 'वराक्त 'विधान सुनिश्चित करना पहाहै। जैसे —हे पितृ स्वस !=ह पिउच्छा ! होता है, न कि 'ह पिउच्छे' हे मातृ स्वस !=हे माउ जा होता है, न कि 'ह पिउच्छे' हे मातृ स्वस !=हे माउ जा होता है, न कि 'ह पिउच्छे' हे सातृ स्वस !=हे माउ जा होता है, न कि 'ह पिउच्छे' हे सातृ स्वस !=हे सातृ जा होता है, न कि 'ह पिउच्छे' हे सातृ स्वस !

'यहुल' सूत्र के अधिकार से किसी किसी आकारान्त प्राकृत स्त्रीलिंग शब्द के सबीपन के एकवचन में अन्त्य 'आ' के स्थान पर 'ओ' की प्राप्त होती हुई भी पाई जाती है। जैसे '—हे अन भिण्यान मणामि =हे अन्मा ! भणामि भणिए ! अर्थात है माता ! मैं पढे हुए को पढता हूँ। वहां प्र सस्कृत आवारान्त स्त्रीलिंग शब्द अस्या' के शक्त रूप 'अस्मा' के सबोधन के एकवचन में अन्त्य 'यां के स्थान पर 'ओ' की प्राप्ति हो गई है, यों अन्य किसी किमी आकारान्त स्त्रीलिंग वाले शक्ष सबन्य में भी समक लेना चाहिये।

हे माले ! सस्कृत सर्वोधन के एक उपन का रूप है। इसका प्राकृत केप भी हे माले ! हो हो हो है। इसमें सूल सर्व्या २ ४१ से मूल प्राकृत शब्द 'माला' के सबोधन के एक वचन में अन्त्य 'खा' के खान पर 'ए' की प्राप्ति और १-११ से संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रस्थ (स' का प्राकृत में भी सस्कृत के समात है लोग हो कर 'है माले !' रूप सिद्ध हो जाता है।

हे महिले 'संस्कृत संबोधन के एकवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप भी हे महिले ! ! हाता है। इसमें भी सूत्र मरया ३-४१ से और १-११ से उपरोक्त 'हे माले' के समान हो साधितम की प्रास्ति होकर हे महिले ' रूप सिद्ध हा जाता है।

हे आगयके 'सरहत सबोधन एक बचन रूप है। इसका प्राक्षत रूप हे श्रविज्ञा 'होता है' इसमें सून-सख्या १-८४ से 'का' के स्थान पर 'ख्र' की प्राप्ति, २२४ से सयुक्त ब्याइन 'यं' के स्थान पर 'ज', की प्राप्ति, ११७० से 'क्र' का लोप श्रीर ३४१ से मूल सहत रास्ट 'खार्यिका' में रियत अन्त्य 'का' के स्थान पर सबोधन के एक बचन में सक्ता के समान ही 'ए' की प्राप्ति ही कर है अज्ञिए रूप सिद्ध हो जाता है।

है आर्यके । सस्कृत सबोधन के एकवचन का रूप है। इसका प्राष्ट्रत-रूप हे खिन्तप । होता है। इसमें सूत्र सख्या १ प्रथ से 'खा' के स्वान पर 'ख' को शांति, २-२४ से सबुस्त व्याजन 'धे' के स्वान पर 'ज' की प्राप्ति, २-मध् से प्राप्त 'ज' को द्वित्व 'कत' को प्राप्ति, २-१०७ से प्राप्त 'ज' में कागम रूप हैं ंसूत्र सख्या १∼१८७ से 'घ' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति, ३४२ से सबी ≀न के ण्कत्रचन में मृल शन्द े'वधू≕बहु' में स्थित व्यन्त्य दीर्घस्वर 'ऊ के स्थान पर इन्द्रस्वर 'उ' की प्राप्ति व्यौर १-९१° से प्रियमा विमक्ति के समान ही (सबोधन के एक्वचन में) प्राप्त प्रत्यय सिं' के स्थानीय रूप 'स्'का लोप होकर शबोधनात्मक एकवचन में प्राकृतीय रुप 'हे चहु' मिद्ध हो जाता है।

हे खलए! सस्त्रत सबोधन के एकवचन का अव है। इनका प्राकृत रूप भी हे खलपु ही होता है । इसमें सूत्र सख्या ३ ४२ से सबांधन के एकवचन मं मून शब्द 'खलपू' में स्थित अन्त्य दीपे स्वर 'ऊ' के स्थान पर हृश्य स्वर 'उ' का प्राप्ति श्रोर १-११ से प्रथमा विभक्ति के समान ही सबीयन के एक वचन में प्राप्त प्रत्यय 'सि' के स्थानीय रूप 'स' का लोप होकर 'हे खलपु' रूप सिद्ध ही जीता है ३ ४२॥ े

विवपः ॥ ३-४३ ॥

ः विवयन्तस्येद्दन्तस्य हस्वो भवति ॥ गामणिया । खलपुणा । गामणियो । खलपुणो ॥

ं अर्थ-जामली=गामणी श्रर्थात गाँव का मुखिया और खलपू श्रर्थात् दुष्ट पुरुषों को प्रवित्र करने चाला इत्यादि शब्दों में ली' और 'पू' खादि विशेष प्रत्यय लगाये जाकर ऐसे शब्दों का निर्माण क्रिया जाता है, इससे इनमें विशेष वर्षता प्राप्त हो जातो है और देती श्थित में ये क्विबन्त प्रत्यय वाले " शब्द कहलाते हें । ऐसे क्विबन्त प्रत्यय वालों शब्दों में जो दीप ईकारान्त वाल श्रीर दीर्घे ऊकारान्त वाही राष्ट्र हैं, उनमें विमिक्त बोधक प्रत्ययों की सयोजना करने वाले अन्त्य दीर्घ स्वर 'ई' अथवा' 'ऊ' का ृहस्य स्वर 'इ. अथवा 'उ' हो जाता है क्योंर तत्यश्चात् विमक्ति योधक प्रत्यय सयोजित किये जाते हैं ु जैमे -प्रामएयो = गामिएएा, धर्यात् द्राम-मुक्षियो द्वारा, खलप्वाः=खलपुणा श्रर्यात दुर्प्टो को (श्रयवा े खिलहान को) साफ करने वाले से, पामस्य = (प्रथमा-द्वितीया बहु वचनान्त)=गामणिणो ऋर्यात् गाँव मुखिया (पुरुषगण) ऋथवा गाव मुखियाओं को और खलप्व = (प्रथमा-द्वितीया बहुवचनान्त) = बलपुणो अथत् दुष्ट-पुरुपों (या खलिहानों) को साफ करने वाले अथवा साफ करने वालों को । इन उदाहरणों से प्रतीत होता है कि विभक्ति बोधक प्रत्यय पान्त होने पर क्विवन्त राज्यों के अन्तर) दीर्घस्वर हस्व हो जाया करते हैं।

'गामाणिणा' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ?- २४ में की गई है।

'खलपुणा' रूप की सिद्धि सूत्र सरया है-हिंध में की गई है।

यामण्य सस्कृत प्रयमा-द्वितीया के बहु बचनान्त रूप है। इसका प्राकृत रूप गामणिणी होता है। इसमें सूत्र सख्या २-७६ से 'र्' का लोव, ३ ४३ से मूल शब्द: 'गामणी' में स्थित श्रन्त्य दीर्घ स्वर 'ई' के स्थान पर हस्व स्वर 'इ' की प्राप्ति और ह २२ से प्रथमा-द्वितीया के बहु वचन में संस्कृतीय ३-१५२ से प्राप्त विकरण प्रत्यय 'श्र' को 'इ' की प्राप्ति, र १७७ से सस्कृतीय कुद्न्तात्मक प्राप्त प्रत 'तु' का लोप, ३-४ से द्वितीया जिमक्ति के बहुबचन में श्राप्त संस्कृतीय प्रत्यय 'शस्' के स्थानाय म 'न' को शकत में लोप धौर ३-१४ स प्राप्त रूप 'भणिधा' में स्थित खन्त्य सन्कृताय छन्तात्मक प्रन 'त' में से शेष 'अ' के स्थानीय रूप 'आ' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति होकर 'भाणिए' रूप सिदः साता है। -३-४१।

इदूतोईस्वः ॥ ३-४२ ॥

श्रामन्त्रणे - सौ परे ईद्दन्तयोईस्वो भवति ॥ हे नइ । हे गामणि । हे समिर हे बहु। हे खलप्र ॥

अर्थ —दीर्घ ईकारान्त और दीर्घ ऊकारान्त प्राफ़त स्त्रीलिंग शब्दों में संबोधन के एकवनन 'सि' प्रत्यय परे रहने पर विधानानुमार प्राप्त प्रत्यय सि का लोप होकर अन्त्य दीर्घ स्वर के स्यान ए सजावीये हुस्व स्वर की प्राप्ति होती है। जैसे —हे निद् ! = हे नद्द, हे प्रामणि=हे गामणि, हे अगि =हैं समणि; हे वेंघु=हे वहु और हे खलपु=हे खलपु । इत्यादि ॥ हे निद ॥ संस्कृत संबोधन प्रवर् रूप है। इसका प्राकृत रूप हे 'नह होता है। इसमें सूत्र सख्या १-१७७ से 'द्' का लाप' छोर ३४३ रं . संबोधन के एकवचन में अन्त्य दीर्घ स्वर 'ई'' के स्यान पर हस्व स्वर 'इ' की प्राप्ति एवं १ ११ वें प्रथमा विभक्तिपत् सबीधन के एकवचन में प्रांग्त प्रत्यय 'सि' के स्थानीय रूप 'स' का लोग होर सबोधनात्मक एकवचन में प्राष्ठतीय रूप हे नइ ! सिद्ध हो जाता है । ,

ें हैं ग्रामणि ! संस्कृत संबोधन के एकवचन का रूप हैं । इसका प्राकृत रूप हे गामणि ! होता है इसमें सूत्र सख्या २ ७६ से 'र' का लाप, ३-४२ से संबोधन के एकवचन में मूल शब्द शामणी=गा^{वह} में स्थित-र्थन्त्य दीर्घस्वर 'ई' के स्थान पर हस्व स्वर 'इ' की प्राप्ति और १११ से प्रथमा विमित्ति ^{है} समान ही संबोधन के एकवचन में प्राप्त पत्यय 'सि' घे स्थानीय रूप 'स' का लीप होकर संबोधनाली एकवचन में प्राकृतीय रूप है गामणि ! सिद्ध हो जाता है ।

हे श्रमाण ' सस्कृत सर्वापन के एकवचन का रूप है। इनका शकृत रूप हे समिण ! होता इसमें सूत्र-सख्या २-३६ से 'र्' का लोप, १-२६० से लोप हुए 'र्' के परचात् रोप गर्दे हुए 'रा' व स्थान पर 'म की प्राप्ति, ३ ४२ से सबीधन के एकवचन में मूल राध्य 'श्रमणि=समणा' में स्थित करू दीर्घ त्वर 'ई' के स्थान पर इस्व 'इ' की प्राप्ति श्रीर १-११ से प्रयमा विभक्ति के समान ही संगेषन वे ण्कवचन में ाप्त प्रत्यय 'सि' के स्थानीय रूप 'स्' का लीप होकर है समाणि । रूप सिद्ध र जाता है।

है एपु ' मस्तृत संबोधन के एक्यंचन का रूप है । इसका प्राष्ट्रंत रूप है बहु होता है ^{| इसं}

सित्र सख्या १∼१८७ से 'घ' के स्थान पर 'ह' को प्राप्ति, ३-४२ से शबो यन के एकवचन में मूल शन्द ⁹वय=वह' में श्थित क्यत्त्य दीर्घस्वर'ऊ के स्थान पर इस्वस्वर 'उ' की प्राप्ति स्त्रौर १-९१ से प्रथमा विमक्ति के समान ही (सबोधन के एकवचन में) प्राप्त प्रत्यय सि' के स्थानीय रूप 'स् का 'जोप होकर सबोधनात्मक एकवचन में प्राकृतीय रूप 'हे पहु' मिद्ध हो जाता है।

है खलपु ! सरकृत सबीधन के एकवचन का ऋप है। इमका प्राकृत रूप भी है खलपु ही होता है। इसमें सूत्र सख्या ३४२ से सबोधन के एकवचन मं मून शब्द 'खलपू में स्थित व्यन्त्य दीघे स्वर 'क के स्थान पर हृश्व स्वर 'व' का प्राप्ति श्रीर १-११ से प्रथमा विभक्ति के समान हो सबी उन . के एक वचन में प्राप्त प्रत्यय 'सि' के स्थानीय रूप 'स' का लोप होकर 'हे खलपु' रूप सिद्ध हो जाता है વ છરાાં '

क्विपः ॥ ३-४३ ॥

विवयन्तस्येद्दन्तस्य हस्वो भवति ॥ गामिष्णणा । खलपुणा । गामिष्णणो ।, खलपुणो ॥

अर्थ'-प्रामणी=गामणी अर्थात गाँव का मुखिया और खलपू अर्थात् दुष्ट पुरुषों को पवित्र करने ोचाला इत्यादि शब्दों में जी' श्रीर 'पू' श्रादि विशेष प्रत्यय लगाये जाकर ऐसे शब्दों का निर्माण किया ।जाता है, इससे इनमें विशेष अर्थता प्राप्त हो जातो है और ऐसी स्थिति में ये क्विवन्त प्रत्यय वाले राब्द कहलाते हैं। ऐसे क्वियन्त प्रायय वालों शब्दों में जो दीप ईकारान्त वाल श्रीर दीर्घ केकारान्त वाले शब्द हैं, उनमें विमक्ति बोधक प्रत्ययों की सयोजना करने वाले श्रन्त्य दीर्घ स्वर 'ई' श्रथवा 'ऊ' का , इस्त्र स्वर 'इ' व्यथवा 'उ' हो जाता है ऋोर तत्परचातृ विमक्ति योधक प्रत्यय सर्योजित किये जाते है जैमे -प्रामण्या=गामणि**णा, अर्थात् प्राम-मुखिया द्वारा, खलप्या**=बलपुणा अर्थात् दुर्प्टी को (अथवा ै खिलहान की) साफ करने वाले से, प्रामय्य = (प्रथमा-द्वितीया बहु वचनान्त)≕गामणिणो स्रर्थात् गाँव मुखिया (पुरुपगण) अथवा गाव मुखियाओं को और खलाव = (प्रथमा-द्वितीया बहुवचनान्तु) = बलपुणो व्यथत दुष्ट पुरुषों (या खिलहानों) की साफ करने वाले व्यथवा साफ करने वालों को । इन छदाहरणों से प्रतीत होता है कि विभक्ति बोधक प्रत्यय पाप्त होते पर क्विवन्त राव्हों के अन्तर ∤दीर्घस्वर इस्त हो जाया करते हैं।

'गामाणिणा' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ?- P४ में की गई है।

'खलपणा' रूप की सिद्धि सूत्र सरया है—हंश में की गई है।

यामण्य सस्कृत प्रयमा-द्वितीया के यह बचनान्त रूप है। इसका प्राकृत रूप गामणिणी होता है। इसमें सूत्र सख्या २-७६ से 'र्' का लोप, ३ ४२ से मूल शब्द 'गामणी' में स्थित श्रन्त्य दीर्घ स्वर 'ई' के स्थान पर हस्व स्वर 'इ' की प्राप्ति और ३ २२ से प्रथमा द्वितीया के बहु वचन में मस्कृतीय 'जस'-शस्' के स्थान पर प्राकृत में 'णो' प्रत्यय को म्राति हांकर गामणिणी रूप सिद्ध हो जाता है।

. खल्प्य. सस्कृत अथमा-द्वितीया के बहुवचनान्त रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप खलपुणी होता (इसमें सूत्र-सख्या ३-४३ से मूल शरू 'खलपू में स्थित श्रान्य दीर्घ स्वर क' के स्थान पर , रा 'उ' की प्राप्ति श्रोर ३-२२ से प्रथमा-द्वितीया के बहुवचन में मस्कृतीय प्रथय जम-शत के र प्राष्ट्रत में जी' प्रत्यय की शाप्ति है कर 'रालपुजी' रूप सिद्ध हो जाता है। ३ ४३ ॥

चरतामुदस्यमीसु वा ॥ ३-४४ ॥,

सि अम् श्री वर्जिते अर्थात् स्यादौ परे घ्रदन्तानाग्रदन्तादेशो वा मवति ॥ जम्। सर मनुषो । यन्त । भन्यो । पन्न । भन्यो । भन्याराहि ।। भन्याराहि

अर्थे —संकृत ऋकारान्त राग्नें के प्राकृत रूपा तर में प्रथमा पिमिक्त के परमान के ने निस्ति द्वियम के प्रथम प्री' खीर द्विताया विभक्ति के परम्यम के प्रत्यय ध्वम्' के सिवाय धन्य में विभक्ति के एक्यम के प्रत्यय धन्य भा कि सिवाय धन्य में विभक्ति के एक्यम के प्रत्ययों की संवोधना होने पर राष्ट्र के धन्य ध्वमं के हेवान पर वैकिन्पक रूप से व' की प्रोप्ति होती है और स्वर्यमान इकारान्त का साम है है 'तथां कि त्व हारान्त=उकारान्त 'रान्तें मिन्यिक वोधक प्रत्ययों की मयानना हुआ बर्गा है से —प्रथमा विभक्ति के बहुरणन में 'जम् प्रत्यय की प्राप्ति होने पर-'मर्फ के रूप धर्मा 'के स्वार्य में से 'मसारा' हो से स्वान्तर सन्त, 'मन्त्र्यों, मन्तवधीर मन्त्रओ' होते हैं। एस वैकिन्यक पन्न होने से 'मसारा' हो मी होता है । दिनीया दिमिन्ति सहस्रपन के शस्य पत्र प्रत्यय के उत्तर पन्त्र न-मन्त्र मस्त्री होता है । एनीया विभक्ति के प्रव्यवन के 'रा' प्रथय का उद्यार प्रमान्त्र मान्त्र मान्या मन्त्र मान्या मन्त्र के प्रत्य पन्ति मान्या स्वार्य के प्रत्यव 'मिन्य' के प्रव्यवन के प्रत्यव 'मिन्य' के प्रवार पन्ति मान्या स्वर्य के प्रत्यव पिन्य मान्या स्वर्य के प्रत्यव पिन्य के प्रत्यव पिन्य के प्रत्यव पन्ति के प्रव्यव के प्रत्यव पन्ति के प्रत्यव पन्ति के प्रत्यव पन्ति के प्रव्यव के प्रत्यव पन्ति के प्रत्यव पन्ति के प्रत्यव पन्ति के प्रव्यव के प्रत्यव पन्ति के प्रत्यव के प्रत्यव पन्ति के प्रत्यव पन्ति के प्रत्यव के प्रत्यव पन्ति विभिन्य के प्रत्यव पन्ति के प्रत्यव पन्ति के प्रत्यव के प्रत्यव पन्ति के प्रत्यव के प्रत्यव पन्ति विभिन्य स्वर्य के प्रत्यव पन्ति विभिन्य स्वर्य के प्रत्यव विभिन्य के प्रत्यव विभिन्य स्वर्य विभिन्य स्वर्य विभिन्य के प्रत्यव विभिन्य स्वर्य विभिन्य स्वर्य के प्रत्यव विभिन्य विभिन्य स्वर्य के प्रत्यव विभिन्य विभिन्य स्वर्य विभिन्य स्वर्य विभिन्य के प्रत्यव विभिन्य विभिन्य के प्रत्यव विभिन्य के प्रत्यव विभिन्य विभिन्य के प्रत्यव विभिन्य विभिन्य के प्रत्यव विभिन्य विभिन्य के प्रत्य विभिन्य के प्रत्य विभिन्य विभिन्य के प्रत्य विभिन्य के प्रत्य विभिन्य विभिन्य के प्रत्य विभिन्य विभिन्य विभिन्य के प्रत्य विभिन्य विभिन्य विभिन्य विभिन्य विभिन्य विभिन्य विभिन्य

occord coctorradors a no esperimone rocarios e e or successor

ण्कत्रयन के उदाहरण --भन्ने --भन्नो, मन्तुरम तथा वैकल्पिक पत्त में मत्तारस्य रूप होता है। पुप' सप्तमा तिभक्ति के बहुवचन का उदाहरण -मर्क्षु=भन्नु छोर वैकल्पिक पत्त म भन्नारेषु
।ता है।

स्कारान्त शब्द वो प्रकार के होते हैं, सहा रूप और विशेषण रूप, तद्वुसार इम सूत्र की िस में 'स्टरन्तानाम् ऐमा बहुवचनात्मक उल्लेख करने का तात्वर्थ यही है कि सज्ञारूप और 'श्रम' स्वयों को छाड कर शेष सभी प्रत्ययों का योग होने पर वैकल्पिक रूप से 'उ' की प्राप्ति हो जातो है। से प्रथमा बहुवचन क प्रत्ययं 'जम् के उदाहरण -पिट्ट म तत्व-पिनरः=पिउणी, जामातृ + श्रीस समात्व न अत्ययं 'जम् के उदाहरण -पिट्ट म तत्व-पिनरः=पिउणी, जामातृ + श्रीस मात्व न जायां होने पर वैकल्पिक रूप से 'उ' की प्राप्ति हो जातो है। से प्रथमा बहुवचन क प्रत्ययं 'जम् के उदाहरण -पिट्ट म तत्व-पिनरः=पिउणी, जामातृ + श्रीस मात्व न जामाउणी और भ्रातृ + इस-भ्रातु न भाउणी इत्यादि । इम प्रकार से द्वितीया विभिन्त के दुवचन में 'श्राप' प्रत्ययं, पक्षी विभिन्ति के एक वचन में 'इसि' प्रत्ययं श्री विभिन्ति के एक वचन में 'श्रीप' प्रत्ययं और समी जिमिन्ति के बहुजचन में 'श्रीप' प्रत्ययं प्राप्ति होती है। तृतीया विभिन्ति के अत्यव स्थ 'ऋ' स्वर के स्थान पर वैकल्पिक रूप से 'उ' की प्राप्ति होती है। तृतीया विभिन्ति विभिन्ति के स्ववचन में 'टा' प्रत्ययं का उदाहरण -पितृ में टान्दि और सप्ताना विभन्ति के बहुजचन में 'सुप्' प्रत्ययं वा उदाहरण -पितृ भिन्द कि स्थान पर 'च' की प्राप्ति का विधान समक्त लेना गिरिय । वैकलिस्क पत्त होने से सूज-सम्बा ३-४० से अत्यव 'ऋ' के स्थान पर 'खर' की प्राप्ति का विधान समक्त लेना गिरिय । वैकलिस्क पत्त होने से सूज-सम्बा ३-४० से अत्यव 'ऋ' के स्थान पर 'खर' की प्राप्ति होता है। की स्थान पर इसर से स्थान पर 'इसर' के स्थान पर 'इसर' की स्थान स्था होने से सूज-सम्बा ३-४० से अत्यव 'ऋ' के स्थान पर 'खर' की प्राप्ति होता है। विश्व - विद्या = विकार, इस्योदि ।

प्रकृत —'सि' 'श्री' खोर ख्रम' प्रत्ययों को प्राप्ति होने पर ऋ धारान्त राज्यों में 'ऋ' के यान पर 'उ' की पाप्ति क्यों नहीं होती हैं ?

उत्तर — सि' प्रत्यय की प्राप्ति होने पर 'पिए+सि=पिता का प्राक्तत रूपान्तर 'पिछा' होता है, 'अम्' प्रत्यय की प्राप्ति होने पर 'पितृ + श्रम् = पितरम्' का प्राक्त रूपान्तर पिछार होता है, तथा प्रथमा निभक्ति और दिलीय विभक्ति के दिवचन में 'खी' प्रत्यय की प्राप्ति होने पर 'पितृ + खी = पितरी' का प्राकृत रूपान्तर 'पिछारा' होता है, अवएव 'सि' 'अम्' और 'खी' प्रत्यणे की इस विधान के अन्तर्गत नहीं राना जा सकता है।

भत्तर-सम्झत रूप है। इमके प्राकृत रूप मत्त, भत्तुणो, भत्तव, मत्तवश्री श्रीर मत्तारा होते हैं इतमें से प्रथम रूप में सूत्र-सल्या २-७६ से मूल मस्झत शब्द, भत्' में स्थित 'र.' वा लोप, २-६ से लोप हुए 'र्' क परचात् रोप रहें हुए 'त को द्विश्व 'त्त' को प्राप्ति, २-४८ से श्रन्त्य 'द्य' स्वर के स्थान पर 'व' स्वर की प्राप्ति श्रीर ३-४ में तथा है-२० की वृति में प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में 'तम्' प्रत्यय का लोप एव ३-१२ से प्राप्त तथा लुप (जन्त प्रत्यय के कारण) श्रन्त्य

हितीय रूप-(भर्तार =)भन्तणो में 'भन्तु' छंग की शाप्ति प्रथम रूपपत छोर ३२२ स स्र. विमक्ति के बहुवचन में सस्कृत प्रत्यय 'जस्' के स्थान पर प्राकृत में वैकल्पिक रूप से 'णा' प्रवार प्राप्ति होकर हितीय रूप 'भन्तुणी' सिद्ध हो जाता है।

तृतीय स्व-(भतार =) भत्त में 'मत् 'खग की प्राप्ति प्रथम स्ववत्, तत्वरवात स् सख्या ३ २० मे प्रथमा विमक्ति क बहुत्रवन में सस्कृत प्रत्यय 'जस्' के स्यान पर प्राकृत रूप ' 'डच' प्रत्यय की वैकल्विक स्वय से शिति, प्राप्त प्रत्यय 'डउ' में 'ड्' इरनक्षक होते में 'मत्,' धंग ' स्थित खन्त्य स्तर 'उ' की इत्सज्ञा हो जाते से इस 'उ' का लोग, एव प्राप्त खग 'मत् 'में 'डउ=र' प्रत्यय की मयोचना होकर तृतीय रूप 'भन्त उ' मी मिद्ध हो जाता है।

चतुथ रूप (मर्तार =) मत्तक्षो में 'मत्तु' खग की प्राप्ति प्रथम रूपपत् और शेप सार्धा हतीय रूप के समान हो सूप्र-सल्या ३-२० से होकर एव 'ढक्षो = खब्रो' प्रत्यय की प्राप्ति हैं। चतुर्थ रूप-भक्तको भी सिद्ध हो जाता है ।

पचम रुप—(भर्तार≔) मत्तारा में सृत्र सख्या २ ७६ से मूल सख्दत रूप 'मह⁰' में स्पि^{त्}' का लोप, २ ८६ से लोप हुए 'र' के परचान रोप रहे हुए 'त्' को द्वित्त 'त्त' की श्राप्ति, ३ ४३ में इन 'त्रा' के स्थान पर 'खार' खानेश की प्राप्ति, ३ ४ से पथमा विभक्ति के बहुवचन में संस्त्रीय इन्ते 'त्रास् का प्राप्तुत में लोप पोर ३ १२ से प्राप्त एव लुस्त 'अस्' प्रस्थय के कारण मे खास्य हात्तरा 'छा' को दीर्घ स्वर 'था' की प्राप्ति होकर पचम रूप भक्तारा सिद्ध हो जाता है।

भट्टेन् मस्कृत द्वितीयान्त बहुवचन का रूप है। इनके प्राफ्त रूप भन्न् भन्न् णो खोर स्टा हाते हैं। इनमें में गयम क्य से सूत्र सन्या र अध् में 'र' का लोव, २-८६ से, लोव हुए 'र के प्रर' रहे हुए 'त्' को द्वित्य 'त्रू' की प्राप्ति, ३ ४४ से सूल सम्कृत शब्द 'भन्नु' में स्थित खन्य 'ग्रू' के स्व पर 'च' 'व्याद्श को प्राप्ति, ३ ४ म द्वितीया विभक्ति के बहुवचन स सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्य ग्रम ६ प्राप्त में लोप और ३-१० से प्राप्त एव एव लुप्त प्रत्यय शस् के कारण से खन्त्य क्या 'इ' ही त्रीय स्वर 'फ' की प्राप्ति होबर प्रथम रूप अन्तु सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप- भर्त्न=) भत्त्जों में 'भन्त,' रूप का गंधी प्राध्ति प्रथम रूपवत् स्त्रीर १२६ हैं द्वितीया विभक्ति के महुत्रचन में संकृतीय प्राप्तव्य प्रत्य 'शास' क स्वान पर प्राकृत में बैकल्डिक से 'जो' प्रस्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप भक्तुणी सिद्ध हो जाता है।

हतीय सप (अहँन्=) भत्तारे में मूत्र मख्या २-७६ से 'र'का लोग, २ व्ह से लोग हुप र्' र पर्चात रहे हुए 'त' को द्वित्य 'त्त्र' को प्रास्ति, ३-४४ से अन्त्य 'त्रा' क स्थात पर 'आर' को प्रास्ति ३ ४ से द्वितीया विमन्ति के बहुवपन में सश्हतीय प्रास्तुक्य प्रत्यव 'त्रास्' का शहर में लाग और है।

भर्जा संकृत तृतीयान्त एक वचन का रूप है। इमके प्राकृत रूप भन्तुणा और भन्नारेण होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र संस्था २ ७६ से 'र' का लोप, २ न्६ से लोप हुए 'र' के परचात रहे हुए 'त्' का क्षित्र 'ता ' की प्राप्ति, ३-४४ से छन्त्य ऋ' के स्थान पर 'उ' की प्राप्ति और ३ न्४ से तृतीया विभक्ति के एक वचन में संस्कृतीय प्रत्यय 'टा=था' के स्थान पर प्राकृत में 'णा' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर प्रथम रूप भन्तुणा सिद्ध हो जाता है।

हितीय रू.। (भर्जी=,मसारेण में सूत्र सस्यार ७६ से 'र' को लीप, २-६६ से लीप हुए १र' के परचात रहें हुए 'त' को द्विस्व 'स्' की प्राप्ति, ३४५ से अन्त्य 'ऋ' के स्थान पर 'आर' आदेश की प्राप्ति, ३- से स्ताया विभक्ति के एकवचन में नास्कृतीय 'टा=आ' प्रत्यय के स्थान पर प्राकृत में 'ण' प्रत्यय की प्राप्ति और ३१४ से प्राप्त प्रत्यय 'ण के पूर्वस्थ 'मस्तार' अग के अन्त्य 'आ' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप भस्तारेण सिद्ध हो जाता है।

भर्तुभि सस्कृत एतीयान्त बहुवचन का रूप हैं। इसके प्राष्ट्रत रूप मन्त्र हिं श्रीर मनारेहिं होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में 'भर्तु'=भन्तु' खग की साधिनका हमी सूत्र में उत्तर छुनवत्, तत्वश्चात् सूत्र सख्या ३ ७ से एतीया विभक्ति के बहुवचन में सम्ब्रतीय प्रत्यत्र भिष्ठ् के स्थान पा प्राकृत में 'हिं' प्रत्यय की माति 'त्रीर ३-१६ से प्राप्त मत्यय' (हिं' के पूर्व स्थ 'भन्तु,' खग में स्थित खात्य द्वारा रनर 'ख' को दीघ स्वर 'ड' की प्राप्ति होकर प्रथम रूप भन्तु हिं सिद्ध हो जाता है।

हिनीय रूप (मर्र्ट भि =) भत्तारेहि में 'मर्र्ट = मत्तार श्राग की सापनिका इसी सूत्र में अपर कृतवत्, तरवरचात् सूत्र सख्यो ३-७ से तृतीया विमक्ति के बहुउचन म सस्कुताय प्रत्यय मिस' के स्थान पर प्राप्टत में 'हि' प्रत्यय की पाप्ति और ३ १४ से प्राप्त प्रत्यय हिं' क पूर्व स्थ 'भत्तार' श्राग में स्थित श्रान्त्य स्वर 'श्रा' के स्थान पर ए की प्राप्ति हो इर हितीय रूप भत्तारोही सिद्ध हो जाता है।

अर्तुं सस्कृत प्रचम्यन्त एकवचन रूप है। इमके प्राकृत रूप मत्ता, मत्त्र्या, मत्त्र्य, मत्त्र्व, भत् हि, भन्न हिन्तो, तथा भन्नाराओं मत्ताराड, मनाराडि, मनाराडिन्तो और मन्तारा होने हैं। इनमें से प्रथम रूप में 'भन्ता,' ध्या की साधनिका इसी सूत्र में ऊपर कृत्रात्, तत्वरचात् सूत्र मंत्या ३२३ से पचमो विभक्ति के एकवचन में साकृतीय 'ड सि' प्रत्यय के स्थान पर प्राकृत में बैठिन्द ह रूप से ग्रों भत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप भन्नाणों सिद्ध हो जाता है।

हिनोय-तिव चतुर्थ छोर पाम रूपों में श्रयांत् भत्तुश्रो, मत्तूर, मतूहि छोर मत्तू हिन्तों में 'मत्' श्रम की प्राप्ति इसी सूत्र में फृत साधिनका के श्रमुसार, तल्दरवात् सूत्र सहया ३-१२ में मृल प्राप्त ध्रम 'भत्तु में स्थित चन्त्य द्वाय स्वर 'व' के स्थान पर बीचे स्वर 'क' को प्राप्ति और ३-० मे तथा ३-२३ की

छट्टे से दशवे रुपों में अर्थात (भन्नुं=)मताराजी, मताराठ, मताराहि मताराहिनो श्री मतारा में सूत्र सम्बा २-३६ से 'र्' का लाप, र ८६ म लाप हुत 'र् के परचात रहे हुए 'सं का किया मतारा में सूत्र सम्बा २-३६ से 'र्' का लाप, र ८६ म लाप हुत 'र् के परचात रहे हुए 'सं का किया 'श्रा' की मारित, रे ४४ से मूल शब्द 'भर्ट' में स्थित अन्त्य रतर 'श्रा' के स्थान पर 'श्रा' की मारित और १० से पचमी विभक्ति के एकवचन में सर्हतीय प्रत्यय 'ह सि' के स्थान पर प्राकृत में अम से 'खो ड हिस्सि' श्रीर लुक्' प्रत्ययों भी पारित होकर कम से भत्ताराओं भत्ताराठ, भत्ताराहि, भत्ताराहिनों, हा भन्तारा रूप सिद्ध हो जाते हैं।

भर्जु संस्कृत पण्डयन्त एकवचन का रूव है। इसके प्राकृत रूव मनुणा, मनु-म श्रीर मनास्त होते हैं। इसमें से प्रथम रूप में सूत्र संख्या २ ५६ से 'र' का लोव, - द्र से 'त' को द्वित्व 'त की प्रारि २-४४ से मूल शब्दान्य व्यत्त्व 'व्ह' क स्थान पर 'उ' श्रादेश की प्रास्ति श्रीर १-२३ से प्राप्तांग 'मह' ने पण्डी विमक्ति के एकवचन संस्कृतीय प्रास्तत्न्य शत्यय 'द्र स' के स्थान पर प्राकृत म नैकह्विक रूप ह 'णो' प्रत्यय की प्रास्ति होकर प्रथम रूप भन्तुणों सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप (मर्जु :=)मसस्स में 'भस्' श्रम की साधनिका उपर के समान, श्रीर ३ १० स प्^{राह} रीति से प्राप्तांग 'मस्' में पढी विभक्ति के एकवचन म सस्ट्रतीय मत्यय 'क स क स्थान पर ^{प्राहुत है} संयुक्त 'स्म' प्रत्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप भूतस्स सिद्ध है। जाता हैं।

गृतीय कप-(मतुं =) भत्तारस्त में सूत्र सटया २-७६ से 'र्' का लाप, २-६६ (तं की डिंग 'स' की प्राप्ति, ६ ४४ से मूल शब्दस्य खत्य 'ख्र्य' के स्थान पर 'खार' खादेश की प्राप्ति खीर ६-१७ में आप्तांग 'भत्तार' म पष्ठी विमक्ति के एकवचन में सरकृतीय प्रत्यय 'द्या' के स्थान पर प्राप्तत में मंतुर्ति 'स्म' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर तृतीय रूप भक्तारम्स निद्ध हा जाता है।

अर्थुपु सार्व सप्तम्यान बहुवयन का रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप समृद्ध और अचारेस हैं है। इसके में अयम रूप में 'सम् 'अग का मार्थानहा ऊपर के सभान, रे-१६ स प्राप्तांग 'समु' में सिन्द अन्य इस्त स्वर 'च' के स्थान पूर दीर्घ स्वर 'च को प्राप्त श्रीर ४-४४-६ से सप्तामी विभवित हैं। धहुवयन में सार्श्ताय प्राप्त प्राप्त प्राप्त की प्राप्तन में भी प्राप्ति, ०२ १-११ में प्राप्त व्यय 'पुप' में सियत अन्य इसन स्वरूप स्वरूप 'पुप' में सियत अन्य इसन स्वरूप स्व

द्वितीय रूप (मर्गुपु-) मत्तारेंसु में 'भतार' ध्या नी सापनिका उत्पर के मगान, ३-१५ में प्राप्तांग 'मत्तार में स्थित धन्त्य स्वर 'ख' क स्थान पर 'ण' की शास्त्रि, चीर शेष सापनिका की मार्थित

ि पितर सस्कृत प्रथमान्त बहुवचा का रूप है। इसके प्राकृत रूप विवर्णो और विश्वसा होते हैं। इसमें से प्रथम रूप में मूल-सस्कृत राव्द 'पित्र' में स्थित 'त' को सूत्र मरया १-१७७ से लीव, ३४४ से -सोप हुए 'त' के परचात् रोप रहे हुए स्वर 'त्रह' के स्थान पर 'व' खादेश की प्राप्ति, खीर ३०० से (प्रथमा विभक्ति के बहुत्त्वन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रस्य 'जस् के स्थान पर प्राकृत में बैकल्पिक रूप से (प्रथम) परयम की प्राप्ति हो कर प्रथम रूप पिउणो सिद्ध हो जाता है।

ं द्विनीय रूप-(पितरः≔) विश्वरा में सूत्र सख्या १-१७० से मूल सस्क्र शब्द 'पिन्ट' में स्थित 'त्' का लोप, ३४७ से लोप हुद 'त्' के परवात रोप रहे हुए स्वर 'ऋ' के स्थान पर 'ऋर' खादेश की ⁷माप्ति, ३-१२ से 'जस्' परवय की प्राप्ति रही हुई होने से प्राप्तींग 'पिश्वर' में स्थित अन्त्य हस्व स्वर 'ख' के स्थान पर दीर्घ स्वर 'खा की प्राप्ति खौर ३४ स प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में सस्क्रनीय प्रत्यय , 'जस्' का प्राकृत में लोप होकर द्वितीय रूप पिश्वरा सिद्ध हो जाता है।

ं जामातु' सस्कृत पञ्चम्यन्त एक वचन को रूप है। इसका प्राकृत रूप जामाडणो होना है। 'इसमें मूल सस्कृत शब्द 'जामातु' में स्थित 'त' का सूत्र सख्या १-१७७ से लोप, २ ४४ से लोप हुए 'तू' ! के परवात् रोप ग्हें हुए 'क्ष्ट' के स्थान पर 'त' आदेश की प्राप्ति और ३ २३ से पचमी यिमस्ति के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'क्षि' के स्थान पर प्राकृत में (वैकल्पिक रूप से) 'णो' प्रत्यय की , की प्राप्ति होकर जामात्रणो रूप सिद्ध हो जाता है।

शातु सस्कृत पष्ठन्यत एक बचन का रूप है। इनका प्राकृत रूप भावणी होता है। इनम मृत शाद भातु में सूत्र-सख्या २-७६ से 'र्' का लोव, १-१०० से 'त्' का लोव, २४४ से लोव हुए 'त' क परचात रोप रहे हुए 'श्वर के स्थान पर 'व' खादेश की प्राप्ति श्रीर ३-२३ से पष्ठी विभक्ति के एक्वचन , में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'द स' के स्थान पर प्राकृत में 'खो' उत्यय की प्राप्ति होकर भावणा , रूप सिद्ध हो जाता है।

पिना सस्कृत एतीयान्त एकवचन का रूप है। इसका प्राक्त रूप वित्रणा होता है। सून शर्म विद्यमें सूत्र सख्या १ ९७७ से 'त' का लोप, उठ्ठ४ से लोप हुए 'त्' के परचात् रेप रहे हुए ऋ' क स्थान पर 'ड' पी प्राप्ति और ३ २४ से तृनीया विभक्ति क एकवचन में सस्कृतीय प्रत्यत्र 'टा' क स्थान पर प्राकृत में णा' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर पिडणा रूप भिद्ध हो जाता है।

पितृभि सस्कृत सुनीयानत बहुब उन रूप है। इसका प्राकृत रूप विविद्धिता है। इसम ित्र' अस की प्राप्ति उपरोक्त विधि अनुसार, दे-१६ से प्राप्ताम विड' में स्थित हस्त स्वर 'त्र' के स्थान वर हैं पर सबर 'ऊ' प्रोप्ति और ३ ॰ से सुतीया यिभक्ति के बहुबचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रस्तय मिम' के स्थान । पर प्राकृत में हिं प्रस्थय की प्राप्ति होकर पिक्टिह रूप सिद्ध हो जाता है। िन्तुपु सम्झत सप्तम्यन्त बहुत्रयन कुत है। इमका प्रांकृत कर पिऊसु होता है। इसने ॥ श्रंम की प्राप्ति ववरोक्त विधि-श्रमुनार, ३ रे६ से प्राप्तांम् 'विष्ठ' में स्थित हस्व स्वर 'ड' है स्वार दार्घ स्वर ऊ' की प्राप्ति, ४ ४४३ से सप्तभी विभक्ति के बहुत्वयन में संस्कृतीय प्रत्यय 'सुप्=सुं है की प्राष्ट्रत में भी 'सु' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर विक्रमु क्य सिद्ध हो जाता है।

पिता संस्कृत प्रथमान्त एकवचन का रूप है। इसका प्रांकृत रूप पिश्रा होता है।
मूल राष्ट्र 'पिए' में स्थित 'तृ' का सूत्र सखार र-१७० से लोव, ३४८ से लोव हुए 'तृ' ह
रोप रहे हुए 'त्रद् के स्थान पर 'श्रा' की प्राप्ति और १११ से प्रथमा विमक्ति के प्रकृतवन ने प्राप्तव्य प्रत्यय 'सि=स् का भाकृत में लोव ही कर पिश्रा रूप सिद्ध हो जाता है।

ितरंम संस्कृत द्वितीयान्त एक्ष्वचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप पिश्वर होता है। मूल शब्द 'पिन्द' में श्वित त का सूत्र सम्यो १ ९७० से लोव, ३-४७ से लोव दुए 'त' के परवात फें दुए स्वर प्रद' के स्थान पर 'खर' खादेश की प्राप्ति, ३-४ से द्वितीया विभक्ति के एक्ष्वचन में 'प्' की प्राप्ति और १-२२ प्राप्त प्रत्यय में 'म्' का खतुस्वार होकर प्रिश्वर रूप सिद्ध हो जानी है।

ेशितरी सस्कृत प्रयमान्त-दिर्तायान्त द्विचयन का रूप है। इसका प्राकृत रूप पिष्ठरा होता है इसमें 'विष्ठर' ख्रम की आप्ति चपरोक्त साधिन गासिर, २-१३० से द्विययन के स्थान पर बहुववर्ग श्राप्ति, २-१२ में आप्तीग 'विष्ठर' में खित खन्त्व हुस्त स्वर 'ख' के स्थान पर 'खा' श्रीरित श्रीर श्री प्रयमा द्वितीया विभवित के बहुवयन में संस्कृतीय प्रत्यय 'जस्' शस्' का प्राकृत में लीप होकर रूप सिद्ध हो जाता है। ।। २-४४॥—

श्रारःस्यादी ॥ ३-४४॥

स्यारी परे ऋत आर इत्यादेशो मनति॥ मचारी। मचारा। मचारी। मचारी। मचारा। मचारी। मचारी। मचारीहि॥ एवं टस्यादिपूदाहार्यम्॥ लुप्तस्याद्यवेद्यया। मचार-विहिर्धः॥

सर्थ — परवाशन्त शब्दों से जीर श्राकाशन्त विशेषणात्मक शब्दों में विभक्ति बोषक 'वि'क्ट्रों क्षादि प्रत्यवों की स्थानना होने पर इन शब्दों के जन्म्यस्थ 'क्ट्रो' खर के स्थान पर 'बार' बारेंगे के प्राप्त होती है तत्परचात इनकी विभानत बोषक रूपायकी ज्यकाशन्त शब्द क ममान संवाहित हों है। जीसे — मती मत्तारों, =मतीरः=मतारा, अतीरम्=मतारे सर्व न=मतारे, सर्वा=मतारेज, मर्विट्य सत्तारेजिं, इनी प्रवार से पंपमी खादि शेष सभी विभक्तियों में स्वयमेव रूप निवारित बर हेट पारिये, ऐसा जाटेश होते में दिया हुआ है। समाम-मत ब्राकाशन्त शब्द में भी यदि वर वावस के प्रारम्य मे रहा हुआ हो 'बर्ट' के स्थान पर 'बारेर' चारेरा की प्राप्ति हा बाती है पर्य

गत होने से विभवित बोधक प्रत्ययों का लोप होने पर भी ऋ' के स्थान पर 'खार' आदेश प्राप्ति का श्रमाव नहीं हाता है। जैस - भए विहितम = भत्तार-विहिंश ।

भर्ता साकृत प्रथमान्त एकवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप भत्तारी होता है। इसमें मूल शब्द 'मर्तु' में स्थित 'र' का सूत्र सख्या २ ७६ स जोष, २-६६ से 'तू' की दित्व 'तू' की प्राप्ति, ३ ४५ म श्रन्त्य 'ऋ' के म्थान पर 'श्रार' श्रादेश की प्राप्ति और ३-२ से श्रथमा विमर्वित के एक्वचर्न में श्रकारान्त पुल्लिंग में संस्कृतीय प्रत्यय भि'क स्थान पर प्राकृत में 'ढो = श्रो' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर भनारों रूप सिद्ध हो जाता है।

भर्तार सस्कृत प्रथमान्त बहुवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप भत्तारा होता है। इपम 'भत्तार श्रंग का प्राप्ति उपरोक्त रीति अनुषान, तत्परचातु सूत्र सख्या ३-१२ से प्राप्ताम 'भत्तार' में । स्थत 'प्रनत्य द्वस्व स्वर 'श्र' के स्थान पर दीर्घ स्वर 'प्रा' की प्राप्ति श्रीर ३४ से प्रथमा 'विमिक्ति स धहुवचन में सत्कृतीय प्रत्यय 'जस' का प्राकृत में लोप होकर भत्तारा रूप सिद्ध हो जाता है।

भर्तारम् सस्तुत द्विनीयान्त एकवचन का रूप है। इन्का प्रोकृत रूप मत्तारं होता है। इसमें 'भत्तार' श्रम की प्राप्ति उपरोक्त रीति श्रतुमार, तत्परचात् सूत्र संत्या रे-५ से द्विवीया-विभक्षित के एकवचन में 'म' प्रत्यय की प्राप्ति और १ २३ से 'म्' का अनुस्वार होकर भन्तार रूप सिद्ध हो जाता है।

भर्तृन् संस्कृत द्वितीयान्त बहुवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप भत्तारे होता है। इससे 'मत्तार' श्रम की प्राप्ति उपरोक्त रीति श्रतुसार, तत्परचात सूत्र-सख्या ३-१४ से प्राप्तांग 'मतार' में श्यित श्रात्य स्तर 'झ' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति और ३ हे हितीया विमक्ति के घडवचन में मस्कृतीय प्रत्यय 'शस' का प्राकृत में नीप होकर मत्तारे रूप सिद्ध हो जाता है।

भर्मा संस्कृत वृतीयान्त एकवचन का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप मत्तारेण होता है। इसम 'भत्तार' था की गान्ति उपरोक्त विवि अनुमार, तत्परचात सूत्र-संख्या ३ १४ से प्राप्तांग 'भत्तार' में रियत चन्त्य स्वर 'च' के स्थान पर 'प' की प्राप्ति और ३-६ से स्तीया विभक्ति के एकदचन में मध्कृतीय प्रत्यय टा'='श्रा' के स्थान पर प्राकृत में 'ण प्रत्यय की प्राप्ति ही कर भक्तारेण रूप सिद्ध हो जाता है।

भर्तृभि सस्छत एतीयान्त बहुवचन का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप भत्तारेहि होता है। इसमें 'भत्तार' जंग की प्राप्ति उपरोक्त विधि अनुमार, तत्वरचात मूत्र सरत्या ३-१४ मे प्राप्तांग 'मत्तार' में स्यित खन्त्य स्तर 'क्ष' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति खीर ३ ७ से पूर्तायी विमक्ति के बहुवचन मं सस्काय भत्तव 'भित्तु' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'हिं' प्रत्यव की प्राप्ति होकर भनारोहें रूप मिद्ध है। जाता है।

भर्त विहितम् संस्कृत विशेषण रूप है। इसका प्राकृत रूप मत्तार विहिन्न होता है। इसमें सूत्र संख्या २ ७६ से 'र्' का लोप, २-८६ से 'त्' को द्वित्व 'स् की प्राप्ति, ३ ४४ में 'ग्र्' के स्थान प्र 'श्रार' छादेश की प्राप्ति १-१७७ से द्वितीय 'त' का लोप, ३ २४ से प्रथमा विभक्ति क एकवचन प्र चकारान्त नपु सक लिंग में संस्कृतीय प्रत्यय 'नि' के स्थान पर प्राकृत में म' प्रत्यय की पादित और १२३ से 'मृ' के स्थान पर अनुस्थार की प्राप्ति होकर भत्तारिविटिशं रूप सिद्ध हो जाता है। 11 282 11

श्रा श्ररा मातः ॥ ३--४६ ॥

मातृ संवन्त्रिन घटतः स्यादौ परे या यसा इत्यादेशी मनतः ॥ मात्रा ॥ मात्रा ॥ मात्रा माश्राक्षो । माश्रराउ । माश्रराक्षो । मार्श्र । माश्रर इत्यादि । बाहुलकाज्जनन्यर्थस्य या देवतार्थस्य तु खरा इत्यादेशः । मात्राए कुच्छीए । नर्म माध्यराख ॥ मातुरिद्वा [१-१३५] इनीच्रे माईख इति भवति ॥ ऋतामुद [३-४४] इत्यादिना उन्ते तु माउए समन्ति=र्श चन्दे इति । स्यादानित्येव । माइ देवो । माइ गणे ।

शर्य - 'माष्ट्र' शटन में स्थित 'श्रा' क स्थान पर श्रामे विमक्तिनीयक 'मि', 'श्रम्' स्मारि प्रत्यवों के रहते पर 'आ' और 'अरा' ऐसे दो आदेशों का प्राप्ति यथाकम से होता है। वैमें माता=मात्रा थयवा माळरा। मातर≔माचाउ और मात्राधो खथवा माछराउ खथवा माध्रराधो? मातारें ! मातरम्=मार्झ अथवा माश्रर अर्थात माता की । 'मातृ शस्त्र दो अर्थी में मुख्यत, व्यवहत होत है -(१) जननी श्रथ में और (२) देवता के स्त्रालिंग हव देंगी श्रथ में, तश्तुसार जहां 'माए' शहा की थर्थ 'जननी होगा वहा पर प्राकृत-स्पा तर में श्रन्त्य ऋ' के त्यान पर 'खा' चारेश की प्रांध्त ही की यव जहाँ 'मार्ट' शब्द का वर्ष देवीं' होगा; यहां पर प्राक्तन रूपान्तर में ख्रान्त्य 'यह हो स्थान पर 'मार्ट धादेश की प्राप्त होगी। जैस -मातु कुछ =मात्राण कुच्छा श्वर्थातु माता के पेट मे। माँ मातुध्य≔नमो माश्रराण श्रयांत देशी रूप माताश्रों छे लिये नगरकार हो। प्रथम उदाहरण म "मातृ असनी" कर्य होने से बन्त्य "मू के स्थान पर बा' प्राईश किया गया है। जब कि द्वितीय वराहरण में 'माह-देशी' अर्थ होते से अन्त्य ऋ' फेस्यान पर 'अश्व' आदेश दिया गया है, मीं 'आ' और 'चरा' कारेश-प्राप्ति में रहस्य रहा हुन्ना दे उसे प्यान में रखना चाहिये। सूत्र मगया १-११४ में हर्स गया ई कि तब 'मातृ' शब्द मीण रूप में समाम-खबरवा में का हुआ हो तो उस 'मातृ' शब्द में स्वित चनरव 'गर' के स्वान पर प्रोड्न स्वान्तर में वैकलिक रूप से 'इ' की प्राप्ति होती है ! तम्मुमार टर्ग पर इच्टान्त दिया जाता है कि- 'मानुष्य := माईण' चर्यात माताओं के लिये, इस प्रकार 'ग्ह' है स्थान पर 'इ' की प्राप्ति मी बाजी दें। इसी प्रकार से सूत्र-संख्या ३४४ में वियोषित किया गया है कि

^^>>>>>>>>

ग्रहकारान्त शब्दों के व्यन्त्यस्य 'ऋ' के स्थान पर वैकित्यक रूप से 'ख' की प्राप्ति होनी है', तद्गुनार
'मालु' शब्द में स्थित व्यन्त्य 'ऋ' के स्थान पर वैकित्यक रूप से 'ख' की प्राप्ति सो होनी है', तद्गुनार
'मालु' शब्द में स्थित व्यन्त्य 'ऋ के स्थान पर वैकित्यक रूप से 'अ' की प्राप्ति मा होनी है, जैसे —

मात्रा समन्वितम् वन्दे=माऊए समन्तित्र वन्दे अथात् में माता के साथ (ममुख्य रूप से) नमम्कार

करता हू। इस 'माऊए' उदाहरण में 'मालृ' शब्द के 'ऋ' के स्थान पर सूत्र सख्या दे ४४ के ब्यनुसार
वैकित्यिक रूप से 'ख' ब्यादेश की प्राप्ति प्रदर्शिन की गई है, ब्यन्य मी समक्ष लेना चाहिये।

प्रश्न — स्व की वृक्ति में ऐना क्यों कहा गया है कि 'सि' 'अम्' आदि जिमिति बोषक प्रत्ययों के आगे रहने पर ही 'मातृ' शब्द में स्थित 'ऋ' के स्थान पर 'आ' अथया 'श्ररा' आदेश की प्राप्ति होती है।

उत्तर —िवभित्त बोधक पत्ययों से रहित होतो हुआ ममास अवस्था में गौण रूप से रहा हुआ हो तो 'माए' शब्द में स्थित ऋ' स्थान पर 'आ' अथया 'अरा' आदेश प्राप्ति तहीं होगी, किन्तु सूत्र सख्या रे-१३५ अनुसार इस अन्त्य 'ऋ' के स्थान पर 'इ' आदेश की प्राप्ति होगी, ऐमा सिद्धान्त प्रदर्शित करने के लिये ही सूत्र की दृत्ति में 'मि' अम' आदि प्रत्ययों के आगे रहने की आवर्यकता का उल्लेख करना सर्वथा उचित हैं। जैसे —मातृ देव =माइ देवो और मातृ गण =माइ गणो, इस्यादि। इन उदाहरणों में उक्त विधानानुमार 'ऋ' के स्थान पर 'इ' आदेश की प्राप्ति प्रदर्शित की गई है।

माता सस्कृत प्रथमान्त एकववन का रूप हैं। इसके प्राकृत रूप माधा और माधर। होते हैं। इसमें से प्रथम रूप में सूत्र-सख्या १९०० से मूज सस्कृत शब्द 'माख' में स्थित 'तृ' का न्लोप, ३४६ से लोप हुए 'तृ' के पश्चात् रोप रहे हुए 'तृर' के स्थान पर 'खा' खादेश की प्राप्ति, ४४४८ से प्रथमा विमक्ति के एक वचन में सस्कृतीय प्रत्यय 'सि = स्' की प्राकृत में प्राप्त खात्र 'माखा' में मी प्राप्ति एव १-११ से प्राप्त प्रत्यय 'म्' का 'हलन्त होने से लोप होकर माआ रूप सिद्ध हो जाता है।

ं हितीय रूप (माता=) माश्ररा में सूत्र संख्या १-१०७ से मूल सस्क्रन राष्ट्र 'मात् में स्थिन 'त् का लोप, ३४६ मे लोप हुए 'त' के पश्चात रोप रहे हुए 'ऋ' के स्थान पर 'श्ररा' व्यादेश 'की प्राप्ति श्रीर रोप साधनिका प्रथम रूपवत् होकर द्विनीय रूप *मागरा* मी सिद्ध हो जाता है ।

मातर सरकृत प्रथमान्त बहुवचन का रूप है। इमके प्राकृत रूप माध्राज, माध्राओ, माध्रसाज, धीर माध्रसाओ होते हैं। इनमें से प्रथम नो रूपों में सूत्र सख्या १९७० से मून सस्कृत शक्त माध्रसाज में स्थित 'त्' का लोप, १४६ से लोप, द्वुप त के परचात शेष रहे 'ऋ' के स्थान पर 'आ' आहेरा की प्राप्ति और २०० से प्रथमा विभक्षित क बहुवचन में आकारान्त स्त्रीलिंग में मस्कृतीय प्रस्थय 'जम् के स्थान पर प्राकृत में कथ से व' और 'औ' प्रस्थों की प्राप्ति हो हर माजाउ और माजाओ रूप सिद्ध हो जाते हैं।

तृतीय बीर चतुर्थ भव-(मातर =) माश्ररात्र श्रीर मोश्रराश्रो में सूत्र सल्या १ १७० से मूल

संस्कृत राष्ट्र मातृ में थिया 'त्' का लोव, दे ४६ से लोव हुए 'त्' के वश्वात् शेव रहे हुए 'क्र' के सर पर 'अरा' आदेश की प्राप्ति और ३ २७ से प्रथम दो रूवों के समान ही 'व' और 'ओं' प्रत्योप कम से प्राप्ति होकर माअराज और माअराओं रूव सिद्ध हो जाते हैं।

मातरम मम्हल द्विनीयान्त एकवचन का रूप हैं। इसके प्राइत रूप माख बीर माधर होते हैं। इनमें 'माखा' खीर 'माखरा' खाँगें की प्राधित उपेरीम्त विधि खनुसार, तत्वरचात् सूत्र-सख्या है। से 'श्वन्त में द्वितीया जिम देत के एकवचन का प्रत्यय खाने से' मूल ख्या 'माध्या तथा माधरा हैं स्थित खन्त्य र्श्वा कर खान कर स्थान पर हारत स्वर 'का प्राधित, है-प्र से द्वितीया विमन्तित के पहचल में सन्द्वनीय प्रत्यय 'खम' के स्थान पर लाइन में 'म्' प्रत्यय का प्राधित और १ २३ से 'म्' के स्थान प खाइन से 'म्' प्रत्यय का प्राधित और १ २३ से 'म्' के स्थान प खाइन से पाइन से प्राधित हो कर कम से दोनों रूप-माज और माजर सिद्ध हो जाते हैं।

मातु सरकृत पट्यन्त एक्वचन का रूप है। इसका प्राक्तत रूप माखाए होता है। इन्ने 'माखा' खग की साधिनिका चनरोक्त विधि खनुनार, तत्वरचान सूत्र सख्या ३-२६ से पट्टी विमीन के एकवचन में खाकारान्त स्नीलिंग में संस्कृतिय प्रत्यय 'इस = ख्रस्' के स्वान पर प्राक्टन में 'ए' प्रत्य की प्राप्ति होकर माजाए रूप सिद्ध हो जाता है।

कुने संस्कृत प्रवास्थात एकायन का रूप है। इनका प्राष्ठत रूप कुरुर्द्वाए होता है। हैने सूत्र संख्वा ०-३ स मृत संख्व राव्य कुत्ति में स्थित 'त्' के स्थान पर 'ख' की प्राप्ति, ० व्य में में 'ख' की दिख्य 'ख्छ' की प्राप्ति, २ ६० से प्राप्त पूर्व 'छ' के स्थान पर 'प्' का प्राप्ति चीर रें ' प्रवचनी विश्वित के एकवचन में इकारान्त के स्वीतिंग में संस्कृतीय प्रत्यय 'द्वास व्यव' के स्थान प्राप्ति चीर दें 'के प्राप्ति चीर कराते हुए 'के प्रस्तय की प्राप्ति हो कर कुष्ण कराति हो जाता है।

गम सस्टन खन्यय है। इनका प्राष्ट्रन रूप नमी होना है। इनमें सूत संख्वा १-३० के ^{इन} के स्वान पर 'हो' खादेश की प्रास्ति, नत्यरपात 'हो' में 'ढ' इस्संसक होने से मूल खन्यय 'नग' में कि खन्त्य 'क्ष' की इत्मंसा होकर लीप एउ तत्यरपात पाप्त हत्यत खंग 'नम्' में पूर्वस्त 'खो' धारेण' प्रास्ति सिप-संयोजना होक्स माष्ट्रतीय खन्यय रूप मणी मिद्ध हो जाता है।

मातृत्य संस्कृत पतुर्थन्त बहुवपन का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप साधराण होता है। इस 'साखरा' खंग की मास्ति उपरोक्त विधि खनुसार, तत्परचात प्राप्तीग 'साखरा' में सुन्नसंन्या १ हैं से चतुर्थी विभावत के स्थान पर पार्टी विभक्ति का योग-दान एवं तर्मुसार १ ६ से वर्ष्टी विभक्ति बहुवपन में संस्कृतीय प्रस्वय 'खाम्' के स्थान पर प्राष्ट्रन में 'ण' प्रत्यय की प्राप्ति होकर मान्य रूप सिन्न हो जाता है।

मातुम्य सेरमृत चतुर्थ्यन्त बहुयचन का रूप है। इसकी प्राकृत रूप गाईन होता है। इस

मात्रा सस्कृत तृतीयान्त एकवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप माऊए होता है। इसमें [न संख्या १-१७० से मूल सस्कृत राष्ट्र 'मातृ' में स्थित 'तृ' का लोप, ३ ४४ से लोप हुए 'च्' फें एचात् रोप रह हुए 'ऋ' के स्थान पर 'च' की प्राप्ति, श्रीर ३ २६ से तृतीया विमक्ति के एकवचन में स्कृतीय प्रत्यय 'टा = आ' के स्थान पर प्राप्ताम 'मात्र' में स्थित श्रन्त्य हस्य स्वर 'च' को दीर्घ स्वर 'क' ति प्राप्ति कराते हुए 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति होकर माऊए रूप सिद्ध हो जाता है।

समन्वितम् सस्कृत विशेषणाध्यक रूप है। इसका प्राकृत रूप समन्नित्र होता है। इसमें इत सख्या २ ७६ से 'व' का लोप, २ ८६ से लोप हुए 'व्' के परचात् रोप रहे हुए 'व्' को दित्व 'ज्र' की गांकि, १-१७० से 'त्' का लोप, ३-२८ से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में अकारान्त नपुसक लिंग में गार्कृत में 'म' प्रायय की प्राप्ति श्रीर १-२३ से 'म्' का श्रनुस्वार होकर समन्नित्र रूप सिद्ध ही जाता है।

'बन्दे' (कियापद) रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ २४ में की गई है.।

मानु देल सस्ट्रत रूप है। इसना प्राप्तत रूप मान्न्देंबो होता है। इसमें सूत्र सेर्या १-१७० से 'त्' का लोप, १-१३५ से लोप हुए 'त' के परचात रोप रहे हुए 'द्या के ग्यान पर 'इ' की प्रास्ति, श्रीर २२ से प्रथमा विभक्ति के एकंवचन में श्रकारान्त पुल्लिग में संस्कृतीय प्रत्यय 'सि' के ग्यान पर 'ढों = श्रो' की प्रास्ति होकर *मारु दे*णे रूप सिंद्ध हो जाता है।

मानु-गण सस्कृत रूप है। इसका प्राफ्ठत रूप माइ-गखो होता है। इनमें 'माइ देवी में प्रयुक्त सूर्यों से साधनिका की प्राप्ति होकर *माइ गणो रूप* मिद्ध हो जाता है। २-४६।।

नाम्त्यरः ॥ ३-४७ ॥

ष्टादन्तस्य नाम्नि संद्वाया स्यादौ परे ग्रर इत्यन्तादेशो भवति ॥ पिश्ररा । पिश्रर्र । पिश्ररे । पिश्ररेख । पिश्ररेदि जामायरा । जामायरे । जामायरेख । जामायरेदि । भायरा । भायरे । भायरे । भायरेख । भायरेदि ॥ अर्थ —नाम-बोघक ऋकारान्त सङ्घाओं में स्थित अस्य 'ऋ' के स्थान पर, आगे कि बोघक 'सि' 'अम्' आदि प्रत्यों के रहने पर, 'अर' आदेश भी प्राप्ति होनी है। और इस प्रधार पे ऋकारान्त सङ्घा शब्द प्राफ्त रूपान्तर में 'अर प्राद्श प्राप्ति' होने है। और इस प्रधार पे ऋकारान्त सङ्घा शब्द प्राफ्त रूपान्तर में 'अर प्राद्श प्राप्ति' होने से अकारान्त हो जाते, तत्परचात् इनकी विभिन्ति-वेघक रूपाजिल' निष्ण आदि अकारान्त शब्दों के अनुमार वन्त्री के —िपतर--पिखरा, पितरम्--पिखर, वित्त--पिखरे, विज्ञा--पिखरेण और पितरम्--पिकर के लिप्ते--पिकर के लिप्ते के

पिअरा और पिअर रूपों की निद्धि सूत्र सन्या ३४४ में थी गई है।

ितृत्य सस्कृत द्विवीयान्त बहुवयन का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप पिछरे होता है।
सूत्र सख्या १ १७० से मूल मस्कृत राव्द 'पितृ' में स्थित 'त' का लोव, ३-४० से ओप हुए 'त के
रोप रहे हुए 'स्ट' के स्थान पर 'खर' आदेश की प्राप्ति, ३ १४ से प्राप्तांग 'पिखर में गियत कान्य
के स्थान पर 'खागे द्वितीया बहुवयन बोचक प्रत्यय 'शाम्' की प्राप्ति होने में'-ए' की प्राप्ति चीर है।
द्वितीयायिमित्रित के बहुवयन में सस्कृतीय प्रत्यय 'शाम्' का पाठन में लोप होकर पिशर रूप पित्रर
जातो है।

ित्रा संस्कृत वृतीयान्त एकवचन वा रूप है। इसक. प्राकृत रूप पिश्ररेण होता है। हो 'पिश्रर' श्रंग की प्राप्ति चपरोक्त माधनिका के समान, तत्परचात सूत्र मंख्या ३ ९४ में प्राप्ते 'पिश्रर' में स्थित श्रन्त्य 'श्र' के स्थान पर 'श्रापे तृतीया विभवित वोचक प्रत्यय की प्राप्ति होत्र व 'ण' की प्राप्ति श्रोर ३ के तृतीया विभक्ति के एकवचन में श्रकारात पुल्लिंग में सहकृति वृद्धि 'टा=श्रा' के स्थान पर प्राप्तन में स्थापत्यव की मादित होकर विश्वरेण स्व मिद्ध हो नाता है।

वित्ताभी मंकित तृतीयान्त यहुवचन का रूप है। इमका प्राहृत रूप विश्वर्गि होता है। हो 'पिश्वर' श्रम की श्रामि उपरोक्त मायनिकों के ममान, तत्वरात् सुर संख्या ३ १% में प्राशीम 'पिड़ा' में स्थित श्रन्त्य 'श्र' श्यान पर 'श्रामे तृतीया विभक्ति के बहुवचन बोधक प्रश्यय की माति हो । ही 'ए' की प्रान्ति ३ ७ से तृतीया विभक्ति के बहुवचन श्रमशान्त पुल्लिम में मंस्कृतीय 'त्यव 'विभ' है स्थान पर प्राकृत में 'हि' प्रस्यय की प्राप्ति होकर विभरेहिं स्व मिद्ध हो जाता है।

जामातरः मंख्न प्रधानत बहुबान का रूप है। इनका पाछ्न रूप जामावरा नेना है। हुने मूत्र मुख्या है-१७७ में मूल सहत्न शहद 'जामार में स्थित 'न' का लीव, ३ ४० में लीव हुन में के परचात शेष रहे हुए 'क्स' के स्थान पर 'बंध' आदेश की प्राप्ति, १ ६० से खादश प्राप्त 'सर' में विन 'ख' के स्थान पर 'यं की प्राप्ति, ३ १८ में प्राप्तीय 'जानावर' में स्थित क्ष्म्य 'ख' करवान पर 'क्षा

जामातरम् मस्कृत द्वितीयान्त एकपचन का रूप है। इमका पाकृत रूप नामायर होता है। समें 'जामायर ष्ट्रग की प्राप्ति उपरोक्त सार्धानका के समान, त परचात सूत्र सख्या े र से द्विनीय। वेमिक्त के एकवचन में श्रकारान्त पुल्लिंग म संस्कृतीय अत्यय 'श्रम्-म्' क समान ई। प्राकृत में भी म्' प्रत्यय की प्राप्ति श्रोर १२३ से 'म्' के स्थान पर श्रतुस्यार की प्राप्ति हो कर जामायर रूप सिद्ध हो जाता है।

जामातृन् सस्कृत द्वित्यान्त बहुवचन का रूप है। इनका प्राकृत रूप जामायरे होता है। इनमें जामायर' श्रम की प्राप्ति उपरोक्त सा प्रविका के समान, तन्तरचात सूत्र सख्या २-१४ से प्राप्ताम जामायर' में स्थित श्रन्त्य 'त्र' के स्थान पर 'श्रापे द्वितीया विमिन के बहुवचन प्रत्यप की प्राप्ति होने ते' 'प' की प्राप्ति, श्रीर २-४ से द्वितीया जिमक्ति के बहुवचन में श्राहारान्त पुल्तिम न महकृतिय प्रत्यय अस्' का प्राकृत में लीप होकर जामायरे रूप सिद्ध हो जाता है।

जामाना सस्कृत त्तीयान्त एकपचन का रूप है। इसका शक्क रूप जामायरेण होता है। इसमें 'जामायर' श्रम की भावि उपरोक्त साधनिका के ममान, तत्वरचात् सूत्र सख्या ३-१४ से प्राप्ताम 'जामायर' में स्थित श्वन्य 'श्व' के स्थान पर 'श्रामे तृतीया विमक्ति के एकपचन प्रत्यय की प्राप्ति होने से' 'ए' की प्राप्ति श्रीर ३-२ से तृताया विभक्ति ३ एकपचन में श्रकारान्त पुल्मिम में सम्कृतीय प्रत्यय 'दा=श्री' के स्थान पर प्राप्तुन में ण' प्रत्यय की प्राप्ति होकर जामायरेण रूप भिद्ध हो जाता है।

जामातृाम साकुत तृतीयान्त बहुबचन का रूप है। इपका प्राकृत जामायोहि होता है। इसमें 'जामायर' खत की प्राप्ति उपरोक्त साथनिका के तनान, तत्वरशात रोव साथनिका मूत-नरचा ३ १४ तथा ३-७ से उपरोक्त 'विष्रदेहिं' के समान ही होकर जामायरेहिं रूप सिद्ध हो जाता है।

श्वासर सस्कृत मथमान्त बहुवचन का रूप है। इस हा प्राकृत रूप मायरा होता है। इस हें स्ट्र सख्या २ ०६ से मूल मस्कृत शब्द ध्रातृ में स्थित 'र्' का लोव, १-१७० से 'त' का लोव, ३ ४७ से लोप हुए 'त्' के परचात शेव रहे हुए 'ऋ' क स्थान पर 'खर' खादेश की प्राप्ति, १ ६० में 'प्रादेश प्राप्त 'क्यर' में स्थत 'ख' के स्थान पर 'य' की प्राप्ति, ३ १० से प्राप्ताम 'मायर' में थित ख्रान्य 'ख' के स्थान पर 'यो की प्राप्ति के बहुवचन नोयक प्रत्यय की प्राप्ति होन से 'द्या' की प्राप्ति 'श्रीर ३-४ में प्रयाम विमक्ति वे बहुवचन नोयक प्रत्य की प्राप्ति होन से 'द्या' की प्राप्ति भी से स्वर्गय प्रत्यय 'जम का प्राप्ति में लोप होकर भाषरा रूप सिद्ध हो जाता है।

स्रोतरम् संस्कृत द्विनीयान्त एकवचन का रूप है। इमका प्राकृत रूप मायर होता है। हा 'भावर' श्रम की प्राप्ति चपरोक्त माधनिका के समान, तत्परचात् रोप साधनिका सूत्रमस्या ३५ हा १-२३ से 'जानायर' के समान भी होकर प्राकृत रूप भायर सिद्ध हो जाता है।

ज्ञानुन् मध्कत दितीयान्त बहुनचन का रूप है। इसका प्राक्त रूप मायरे होता है। ' 'भायर' श्रम की प्राप्ति उपरोक्त मार्थानका के समान, तत्वरचात रोप साधनिका की प्राप्ति सूत्रमः १-९४ श्रीर ३ ४ से जामायरे' के समान ही होकर प्राक्षत रूप मायरे सिद्ध हो जाता है।

भाजा सत्कृत वृतीयान्त एकयचन रूप है। इसका प्राकृत रूप भायरेण होता है। इममें भार श्रंग की प्राप्ति उपरोक्त सार्धानका के समान, तत्वरचात रोप सार्धानका की पारित स्वन्तवणा रे। तथा ३ ६ से 'जामायरेण के समान ही होकर प्राकृत-रूप भायरे सिंद हो जाता हैं।

मानृभि सृतीयान्त बहुनयन का रून है। इसका प्राकृत रूप भायरेहि होता है। सर्वे 'मायर' खाग की प्राप्ति स्वयाक्त साधिनका के समान, त्रव्ययान् शेष साधिनका की प्राप्ति सून्यान्त ३-१४ तथा ३-७ से उपरोक्त 'पिमरेहि' खयवा 'जामायरेहि' के समान ही होकर प्राकृत रूप 'मापर्णी सिद्ध हो जाता है। ३ ४७ ॥

श्रासीनवा॥ ३-४८॥

ऋदन्तस्य सी परे आकारो वा मनति ॥ पिया । जामाया । भाषा । कत्ता । परे । पियारो । जामायरो । भाषरो । कत्तारो ।

अर्थ —मस्तृत प्राक्षारा त शर्मा के प्राकृत रूपात्तर में प्रथमा विभक्ति पोषक प्रत्यव ंशि रहा पर शुरुद्दात्त्व स्वर 'त्रा' के स्थान पर वैक्तिनक रूप से 'खा' की खादेश प्राप्ति हुआ कर्मी क्षेमें —पिता = पिखा खयदा विद्यारे, जामाता ≕जामाया खयदा जामायरो, भ्याता = माया क भाषरो और क्यों = एक्सा खयवा कसारो, इत्यादि ।

"विशा" रूप की मिद्धि सूत्र मन्या ३-४४ में की गई है।

कामाता मस्कृत प्रथमा त एकवचा का त्व है। इसके प्राप्टत त्व जामाया चीर जाया होते हैं। इसमें से प्रथम कव में मूत्र मन्त्वा १-१७० में मूल मंस्ट्रत शहर 'जामार' में स्विव 'त' कार ३ ४८ से लोव हुए 'तू' के परचान तेव रहे हुए 'त्रर' के स्थान वर 'च्या' खारेश प्राप्ति, १ १०० आरेश-प्राप्त च्या' क्यान वर 'या' जाति, ४ ४४-८ से प्रथमा विभक्ति के एकवना में संस्कृतीय मां प्रस्वव 'सि'='त्र' की प्राष्ट्रत में भी प्राप्ति चीर १ १ से प्राप्त प्रस्वय 'मृ' का प्राष्ट्रत में मीप होक्टर क्य जामाया निद हो जाता है। द्वितीय रूप 'जामायरी' की सिद्धि सूत्र सरया ३४७ में की गई है।

भाता संस्कृत पथमानत एकवचन का रूप है। इस के प्राकृत रूप भाषा श्रीर भाषरी होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या २-७६ से मूल मस्कृत शब्द 'ब्रात्त' में स्थित 'र्' का लोप, १-१७७ से 'स' का लोप, ३ ४८ से लोप हुए 'तु' के परचात रोप रहे हुए 'ऋ' के स्थान पर 'आ' की प्राप्ति. १-१८० से प्राप्त 'आ के स्थान पर 'या' की प्राप्ति और शेप साधनिका की प्राप्ति सुन सख्या ४ ४४८ तथा १ १९ से उपरोक्त 'जामाया' के ममान ही हो कर प्रथम रूप भाषा' सिद्ध हो जाता है।

द्विनीय रूप (भ्राता=) मायरी में सुत्र संख्या २-५६ से मूल संख्वत शब्द 'श्रात्' से स्थित 'र' का लोव, १-१७७ से त का लोव, ३४० से लोव हुए 'त' के परचात शेप रहे हुए 'ऋ' स्वर के स्थान पर 'खर' खादेश की प्राप्ति, १ १८० से खादेश प्राप्त 'खर' में स्थित प्रथम 'ख' के स्थान पर 'य' को शक्ति छौर ३-२ से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में प्राप्तांग 'भायर' मं संस्कृतीय प्रत्यय 'सि' के स्थान पर प्राकृत में 'ढो=ब्रो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप भायरो सिद्ध हो जाता है।

कर्ता संकत प्रथमान्त एकवचन का रूप है। इसके प्राकृत-रूप कत्ता और कत्तारी होते हैं। इतमें से प्रथम रूप में सूत्र संख्या २ ७६ से मूल संस्कृत शब्द कर्ए में स्थित 'र'का लोप, २-८६ से लोव हुए 'र के पश्चात रहे हुए 'त' को 'द्वित्व' 'त्त' की प्राप्ति, ३-४८ से शब्दान्त्य स्वर 'ग्रा' के स्थान पर 'आ' आदेश प्राप्ति, और रोप साधनिका का प्राप्ति सूत्र-सख्या ४-४४८ तथा १-११ से उपरोक्त 'जामाया' के समान ही होकर प्राकृत रूप 'कत्ता' सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप (कर्ता=) कत्तारी में सूत्र मख्या २ अध से मृल संस्कृत शन्द 'कर्त' में स्थित 'र्' का क्षीप, २ ८६ से लीप हुए 'र ' के पश्चात् रहे हुए त' की द्वित्व 'स्' की प्राप्ति, ३ ४५ से शब्दान्त्य स्तर फ्ट' के स्थान पर 'आर' आदेश पाति, और ?-२ से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में पातांग 'कचार' में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'सि' के स्थान पर डो=श्रो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप फक्तारो सिद्ध हो जाता है।

पिता संस्कृत प्रथमान्त एकवचन का रूप है। इनका श्रोष्टत रूप-(पूर्वीत पित्रा के अतिरिक्त) पिश्ररो होता है। इसमें सूत्र सख्या १-१७० से मूल सस्कृत शब्द 'पिन् में स्थित 'त्' का लीप, ३-४७ से लोप हुए 'त' के पश्चात् शेप रहे हुए स्वर 'ऋ' के स्थान पर 'ऋर' श्रादेश की प्राप्ति श्रीर ३-२ से प्रथमा विमिन्त के एक प्रचन में प्राप्तींग 'पिन्नर' में सम्इतीय प्रस्थप 'सि' के स्थान पर प्राकृत में 'डो=श्रो' प्रस्पय की प्राप्ति होकर विभक्ति हव सिद्ध हो जाता है ॥ ३-४६॥

राज्ञो नलोपेन्त्यस्य श्रात्व वा भवति सौ पर । राया । हे राया । पत्ते । ब्राह्मा देशे । रायाणो ॥ हे राय . हे राय इति तु शीरसेन्याम् । एवं हे मर्प्य । हे श्रप्य ॥

अर्थ — मस्कृत शब्द 'राजन्' के शकृत रूपान्तर म प्रथमा विमक्तिन के एक्वपन धार-'सि' परे रहने पर मूत्र सत्या १-११ से 'न' का लोव हो हर अन्तय आ' के स्वान पर बैकिनाहरू। 'स्ना' की प्राप्ति दोती है। जैस —राजा =राया, वैकाल्यक पत्त में सुत्र मंख्या ३ ८ म 'सा श्रादेश की प्राप्ति होने पर प्रथमा विमस्ति के ए क्यचन में रान(=राय(यो रूप म, हाना है। संबा एकप्रचन का चदाहरण — हे राजनुन्हे राया / श्रीर हे राय ! शौरसेना भाषा में मुत्र सरुवा र २५/म सबोधन के एकपचन में 'हे राय!' रूप भी होता है। इसी प्रकार से आत्मन शरा भा गवर ह समान ही नजारान्त होन से इन 'श्रासन' शब्द क सबोधन के एकब उन में भी ने रूप होने हैं-जैन-हे आत्मन = इ अप अथवा हे अप !" प्रथम रूप शौरसेनो भाषा का है, जब कि द्विनाय रूप प्रार भाषा का है।

राजा संस्कृत प्रथमान्त एकत्रचन को रूप है। इसके प्राकृत रूप गया श्रीर रायाणी हाउ है। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या १-११ में मूल सन्छन शब्द 'राजन्' में स्थित खन्य हनन्त ने ह लोप, पर्न ३ ४६ से रोप शन्द राज के चन्त्य 'ख' के स्थान पर 'आ' की प्राप्ति, ?-35 स प्राप्तः 'राजा' मे स्थित 'ज्' का लोव, १-१८० से लोव हुए 'ज' के परचात शेव रहे हुए 'खा' क स्थान पर पी प्राप्ति, ४ ४४८ से प्रथमा निमन्ति के एकत्रचन में सस्टतीय पान्तव्य प्रत्यय 'सि ≓स' की पार में भी प्राप्ति और १-११ से शास्त प्रत्यय हमन्त 'म' का लोप हाकर राया का मिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप-(राजा=)रायांणो में सूत्र मख्या १-१७७ से मृल संस्कृत शब्द 'राजन' म विवर न का लोप १ १८० से लाप हुए 'ज के परचान शेप रहे हुए 'ख्र' क स्थान पर 'य' की आ'का, ने रही प्राप्तांग 'राया म स्थित अन्तय 'अन् क स्थान पर 'आण' आ^{ने}ण की प्राप्ति, तन्तुमार प्रा^{प्ता} 'रायाण' में सूत्र मरया ३२ से थ्यमा विभक्ति क एकववा में अक्षागन्त पुहिना में मग्रुनाय प्रव 'मि' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'ढों=श्रो' प्रत्यय की बादिन योक्ट द्विनाय रूप *रायाणी* भा निह त्रातः है।

हेराजर । मरात मंबीपनात्मक एक्यान का रूप है। इसके प्राष्ट्रन रूप है शका । री है राय ! होने ही इपमें मूत्र मध्या १-११ स मूल मन्द्रत शक्त 'शक्त में शिवत अन्त्य हनात ज ह लीव गव रे ४६ में शेष राष्ट्र 'माज' क कास स्वर 'बा' क भ्यान वर 'बा' की प्राप्ति, १ 35 व प्रान्तांग 'राजा' में स्थित 'ब्' का लोव, रे-रेट० स लोव हुए ज क परनान हो। रहे हुए आ' ह गी पर 'या' की प्रास्ति और ३ ३८ में मंबोधन के तकवनत में प्राप्ताम 'शया' न समय 'बा के स्थान प बैडिनिक रूप से 'च' नी शांकि होकर भा में शेनी रूप है रागा ! थीर हे राग ' सिड ही पार है !

हिराजन् । सस्कृत सबीधनात्मक एकवचन रूप है। इसका शीरसेनी रूप हैराय होता है। | इसमें सूत्र सख्या ११७० से 'ज्' का लोप, ११०० से लोप हुए 'ज' के पश्चीन शेप रहे हुए 'ख' क स्थान पर 'प' क्षी प्राप्ति, ४२६४ से सबोचन के एकवचन में सम्क्रतीय प्रत्यय 'सि' क कारण से 'शीरसेनी म प्राप्ताग 'शथन' के खन्य न' के स्थान पर ऋतुग्वार की प्राप्ति होकर शीरसनी रूप 'हेराय' सिद्ध हो जाता है।

हे आत्मन् । संस्कृत सबोधनात्मक एकवचन का रूप है। इसका शौरसेनी रूप हे श्राप्त । होता है। इसमें सूत्र सख्या १ ८४ से दीव स्वर 'आ' के स्थान पर 'अ' की प्राप्ति २-४१ से संयुक्त व्यव्यत्त 'ध्म' के स्थान पर 'प' की प्राप्ति ५ २६४ से सबोधन के एकवचन में शौरसेनी म प्रार्थां 'खप्तन्' में स्थित श्रन्त्य 'न्' के स्थान पर श्रनुस्वार का प्राप्ति होतर है अप्प ' रूप सिद्ध हो जाता है।

हे आत्मन् 'सम्छत सबोधनात्मक एकवचन का रूप है। इमका प्राक्तन रूप हे त्राप्ता होता है। इसमें 'श्रप्प' त्र्या की प्राप्ति वपरोस्त विधि-त्र्यनुमार, तत्प्र्यात् सून सख्या १११ से हलन्त 'न_' का लोप त्रौर ३३८ से सबोधन के एकवचन में सस्छतीय प्राप्तत्य प्रत्यय 'सि' का प्राकृत में वैकरिपक रूप से त्रमात्र होकर प्राकृतीय सबोधनात्मक एकवचन रूप हे अप्प'। सिद्ध हो जातो है। ३४६ ॥

जस्-शस्-डसि-डसां गो ॥ ३-५०॥

े राजन् शब्दात् परेपामेपा खो इत्यादेशी वा भवति ॥ जम् । रायाखो चिट्ठन्ति । , पर्चे । राया ॥ शस् । रायाखो पेच्छ । पत्ते । राया राण ॥ टिमि । राइखो रूपखो श्रागद्या । । पत्ते । रायाब्यो । रायाढि । रायाढिन्तो । राया ॥ व्हस् । रादखो रयखो धर्णं । । पत्ते । रायस्स ॥

अर्थ — संस्कृत शब्द राजन ' के प्राकृत रूपान्तर में प्रथमा विमन्ति के बहुवचन में प्रस्वय 'जस्' के स्थान पर, दिनीया विमन्ति के बहुवचन में प्रस्वय 'शस् के स्थान पर, पचनी विमन्ति के एकवचन में प्रस्वय 'इस् के स्थान पर, पचनी विमन्ति के एकवचन में प्रस्वय 'इस् के स्थान पर खीर पच्ठी विमन्ति के एकवचन में प्रस्वय 'इस् के स्थान पर खैर पिक्त के एकवचन में प्रस्वय के उदाहरण — राजान विष्ठित रूप स्थान पाया के प्रस्वय की उदाहरण — राजान विष्ठित्तः स्थानों खाया राया क्ष्यवा राप पेण्डा, ख्यान रावा चिट्ठित्तः । 'साम्' मत्यय का उदाहरण — राज्ञ ख्यान रावा ख्यान ते देखी। इसि' प्रस्वय का उदाहरण — राज्ञ ख्यान त न राष्ट्रणी प्रस्वा का प्रवाहरण — राज्ञ ख्यान त राज्ञ ख्यान ह्या है। इस् क्ष्या स्थान, रायाहि, रायाहिन्ती धीर राजा ख्यान ख्यान ख्यान ख्यान ख्यान ख्यान विष्ठित्ते प्रसाह ख्यान स्थान ख्यान ख्यान ख्यान स्थान ख्यान ख्यान ख्यान ख्यान ख्यान स्थान ख्यान ख

श्रथवा रायम्स धरा श्रथांत राना का धन, । यों उपरोक्त उदाहरणों से विदित होता है कि 'जस्' 'हन् 'दिस और इम' प्रत्ययों के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'णो' प्रत्यय की बंकिल्फ हत्य में प्राप्ति हुई है।

राजान संस्कृत प्रथमान्त बहुवचन का रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप रायाणी और राया होत है। इनमें से प्रथम रूप में । सूत्र मख्या १ १७७ से सरकृत शृन्द 'राजन' में शियत 'ज' का लीप, १ १०० म लीप हुए 'ज' के पश्चान शप रहे हुए 'थ्य' क स्थान पर 'य' की प्राप्ति, १-११ से हलात 'न' धा शर दे १२ में प्राप्ताग 'राय' में स्थित चानत्य 'ख' के स्थान पर 'खागे प्रथमा विभक्ति के बहुवयन का प्रतः रहा हुआ होने से' 'श्रा की प्राध्तिकीर ३ ५० से प्रथमा विमक्ति के बहुबचन में संस्कर्ताय प्रत्यव जर्म के स्थान पर प्राप्त में 'थो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप रायाणी सिद्ध हो जाता है।

हितीय रूप (राजान:=) राया में 'राय' खंग की प्राप्ति उपराक्त विधि अनुमार, तसमार सूत्र संख्या ३ १२ से उपरोक्त रीति चनुसार ही चन्त्य 'ख' के स्थान पर 'खा' की शाप्ति एवं प्राप्ति 'राया' म ३-४ से प्रथम विभवित के बहुवचन में सरवतीय प्राप्तत्व प्रत्यय 'जस' की प्रोफत में प्राप्ति चौर लोव स्थिति प्राप्त होकर द्वितीय रूप राया भी सिद्ध हाँ जाला है ।

'चिटारित' रूप की सिद्धि सन्न संख्या है-१० में की गई है।

राहा सरकत द्वितीयान्त यहधयन का ऋष है। इसके प्रानृत रूप रायाणी, राया और शा होते हैं। इतमें से प्रथम रूप में 'राय' शंग की प्राप्ति उपरोक्त माधनिका के अनुसार, तत्परकार सम्र सरया ३-१२ से प्राप्तांग 'राय' म विषत छात्य 'छा' के स्थान पर 'छागे दिलीया विभक्ति के पहुनमन मा प्रत्यय रहा हुआ होन स' 'आ' की प्राप्ति और ३ ५० में द्वितीया विमक्ति के यहवयन में संस्कृतिय प्रारतहरू 'शम' के स्थान पर प्राप्टत में 'ली' प्रत्यय की प्राप्ति हाकर प्रथम रूप स्थाणी मिद्र हैं ងាការ ខ្លុំ រ

दितीय रूप (राहा =) राया में 'राय' र्थांग का प्राध्ति उपरोक्त विधि के स्थापार, तयावत सप्न सरुया दे-१- स 'राय में थित अन्त्य 'क' के स्थान पर 'खा' की प्रास्ति एवं देन्ध्र सं डि^{तीर}' विम्नोक के बहुवयन में संख्याय प्रत्यय 'शम्' की प्राकृत में शादित एवं सोय रियति प्राप्त होकर हिनाउ acq राया भी सित हो जाता है।

तृतीय रूप-(राम =) राए में सूत्र मनया १ रेड से मूल सरहत शब्द 'राजत' में स्थित 'प्र' का कीप, १ ११ में करता हमरत न व्यवज्ञा का लीप, ३ १४ से प्राप्तीत 'राख' में रिधन करता 'म' र क्यान पर 'ग' की मानि कीर के उस हिलीया विमक्ति के बहुवचा में संस्कृतीय प्राव्हस्य प्रार्थ की ब्राइन में माति पर्व लाव स्थिन प्राप्त शहर मुनीय रूप 'राए' भी निद्ध ही जाता है ।

'पण्ड' रूप की सिद्धि सूत्र मह्या है है में की गई है।

राज्ञ सम्बत प्रज्ञचन्यन्त एकषचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप राइणो, रएखो, रायाश्रो, शयात, शयाहि, रायाहिन्तो श्रीर राया होत हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या १-११ से मूल सस्कृत शब्द 'राजन' में स्थित ख्रन्त्य हतन्त व्यञ्जन 'न' का लोप, ३-८२ से 'ज' के स्थान पर चैकिल्पक हरप से इ' की शाप्ति और ३-४० से पचर्मा जिसक्तित के एकवचन में सस्क्रतीय शाप्तव्य प्रत्यय 'इसि' के स्थान पर प्राफ़त में वैनस्पिक रूप से 'जो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप राइणो सिद्ध हो जाता है।

हितीय रूप (राह =) रूणों में सूत्र सख्या १-११ से मूल सम्कृत शब्द 'राजन्' में स्थित अन्त्य हत्त'त व्यष्टजन 'न' का लोप, ३ ४४ से से शेष रूप 'राज' में स्थित 'स्राज' के स्थान पर प्राकृत में वैंकल्पिक रूप से 'श्रुण' की शांति श्रीर ३ १० से शाप्ताग 'रण' में पचमी विभक्ति के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तन्य प्रत्यय 'हिस के स्थान पर प्राकृत में वैकल्पिक रूप से 'णो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर दितीय रूप 'रण्णो सिद्ध हो जाता है'।

मृतीय रूप से सात्रवे रूप तक से अर्थात (राज्ञ≔) रोवाओ, रायांव, रायाहि, रोवाहिन्तो [े] श्रीर राया में सूत्र-सख्या १-११ से मूल सस्कृत शब्द 'राजन' में स्थित श्रन्त्य हलन्त व्यञ्जन 'नु' का लोप, १-१७७ से 'ज' का लोप, १-१८० से लोप हुए 'ज' के परचात शेप रहे हुए 'अ' वे स्थान पर 'य' की प्राप्ति, ३-१२ से प्राप्ताम 'राय में श्यित अन्त्य द्वस्व स्वर 'अ' के स्थान पर 'आगे पचमो विभिवत के एकवचन के प्रत्यय रहे हुए होने से' दीर्घ स्वर 'छा' की प्राप्ति एव ३-८ से प्राप्ताग 'राया' में पचमी विभावत के एकवचन के प्रत्यय 'छो उहि हिन्तो श्रीर लुक्' की क्रम से प्राप्ति होकर क्रम से *रायाओं* ^ररायात. रायाहि, रायाहिन्तो श्रीर राया रूप सिद्ध हो जाते हैं ।

'आगओ' रूप को सिद्धि सूत्र सख्या १-२०९ में की गई है ।

राज्ञ सम्कृत पष्ठपन्त एक्वचन का रूप है। इसके प्रोक्त रूप राइणी, ररणो श्रीर रायस होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सुत्र सख्या १ ११ से मूल संस्कृत शब्द 'राचन में स्थित आत्रय हुलन्त , ज्यञ्चन 'न' का लोप, ३ ४२ से शेष रूप 'राज' में स्थित 'ज' के स्थान पर 'इ' की प्राप्ति खीर ३ ५० से , पष्ठी विमिष्त के एक उचन में सस्कृतीय प्रत्यय 'इस् के स्थान पर प्राकृत में बैकल्पिक रूप से श्लो' , मत्यय की प्राप्ति शकर प्रथम रूप राइणी सिद्ध हो जाता है।

हितीय रूप (राज्ञ :=) रएणो में सूत्र संख्या १-११ से मृत संख्त गप्द 'राजन्' में स्थित ्र अन्त्य हतन्त ध्यवज्ञन 'न्' का लोप ३-४४ से शेष रूप 'रान' में स्थित 'श्राज' के स्थान पर प्रोठत में , पैकल्पिक रूप से 'खण्की प्राप्ति खीर ३४० से प्राप्ताग 'रण्' में पच्ठी विभवित के एकवचन में , सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'इत् के स्थान पर प्राकृत में वैकल्पिक रूप से 'णो' प्रत्यय की प्राप्ति होक्र हितीय रूप रण्णो भी सिद्ध हो जाता है।

प्रतीय रूप (राज्ञ'=) रायसम में सूत्र सख्या १-११ से मूल सस्कृत शब्द 'गानव' में रिधत अवस्व

हलन्त व्यञ्जन 'न्' का लोव, १-१७७ से 'ज्' का लोव, १-१८० से लोव हुए 'ज' के वरवान गेंगर 'ख' के स्थान पर 'य' की प्राप्ति खीर ३-१० से वष्टी विभवित के एकवचन में मध्हतीय शास्त्रव 'कस्' क स्थान पर प्राष्ट्रत में 'स्म' प्रत्यय की प्राप्ति होकर दृतीय रूप रायस्त मी निद्ध हो आग है

धनम सरुत प्रयमान्न एक ययन को रूप है। इनका प्राक्षन रूप घण होता है। इनमें प्रय-१-२९ में 'न' के स्थान पर 'ण' की प्राप्ति, ३ ४४ में प्रथमा विमन्ति के एक ययन में यह। नपु सक लिंग में सरुत्नीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'सि' के स्थान पर प्राकृत में 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति कींग से प्राप्त प्रत्यय 'म्' के स्थान पर स्थतुस्थार की प्राप्ति हो कर एक रूप निद्ध हो जाता है। ३-४०॥

टा गा ॥ ३-५१ ॥

राजन् शान्दात् परस्य टा इत्यस्य या इत्यादेशो वा मनति ॥ राइण । पचे रापंण कय ॥-

अर्थ'—संस्कृत शब्द 'राजन्' के प्राक्त रूपान्तर में गृजीया विमन्ति के एक्ष्यन में मा प्राप्तब्य प्रत्यय 'दा' के स्थान पर यैकल्पिक रूप से 'खा' आदेश की प्राप्ति हुमा करती है। जै राज्ञा कृतम्=राष्ट्रणा-रण्या-(अयवा-) राज्य कय, अर्थात् राजा स किया हुमा है। यहां प्रयम से में 'जा' आदेश का प्राप्ति हुई है।

राहा संस्कृत तृतीयान्त प्रवचन का क्य है। इसके प्राष्ट्रन क्य नाइएग, रहणा और । होते हैं। इनमें से प्रथम क्य में 'राइ' खंग प्राप्ति सूत्र मंख्या ३ ४० में वर्णिन सापतिका क धर्म न परचात सूत्र-सख्या ३ ५१ स तृतीया विभक्ति में मन्यचन में संग्रुतीय प्रत्यय 'ठा' के खान पर म 'णा' खायरा प्राप्त प्रस्तय की पैकल्पिन क्य स प्राप्ति होकर प्रथम क्य राहणा निद्ध हो जाना है

हितीय रूप (राहा=) रूपणा में 'रण्' चम थी नामि सुन्न मध्या ३ ४० में वर्तिन माथ में चानुनार, सत्वरपाम सूत्र मंस्या ३ ४१ में सुनीया विभवित क प्रक्रवपन मं प्रधम रूप के सन् 'जा चारेरा प्राप्त प्रत्यम की येकिस्पिक रूप से प्राप्ति रोक्स हिनीय रूप-रण्या भी निद्व है। जाता है

स्तीय रूप-(शहा=) राण्य म स्"-मंद्रया १११ से मूल संस्तृत हाइ 'शहन में स्थलय हलन्त व्यक्षत्र 'नृ'का लोव, ११७० में 'ज्' का होव, २-१८ से ब्राव्यात 'राफ्त' में स्थित ' 'सा' के स्थान पर 'सामे स्तीया विभावत के एक्ज्यत्र का प्रायय रहा हुआ होते से 'व' का स्तीर १-६ से प्राव्यात 'राण' में स्तीया विभावत के एक्ज्यत्र में मस्तीय ब्राव्यय वायय दा क पर 'ल' प्रयय को ब्रास्त्र होकर सुनाय रूप साव्य सिद्ध हो जाता है।

'पण' रूप की मिद्धि सूत्र-सन्या १-३न्ड में की गई है। ॥ ३-८६॥

राजन् शब्द समन्विनी जकारस्य स्थाने खी-खा-टिल परेषु इकारे वा ममिता। राडखो चिट्ठन्ति पेच्छ छागछो धण वा ॥ राइखा कय । राडम्मि । पत्ते । रायाखो । रण्यो । रायखा । राष्ट्य । राषम्मि ॥

अर्थ —सरकृत राहर 'राजन' के शकृत कपान्तर में (प्रथमा बंहु पनन में, दिनीया नहु रयन में, प्रथमी पक्षयन में और पच्छी एक प्रचन में प्राप्तच्य प्रत्यय) णो, (हतीया एक वचन में प्राप्तच्य प्रत्यय) णो और सप्तमी यिभक्ति के एक वचन में प्राप्तच्य प्रत्यय कि' के स्थानीय रूप 'निम' परे रहने पर (मूल अरुत शब्द 'राजन' में रियत) 'ज' के स्थान पर वक लिपक रूप से 'इ' को प्राप्ति होती है। जैसे — ताजान निष्ठित न्यार्शण चिट्ठित व्यर्थात् राजा गर्ण ठहरे हुण हैं। राज्ञ परय-राइणो पेष्ठ व्यर्थात् ताजा भों को देखो। राज्ञ व्यागत् राजा गर्ण ठहरे हुण हैं। राज्ञ परय-राइणो पेष्ठ व्यर्थात् ताजा भों को देखो। राज्ञ व्यागत् राजा भाग व्यव्यात् राजा का घन। इन वदाहरणों से विदित होता है कि प्रथमा द्वितीया के वहु रचन में और पन्यभी पष्ठा के एक यनन के प्राप्तच्य पर्याप 'खो' के पूर्व में राजन् रावद में स्थित 'ज' के स्थान पर 'इ' की ब्यादेश प्राप्ति हुई है। 'खा' प्रत्यय का चदाहरण इस प्रकार है — राज्ञा छत्तन्-राइणा कय व्यर्थात् राजा से क्या हुवा है। इमी प्रकार से 'जि प्रत्यय के स्थानीय रूप 'मिन' का चदाहरण इस प्रकार है — राज्ञित व्यव्यक्त में स्थान पर 'खा के प्रवचन में और सप्तमी के एक वचन में सो पार्त (खा' प्रत्यय और 'निम' प्रत्यय के पूर्व में 'राजन' शब्द में थित 'ज' के स्थान पर 'इ' की ब्यदिश प्राप्ति नहीं होगी, वहा राजन् राबद के स्थान पर 'इ' की ब्यान् पर 'इ' की ब्यान् पर 'इ' की ब्यान् पर 'इ' का वदाहरण विभाति हीं होगी, वहा राजन् राबद के स्थान पर 'इ' का वदाहरण विभाति हीं होगी, वहा राजन् राबद के स्थान पर 'इ' व्यादेश प्रिति नहीं होगी, वहा राजन् राबद के स्थान पर 'इ' व्यादेश प्रिति नहीं होगी, वहा राजन् राबद के स्थान पर 'इ' व्यादेश प्रिति नहीं होगी, वहा राजन् राबद के स्थान पर 'इ' व्यादेश विभाति विभाति विभाति विभाति विभाति विभाति हों होगी स्थान पर 'इ' व्यादेश प्रिति नहीं होगी, वहा राजन् राबद के स्थान पर 'इ' व्यादेश विभाति हों हो स्थान पर 'इ' व्यादेश का विभाति विभाति

राजान = शवाणो अर्थात राजा गण। राज्ञ = रायाणो अर्थात राजाओं को। राज्ञ = रवणो अर्थात् राजाक्रमे। राज्ञ = रवणो अर्थात राजा का। राज्ञा=गयणा अर्थना रावण अर्थात् राजा द्वारा या राजा से। राज्ञि या राजित=रायिम अर्थात् राजा म अर्थवा राजा पर। इत उराहरणो में यह प्रदेशित किया गया है कि 'णो', णा' और मिम' प्रत्यों क प्राप्त होने पर भी वेंद्रत्यिक पन्न होने से 'राजन्' शन्द में थ्यित ज' के स्थान पर 'इ' की प्राप्ति नहीं हुई है। यों युक्ति में विशित शब्द 'इकारी वा' का कर्य जानना।

राजान सम्हत प्रयमान्त यष्ट्रविचन का रूप है। इसका प्राञ्चत रूप राइणो होता है । इममें 'राह' श्रीम की प्राप्ति सून सम्या ३ १० में वर्णित नायनिका क खनुसार खीर तत्वरचात सून सत्या ३ २२ से प्रयमा विभक्ति के यहुनचन में सम्हतीय प्राप्तव्य प्रायय 'जस्' के स्थान पर ने रिन्य रूप से 'णो' प्रायय की प्राप्ति होकर राइणों सिद्ध हो जाता है।

राहा संस्कृत हिर्मायान्त बहुत्रचन का रुप्है। इसका प्राष्ट्रत रूप राहणो होताहै। सं प्रयोगक रीति से हा सूत्र-सख्या ३ ४० और ३ २२ स साधितका की प्राप्ति होकर राहणो स्प्रान हो जाता है।

राहणो प्यस्यात एनव्यन और प्रत्यन्त प्रश्चन रूप है। इतकी सिद्धि सुन्नाणा । १००६ की जा सुकी है।

धिहान्त रूप को मिढि सूत्र मख्या है है। वेच्छ रूप को सिढि सूत्र सख्या १-हे में की गई है। वागभी रूप की सिढि सूत्र सख्या १-हे में की गई है। वागभी रूप की सिढि सूत्र संख्या है ५० में की गई है। क्या रूप की सिढि सूत्र संख्या है ५० में की गई है। क्या रूप की सिढि सूत्र संख्या १-हे में की गई है। याइण। रूप की सिढि सूत्र संख्या १-५१ में गई है। 'क्या रूप की सिढि सूत्र संख्या है-५१ में गई है।

राश्चि स्थया राजानि सस्टत नगर्यन्त एक्यचन का रूप है। इसके प्राक्टन रूप राहरिन हैं । इसमें से प्रयम रूप में 'राइ 'अंग की प्राप्ति सूत्र संख्या ३-१८० में वर्जिन सार्यन्त क प्यापार और तत्वर्यात सूत्र संख्या ३-११ स सप्तर्मा विभावत के वक्यचन में संख्ठाय प्राप्ति प्रयय 'व = इ क स्थान पर प्राप्तत में बैक्टियक रूप से 'रिन' प्रत्यव की प्राप्ति होकर प्रयम ह राइस्मि निद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप (राशि व्ययवा राजिन्) रायम्मि म 'राय' व्यंग की प्राप्ति सूत्र-संग्या रेश्ने वर्णित माधितका प व्यवसार कीर सरवरवात सूत्र-संख्या र ११ से प्रथम रूप के समान ही कि प्रावय की माध्या होकर दिनीय रूप रायम्मि भी सिद्ध हो जाता है।

'रायाणी (भवता त द्विनीयान्त रूप) श्री सिद्धि सूत्र नंगया है ५० में की गई है।

रण्यो रूप थी मिद्धि मुझ मन्या है ५० में शी गई है।

राह्म संद्रम स्वीवारम एकवचा का रूप है। इसक प्रास्त्र रूप रावणा और रावण ही है इसमें में प्रथम रूप में राव खान की शांकि सूच मस्या ३ ४० में वर्षित सायतिका के खतुनार ही रूपराचान सूच मन्त्रया दे १६ में सूबीया विमर्तित के पढ़त्रया में संहर्नीय प्रथम दी के स्वाव के द्राकृत में 'ला' प्राप्य की प्राप्ति हो कर वसम रूप रायणा निद्ध ने जाना है। (द्वितीय रूप-) राएण-की सिद्धि सूत्र सख्या है ॰ १ में की गई है । ॥ ३-४२ ॥

इर्णममामा ॥ ३-५३ ॥

राजन् शब्दं संविन्धनो जकारस्य व्यमाम्भ्यां सहितस्य स्थाने इसम् इत्यादेशो वा भगति ॥ राइस पेच्छ । राइस धर्म । पचे । राय । राईस ॥

अर्थ —सस्कृत शब्द 'राजन' के प्राकृत रूपांनतर में हितीया विभक्ति के एकवचन का प्रत्यय 'छम्' श्रीर पर्छा विभक्ति के बहुवचन का प्रत्यय 'छम्' श्रीर पर्छा विभक्ति के बहुवचन का प्रत्यय 'छम्' प्राप्त होने पर मूल शब्दाय 'ज' ध्यञ्जन सिहित उपरोक्त प्राप्त प्रत्यय के स्थान पर वैकित्यक रूप से 'इण' ध्यादेश की प्राप्ति हुन्या करती है। सार्थ्यय ह है कि प्राकृत रूपान्तर में 'ज' श्रीद उपरोक्त प्रत्यय इन होनों के स्थान पर 'इए' खादेश धेकित्यक रूप से हुन्या करता है। जैसे —राजानम् परय=राइएं (अथवा राय) पेच्छ, यह चपरोक्त विधानानुतार द्वितीया विभक्ति के एकवचन का खदाहरण हुन्या। पर्छी विभक्ति के बहुवचन का खदाहरण इस प्रकार है —राज्ञाम् धनम्=राइए (अथवा राईए या रायाण) धए। वैकित्यक पत्त होने से पत्तान्तर म द्विताया विमक्ति के एक्यचन में राइए के स्थान पर राय जानना चाहिये श्रीर पट्छी विमक्ति के बहुवचन में राइए के स्थान पर राईए श्रथवा रायाण जानना चाहिये।

राजानम् संस्कृत द्वितीयान्त एकवचन का रूप है। इसके प्राक्तत रूप राहणं खीर राय होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सुत्र सख्या १-११ से मृत संस्कृत शब्द 'राजन' में स्थित खन्त्य हलन्त व्यव्जन 'न्' का लोप श्रीर २ ४२ में द्विताया विभक्तित के एकवचन में संस्कृतीय प्रत्यय 'खम्' सहित पूर्वस्य 'ख' स्पन्नत के स्थान पर प्राकृत में 'हर्णं' श्रादेश की प्राप्ति होकर प्रथम रूप राइणं सिद्ध हो जाता है।

हिनीय रूप (राजानम्=) रार्य में सूत्र सख्या १-११ से मूल सस्क्रल राष्ट्र 'राजन्' में स्थित श्रान्त्व इसन्त व्यासन न्' पा कोष, १-१७० से ज्' का लोष, १-१८० से लोप हुए 'ज्' के परचात् रोप रहें हुए 'ख' के स्थान पर 'य' की प्राप्ति, ३ ५ से हितीया विमक्ति के एकवचन में सस्कृतीय प्रत्यय श्रम् के स्थान पर प्राप्तत में 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति श्रीर १-२३ से प्राप्त प्रत्यय 'म' के स्थान पर श्रमुखार की प्राप्ति होकर हितीय रूप राष्ट्र सिद्ध हो जाता है।

पेच्छ रूप की सिद्धि सुत्र सल्या १-२३ में की गई है।

राज्ञाम् संस्थत पष्ठी बहुवधनान्त का रूप ई। इसके प्राकृत रूप राइण छोर राईण होते हैं। इनमें से प्रथम रूप म सून मटया १११ से मूल सरकृत शहर 'राजन्' में स्थित धान्त्य हनन्त व्यञ्जन 'न्' का लोव धौर २-४२ से पष्ठी विभक्ति के बहुन्चन में संस्कृतीय प्रत्यय 'खाम्' सहित पूर्वस्य 'अ' व्यञ्जन के स्थान पर प्राकृत में 'इण' खादेश की प्राप्ति होकर प्रथम रूप राइण' सिद्ध हो जाता है। हितीय रूप (राज्ञाम्=) राईण में सूत्र सख्या १ ११ से मूल सस्कृत राघ्य 'राज्ञत्' में क्षित्र अन्त्य हल्न्य उपक्षन 'न्,' का लोग, ३-४४ से 'ज' के स्थान पर 'आगे पूट्टी विभक्ति का बहुवचन शक्ष प्रत्यय 'आग्' रहा हुआ। होने से हैं की प्रात्ति, १३-६ से पट्टी विभक्ति के बहुवचन में सहक्ष प्रात्तक्य प्रत्यय 'आग्' के स्थान पर प्राकृत में 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति और १ ३० से प्राप्त प्रत्यय 'प पर आज्ञत्वारंबार की माप्ति होनर हितीय रूप राईण भी किस हो जाता है।'

धण रूप की सिद्धि सूत्र सटया है ५० में की गई है ।

ईर्द्भिस्भ्यसाम्सुपि ॥ ३--५४ ॥

राजन् शस्य सबन्धिनो जकारस्य मिसादिषु परतो वा ईकारो मनति॥ मिश् राईहि ॥ भूयस् । राईहि । राईहिन्तो । राई सुन्तो ॥ श्राम् । राईखं ॥ सुर् । राईसु । प्वे रायागोहि । इत्यादि ।

् अर्थ —सस्कृत शब्द 'राजन्' के प्राकृत रूपान्तर में तृतीया विमक्ति के बहुवचन का प्रस्थ पचमी पक्ती विमक्ति क बहुवचन का प्रस्यय और सप्तमी विमक्ति के बहुवचन का प्रस्यय परे रहने भा मूल शब्द 'राजन्' में स्थित 'ज' व्याजन के स्थान पर 'बंकिन्पक रूप से दीघ 'ई' की प्राप्ति हुचा कर्ति है। जैसे —'मिस्' प्रत्यय का च्दाहरण —राजमि =राईहि स्रयया पज्ञान्तर में रायाणिहि, स्वस् प्रस्य के चदाहरण —राजस्य =राईहि, राईहिन्तो, राईसुन्तो स्थया पज्ञान्तर में रायाणिहि, गयाणिहिन्ती, रायाणामुन्तो, इत्यादि। 'क्षाम्' प्रस्यय का च्दाहरण —राज्ञाम=राईण स्थया पज्ञान्तर में रायाण श्रीर 'सुप' प्रस्यय का च्दाहरण — राजसु=राईस स्थया पज्ञान्तर में रायाणेसु होता है।

राजिभः सरहत त्तीयान्त बहुयचन का रूप है। इसके प्राइत रूप राईहि और रायायेहि होते हैं। इतसे से प्रथम रूप में सून-सम्या १-११ से मृत सम्युत शब्द रावद 'राजन्' में स्थित धन्त्य हतान्त व्याउन 'न्' का तोष, ३ ५४ से 'ज' के स्थान पर वैकल्पिक रूप से दोर्घ ई' की प्राप्ति, और ३-७ में त्तीया विभक्ति के बहुयचन में सम्यतीय प्राप्तव्य प्रस्त के स्थान पर प्राकृत में 'हि' प्रस्पत्र की प्राप्ति होकर प्रथम रूप राईहि सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप (राजिम) = रायाणेहि में सूज सत्या १-१७० से मूल मंग्ठत शब्द 'राजन' में रियत 'ब्' का लोप, १-१०० से लोप हुण 'ज' के परचात शेष २ हे हुण 'ख' के स्थान पर 'ब' की प्राप्ति ३ ४६ से प्राप्तांग 'रायाग' में रियत खात्य ख्वयंथ 'खम,' के पर 'खाण' खादेश प्राप्ति, तत्यश्चार ३-१५ से प्राप्तांग 'रायाण' में रियत खात्य म्बर 'ख' के विशेष बहुवचन बोध ह उत्यय रहा हुखा होने से' 'ए' की प्राप्ति और जन म सस्कृतीय प्रत्यय 'भिम' के स्थान पर प्राकृत में 'हि' प्रत्यय की

राजस्य सरकृत पञ्चस्यन्त बहुवचन रूप है। इसके प्राकृत रूप राईहि, राईहिन्ती श्रीर राई-सुन्ती होते हैं। इनमें मूत्र सल्य, १-११ से मूत सन्द्रन शब्द 'राजन' में स्थित ख्रान्य हत्तन्त व्यञ्जन 'न' का लाप, ३ ८४ से 'ज' के स्थान पर (वैकल्पिक रूप से,-रोर्घ 'ई की शाप्ति और ३ ६ से पचमा विभक्ति के बहुवचन में संस्कृतीय प्रत्यय 'भ्यम्' के स्थान पर प्राकृत में कम से 'हि हिन्ती सुन्ती 'प्रत्ययो की प्राप्ति होकर राईहि, राईहिन्ती और राईसन्तो खप सिद्ध हो जाते हैं।

राईण रूप का सिदि सत्र सख्या ३ ५३ में को गई है।

राजमु सस्कृत सप्तम्यन्त बहुवचन रूप है। इपका प्रोकृत रूप राईसु होना है। इसमें 'राई' श्चग की माध्ति इसी सूत्र में वर्णित उपरोक्त विधि-अनुसार तत्वश्चात् सूत्र सख्या ४४४८ से सप्तमी विमक्ति के बहुवचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य पत्यय 'सु' की प्राकृत में भी प्राप्ति होकर राईन रूप लिख हो जाता है। ३ ४४ ॥

च्याजस्य टा–डसि–डस्सु सणाणोष्वण् ॥ ३-५५ **॥**

राजन शब्द समन्धिन आज इत्यवयास्य टाडसिडस्मु गा गी इत्यादेशापन्नेपु परेषु अण् वा नरति ॥ रएणा राइणा कय । रगणो राइणो आगश्रो घण वा । टा ङति ङस्स्विति किम्। रायायो चिद्वन्ति पंच्छ ना ॥ सणायोष्टिति किम्। राष्ण् । रायाश्रो । रायस्स ।

अर्थ -संस्कृत शब्द 'राजन्' के प्राकृत रूपान्तर में वृतीया विमक्ति के एकवचनीय संस्कृत मत्यय 'दा' के स्थान पर सूत्र सख्या ३ ४१ से प्राप्तव्य 'णा' प्रत्यय परे रहने पर तथा प्रयमा विमक्ति फे एकवचनीय सम्कृत प्रत्यय 'इसि = घस' श्रीर पष्ठी विमक्ति के एकवचनीय मंस्कृत प्रत्यय 'इस=घस' फेंस्थान पर प्राकृत में सूत्र सख्या ३-८० से प्राप्तत्य 'जी प्रत्यय परें रहते पर एव सूत्र सच्या १११ से 'राजन' वे अन्त्य 'नु' का लोप हो जाने पर शोप नहे हुए हुए 'राज' के अन्त्य अवयव रूप 'आज' के स्यान पर चैकल्पिक रूप से 'श्रण्' आदेश की प्राप्ति हुआ करती है। राझा छनम्=रण्णा कय अथवा राइणा कय अर्थात राजा से किया गया है। राझ आगन =रएणी आगओ अथवा राइणी धानधो अर्थात राजा से आया हुआ है। पष्ठी विभक्ति के एकप्रान का उदाहरण इस प्रकार है -राज्ञ धनम्=रण्णो पण अथा राइणो पण अर्थात् राजा का धन (है)।यों 'श्रण्' श्रादेश प्राप्ति की वैकल्पिक स्थिति समम लेती चाहिये।

मरन - मूल सूत्र में 'टा-इमि-इम्' का उन्तेल क्यों किया गया है १

उत्तर - संस्कृत शब्द 'राजन' के प्राकृत √ब्वान्तर में 'त्राज्' श्राययव के स्वान पर (श्रावेश) की प्राप्ति उसी श्रवस्था म होती है, जब कि 'टा' श्रथना 'इसि' श्रथवा इस्' प्रत्यों में न कोई एक प्रत्यय रहा हुआ हो, श्रन्यथा नहीं। जैस - राजान तिष्ठन्ति = रायाणी विद्रन्ति, स उदाहरण प्रथमान्त बहुत्रचन वाला है और इसमें 'टा' श्रथवा 'इसि' श्रथवा 'हम्' प्रस्वय का श्रमावर्ग इमी कारण से इसमें 'राजन' के अवयव 'आज' के स्थान पर 'अल आदेश प्राप्ति का मी धमावहै। दमरा उदाहरण इस प्रकार है - नाझ परय=रायाणा पेन्छ अर्थात राजाको वा देखी, यह उराहार द्वितीयान्त बहुनचन वाला है श्रीर इसमें भी 'टा' अथवा 'क्र स' अथवा 'क्रस' प्रत्यय का स्रभाव है। इसी कारण से इममें 'राजन' के खबयब 'आप' के स्थान पर 'खण खानेश-पादित का भी धमाव है। इस विवचन से यह प्रमाणित होता है कि 'टा'='एा', 'ङिम'='ए।' श्रीर 'इस'='णो प्रस्य का सर भाव होने पर ही राचन' के 'श्राज' श्रवयन क स्थान पर 'श्रग्र (श्रादेश) की प्राप्ति पैनेनिक ह प से होती है श्रीर इमी लिये मृत सुत्र में 'टा छ मि डम' को उत्तर्ख किया गया है ।

परन - मूल सूत्र में 'णा' और 'णी' का उल्लेख क्यों विया गया है।

उत्तर - सहरूत शब्द 'राजन्' के शक्त रूपान्तर में तृतीया विभक्ति के एकपचन में वर मूत्र सरुया ३ ५१ के श्रतुमार 'टा' प्रत्यय के स्थान पर णा' प्रत्यय की (श्राटेश) प्राप्ति होकर सूत्र ^{स्ट्रा} रे-६ के व्यनुसार 'टा' प्रत्यय के स्थान पर 'ण' प्रत्यय की प्राप्ति होती है, तब 'राजन' शरद के 'बार्ड अवयव के स्थान पर 'अण' आदेश प्राप्त नहीं होतो । जैमे —राज्ञा = राज्ण अर्थात् राजा मे । क्षी पकार से इसी 'राजन' शब्द के प्राक्तन क्यान्तर में पचमी विमक्ति के एकपचन मंजव सप्र सख्या रे^प के श्रजुनार 'इमि' प्रत्यय के स्थान पर 'खो' प्रत्यय की (प्रादेश) प्राप्ति नहीं ही कर सूत्र सख्या रे के अनुमार 'डिमि' प्रत्यय के स्थान पर 'दो = श्री, टु= र, रि, हिन्तों लुक् प्रत्यय की प्रास्ति होंगे हैं। तब 'राजन' शन्द व 'त्राज' श्रवयक के स्थान पर 'बण् (खान्नेश) की शास्ति नहीं होती हैं। जैसे -राहा = रायाश्रो श्रथात गाना से, इन्यादि। यही मिद्धान्त पष्ठी निभन्ति के एक्वचन के लिया समभना चाहिये, तदनुमार जब 'राजन शड़्ट के पोद्धन रूपान्तर म ,धष्ठी-विमक्ति के एकवधन म मा सत्या ३ ५० के श्रतुनार 'ङस' प्रस्यय को स्थान पर 'लो' प्रत्यय की (श्रादश) प्राप्ति नहीं हो^{डा} मन सरमा ३ १० के प्रतुवार इन प्रत्यय के स्थान पर 'स्व' श्रत्यय का शान्ति होती है, तम 'स्विन शब्द के 'झान' अपयत के स्थान पर 'खण' (खादेश) की पारित नहीं होती हैं। जैसे -राह =राया व्यर्शीत राजा का। इन प्रशार उपरोक्त विदेवन से यह जात होता है कि जब 'टा' के स्थान पर 'वा चौर हिम नियवा 'हम' के खान पर 'लो' की प्राप्ति होती हैं; तभी 'राजन ' के 'आज' श्रवयण ह स्थान पर 'अए आन्दा प्राप्ति होती है, अन्यथा नहीं। इसी लिये मूल सुत्र म 'खा' और 'णो' ह एक्लेख करना पड़ा है।

'रण्णा' श्रीर 'राइणा' रूवा की मिद्धि सूत्र सख्या है पर में की गई है।

कथे' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ १२६ में की गई है।

'शंगों' श्रीर 'राइणों' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ३ ५० में की गई है।

'शाम की' रूप की सिद्धि सूत्र मख्या १ -२०९ में की गई है।

'धण' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ ५० में की गई है।

'एषणों' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ ५० में की गई है।

'एषणों' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ ५० में की गई है।

'खेड़िन्न' (किया पर) रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ १२ में की गई है।

'एंडड़े' (किया पर) रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ १३ में की गई है।

'एंडड़े' (किया पर) रूप की सिद्धि सूत्र सुत्र सुत्र गई है।

'एएण' रूप की सिद्धि सूत्र सुख्या ३ ०१ में की गई है।

'राया की' 'रायम्स' रूपों की सिद्धि सूत्र सुद्ध्या ३ ५० में की गई है।

पुंस्यन याणो राजवच्च ॥ ३-५६ ॥

स्रद्धार्थो । स्रद्धा ॥ श्वन् । सायो । सा । सुकर्मशः पश्य ॥ सुकम्मार्थे पेन्छ्र । सिस् सो सुकम्मार्थे । पश्यति कथ संसुकर्मशः ॥ पुंसीति किम् । शर्म । सम्मं ॥

अर्थ —जो सस्कृत शब्द पुल्लिंग होते हुए 'श्रन' श्रन्त वाले हैं, उनके प्राकृत रूपान्तर 'श्रन' श्रवयव के स्थान पर चैकल्पिक रूप से 'श्राण' (श्रादेश) की प्राप्ति होती है। ै े ं होने से जहां खन के स्थान पर 'आण आदेश की प्रोप्ति नहीं होगी, वहां चन शर्दा की 🖟 बोधक-रूपावर्ला 'राज' शब्द के समान उपगेक्त सूत्रों से वर्णित विधि विधानानुमार होगी -के स्थान पर 'श्राण' (श्रादेश) प्राप्ति होने पर वे शङ् 'श्रकारान्न' शङ्ों की श्रेणी म^{ेप्रविष्ठ}। जायगे। ख्रीर चनकी विमक्ति बोधक रूपावली 'जिण' ख्रादि शब्दों के ख्रतुरूप हो निर्मित हा^{ने} तथा उनमें 'श्रत से डों' (३-२) श्रादि समी सूत्र वे ही प्रयुक्त होंगे, जो कि 'जिण' शब्दों में प्रयुक्त होते हें। वैकल्पिक-पत्त में 'द्यन्' के स्थान पर 'द्याण' (व्यादेश) की प्राप्ति नहीं हीन 'राज' के समान ही विभक्ति-बोधक रूपात्रिल होने के कारण से उनमें 'जन शस अमिन्डसी' है (३ ४०), 'टो-णा'-(३-२४) श्रीर 'इणममामा' (३-५३) इत्यादि सूत्रों का प्रयोग होगा। इस थ्यन् थ्रन्त वाले पुल्लिंग शस्त्रों की विमन्ति बोधक रूपाविल दो प्रकार से होती हैं, प्रथम प्रकार 'खन्' के स्थान पर 'खाएा' (खादेश) की प्राप्ति होने पर 'खकारान्त' शब्दों के समान ही -निर्मित होगी श्रीर द्वितीय प्रकार में 'आए' आदश प्राप्ति का श्रमाव होने पर उनकी स्वाबति 'राज शब्द में प्रयुक्त किये जाने वाले सूत्री के अनुसार ही होगी। यह सूद्दम भेद प्यान में रखना वाहि अब यहा पर सर्व प्रथम 'अन्' अन्त वाले 'आत्मन्' शब्द में 'अन्' अपयव के स्थान पर आ आदेश प्राप्ति का विधान करके इसकी 'अकारान्त' स्वरूप प्रदान करते हुए जिए। आदि अकारान -राष्ट्रों के समान ही उक्त 'आत्मन् = अप्पाण' की विभक्तिबोधक रूपावित का उक्तल कि

वाता है।

प्रस्वयन यहुवयन
प्रथमा--(बात्मा=) ष्रप्पाणाः (ब्रात्मान=) ष्रप्पाणाः ।
विर्ताया--(ष्रात्मानम्-) श्रप्पाणे-। (श्रात्मन=) ष्रप्पाणः ।
प्रतीया--(ष्रात्मना=) श्रप्पाणेखः । (श्रात्म=) श्रप्पाणाधः ।
पदी--(श्रात्मन=) श्रप्पाणासः । (श्रात्मन=) श्रप्पाणामः ।
सममो--(श्रात्मन=) श्रप्पाणासः । (श्रात्मन=) श्रप्पाणामः ।
सममो--(श्रात्मन=) श्रप्पाणिसः ।

समास श्रवस्था में 'श्रारमन् = श्राप्पाण' में रहे हुए त्रिमहित बोधक प्रथयों का लोप हा वार है। सैसे —श्रासम-कृतम् =श्राप्पाण-कय अर्थात् खुद से-स्त्रय अपने से श्रथमा आरमा से क्या हुँ

प्रयमा विभक्ति के एकववन का उदाहरण — आत्मा = अप्पा और अप्पो । सबोधन के शक्ववन का उदाहरण —हे आत्मन् = हे अप्पा । और हे अप्पा । प्रयमा विभक्ति के बहुववन का श्वाहरण —हे आत्मन् = हे अप्पा । और हे अप्पा । प्रयमा विभक्ति के बहुववन का श्वाहरण —आत्मान तिष्ठिन्ति = अप्पाणो चिट्ठन्ति इस उदाहरण में 'आत्मन् = अप्पा में सूत्र त्रख्या ३ ४० के अनुसार प्रथमा विभिन्ति के बहुववन में 'णो' प्रत्यय की प्राप्ति हुई है। द्वितीया वेमिक्त के बहुववन का उदाहरण —आत्मन पर्य = अप्पाणो पेश्व अर्थात् अपने आपको (आत्म- प्रणो को) देखा। इस उदाहरण में भी 'आत्मन् = अप्प' थांग में सूत्र सख्या ३-४० के अनुमार ही द्वितीया विभक्ति के बहुववन में 'णो' प्रत्यय की प्राप्ति हुई है।

श्चन्य विभक्तियों में 'श्चात्मन् ≕श्रप्प' के रूप इस प्रकार होते हैं —

विमक्ति नाम एकवधन
च्हीया—(बास्मना ≈) खप्पणा ।
पचमी—(बास्मन =) खप्पाणो, खप्पाक्षो,
खप्पाव, खप्पाहि, झप्पाहिन्तो, झप्पा ।
पर्धी—(बास्मन धनम् =) खप्पणो धण ।
सममी—(बास्मनि =) खप्पे ।

बहुवचन (धारमभि =) घरपेहि । (धारमध्य =) घरपासुन्तो इत्यादि । (धारमनाम् =) घरपाण । (धारमसु =) घरपेसु ।

उपरोक्त उदाहरणों से यह प्रमाणित होता है कि अन् अन्त वाले 'पुल्लिंग शब्ने' अवत् अवपा के स्थान पर 'आय' आदेश की प्राप्ति के अभाव में विभक्ति (बोधक) ठार्य की प्रयुक्ति सूत्र सख्या ३ ४६ से प्रारम्भ करके सूत्र-सख्या ३-४५ तक में वर्णित विधि विधान के खनुमार होती है, इमी सिद्धान्त को इसी सूत्र में 'राजवम्' शब्द का सूत्र रूप से उक्लेल करके प्रदर्शित किया गया है।

इसा प्रकार से 'राजन्' राध्य भी पुल्लिंग होता हुआ अन्' बन्त वाला है, तन्तुमार मूत्र सख्या इ-५६ के विधान से 'अन्' अवयव के स्थान पर प्राष्ट्रत-रूपान्तर में वैकल्पिक रूप से 'आण' आदेश की प्राप्ति हुआ करतो है और ऐमा होने पर 'राजन् = रायाण' रूप आकागन्त हो जाता है, तथा अकागन्त होने पर इसकी विभक्ति बोधक कार्य को प्रश्वति 'जिण' आदि आकागन्त हार्ट्स के अनुमार होतो है। बैकल्पिक पत्त होने से जब सूत्र सत्या २४. के अनुमार प्राप्तन्य 'अन्' के स्थान पर 'आण् ब्यादेश प्राप्ति का स्त्रभाव होगा, तब इनकी विभक्ति (बोधक) कार्य की प्रवृक्ति मूत्र सत्या ३ % स

व्यादरा प्राप्त का व्यमान हाना, तब इसका विस्तिक्त (बीधि निधान के व्यनुपार होतो है। इस महत्तर्र प्रारम्भ करके सूत्र सख्या ३-४४ तक में बर्णित विधि निधान के व्यनुपार होतो है। इस महतर्र स्थिति को सदैव ध्यान में रखना चाहिये।

श्रव 'राजन =रायाण' रूप की विमिन्नत वोषक कार्य की प्रवृत्ति नीचे लिखी जाती है — विमिन्नत नाम एकवचन बहुवचन प्रथमा—(राजा =) रायाणो । (राजान =) रायाणा । द्वितीया—(राजानम् =) रायाणे । (राज्ञा> रायाणे । एतीया—(राज्ञा =) रायाणे । (राज्ञा> रायाणे हिं। प्रवृत्ती —(राज्ञा =) रायाणाहिन्तो (राज्ञा> रायाणोद्वन्तो ।

इत्यादि। इत्यादि।)

पर्व्ही—(राह्म =) रायाग्रस्स । (राह्म म् =) रायाणाण ।

सप्तमी—(राग्नि =) रावाणिमा । (राजसु =) रावाणेसु । रोप रूपों की स्थिति 'जिए।' श्वादि श्रकारोन्त रास्त्रों के श्रेतुसार जानना चाहिये। वैकीस

पत्त होने से 'राजा≂राया' ष्राटि रूपों की स्थिति मृत्र संख्या २ ४८ से प्रारम्म करके सत्र-सखा २-४५ के ब्रमुसार स्वयमेव जान ज़ेना चाहिये । कुछ 'श्रन' श्रन्त वाले पुक्लिंग शर्रों का महत्त् रूपान्तर मामान्य श्रवबोधन हेतु नीचे लिखा जा रहा है —

युवन = जुवाख, तर्तुमार प्रथमा जिमिक्त के एकवचन का बदाहरण — गुवा = जुवाखे, इत्यादि । समास भवस्था में विभिन्त (भोषक) प्रत्ययों का लोग हो जाता है, तद्तुसार इसका उराहरण इस प्रकार है — युवा-जन = जुजाण जाजो । वैकल्पिक पत्त होने से युवन 'राध्य के प्रथमा विभिन्त के प्रथम में सूत्र सख्या दे-५६ के विधान से 'जुब्रा रूप भो होता है । ब्रह्मन राध्य के प्रथमा विभिन्त के एकवान में सूत्र सख्या दे-५६ के विधान से 'जुब्रा रूप भो होता है । ब्रह्मन राध्य के प्रथमा विभिन्त के एकवान में सूत्र सख्या दे-५६ कीर दे ५६ के विधान से कम से एवं वैकल्पिक रूप से (ब्रह्मा) बन्हाज स्थाया चम्हा रूप होते हैं।

सम्ब्रत राष्ट्र 'अध्यन, 'जन्नन', मावन्ं, 'पूपन्', 'तन्नन्', 'पूर्पन', श्रीर 'रवन्' इत्वादि पु^{हिंहा} होते हुए 'अन् श्रात वाले हैं, तदनुमार इन राज्यों के 'श्रथमा 'विभावत के एकवचन में सूत्र संख्या ^{हे ही} श्रीर ३ ४६ के विधान सं त्रम से एवं वैकल्पिक रूप से वो वो रूप निम्न प्रकार से होते हैं ---

श्रम्बा = श्रद्धाणा श्रोर श्रद्धा। दना = दरक्षाणो श्रीर तस्क्षा। प्राथा = गावाणो श्रीर गा^{वा} पूपा = पूनाणो श्रीर पूमा। तसा = तक्षाणो श्रीर तस्का। पूर्षा = मुखाणो श्रीर गुद्धा। स्वा = सीण श्रीर मा। शेष विभक्तियों के रूपों की स्थिति 'श्रास्मा = श्रप्थाण क ममान जान लेना चार्स्य। श्र प्रकार यह सिद्धान्त निश्चित हुष्मा कि 'खन्' अन्त वाले गुहिंतग श्रस्में क श्रन्तिम श्रवयव 'क्षन्' वं श्रियोदय हिन्दी व्याख्या सहित *

[१११

थान पर 'छ।ण' श्रादेश की श्रास्ति होकर ये शब्द श्रकांरान्त हो जाते हें श्रीर इनकी विमक्ति बोधक) कार्य की प्रदृत्ति 'ज्ञिण' श्रथवा 'वस्त्र' श्रयवा 'श्रप्पाण' के श्रनुमार होती है। उपरोक्त सद्धान्त की पुष्टि के लिय दो उदाहरण श्रीर दिय जाते हैं —

सुक्रमण पश्य – सुक्रम्माण पेच्छ अर्थात श्र्यच्छे कार्यों को देखो। इस उदाहरण में 'सुक्रमेन' १६२ 'श्रम' 'श्रम्त वाला है और इसके श्रम्' श्रवयत के स्थान पर 'श्राण' श्रादेश की प्राप्ति करके ११इत-स्थान्तर 'सुक्रम्माण' रूप का निर्माण करके द्वितीया विभीक्त के यहुवचन में 'वच्छे' के समान गून सत्या -४ श्रीर २१४ के विचान से 'सुक्रमाणे' रूप का निर्धारण किया गया हैं, जो कि स्पष्टत प्रकागन्त स्थिति का सूचक है।

दूनरा उदाहरण इन प्रकार है -

पत्र्यति कथ स सुक्रमण =िनएइ कह सो सुकृम्माणे श्रर्थात वह श्रच्छे काये। को किस प्रकार देखता है ? इस उदाहरण में भी प्रथम उदाहरण के समान ही 'सुकर्मन' शब्द की थिवि को द्वितीया विमन्ति के बहुदचन में श्रकारान्त शब्द की स्थिति के समान ही समक्ष लेना चाहिये।

प्रदम --मूल सूत्रों में मर्व प्रथम 'पु'िस' अर्थात 'पुल्लिंग में' ऐमा उल्लेख क्यों किया गया है ?
उत्तर -- अन, 'अन्त बाले शब्द पुल्लिंग मी होते हैं और नपु सक लिंग भी होते हैं, वदनुसार
इस 'अन, 'अवयव के स्थान पर प्राफ़त रूमान्तर में केवल पुल्लिंग रान्तों में ही 'आय्ा' आदेश प्राप्ति
होती है, तपु सक लिंग वाले रान्द बाहे 'अन, 'अन्त बाले मले ही हों, किन्तु उनमें 'अन 'अययब के
स्थान पर आय्ा आदेश प्राप्ति नहीं होता है, इस विशेष वास्यय को बतनाने के लिये तथा सपुर्ट्ट
इस्ते के लिये हा मूल सूत्र में सर्व-प्रथम 'पु सि अर्थात 'पुल्लिंग में' ऐमा रार्गेल्लेख करना पड़ा है।
जपु सक लिंगात्मक वदाहरण इस प्रकार है -- जैसे रार्मन रान्द के प्रथमा विभक्ति के एकवचन में
सम्कृत रूप 'शर्म का प्राफ़्त रूपान्तर 'सम्माणो' नहीं होता है। अत्वत्व 'पु मि शब्द का उल्लेख करना
सर्था न्यायाचित एव प्रसगोपित है।

आतमा सम्हत प्रथमान्त एकवचन का रूप है। इसका प्राष्ट्रत् रूप श्राव्याणा होता है। इसमें सूत्र सच्या १-८४ से ब्रादि 'ब्रा' के स्थान पर 'च' भी प्राप्ति, ३ ११ से सयुक व्यव्वत 'स्म' के स्थान पर 'च' भी प्राप्ति, ३ ११ से सयुक व्यव्वत 'स्म' के स्थान पर 'च ब्रादेश भी प्राप्ति, ३-१६ से मूल सस्कृत शर्म 'ब्रादेश भी प्राप्ति, ३-१६ से मूल सस्कृत शर्म 'ब्रादेश भी प्राप्ति, वे भी 'ब्राद्य व्यव्य के स्थान पर-(वैक्ष्तिप्त रूप से)-'ब्राण' ब्रादेश की प्राप्ति, वो 'ब्रास्मन्' के प्राप्तत स्पाप्ति से 'ब्रां भी प्राप्ति के प्रव्यवच में ब्रक्तारान्त पुल्तिना में सम्भुनीय प्राप्तव्य प्रत्यव 'सि' के स्थान पर प्राप्तत में 'ब्रो' प्रत्यव की प्राप्ति होकर 'अप्याणी रूप सिद्ध हो जाता है।

आत्मान सस्टत प्रथमान्त बहुवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप श्रप्पाणा होता है। इस 'आत्मान = श्रप्पाण' श्रम की प्राप्ति वपरोक्त विधि श्रनुसार, तत्प्रधात सूत्र सत्या ३-१८ स प्राप्ति 'श्रप्पाण' में स्थित श्रम्त्य 'श्र' की 'श्रामे प्रथमा-चहुवचन बोधक प्रस्थय का स्थिति होते से 'श्रा' हो प्राप्ति एव ३ ४ से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में श्रकारान्त पुल्लिंग में सस्हतीय प्राप्तच्य प्रस्थ 'श्र्' का प्राकृत में लोप होकर अप्याणा रूप सिद्ध हो जाता है।

आत्मानम् सस्कृत दितायान्त एकत्रयन का कर है। इमका प्राकृत रूप श्रापाण हाताई। इममें 'श्राप्तन् = थावाण' श्राप को प्राप्ति उपरोक्त विधि श्रानुसार, सत्यश्चात सूत्र सदया १ ४ स डिगीय विमक्ति के एकवचन में श्राकारान्त पुल्लिंग में सस्क्रतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'श्रम्=म्' के समान ही प्राप्तः में मी 'म्' प्रस्यय की प्राप्ति खोर १ २३ से 'म् के स्थान पर श्रानुस्वार की प्राप्ति हो कर अप्याण स्म सिद्ध हो जाता है।

आत्मम सस्कृत द्वितोयान्त बहुवचन का रूप है। इनका प्राकृत रूप व्यप्पाणे क्षेता है। इन 'व्यातमन्=व्यपाण' व्यग की प्राप्ति वपरोक्त विधि अनुमार, तत्परचात सून संख्या ३१४ से प्रा^{द्धा} 'व्यपाण' में स्थित व्यन्त्य 'व्य' को 'व्यागे द्वितीया-बहुवचन प्रत्यय की स्थिति होने स''ए' कांप्राप्ति एय ३४ से द्वितीया, विभक्ति के बहुवचन में व्यकारान्त पुल्लिंग में संस्कृतीय प्राप्तन्य प्रत्यय 'शर्ष' का प्राकृत में लीप होकर अप्याणे रूप सिद्ध हो जाता है।

ं आत्मना सम्छत नृतीवान्त एकवचन का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप श्रावाणण होता है। इसमें 'बात्मन≔व्यावाण' श्रम की प्राप्ति वपरोक्त विधि व्यनुसार, तत्वरंघात सूत्र संख्या ३१४ में प्राप्तांग 'व्यापाण' में स्थित व्यत्त्व 'बा' को 'ब्यागे नृतीया-एक-चचन बोघक प्रत्यं का मद्भाव होत्र स 'प्र' को प्राप्ति चौर ३-६ से नृतीया विभक्ति क प्रवचन में बकारान्त पुल्लिग संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रस् 'टा' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'य' प्रत्यय को प्राप्ति होकर अव्याणेण रूप सिद्ध हो जातों हैं।

भारमिम सस्टत तृतीयान्त बहुचयन का रूप है। इमका प्राफ्त रूप ख्रापाएँ हिर्ता है। इमके प्राफ्त रूप ख्रापाएँ हिर्ता है। इमके 'ख्रात्मम् =ख्रात्मण्य ख्रा की प्राप्ति उपरोक्त विधि ख्रातुमार, तरश्रवात सूत्र सत्या ११४ स प्राप्ता 'ख्रापाण' में स्थित ख्रान्स 'ख्र' के 'ख्राते तृतीया बहुचयन बोधक प्रत्यय का मद्माय होने से 'प्रां प्राप्ति ख्रीर ३-७ से तृतीय विमक्ति के बहुचयन में ख्रारान्त पुल्लिंग में सर्कृतीय प्रत्यय 'मिम्' इं स्थान पर प्राप्टत में 'हि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर अध्यानेप्ट रूप मिद्र हो जाता है।

जारमम सरकृत प्रदान्यन्त एकदचन का रूप है। इसका प्र'कुत रूप द्वापाणाओं होता है। इसमें 'खात्मम=चापाण' खंग की प्राप्ति चपरोक्त विधि घनुमार, तत्वर्घात स्⊐-सख्या ३।० त्री प्राप्तांग 'डापाण' में स्थित खन्त्य 'ख' के 'खागे पचर्मा-प्रकवचन बोधक प्रत्यय का सदुमाव होने में 'खा' की प्राप्ति चौर ३-६ में पद्मांग विमक्ति का एकपचन में खकारान्त पुल्लिंग में सस्काण प्रत्ये 'दिसि=च्रस्' के स्थान पर प्राकृत में 'खो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर सप्याणाओं क्रय सिद्ध हा जाग है।

आत्मम्य सस्कृत पञ्चम्यन्त बहुवचन का रूप है। इसका प्राप्तत रूप-अपाणासुन्तो होता है। इसमें 'खात्मन्= प्रत्याण अया को मारित उपरोक्त विधि अनुसार, तत्परवात सूत्र सख्यो ३ १३ से प्राप्तात 'श्रापाण' म स्थित श्रान्त्य 'श्रा' के 'श्राने पचमी बहुतचन बोधक-प्रत्यय का सदुमान होने से' 'श्रा' की प्राप्ति श्रीर ३ ६ से पछामी विमक्ति के बहुवचन में श्रकारान्त पुल्लिंग में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'भ्यस्' के स्थान पर प्राकृत में 'सुन्तो' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर अप्याणासुन्तो रूप सिद्ध ही जाता है।

आत्मन संस्कृत पच्छपन्त एकवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप श्रप्पाण्ध्म होता है। इसमें 'श्रात्मन् = श्रप्पाण' श्रम की प्राप्ति उपरोक्त विधि के श्रनुसार, तत्वरचात् सत्र सख्या ३ १० से पर्धी विभ[स्त के एकवचन में श्रकारान्त पुल्लिंग में सस्क्रीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'इस ≕ऋस' के स्थान पर माकत में सयकत 'हन' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर अप्पाणस्स कप सिद्ध हो जाता है।

आत्मनाम् सस्तत पण्ठपन्त बहवचनम्दप है। इसका प्राकृत रूप छापाणाण होता है। इसमें [']श्रास्मन्=ग्रप्पण श्रम की प्राप्ति उपरोक्त विवि के श्रनुसार, तत्वश्रात् सूत्र संख्या ३-१२ से नाप्ताग 'श्रप्याण' में स्थित अन्त्य 'श्रु' के स्थान पर 'श्रागे पष्ठी विमस्ति बहुवचन बोधक पत्यय का सद्भाव होने से 'श्रा की प्राप्ति श्रीर ३६ से पष्ठी विमक्ति के बहुवचन में श्रीकारान्त पुर्विलग में संस्कृतीय प्रत्यय 'आम्' के स्थान पर प्राकृत मे ण' प्रत्यय की प्राप्ति होकर अप्पाणाण रूप सिद्ध हो जाता है।

आत्मानि मस्टत सप्तम्यन्त एकयचन रूप है। इसका प्राकृत रूप अप्पाण्मिम होता है। इसमें ⁽श्चान्सन=श्चप्पास्।' श्चग की प्राप्ति उपरोक्त विधि श्रनुसार, तत्पश्चात् सूत्र-मख्या ३-११ से सप्तर्मा ⁶धिभक्ति के एक्वचन में खकाशन्त पुल्लिए में सस्कृतीय प्रस्यय 'डिन्ह' के स्थान पर प्राकृत म सयुक्त 'मिम प्रत्यय की प्राप्ति हो कर अप्याणमिम हृप सिद्ध हो जाता है।

आत्मम् संस्कृत संतरयन्त बहुवचन रूप है। इसका प्राकृत रूप श्रापाणेम होता है। इसमें ्त्रशासन=ऋष्याण' घगकी प्राप्ति उपगेक्त विधि अनुसार, तत्वरवात सूत्र सख्या ३ १५ से प्राप्तांग . अध्याण में न्यित श्रन्य 'श्र' के 'श्रागे सप्तमी विमक्ति के बहुदचन बोघक प्रत्यय का मद्माव होने से ' [ि]ण' को प्राप्ति श्रीर ४४४= से सप्तमी विमक्ति के यहुतचन में श्रकारान्त पुहिंतग में सस्टतीय प्रापटा प्रत्यय 'सु' क समान ही प्राकृत में भी 'सु' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर अप्पाणिसु सप मिद्ध ही जाता है।

आत्म कृतम् सरकृत (व्यात्मना कृतम् का समाम प्रवत्या प्राप्त) विशेषणात्मक स्व है। इनका √माशत रूप अप्पाण कय होता है। इससे 'अप्पाण' अवयन रूप जंग को प्राप्ति वपरोक्त विधि **अनुसार** , स्पीर 'कय' रूप उत्तरार्घ प्रवयत्र की साधनिका का सूत्र सख्या १-१२६ के त्रातुभार प्राप्त होकर , अप्पाण-कप रूप सिद्ध हो जाता है।

आतमा सरकृत प्रथमान्त एक नचन का रूप है। इसके प्राक्षत रूप आदा और आपा हो इसमें में प्रथम रूप 'अप्या' की सिद्धि सून-सख्या है प? में की गई है। द्वितंत्र रूप 'आपो' में १-११ से मूल सम्कृत शब्द 'आरामन्' में स्थित अन्त्य हलान्त व्यक्षन 'न' का लोग, ३ ११ से अञ्चयन के स्थान पर 'प' की आदेश प्राप्ति, २-६ से आदेश प्राप्त 'प' को द्वित 'प्य' का दि 'र्य' के दि ते 'र्यं का दि प्रथमा विमक्ति के एक वचन में (प्राप्त रूप-) आकारान्त पुल्लिंग में सम्बन्धिय प्राप्त 'र्यं स्थान पर शाक्त में 'दा = ओ' प्रयय की प्राप्ति हो कर द्विनीय रूप अप्यो सिद्ध हो जाता है।

हे आत्मनः ! सस्कृत मबोधनात्मक णक्षवन का क्रव है। इसके प्राकृत क्रव हे खला! हे खल्व ! होते हैं। इसमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या १ ८५ से मूल सस्तृत शाद 'घालव' में दीर्घ स्वर 'ग्रा' के स्थान पर हरन स्वर 'ख' की प्राप्ति ३ ५१ से सबुक व्यव्जन 'त्न' क स्थान पर की व्यावेश की शांति, २ ८६ से व्यावश शांति 'व' को द्वित्न 'रा' की प्राप्ति, १-१६ से व्याव व्यव्जन 'न्य' का लोप, और ३-८६ से (तथा ३-५६ के निर्देग से) सबीवन के एक वचन के प्राप्त प्रथम प्रयासव्य प्रस्थय 'सि' के स्थान पर प्राप्ताम 'व्यप्य' में स्थित व्यन्त्य 'ख को 'खा' की प्राप्ति का स्वर्ण हम्बद्धा ! सिद्ध हो जाती है।

द्वितीय रूप हे अप्य ! की सिद्धि मूत्र सप्या न ४९ में की गई है ।

आतमान सम्कृत प्रयमान्त बहुवचन का रूप है। इमका प्राप्टन रूप बापाणा धार्म इसमें 'बारमम्=ब्राप' श्रम की प्राप्ति चपरोचन विनि श्रमुमार, तरक्षात सून मन्या र १२ में 'ब्राप' में श्रियत व्यन्त्य 'श्र' के 'ब्रापे प्रयमा बहुवचन वाचक प्रत्यय का मद्रमाव होने में 'के की प्राप्ति ब्रीर र १० से (तथा ३-१६ के निर्देश से-) प्रथमा विमान्त के बहुवचन में पाता विमान्त के बहुवचन में पाता विमान्त के बहुवचन में पाता विमान्त के ब्राप्ति से स्थान पर प्राकृत में 'जो' प्रत्यव की प्रानि होते हैं। अञ्चलाओं स्व मिद्ध हो जाता है।

'चिष्ठन्ति' कियापद की मिद्धि मुत्र मस्या है २० म की गई है।

आस्मन सस्टन द्विनीयान्त बहुत्रवन का रूप है। इनका प्राठत रूप अप्पाणी हाती है। इसमें 'खरपा' खरा की प्राप्ति उपरोक्त पिंच 'अनुसार, तरस्थान् सूत्र मख्या १ ८० से (तथा 'भे के निर्देश से) द्वितीया विमानित के बहुवचन से प्राप्तांग 'खरपा' में सरहतीय प्रयप 'राम्' कर्गी' पर प्राप्तुत में 'रा।' प्रत्यय की प्राप्ति हो हर अप्याणों रूप सिद्ध हो जाता है।

'पेच्छ' कियापर की मिद्धि सूध सख्या १-२३ में की गई है।

आत्मना मस्कृत सुतीयान्त एकपचन का रूप ई। इनका शाकृत रूप व्यवणा होता ई ः 'व्यात्मन्=अप' व्यंत की प्राप्ति उपरोक्त विधि वसुमार, तत्पक्षान् सूप्र संस्या ३ ४१ से (स्वा ३ ५) के हिन्देश से) दुर्ताया विभक्ति के एकपचन में-सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'टा = था' के स्प्रा स हैत में 'णा' प्रत्यय की प्राप्ति होकर अप्पणा रूप सिद्ध हो जाता है।

ि अात्माभि सम्बृत तृतीयान्त बहुवचन रूप हैं। इसका प्राष्ट्रत रूप श्रूप्पेहि होता हैं। इसमें |ारमन्=श्रूप्प' द्या की प्राप्ति ववरोक्त विधि श्रृतुसार, तत्पश्चात् सूत्र सख्या ३-१४ से प्राप्ताग |प्प' में स्थित श्रम्त्य द्य' के 'द्यागे तृतीया-बहुत्रचन (बोध इ-प्रत्यय का सद्भाव होने से' 'ए' की |पि श्रीर ३ ७ से तृतीया विमक्ति के बहुत्रचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'भिस्' के स्थान पर प्राकृत |हि प्रत्यय की प्राप्ति होकर अप्लोहिं रूप सिक्ष हो जाता है।

आत्मन सत्कृत प्रवस्थान एक्चन का रूप है। इसके प्राकृत रूप व्यपायो, व्यपायों व्यप्तायों व्यप्ताय व्यप्त

शेष पाँच रूवों में प्राप्ताग 'श्रप्ता' में सूत्र सख्या ३० से पचमी विभक्ति के एकवचन में गर्रुकीय प्रस्यय 'कक्षि≃श्रस' के स्थान पर प्राक्त में क्रम से तथा वैकल्पिक रूप से दो≃शो, हु≃डा, हि, हिन्तो श्रीर (प्रत्यय) लुक' प्रत्ययों की की प्राप्ति होकर क्रम से शेष पाँच रूप 'अप्पाको, अप्पाड, क्षप्पाक अप्पाहिन्तो श्रीर अप्पा सिद्ध हो जाते हैं।

भारमस्य सस्कृत पद्धान्यन बहुवचन का रूप है। इनका प्राकृत रूप धापा सुन्नी होता है। इतमें 'क्षामन्=क्षप' धान की मारित उपरोक्त विधि ब्रमुसार, तत्वरचात सूत्र मन्या ११२ से प्राप्तीन के 'क्षप' में स्थित ब्रान्त्य 'ब्रा के ब्रानि पचमी-बहुवचन (बीचक प्रस्वय) का मदुमाव होने से' 'ब्रा' की प्राप्ति छीर १६ से पार्तान 'क्रप्ता' में ब्रम्मी विभक्ति के बहुवचन में साकृतीय प्रस्वय 'स्वत्' के स्थान पर प्राफृत में 'सुन्ते' प्रस्वय की प्राप्ति हो कर अप्यासुन्ती रूप सिद्ध हो जाता है।

कात्मन संस्कृत पष्ट्यन्त एक्वचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप व्यप्तणा होता है। इसमें 'व्यात्मन=व्यप्' क्या की प्राप्ति वयरोक्त विश्वि ब्रमुसार, त्त्यरचात सुत्र-सख्या ३-४० से (तथा ३-४६ क निर्देश से) पद्यी विभक्ति के एकवचन म सस्कृतीय प्राप्तब्य प्रस्थय 'डस्≃व्यस् के स्थान पर प्राकृत के णो' प्रायय की प्राप्ति होकर अप्यणो रूप सिक्त हो जाता है।

'धण' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ३-५० में की गई है।

आत्मनास् सस्टत पद्मधन्त बहुबबन का रूप है। इसका ब्राष्ट्रत रूप घाषाण होता है। हममें 'चात्मन्व्यप' बग की प्राप्ति उपरोक्त विधि चतुसार तत्परचात् सूत्र सत्या ३-१२ से प्राप्तांग 'श्राप' में स्थित श्रान्य 'श्रा' के 'श्रामे पर्छा-बहुतचन बाधक प्रत्यय) का सद्मान होने म'श्रा क्ष प्रास्ति और २- से प्राप्ताम 'श्रप्पा' में पष्टी विमक्ति के बहुतचन में संकृतीय प्रत्यय 'श्राम' कथा पर प्राकृत में 'स्प' प्रत्यय की प्रास्ति, एव १२७ से प्राप्त प्रत्यय स्प' पर श्रामम रूप अनुसार स प्राप्ति होकर अप्याण रूप सिद्ध हो जाता है।

आत्मानि सस्कृत सप्तम्यन्त एकवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप द्वापे होता है। इस 'ध्राहमन्=ध्राप' था। का प्राप्ति उपरोक्त निधि अनुसार, तत्परयात् सून्न सख्या ३ १९ से प्राधाः 'ख्राप' में सप्तमी विमक्ति के एकवचन म संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रन्ययं कि=इ' के स्थान पर प्राकृत में के प्रस्थयं की (आदेश-) प्राप्ति, 'है' म स्थित ह' इसहाक होने से प्राप्तीं 'ख्राप' में स्थित अन्य के प्राप्ति की इसहाहा होकर लोग एवं तत्परचात् प्राप्तींग हलन्त 'ख्राप' में पूर्वाक 'हे=ए' प्रस्थयं की प्राप्ति होकर अन्य रूप सिद्ध हो जाता है।

आतममु सस्कृत सत्तम्यन्त बहुवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप ख्रपेष्ट होता है। इसके आतमन्=क्षप्पे ख्रा की प्राप्ति खप्योक्त विधि ख्रमुसार, तत्वर्चान सूत्र सख्या ३१४ से प्राप्ती 'ख्राप्त' में रियत ख्रम्य 'ख्र' क 'ख्रागे सन्ती यहुवचन (बो रक-प्रत्यय) का सद्माव होन में 'प' का प्राप्ति खीर ४-४४८ से सन्तमी विस्तित के बहुवचन म सस्कृतीय प्रत्यय 'सु' के समान ही प्राष्ट्र में भी 'म' प्रत्येय की प्राप्ति हो कर अप्येष्ट रूप सिद्ध हा जाता है।

राजा मस्कृत प्रथमान्त एक प्रचन का रूप है। इनका प्राकृत रूप रायाणो होता है। इनके सुश्र-संख्या १-९७० से मूल संस्टृत राक्ष्य 'राजन' में स्थित 'ज्' व्यवक्रत का लोप, १ १०० से लोप हैं। 'ज' के परवात् शेष रहे हुत 'ख' के स्थान पर 'य' की प्रास्ति, २-४६ से प्रास्त रूप 'रायन' में खिन अस्त्य 'खत्' खान्य से स्थान पर 'खाण' खादरा के, प्रास्ति, खोर ३ २ से प्रथमा विमन्ति क गब्वक्त में प्रास्ता खकारान्त रूप 'रायाण' में मस्कृतीय प्रास्तक्ष्य प्रत्यव 'मि' क स्थान पर प्राकृत म 'होन्छा प्रस्त्य की प्रास्ति होकर रायाणो रूप निद्ध हो जाता है।

राजान संस्कृत प्रथमान्त बहुबचन रून है। इनका प्राकृत रूत रायाणा केता है। इनके 'रायाण' अन की प्राप्ति उपरोक्त विधि अनुनार, तत्वरवात सूत्र सस्या २-१२ से प्राप्ता 'रायानें में स्थित अन्त्य 'आ के 'आने प्रथमा बहुरचा बो रक्त प्रत्यय का मह्मत्य कीने से' 'आ' की प्राप्ति और ३ से प्रयमा निमक्ति के महुरचन में सन्कृतीय प्रत्यय 'जम्' का प्राकृत में लीप होकर रायाण रूप सिद्ध हो जाता है।

राजानम् सस्कृत द्वितीयान्त पश्चयत का रूप है। इपका प्रावृत रूप रायाण होता है। इपने 'रोजन्=रायाण' श्वर्म की प्राप्ति वपरोस्त विधि श्रतुमार, स्व सस्या १-४ स प्राप्तीय रायाण में द्वितीया विभक्षित के प्रक्षयन में संस्कृताय , क समान हो प्राप्तीय भू में भी 'प्' प्रत्यय की पानि श्वीर 'रिन् प्रत्यय 'प्' प्रत्य की प्राप्ति होडी भू रूप सिद्ध हो जाता है।

राज्ञ सस्कृत द्वितीयान्त बहुबचन का रूप है। इमका प्राकृत रूप रायाणे होता है। इममें राजन्≈रायाण' ऋग की प्राप्ति चपगेकत विधि अनुपार, तत्रश्वात् सूत्र सख्या ३ १४ से प्राप्तांग रायाण' में स्थित अन्त्य 'ख' के 'ब्रागे द्वितीया बन्वमन-बीचक प्रत्यय का सद्भाव होने से' 'ए' की ाप्ति क्योर ३४ से द्विनीया विभक्ति के बहुत्वन में संस्कृतीय प्रत्यय 'शस्' का प्राकृत में लोप होकर *ायाणे रू*प सिद्ध हो जाता है।

राज्ञा सरकत रुतीथान्त एकवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप रायाणेण होता है। इसमें राजन=रायाण' श्रम की प्राप्ति उपरोक्त विधि-श्रतुमार, तत्परचात् सूत्र सख्या ३-१४ से प्राप्तांत रायाण' में स्थित अन्त्य 'अ' के 'आगे तृतीया एकथचन (बीयक प्रत्यय) का सद्भाव होने से 'ए' ी प्राब्ति श्रीर ३ ६ से तृतीया विभक्ति के एकवचन में सरक्रतीय प्रत्यय 'टा=श्रा' के स्थान पर प्राकृत । 'ण' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर रायाणेण रूप सिद्ध हो जाता है।

राजाभि साकृत तृर्वायान्त बहुबबन का रूप है। इसका प्राकृत रूप गयाऐहि होता है। नमें 'राजन=रायाणं' श्रम की प्राप्ति दपरोक्त-विधि श्रतुसार, तत्वरचात् सूत्र सख्या ३-१५ से प्ताग 'रायाण' में स्थित श्रन्त्य 'श्र' के 'श्रागे तृतीया-बहुवचन (बोधक प्रस्थय) का सद्माव होते से' १' की प्राप्ति श्रीर ३-७ स तृतीया विमक्ति के बहुवचन में सःकृतीय प्रत्यय 'मिस' के स्थान पर प्राकत । 'हिं' प्रत्यय की धाष्ति होकर रायाणे हिं रूप सिद्ध हो जाता है।

राज्ञ मस्कृत पञ्चन्यन्त एकाचन रूप है। इसका प्राकृत रूप-रायाणाहिन्तो होता है। इसमें तानन्≈रायाण त्रांग की प्राप्ति उपरोक्त विधि-अनुमार, तत्पञ्चान सूत्र सख्या ३१२ से प्राप्तांग रायाण' में स्थित खन्य 'ख्र' के 'ख्रागे पचमी एकवचन (बोधक प्रत्यय) का सदुभाव होने से 'ख्रा' ी प्राप्ति और ३ = मे पचमो विभक्ति के एकत्रचन में सरकर्नाय प्रस्तवय 'हसि=श्रम' के स्थान पर ाकृत में 'हिन्तो' प्रत्यय का प्राप्ति होकर रायाणाहिन्तो रूप निद्ध हो जाता है ।

राज्ञ सम्फ्रत पष्टयन्त एकवचन रूप है। इसका प्राफ़्त रूप गयाणसा होता है। इसमें ।।जन्≈रायाण्' श्रम की प्राप्ति उपरोक्त विधि श्रनुसार, तत्पश्चात् सूत्र सरत्या ३-१० से पट्टी विमक्ति े एकवचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'डस्=धम्' के स्थान पर प्राकृत में सयुक्त स्म' प्रत्यय की प्राप्ति कर रायाणम्स रूप सिद्ध हो जाता है।

राज्ञाम् सम्कृत पश्चनत बहुवचन का रूप है। इनका प्राकृत रूप रायाणाण होता है। इनमें रानन=रायाण' श्रम की श्राप्ति चपरोक्त विधि श्रतुमार, तत्यश्चात् सूत्र मख्या ३१२ से प्राप्तांग रायाल' में स्थित जन्त्य 'ख' के 'आगे पटी बहुवचन-(बोधक प्रत्यय) का सद्माव होने से' 'खा' ीं। प्राप्ति, ३६ से पछी विभक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्रायद 'द्याम् के स्थान पर प्राकृत से 'राः' त्यिय की प्राप्ति और १६७ से प्राप्त प्रत्येय 'ख' पर अनुस्वार की प्राप्ति हो कर रायाणाण रूप सिद्ध भे भाता है।

राज्ञि सस्कृत सन्तम्यन्त एकत्रयन का रूप है। इसका प्राकृत रूप रायाणिम होता है। 'रायाण' खंग की प्राप्ति उपनेक्त विधि अनुसार, तत्वश्चात् सूत्र मख्या है ११ से सप्तानि हिन्दी । एकवयन में सस्कृतीय प्रत्यय 'डि = इ के स्थान पर प्राकृत म 'मिम' प्रत्यय की प्राप्ति होक्त । रूप सिद्ध हो जाता है।

राजसु संस्कृत सत्वम्यन्त बहुवयन का रूप है। इमका प्राष्ट्रत रूप रायाणेषु होता है।. 'राजन्=रायाण श्रम की प्राप्ति उपरोक्त विधि श्रनुसार, सत्यश्चात सूत्र सख्या ३-१४ से गर 'रायाण' में स्थित श्रन्त्य 'श्र के प्यामे सत्यमी बहुवयन-(बोधक प्रत्यय) का भद्मार होन सं' की प्राप्ति श्रीर, ४४५८ से सत्वमी विभक्ति के बहुवयन में सरकृतीय प्राप्तन्य प्रत्यय 'शु' हो प्राष्ट्रत में मी 'शु' प्रत्यय की प्राप्ति होकर रायाणेसु रूप सिद्ध हो जाता है।

'राया' रूप की मिडि सूत्र सख्या ३४९ में की गई है।

युष्ण सस्कृत रूप है। इसके शक्कत रूप जुनायों और जुन्ना होते हैं। इसमें से प्रथम सूत्र संख्या १९४४ से 'यं' के स्थान पर 'जं' को प्राप्ति, २-४६ से मूल' संख्वत-शर्य ' में स्थित ज्यन्त्य 'जन्' ज्यवयर के स्थान पर 'ज्ञाय' ज्ञादेश की प्राप्ति, 'और और १९ प्रथमा विभक्ति के एकवचन में प्राप्त ज्यकारान्त ज्ञाय 'जित्राय' में संख्कृतीय प्राप्तक्य प्रत्यव 'ति स्थान पर प्राकृत में 'डो=जो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप ज्ञायों सिद्ध हो जाता है।

हितीय रूप (युवन=) जुझा में सूझ सख्या ११७० से 'व' का लोव, १-२४४ से 'व' क पर 'ज' की प्राप्ति, १११ से अन्त्य हलन्त न्यञ्जन 'न्' का लोप और और ३४४ से (त्या १६१ निर्देश से) प्राप्ताग अकारान्त 'जुब' में प्रयमा विमक्ति के एकवचन में संस्कृताण प्रत्यय 'सि' का सिद्माव होने से प्राष्ट्रत में अन्त्य 'ख' का 'खा की प्राप्ति, एव ११६ से प्राप्त प्रत्यय 'सि=स' का लोब होकर प्रथमान्त एकवचन रूप जुआ सिद्ध हो जाना है।

युवा जन मंत्रहत प्रयमान्त एक्ष्वचन का रूप है। इनका प्राकृत रूप जुवाज जाणे हान है इममें 'जुवाख' रूप की प्राप्ति व्यरोक्त विधि अनुमार, तत्यस्वात सुत्र संख्या शान्त्र से अस्व प के स्थान पर 'ख' की प्राप्ति और १-२ से प्रयमा विभक्तित के एक्ष्यचन में सकारान्त पुर्वि संस्कृतीय प्रयय 'भि' के स्थान पर प्राकृत में 'खो = खो' प्रयय की प्राप्ति होकर जुवाज सिक्ष हो जाता है।

बह्मा मंस्ट्रत प्रथमान्त एक प्रचन का रूप है। इसके प्राप्तन रूप बन्हाणों और महा होते हैं। इनमें में प्रथम रूप में सूत्र सत्या २ ७६ से मूल मंस्ट्रन हान्द्र 'क्रम्न में स्थित 'र्' का लोव, हो से 'क्ष' के स्थान पर नहीं की प्राप्ति, ३ ५६ से क्षान्त्य 'क्षम्' क्षम्यक के स्थान पर 'क्षाण' कारी हो प्राप्ति और १२ से प्राप्तांग क्षकारान्त क्षप 'बन्हाण' में प्रथमा विभक्ति के प्रक्रम्यन म महानि

द्वितीय रूप-'बम्दा' की सिद्धि सुत्र सख्या २ ५४ में की गई है।

अध्या सस्कृत प्रथमान्त एकवचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप श्रद्धाणों श्रीर श्रद्धा होते है।

इसमें से प्रथम रूप में से सूत्र सख्या २-७६ से मूल सस्कृत शब्द 'खष्वन्' में स्थित 'व्' का लोप,

२ म्म से लोप हुप 'व्' के परचात रोप रहे हुए 'घ' को द्वित्व 'घ्घ' की प्राप्ति, २-६० से प्राप्त हुए

पूर्व 'घू के स्थान पर 'द्र' का प्राप्ति, ३-४६ से श्रम्त्य 'खन्' श्रवचन के स्थान पर 'श्राण' श्रादेश

की प्राप्ति, श्रीर २-२ से प्राप्ताग श्रकारान्त रूप 'श्रद्धाण' में प्रथमा विभक्ति के एकवचन' में सस्कृतीय

प्राप्तव्य प्रथम 'सि' के स्थान पर प्राकृत में 'ढो ≃श्रो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप श्रद्धाणों सिद्ध हो काला है।

हितीय रूप-(अध्वन्=श्रम्या= श्रद्धा में सूत्र प्रख्या र-७६ से 'ब्' का लोप, २-६ से लोप हुए 'ब्' के परचात् शेष रहे हुए 'ध' को हिर्स 'धघ' का प्राप्ति २ ६० से प्राप्त पूर्व 'ध्' के स्थान पर 'क्' को प्राप्ति, १-११ से श्रन्त्य हलन्त व्यञ्जन 'न्' का लोप, ३ ४६ से (तथा ३ ४६ के निर्देश से) प्राप्तांग श्रकारान्त रूप 'श्रद्ध' में स्थित श्रन्त्य 'क्' के 'आगे प्रथमा-एकवचन बोघक [प्रत्यय का सद्भाव होने से' 'श्रा' की प्राप्ति और १-११ से प्रथमा विश्वतित के एकवचन में ४-४४- के श्रमुसार प्रत्यय 'सि=स' का प्राकृत में लोप होकर हितीय रूप श्रद्धा भी सिद्ध हो जाता है।

जक्षा सस्कृत प्रथमान्त एकवचत का रूप है। इसके प्राकृत रूप वच्छाणो श्रीर उच्छा होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या ३-३ के श्रानुसार श्रुपवा ३ १० से मूल सस्कृत राष्ट्र 'कज़न्' में स्थित 'च' के स्थान पर 'ख' की प्राप्ति, २-८६ से प्राप्त 'ख' की द्वित्व 'खख' की प्राप्ति, २६० से प्राप्त पूर्व 'ख' के स्थान पर 'खाण' श्रादेश की प्राप्ति और १२ से प्राप्ति कारान्त रूप 'चच्छाणा' में प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सस्कृतीय प्रस्व 'सि' के स्थान पर प्राकृत में 'हो = श्रो' प्रथय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप उच्छाणो निव्व हो जाता है।

उच्छारूपकी सिक्षि सूत्र-संख्या? १७ में की गई है।

याया सस्तृत प्रयमान्स एकवचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप नावाणों और गावा होते हैं। इसमें से प्रयम रूप में से सूत्र-संख्या २-७६ से मूल सस्कृत शहर 'प्रावन' में स्थित 'र्' का लोप, ३ ४६ से खन्त्य 'खन्' अवयव के स्थान पर 'खाण' आदेश प्राप्ति और ३ २ से प्राप्तींग क्षकारान्त रूप गावाण में प्रथमा विभक्ति के एकबचन में मंस्कृतीय मत्यय 'सि' के स्थान पर प्राकृत में 'हो=खो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रयम रूप गावाणों सिद्ध हो जाता है।

हितीयं रूप-(प्रावन्=) गावा में सूत्र सख्या २-७६ से 'र' का लीप, १-११ से श्रन्य हरून व्यञ्चन 'न्' का लोप, ३ ४६ से (तथा ३-४६ के निर्देश से) प्राप्तांग श्रकारान्त हप 'गाव' में तिश श्रन्य 'श्र' के 'श्रागे प्रथमा एकवचन (बोचक प्रथय) का सद्माव होने से 'श्रा' का प्राणि चै १-११ से प्रथमा विमन्तित के एकवचन में ४ ४४५ के श्रनुसार सम्क्रतीय प्रथय 'सि=स' का प्राप्त में लोप होकर हितीय रूप गावा मो सिद्ध हो जाता है।

पूपा सस्कृत प्रयमान्त एक प्रचन का रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप पूमायो बौर पूमा होत हैं। इसके प्राष्ट्रत रूप पूमायो बौर पूमा होत हैं। इसके प्राष्ट्रत रूप पूमायो बौर पूमा होत हैं। इसके प्राप्ति, ३-४६ से श्रन्त्य 'श्रन' अवयत्र के स्थान पर 'श्राय' आदेश 'की प्राप्ति और ३२ अप्राप्तांग आकारान्त रूप-'पूमाया' में प्रथमा विमिक्त के एक वचन में सम्ब्रुतीय प्रत्यय 'सि' हे साम पर प्राष्ट्रत में 'हो=श्रो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप पूसायों सिद्ध हो जाता है।

हितीय रूप (पूपन =) पूनो में सूत्र-सख्या ' २६० से 'प' के स्थान पर 'स' की प्राप्ति, १ !! से अन्य हलन्त व्यञ्जन 'न्' का लोप, २ ४६ से (तथा २ ४६ के निर्देश से) प्राप्तोंग अकारान्त रु 'पूस' में स्थित अन्त्य 'अ' के 'आगे प्रथमा एक प्रचन (बोधक अस्यय) का सद्माय होने से 'आ' रा प्राप्ति और १-११ से प्रथमा यिमक्ति के एक वचन में ४ ४४ = के अनुमार सस्कृतीय प्रत्यय मि = ए का प्राफ्त में लोप होकर हितीय रूप पूता भी विद्य हो जाता है।

तद्या संस्कृत प्रथमान्त एकवचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप तक्खाणो और तक्का होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सन्न-सर्वया २२ से मूल संस्कृत राट्य 'तलन्' में स्थित 'ल्' के स्थान पर 'ल्' की प्राप्ति, २०६ से प्राप्त 'प्ं' को द्वित्व 'प्ंच' की प्राप्ति, २०६ से प्राप्त प्यं' हैं स्थान पर 'क' की प्राप्ति, ३०६ से अन्त्य 'खन्' खययव के स्थान पर 'खाण' आदेश की प्राप्ति और २२ से प्राप्ति। अकारान्त रूप 'तक्खाण' में प्रथमा विभक्ति के एकवचन में संस्कृतीय प्राप्तम प्रथम 'मि' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'खो=को' प्रस्थय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप तक्खाणों विद्

द्वितीय रूप (तत्तन=तत्ता=) तक्का में सूत्र संख्या २३ से मूल मंस्कृत राष्ट्र 'तहत्त्र' है स्थित 'त्र' के स्थान पर 'प' को प्राप्ति, २ स्थ से प्राप्त 'ख को द्विच दाख की प्राप्ति, २ स्थ से प्राप्त पूर्व ख्रे के स्थान पर 'क्' की प्राप्ति, १ र १ से अन्त्य इतन्त व्यव्जन 'न्' का लोप, १ ४ से (तथा द ४६ के निर्देश से) प्राप्तीन व्यक्तरात्त रूप 'तरल' में स्थित व्यन्त्य 'ख्र' के 'खाने प्रया्त प्रकृष्य (पोषक प्रत्यय) का सद्माव होने से' 'व्या' की प्राप्ति चीर १ ११ से प्रया्त विवर्षि के एक्षपन में ४ ४४ = के ब्युसार संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'मि=स्' का प्रावृत में सोव होरा दिवीय रूप तक्त्या मी सिंद हो जाता है।

मुर्भा सरकृत प्रथमान्त एकवचन का रूप है। इसके प्राकृत रूप मुद्धाणी श्रीर मुद्धा होते हैं। इतमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या १-८४ से मूल सस्कृत शब्द 'मूर्घन' में स्थित दीर्घ स्तर 'अ' के स्थान पर ह्नस्त्र स्तर 'उ' की प्रास्ति, २ ७६ में 'र्' का लीप, २-६६ से लीप हुए 'र' के पश्चात शेप रहे हुए घ' को द्वित्व 'ध्य्' की प्राप्ति, २०० से प्राप्त पूर्व 'ध्' के स्थान पर 'द्' की प्राप्ति उपरोक्त, ३-५६ से धान्त्य 'खन्' खनयन के स्थान पर 'खाण' धारेश की प्रान्ति और ३-२ से प्रान्ताग खकारान्त रूप 'सुद्धाण' में प्रथमा जिमक्ति के एकतचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'सि' के स्थान पर प्राकृत में हो = थो' प्रत्यय का प्राप्ति होकर प्रथम रूप मुद्धाणी सिद्ध हो जाता है ।

द्वितीय हव 'मुद्धा' की सिद्धि सूत्र सख्या २-४१ में की गई है।

01 11 1 1 4 6 6 A 6

'साणों' श्रीर 'सा' रूपों को सिद्धि सूत्र-सख्या १-५२ में की गई है।

मुकर्मण मस्कृत द्वितीयान्त बहुवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप सुक्रमाणे होता है। इममें सुत्र सख्या र-७९ से मून सख्त शब्द 'सुकर्मन्' में स्थित 'र्' का लोव, र-=६ से लोव हुए 'र्' के पश्चात् शेष रहं हुए 'क्' को द्विव 'कक्ष' की प्राप्ति, ३-४६ से अन्त्य 'अन्' अवयव के स्थान पर 'आण' श्रादेश की प्राप्ति, ३-१४ मे प्राप्तांग श्रकारान्त रूप 'सुकम्माण्' में स्थित श्रन्त्य 'श्र' के 'श्रागे द्वितीया बहुरचन बोध हप्रत्यय का सद्माव होने से' 'ए की प्रान्ति स्रोर ३४ से द्वितीया विमक्ति के पहुबचन में संस्कृतीय प्रत्यय 'रास' कर प्राकृत में लीप होकर प्राकृतीय द्वितीयान्त बहुबचन का रूप सुक्रमाणे सिद्ध हो जाता है।

'पेच्छ' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-२३ म की गई है।

पर्यति सस्त्रत सक्तमेक कियापर का रूप है। इसका (आदेश प्राप्त) प्राकृत रूप निएइ होता है। इसमें सूत्र सख्या ४-१८२ से सस्कृतीय मूच घातु 'दश्=पश्य्' के स्थान पर प्राकृत में 'निश्व' रूप िकी खादेश प्राप्ति, ३-१४= से प्राप्त शाकृतीय धातु 'निख' में स्थित खन्त्य 'ख' के 'खागे वर्तमान काल प्रथम पुरुष के एकवचनीय शस्यय का सर्भाव होने में 'ए' की प्राप्ति और ३ १२६ से 'ति' के स्थान पर शक्त में इ' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर निएइ रूप सिद्ध हो जाता है।

'कह' रूप की सिद्धि सूत्र सत्या १२९ में की गई है।

'सो' सर्वनाम रूप की सिद्धि सूत्र मख्या १९७ में की गई है।

'सुकम्माणे' रूप की मिछि इसी सूत्र में (३५६ में) उत्तर की गई है।

'सम्म'रूप की सिद्धि सूत्र मख्या है है में की गई है। ३ ४ ६ ॥

ञ्चात्मनष्टो शिञ्च। शङ्जा ॥ ३-५७ ॥

श्रातमनः परम्याप्टायाः स्थाने शिया शहस्रा इत्यदिशी वा भनतः। प्रश पाउसे उवगयम्मि । श्रप्याणित्रा य वित्रहि साणिश्रा । श्रप्याहश्रा । पर्ने । श्रप्यालेस ॥

अर्थ —सस्कृत शब्द 'श्रात्मन्' के प्राकृत कवान्तर में तृतीया विमक्ति के एक्ववन में सम्मर प्राप्तस्य प्रत्यय 'टा≈का' के स्थान पर चैकिल्यक रूप में एवं कम में 'शिका' श्रीर 'णह्या' प्रत्ये र (मारेश) प्राप्ति हुमा करती है। जैसे —चात्मना प्राष्ट्रिय चवगतायाम्=म्राप्तिमा पात्रसे हनगरीस श्रर्थात वर्षा श्रद्धत के न्यनीत हो जाने पर अपने द्वारा। इम छदाहरण में सर्ताया के क 'खारमन्' शब्द में 'टा' क स्थान पर 'णिश्रा' प्रत्यथ की प्राप्ति प्रनर्शित की गई है।

दूसरा उदाहरण इस प्रकार है - आत्मना च नितर्दि खानिता अर्थात् विका अपन्ताः खुदवाई गई है। इस बदाहरण में भी वृतीया के एकपचन में 'आत्मन' शब्द में 'टा' प्रत्यय है हा पर 'शिश्रा' प्रत्यय की सयोजना की गई है। 'शहश्रा' प्रत्यय का दशहरण —श्रामना=श्रप्रा'र श्चर्यात् श्चात्मा से। वैठल्पिक पत्त होने से श्चात्मा=श्रापाएँग" रूप भी बनता है। यों 'ज्ञालना' है तीन रूप इस सुत्र म यतलाये गये हैं, जो कि कम से इस प्रकार हैं —अप्पणिया, अप्पण्या श्रापारोण वर्षात् श्राता के द्वारा श्रववा श्राता से, इचादि।

'अप्याणिआ' रूप की सिढि सूत्र सख्या ह-१४ में की गई है।

प्रावृषि संस्कृत सप्तम्यत्त एकवचन का रूप है। इसका प्राकृत रूप पाउसे हीता है। मूत्र सख्या १३१ से मूल सन्छन शब्द 'प्रावृट' के स्त्रीजिंगत्त्र से प्राकृत में 'पुल्निय ब' का २ ७६ से 'र' का लोप, १-१७० से 'च्' का लोप, ११३१ में लोप हुए 'घ' के प्रधान शेष हैं। स्वर 'म्ह' के स्थान पर 'उ' की प्रास्ति' १-१६ से अन्त्य हत्तन्त व्यञ्जन 'ट अथवा प्'क स्थान ' 'स की प्राप्ति, २११ में माप्तांग 'पाउम' म नन्त्रमी निभक्ति के एकववन में मस्कृतीय मास्त्रवाहरू 'डि=इ' के स्थान पर दे प्रत्यय की प्राप्ति, प्राप्त प्रत्यय 'टे' से ड' इत संज्ञक होन से 'वाउम र श्यित अन्त्य स्वर 'अ मी इत्मंझा हो हर लोव, तत्वश्यात प्राप्ताग हत्तन्त 'वा उस' म पूर्वीहर 'वं प्रा की सबोना हो हर पाउसे हव मिद्र हो जाता है।

उपगतायाम् सञ्जत सन्तम्यन्त स्त्रीतिगातमक एकययन का रूप है। इमका प्राकृत स (प्रावृट के प्राफ़त में पुल्लिंग हो जाने के थारण से एवं प्रावृट के साथ इसका विशेषणास्माह तर? होते ये कारण म) उदगयमिम होता है। इसमें सूत्र सत्या १२३१ से प' के स्थान पर 'व' का शांत १ १७७ से 'त' का लोव, १ १८० से लोव हुए 'त' क वधान शेव रहे हुए 'ख के स्थान वर 'व' का प्राप्ति, भौर ३ १९, से मन्तमो विमक्ति क णक्त्रचन म संस्कृतीय प्रत्यय हि=इ' छे स्थान वर बाहर में 'स्मि' प्रत्यय की पाष्ति हो हर उदगयस्मि रूप सिद्ध हो जाता है।

अप्याणिमा रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ३-१४ में की गई है।

'य' श्रव्यय की सिद्धि सूत्र सत्या २ १८४ में की गई है।

'विजरिन्ड' (व्यववा प्रयमान्त एकववन रूप विद्याद्दी) की सिद्धि सुन्न सत्या ? है से की गई है। 19ता सन्द्रत विशेषणाश्मक रूप है। इसका प्राक्तत रूप खाणिव्या देशेता है। इसमें सून-सच्या र√स से 'न क स्थान पर 'ण' की प्राप्ति कोर १-१०७ से 'तृ' का लोप होकर खाणिका रूप सिद्ध जाता है।

'अप्पणइआ' रूप की सिद्धि सूत्र सरवा २ '४ में की गई है।
'अप्पणण' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ३-५६ में की गई है। ३-४७॥

श्रतः सर्वादे हें जिसः ॥ ३-५= ॥-

सर्राटेरदन्तात् परस्य जसः डित्ए इत्यादेशो भरति ॥ सब्दे। अन्ते। जे। ते। । एक्के। कपरे। इपरे। एए ॥ अतः इति किम्। सब्दाओ रिद्धीओ । जस इति किम् व्यस्स ॥

अर्थः — (सर्थ=सन्त) श्रादि श्वकारान्त सर्वनामों के प्राक्त रूपान्तर में प्रयमा विमित्त वहुरवन में सरकृतीय प्रत्य्य 'क्वन' के स्थान पर 'क्वे' प्रत्यय की (आदेश) प्राप्ति होती है। प्राप्त त्यय 'क्वे' में 'क्व' इत्स्तक है, तदनुमार श्वकारान्त सर्वनामों के श्राग रूप में स्थित श्वन्त्य 'श्व' स्वर् की इत्स्ता होकर वहन श्वन्त्य 'श्व' का जोप हो जाता है एव तत्पश्चान प्राप्तींग हलन्त रूप में उक्त थमा बहुवचन (वीषक) प्रत्यव 'ए' की सयोजना होती है। उदाहरण इस मकार हें —सर्वे=सन्त्ये। प्रत्ये = श्वन्ते। ये = के। ते=ते। के = के। एके=एको। कतरे=कवरे। इतरे=इश्वरे श्वीर हेने=एव, इत्यादि॥

परन,--मृल मृत्र में 'अकारान्त' ऐमा विशेषण क्यों दिया गया है ?

उत्तर --सर्वनाम श्रामारान्त होते हैं एव श्राकारान्त मा होते हैं, तद्वुतार प्रथमा बहुवचन रें प्राप्त-य 'तस' प्रत्यय के स्थान पर 'डे-ए' प्रत्यय की प्राप्ति केवल श्रकारान्त मर्बनामों में हा होती हैं, श्राकारान्त सर्वनामों में नहीं, इम विधि विपान को क्यक्त करने के लिये तथा सपुष्ट करने के लिये हो 'श्रकारान्त' ऐसा विशेषण मूल सूच में सयोजित किया गया है। जैसे -सर्व ग्रह्म यह यह यह सहयाश्रो रिद्धीश्रो, इम खदाहरण में प्रयुक्त 'सप्ता' सर्वनाम श्राकारान्त हैं, वंदनुसार इमसे अधिकृत सूप्र सत्या १८ के विधान से प्रथमा यह वचन में प्राप्तक्य प्रत्यय 'जह' के स्थान पर स्था यह वचन में प्राप्तक्य प्रत्यय 'जह' के स्थान पर श्रव्यय भी सर्योजना केवल श्रकारान्त हैं, इन्य में नहीं, इस सिद्धान्त को प्रकट करने के लिये हो मूल सूत्र में 'अकारान्त 'विशेषण का प्रयोग करना वहा हैं।

परन - 'जस्' ऐना प्रत्ययात्मक उल्लख करने की क्या आवश्यकता है ?

उत्तर -- अकारान्त सर्वनामों में केवल प्रथमा विभक्ति के बहु वर्चन में ही संस्कृताय अ प्रत्यय 'जस' के स्थान पर ही प्राकृत में 'डे = ए' प्रत्यय की सयोजना होती है, श्रन्य किमी । स्यान पर 'हे=ए' प्रत्यय की सयोजना नहीं होती है, इस विशेषता पूर्ण तालर्य को समकान है मूल सूत्र में 'जम्' प्रत्यय का चरुतेख करना पड़ा है । जैसे - सर्वस्य≍सन्तरस । इम उदाहरण में पछर्त के एक वचन में संस्कृतीय शासन्य श्रयय 'इस=श्रम्' के स्थान पर प्राकृत में (सन संख्या रे १० के प्रतुहः 'भ्स' पत्यय की प्राप्ति हुई है श्रोर 'जसु' प्रत्यय का श्रभाव है, तद्नुसार 'जसु' प्रत्यय की होने से तद स्थानीय 'हे = ऐ' आदेश प्राप्त प्रत्यय का भी अमाय है। यों यह सिद्धान्तात्मक निष्मं लता है कि केवल 'जस्' प्रत्यय के स्थान पर ही प्राक्तन में 'डे=ए' प्रत्यय की खादेश प्राप्ति स^{न्} श्रन्यत्र नहीं । ऐसी मायनात्मक स्थिति को प्रकट करने के लिये ही मूल सूत्र में 'जस' प्रायय की का करना प्रन्यकर्ता ने आपरयक सममा है, जो कि युक्ति-संगत है एवं न्यायोचित है।

सर्वे सरकृत प्रथमा बहुबचनान्त सर्वनाम रूप है। इनका प्राकृत रूप मध्ये होता है। सूत्र सख्या-२-४६ से 'र' का लोप, २ ८६ से लोप हुए 'र' के परचात रहे हुए 'व' की डित्व 'ध्व' की क श्रीर ३ ध्≒ से प्रथमा विभक्ति के बहुउचन में सस्कृताय प्रत्यय 'जस्' के स्थान पर प्राकृत में 'हेडर प्रस्थय की प्राप्ति होकर सब्दे रूप सिद्ध हो जाता है।

अन्ये सरहत प्रथमा बहुवचनान्त सर्वनाम रूप है। इनका प्राकृत रूप खन्ने होती है। सूत्र सख्या २-७८ से 'य' वा लाप, २ ८९ से लोप हुण 'य' के परवात रहे हुए 'न' को द्विरा 'न्न' हो हैं श्रीर २-४= से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्रत्यय 'अस्' कस्थान पर प्राकृत में 'हर्ड प्रत्यय की प्राप्ति होकर अन्ने रूप मिद्र हो जाता है।

'जे' रूप की मिदि सूत्र सरवा ? २१७ में की गई है।

'ते' रूप की सिद्धि सत्र सरना १ २६९ में की गई है।

'के सरहत प्रथमा बहुवचनान्त सर्वनाम का रूप है। इसका प्राकृत रूप 'के होता है। ही सूत्र मस्या ३ ७१ से मूल मंस्कृत शब्द 'किम्' के स्थान पर 'क' रूप की प्राप्ति क्रीर ३ ^{५० स}् विमक्ति क बहुव पन में मस्तृतीय शत्यव 'जस' के स्थान पर प्राकृत मे 'हे = ए' प्रश्यय की प्राप्ति 'के' रूप मिद्ध हो जाता है।

'एके' सरकृत प्रथमा बहुवधनान्त सर्वनाम रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप एक्के होता है। (न सूत्र मरुया २६६ म 'व' को हिन्य 'करु' की प्राप्ति चौर ३५८ से प्रथमा विमक्ति के बहुव^{हर} संस्कृतीय प्रायम 'जम्' के स्थान पर प्राष्ट्रन मं 'हे=प' प्रत्यय का शान्ति होकर 'पक्षे' रूप हिंही जाता है।

कतरे सरकत प्रथमा बहुवचनान्त सर्वनाम रूप है। इसका प्राकृत रूप क्यरे होता है। इसमे ुन्त्र सटया ११७७ मे 'त' का लोप १-१८० से लोप हुए तृ' के परचात शेप रहें हुए 'श्र' के स्थान ा. - १र 'य' की प्राप्ति स्त्रोर ३ ५= से प्राप्तांग 'कयर' में प्रथमा विमिक्त के बहुवचन में सस्ट्रतीय प्राप्तव्य ्रें स्थय 'जस्' के स्थान पर प्राकृत में 'डे≃्' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर फयरे ल्प सिद्ध हो जाता है ।

इतरे संस्कृत प्रथमा चहुवचनान्त सर्वनाम का रूप है। इनका प्राकृत रूप इयरे होता है। ॥इसमें सत्र-सख्या १-१७७ मे 'त' का लीप, १-१८० से लीप हुए 'त' के पश्चात शेप रहे हुए 'श्र' के क्षान पर 'य' की प्राप्ति और ३ ४८ से प्राप्ताग 'इयर में प्रथमा विभक्ति क बहुवचन में सस्क्रतीय क्षात्यय जस के स्थान पर प्राकृत में डे=ए' प्रत्यय की प्राप्ति होकर इयरे रूप सिद्ध हो जाता है।

'एए' रूप की सिद्धि सत्र सख्या है-४ में की गई है।

सर्वो संस्कृत प्रथमा बहुबचनान्त स्त्रीलिंगात्मक सर्वनाम का ऋप है। इसका प्राकृत रूप ं पब्बाश्रो होता है। इसमें सूत्र सख्या २ ०६ से मूल सस्कृत शब्द 'मर्ब' में स्थित 'र'का लोप, २ ⊏६ भि लोप हए 'र' के परचात रहे हुए 'व' को द्वित्व 'ब्न' की प्राप्ति, ३-३२ से और ४-४४८ के निर्देश विसे पुल्लियत्व से स्त्रालियत्व, क विर्माणार्थ प्राप्तीय 'सन्त्र' में 'श्रा' प्रत्यय की ब्राप्ति और ३-२७ से ियमा विभक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्रत्यय 'जल' के स्थान पर प्राकृत में 'ख्रो' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर सदयाओं रूप सिद्ध हो जाता है।

ऋदय संस्कृत प्रथमा बहुवचनान्त रूप है। इसका प्राकृत रूप रिद्धीची होता है। इसमें क्ष्य सख्या १ १४० से मृत संस्कृत शाद 'ऋदि' में स्थित 'ऋ' के स्थान पर 'रि' की प्राप्ति छीर त्र-२७ से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में सफ्तिय प्राप्तध्य प्रत्यय 'जस' के स्थान पर अन्त्य हुस्व स्वर 'इ' को दोष स्वर 'ई' की प्राप्ति कराते हुए 'खो' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर रिजीओ रूप सिद्ध हो जाता है।

संबेह्य संस्कृत पद्मी एकवचनान्त मर्वनाम का ह्य है। इसका प्राकृत रूप मध्यश्स होता है। इमर्मे सूत्र संख्या २-७६ से 'र्' का लोप, २-६ से लोप हुए 'र के पश्यात ग्रहे हुए 'व' को द्वित्व ^(*)ष्व'र्का प्राप्ति श्रीर ३ १० से पद्यी विभक्ति के एक उचन में सरहतीय प्रत्यय'डस = श्रम्' के स्थान । पर प्राकृत में समुक्त 'स्स' प्रस्यय की प्राप्ति हो कर सदक्रस रूप मिद्ध हो जाता है। ३ ४८॥-

डे: स्सि-मिम-स्था ॥ ३-५६ ॥

सर्रादेशकारात् परस्य टे: स्थाने स्सि मिन तथ एते आदेशा भानित ॥ सन्त्रस्मि । [।]रीतव्यस्मि । मन्त्रस्य ॥ अन्नस्सि । अन्नस्मि । अन्नस्य ॥ एउ मर्नत्र ॥ अत इन्येर । अग्रुस्मि ॥ १

अर्थ —सर्वे (=सब्व) श्रादि श्रकारान्त सर्वनामों के प्राकृत स्पान्तर में सल्ही हिन्हें एकवचन में मस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'डि=इ' के स्यान पर क्रम से (एव प्रैकल्पिक हा से) " " त्थ य ब्रादेश प्राप्त रूप प्रत्यय प्राप्त होते हैं। जैसे -सर्वश्मिन=सव्वस्ति खथवा सर्धान सन्यत्य । श्रन्यस्मिन् = श्रन्नस्ति-श्रयवा श्रन्नस्य । श्रमी प्रकार से सर्वनामों क सबध में भी जानकारी कर लेना चाहिये।

प्रकृत —'श्रकारान्त' सर्वनामी में ही 'हि = इ' के स्थान पर 'स्पिनिमाथ' शरिएक द्या करती है, ऐसा क्यों कहा गया है ?

उत्तर - श्र कारान्त सर्वेनामों के श्रतिरिक्त उकारान्त श्रादि प्रवस्था प्राप्त सप्तमी विमक्षि क एकवचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'हि = इ के स्थान पर 'सिस मिनव' प्राप्त प्रत्ययों की प्राप्ति नहीं होती है, किन्तु केवल 'िंड ≈ इ' के स्थान पर 'निग' प्रत्यय का हा ब्राप्ति होती है, इम विवि विवास को प्रकट करने के लिये ही 'खकारान्त सर्वनाम' ऐसा करना पड़ा है। जैसे -- अमुध्मिन = अमुन्मि, इत्यादि।

संग्रीतमन संस्कृत सप्तमी एकपचनान्त मर्चनाम वर्ग रूप है। इसक प्राष्ट्रत मुख्यस्मि श्रीर सब्बत्य होते हैं। इनमें सूत्र सख्या २ ७६ से 'र' का लोग, २ झ६ से लोग हुए 'र क्रचात रहे हुए 'व' को दित्व 'व्व' को प्राप्ति और ३ ४९ से शप्ताग 'सब्व' मे के एकतचन में मस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'हिं≃ह' के स्थान वर वज से (एवं चैकल्पिक रूप मं)^{र्} मित्रय' प्रत्यवों की त्यादेश प्राप्ति हो इंट कृम से तीन रूप-सव्यस्ति, सव्यम्मि श्रीर स्वत्य हो सावे है।

अन्यरिमन संस्टुत सप्तमी एकवचनान्त सर्वनाम का रूप है। इसक प्रांकृते हव भारी अन्तिमा और अन्तत्य होते हैं। इनमे मृत-सख्या २ अद से 'य' का लोप, २ दह से सोप हु" मूर्ग परवात शेप रहे हुए 'न' को डिप्य नन की प्राप्ति और 3-18 में प्राप्तांग 'खरा' म मनमों विसी के एक प्रवन में सम्झुनीय प्राप्तव्य प्राय्य 'हिन्द्र' के स्थान पर धम स (ज्य वैकस्पिक रूप सें) स्मित्थ' प्रत्यवीं की आदेश प्राप्ति होकर क्रम से तीना रूप अन्नस्ति, अन्नस्मि श्रीर भिष्ट हो जाते हैं।

अमुन्मित माइत मध्तमा पद्मवचनान्त सर्वनाम का रूप है। इमका प्राहत रूप का होता है। इसमें सूत्र मंट्या १११ से मूल संस्कृत शान्द 'खदूस' स श्वित अस्त्य हमात व्यक्त का लोप, रूप्य से 'द' के स्थान पर 'मु' चादेश की प्राप्ति और ३११ में प्राप्तींग 'ब्रष्ट' में ह विमक्ति क व्कवयन में मस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'कि=इ' के स्वान पर प्राकृत म किम' प्रत्यव का होकर अमानि रूप निद्व हो जाना है। ३ रह ॥--

न वानिद्मेतदो हि ॥ ३-६० ॥-

इदम् एतद्वर्जितात्सर्वादेरदन्तात्परस्य द्वेः हिमादेशो वा भवति ॥ सन्वहिं । अन्नहिं । ं। जिहा वहि॥ बहुलाधिकारात् किंपचद्भ्यः स्त्रियामपि। काहि। जाहि। ताहि॥ ्नकादेर किंयत्तदोस्य मामि (३-३३) इति डीर्नास्ति ॥ पत्ते । सन्दर्सिस । सन्दर्मिम । तन्त्रत्य । इत्यादि ॥ स्त्रिया तु पद्ये । काए।कीए । जाए।जीए।ताए।तीए॥ दमेतढर्जन किम् । इमस्सि । एश्रस्सि ॥

अर्थ -इदम्=इम श्रीर एतत्=एश्र मर्वनोमीं के श्रतिरिक्त श्रन्य सर्व=सब्व श्रावि श्रकारान्त ंपर्वनामों के प्राकृत रूपान्तर में सप्तमी विमक्ति के एकवचन में संस्कृतनीय प्रत्यय 'दि = इ' के स्थान इपर वैकल्पिक रूप से 'हिं' श्रादेश की प्राप्ति हुआ करती है। जैसे —सवस्मिन्=सब्वहिं। श्रन्यस्मिन्= क्ष्यन्नहि । कस्मिन्=कि । यस्मिन्=जिंह श्रीर तस्मिन्=तिहिं। 'बहुलम्' सुत्र के श्रधिकार से 'किम्' 'यतु' और 'ततु' सर्वनामों के स्त्रीनिंग रूपों में भी सप्तमा विमक्ति के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तब्य मत्यय 'डि=इ' के स्थान पर प्राकृत में 'हिं' प्रत्यय की प्राप्ति हुआ करती है। जैसे --कस्याम्=काहि, । यस्याम्=नाहि श्रौर तस्याम्=ताहि। 'बहुलम् सूत्र के श्रविकार से ही 'किम्', 'यत्' श्रौर 'उत् ैं सवनामों के ध्रीलिंगत्व के निर्माण में सूत्र सरया ३३३ के विघान से प्राप्तव्य स्त्रीलिंग बोधक प्रस्तय ^{र्न}'रा≔ इं'का प्राप्ति अपरोक्त 'काहि जाहिं ताहिं' वदाहरयों में नहीं हुई है। अर्थात प्राप्तन्य रूंफ'की, ैं जी, नी, क स्थोन पर 'का, जा, ता 'रूपों की प्राप्ति 'बहुलम्' सूत्र के व्यधिकार से जानना, ऐसा ¹ नात्वर्थ मथ कत्ती का है।

उपरोक्त मप्तमी विभक्ति के एकवचन म प्रत्यय 'हि' की प्राप्ति चैप्तित्पक रूप से मतलाई िगई है, तन्तुमार जहां पर 'हिं' प्रस्यव की प्राप्ति नहीं होगी वहां पर सूत्र मन्त्या ३-४९ के विभानानुसार ै 'स्सि म्मि त्थ' अत्यय की प्रान्ति होगी । जैसे -सर्वस्मिन =सन्यस्सि, मन्वस्मि श्रीर, मन्वत्य, यी े प्रत्य उदाहरणों की भा कल्पना कर लना चाहिये। ह्योनिंग वाले सर्वनामों में भी बहां सप्तमा ं विभिवत के एकवयन में 'हिं' प्रत्यम की वैकिस्पिक पत्त होने से प्राप्ति नहीं होगो, वहां पर मुझ-सख्य। ३- ६ के अनुमार 'स्न, (आ) इ सीर 'त' प्रत्यणें को प्राप्ति होती है। तैसे -- वस्याम्=काव अग्रदा फीए, यस्याम्=नाण अथवा जीए और सस्याम्=नाए अथवा तीय इत्यादि ।

परच -- इरम् = इम श्रीर एतत्=ण्य मर्वनामों को 'द्यकारान्त होने पर भी' वपरोकन 'हि' । भत्यय के त्रिधान से पृथक क्यों रक्ता गमा है 🕈

उत्तर - चुकि प्राष्ट्रत-भाषा के परम्परात्मक प्रचाह में छपरोक्त 'इस' छोर 'एछ सर्वनामी में सप्तमी विभक्ति के एकवचन में मस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'डि = द् के स्थान पर 'हि' (श्रादेश)- •••••••••••••••••••••

प्राप्ति का स्रमाव रिष्ट-मोचर होता है, श्रतएव स्रभावात्मक स्थिति में 'हिं प्रत्य का नित्र जाना न्यायोचित स्पीर व्याकरणीय विधान के स्वनुकृत ही है । जैसे —श्रीमन् =श्रमि । एतिसम् = श्रमि । स्वित्र होती के एकप्रचन में सर्वनामों में प्राप्तम् । । के स्थिति के एकप्रचन में सर्वनामों में प्राप्तम् । । के स्थिति के समक्त लेना व्याहिये ।

सर्वेश्मिन् संस्कृत सत्तमी एकवचनान्त सर्वेनाम रूप है। इसका प्राकृत रूप सन्विशित्र इसमें सूत्र-सख्या ५-७६ से र'का लाप, २-न्द से लोप हुए 'र्' के परचान रहे हुए 'व' से द्वित्र में की प्राप्त और ३६० से सप्तमी विमक्ति के एकत्रचन में सरकृतीय प्रत्यय 'वि=इ' के स्थान पर मिंह' प्रत्यय की प्राप्ति होकर सव्विद्धि रूप विद्ध हो जाता है।

अन्यस्मिन् संस्कृत संस्तमी एकववनान्त सर्वनाम का हर है। इसका प्राकृत हर हर्ष होता है। इसमें सूत्र-संस्था २-७५ से 'य्' का लोप, होकर २-५६ से लोप हुए य' के परवात में !' 'न' को दिख 'न्न' की प्राप्त खीर 2-६० से प्राप्तों में 'खन्त' में संस्तमी विमक्ति के एकवका संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय कि प्राप्त से संस्तृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय कि प्राप्त से संस्तृतीय प्राप्तव से प्राप्त से संस्तृतीय प्राप्तव है।

कस्मिन्, संस्कृत सप्तमी एकप्रचनान्त सर्वनाम का रूप है। इसका प्राकृत रूप करिं होतारे। इसमें सूत्र-सदया २-७१ से मूल सरकृत शब्द 'किम्' के स्थान पर 'क' खम की प्राप्त और २१-६ प्राप्तांग 'क' में सप्तमी विभक्ति के एक्ष्यचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय क्रि.=इ' क स्थान र प्राफ्त में 'कि' मस्यय की प्राप्ति होकर फार्क्ष रूप मिळ हो जाता है।

यरिम्मं मन्द्रत मन्द्रती एकवचनान्त सर्वनाम का रूप है। इसका प्राकृत-रूप वहिं होगे है इसमें सूत्र सख्या १ २४% से मूल मंस्ट्रत राष्ट्र 'यत्' म स्थित 'य' क स्थान पा 'क' को प्राणि, १!' में अन्त्य हलन्त व्यान 'म' का लीप चीर ३ ६० से प्रान्तांग 'अ' में मन्द्रमी विमक्ति के एडववन' संस्कृतीय प्राप्तस्थ प्रस्थय 'डि⇒ड' के स्थान पर प्राकृत में 'हिं' प्रथ्यय की (खानेश) प्राध्ति हो इस वर्ष रूप सिंख हो जाता है।

सिस्मा संस्टन सप्तमी एक्वचना त सर्वनाम का रूप है। इमका प्राइत रूप तेहि रोत है। इसमें मूत्र सप्या १-११ में मूल मंस्टन शब्द 'तत्' में स्थित ख्रान्य हलन्त क्यात 'त' का लोप की। ३ ६ - से प्राप्तांम 'त' में सप्तांगे विमाल के एकयचन म संस्ट्रतीय शायत्य प्रत्यय किन्द्र' के स्थान के प्राप्त में प्राप्त में दि प्रत्यय की प्राप्त होकर तहि रूप सिद्ध हो जावा है।

करपास मस्टल समामी एक्षचनान्त सर्वनाम का स्वीनिम कर है। इनका प्राप्ति हैं। काहिं होता है। इसमें सूत्र सदया ३ वर में मूल सत्कृत शब्द 'किम' के स्थान पर 'क' की प्राप्ति ३ वे कब में वे से प्राप्तीन 'क' में स्त्रीनिम प्रवेशक 'स्वा' प्रत्यव की प्राप्ति बीर ३ ६० से प्राप्तिन की

सरतमो विभक्ति क एकवचन में सरक्षतीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'डि=इ' केस्थान पर प्राफ्तन में 'हिं' यय की प्राप्ति होकर काहिं हप सिद्ध हो जाता है।

यस्याम् संस्कृत मध्नमी एकववनान्त मर्जनाम ध्रजितित रूप है। अमका प्राकृत रूप जाहि ाता है। इसमें स्त्र सख्या १-२४ म सून सस्कृत शब्द 'यत' में स्थित 'य' के स्थान पर 'ज' की प्राप्ति, ११ से अन्त्य हतन्त ब्यञ्जन 'त का लोप, --३१ एव २-४ स प्राप्ताग 'ज' में स्त्रोतिग प्रवीधक 'श्रा' त्यगकी प्राप्ति स्त्रीर १६० से प्राप्ताग 'जा' में सप्तभी विमक्ति के एक्टवन में मस्कृतीय प्रत्यय ड=इ' के स्थान पर प्राकृत में 'हिं' प्रत्यय की प्राप्ति होकर जाहिं रूप मिद्ध हो जाता हैं।

तस्याम मम्ब्रत सप्तमी एक्पचनान्त सर्वनाम स्वीतिंग का रूप है। इमका प्राकृत रूप 'हिं होता ह । इसमे सत्र सल्या १ ११ से मून सम्ब्रुन शब्द 'तत' में स्थित अन्त्य हलन्त व्यञ्जन 'त' ा लोप, ३३१ एन २४ से प्राप्तांग त' में स्प्रीजिंग प्रचोधक 'आ' प्रत्यय का प्राप्ति श्रीर ३६० से ार्मांग 'ता' में मममी विभक्ति के एकवान में मस्कृतीय प्रत्या 'डि = इ के स्थान पर प्राकृत में 'हि' त्यय की प्राप्ति होकर ताहिं रूप सिद्ध हा जाता है ।

'सव्यक्ति' हप की मिबि सत्र सत्या ने ५९ में का गई है।

'सब्वम्भि' रूप की मिद्धि सूत्र सत्या ह ७९ में की गई है।

'सब्बत्थ' रूप की सिद्धि मुत्र सख्या है ५९ में की गई है।

कस्याम् मस्तुत सप्तमी एकवचनान्त सर्वनाम स्त्रीलिंग का रूप है। इसके प्राकृत रूप काण ीर कींग् क्षाते हैं। इनमं उपरोक्त विधि अनुसार प्राप्तांग 'का' में सूत्र मख्या ३ ३१ से आरेर ३ ३२ से शिनिंग प्रचोबक 'आ' प्रत्यय क स्थान पर चैंशंहरत रूप से र'डी = ई प्रत्यय की प्राप्ति श्रीर ३ °६ । कम में प्राप्तांग का' और 'की' म सप्तमों किमिक्त के एक्यवन में मश्क्तनाय प्रत्यय 'कि = इ' क शान पर प्राकृत में 'क' प्रत्यय का प्राध्ति हो कर कम से दोनों रूप काए और कीए मिद्र हो जाते हैं।

यस्याम् मेस्कृत मध्नमा एकप्रयानन्त सर्वनाम स्त्रीतिम का क्ष्य है। इसका प्राक्त कष् जाव गैर जीप होत हैं। इनमें उपरोक्त विधि अनुपार प्राप्ताग 'ना' में सूत्र सख्या ३३१ से एव ३३२ से त्रालिंग बोचक 'खा' प्रत्यव के स्थान पर वैंकलियक रूप से 'डी=ई' प्रस्यय की प्राप्ति खीर ३ २६ से त्म से प्राप्ताम 'जा' स्त्रीर 'जी' म मध्तमी विभक्ति के एकवधन में संस्कृतीय प्रत्यय 'डि = इ' के थान पर प्राकृत में 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति दी हर कम से दीना रूप जाए श्रीर जीए सिब हा जाते हैं।

तस्याम् मरहत मध्नमी एकवचनान्त सर्वनीम ध्वीलिंग का रूप है। इमका शाकृत रूप ाए और तीण होत हैं। इनमें उपमेक विधि अनुमार प्राप्ती। 'ता' में मूत्र मख्या ३३(से ज्य ेरेरे से स्त्रीनिंग-प्रबोधक 'झा' प्रत्यय के स्थान पर गैहिल्यक रूप से 'डा ≔ई' प्रत्यय की प्राप्ति खीर

[१३०] •••••••••

३२९ से कम मे प्राप्तांग 'ता' श्रीर 'ती' में मध्तमा विभक्ति के एक प्रचन में माहनीय प्रवश्धिक क्ष्यान पर प्राकृत में 'ए' प्रस्यय की प्राप्ति होकर कम मे दोना रूप ताए श्रीर तीए ज़िश जाते हैं।

अस्मिन् सस्कृत सन्तमी एकत्रवनान्त पुलिंता सर्वनाम का रूप है। इसका प्राप्त प्र इमस्ति होता है। इसम सूत्र सख्या ३ अ में सस्कृतीय सर्वनाम रूप 'इत्म्' के स्वान पर 'स्व' धार प्राप्ति और ३ ४६ में प्राप्ताग 'इम' में विमक्ति के एकवचन में मस्कृतीय प्राप्तक प्रस्प पिर के स्थान पर प्राकृत में 'स्ति' प्रत्यय की प्राप्ति होकर इमास्त रूप सिद्ध हो जाता है।

एतस्मिन् सस्कृत सप्तमी एकवचनात्त पुल्लिम सवताम का रूप है। इनका स्पन्नित होता है। इसमें सूत्र सख्या १-११ से मूल सस्कृत सर्वनाम 'एतद् में स्थित अन्त्व हण्य द' का लोप, १-१०० से 'त्' का लाप और ३-४६ से आप्तांग 'एख' में सप्तमी विमित्र े ६ में सस्कृतीय आप्तव्य प्रत्यय 'हि=इ' के स्थान पर आकृत में 'हिन' प्रत्यय की प्राप्ति होकर र रूप सिद्ध हो जाता है। ३-६०॥-

' श्रामो डेसिं ॥ ३-६१ ॥—

सर्वदिरकारान्तारवरस्यामो हैमिमित्यादेशो वा भवति ॥ मर्क्नोमं । क्रानीनं । व्यवदिनं । इमेमि । ए०सि । जैमि । वैसि । केसि । विदे । सन्त्राख । व्यवसार इमाख । ज्ञाख । जाख । ताख । काख ॥ ताहुलकात् स्त्रियामि । मर्शनाम् । अध्यम् व्यन्तिस । वैसि ॥

अर्थ — सर्वे (= मन्य) आदि अकारान्त मर्वेनामों के प्रापुत रूपान्तर म पछी विक्रिते वहुवधन में संस्कृताय प्रत्यय 'श्राम' के स्थान पर पैकिल्पिक रूप से 'हेसि' प्रत्यय की आहेरा ना हुआ कर्ती है। वाकृत में आहेरा शान प्रत्यय 'हेमि' में रिवन ह' इस्मेद्रा ह है, तर्तुवार क्षेत्र प्राप्त सर्वनाम शार्म स्थित कल्य 'श्र' स्थर का इन्मद्रा हाने से इन खर्य 'ल' का लोव रो उन्ने है एय तत्वरवान शेष रहे हुन कल सम्बनाम रूर खेन में स्कृत पछी बहुवधन बायक श्रायण 'हिन्स्त हो संवाजना होतो है। नैसे — मर्ववाम्-मन्त्रीं आध्वा पहान्तर में मन्ववाण । अर्थवाम मर्वि आध्वा पहान्तर में स्थराण । वर्षाम्-वर्षि अथवा पहान्तर में स्थराण । वर्षाम्-वर्षि अथवा पहान्तर में स्थराण । वर्षाम्-वर्षि अथवा पहान्तर में स्थाण । वर्षे पान निर्मे अथवा पहान्तर में स्थाण । वर्षे प्रवाप पहान्तर में स्थाण । वर्षे प्रवाप पहान्तर में स्थाण । वर्षे पान निर्मे अथवा पहान्तर में स्थाण । वर्षे प्रवाप पहान्तर में स्थाण । वर्षे पान निर्मे स्थाण । वर्षे प्रवाप पहान्तर में स्थाण । वर्षे पहान्तर में स्थाण । वर्षे पहान्तर में स्थाण । वर्षे प्रवाप पहान्तर में स्थाण । वर्षे पान निर्मे स्थाण । वर्षे पान निर्मे स्थाण । वर्षे प्रवाप पहान्तर में स्थाण । वर्षे प्रवाप पहान्तर में स्थाण । वर्षे प्रवाप पहान्तर में स्थाण । वर्षे प्रवाप पहान स्थाण स्थाण

ा प्राप्ति देखी जाती है। जैसे -सर्वासाम्=सञ्चेनि अर्थात समी (स्त्रियो) के। अन्यासाम्=अन्नेसि र्थात अन्य (स्त्रियों) के। तासाम् ≈तेमिं अर्थात् उन (स्त्रियों) के। इम प्रकार 'बहुल' सूत्र के ।दिश से धाकारान्त स्त्रीलिंग वाल सर्वनामों में भी 'एमि' प्रत्यय की प्राप्ति ही सकती है।

सर्वेपास मध्कत पछी बहुवचनान्त पुल्लिंग के मर्वनाम का रूप है। इसके प्राकृत रूप सन्वेसि ीर सब्बाण होते हैं। इतमें से, प्रथम रूप में सूत्र सख्या २ ७६ से मूल सस्कृत शब्द 'सर्व' में स्थित रंका लोब, २ न ६ में लोब हुए 'र' के परवात रहें हुए 'व' को द्वित्व 'ब्ब' की प्राप्ति श्रीर ३-६१ से मी निमित्त के बहुवचन में सम्क्रतीय प्रत्यय 'आम् के स्थान पर प्राकृत में वैकल्पिक रूप से इंनि=०र्सि' प्रत्यय का प्राप्ति हो हर प्रथम रूप सब्दे/से सिद्ध हो जाता है।

द्विताय रूप (मर्वेपाम=) सञ्जाए में 'सब्ब' श्रम की शादित उपरोक्त विधि श्रतुसार, तत्पञ्चात ानाग 'सब्य' में सूत्र मख्या ३ १२ से अन्त्य 'अ' को आगे पत्नी बहुवचन बीधक प्रत्यय का सदुमाय ाने से' 'श्रा की प्राप्ति श्रीर ३-६ से पच्छी विभक्ति के बहुवचन में सस्क्रतीय प्रत्यय 'धाम्' के स्थान र (प्राकत में) 'ण प्रत्यय की प्राप्ति होकर हितीय रूप सदशण भी सिद्ध हो जाता है।

अन्येपाम् मस्कृत पन्ठी बहु बचनान्त पुल्तिगके सर्वनाम का रूप है। इसके प्राकृत रूप अन्तेसि बीर अन्ताए होते हैं। इतमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या २-७= से मूल सस्कृत शब्द 'श्रन्य' में स्थित य' का लोव, २-=६ से लोव हव 'य' के पश्चात रहे हव 'न' को दित्य 'न्न' की प्राप्ति और २-६१ से रण्डी विभिन्ति के बहुवचन में संश्कृतीम प्रत्यय 'श्राम के स्थान पर प्राकृत में चैकल्पिक रूप से हैमि=एनि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप अन्तीर्स सिद्ध हो जाता है।

द्विताय रूप-(अन्येषाम्=) अन्नाण में 'अन्न' अग की प्राप्ति उपरोक्त विधि अनुसार, तरपञ्चात पाष्तान 'श्रन्त' में सूत्र सख्या -१२ से श्रन्त्य 'श्र' को 'श्रांगे पट्टी बहुबचन बोधक प्रत्यय हा सद्भाव होने से' 'श्रा' की प्राप्ति श्रीर ३६ से पन्ती विमक्ति के बहुवचा में मस्त्रतीय प्रत्यय क्राम' के स्थान पर प्राकृत में ण' प्रत्यय की पारित हो कर दितीय रूप अन्नाण भी सिद्ध हो जाता है।

अपरेपाम् संस्कृत प'डी बहुबचनानत पुलिंगा क सर्वनाम का रूप है। इसके प्राकृत रूप श्रवरेसि श्रीर अवराण होत है। इनमें से प्रथम रूप में मूत्र सत्या १-२३१ से मूल सस्कृत शब्द 'श्रवर' में रियत '1' के स्थान पर 'व' की प्राप्ति और ३-६१ से पट्टा विभक्षित के बहुवचन में संस्कृताय प्रत्यद 'श्राम' के स्थान पर पाकृत में थैकल्पिक रूप में 'देनिं = एनिं' प्रस्थय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप अवरोसें सिद्ध हो जाता है।

हिनीय रूप (श्रपरपामः) श्रवराण में 'श्रपर' श्रंग की प्राप्ति वपरोक्त विधि के श्रतुमार त वरचात् सूत्र मंख्या ३ १२ और ३ ६ मे उवराक्त 'धन्नाण' के समान ही साधनिष्ठा की प्राप्ति होकर दिनीय रूप अवराण भी निद्ध ही जाता है।

प्याम् सस्कृत पर्छा बहुवचनान्त पुल्लिम के मर्नानाम का रूप है। इनक प्राकृत रूप हो श्रीर इसाण होते हैं। इनम से प्रथम रूप में सुत्र सन्या ३-७२ से मूल मंश्कृत राष्ट्र इस्मू कशास्त्र प्राकृत में 'इम' रूप की प्राप्ति श्रीर ३ ६१ से पष्ठी विभायत के बहुवचन में संस्कृत रूप 'आम' के स्थान पर प्राकृत में बोकिस्पिक रूप से 'डेसिं=रिस प्रत्यय नी प्राप्ति होकर प्रथम रूप हैं। मिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप-(एप म =)इमारण में 'इस' श्रंग की भारित उपरोक्त विधि के श्रनुपार, तम्प्रण मूत्र सक्या ३-६२ से प्राप्तांग 'इस' में क्यित श्रन्त्य 'श्रा' के 'श्रामे पश्चा-बहुवचन प्रत्यक का महत्वा की से से कि को आपित श्रीर ३ ६ से प्राप्तांग 'उसा' म पश्चो विभावत क बहुव यन में महत्वाय करा 'श्राम' के स्थान पर प्राप्तन में 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर द्वितीय रूप क्रमाण भी निद्ध हो जाता है। '

्रतियास मस्कृत पट्टी चहुवचनात्त पुन्नित के मर्पनाम का स्व है। इसक प्राष्ट्रत श्व प्रदे और पद्माण होत हैं। इसमें स प्रथम स्व में सूत्र सख्य। १११ से मूल संख्न शहर प्रतर् में निर्ध्य स्व सहय हत्यत क्यान दें। का लोप, १९७० से 'त्र' का लोप और २-१ से पट्टा प्रिमाण हे बहुत्तर व्यान प्रयाप को लोप, १९७० से 'त्र' का लोप और २-१ से पट्टा प्रिमाण हे बहुत्तर में संस्कृतीय पत्यय 'खाम' क स्थान पर प्राकृत म बैकल्पिक स्व में देविं प्रत्यय की प्रतिहा हाकर इस साम 'देविं' में स्थित 'इ इससाह होने से 'प्या में स्थित खन्त्य 'खा' स्वर की हससाह हाकर इस साम का 'लोप, तत्वरचान शेष खात 'ल में उपरोक्त पिन प्रत्यय की सयोजना हाकर प्राणि हिंड हो जाता है।

डिनीय रूप (एतेवाम्-) व्याण में 'एक' और की प्रास्ति उपरोक्त विधि श्रानुमार, व्यास्त सूत्र मंख्यां ११२ से प्रास्तीय 'क्क्ष' में स्थित खत्त्व ख के 'खारी पट्टी महुवयन प्रस्वा होने से 'खा का प्राप्ति ३६ से प्राप्तीय 'क्क्षा' (म पट्टी विभक्ति क बहुववन) में संग्रुताव हरी 'खाम' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'ण प्रस्वय की प्राप्ति होक डितीय रूप प्रभुण मी मिछहा नाता है।

येपास सहत पष्ठा बहुयचनारत पुलिंग के सर्वनाम का सब है। इसक प्राष्ट्रन का तेरि हैं। जाण होते हैं। इसमें म प्रश्न सब में सूत्र संग्या १२११ से मूल सहत शहर 'यह' में किय व है स्थान पर 'ख' की प्राध्न, र ११ से खत्य हथन्त व्यक्तन 'द् का लीव, १ १ से प्राध्नीत 'न में बर्ज विमायन के बहुवनन में मेरिहनीय प्रत्यय 'खाम के स्थान पर प्राष्ट्रन से 'देनि' प्रत्यव ही व्यक्ति प्रत्यय देवि' में स्थिन 'ड' इत्यक्ष होन स 'व' में स्थिन खन्त्य स्थान पर प्राप्टन से होने प्रत्यव ही व्यक्ति होने प्रत्यव होने होने प्राप्टन प्रयक्ति होने प्रत्यव होने प्रयोजना होने प्राप्टन प्रवक्त होने प्रति कि होने जातन है।

माण की मिद्धि सुत्र कटवा है है में की गई है।

तेपाम् सहकृत पष्ठी बहुवचनान्त पुल्लिग के सवनाम का रूप है। इसके प्राक्रत रूप तेसि खीर गण होते हैं। इनमे से प्रथम रूप में सूत्र सरया १-११ से मृत सस्ट्रत रब्द 'तद्' में स्थित श्रन्त्य हतन्त यञ्जन द्' का लोप स्रोर ३६१ से प्राप्तांग 'त' से पच्छी विभक्ति के बहुवचन में सस्ट्रतीय प्रत्यय आम्' क स्थान पर प्राकृत में 'डेमि' प्रस्यय की प्राप्ति, प्राप्त प्रत्यय डेसि' में स्थित 'ड्' इत्मज्ञक ोने से 'त' में स्थित अन्त्य रेवर 'अ' की इत्सज्ञा होकर इस 'अ' का लोप एउ हलन्त 'त' में उपरोक्त इमिं' प्रस्यय की सयोजना हो कर प्रथम का तेसि सिद्ध हो जाता है।

ताण की सिद्धि सूत्रं सट्या ३३३ में की गई है।

केपाम् मस्कृत पच्छी बहुवचनान्त पुल्लिग के सर्वनाम का रूप है। इसके प्राकृत रूप केसि ्रीर काण होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या ३ ७१ स मृल सस्कृत शब्द 'किम' के स्थान पर .] कृत में 'क' श्रग की प्राप्ति श्रीर ३६१ से 'क' में पण्डी विमक्ति के बहुतचन में सःकृतीय प्रत्यय श्रिम्' के स्थान पर प्राकृत में 'टेनिं' प्रत्यय की प्राप्ति, प्राप्त प्रत्यय 'डेनिं' में स्थित 'ड' इत्सद्यक होने ी 'क' में श्थित श्रान्त्य स्वर 'श्रा' की इत्सवा होकर इस 'श्रा' का लोप एव हलन्त 'क' में उपरोस्त ग्रिमि' प्रत्यय की संयोजना होकर प्रथम रूप के*सिं* मिद्ध हो जाता है।

'काण' रूप की सिद्धि सूत्र सरया ३३३ में की गई है।

सर्पासाम् सम्कृत पर्वा बहुवचनान्त ध्यातिंग के सर्वनाम का रूप है। इसका प्राकृत रूप ाच्वेसिं होता है। इसमें सुत्र सख्या २ ०६ से मृत संस्कृत शब्द 'सर्ब' में स्थित इलन्त 'र्' का लोप, ।-इ. से लीप हुए 'र्' क परचात् रहे हुए 'व' की द्वित्व 'व्व' की प्राप्ति, ३ ३२ और २४ के विधान ्रों 'सन्त्र' में पुल्लिंगत्त्र से स्वीलिंगत्त्र के निर्माणार्थ 'छा' प्रत्यय की प्राप्ति स्वीर २६१ से 'सन्ता' ,रंपप्ठी विभक्ति के बहुउचन में सस्कृतीय प्रत्यय 'श्राम्' के स्थान पर प्राकृत में 'डेसिं प्रत्यय को प्राप्ति, ्राप्त प्रत्यय डिमिं' में रियत 'ड' इत्सद्यक होने से 'सब्वा' में स्थित खन्त्य स्वर 'खा' की इस्संद्या होकर ्राम 'त्रा का लोप एव हलन्त 'सध्य' में उपरोक्त 'एसिं' प्रत्यय की सयोजना होकर (पुल्लिंग रूप के उमान प्रचीत होने बाला यह स्त्रीलिंग रूप) सज्बेसि सिद्ध हो जाता है।

अन्यासाम् सरकृत पथ्ठी बहुबचनान्त स्त्रीलिंग के सर्वनाम का रूप है। इसका ब्राष्ट्रत रूप अन्नेति होता है। इसमें सुत्र सरया २ ७८ में मृल सम्द्रुत शब्द धन्य' में स्थित 'य' का लीप, २ ८६ में नीप हुए 'य के परचात रहे हुए 'न' को द्वित्व 'न्न' की प्राप्ति ३३२ छीर २४ के विधान से 'छन्न' ्रि पुल्लिमश्व से स्नीलिमस्व के निर्माणार्थ 'आ' प्रस्वय की प्राप्त और ३-६१से 'अन्ता' में पप्टी ्रीवमिक के बहुवचन से संस्कृतीय शराय 'खाम' के स्थान पर प्राकृत से 'हेमिं' प्रत्यय की प्राप्ति, प्राप्त भित्यय 'डेसि' में स्थित 'ढे' इंसझक होने से प्राप्ताग 'खन्ना' में स्थित ऋनय न्यर 'श्रा' की इत्सवा होकर इम 'धा' का लोप एव हलक्त 'श्रन्न' में उपरोक्त 'एसि' प्रत्यय की मयोजना होकर (पुल्लिंग रूप के समान प्रतात होने बाला यह हर्राचिंग रूप) अन्त्रीस सिद्ध ही जाता है।

तासाम, मरकृत पर्द्या चहुत्रचनान्त स्त्रीलिंग के सर्वनाम का रुव है। इनका प्राकृत रुव दर्भा है। इनका प्राकृत रुव हो। इनका प्राकृत है। इनका प्राकृत रुव के स्वान पर के से देव देव है। इनका को के से प्राकृत पर के स्वान पर के से प्राकृत पर के प्रावन के प्रावन के से प्राकृत हो। से प्रावन के स्वान पर के से प्राकृत पर के स्वान के से प्राकृत हो। से प्रावन के से प्राकृत हो। से प्रावन के से प्रावन

किंतद्भ्यां डासः ॥ ३-६२ ॥-

कितद्भ्या परस्यामः स्थाने डास इत्यादेशो वा भवति॥ कास । ताम । केमि । तेमि ॥

अर्थ —सरहत मर्वनाम 'हिम्' के प्राष्ट्रत रूपान्तर 'क' में और सरहत मर्वनाम 'द', ' प्राष्ट्रत रूपान्तर 'त' में पच्छी विभक्ति के बहुवचन में सरहतीय प्रत्यव 'खान्' क स्थान पर प्राप्त वैकल्पिक रूप में 'हाम' (शस्यव) वी प्राप्ति हुआ करती है। प्राष्ट्रत में वैकल्पक रूप में 'ढाम'। की प्राप्ति हुआ करती है। प्राकृत में प्राप्त प्रत्यच 'हाम' में स्थित 'ह्' इस्तात है, तर्मुवार' मर्यनाम रूप "क" और 'त' म स्थित स्थन्य स्थर' क" वी इस्तात होने से इम अस्य स्थर' क" की प्राप्त स्थर' क" की र 'त्" आ में उक रूप स्थाप हो चाना है एव तत्यस्यात रोप रहे हुण हलन्त मवनाम रूप "क" और 'त्" खा में उक रूप यहुवचन का प्रत्यय "टान=धाम" वो, सयोजना होती है। जैसे -देपाम्=का सीर क्ष्याम्ड वैकल्पिक पन्न होन से (क्ष्याम्=) प्रसि और (विपाम्=) वैकि रूप भी पनते हैं।

क्याम् महरूत पट्टी बहु हचनान्त पुल्निंग के सर्वनाम का रूप है इस के प्राष्ट्रन रूप हान की है। होते हैं। इन म से प्रथम रूप म स्प्रमान्या ३ ७१ से मूल संस्कृत शहर "किय" के स्थान पर प्रार "क" रूप को प्राप्त, ३ ६२ से प्राष्ट्रनीय "क" में पट्टी विभक्ति के बहु उचन में सास्त्रीय अव्यक्त स्थान पर प्राष्ट्रन में "टास" प्रत्यय की स्थान पर प्राष्ट्रन में "टास" प्रत्यय की प्राप्त, प्राप्त करवा "हास्" में स्थित कान्त्य शहर "क" वी इत्संहा होतर इम "का कोव पूर्व हलन्त "क" में उपरोध किर प्रथम रूप का स्थान वी स्थोनना होकर प्रथम रूप का स्थान ही।

कार्स की मिदि मूत्र मन्या हहा में की गई है।

नेपास संग्रत पर्छ। यहयपना'त पुल्लिम सर्वताम का रूप है। इस के प्राहत हर शास है तेनि होते हैं। इन म से भ्रम रूप में सूत्र मध्या १-११ से सूत्र संग्रत राध्य "तर्" म स्वित हैं া্,লেন্র অগ্রন "दू" का लोप, ३ ६२ से प्राकृतीय प्राप्ताग "त" में पष्टी विभक्ति के बहुवचन में सस्कृतोय 'र त्यय ''आम्'' के स्थान पर प्राकृत में ''डाम'' प्रत्यय की शाप्ति, प्राप्त प्रत्यय 'डास'' में स्थित 'हु' पहत्सज्ञ होन से "त" में स्थित अन्त्य स्वर "अ" की इत्सज्ञा होकर इस "अ" का लोप एव हलन्त "त" ामें उपराक्त "ढाम=त्रास" प्रत्यय की सयोजना हाकर प्रथम रूप तास सिद्ध हो जाता है।

तें।सें रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या ३ द? में की गई है। ३-६२ ॥-

15

किंयत्तद्वभयोडसः ॥ ३-६३ ॥

एम्यः परस्य छत्तः स्थाने डास इत्यादेशो वा भगति । छतः स्तः (३-१०) इत्यास्यः-ानादः । पचे सोपि भनति ॥ कास । कस्स । जास । जस्स । ताम ।तस्स । बहुलाधिकारात् । कितद्भयामाकारान्ताभ्यामपि डासादेशो चा । कस्या धनम् । कास धण ॥ तस्या धनम् । तास वस्य । पच्चे । कार्य । तार्य ॥

अर्थ —सस्कृतीय सर्वनाम किम्, यद श्रीर तद् के कम से प्राप्त प्राप्टत रूप "क", "ज" श्रीर "त" में पट्टी विमक्ति के बचन में सस्कृतीय प्रत्यय "इस्=झस्" के स्थान पर प्राकृत में "इ।स" का श्रादेश पैकल्पिक रूप से हुवा करता हैं। पाछत में आदेश रूप "डास" में स्थित "ड" इत्सझक है. नदनुमार प्राकृत सर्वनाम रूप 'क' 'ज' श्रीर 'त' में स्थित श्रन्त्य स्वर 'श्र' की इत्सद्धा होने से इस अन्त्य स्वर 'अ' का लोप हो जाता है। एव तत्परचात शेप रहे हुए हलन्त सर्वनाम रूप 'क', 'ज' श्रीर 'त' में उक्त पष्ठा एकत्रचन का प्रत्यण 'हास = श्रास' की संयोजना होती है । जैसे -कस्य = कास, याय=त्रास श्रीर ताय = तास । इमो तृताय पाइ के दशकें सुत्र में यह विशाव विशिवत किया गया है कि 'सस्कृतीय पष्ठी विभक्ति के एकवचन में प्रस्यय 'डस≃श्रस्' के स्थीन पर प्राकृत में 'स्त' का त्रादेश होता है। तुरतुसार उक्त सूत्र सख्या ३-१० के प्रति इस सूत्र (३-६३) को अपवाट कर सूत्र समक्तना चाहिय। इस प्रकार इस अपवाद रूप स्थिति को ध्यान में रखकर हो प्रन्थ कसी ने 'वैकलिपक स्थिति' का उल्लेख दिया है, तरनुसार वैकलिपक स्थिति का सङ्माव होने से पत्तान्तर सें सूत्र सख्या ३ १० के आदेश से 'क', 'ज' और 'व' सर्वनामों में पष्ठी विमक्ति के एक उपन में प्राकृत में 'स्त' प्रत्यय का श्रस्तित्व भी स्वीकार करना चाहिये। इस विषयक उदाहरण इम प्रकार हैं --षस्य=षस्त, यस्य=नश्त श्रीर तस्य=तस्त ।

'बहुल' सूम का अधिकार होने से 'क' के स्त्रीलिंग सप का' में और 'त' के स्त्रीलिंग सप 'नर' में भी पष्ठी विभक्ति के एकवचन में मस्हलीय प्रत्यय 'इस् = श्रास्' के स्थान पर प्राष्ट्रत में वैकिश्क रूप म 'हाम' आदेश हुआ करता है। प्राप्तत में आदेश 'हाम' में स्थित 'ह' इसहार है, तर्तुमार माइन सर्वनाम स्त्रीलिंग रूप 'का' और 'ता' में स्थित आन्त्य स्वर 'आ' की इत्मला होने से इम अन्त्य

ध्यर 'था' का लोप हो जाता है एव तत्वरचात रोप रहे हुए हलत्व सर्वनाम रूप कृ और र् चरत पच्छी विमक्ति एकपचन (बोधक प्रत्यम, हास-थान' की सबोजा होजी है विमन्त धनम्-काम वण रे और तस्या धनम्-वास घण वैकल्पिक पन्न का सब्भाव होन महक् म 'कस्या' का 'काप' रूप भी बनता है और 'तस्या' का 'ताए' रूप भी होता है।

करण सस्हत पष्ठो एक वचनान्त सर्वनाम पुल्लिंग का रूप है। इसके प्राष्ट्रन रूप कन्म होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या ३-७१ से मून सस्हत शान्त 'विमृ के स्थान पर में में क' रूप की प्राप्ति श्रीर ३-६३ से 'क' में पष्ठी 'विमक्ति के एक वचन में मस्हतीय प्रथम 'वन क कस्थान पर प्राकृत म चैकलिक रूप से 'हास=श्रास' प्रस्थय की (श्रीदेश) भाष्ति हो इर प्रथम प्रमान मिद्ध हो जाता है।

कस्त रूप की सिद्धि मृत्र सहया ? २०४ में की गई है।

हितीय रूप-(यस्य=) जस्म मं पूर्वीक रीति से प्राप्तांग 'ज' म सूत्र-सख्या ३ र० से पर्शिक्षिणे के एक चयन में संस्कृतीय प्रत्यय 'क्सू=धस्' के स्थान पर प्राकृत म 'स्न' मरयय की प्राप्ति होपरिंदि रूप जरस भी सिद्ध हो जाता है।

तम्य सरकृत पर्छा एक वयनान्त पुल्लिंग के सर्वनाम का रूप है। इसके प्रावृत स्वताम की हुई हाते हैं। इनमें से प्रथम रूप म सूत्र सत्या १-११ से मूल संस्कृत शर्द 'तद' में स्थित कारव हवात कार्य 'द' का लोप, और ३ ६३ से 'त' में पर्छा विमक्ति के एक वयन में माकृताय प्रत्यव इस्टब्स कार्य पर प्रावृत में वैश्वन्यिक रूप से 'खाम=वान' प्रत्यव का प्राप्ति हो कर प्रथम रूप तास निव हो जागई।

तस्त रूप की मिश्चि सुत्र सन्या २-१८५ में की गई है।

कस्या सन्द्रन पट्टी एक प्राप्तान्त स्त्रीतिन सर्यनाम का त्य है इसक प्राप्तन हर कास सी। वि होते हैं। इतमें से प्रथम कर्य में सुत्र संस्था ३-३६ से मूल सर्गन शहर किया के स्थान पर 'छ' हाई हान्ति दीर १ और १४ के निर्देश से 'क' से पुल्लियान से स्त्रोतिन न के निर्माण हेतु 'क्षा' हाई है हान्ति दीर १६१ की ज़ित से प्राप्तान 'का' में पट्टी विभाग के एक बचन म संस्कृतिय शामस्व इन्हें 'एस्-क्षम' के स्थान पर प्राप्तन में पैकल्पिक हुए से 'डाम-क्षाम' प्राप्ता की ब्यारेश-पालि शक्त हुन्हें रूप कृत्य सित्त हो जाता है। क ।तपाप्प ।६ण्व। व्याख्या साहत # [१३७] दितीय रूप-, कस्या=) काए में सूत्र सख्या ३-२६ से उपरोक्त रीति से प्राप्ताग 'का' में पच्ठी विमक्ति के एक वचन में संस्कृतीय प्रत्यय 'दस्=ग्रस' के स्थान प्रर प्राकृत में 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति होकर दितीय रूप थाए सिद्ध ही जाता है।

पिर्टीर रेडिन सख्या २-५० में की गई है।

र्द्धवचनान्त स्त्रीलिंग के सबनाम का रूप है। इसके प्राकृत रूप तास 🕼 कृप में सूत्र संख्या १-११ से मूल संस्कृत शब्द 'तद्' में स्थित धन्त्य के निर्माण किया है। के निर्माण हैत चा' प्रत्यय की प्राप्ति और है है। की पृति से 'ता' में पच्ठी विभक्ति के एक वचन में संस्कृतीय प्रत्यय है विकल्पिक रूप से 'डास = आस' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप

र्वे कुमें सूत्र-सख्या ३ २६ से उपरोक्तत रीति से 'ता' में पण्ठी विमन्ति 🖟 अस[े] के स्थान पर प्राकृत में 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय

ईर्देभ्यः स्ता से ॥ ३-६४ ॥–

किमादिभ्य ईदन्तेभ्यः परस्य उसः स्थाने स्ता से इत्यादेशी वा मततः । टा उस्-छ दादिदेद्वा तु इसेः (३-२६) इत्य स्यापवादः । पत्ते श्रदादयोपि ॥ किस्ता । कीसे । कीश्र । ोश्रा। की इ। की ए ॥ जिस्मा। जिसे । जी स्राजीश्रा। जी इ। जीए ॥ विस्सा। वीसे । ोश्च (तीश्चा । तीइ । तीए ।।

अर्थ -संस्कृत सर्वनाम 'किम्' यद तद् के प्राकृतीय ईकारान्त स्त्रीतिंग रूप 'की जी-ती' में रें पष्ठी विभक्ति के एकवचा में सस्कृतीय प्रत्यय 'इस्=श्रप्त' छे स्थान पर प्राकृत में बैकल्पिक रूप ने एव कम से 'स्सा' और 'से' पत्ययों की प्राप्ति हुआ करती है। इसी तृतीय पाद के उन्नतीसवें ्र में यह विधान निश्चित किया गया है कि 'सस्कृतीय पर्छा विमक्ति के एकवधन में प्रत्यय इस=अस' के स्थान पर प्राकृत में स्त्रीलिंग बाते शब्दों में 'खत्=अ, आत्=चा, इत्= इ श्रीर ृत्≕ए' प्रत्ययों की क्रम से प्राप्ति होतो है। तरनुमार उक्त सूत्र संस्या ३ २६ के प्रति इम सृत्र (० ६४) ही अपवाद रूप सूत्र सममता चाहिये। इम प्रकार इस अपवाद रूप स्थिति को प्यान में रखकर ही न्य-कत्ती ने 'वैकेल्पिक स्थिति का उल्लेख किया है, तद्तुसार वैकल्पिक स्थिति का सद्माव होने से लान्वर में सूत्र-संत्या ३-१६ के घादेश से स्त्रीलिंग वाल सर्वनाम रूप 'की-जी-ची' म पच्छी विभक्ति के एक्वियन में (प्राइत में) 'झत्=झ, धातुआ, इत्=इ और एत्=ए' प्रत्ययों का भी

हम से अस्तित्व स्वीकार करना चाहिये। हम से चदाहरण इस प्रकार है — कस्य =(३ ६४ हे किए से) किस्मा जीर कीसे एवं (३ २६ के जिधान से) पत्तान्तर में कीश्र, कीश्रा, वीह बीर व यस्या = जिस्मा श्रीर जीसे, पत्तान्तर में जीश्र, जीश्रा, जीइ श्रीर जीण। तस्या, = तिस्मा बीर नः पद्मान्तर में तीश्र, वीश्रा, वीइ श्रीर तीए।

कस्या महत्त पष्ठो एकवचनान्त रत्नीलग के सर्वनाम का रूप है। इनके प्राइत रूप कि से, की ख्र, भीखा, की इ चीर कीण होते हैं। इनकें से प्रथम रूप में सूत्र मख्या रे अर म मूक्त कर प्राहर 'किम के स्थान पर प्राहन में 'क' ज्या की प्राप्ति, रे ३२ से 'क' में पुल्लिगान्द से ग्राहि के निर्माण हेतु डी = ई' प्रस्यय की वैकल्पिक रूप से प्राप्ति रे ६४ से 'की' में पष्ठी विभवित के में साकृतीय प्राप्तव्य प्रस्यय 'इस = ज्यान के स्थान पर (प्राकृत में) 'स्सा' प्रस्यय की प्राप्ति कीर के से प्राप्त प्रस्यय 'स्मा' मयोगात्म के होने से ज्या रूप 'की' में स्थिन टीपरेस्टर 'ई' के स्थान पर। स्तर 'इ' की प्राप्ति कोकर प्रथम रूप किस्सा सिद्ध हो चाते हैं।

द्वितीय रूप (कस्या) = की में भी भी भी भी भी की प्राप्ति का विधान वयरोक्त रीति में तःपरचान सूत्र मद्या ३६४ में प्राप्तांग 'की' में पच्छी विश्वक्ति के एकवचन में मस्प्रतीय प्रवर्ष काम' के स्थान पर प्राफ़त में 'में' प्रत्यय की मास्ति होकर द्वितीय रूप करिस सिद्ध हो जाता है।

हतीय रूप म छट्टे रूप तक (कर्याः =) कीख, काचा, कीई चीर कीए में 'ही' चार ही। का विभाग चपरेक गीत से एन तरश्चात सूत्र तख्या २२६ से प्राप्तांग 'की' में पछी किर्मेंट एक्ष्यचन म संस्कृतीय प्रत्यव 'हम = चम' के स्थात पर प्राकृत में क्रम से 'ख चा इए' प्रत्यों प्राप्ति होकर क्रम से कीअ, कीआ, कीड चीर कीए रूप सिद्ध हो जाते हैं।

यस्या संस्कृत पष्टी परवचनात्त र्झालिंग के मयनाम का स्व है। इसके प्राकृत रूप किम कीम जीया, जीखा, जीद और जीए होत हैं। इसमें से प्रयम रूप म सूत्र मध्या १-६११ में ६ संस्कृत शब्द यद में स्थित 'य क स्थान पर 'ज' की प्रास्ति, १-११ से खन्दा हलन्त स्वयंत 'द हि होप, ३ ३३ से प्रास्तोंग 'ज' मं पुल्लिंग व से स्थ्रीलिंगच के निर्माण हेतु 'डी=ई' प्रस्थय की प्रास्ति, ३' से प्रास्तोंग जा मं पछा विमक्ति के एकप्यत्त म संस्कृतीय प्रस्थय 'इस=खस कश्यान पर शार्र'३' 'हमा प्रस्थय की प्रास्ति और १ = ८ से पास्त प्रस्थय 'स्सा' संयोगात्मक होने से ख्या रूप 'झी में हिन दीर्पश्यर 'ई' के स्थान पर हश्य स्वर 'ई' की प्रास्ति होकर प्रयस रूप जिस्ता। विद्व हो आगा है।

दिनीय कर (येग्या≔) नीमें में 'जा' श्रंग की ब्रोप्ति का विधान उपरोक्त रीति में पर्व तन्त्रण्य मृत्र मरुपा ६ २२ से प्राप्तीय 'नी' में परठा विभक्ति के एक्ष्यमन सं संस्कृतीय दायय 'इन्द्रमण्ड स्थान पर भाइन स 'में' प्रायय की पानि काकर दिनीय कप जीस सिद्ध ही आगा है।

ए गोव रूप से छुट्टे रूप तर-(यन्याः=) जीच, जीचा, जाइ चीर जीए से 'जी' कार के किं हा विचार दर्शक गीति स पर्यं तत्काचान सूत्र संख्या ३०६ से प्राप्तांग 'जी' स वर्ष्ण विस्^{त्र क} ा{ -ात्राचन में सस्मृतीय प्रत्यय 'इन्स्≃ श्रास' के स्थान पर प्राकृत में कम से 'श्र आरा इण' प्रत्ययों की प्राप्ति क्षा एए हम से तृतीय रूप से छठे रूप तक अथात जीज, जीजा, जीइ और जीए रूप सिद्ध हो

तस्या मस्कृत पच्ठी एकवचनान्त श्वीजिंग के सर्वनाम को रूप है। इमके प्राकृत रूप तिस्सा, , तीम, तीम्रा, ताइ बीर तीण होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में से सूत्र सख्या १-११ से मूल सरकृत ितद्म स्थित श्रन्त्य हलन्त व्यञ्जन 'द्' का लोप, ३ ३२ से प्राप्ताग 'त' पुल्लिगस्य से स्त्रीलिंगस्य ेनेर्माण हेतु 'डी=ई प्रत्यय क्रो प्राप्ति, ३ ६४ से प्राप्तांग 'वी' में पच्ठी विसक्ति के एकवचन में ¹हतीय प्रत्यय 'इस=ग्रस' के स्थान पर प्राकृत में 'स्सा' प्रत्यय की प्राप्ति श्रौर १ ५४ से प्राप्त प्रत्यय ी' सबोगोत्मक होने से खग रूप 'ती' स्थित दीर्घ 'ई' के म्थान पर इस्त्र 'इ' की प्राप्ति हो कर प्रयम *ितिरसा* सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप-(तस्या =) सीमे में 'ती' श्रम की प्राप्ति का विधान उपरोक्त रीति से एव गरचात सत्र सख्या ३ ६४ से प्राप्ताग 'ती' में पष्ठी विभक्ति के एकवचन में सरक्रतीय प्रस्यय 'इस= ंस' के स्थान वर प्राकृत में 'से' प्रत्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप तीसे सिद्ध हो जाता है।

क्तीय रूप से छट्टे रूप तक (तस्या =) तीख्र, तीख्रा, तीइ ख्रीर तीए में 'ती' खर्ग की पारित का धान उपरोक्त रोति से एव सपरचान सूत्र सहवा ३ २९ से प्राप्तांग ती' में पच्ठी विभक्ति के ^कनवचन में सस्क्रतीय प्रत्यय 'डम≕त्रम् के स्थान पर प्राक्तन में कम से 'श्र-श्रा-इ-ए' प्रत्ययों ी प्राप्ति होकर प्रम से तीअ, तीआ, तीइ व्यीर तीए रूप सिद्ध हो जाते हैं। ३ ६४ ॥-

डेर्डाहे डाला इन्ना काले ॥ ३-६५ ॥–

कियच्छ्रयः कालेभिधेये हो स्थाने आहे आला इति हितौ इम्रा इति च आदेशा वा तन्ति । हि स्मि स्मित्थानामपवादः । पत्ते ते पि भनन्ति ॥ काहे । काला । कहया ॥ जाहे । 'ला। जाडया ॥ त.हे । ताला । तहया ॥

वाला जायन्ति गुणा जाला ते सहित्रपहिँ घेषान्ति । पत्ते । कहि । कहिम । किम । स्थ ॥

अर्थ - चव 'किम्, यह और तद्' शन्द किमी काल वाचक शब्द के विशेषण रूप हो, तो इतक ताष्ट्रत रूपा तर में सप्तमी रिमक्ति के एक रचन में सस्क्रीय प्रत्यर 'डि≃र' के स्थान पर चैकत्रिक रूप से थोर कम से खाहे, दाला और इथा' प्रत्ययों की खादेश प्राप्ति हुखा करती है। प्राप्त प्रायय 'दाहे खीर हाला' में स्थित ह' इत्सन्नक है, अनव्य प्राक्तन में प्राप्ताग 'क, ज बीर त' में स्थित खन्य स्वर 'छा की इसझा होकर इम 'छ' का लोव हो जाता है, एव तत्वरचात रोपांग हलन्व 'क्, ज् चीर त्' में बक्त प्रयय के रूप में 'आहे और आला' (प्रत्यवों की सणेजनो होता है। इसी कृतीय पाद क सूत्र मस्या १ 'क के दे-४६ में कम से यह विधान निरियंत किया गया है कि 'सस्कृतीय मध्यती विमक्ति क वह दक्षा प्राप्तव्य प्रत्याय' 'कि = इ' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'हि, मिन, मिन और त्य' प्रस्यायों की आदश्य प्राप्त कि क दे दे हैं, तहतुमार चक्त सूत्र-संख्या ३ ६० और दे ४६ के प्रति इस सूत्र (३ ६४) को अवशद रूप सूत्र मानत्य पाहिये। पद्मानतर में हिं, सिन, मिन और त्य' प्रत्यवों का अस्तित्य भी है, नेपा ध्यान में १०० प्राप्तिय। पद्मानतर में हिं, सिन, मिन और त्य' प्रत्यवों का अस्तित्य भी है, नेपा ध्यान में १०० प्राप्तिय। पद्मानतर में हिं, सिन, स्था

कश्मिन् = (किस समय में) = काहे, कला, कड्बा चीर पदान्तर में कहिं, कला, क्रिय व कत्य । यहिमर्= (निस समय में) = नाडे जाला चीर जहमा, पदान्तर म जहिं, ज्ञाम, जैन के हैं जत्य (भी होते हैं)। तिमन = (चन मनय में) = वाहे, वाला चीर तहमा एवं पदान्तर में की तहिंत, तिमा चीर तत्य (भी होते हैं)।

किनी मन्य विशेष से पन्य-कर्ता ने खपने मन्तब्य को स्पष्ट करने के लिये निग्नीक हर्त्य हैं यत्ति में बदधत किया हैं —

संस्कृत -त्रिमन् जायन्ते गुणा यश्मन् ते सहस्यै गृह्य से ।

पाकृत स्पान्तर —वाला जाधन्ति गुणा जालो ते महिश्रपहि पेपन्ति ।

हिन्ही मावार्य — इस भगय में गुण (वास्तर में गुण रूप) होते हैं, जिस मगव म म (हुई) महस्य पुरुषों द्वारा बहण किये जाते हैं। (यथवा स्वाकार किय जाते हैं)।

इम दृष्टान्त में 'त' चीर 'ज' राष्ट्र समय वाषक स्विति के बोतक हैं; दर्गालिये इनमें सूत्र-गंधा ३ ६४ के विचानानुमार 'दाला = खाला' प्रश्यव की संयोजना की गई है, यो अन्यव भी मनन क्षेत्रा चारिये !

यानिमन् संस्त्र सत्तर्गा एक्यवनान्त (समय स्थिति योवड) विशेषण कर है। इसके पाइं रच काहे, काला, कहवा, किलि किलि, किम जीट क्रम हाते हैं। इसमें से यथम कर में गृह संस्त्र इ-३१ से मून संस्त्र राग्द किम् क स्थान यह प्राष्ट्रत में 'क' बंग को मान्ति चीन दे ६४ में पाउं 'क' में (समय स्थित योपकता के कारण में) मध्यमीनिवादित के एक्ष्यपन म मेर्डा स्वयव विश्व क स्थान यह प्राष्ट्रत में 'हादे-मांद' प्रायय या आदेशन्याच्या यैक्टिन कर से हाकर ममन की चाहे सिक हो जाता है।

हिमोब और मुनीय कर 'काल पत्र कड्चा' में मूत्र 'ढ' खंग की म्रांजि वसीन विधि क्यामार एवं सल्दरवात् सूत्र संख्या दे ६६ में प्रथम कर के समान ही कम में स्था पैर्टायव हरे हैं 'कासाल्याला और इसा' प्राचया की खाहेरा प्रान्ति हाकर काम और कड्चा कप मिळ हो जाते हैं है

चतुर्थ रूप 'कहिं' की सिद्धि सूत्र सख्या ने ५० में की गई है। 'किस्ति' में 'क' खड़ की प्राप्ति का विधान उपरोक्त रीति अनुमार एव तत्पश्चात सूत्र-सख्या ४-४६ से समर्गा विभक्ति के एक वचन में सरकतीय प्रत्यय 'डि=इ' के स्थान पर शकत में 'स्ति' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर पचन रूप कास्ति सिद्ध हा जाता है।

'कम्मि' में भा उपरोक्त पचम रूप के समान ही सत्र मख्या ३-४६ के विचान से 'स्ति' प्रत्यथ की प्राप्ति होकर छटा रूप क*िम* सिद्ध हो जाता है।

'कत्थ' में भी उपरोक्त प्रवस रूप के समान ही सूत्र सख्या ३ ४६ के विधान से 'त्थ' प्रत्यय की माप्ति होकर सप्तम रूप कत्थ सिद्ध हो जाता है।

यहिमन् सस्कृत सन्तर्मा एक वचनान्त (समय स्थिति बोधक) विशेषण रूप है इसके प्राकृत रूप बाहै, जाला श्रीर जहजा होते हैं। इनमें से अथम रूप में सूत्र सख्या १-२४४ से मल संस्कृत शब्द 'यद' में स्थित 'य के स्थान वर 'ज' की प्रान्ति, १-११ से छान्त्य हलन्त हयझन 'द' का लोप और ३-६४ से प्राप्ताग 'ज' में सप्तमी विमक्ति के एक वचन में सस्क्रतीय प्रत्यय 'डि≔इ' के स्थान पर प्राकृत मे 'ढाहे-श्राहे' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप जाहे सिद्ध हो जाता है।

जाला में 'ज' प्रम की प्राप्ति उपरोक्त विधि विधान के अनुसार एव तत्पश्चात सूत्र सरया ३-६४ में प्रथम रूप के समान ही 'आला' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर द्वितीय रूप जाला सिद्ध हो जाता है।

जहया में 'ज' श्रम की प्राप्ति का विधान उपरोक्त राविन्श्रनमार एव तत्पश्चात सत्र-मख्या ३-६४ षे प्रथम दितीय रूपों के समान ही 'इन्ना' प्रत्यय की प्राप्ति होकर तृतीय रूप जड़आ मो मिद्ध हो जाता है।

तिस्मिन् सरकृत सप्तमी एक वचनान्त (समय स्थिति बोधक) विशेषण रूप है। इसके प्राकृत रूप ताहे, ताला और तहथा होते हैं। इनमें सत्र-सरया १-११ से मृत सस्कृत शब्द 'तद्' में श्यित अन्त्य हलन्त ज्यञ्जन 'द्' का लोप श्रीर ३ ६४ से ग्रामाग 'त' में सन्तमी विभिन्त के एक वचन में मस्त्रतीय प्रत्यय 'हि=इ' के स्थान पर कम से 'हाहे = चाहे, हाला = खाला और इथा' प्रत्ययों की खारेरा प्राप्ति होकर तीनों रूप ताहे, ताला और तहना सिद्ध हो जावे हैं।

'ताला' रूप की सिद्धि इसी सूत्र में ऊपर की गई है।

जायन्ते सस्त्रत अकर्मक कियापद का रूप है। इसका प्राकृत रूप जाश्रन्ति होता है। इसमें मुत्र सख्या १-१७० से 'य' का लाप और ३-१४२ से वर्तमान काल के प्रथम पुरुष के बहु वचन मे मरहतीय आत्मनेपदीय प्रत्यय 'न्ते के स्थान पर प्राकृत में 'न्ति' प्रत्यय की प्राप्ति होकर जाओन्न रूप सिद्ध हो जाता है।

'ग्रणा' रूप की सिद्धि सुत्र सख्या १ ११ में की गई है।

'जाला' रूप की मिद्धि सत्र सख्या १ 75% में की गई है !

ं 'ते' (मयनाम) रूप की मिद्धि मुत्र समवा १-२३९ म का गई है।

'महिअएहिं रूप की मिद्धि मृत्र मरया १ २६९ में की गई है।

घिष्णीन रूप की सिद्धि सत्र सख्या १ २६९ में की गई है।

इसे म्ही ॥ ३-६६ ॥-

र्तियत्तर्यः परस्य द्वमेः स्थाने स्हा इत्यादेशो वा माति ॥ कस्हा । जन्हा । तथा । पने । काथो । जाथो । ताथो ।

अर्थ — मान्नुन मर्थनाम 'हिम यह तहू' के ब्राइत स्वान्तर 'क च न' स व्रव्रश विर्मार एक्यचन में मान्नुनीय प्राप्तत्रक्ष प्रस्थव 'हिम = अम्' के स्थान पर ब्राइन में बैकिट्स रूप में मान्यादेश की ब्रादिश की प्राप्ति हुआ करती है। जैमें — करतात् = प्रम्हा, यमात = प्रम्हा चीर त्यमात् = हिम्हे किल्क पर का विधान होने में पत्तान्तर में सूप मर्ख्या दे = कियान से बवाल 'ह अमर्थामों में 'चो, दो = श्रो, दु = ज, हि. हिन्दो चीर हुक् प्रस्थां की भी वाध्नि कम में हुमा वास्ति है। जैमें — करमात् = काव्या, (तुचो, काड, काटि, काटिन्तो चीर का चाहि, जाहिन्तो चीर का) पूर्व नरमात् = ताचो (तचो, ताड, ताहि, ताहिन्तो चीर का) पूर्व नरमात् = ताचो (तचो, ताड, ताहि, ताहिन्तो चीर की वीर की

वस्त्रात् संग्रेन पञ्चमी एक यचनान्त मुहिनम सर्वनाम रूप है। इसके प्राष्ट्रन रा क्या होते हैं। इनसे माध्यम रूप में सूत्र मनवा दे रहे में मून मंस्ट्रन शाह किया व स्थान पर 'ह है। की कार्रेश प्राप्ति कीर दे देव में प्राप्तीय 'क' में पञ्चमी विमात्त के एक वचन में संस्ट्रतीय प्रत्य 'ह है क्या' के स्थान पर प्राप्तन में पैठलियह रूप म 'स्टा' बत्यव ही आदेश ब्राप्ति हो हर प्रथम हप करें। मिस्त हो जाना है।

डितीय रूप (बश्माम् =) श्वाची में 'क' श्रांत यो प्राप्ति वयरोष्ट मापनिद्या से घनुष्पत्र स्वाच्याम् मृत मन्या ३ रेश्य प्राप्तिति के में मियत श्रा य हृष्य श्रद्ध 'श्रा के ब्यान पर 'ज्ञाम प्राप्ति विद्यापत्र प्राप्ति प्रा

करमान संस्तृत प्रत्यम्। एवं विषयान सुनिता के सर्वाम का त्रव है। इसके माहण हर की स्त्रीर जाकी हात है। इतमें संअधम कर संस्वासंग्रा है २८८ संसूत्र संस्व जाह 'यह' में स्वितं 'व' हैं स्वास पर 'स' ही जाता, १९१ में सान्य हजात व्यक्तन हूँ का लीव सीर है हह संज्ञालना हैं के वक्रमां विभक्ति के तक यथा में मस्त्रत यं भाग्य 'स्वाम क्याम' है स्वास यह बाहुत में वैक्षतिक हम हैं 'वहां बायय है। सावश्च सान्त हाहर समस हय जम्हा सिख है। जाता है। s soon people to a succession of succession of the second of the second

द्वितीय रूप (यस्मात =) जाओं में 'ज' श्रम की प्राप्ति उपरोक्त सायनिका के श्रातुसार, सत्परवात सूत्र सत्या ३-१२ से प्राप्तांग 'ज' में स्थित श्रन्त्य ह्रस्व स्वर 'श्र' के स्थान पर दोर्घ स्वर 'श्रा' की प्राप्ति श्रीर - से प्राप्ताग 'जा' में उपरोक्त रीति से पद्भमी विमक्ति के एक वचन में श्री' प्रत्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप जाओं भी सिद्ध हो जाता है।

तरमात् सस्कृत पञ्चमी एक त्रचनान्त पुलिला के सर्वनाम का रूप है। इमके प्राकृत रूप तन्द्रा आरे ताओ होते हैं। इनम से प्रथम रूप में सूत्र सख्या १-११ से मूल सस्कृत शब्द 'तद्र' में थित अन्त्य हलन्त व्यञ्जन 'द्' का लीप और ३ ६६ से प्राप्ताग 'त' में पञ्चमी विमिन्नत के एक वचन में सस्कृत प्रत्यय 'डिम = अस' के स्थान पर प्राकृत में वेकल्पिक रूप से 'म्हा' प्रत्यय की (आदेश) प्राप्ति होकर प्रथम रूप तम्हा मिद्र हो जाना है।

द्वितीय रुप-(तस्मात्=) ताक्यों में 'त' क्या की प्राप्ति उपरोक्त साधिनका के अनुतार, सत्परचात् सूत्र सख्या ३-१२ में प्राप्ताग 'त' में स्थित श्रन्त्य हाल स्वर 'क्या' के स्थान पर दीघ स्वर 'श्या' की प्राप्ति और ३ म से प्राप्ताग 'ता में उपरोक्त रीति से पत्र्वमी विमस्ति के एक प्रचन म 'दी= भो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर द्वितीय रूप ताओं भी सिद्ध हो जाता है। ३ ६६॥-

तदो डो: ॥ ३-६७ ॥

तदः परस्य क्रमेडों इत्यादेशो वा भवति ॥ तो । तम्हा ॥

भर्थ — सस्कृत सर्वनाम 'तद्' के प्राकृत रूपान्तर 'त' में पठ्यमी विमक्ति के एकवचन में स्टातीय प्रामच्य प्रत्यय 'हिन = अस्' के स्थान पर प्राकृत में यैकिल्पक रूप से 'डो' प्रत्यय की चाडेश मिति हुआ करनी है। प्राप्तय का चाढेश मिति हुआ करनी है। प्राप्तय का का होकर इस 'अ' स्वर का लोप हो जाता है, एव तप्यरचात लेपांग स्वत अन्त्य हुग्व स्वर 'अ' का इस्तझा होकर इस 'अ' स्वर का लोप हो जाता है, एव तप्यरचात लेपांग हजन्त 'त' सर्वनाम में उदस प्रत्य 'ओ' की सयोजना होती है। जैसे — तम्मान् हो। वैकल्पक पन का सर्माव होने से पत्तान्तर में सूत्र सख्या -६६ के विधान से (तस्माव =) तम्हा रूप की प्राप्ति होनी है। 'तम्हा' रूप में मी वैकल्पिक पन का सर्माव है अत्यय सूत्र सख्या ३ म के विधान में (तम्मान् =) 'तम्हा' तथा ताहि, ताहिन्ती और ता' रूपों का भी सर्माव जानना चाहिये।

तस्मात् मस्कृत पञ्चमी एकवचनान्त पुर्हितग के मर्बताग का रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप 'तो' आर 'वन्हा' होते हैं। इसमें से प्रथम रूप में सूत्र सत्या १ ११ से मूल सस्कृत शब्द 'तद्' में स्थित श्रन्तव हता व्यञ्जन 'द्' का लोव त्रीर, १-६० से प्राप्तांग 'न' में वञ्चमी विभक्ति के एकवचन में सस्कृतीय प्रयाप 'दिस=अस् के स्थान पर प्राकृत में वैकल्पिक रूप से 'डो=धी' प्रत्यय की (आदेश) प्राप्ति होकर प्रथम रूप 'तो' सिद्ध हो जाता है।

'तम्हा' की मिढि सूत्र मत्या ३ ६६ में की गई है। ३ ६७ ॥

किसो डिखो-डीसो ॥ ३-६८ ॥

किमः परस्य हसेर्डिगो डीस इत्यादेशी वा मनतः॥ किगो । कीम । वम्हा ॥

अर्थ -सस्टत सर्पनाम 'क्मि' क प्राकृत रूपान्तर 'क' में प्रवसाविमाल के प्रवस्त र संख्ठीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'हमि=श्रम्' के स्थान पर प्राक्तन में वैकल्पिक सूत्र से 'हिए। श्रीर होम प्रचर्र मी बादेश प्राप्ति हथा करती है। श्रादेश प्राप्त प्रत्यव 'हिलो चीर होस' में श्रिन 'ह' इमहाई तद्तुमार प्राकृतीय अग प्राप्त रूप 'क' में न्यित अन्त्य स्वर 'अ की इत्मंत्रा होकर इम 'अ' का हैरे में जाता है एवं तत्परचात् शेषांग हलन्त 'फ्' में चादश प्राप्त प्रत्यय प्रणा चौर ईम का का म ची वैक्रिक रूप से सयोजना होता है। जैमे - करमात=कियो धीर कीम। वैक्रिक पह की म (कस्मात=) करहा रूप का भी सद्माय जानना चाहिये।

बस्मात् संस्कृत पद्ममी एकवचनान्त पुल्तिम के सबनाम का रूप है। इसके प्राकृत रूप हिल्ली कीम चौर करता होते हैं। इनमें से प्रथम के वा रखों में सूत्र संख्या ३ ज स मूल सरहर शांत 'किम के स्थान पर प्राकृत में 'क' चन की प्राध्ति और ३६८ से प्रास्तांन 'क' मे प्रधानी विमाहरू के एकवचन में मंद्रानीय प्राप्तन्य प्रायप 'हिन=सम' के स्थान पर बाहून सकत स एवं बैटिहरहरू। में 'हिला = इजो' छीर 'होन = इस' प्रस्पर्या की आदेश प्राप्ति होकर कर से और वैद्यालक रवस प्रमम दोनों रूप फिणो सीर फीस सिद्ध हो जाते हैं।

कम्दा की मिदि सुत्र सच्या हे इह में की की गई है।

इदमेतर्कि-यत्तदृभ्य प्दो डिगा ॥ ३-६६ ॥-

गम्यः सर्वदिम्योशारान्तं भ्य पर्म्याप्टायाः स्थाने दित् इला इत्यादेशा श मत्रति ॥ इमिया । इमेण ॥ पदिया । पदेण ॥ किया । केण ॥ विया । वेय । निया । यद ॥

भर्य-संस्कृत सर्वनाम 'इरम् ए गर्, दिम यह चौर तह के छम में प्रान्त वाष्ट्रनीय श्राहाराम्य स्य प्रमा स्ट्र (शीरमेनो स्प्त), फ, आ, और ताम एतीया विभवित के एक्यचा म पुर्तिना संसाहर प्र प्रमाय दा' के स्थान पर प्राष्ट्रत में वैद्दिश्य हर म 'किया' प्राप्य की चार्यम्याति येमा सार्व है। आवेश पान्त क्यम 'विद्या' में विदन 'क् इत्तेतक है, तत्नुनार प्राकृतिय धार्शन 'दम, पर, क, क कीर से में सिन कामय नवर 'का' की इपनेता रोवर इस 'वा' वा लेंप हा जाता है भीर स्टार्स्पार्य क्षम से प्राप्ताम इच्च अवद दिव, वह क की में में मवशक 'दिवादमा प्रवाद की कैड़ीन ह क्रव से संबोधना हुवा करणाहै। प्रवर्शक मधनामी के क्रव में वशारण द्वा मधार है -- मनेत व

र्धामणा और पन्नान्तर में इमेण, एतेन=एदिणा और पन्नान्तर में एदण, केन=िम्णा और पन्नान्तर में क्रण, येत=जिणा और पद्मान्तर में जेग, तेन=तिणा और पद्मान्तर में तेण स्वप होत हैं।

अनेन संस्कृत तृतीया एकपचनान्त पुल्तिंग संपनाम का रूप है। इपके प्राकृत रूप इमिणा श्रीर इमेण होते है। इसमें सब सख्या ३ ७२ से मूल सरहत शब्द इदम्' के स्थान पर पाकत में इस' न्नादेश की प्राप्ति, न्त्रीर ३६८ से प्रथम रूप में प्राप्तांग 'डम' में ततीया विभक्ति क एकपचन में पुल्जिंग में संस्कृतीय प्रत्यय 'टा' के स्थान पर प्राकृत में बैकल्पिक रूप से 'डिला=इणा' प्रत्यय की खादेश प्राप्ति हो कर प्रथम रूप इमिणा सिद्ध हो जाता है।

दितीय रूप इमेण में उपरोक्त ३ ०२ के अनुसार प्राप्ताग 'इम' में सत्र सख्या ३ १४ से अन्त्य स्वर 'श्र' क स्थान पर 'श्रागे तृनीया विमक्ति एकवचन बोधक प्रत्यय का सदमांक होने से' 'ए' की प्राप्ति श्रीर ३ ६ से पुत्रकि रिति से पाप्ताग 'इसे में तृतीया विमक्ति के वचन में सरक्रतीय प्रत्यय 'टा' क स्थान पर 'ण' प्रत्यय का श्रावेश प्राप्ति होकर द्वितीय रूप डमेण भी सिद्ध हो जाता है।

एतेन सस्कृत तुनीया एकवचर्नात पुलिंग सर्वनाम का रूप है। इसक प्राकृत रूप एदिए। श्रीर परेण होते हैं। इनमें सूत्र सख्या १-११ से मूल संस्कृत शब्द 'एतदु' में श्थित अन्त्य हलन्त श्यक्षन 'दु' का लोप, ८ १२० से 'त' के स्थान पर 'र' को प्राप्ति, खीर ३ दह से प्रथम रूप में 'एर' में तुनीया विभक्ति फ एकववन में पुल्जिंग में सहअनीय अत्यय 'टा' के स्थान पर प्राकृत में बैकल्पिक स्टप से 'डिणा≃डणा' भत्यय की श्रादेश प्राप्ति हो कर प्रथम क्य एडिणा सिद्ध हो जाता है।

हिनीय रूप-(एतेत=) एदेण में उपरोक्त रीति से प्राप्तांग 'एन' में सत्र सुरुवा ३ १४ से खन्त्य स्वर 'ख' के स्थान पर 'खागे तृनीया विमनित एकवचन वोयक नत्यव का सद्भाव होने से' 'ए' की प्राप्ति भीर ३६ से 'एरे' में तृतीया विभक्ति क एक्वचन में संस्कृतीय प्रत्यय दा' के स्थान पर 'ण' प्रत्यत्र की (श्रावेश) प्राप्ति हो कर दितीय कव एदेण सिद्ध हो जाता है

भेन संस्कृत सुतीया एकपचनान्त पुल्लिंग के सर्वनाम का रूप है। इसके प्राकृत रूप किणा श्रीर फण होत हैं। इनमें से प्रथम रूप में सत्र सख्या ३ ७१ से मून सस्कृत शब्द 'किम्' के स्थान पर प्राकृत मे 'क' त्रम की त्रादेश प्राप्ति, स्त्रोर ३ ६६ से प्राप्ताम 'क में तृतीया विभक्ति के एकवचन पुल्लिम म ^{सस्}रुनीय प्रत्यय 'टा के स्थान पर प्राकृत में वैंकिल्पिक रूप से 'डिणा = इणा प्रत्यय की व्यादेरा प्राप्ति होकर प्रथम रूप किणा सिद्ध हो जाता है।

'केण' की सिद्धि मझ-बख्या १४१ में की गई है।

थेन संस्कृत छतीया एकवचनान्त पुल्लिंग के सर्वनाम का रूप है। इसके प्राकृत रूप जिला श्रीर जैंग होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सरुवा १-११ में मूल संस्कृत रान्द 'यट्र' में रिथत श्रनस्य हलन्त ष्यञ्जन 'द' का लोप, १-२४५ से 'य' के स्थान पर 'ज' की प्राप्ति और ३ ६६ से प्राप्ताग 'ज' में हतीया विमित्त के एकवपन में पुल्तिंग में मंस्ट्रनीय प्रन्यव 'टा' के स्थान पर प्रारुत में ये केन्विक का साहित इंगा' प्रत्यव की खारेग प्राप्ति होकर प्रथम हव जिला सिद्ध हा जाता है।

जेण की मिद्धि मूत्र मन्या १-३६ में की गई है।

तिन मस्टल खतीया जहबचनात्न पुल्लिंग के सर्वेताम का रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूर तिया है। तेज होत हैं। इनमें से प्रथम रूप स्त्रु मंत्रवा १-११ से मृत्र मस्टल शहर 'त्रू' म स्थित कर्ष्य १२० व्यक्षन 'ट्' का लोप, श्रीर ३ ६६ से प्राप्तांग 'त' से हुनीया विमस्ति के एक्ष्यपा स पुल्लिंग में महन्त्र प्रत्यय 'टा' के स्थान पर प्राष्ट्रत से यैकल्पिक रूप से 'ढिणा = इणा' मस्यय की सार्रेश प्राप्ति होहर परं रूप 'ठिणा' मिद्ध हो जाता है।

तेण की मिद्धि सूत्र महया १-३३ में की गई है। ३ ६६ ॥

नदो सः स्यादो स्वचित् ॥ ३-७० ॥

तदः स्थाने स्वार्टी ५२ 'ग' खादेशो मानि कचित् सच्यानुगारेण। व वेयह। व १६६ त्वर्थः ॥ सोखद् ख व रहुवर्डे। विभित्यर्थः ॥ ख्रियामित्र । हम्युन्नामिख-सुदी वं तिस्रहा। क विज्ञदेत्वर्थः ॥ खेण भिन्यः । वेन भिवतिभित्यर्थे ॥ तो खेख का-यन हिस्सा। तमेग्वर्थे । भिन्छ च खाव्। तथेन्यर्थः ॥ खेर्डि कय । नैः क्रतिमन्यर्थः ॥ गाडि कर्ये। तामिः क्रतिम्वर्थे ।

अर्थ — क्या क्या लह्य के अनुवार में क्यां मंकितन पहार्थ के प्रति ह रहते का क्यां क्यां मंकितन पहार्थ के प्रति ह रहते का क्यां क्यां मंकितन पहार्थ के प्रति ह रहते का क्यां क्यां मंकित व्यां के प्रति हैं। वे किन्त कर वे हि वा करती हैं। वैसे — त्यू परवन्तों पेड़ क्यांने क्यां हें यो शहर क्यां क्यां क्यां मारित (वैकिन कर वे) हुवा करती हैं। वैसे — त्यू परवन्तों पेड़ क्यांने क्यां हैं। विसे शामित में भी 'तर् पर्वनाम के स्थान पर 'यां क्यां राष्ट्र क्यां मारित कर व्यादश का प्राप्त कर कर कर कर की विसे हानों भीति में भी 'तर् पर्वनाम के स्थान पर 'यां क्यां क्यां क्यां क्यां हों। विसे हानों भीति मारित मुंता ताम विवाद स्थान कर क्यां निकार क्यां मारित कर क्यां कर का कर का कर क्यां क्यां क्यां क्यां क्यां हैं। विसे हानों भीति क्यां क्

% प्रियोदय हिन्दी न्याख्या सहित # [१४७] •••>>>>১>> ^^ ^^>>>> जाता है यह उपलब्धि प्रामिगक है। श्रीर ऐसी स्थिति को 'वृत्ति' में 'लच्यानुसारेण' पर से श्रमिव्यक्त . किया गया है ।

तम् सस्तृत द्वितीया एकवचनान्त पुल्लिंग सर्वनाम रूप है। इसका प्राकृत रूपान्तर (कभी कभी) ण होता है। इनमें सूत्र सख्या ३ ०० से मूल सस्कृत शब्द 'तद् ' के स्थान पर प्राकृत में 'ण' श्रम की श्रानेश प्राप्ति. ३ ५ द्वितीय। विभक्ति के एकवचन में पुल्लिंग में संस्कृत के समान ही प्राकृत में भी 'म' भत्यय की प्राप्ति श्रोर १-२३ से प्राप्त प्रत्यय 'म' क स्थान पर श्रतस्थार की प्राप्ति होकर ण रूप सिद्ध हा जाता है।

'पेच्छ (कियपर) रूप की सिद्धि सत्र सख्या १ २३ में की गई है।

हों।चिति संस्कृत सक्तमेक कियापर का रूप है। इसका प्राकृत रूप सीख्रह होता है। इसमें सूब-सन्वा १ २६० स 'श' के स्थान पर 'स' की प्राप्ति, १ १७७ से 'च्' का लीप श्रीर ३-१३६ से वर्तमान काल के प्रथम पुरुष के एकवचन में संस्कृतीय प्रश्यय 'ति' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' प्रन्यय की खादे प्राप्ति होक्स सोअइ ह्य सिद्ध हो जाता है।

'भ' (श्रव्यय) की सिद्धि सूत्र सख्या १ १७० में की गई है। 'ण' (सर्वनाम) रूप भी सिद्धि इसी सूत्र में उपर की गई है।

रघुरति संस्कृत प्रथमा एकवचनान्त पुल्तिंग का रूप है। इसका प्राकृत रूप रहवई होता है। इनमें सूत्र सख्या १-१=७ से 'घू के न्थान पर 'ह' की प्राप्ति , १-२ई१ से 'प' के न्थान पर 'व' की प्राप्ति १ १७७ में 'त' का लीव चौर ३-१६ से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में इकारान्त पुल्लिंग में संस्कृतीय माप्तत्य प्रस्थय 'स' के स्थान पर प्राकृत मध्यम के खन्त में स्थित हस्य स्वर 'ह' की नीई 'ई' की प्राप्ति होकर रहुएई रूप मिस्र हो जाता है।

हस्तोलामित मुखी सस्त्रत प्रथमा एकवचनान्त स्त्रीलिंग विशेषण रूप है। इसका प्रायत रूप ह धुर्तामिश्र मुही होता है। इन में सूत्र मंख्या २-४४ से सयुक्त व्यञ्जन 'स्तु के स्थान पर 'धुं की पानि, २ ऱ ६ से प्राप्त 'थ' का द्वित्व 'थथ' की प्राप्ति, २ ६० से प्राप्त पूर्व 'थ' के स्थान पर 'त' की प्राप्ति, १ ३ ४ में दोघ स्वर 'श्रो' के स्थान वर 'श्रागे सबक ब्वझन 'ला' का सद्वभाव होने से' हृश्य स्वर 'ख' की प्राप्ति, ११७० से द्विनीय 'त' का लोप श्रीर १-१८० से 'ख' के स्यान पर 'ह' की प्राप्ति होकर प्राकृत रूप एखनामिश मही सिद्ध हो जाता है।

ताम् सस्हत द्वितीया एकवचनान्त स्त्रीलिंगं के सर्वनाम का रूप है। इमका प्राकृत रूप 'ए। होता है। इममें सुत्र-सख्या ३ ७० से मूल संस्कृत सर्वनाम 'तद्' के स्थान पर प्राकृत में स्वीतिंग में 'णा भग रूप को श्रादेश प्राप्ति, ३ ३६ से प्राप्ताग जा' में स्थित दीर्घ स्वर 'श्रा' के स्थान पर 'श्रागे द्विनीया प्रवचन बोधक प्रत्य का सद्भाव होने से' द्वरा 'ख' की प्राप्ति, ३-४ से द्वितीया विभक्ति के एक वास में प्राप्तांग 'ण' में सस्ट्रनीय प्रत्यय 'म्' के ममान ही प्राप्टन में भो 'म' प्रस्थव की प्राप्ति कीर है से मेर प्रत्यय 'म्' के स्थान पर श्रमुखार की प्राप्ति हो कर प्राष्ट्रतीय की निग रूप 'ण' मिद्ध हो शांश है है

जिज्हा सरहत प्रथमा एक्यचनाग्त स्नेतिम का स्वहै । इसका शहन स्व विध्या है ले इसमें सुप मंख्या २-७८ से 'वि' में स्थित 'र्' का लाव, १ १७० से 'ज्' का लाव, १ १७४ में र' कुक पर 'ट्' की प्राप्ति कीर १-११ से प्रथमा विभक्ति के एक्ष्यचन में संग्रुतीय प्रत्यय विच्म्' का कर्र लोव होकर तिश्रहा रूप सिद्ध हो जाता है।

तेन संस्तृत सृतीया ण्डवपनान्त पुल्लिम के मर्पनाम को रूप है। इसना भाइन रूप ऐंदरं है। इसमें मृत्र सख्या ३-०० से मृत सस्त्रन सर्वनाम 'तद्' के स्थान पर 'ए' खेम रूप की खारेशनां ३-१४ से प्रस्ताम 'त, मंस्यित खन्य स्था 'खें के स्थान पर 'ब्राम सृतीया एडवपन बोपड रूप स्वम्म होने से' 'ए' का प्राप्ति खीर ३-६ स प्राप्ताम 'में' में सृतीया विप्राप्ति एडवपन में मण्ड प्राप्तस्य प्रस्यय 'टा' के स्थान पर प्राप्तुन में 'ण आदरा की प्राप्ति हो सर प्राप्तुनीयस्थ वाचा विद्र खाता है।

'भाजा' रूप को मिद्धि सुत्र संस्था ने १९३ में की गई हैं। 'तो' रूप की मिद्धि सूत्र गंत्र्या ३ ६७ म की गई है। 'छोज' रूप को मिद्धि इसी सूत्र म उत्तर की गई है।

कर तक स्थिता मंग्कृत विशेषण कर है। इपका प्राष्ट्रत कर कर-यहानीहुमा राग है। इप^{के} हैं सम्बा १-६७७ से प्रथम तो का लोग, १ १८० से लोग हुए 'गु के वरनात गण रहे हुए 'श्र' क ग्वारे 'य' की शांति, ए १६ में 'या' के ग्यान वर 'ठ' को चारेग शांति, २ व्ह. म प्राप्त 'ठ' का दिग्त टूट को ही २ ६० म प्राप्त पूर्व 'ठ' क स्थान वर 'ठ' की प्राप्ति चीर १ १४० में द्वित्य 'तु का ओन हो पर क्षण है। - हिम्में हवें वात है।

| सम्बन्धिता है। इस की गर है।

में की गई है।

ै। को रूप दे। दशका प्राक्त रूप कार है। स्थान पर कॉलिंग कार्याम स शर्वेण मुलीया विभावत के लक्ष्य रूप (जिल्लाक को लाक्ष्य स्टिटी

ते सहकृत तृतीया बहुबचनान्त पुल्तिंग के सर्वनाम का रूप है। इसका प्राकृत रूप सेहिं होता है। इनमें सूत्र सख्या ३ ७० से मूल सस्कृत नर्वनाम 'तद' के स्थान पर पाकृत में 'ण' श्राग रूप की प्राप्ति. ३-१४ से प्राप्ताग 'ण' में स्थित अन्त्य स्वर 'स्त्र' के स्थान पर 'स्त्रागे तृनीया बहुवचन बोधक प्रथय का सदुमाव होने से 'ए' की प्राप्ति ऋोर ३ ७ से प्राप्तांग ऐं में तुर्ताया बिमक्ति के यहत्वत म सस्क्रनीय प्राप्तब्य प्रत्यय मिम' के स्थान पर प्राकृत म 'हिं' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर *णेहिं* रूप मित्र हो जाता है।

'कय' रूप की सिक्षि सूत्र सल्या ११२६ में की गई है।

तामि संस्कृत ततीया बहुत्रचनान्त स्त्रीलिंग के मर्वनाम का रूप है। इमका प्राक्वत रूप णाहि होता है। इसमें सूत्र सख्या ३-७० से मूल संस्कृत सर्वनाम 'तद्' के स्थान पर प्राकृत में पुल्निंग में 'ख' था रूप की प्राप्ति, ३-३२ से एव २-४ के निर्देश से पहिला उसे खीलिंगत्त्र के निर्माण हेत 'खा' प्रत्यय को प्राप्ति होने से 'खा' अन का सदमाव, और ३-० से प्राप्तान 'जा' में तुनीया विभक्ति के बहुवचन में सम्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'भिस' के स्थान पर प्राकृत में 'हिं' प्रत्यय की प्राप्ति होकर णाहिं रूप सिद्ध हो जाता है।

'कय' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-१२३ में की गई है। ३-७०॥

किम॰ कस्त्र-तसोश्च ॥ ३-७१ ॥

किपः को भगति स्यादौ त्र तमोण्च परयोः।को।के।क।के।के।केणात्र। मत्य ॥ तस्। कश्रो। कत्तो। कदो॥

अर्थ — सस्कृत मर्वनाम 'किम में सस्क्रनीय प्राप्तत्र्य विभक्तित बोधक प्रत्ययों के स्थानीय पोष्टनीय विमन्ति बोयक प्रत्ययों के परे रहन पर श्रवता स्थान बावक सस्कृतीय प्राप्तब्य प्रस्यय प्रपु के स्थानीय प्राकृतीय प्रत्यय 'हिह त्थ' प्रत्ययों के पर रहने पर ऋथवा सम्बन्ध सूच क मस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'तस' के स्थानीय प्राकृतीय प्रत्यय 'त्ती अथया दी' प्रत्ययों के परे रहन पर 'किम्' के स्थान पर र्मकत में 'क' स्त्रग रूप की स्रादेग प्राप्ति होती है। विभक्ति बोयक प्रथ्यों स मबपित उदाहरण इम प्रकार हें — क ≕को, को ≕के, कम् ≕क, कान्≕के और कन ≕ केण इश्याति ।

'त्रप' प्रत्यय से सबधित चदाहरण यों हें —ऋप=कत्थ अथवा कहि श्रीर कहा 'तम' प्रत्यय 🖣 ब्याहरण:--कुत =कश्रो, कत्तो श्रीर करो।

'को' सर्वनाम रूप की सिद्धि मूत्र सख्या मे १९८ में की गई है।

'के सर्वनाम रूप की सिद्धि सूत्र सन्या है ५८ में की गई है।

प्रकार के के प्राप्त के स्थान पर अनुस्वार की प्राप्ति होकर प्राप्ततीय खीलिंग स्व ण' सिंह है। जीता है।

त्रिकटा संस्कृत प्रथमा एकवचनान्त की लिंग का कृष है। इसका प्राष्ट्रत रूप तिथडा सार्ग्य इसमें सूत्र मख्या २-७६ से 'त्रि' में स्थित 'र्' का लाव, १-१७० से 'ज' का लाव, १ '१५ से 'ट् इस्त्र पर 'ख्' की प्राप्ति और १-११ से प्रथमा विभक्ति के एकवचन म संस्कृतीय प्रत्यय 'मि = म्' हा महाने लोव होकर तिशवा रूप सिद्ध हो जाता है।

तेन सरकृत एतीया एकवचनान्त पुल्लिंग के सर्वनाम को रूप है। इसना शकृत स्प रेंग हा है। इसमें सूत्र संख्या ३-७० से मूल सरकृत मर्वनाम 'तद्' के स्थान पर 'ए' खग रूप की धारत वारि ३-१४ से प्रप्ताग 'ण, म स्थित खन्द्य स्वर 'ख' के स्थान पर 'खाग तृतीया एक उचन वोचक प्रवाद सद्माय होने से' 'ए' को प्राप्ति खीर ३ ६ स प्राप्ताग 'खो' में तृतीया विमक्ति एक उचन में सम्बं प्राप्तव्य प्रत्यय 'टा' क स्थान पर प्राकृत में 'ण' खाटेश की प्राप्ति होकर प्राकृतीयहण जेंग निव है जाता है।

'भाणिअ' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ?-१९३ में की गई है।

'तो' रूप की मिद्धि सुत्र संख्या है हैं।

'णेण' रूप की सिद्धि इसी सूत्र में उत्पर की गई है।

कर तळ स्थिता सरकत विशेषण रू। है। इनका प्राकृत रूप कर यज्ञ द्विष्ठा होता है। इनम एं सन्व्या १-१७७ से प्रथम 'त्तं' का लोप, १-१८० से लोप इप 'त्' के प्रमात श्रप रहे हुन 'स' के स्थान पर 'य' की प्राप्ति, ४ १६ से 'स्व' के स्थान पर 'द' की व्यादेश प्राप्ति, ' नह से प्राप्त 'ठ' को द्विस्त 'ठठ को ब्रार्थ २ ६० से प्राप्त पूर्व 'द' के स्थान पर 'द' की प्राप्ति चौर १ १७० से द्वितीय 'त्' का लोप हाकर कर्यह द्विभा रूप सिद्ध हो जाता है।

भणिश रूप की सिद्धि सुत्र सत्या ने १९३ में की गई है।

'च' खञ्यय की सिद्धि सूत्र संख्या १-२४ में की गई है।

तया सस्यून तृतीया एकवपनान्त सीलिंग के सर्वनाम का रूप है। इसका प्राकृत रूप वारा होते है। इसमें सूत्र-सख्या २-७० से मूल सत्कृत नवेनाम 'तृद्' के स्थान पर सीशिय खबरधा में शक्त्र में 'णा' खा की खादरा प्राप्ति खोर २ २ से आस्तोग 'णा' में तृताया विभिन्न के वक्त्रमन में खाकारान्त स्त्रीलिंग में सरकृतीय प्राय्य 'टा' के स्थान पर प्रापृत में 'ण' प्रत्यय की स्थायेश प्राप्ति होती जाए रूप सिंक हो जाना है।

ते' सन्द्रत तृतीया बहुबचनान्त पुल्चिम के सर्वनाम का रूप है। इसका प्राकृत रूप गोहि होता है। इनमें सूत्र सख्या ३ ७० से मूल सस्कृत मर्वनाम 'तद' के स्थान पर पाकृत में 'ण' अग हत की प्राप्ति. ३-१४ से प्राप्ताम 'ण' में स्थित श्रम्त्य स्वर 'श्र' के स्थान पर 'श्रामे लुनीया बहुवचन बोधक प्र'यय का सदमाव क्षेत्रे से' 'ए' की प्राप्ति श्रोर ३ ७ में प्राप्तींग हो' में ततीया विमन्ति के बहुच चत म सस्क्रनीय प्राप्तब्य प्रत्यय मिन् के स्थान पर प्राकृत में 'हिं' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर णेहिं रूप सिद हो जाता है।

'कय' रूप की सिद्धि सत्र सरया १-१२६ में की गई है।

तामि संस्कृत ततीया बहुवचनान्त स्त्रीलिंग के सर्वनाम का रूप है। इसका प्राकृत रूप णाहि होता है। इसमें मूत्र सख्या ३ ७० से मूज संस्कृत सर्वनाम 'तद्' के स्थान पर प्राकृत में पुल्निंग में 'ख' श्रम रूप की प्रान्ति, ३-३२ से एव २-४ के निर्देश से पुल्लिंग व से खीलिंगत्व के निर्माण हेतु 'श्रा' प्रत्यय को प्राप्ति होने से 'गा' अग का सद्भाव, श्रीर ३-७ में प्राप्ताग 'गा' में ततीया विमस्ति के बहुवचन में सम्क्रतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'भिस' के स्थान पर प्राक्रत में 'हिं' प्रत्यय की प्राप्ति होकर णाहिं रूप सिद्ध हो जाता है।

'कय' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-१२६ में की गई है। ३-७०॥

किमः कस्त्र-तसोरच ।। ३-७१ ॥

ंकिपः को भवति स्यादौ त्र तमोश्च परयोः।को।के।क।के।केण।।या कृत्य ॥ तस् । कश्रो । कत्तो । कदो ॥

अर्थ - सस्कृत सर्वनाम 'किम' म सस्कृतीय प्राप्तत्रत्र विभक्ति बोधक प्रत्ययों के स्थानीय प्रोहनीय विभक्ति बोधक प्रत्ययों के परे रहन पर श्रयमा स्थान वावक सस्क्रतीय प्राप्तब्य प्रस्यय त्रप' कंस्थानीय प्राकृतीय प्रत्यय 'हिह हथ' प्रत्ययों के पर रहने पर ऋथत्रा सम्बन्त मूच क मस्कृतीय प्राप्तब्य मत्यय 'तस्' के स्थानीय प्राकृतीय प्रत्यय 'त्ती अथया दी' प्रत्ययों के परे रहन पर 'किम्' के स्थान पर शकृत में 'क' श्राग रूप की बादेग पाष्ठि होती है। तिमिक्त बोवक प्रथ्यों स मनिवत उदाहरण इम प्रकार हें — क ≕को, को ≕ के, कम् ≕ क, कान्≍के स्रोर केन ≕ केण इत्यादि ।

'त्रप' प्रत्यय से सवधित उदाहरण यों हे —कुत्र=कत्थ श्रथना कहि श्रोर कह। 'तस' प्रत्यय ६ ब्याहरण —कुत =कन्नो, कत्तो श्रीर कडो।

'को' सर्वनाम रूप की मिछि सूत्र सख्या २१९८ म की गई है।

'के' सर्वेनाम रूप की सिद्धि सूत्र-सरया है ५८ में की गई है।

'क' सर्वनाम रूप की सिद्धि मूत्र सरया २ ३३ में की गई है।

कान् सस्कृत द्वितीया बहुतचनान्त पुनिंता मर्जनाम स्त् है। इसका मानृत स्त्र ह होते है। इसमें सूत्र सख्या २ ७१ से मून सस्कृत सर्जनाम शहर 'किस्' के स्थान पर प्राकृत में 'क' होत स्त्र र खादेश प्राप्ति, २ १४ से प्राप्तांत 'क' में स्थित खान्त्य स्त्रर 'ख' क स्थान पर 'खाते दिवाया बहुत्रस् बोधक प्रत्यय का सद्भाय हाते से' 'प' की प्राप्ति खोर २ ४ म प्राप्तांत 'के' में द्विताया विभाव है। बहुबचन में सस्हताय प्राप्तव्य प्रत्यय 'चम' का प्राप्तृत म लोप होकर के' स्त्र सिद्ध हा जाता है।

'केण' रूप की मिद्धि सूत्र सख्या १४१ में की गई है।

'करथ' रूप की सिद्धि सूत्र प्रख्या ? १६१ में की गई है।

कृत सास्त (अश्ययात्मक) रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप कश्चो, कत्तो और रूरो होते हैं। इसमें सं प्रथम रूप में सूत्र सख्या १-७१ से मून साकृत सरनाम शब्द 'किय' के स्थान पर प्राकत म'के प्रव रूप की प्यादेश प्राप्ति, १-१-७५ से त्वं का लोग और १-२७ से लोग हुए 'त क प्राप्ति शेष रहे हुए विसर्ग क स्थान पर 'खो' की प्राप्ति हो कर प्रथम रूप क्रमो सिंढ हो जाता है।

द्वितीय रूप 'कत्ती' और नृतीय रूप 'कड़ी की सिद्धि सूत्र सम्या ? १६० में की गई है। ३ औ

इदम इम: ॥ ३-७२ ॥

इदमः स्वादौ परे इम व्यादेशी मत्रति ॥ इमो । इमे । इमे । इमे । इमेण ॥ स्त्रियामि^{त त} इमा ॥

अर्थ —संस्कृत मर्थनाम शब्द 'इत्म' के पाणृत स्वान्तर में विभक्ति बीचक प्रत्यय वरे रहा वर्ष इम' इतं म रूप खादश की पारित होता है। जैसे —ख्यम् = इमो, इमे = इमे, इमम=इमं, इमान = इम ऋतेन=इमेश इत्यादि। व्यक्तिम खारथा में मा 'इत्य' शब्द के स्थान पर प्राकृत म 'इमा' खागरव खादेश की प्राप्ति होती है। जैसे —इयम् = इमा इत्यादि।

अयम् महकृत प्रथमा प्रक्रवयनात्त पुर्तिना सर्वनाम रूप है। इन रामकृत रूप इमा हाता है। इममें मून मरूपा २ अने मूल म कृत सर्वनाम शहर 'इत्मृ' के स्थान पर प्राकृत में 'इत' शंग रूप की अपिश प्रानि और २-२ म अन्तीत 'इत' म स्थता स्थितिक क प्रक्रवन न पुन्तिन में महत्तार आस्त्रवम् प्रत्यय 'नि' के स्थान पर प्राकृत में 'डी=ओ' प्रस्थय की स्थादश प्रति हो कर इसा रूप मिछ र्रा जाता है।

हमें संस्था प्रथमा यहुब बनान्त पुल्लिंग मर्यनाम रूप है। इपहा े शता है। इसमें 'इम' खान रूप की प्राप्ति अपरोक्ष (३ ७२ के) विभान के खनुमार, १, 4, ३ ४८

म शास्ताम 'इम' में प्रथमा विभ के ने बहुब बन में पुल्तिम में संस्कृतीय प्राप्त य प्रत्यय 'जम्' के स्थान पर 'ए = ए प्रस्मय की आदश प्राप्ति हो कर इमे कप मिछ हो जाता है।

'इस' रूप की मिद्धि सत्र संख्या २-१८१ में की गई है।

इमान् मध्कृत द्विनीया बहुबचनान्त पुल्लिंग सर्वनाम रूप है। इसका प्राकृत रूप इमें होता है। इमर्ने 'इम' श्राग कद की प्राप्ति उपरोक्त (३ ०२ क) विधान के श्रतुमार, तत्परचात् मूत्र-सख्या ३ १४ से प्राप्तांग 'इम' में स्थित श्रन्त्य स्पर 'श्र' क स्थान पर 'श्रागे द्वितीया बहुबचन बोधक प्रत्यय का सद्भाव होने में '¤' को प्राप्ति और ३४ मे प्राप्तांग 'इमें' मे द्वितीया विमक्ति के बहुवचन में पुल्जिंग में सम्कर्ताय प्राप्तस्य प्रस्यय 'जस्' का प्राकृत में लोप हो कर इमे सिंढ हो जाता है।

'इमेण' रूद की सिद्धि सत्र सख्या ३ 5 ९ में की गई है।

इयम सस्क्रत प्रथमा एकवचनान्त खीनिंग सर्वनाम रूप है। इसका प्राकृत रूप इमा होता है। इनम सूत्र सख्यां २ ७२ से मृत संस्कृत सबनाम शब्द 'इदम् के स्थान पर 'इम खन रूप की खादेश प्राप्ति र ४ के निर्देश से प्राप्तांग 'इम' में पुल्लिमध्य से छी लिगत्व के निर्माण हेतु 'ख्रा' प्रत्यय की प्राप्ति खोर ि १९ से प्राप्तींग 'इमा म प्रथमा विशोक्त के एकवचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'सि≃म' का प्राकृत में लोप होकर इसा रूप मिद्ध हो जाता है। ३-७२॥

पु'-स्त्रियोर्न वायमिमिश्रा सौ ॥ ३-७३ ॥

इदम् शब्दस्य सी परे श्रयिति पुल्लिगे इमिश्रा इति स्त्रीलिङ्गे श्रादेशी वा भनत: ॥ अहराय क्य-रज्जो । इमिया वालिख-ध्रया । पचे । इमो । इमा ॥

अर्थ -सस्तत मर्वनाम 'इदम्' के प्राकृत रूपान्तर में प्रथमा विभक्ति के एक उचन में महक्रतीय '। प्रस्य प्रयय 'सि' की बाजि होने पर इदम् + मि' के स्थान पर पुल्लिंग में 'श्रयम्' रूप की स्त्रोगर्स लिंग म 'इमिका' रूप की पैंग्लिक रूप से क्राइश प्राप्ति हुका करता है। जैसे — अथवा अयम् कृत कार्य = थहवा श्रम कथरत्वी, यह पुल्तिम को उनाहरण हुआ। स्नीलिंग का उदाहरण इस प्रकार है -- इयम् घाणिका दुहिना = इमिया बालिका धूका। चैकलियक पत्त का मद्भाव होने से पुल्लिंग में 'इन्म् + सि' ^{द्य 'इमो' र प भी प्राकृत स बनगा श्रीर र्ख्न, निंग में 'इयम् का 'इमा' रूप भी बनता है।}

'अहवा' श्रव्यय वी सिद्धि सूत्र सत्या १-९७ म की गई है।

अयम् महरुत प्रयमा एक्वचान्त पुल्तिम् मर्यनाम रूप है। इनके प्राप्तत रूप अयम् और इसे होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सुत्र सख्या ३ ७३ क विधान से मंस्कृत के ममान ही 'श्रयम् रूप की षान्या प्राप्ति खौर १२३ से अन्त्य इलन्त न्यञ्जन 'म्' के स्थान पर अनुस्वार की प्राप्ति हो कर अर म्प मिद्ध हो जाता है।

दितीय रूप 'इमो' की सिद्धि सूत्र मठ्या ? ७२ में की गई है।

ष्ट्रत कार्य संस्कृत प्रथमा एक्जचनात्त पुल्लिम जिलेवण सप है। इसका प्रायन सर हुए हुई होता है। इसम सूत्र सख्या १ १२६ से श्रादि स्वर 'ऋ क स्थान पर 'ख' की प्राप्ति, १००० में न इ लोप, १-१८० से लाप हुए 'त्' के परचात शेर रहे हुए 'ख्र' के स्थान पर 'य' की श्राप्ति, १-८४ सहा स्वर 'खा' के स्थान पर 'ख' की प्राप्ति, २-२४ से समुक्त स्थान 'र्य' के स्थान पर 'ज' की प्राप्ति, २<६३ श्रादेश-प्राप्त 'ज' को द्वित्य 'ल्ल' की प्राप्ति श्रीर ३-२ से प्रथमा विमक्ति क एक्यचन में श्रकाशन्त पृत्ति में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'भि' के स्थान पर प्राकृत म 'होन ग्रो' प्रस्यय की प्राप्ति होकर क्यन्य हो ह सिद्ध हो जाता है।

इयम् मस्कृत प्रथमा एकपचनान्त खीतिंग सर्पनीम का रूप है। इनके प्राकृत रूप इपिया है इमा होते हैं। इनमे से प्रथम रूप में सुर मख्या ३ ७३ से सम्पूर्ण मंखूत रूप 'इयम्' के स्थान पर प्राष्ट मं 'उमिश्रा' रूप की थादेश प्राप्ति चैकल्पिक रूप से होकर प्रथम रूप 'इमिश्रा' सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप 'इमा' की सिद्धि सूत्र सख्या ने ७२ में की गई है।

चाणिक्य दाहिता संस्कृत प्रथमा एकवचनान्त स्त्रीलिंग सङ्गा रूप है। इनका प्राकृत ह वाणित्र घुआ होता है। इसमें सूत्र-सख्या २-५७ से हलन्त व्यक्तन 'क का लोब, ११७० में 'य्' का लेंब २-१२६ से सम्पूर्ण शब्द 'द्रहिता' क स्थान पर प्राकृत में धृषा' रूप की आदेश पापि, ४ ४४ में व्यव विमक्ति के एकवधन में मेरकतीय प्राप्तस्य 'मि = मं' की श्राप्ति कीर १-११ से प्राप्त हल त प्रत्यय 'म्' ब लोप होकर धाणि में भूमा रूप सिद्ध हो जाता है। ३ ७३॥

स्सि-स्लयोरत् ॥ ३-७४ ॥

इटम: स्मि स्स इत्येतयो परयोख्य मनति वा ॥ अस्मि । अस्म । पर्व इवार्द्रगावि इमस्सि । इमस्म । पहुलाधिकारादन्यत्रापि भवति । एहि । एनु । स्त्रादि । एभिः । एप व्यामिनित्यर्थः ॥

अर्थ —सन्छत सर्वनाम राज्य 'इत्म' के प्राप्टन स्पान्तर म मनमी विमाल के एक्वपन प्राप्तरुय प्राष्ट्रतीय प्रत्यय सिंग' और पष्टा विमक्ति के एक स्थन म माप्तन्य प्राकृतीय प्रत्यय स्म' के प्राप्त होने पर सम्पूर्ण सर्वनाम 'इदम्' के स्थान पर शास्त्र मं 'ख' खोग रूप की वैशनिश्क रूप म प्राप्ति हुनी करती है। जैस —'स्ति' प्रत्यय का उदाहरण—श्रश्मिम=श्रामि व्यर्थात इसमें श्रीर 'मा' प्रायप की चदाहरण—ध्यस्य=ध्यम अथान् इमका । वैक्षिपक पत्त का प्रत्याप होन से पहान्तर से सूब-सर्था ३ अर के विधान से 'इरम्' के स्थान पर 'इम' थंग रूप का प्राप्ति भी होती है। जैसे -धारमन=इमास प्रवीत इसमें श्रीर श्रास्य=इमस्स श्रमीम दमका । महुलाभिकार सं 'दरम्' क स्थान वर पुल्लिंग में 'ए स्थान रूर का

श्रीर र्फालिंग में 'श्रा' श्रग रूप की भी पानि दर्शी जाती है। जैस —गीम =णीह स्थर्शत इनके द्वारा। स्नातिंग का उदाहरण -- चानि = च्याहि त्रर्थात इन (स्त्रर्था से) एपु=एस व्यर्थात इनम । इन उदाहरणों म् 'इसम के स्थान पर प्राकृत में 'ल' अप रूप को और 'आ' अंग का अपनिव दृष्टि गोवर हा रही है, इसका कारण 'बहुल' सूत्र ही जानना।

अस्मिन् सस्कृत सप्तमो एकवचनान्त पुल्निग सर्पनाम रूप है। इमक प्राक्ति रूप श्रास्ति श्रीर इमिंग होते हैं। इनमे स प्रथम रूप में मूत्र सख्या ३ ७८ से 'इर्म' शब्द के स्थान पर प्राकृत में 'श्र' र्श्वग रूप की प्राप्ति श्रीर ३ रह म सप्तमी विभिन्ति के एरजवन में मस्कतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'हि' क स्थान पर प्राकृतीय अग रूप 'ख्र' में 'स्मि' प्रस्थय की खादेश प्राप्ति होकर प्रथम रूप अस्ति सिढ ही जाता है।

दिनीय रूप इमर्रिस की सिद्धि सूत्र सख्या ?-१० में की गई है।

अस्य सस्कृत पत्नी एकवचनान्त पुल्लित सर्वनाम रूप है। इसके प्राफ्त रूप खरम खीर इमस्म होते हैं। इनमें संप्रथम रूप में सूत्र मख्या ३ ०४ से 'इदम' शब्द के स्थान पर प्राकृत में 'अ' अग रूप की भाष्ति श्रीर ३-१० से पष्टी विभक्ति के एकपचन में सश्कृतीय प्राप्तत्य प्रत्यय 'इस' के स्थान पर पाकृतीय श्र ग रूप 'श्र' में 'स्त' प्रत्यय की आदेश बादित हो कर प्रथम रूप अस्त सिद्ध हा जाता है।

द्वितीय रूप (श्रस्य=) इसरम में सूत्र सरुवा ३ ७२ में सरकृतीय शब्द 'इदम' क स्थान पर 'इम' भग रूप की प्राप्ति और १९० से प्रथम रूप के समान हो 'स्म' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर द्वितीय रूप इमस्त भी मिद्ध हो जाता है।

एभि मस्तुत वृतीया बहुबचनान्त पुल्लिंग सर्पनाम रूप है। इमका प्राकृत रूप एहि होता है। इममें सूत्र सरया ३-७४ की वृत्ति से संस्कृत शब्द 'इद्रम् के स्थान पर प्राकृत से 'ए' अन रूप की प्राप्ति श्रीर १-७ से तृताया जिमक्ति के बहुत्रचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'भिन्' के स्थान पर प्राकृत में 'हि' मत्यम का माध्ति होकर एहि हृप मिद्ध हो जाता है।

एए सस्कृत सन्तमी बहुत्रचनान्त पुल्लिय सवनाम रूप है इसका प्राकृत रूप एसु हाता है। इसम ५७२ को वृत्ति से 'इडम के स्थान पर 'ए' श्राग रूप को प्राप्ति श्रीर १-२६० स 'प क स्थान पर 'स्' भी प्राप्ति होकर एस स्व सिद्ध हो जाता है।

अभि सस्कृत तुनोया बहुवचनाना स्वीनिंग सर्वताम स्व है। इसका प्राप्तृत रूप छाहि हाता हैं। इसम सूत्र सरवा ३-७४ की वृति से मृत संस्कृत शब्द 'इदम्' क स्थान पर प्राप्टत में पुल्लिंग में 'श्र' भग रूप की प्राप्ति, ३३२ छोर २४ से पुल्लिगत्य से स्नोलिंगत्व के निर्माणार्थ प्राप्तांग 'छ' में 'छा' मत्यय की भारत श्रीर ३-७ से वृतीया विमक्ति बहुवचन में सहस्तीय प्राप्तव्य प्रत्यत 'मिम् ' के स्थान वर भाइन में 'हि' प्रश्यय की प्राप्ति होकर आहि रूप सिद्ध हो जाता है। ३-७४ ॥

डे में न हः ॥ ३-७५॥

इदमः कृते मादेशात् परस्य हो स्थाने मेन सह ह आदेशो वा भरति॥ इह । १६ इमस्मि । इमस्मि ।।

अर्थ -- सम्द्रन सबनाम शब्द 'इन्म के प्राकृत स्वान्तर में सब सख्या ३ ७२ मे प्राप्तीय हर में सप्तमी विभक्ति के एकवचन में सरक्षतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'हि' के प्राप्त होने पर मलीत 'इम' में रिवर क श्रीर 'डि प्रत्यय ईन वानों के स्थान पर यें किल्पक रूप से 'ह' की श्रादेश प्राप्ति हुना काती है। बैस श्चरिमन=इह श्रयांत इमम श्रयवा इन पर। यें हिनक पत्त का मदभाव होते से पतान्तर म 'ध्ररितर-इमस्मि श्रीर इमस्मि रूपो का श्रस्तित्व मी जानना चाहिए।

आहेमन मंस्ट्रत मप्तमी ए व्यवनान्त पुल्लिंग मर्बनाम ख्य है। इव हे प्राक्तन स्व इह इन्हें श्रीर इमस्मि होते हैं। इनम स प्रयम रूप में सूत्र मख्या ३-७२ से मृत महत्त राध्य 'इर्म्' के खान प प्राकृत में 'इम' श्राग रूप की प्राप्ति और ३ अध में मध्तमी विमक्ति के एकप्रचन में मुश्जिग में मध्री प्राप्तव्य प्रत्यत्र 'डि' की प्राप्ति होने पर मुलाग 'डम' में स्थित 'म' श्रीर प्राप्त प्रत्यव 'हि' इन श्रीतीं स्थान पर 'ह' की खादेश प्राप्ति होकर प्रथम रूप इह सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप इमस्सि' की मिद्धि मूत्र सट्या हे १० म की गई है।

तृतीय रूप (अन्मिन=, इमन्मि में 'इम' अ ग की प्रान्ति उपराक्त विधि विधानातुमार " तत्परचातः मूत्र मरुवा ३११ से प्राप्तांग 'इब' में मध्तमी विर्माल के एकवचन में पुल्लिंग में मध्त ब्राप्तथ्य प्रत्यय 'डि' क स्थान पर प्राकृत में 'स्मि' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर सुतीन मत डमिंग भी मि हो जाता है। 3-44 ॥

न स्थः ॥ ३-७६ ॥

इडम: परस्य हो: रिस मिम न्या: (३-५६) इति प्राप्तः त्याँ न माति ॥ इह । इमर्नि इमस्मि ॥

अर्थ -- सूत्र सर्द्या ३ ८६ में रेना विद्यात दिया गया है कि श्रक्तोरान्त मर्थ = सन्त्र पान सर्वनामीं में मध्नमी विभक्ति के एक्टरान म पुल्तिन म मैग्हनीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'बि' के श्यान पर 'निम क्ति-त्य' ऐमें नीत प्राययों की कम से प्राप्ति होती है, नहतुसार प्राप्तस्य इन ती में प्रत्ययों में भे श्रुतिम मृतीय प्रत्यय 'स्य' की इम 'इन्म्' मबनाम के प्राकृतीय प्राप्तांग 'इम' में प्राप्ति मर्गी होती है। धर्ष'य 'इत' में फेयल उक्त तीनों अध्वयों म से प्रथम और द्विनीय नत्वय 'गिन' और 'गिन की ही प्राप्ति होता है। जैसे —श्रास्तिन = इमस्ति श्रोर इमन्ति । सूत्र मंख्या ३ अ८ के विवान से 'इस + हि' = इस, ऐसे युर्ती वा रूप का धारित व भी ग्यात स रखना चाहिए।

'इह' रूप की सिद्धि मूत्र सख्या है ७५ में की गई है।

'इमार्रेस' रूप की सिद्धि सूत्र मख्या ने १० में की गई है।

'इमिनिय रूद की सिंब सूत्र सल्या ने ७५ में की गई है। ३ ५६॥

गोम्-शस्टा भित्ति ॥ ३-७७ ॥

डदम' स्थाने यम् शस्टा भिस्पुपरेपुण चादेशो वामवित ॥ खपेच्छ । खेपेच्छ । ग्रेण । खेहि कय । पद्मे । डमे ॥ डमेखा । डमेहि ॥

अर्थ — सस्कत सर्वनाम शहर 'इदम्' के प्राप्तृन रूपान्तर में हि<u>तीया विमक्ति</u> से एकवचन में प्राप्त्रच प्रस्य 'श्रम्', द्विनीया विमक्ति के बहुवचन में प्राप्त्रच्य प्रस्य 'श्रम्, तृतीया विमक्ति के परुवचन में प्राप्त्रच्य प्रस्य 'श्रम्, तृतीया विमक्ति के परुवचन में प्राप्त्रच्य प्रयय 'भिस्' क स्थानीय प्राकृतीय प्रथ्यों को प्राप्ति होने पर वैक्तिनक रूप से ख' खंग रूप की प्राप्ति हुआ करती है। यों सपूर्ण 'इदम्' स्थर के स्थान पर 'भ' खंग, रूप की प्राप्ति होने पर वैक्तिनक रूप से ख' खंग रूप की प्राप्ति हुआ करती है। यों सपूर्ण 'इदम्' स्थर के स्थान पर 'भ' खंग, रूप के प्रयोग होने हैं लिसे — इपम् पर्य=णे पेच्छ खर्यात हमको हेलो । इमान् प्रय=णे पेच्छ खर्यात इनको भेषो । अनेन ≈ खेख खर्यात इसके हारा । एभि कृतम् = खेहि कब खर्यात इनके हारा किया गया है । य उदाहरण कम से द्वितीया खोर तृतीया विमक्तियों क एकवचन के तथा बहुवचन के हें । यैकिन्यिक पद्य का मद्रमाव होने से पद्यान्तर म 'ख' के साथ 'इम् , 'खे' क साथ 'इमें, 'खेख' के साथ 'इमेंख' स्थीर खिरें के साथ 'इमेंह रूपों न सर्भाव भी प्यान स स्वना चाहियें।

इसम् सस्कृत हिनीया ए ध्वचनान्त पुर्तिना सर्वनाम रूप है। इसके प्राकृत रूप 'ण श्रीर इसं होते हैं। इसमें से प्रथम रूप में सूत्र सरुवा २ ७० से मून सस्कृत सर्वनाम राष्ट्र 'इरम्' के स्थान पर 'ख्' श्रम रूप की प्राप्ति केश से द्विनीया विभक्ति के एकवचन में 'म्' प्रस्यय की प्राप्ति श्रीर १ २२ से प्राप्त भव्य 'म' के स्थान पर श्रमुखार की प्राप्ति क्षेक्ट प्रथम रूप थे' सिद्ध हो जाता है (

हितीय ऋष 'इस की सिद्धि सुप सत्सा ह अह में की गई है।

पिच्छ' नियाप रूप की सिद्धि सूत्र सरवा है ?? में की सई है।

हमान् सस्कृत हिनीया बहुबबनान्त पुरिना सर्वनाम रूप है। इसके प्राकृत रूप हो' खोर इने कोर्डे हैं। इनमें से प्रथम रूप में 'प्र' खाग रूप की प्राप्ति उपरोक्त रीति क्षमुमार, सत्यर्यान् मूथ-सत्या १ १४ में प्राप्तांग 'प्र' में स्थित ख्रस्य स्वर ख' के स्थान पर 'खागे द्वितीया विभिन्त बहुबबन के प्रस्य का मद्भाय होने से' 'ए' की प्राप्ति खौर १४ स द्वितीया विभन्ति के बहुबबन में मस्तृतीय प्राप्तः प्रम्य प्राप्त 'साम्' का पाकृत में लीप हो हर प्रथम रूप 'णे' मिड हो जाता है। द्वितीय रूप 'इमे' की सिद्धि सूत्र सख्या है-७२ में की गई है।

'वेच्छ' कियापर रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-२३ में की गई है।

अनेन सरकृत वृतीया एकवचनान्त पुल्लिंग मवेनाम रूप है। इसक प्राकृत रूप होने ने 'इमेण' होते हैं। इतमें से प्रथम रूप में 'ण' श्राग रूप की प्राप्ति उपरोक्त शीत अनुनार, तारशः सत्र सर्व्या ३ १४ से प्रार्थ्वांग 'ण' में स्थित अन्तय स्वर 'ख कस्थान पर 'बागे तुनीपाविग'र' एकवचन के प्रत्यय का मद्भाव होने से 'ख' की प्राप्ति और ३६ से प्राप्तांग सां में सताया विषंप के एकपचन में संक्रिनीय प्रान्तव्य प्रत्यय 'टा' के स्थान पर प्राकृत में 'ण' प्रत्यय की प्राइश प्राप्ति शहर प्रथम रूप 'मेण' सिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप 'इमेण' का मिद्धि सूत्र-सख्या ३-७२ में की गई है।

एकि मस्कृत तृतीया बहुतचनान्त पुरिलग मर्बनाम रूप है इनके प्राक्त रूप गे.ह की 'इमेंहि' होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में 'गु' खग रूप की प्राप्ति उपगेरत रीति अनुसार, त्र प्राः सूत्र सन्त्या ३-१५ में प्राप्तांग 'ण' में स्थित खन्त्य स्वर 'ख' के स्थान पर 'खांगे तुनाया विविद्ध बहुवचन के प्रत्यय का सद्भाव होने से 'ए' की प्राप्ति स्त्रोर ३-० म प्राप्तींग 'णे' में तृनाया विर्पान' के बहुउचन में संकृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'भिम्' के स्थान पर प्राकृत म 'हि' प्रस्यय की श्रादश शाह होकर प्रथम रूप 'गाहि' सिद्ध हो जाता है।

हितीय रूप (एमि =) इमेर्ह में सूत्र मख्या ३-७२ में मूल संस्कृत शन्द 'दर्म' क स्थान पर प्राप्त में 'इम' खा गारूप की प्राप्ति और शेष साधनिका प्रथम रूप क समान हो सुत्र मत्या ३ १४ एवं ८३ म श्राप्त होकर द्वितीय रूप 'इमेहि' भी सिद्ध हो जाता है।

क्यं कियापर हप की सिद्धि सूत्र सरवा १-१२५ में की गई है। ३ ७०॥

श्रमेणम् ॥ ३-७= ॥

इदमीमा सहितस्य स्थाने इराम् इत्यादेगी या मवति ॥ इर्ग वेन्छ । ५ई । इर्म ।

अर्थ — सरहत सर्वनाम शब्द 'इरम्' के द्वितीया विमक्ति के एकरचन म पुलिम प्राप्तण प्र^{ाप्त} 'क्सम्' की सयोजा होने पर प्राप्त रूप 'इसम्' के स्थान पर प्राष्ट्रन स 'इलम् रूप का चादेश पान तैकल्पिक रूप से हुवा करती है। इसमें यह स्थित यतलाई गई है कि- 'इस्म गरा और सम्प्रदर इन दोंनों के स्थान पर 'इंग्रम्' रूप दी आदेश श्राप्ति वैकल्पिक रूप से हुआ करता है। जैसे -इसम् वर्दन इस्से पेरल क्यांत इसको देखो। बैकल्पिक पश्च का सद्गाव होते से बड़ारतर सद्भम का प्राप्त होते. 'दम' भी होता है।

ourocoocourroruriooo er on'n jororio ricrorers ir jor ocoocoonerooocoo

इसस् सस्कृत द्वितीया एकवचनान्त पुल्लिग सर्वेनाम रूप हैं। इमके प्राकृत रूप इस्ए और इस होते हैं। इसम से प्रथम रूप में स्ट्र सख्या ३ ७६ से सम्पूर्ण सस्कृत रूप 'इसम्' के स्थान पर प्राकृत में 'इस्प' रूप की आदेश प्राप्ति होकर प्रथम रूप इस्स स्ट्रा जाता है।

द्वितीय रूप इम की मिद्धि सूत्र सख्या है ७२ में की गई है।

'पेच्छ' वियापर रूप की सिद्धि सत्र सख्या ? २२ में की गई है। १०८८ ॥

वलीवे स्यमेदांमणमो च ॥ ३-७६ ॥

नपुंगक लिङ्गे वर्तमानस्येदमः स्यम्भ्या सहितस्य डढम् डगामो इगाम् च नित्यमा-देशा भत्रन्ति ॥ इद इगामो डण घण चिट्टड पेच्छ वा ॥

अर्थ —सस्कृत सर्जनाम नपु मरुलिंग राहर (इर्स) के प्राकृत रूपास्तर में प्रथमा विभक्ति के एक्जियन में 'सि' प्रत्यय प्राप्त होने पर और दितोया विभक्ति के एक्जियन में 'क्स्म्' प्रत्यय प्राप्त होने पर मूल राहर 'इर्स्म्' और उक्त मध्यय, इन दोनों के स्थान पर नित्यमेव कम में 'इर्स्म्, इणमो और इण' ये तोन खारेश रूप हुखा करत हैं। यो प्रथमा जिमक्ति और दितीया जिमक्ति होनें के एक्जियन में समान रूप में 'इर्स्म्' के नपु सकलिंग में उक्त तोन तीन रूप होते हें। ये नित्यमेज होते हें, वैकलिंगक रूप में नहीं। उदाहरण इन्न प्रकार हें —इर् अथवा इण्मो खथवा इण घण चिट्टइ = इर्स्म घनम् तिष्ठति खर्यात् यह घन जिद्यमान है। इर् अथवा इण्मो खथवा इण् धनम् परय अर्थात् इस जन को द्वो। उस्त उदाहरण क्ष्म से अथमा विभक्ति और द्वितीया विभक्ति के एक्जियन के खोतक हें।

इदम् सस्कृत प्रथमा द्वितीया एकप्रचनान्त नपु सक्तिंग मर्चनाम रूप है। इसके (द्वोजों प्रिमन्तियों म नमान रूप से) प्राकृत रूप द्वर इणको श्रीर इण होते हैं। इन तीजों रूपो में सूज सख्या ३ ०६ ने मूल सम्इत राज्य 'इन्म्' श्रीर प्रथमा द्वितीया के एकवचन में कम ने प्राप्तव्य सस्कृतीय प्रस्यय सि' श्रीर 'श्रम्' महित दोनों के स्थान पर कम स नित्यमेव 'इट, इणुमो श्रीर इण' रूपों जी (प्रस्यय साहेत) श्रादेश प्राप्ति होकर ये तीजों रूप इट, इणुमो श्रीर उण सिद्ध हो जात हैं।

'धण रूप को सिद्धि सूत्र मख्या ३ ५० में की गई है।

'चिदठइ' नियापर रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ? १९९ में की गई है।

'पेच्छ' कियापर रूप की सिद्धि सूत्र मरया १ २३ में की गई है। ३-७६॥

किमः कि ॥ ३-⊏० ॥

किम क्लीने वर्तमानस्य स्यम्भ्या सह किं भवति ॥ किं इल तुह । किं किं ते पिंडहाड ॥

अर्थ --सस्कृत सर्वनाम नपु मकलिंग शड्य 'किम्' के प्राकृत रूपान्तर में प्रथमा विर्मान ६ एक रचन में 'मि' परवय प्राप्त होने पर श्रीर द्वितीया विमन्ति के एक वचन में 'खम्' प्रत्येय प्राप्त हान श मृत शब्द 'किम' श्रीर उक्त प्रत्यय, इन दोनों के स्थान पर नित्यमेव 'कि' श्रादेश रूप की प्रापि शर्ता है तात्पर्य यह है कि 'किम्+सि' का प्राकृत रूपान्तर 'किं' होता है। स्त्रोर 'किम्+धम्' का प्राप्ट रूपान्तर भी 'कि' ही होता है। प्रथमा-द्वितीया दोनों विभक्तियों के एकवचन म समान रूप सह प्रस्यय सहित मूल शब्द 'किम्' के स्थान पर 'किं' रूप की प्राकृत में नित्यमेव छादेश-प्राप्ति होती है। वैक ' किम एतम् तव=कि कुले तुह श्रमीत तुम्हारा क्या कुल है ? (तुम कोन से एन म उत्तम हुण हो !) क उदाहरण प्रथमा एकवचन बाला है। किम किम् ते प्रति भाति = किं किं ते पहिहाइ ? तुन्हें का की मालूम होता है ? यह उदाहरण द्वितीया के एकवचन का है।

ाकम् सस्कृत प्रथमा ण्कवचनान्त नपु सक जिंग सर्वनाम रूप है। इपका प्रापृत रूप हिं होता है। इसमें सूत्र सख्या ३ ८० से मूल सस्कृत सर्वनाम शब्द 'किम्' में प्रथमा विमिक्त के एववरर में 'सि' प्रत्यय की सर्वाजना होने पर शब्द महित प्रत्यय के स्वान पर 'कि' रूप की नित्यमें प्रकार प्राप्ति होकर किं रूप सिद्ध हो जाता है।

'कुल' रूप की सिद्धि मूत्र मंख्या *१ ३३* म की गई है।

'तव' सस्टत पष्ठो एकवचनान्त पुल्लिंग मरनाम रूप है। इसका प्राकृत रूप 'सुर' होता है। इसमें सूत्र सख्या ३६६ म मूल सस्कृत शब्द 'युष्पद्' में मयोतित पष्ठी एकववन बायक संस्कृत प्रत्यय 'डम=श्रस' के कारण से प्राप्त रूप तव' के न्यान पर प्राप्तृत में 'तुर' रूप की श्राक्षा प्राप्त होकर 'तुह' रूप सिद्ध ही जाता है।

'किम' संस्कृत द्वितीया एक्पचनान्त नपुमक जिंग मवनाम रूप है। इसका प्राकृत रूप 'हि' होता है। इसमें सूत्र मदया ३ ८० से मृल संस्कृत सर्वनाम शब्द 'किम्' में हिनीया विभावत के ज्वतंत्रा में 'खम् प्रत्यय को मंथोजना होन पर शब्द सहित प्रत्यय के स्थान पर 'वि' रूप की निष्में श्रावेश प्राप्ति होकर कि रूप सिद्ध हो जाता है।

'ते' मस्पृत चतुर्थी एकवचनान्त सर्वनाम सप्दै। इमका प्राक्रत सप् मा 'ते' ही होता है। इसम सूत्र संख्या रे ६६ से मृत सं कृत शब्द 'युग्नद्' में मवीजित चतुर्वी एडवचन बीवक संस्कृत'व श्रस्यय 'डे' क कारण में संज्ञृतीय आदेश प्राप्त रूप ति' के स्थान पर प्राज्ञन स मा ते' रूप का श्रादेश प्राप्ति और २१३१ चतुर्भी पच्छो की एक रूपना प्राप्त होहर प्राकृतीय रूप से सिंह र हा जाना है।

पातिमाति मंरहत कियापर रूप है। इमका प्राष्ट्रत रूप पविदाद हाना है। इममें मुझ्यांन्या च अह से 'र्' का लोप, १२०८ से प्रयम 'म्' के स्थान पर 'ब्' को शांति करण से म्' के ब्रान पर

ह' की प्राप्ति श्रीर ३-९३६ से वर्तमान काल के प्रथम पुरुष के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तच्य प्रस्तय 'ति' । के स्थान पर प्राकृत में 'इ प्रत्यय का प्राप्ति हो कर पिंडहाइ रूप सिद्ध हो जाता है । ३-५०॥

वेदं-तदे तदो डसाम्भ्यां से-सिमौ ॥ ३-८१ ॥

ः इदम् तद् एतद् इत्वेतेषां स्थाने हस् श्राम् इत्वेताभ्यां सह यथासख्य से सिम् इत्यादेशीं वा भवतः ॥ इदम् । से सीलम् । से गुणा । श्रस्य शील गुणा वेत्यथेः ॥ मिं उच्छा-'हो । एपाम् उत्माह इत्यर्थः । तद् । से सीलं । तस्य तस्या वेत्यर्थः ॥ सिं गुणा । तेषा तासा वित्यर्थः ॥ एतद् । से श्रहिश्र । एतस्याहितभित्यर्थः ॥ सिं गुणा । सिं सील । एतेषा गुणा! शील वेत्यर्थः । पत्ते । इमस्स । इमेमिं । इमाण ॥ तम्स । तेसि । ताण ॥ एश्रस्स । एएसिं । पश्राण । इद् तदोराभाषि से भादेश कथिदिच्छति ॥

अर्थ — सस्क्रत सर्वनाम शब्द 'इत्म्, तद् और एतद्' के प्राक्षत रूपान्तर में पद्या विभक्षित के एकवचन में प्राप्तव्य प्रस्त्य 'क्रम्' और पद्यी विभक्षित के बहुवचन में प्राप्तव्य प्रस्त्य 'क्राम्' की सयोजना होन पर मूल उन्दर शब्दों और प्रत्ययों दोनों ने स्थान पर वैकल्पिक रूप से एय क्रम से 'से' रूप की तथा 'विम रूप की खादेश प्राप्ति होती है। विशेष स्वष्टाकरण इस प्रकार है —

(१) इदम्+ङम	=	(अस्य)	का	प्राफृत	धादेश-माप्त	रूप	'से'।
(२) इदम् + धाम्	=	(एषाम्)	,,	17	21	,,	'सि'।
(३) तद्+इस	=	(तस्य)	,,	,,	**	7,	'से'।
(४) तद्+ इस्	==	(र्ख्न।लिंग में तस्या)	,,	**	11	11	'से'।
(४) तद्+श्राम्	=	ः (तेपाम)	,,	21	12	17	'सि' ।
(६) तद्+श्राम्	1	(स्त्रीलिंग में वासाम)	٠,	19	,,	11	'से'।
(७) एतट्+ङस	=	(एनस्य=)	11	,1	33	31	'से'।
(८) एतद्+श्राम्	=	(एतेर्पा=)	1,	78	11	1,	'सि' ।

इस प्रकार राज्य छोर प्रत्यय दोनों 'के स्थान पर उक्त रूप से 'से' ख्यवा 'सि' रूपों को पद्मी विमक्ति एक्वचन में एव बहुवचन में क्रम से तथा बैकल्पिक रूप से खाडेश शांति हुमा करती है। बारवात्मक बराहरण इस प्रकार है'—'इदम्' से सबधित —खस्य शीलम् = से सील ख्यात इसका शील-षर्म, खस्य गुणा =ते गुणा खर्यात इसके गुण धर्म, प्र्याम् उस्ताह.=मिं उच्छाहो खर्यात इनका उत्ताह। 'वद्' से सबधित —तस्य शीलम् = से सील खर्यात् उसका शील घर्म, तम्या शील=से सील धर्यात् हम (जी) का शील धर्म, तेवाम् गुणा'=सिं गुणा=डनके गुण घर्म, तासाम् गुणा=मिं गुणा धर्यात् इत श्रहित, एतेवाम् गुणा=मिं गुणा श्रयात इनहे गुण वर्म श्रीर ग्तेवाम् श्रीनम= मिं सील स्नात का शील धर्म । इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि 'इदम् तद् श्रीर एनर् मवनामों क ५७। विस् क एक्वचन में समान रूप से 'से' श्रोर पट्टी विमक्ति क बहुवचन में मी समान रूप म सि'राह श्रादेश प्राप्ति होती हैं।

वैकल्पिक पद्म का सद्भाव होने से पद्मान्तर में 'इडम, तर् श्रीर एनर्' क में रमरे हर हारी, वे पकनचन स्त्रीर बहुनचन में क्रम से इस प्रकार हैं —इदमु के (श्रस्य≈) इमस्म श्लीर (ल्याग) इ हि थौर इमाण्। तद् के (तस्य=) तस्स धौर (तेपाम=) तेमि श्रोर ताण। एनट् क (एनस्य=) पदन न्त्रोर (एतपाम्=)एएमि न्त्रीर वन्नाण। कोइ कोई व्याकरण कार इदम् न्त्रीर 'तद् सरनानों ६ प्राकृत स्वान्तर में पर्का विमन्ति के बहुवचन में भी एकपचन क ममान ही मुत्र शहर चोर धार' प्रत्यय के स्थान पर 'सें' धादेश-प्राप्ति मानते हैं। इन व्याकरण कारों की ऐशा मान्यता क कार से पट्टी विभक्ति के दोनों वचनों म 'शब्द और प्रत्यय के स्थान पर' 'स' रूप की प्रीति हाटर 'स रूपता' का सद भाव होता है।

अस्य संस्कृत पर्छा एकप्रचनान्त मर्चनाम पुलिता रूप है। इसक पाइन रूप से और स्मि होते हैं। इनमें से प्रथम क्रव में सुत्र मरया ३ ८१ से सम्पूण रूप व्यव्य क स्थाप पर प्राकृत में में रूप की खादेश प्राप्ति होकर प्रथम रूप से सिद्ध हो जाता है।

दितीय ह्रव 'इमस्य' की सिंडि सूत्र म'न्या ने ७५ में की गई हैं।

इिलम संस्कृत रूप है। इमका प्राष्ट्रत रूप सीलं होता है। इमन मुत्र मनगा १२६० म[.]र के स्थान पर म' की प्राप्ति, २-२४ से प्रथमा विभिन्त के एकवचा में नपुसक निग में संप्रभाव प्रान्तक्य प्रत्यय ^{पृ}क्षि' के स्थान पर प्राकृत म 'म' प्रत्यय की प्राप्ति ज्योर १२३ म प्राप्त प्राप्त्^{यम्} पे स्थान पर बारुवार की प्राप्ति हाकर 'सील' रूप मिद्र हो जाता है।

गुणा संस्कृत रूप है। इसका प्राञ्चन रूप गुणा होता है। इसमें सुत्र संस्था ३ १० में सु त्राग 'गुण' में स्थित अन्त्य हरन स्वर 'श्र' के स्थान पर 'आगे प्रथमा विभिन्त क ग्रहरपन मार्थर प्रत्यय का सदमाव होने से' 'था की प्राप्ति श्रीर ३-८ से प्रथमा विभिन्त प महवचन म सहारा" पुर्तिना सं सस्टर्नीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'जम्' का प्राकृत में कीप होकर मुखा रूप शिव हो जाता है।

एपाम् मस्कृत पद्धी बहुबानान्त पुल्लिंग सर्वनाम रूप है। इसके प्राक्तन रूप नि', 'क्रीनि' कीर 'इमाण' होते हैं। इनमें से प्रथम रूप म स्व-संख्या र-वा म सम्पूर्ण हरा 'ववाम' व श्याप वर प्रान्त में 'सि' रूप की बादेश प्राप्ति रोक्ट प्रथम रूप 'ति' निद्ध

, का मिद्धि ^{है} । द्वितीय चीर तृतीय रूप 'इमेर" , संशागहरी

'उच्छाएँ ह्य की मिटि "१५ में की गई तस्य संस्कृत पुल्लिंग पष्ठी एकवचनान्त मर्वनाम रूप है। इसके प्राकृत रूप से' स्त्रोरे तस्य होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या ३-२१ मे सम्पूर्ण रूप 'तस्य के स्थान पर प्राकृत मे 'स रूप का स्त्रादेश पारित हो कर प्रथम रूप 'से' सिद्ध हो जाता है।

दितीय रूप 'तस्त' की सिद्धि सत्र मख्या ?-१८६ में की गई हैं।

'सील' रूप की सिद्धि इसी सत्र में उपर की गई है।

तेवाम् सस्कृत पण्डो बहुवचनान्त पुल्लिम सर्वनाम रूप है। इसके प्रोक्टन रूप 'मि', 'वेसि' श्रीर 'ताण' होने हैं। इनमें से प्रथम रूप में सुत्र सख्या ३ =१ से सम्पूर्ण रूप 'तेपाम' के स्थान पर प्राक्षत में 'सि' रूप की श्रादेश प्राप्ति होकर प्रथम रूप 'सि' मिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप ते सिं की सिद्धि सूत्र सख्या ने दृश में की गई है।

एतीय रूप 'ताण' की सिद्धि सत्र मख्या है है में की गई है।

'गणा' रूप की सिद्धि इसी स्टूट में उत्पर की गई है।

'एतस्य' सम्कृत पष्ठी एकवचनान्त पुल्लिंग सर्वनाम रूप है। इसके प्राकृत रूप 'से' और 'एशस्म होत हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या ३--१ से सपूर्ण रूप 'एतस्य' के स्थान पर प्राकृत में 'से' रूप की आदेश प्राप्ति होकर प्रथम रूप 'में' मिद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप (गतस्य=) एखस्स में सूत्र सस्या १-११ से मूल सस्कृत शब्द एवट्' में स्थित खन्त्य हुनन्द व्यञ्जन 'द' का लोप, ११७७ से 'त' का लोप और २१० से प्राप्ताग 'एख्र' में पच्छी विभक्ति के एक्ष्यन म सस्कृतीय प्राप्तव्य ५२वय 'इस्=ध्यस=स्य' के स्थान पर प्राकृत में मयुक्त 'स्म' प्रत्यय की प्राप्ति सोकर द्वितीय रूप 'एकस्स' की सिद्धि हो जालो हैं।

अहितम् सम्कृतं रूप है। इसको प्राकृत रूप यहिष्य होता है। इसमें सूत्र सख्या १-१७७ से 'त्' को लोप, २-२४ से प्रथमा विभाक्त के एक्वचन में स्वकारान्त नपु सकलिग में सहस्तीय प्राप्तव्य प्रस्का प्रस्का प्रस्का पर प्राकृत में 'म' प्रस्यय की स्वादेश प्राप्ति स्वीर १-२३ से प्राप्त प्रस्यय 'म' के स्थान पर प्राकृत में 'म' प्रस्यय की स्वादेश प्राप्ति स्वीर १-२३ से प्राप्त प्रस्यय 'म' के स्थान पर प्रमुखार की प्राप्ति होकर प्राकृतीय रूप अहिन्य सिद्ध हो जाता है।

एतेयाम् सस्कृत वस्त्री बहुबचनान्त पुर्विता सर्वनाम रूप है। इमके प्राकृत रूप 'भि' और 'एएवि' तथा 'एक्षाएा' होते हें। इनम से प्रथम रूप में सूत्र सटवा २ =१ से मपूर्व रूप 'एतेवाम्' के स्थान पर प्राकृत में 'सि' रूप की श्रादेश वाति होकर श्रथम रूप 'भि' मिद्ध हो जाता है।

दिलीय रूप 'एए। सें' की सिद्धि सूत्र सख्या ने हर में की गई है।

वर्तीय रूप एभाण' की सिद्धि सत्र सख्या है हैं।

गुणा रूप की सिद्धि इसी। सुत्र में ऊपर की गई है।

'सील' रूप की सिद्धि इसी सुन में कपर की गई है।

वेतदो डसे स्तो त्ताहे ॥ ३-=२ ॥

एतदः परस्य डसेः स्थाने चो चाहे इत्येताबादेशां वा मनतः ॥ एची । एचाहे। रहे। एयाओ । एयाउ । एयाहि । एयाहिन्तो । एया।।

अर्थ - सम्झत सर्वनाम शर्द 'वतद्' के प्राफ़त रूपान्तर में प्रवर्गी विभक्ति के प्रश्वनः सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'डिम = श्रप्त' के स्थान पर वैकल्पिर रूप म (एय हरूम में) 'ता और श्रार प्रत्यवों की ब्यादेश प्राप्ति हत्या करती है। जैसे -- एतहसात = एती बीर एताह। वैकल्पिक पर सदमाय होने से पद्मान्तर में निन्नोक्त पाँच रूपों का मदमान चीर जानना -- (प्तरमान्=) गन्नारा एस्राव, एस्राहि, एस्राहिन्तो श्रीर एस्रा सर्थात इनमे ।

एतस्मात् सरकृत पञ्चमी एकवचनान्त पुल्लिग सर्वनाम स्व है । इसके प्राकृत रूप 'गना, गगार एखाबो. एखाउ, एखाहि, एखाहिन्तो और एखा होत है। इनमें से प्रथम दो रूपों में सूत्र-मण्या री मल सरकृत शन्द एतद् में स्थित अन्त्य हलन्त व्यञ्जत 'दू' का लोव, ४ =३ से 'त' का लाव श्रीर ३= में प्राप्तांग 'ए' में पचर्षा विभक्ति क एकपचन में सर्क्षतीय प्राप्तत्य प्रस्व इसि=ग्रम' करधान ह प्राक्त में क्रम से तथा वैकल्पिक रूप से ' तो श्रीर ताहे' प्रत्ययों को आदेश प्राप्ति हो कर का स प्रदे होतों रूप-'एसी और एसाह सिद्ध हो जावे हैं।

शेष वाच मर्जे में (एतस्मान=) 'ण्यात्री, एबाउ, एबाहि, एवाहिश्तो चीर एमा' सूत्र-मत्या १११ से मूल मस्कृत शब्द 'णनद्' में स्थित खन्तव हल त व्यशन ट्' का लीव, १९७० र 'तु' का लोप, वे १२ सं प्राप्तींग 'एषा संश्वित खन्त्व इत्य त्वर 'खा' क स्थान वर 'खागै पंचगी विमेड के एकवचन चोचक भत्यय का मर्माव होने से दोर्घ स्वर 'खा' का मार्ग चीर उन्ह स मा तीग 'पूर्वा म पंचर्मा विमक्ति क एक्यान में मस्तृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'हिसि=क्रम' के स्थात पर प्राष्ट्रत में हरा में 'स्रो, च, हि, हिन्ता चीर लुक्' प्रत्ययों वी गाध्ति होकर हम मे पार्वी रूप प्रशामी, एआउ, एमार्टी वभाष्टिन्ती चौर एमा रूप मिद्ध हो जाते हैं। १-६२ त

स्थेच नस्य लुक्॥३ ⊏३॥

एनड स्ट्ये पर चरारान् ती ताहे इत्येवयोश परयोस्त्रस्य तुम् मनवि ॥ एन्ड वसी। एसाई ॥

अर्थ --सस्कृत सर्वनाम शब्द एतद्' में श्यित सपूर्ण व्यञ्जन 'त' का 'त्य' प्रत्यय श्रीर 'त्तो, त्ताहे' प्रत्यव परे रहते पर नित्यमेव लोप हो जाता है। जैसे -एतिस्मन्=एत्य । एतस्मात्=एला श्रोर एताहे ।

एतिसम् सस्त्रत मध्तमी एकवचनान्त पुल्लिग सर्वनाम रूप है। इसका प्राकृत रूप एत्य होता है। इसमें सूत्र-सख्या १ ११ से मूल सस्कृत शब्द 'एतद्' में स्थित व्यन्त्य हलन्त व्यञ्जन 'द्' का लोप, '३-६३ से 'त' का लोप ऋोर ३ ४६ मे प्राप्ताग 'ए' में सप्तमी विमक्ति के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'हि=इ' के स्थान पर प्राकृत में 'त्थ' प्रत्यय की आदश प्राप्ति होकर प्राकृत रूप 'एत्थ' सिद्ध हो चाला है।

एतो श्रीर एताह क्षों को सिद्धि सूत्र सख्या हन्द्र में की गई है। ३ =३ ॥

एरदीतौ म्मो वा ॥ ३-⊏४॥

एतद एकारस्य डचादेशे म्मी परे श्रदीती वा भवतः ॥ श्रयम्मि । ईयम्मि । पत्ते । एयम्मि ॥

ं अर्थ --साकृत सर्वनाम शब्द 'एतद्' के प्राकृत रूपान्तर में मप्तमी निमक्ति के एकवचन में माकृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'खि=इ' के प्राकृतीय स्थानीय प्रत्यय 'म्मि परे रहने पर मल शब्द 'एतद्' में स्थित 'ए' के स्थान पर चैंक लियक कय में तथा कम में 'श्र' क्रीर 'ई' की प्राप्ति हफ्राकरती है। जैसे — एत। भन्= अयम्म अथवा ईयम्मि। चैकल्पिक पत्त का सद्माव होने से पत्तान्तर में एश्रम्मि रूप का भी सद्भाव ध्यान में रखना चाहिये।

एतास्मिट् सस्कृत मध्तमी एकवचनान्त पुल्लिंग सर्वनाम रूप है। इसके प्राकृत रूप श्रयम्मि, इयम्मि श्रीर एक्समि होते हैं। इनमें से प्रथम दो रूपों में सूत्र संर्या १११ मे मल सम्बन्त शब्द 'ज्तदु' में स्थित श्रास्य हलन्त ब्याजन 'द' का लोप, १-१७७ में 'तु' का लोप १-१८० से लोप हुये 'त के पर जात होप रहे हये 'क' कस्थान पर 'य' की प्राप्ति, ३ = ४ से स्वादि 'ए' के स्थान पर क्रव से स्वीर पैकल्पिक रूप से 'श्र' श्रयमा 'ई' की प्राप्ति, श्रोर ३१९ से कम से प्राप्ताग 'श्रय' श्रोर 'ईय' से भातमी विभक्ति के एकववन म सरकृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'डि=इ' केस्थान पर प्राकृत में 'स्मि' प्रत्यय की आदेश प्राप्ति होकर कम से तथा बैकल्पिक रूप से प्रथम दोनों रूप अयामि और ईस्प्रीम मिद्ध हो जाते हैं।

देतीय रूप-(प्रतास्मन्=) एम्रास्मि में सूत्र संस्था १-११ से मूल संस्कृत शब्द 'एसर्' में हियत भन्त हतन्त व्यञ्जन 'दू' का स्तोप, १-१७७ से 'तु का स्तोप श्रीर ३ ९९ से प्राप्तांग 'ग्र्य' में सप्तगां विमक्ति के एकवचन में सरक्तीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'हि=इ' के स्थान पर प्राकृत में 'न्मि' प्रन्यय की आदेश मान्ति होकर चुतीय रूप एअस्मि भी मिद्ध ही जाता है।

वै सेण मिणमो सिना।। ३-८४॥

एतडः सिना सह एम इयाम् इयामे इत्यादेशा ना भनिन ॥ मन्त्रस्म नि एस हाः मन्नाया वि पत्थिनाया एस मही ॥ एस सहाध्यो चित्र समहरस्म ॥ एम मिर । उपं । १००० पत्ते । एख । एमो । एसो ॥

अर्थ — सस्कृत सर्वनाम राटर 'एनट्' के प्राकृत रूप: उर में प्रथमा विमिन्न क एक्तर में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'सि' की सयो नना होने पर मृल राटर 'एतट' और प्रत्यय 'सि' रागें कार पर प्राष्ठ्रत में कैकिएपक रूप से (एव कम से) 'एम, इण् और इणमा' इन तीन रूपों को कार राट प्रख्या करती है। एतट् + सि = (प्राष्ठ्रत में) एम ख्याना इण ख्यया इएगो, इम प्रकार इन टाउट की चैकिएपक रूप से खाईरा प्राप्ति होतो है। चराहरण इस प्रकार है — सर्वन्यादि एवा प्राप्त व्यव्या हिए या प्रता्व विषय स्वाप्त सभी की यह गित है। मर्वेषामि पार्विवानाम् एपा मही = मर्वाण वि विदर प्रम्म मही=खर्यात सभी की यह गिर होरी घोरी जीवों की यह पूर्वी है। एप एम ख्यानो सारायम्य एम सहाद्यो स्वमा खीदारिक रारीर घोरी जीवों की यह पूर्वी है। एप एम ख्यानो सरायम्य एम सहाद्यो सिक्ष समहरस्त खर्यात चन्द्रमा का यही स्वमाय है। एटट् विराः = मिर खर्यान होरा है । इन उदाहरणों से प्रवात होता है कि प्राकृत में 'एस' प्रभाग एकच्चनान्त मर्वनाम हो नी लिगों म समान रूप से एव वैकिएपक रूप से प्रयुक्त हुगा करता है । गरी स्थित 'एनर' नि-इण और इणमा रूपों की मी समम लेना पाहिये। वैकिएपक प्रकृत में निम्न स्व होत से प्राप्त वि एनर' राटर के तीनों लिगों में 'मि प्रत्यव की सयोगना होने पर इम प्रकार स्व वनन है —

नपु सक लिंग म — एनदू + सि=एनटू = एखं।

फीलिंग में — एनदू + सि = एपा = एमा।

पुल्लिंग में — एनदू + सि = एप = एमो।

'सटकम्म' रूप को मिढि मूत्र-मच्या है ५८ में भी गई है।

ाणे' काव्यय की सिढि सूत्र-संस्था है है में की गई है।

'एए' मर्पनाम मूल की सिढि सूत्र संख्या है है।

गई' की सिढि सूत्र-संख्या है है।

रार्थयाम् संग्रुतः वर्षाः बहुवचनान्तः पुन्तिमः सर्वनामः रूपः है। इनदाः बार्श्वः रूपः मनवानः हैन्यः हीता है। इसमें सून महवाः रूपः से सून मार्श्वः शब्दः सर्वः में निवशः प्रः का क्षीयः, वृष्टः से नावः हैवे 'पुं के परवातः सेव रहे हुवः 'व' को द्वित्र 'व्यः की प्राति, व १२ से ब्रात्रोगः 'धव्यः में स्थितः सर्वः

हरव स्वर 'ख' के 'खागे पष्टा बहवचन बोधक अध्यय का सदमाव होने से' 'खा' की प्राप्ति खीर ३ ६ से प्राप्ताग 'सब्बा में पट्टी विमक्ति के बहुबचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'स्प्राम' के स्थान पर प्राफ़न में 'ण' प्रत्यय को प्राप्ति हो कर प्राकृतीय रूप 'सदवा ण' सिद्ध हो जाता है ।

'वि' घव्यय को सिद्धि सत्र संख्या १-६ में की गई है।

पार्थियानाम् सन्छन पछो बहुबचनान्त विशेषण रूप है। इसका प्राञ्जत रूप परिथवाण होता है। ु इसमें सूत्र सख्या १ ८२ में 'पा' में श्यित दीर्घ स्वर 'श्रा' के स्थान पर ह्वस्व स्वर श्र' की प्राप्ति, २०८६ से 'र्' का लोव, २ पर से लोव हुए 'र' के वश्चात शेष रहे हुए 'य' को द्वित्व 'थ्थ' की प्राप्ति, २ ६० से ्रपाप्त पूर्व 'थ' के स्थान पर 'त' की प्राप्ति, ३-१२ से प्राप्ताग 'पत्थिव' में स्थित अन्त्य हस्व स्वर 'ख' क 'श्रागे पट्टी बहुवचन बाधक प्रत्यय का सदुमात्र होने से' 'छा' की प्राप्ति छौर ३-६ से प्राप्ताग ' 'पत्थिवा' में पण्डी विभक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'श्राम् के स्थान पर प्राकृत में 'ए' ^{ि शस्यय} को प्राप्ति हो कर प्राकृतीय रूप 'पास्थिवाण' सिंढ हो जाता है।

एपा सरकृत प्रथमा एकवचनान्त स्त्रीलिंग विशेषण रूप है। इसका प्राकृत रूप एस (भी) होता , है। इसमें सूत्र सख्या ३ = ४ से सपूर्ण रूप 'एपा' के स्थान पर 'एम' की (वैकल्पिक रूप से) श्रादेश ्रमिति होकर 'एस' रूप सिद्ध हो जाता है।

महि सस्त्रत प्रथमा एकव बनान्त खीलिंग मज्ञा रूप है। इसका प्राकृत रूप मही होता है। इसमें र्स्त्र सख्या ३१६ से प्रथमा विर्माक्त केण्यक्वचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'सि' के स्थान पर प्राफ़ुत में राष्ट्रान्त्य हस्व स्वर इ' को दीर्घ स्वर 'ई' की प्राप्ति हो कर मटी रूप सिद्ध हो जाता है।

'एस' को सिद्धि सूत्र सख्या १३१ में की गई है।

स्थमाच मस्कृत प्रथमा एकवचनान्त पुल्लिग सज्ञा रूप है। इसका प्राकृत रूप सहाद्यो होता है। , इनमें सूत्र सख्या २ ७६ से प्रथम 'वृ'का लोप, १ १८० से 'म' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति, १-१७० से दिवोय 'व' का लोप श्रीर३२ से प्राप्तांग 'सहा4' में प्रथमा विभक्ति के एक वचन में पुल्लिंग में मस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'मि' के स्थान पर प्राकृत में 'हो = श्री' प्रत्यय की प्राप्ति होकर सहाओ रूप मिद्ध हा जाता है।

'चिया' श्रव्यय की सिद्धि सूत्र सख्या १-८ में की गई है।

स्मध्यस्य सन्द्रत प्रती एकपचनान्त पुल्लिंग सङ्गा रूप है। इनका प्राकृत रूप सप्तह्रस्त होता है। इसमें सूत्र सख्या १-२६० से दोनों 'शकारों के स्थान पर दोनों 'मम' की शख्ति, १-१८० से र्ग ^{'घ' के} स्थान पर 'ह' की प्रान्ति स्रोर ३१० से प्राप्तांग 'समहर' में पष्टा विमहिन क एकवचन मे ^{∤ संक्}तीय प्राप्तन्य प्रत्यय 'हस्=धस्=स्य' के स्थान पर प्राकृत म सयुक्त 'स्त' को प्राप्ति होकर , असहरम्स हव का सिद्धि हो जाती है।

महिला संस्कृत प्रथमा चहुयचनान्त ध्रीकिंग संझा रूप है इसका प्राञ्चन रूपमीहण्डे होता है। इसमें सूत्र-सरया ३२७ से मूल रूप 'महिला' में प्रयमा विमन्ति के बहुवनन में मंहिण में संस्कृतिय प्राप्तव्य प्रत्यय 'जस्' के स्थान पर प्राकृत में 'क्षो' प्रस्थय का प्राप्ति हो हर महिलाय रूप सिद्ध हो जाता है।

'त' रूप की सिद्धि सूत्र सच्चा १४१ में की गई है। 'एज' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-२०९ में की गई है। 'क्य' रूप की सिद्धि सत्र सख्या ११७२ म की गई है।---:-- हा।

वादसो दस्य होनोदांम् ॥ ३-=७ ॥

अदसी दकारस्य मी परे ह आदेशी वा मत्रति तिम्मिन्न कृते अतः सेडीं. (३१) इत्योदां शेष सस्कृत वत् (४-४४=) इत्यतिदेशात् आत् हे० २-४) इत्याप् क्लीपे न्यान् से: (३-२४) इतिमरच न मयति ॥ अह पुरिसो । अह महिला । अह वर्णा अह प्राप्त पर-गुण-लहुअयाह ।। अह यो हिअएण हमह मारुप तराआ । असात्र-मान् इमतीत्प्र्याः अस कमल-गृही । पने । उत्तरेण प्रराहेगः । अमृ पुरिसो । अमृ महिला । प्रमु वर्षा ॥

अधे — सस्तृत सर्पनाम राट्र 'छद्म' के तीनों निर्मों में प्रधमा विमिन्न के नवबद्वन में संद्वृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'भि' परे रहने पर प्राष्ट्रत रूपान्तर म प्राप्त प्र यय दि' का लाव वम मर्गव में हो जाता है जब कि मूल राष्ट्र 'छद्म में हिश्त 'द' कर्यान पर 'द' चाडेश प्राप्ति वैहल्विक रूप में होती है, इस प्रवार तीनों लिमों में प्रथमा विभिन्न के एक्वयन म गमान रूप म चर्म का घाटा में 'चाह' रूप वैकल्पिक रूप से हुआ करता है। इस विचान म पुनित्रम में मूत्र मंद्रप्र १३ म धाराद्र प्रस्त्य 'होन्च्यो' की प्राप्ति मी नहीं होती है, इ ४५० चौर २०८ कि निर्देश से पुनिचम में दर्भित्रम के निर्माण के निर्माण के स्थान प्रस्ता मान रूप में 'चा' प्रत्यय वा मद्भाव भी गहीं होता है यद ३२४ में नमु महीन्म प्रमान रूप में 'चा' प्रत्यय वा मद्भाव भी गहीं होता है यद ३२४ में नमु महीन्म प्रमान रूप में 'चा' प्रत्यय मा चाम के एक प्रयाप में स्थान रूप में 'चा' प्रदान वर्ध 'चाम के प्रकार के क्या के प्रकार के प्रमान कर के 'चा, चा वा चाम चान चान चान चान चान चान कर वीन्य वा वा चान कर वा चान चान कर के 'चा, चा वा वा वा होता है कि 'चाईम्' के तीनों विगों में प्रयाम के एक वचन म समान रूप से 'चा, चा वा वा वा वा होता है कि 'चाईम्' के तीनों विगों में प्रयाम के एक वचन म समान रूप से 'चा, चा

्त्रीर मृ' प्रत्ययों की 'ऋदरीन स्थिति' होकर एक ही रूप 'ऋह' की श्राप्ति वैकल्पिक रूप से दुस्रा करती है। इम विषयक श्रन्य उदाहरण इम पकार हैं —श्रसी मोह पर-गुण लब्दयाते = श्रह मोहो पर गुण-लहुब्रयाइ=वह मोह दूनरों के गुणों को लघु कर देता है (श्रर्थात मोह के कारण से धन्य गुणवान पुरुष के गुण भी हीन प्रतीत होने लगते हैं।) असी अस्मान हदयेन हसति मारुत तनय ॥ अह ऐ हित्रपण हमइ माह्य तण हो = वह मास्त-पुत्र हृदय से हमारी हेंसी करता है, (हमें हीन दृष्टि से देखकर हमारा मजाक करता है)। श्रसौ कमन मुर्जा=श्रह कमल मुर्हा श्रर्थात वह (रह्मा) कमल के समान मुखवाली हैं।

पैकल्पिक पत्त का मदुभाव होने से पद्मान्तर में सत्र सल्या ३ 🖛 के तिथान से 'श्रदुस' में स्थित 'द' व्यक्तन के स्थान पर 'सि' आदि प्रत्ययों के परे रहने पर 'मु' आदेश की प्राप्ति होता है। तरनगर 'श्रद्स' शब्द के स्थान पर प्राकृत में अगरूप से 'श्रमु' का सद्भाव भी होता है। जैसे —श्रसो पुरुष = श्रमू पुरिसो, श्रमो महिला=श्रमू महिला श्रीर श्रद वनम्=श्रम् वरा ।

असी सस्कृत प्रयमा एकवचनान्त पुल्जिंग त्रिरोपण श्रीर सर्वनाम रूप हे। इसके प्राकृत रूप श्रह श्रीर श्रम होते हं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सच्या १११ से मूल सस्कृत शब्द 'श्रद्स्' में स्थित श्रन्त्य हनन्त व्यञ्जन 'स्' का लोप श्रीर ३ ८० से 'द' के स्थान पर 'ह' व्यञ्जन की श्रादेश प्राप्ति एष इसी सूत्र से प्रथमा एकवचन बाधक प्रत्यय 'सि=म्' के स्थानीय प्राकृतीय प्रत्यय 'डी=क्री' का लीप होकर प्रथम रूप अह सिद्ध हेंग जाता है।

हितीय रूप (खदस् + मि= अमी =) अम् में सूत्र सख्या १-११ से मल शब्द 'श्रदस' में स्थित श्रन्त्य इतन्त ब्यञ्जन 'म' का लोप, र द्र से 'द' क स्थान पर मु' की श्रादेश प्राप्ति श्रीर ३-१६ से प्रथमा विमक्ति क एक्क्चन में उकारान्त पुल्लिंग में मस्क्रुनीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'सि' के स्थान पर श्रनय हस्त्र स्त्रर उ'को र्राघे स्त्रर 'ऊ' का प्राप्ति हो कर प्रथमा एक पचनान्त पुल्लिग द्वितीय रूप अम् मिद्ध हो जाता है।

'प्रसिते' रूप की मिद्धि सूत्र सख्या १४२ में की गई है।

असे सरकृत प्रथमा एकवचनान्त स्त्रीलिंग विशेषण (स्त्रीर सर्वनाम) रूप है। इसके प्राकृत रूप 'अह' और 'अमू' होते हैं। दोनों रूपों की साधनिका उपरोक्त पुल्लिग रूपों के ममान हो कर 'अह' षोर 'अम्' भिद्ध हो जाते हैं।

'महिला' रूप की सिद्धि सूत्र मख्या १-१४५ में की गई है।

अर सस्कृत प्रथमा एकवचनान्त नपुसक लिग विशेषण (श्रीर मर्वनाम) रूप है। इसके माकृत रूप 'बह' द्योर 'इपसु' होउ हैं। इनमें से प्रथम रूप की माधनिका उपरोक्त पुल्लिंग रूप कें समान ही होकर प्रथम रूप 'अह' मिद्ध हो जाता है।

हिनीय रूप (अद)=भमु म 'अमु' अग दी शान्ति उपरोक्त पुल्लिंग रूप में बनिर्देश श्रातुमार खीर तत्परचात मृत सस्या ३-२४ से प्रथमा विमक्ति के एक्ष्य वन में नपुंगक निग में हम 🤊 प्राप्तब्य प्रत्यय 'सि' क स्थान पर प्राकृत में 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति एव १२३ में प्राप्त प्रपन्न ए र रपान पर अनुस्वार का प्राप्ति होकर द्वितीय मन अनु निद्ध हो जाता है।

'वण' रूप की मिद्धि मूत्र सच्या ११७२ में की गई है।

'अर पुल्लिंग रूप की मिदि इसी सूत्र में उपर की गई है।

'मोह्' मण्डल प्रथमा एकथचनान्त पुल्लिम महा रूप है। इसहा प्राप्टन ६५ मारी हारा है। इसमें मन सन्या ३-२ स प्रथमा विमक्ति के एकत्रचन में श्वकारान्त पुन्तिग में सग्रनाय प्रायन प्रत्यय मि=म' के श्यान पर प्राकृत म 'डा=घो प्रत्यय की प्राप्ति हो कर माही कर निख हो पाना है)

पर गुण ल्हारयाते सभूत कियापर रूप है इनका प्राकृत रूप पर-गुण-भारपद हाता है। इसमें सूत्र मख्या १९८७ से (ल्यु + ख्रया में स्थित) म्' व स्थान पर 'ह' में प्राप्ति श्रीर ५-१३६ म वतमान काल क प्रथम पुरुष क एकपचन में संस्कृतीय प्राप्तकर धारमनरहर प्रत्यय त' क स्थान पर पाकृत में 'इ' प्रत्यय को प्राप्ति हो कर पर-गुण छहु अयाइ हप मिड हो 'गना है।

'अह्' पुल्लिंग रूप की मिद्धि इसी सूत्र म उपर की गई है।

अस्मान मन्द्रत द्वितीया बहुवचनान्त (त्रिलिंगात्मक) मर्वनाम रप है। इनका भारत ही 'ण' (भी) होता है। इसम मूत्र सख्या ३ १०८ म मूल सस्ट्रत शब्द 'श्रासाद' क द्वितीया बहुवयन बावड रूप 'त्रहमान्' व स्थान पर प्राकृत में 'गो रूप की खादेश श्राप्ति हो कर ल' रूप मिद्ध हा चाता है।,

हरूमेण सम्फ्रत तृतीया व्हवसनान्त महा। हर्ष है। इपका प्राष्ट्रत हर दिखवण होता है। रवहें स्प्रमान्त्रा १ ८-म स्व' व स्थान 'इ' ती प्राप्त, १ १७७ से द्' श्रीर य का शाव, रे १४ से प्राप्त 'हर्य म हिन्दाच' म स्थित चन्य 'त्र' व स्थान पर न्यागे मृताया विभक्ति के व्यवस्य बोधक व्यवस् का सर्भाव होन स' 'o' की प्राप्ति चौर ३६ से प्राप्तांग 'हिचाप' में तृतीया विमक्तिक पड्यचन म संस्कृतीय प्राप्तत्व प्रयय देश के स्थान पर शास्त्र म 'गा अत्यय का प्राप्ति होकर दिशान्त रूप मिर हो जाना है।

(हम्ह वियापर रूप की मिद्धि मूत्र मैनया २ १९८ में की गह है।

मान्त-जनपः मान्हन प्रथपाः जरवचनान्त पुनिषा मता रूप है। इमका प्राप्त रूप मानवज्यकाः होता है। इसम मूप मन्या १-१७७ से प्रथम 'मृ' का लोव, १ १८० से लाव हुये 'मृ' वे वश्यान हेव हि कुष क्यों का स्थान पर विकासिन, स्वित्य मा 'त' इत्यान पर 'ल' का प्राप्ति, र किल में विकास साव कीर - र से प्रथमा विभाग क एक्ष्यन म त्रवास्तर पुन्थित में बानात 'मतरवं सक्य है * प्रियोदय हिन्दी व्याख्या सहित * [१७१]

भ्यतकृतीय प्राप्तत्र्य प्रत्यय 'मि' के स्थान पर प्राकृत में 'डो = श्रो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर *मास्य तणभो* ir रूप मिद्र हो जाता है ।

'अह' रूप की मिद्धि ऊपर इसी सूत्र में की गई है।

कमल मुखी मारुत प्रयमा एकवचनान्त छोलिंग विशेषण रूप है। इसका प्राफुत रूप कमल मुही हाता है। इसमें मूत्र मख्या ११८० में 'त्' के न्यान पर ह' का प्राप्ति और ३१६ से प्रथमाविमक्ति के एक्वचन में सम्क्रतीय प्राप्तस्य प्रस्थय 'सि' के स्थान पर प्राकुत में अन्त्य दोर्घ स्वर 'ई' को यथावत् रिश्ति प्राप्त होकर क्मल-युष्टी रूप मिद्ध हो जाता है।

एरिसो रूप को मिद्धि सूत्र सरय। १४२ में की गई है। महिला रूप की मिद्धि सूत्र मख्या ११४१ में की गई है। वण रूप नी मिद्धि सूत्र सख्या ११७२ में की गई है। ३-८०॥

मुः स्याद्गै ३-८८॥

अर्थ —सम्बन मवनाम शहर 'श्रन्थ' के प्राकुत रूपान्तर म विभक्ति बोयक ब्रव्य 'मि' ब्रादि पर एतं पर मून शहर 'श्रदम' में स्थित 'द' व्यक्षन के स्थान पर (प्राकुत में) 'मु' व्यक्षन की श्रादेश-प्राति होती है। उगहरण उन प्रकार है — समी पुरुष = श्रमू पुरिसो। समी पुरुषा = श्रमुणी पुरिसा श्रद वनम = श्रमु वर्ण। श्रमूनि वनाति = श्रमू वर्णाह श्रथवा श्रम्णी वर्णाण। श्रमी माला = श्रमू माला। श्रमू माला॥ श्रमुन श्रथदा श्रमूओ मालाबो। श्रम्य विभक्तियों के रूप इन प्रकार है —

	6			
निमस्ति नाम	एकत्रचन	बहुबचन		
धनाया (श्रप्तुना=)	श्रमुणा ।	(अमीमि =) धमृहि॥		
पचनी (अमुब्सान्=)	श्रमुबी, श्रमृर	(अमाभ्य =) अमृहिन्तो		
	श्रमृहिन्तो ।	श्रमृसुन्तो ।		
पष्ठा (श्रमुप्य=)	धमुखो धमुसा ।	(श्रमीपाम्=) श्रमूण ।		
ममगा धमुस्मिन्=)	श्रमुस्मि ।	(श्रमीयु==)श्रमृमु।		

उपरोक्त विमक्षितयों में इन वर्णिन रूपों के श्रविरिक्त चन्य रूपा का महनाव शहर हुने चकारान्त शब्दों के रूपा के समान ही जानमा चाहिये।

ह्मीलिंग में 'अम्' सर्वनाम शब्द के रूप यहु' आहि नीर्च कहारान शब्द के क्वी रूप्य ही समम लेना चाहिये ।

'अम्' रुप की निद्धि सुत्र सख्या हेन्द्र७ में की गई है।

'पुरिसो रूप की सिद्धि सत्र सन्या १४२ म की गई है।

अमी संस्कृत प्रथमा बहुबचनान्त पुल्निंग विशेषण (श्रीर सब ग्राम) हव है। इन राशी रूप अमुणी होता है। इसमें सूत्र सत्या १-११ स मूल सरहत शब्द 'खदम' म रिवत चण्डाक व्यञ्जन 'स' का लाप, ३-:= से 'द' के स्थान पर 'मु' व्यञ्जन का धादश प्राप्ति भीर । प्राप्तांग 'धामु' में प्रथमा विभिष्त क बहुवचन में (उकारान्त पुल्निंग म) संस्तांव पालाव व्य 'जम' के स्थान पर प्राकृत में 'लो' प्रत्यय की भाष्ति होकर अमुणी क्रव मिद्र हो जाता है।

'पुरिसा रूप की सिद्धि सूत्र संख्या ?-२०२ म की गई है। 'अस' रूप की मिदि सूत्र-सन्या ३८७ में की गई है। 'क्णं' रूप की सिद्धि स्त्र-संन्या १ १७२ में की गई है।

अमृति मरकृत प्रथमा द्वितीया बहुबचनान्त नपु सक निग विशेषण (सीर मर्बनान) ह है। इसके प्राहृत रूप चम्इ चौर चम्छि हाते हैं। इतम 'ख्रमु' ख्रग रूप का बारित अगाउ हिं त्रानुसार, तापस्यात् सुत्र मख्या ३ २६ से प्राप्तांग 'चापु' म न्यित चात्य द्वाय ।वा 'व' हो हैं स्वर 'ऊ' की प्राप्ति कराते हुए कम म 'इ' श्रीर 'णि' प्रत्यय की प्रथमा द्वितीया बहुवका गर नपुसक्ति । । र्थं में प्राप्ति हो हर कर स दो गें रूर अनुई ग्रीर अनुणि सिद्ध हो पात है।

वनानि संस्ट्रम प्रथमा द्विनीया बहुपचनान्त महा रूप है। इसका प्राप्तन रूप प्राप्ति हैं है। इसम मूत्र मत्या १२२८ म मूल मस्टत शब्द वन' में शित 'न' कंग्वान पर व' की पार्टि है ३२६ से प्राप्तीत 'वण में स्थित काल्य स्वर 'ख' का दीम स्वर 'सा' की प्राप्ति करात हुए गार्स तिनार्य में प्रथम। दिनीया क प्रहत्वन मं प्राफुत म णि प्रयय की पालि हाकर वनाणि स्विति हो जाता है।

असी मंस्ट्रत प्रथमा एक्वमतान्त स्त्रीनिंग विशेषा (बीर सवताम) हव है। इसका धर्म हत खम् होता है। इसम ध्यमु' खंग रूप की प्राप्ति अशाकत शिषि प्रमुमार, हमावि सुत्र-संस्था १-१९ में प्रथमा विमहित के एडवयन म स्त्रीनिय म नहारान्त म सीहायि प्राप्त प्रस्पय 'भि' के स्वान पर प्राहत में भान्य तस्व स्वर 'त' की दोष स्वर 'त' का शांकि त' अम् रूप सिद्ध री जाग है।

'माला रूप की मिद्धि सत्र सच्या २-१८२ में की गई है।

अम् मस्कृत प्रथमा द्वितीया बहुवचनान्त स्त्रीलिंग विशेषण (श्रीर सर्वनाम) रूप है। इमके प्राकृत रूप श्रमुत्र श्रीर श्रमुत्री होते हैं। इनमें 'श्रमु' श्रग रूप की प्राप्ति उपरोक्त विधि-श्रमुसार, तत्परचात सूत्र मख्या ३२७ से प्राप्तांग 'श्रमु' में स्थित अन्त्य हृश्व स्वर 'उ' को दीर्घ स्वर 'ऊ' की प्राप्ति कराते हुए प्रथमा द्वितीया के बहुवचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'जस' श्रीर 'शस' फै स्थान पर दोनों विभक्तिया में समान रूप से 'उ' श्रोर 'खो' प्रत्ययों की प्राप्ति हो कर दोनों रूप भमत थीर भमभो सिद्ध हो जाते हैं।

मालाओं रूप की सिद्धि सूत्र सरयाह-२७ में की गई है।

अमुना संस्कृत तृतीया एकवचनान्त पुल्लिंग सर्वनाम 'रूप है । इसका प्राकृत रूप श्रमुणा होता है। इसमें 'श्रम्' श्रम रूप की प्राप्ति उपरोक्त विधि श्रमुसार, तत्परचात सूत्र सख्या ३-२४ से इतीया विभक्ति के एकवचन में मस्क्रतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'टा' के स्थान पर प्राकृत में णा' प्रत्यय की प्राप्ति होकर अमणा रूप सिद्ध हो जाता है।

अभीभि सस्टत तृतीया बहुवचनान्त पुल्लिंग सर्वनाम रूप है। इसका प्राकृत रूप अमूहिं होता हैं। इसमें 'श्रम्' श्रग रूप की प्राप्ति उपरोक्त विधि-श्रतुसार, तत्परचात् सूत्र सप्या ३-१६ से प्राप्ताग 'श्रमु' में श्थित श्रन्त्य हुम्ब स्वर 'ख' को श्रागे एतीया बहुवचन बोधक प्रत्यय का सदभाव होने से दीर्पं 'ऊ' को प्राप्ति और ३७ से कृतीया विमक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'मिस्' के स्यान पर प्राकृत में 'हिं' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर अमृहि रूप सि हो जीता है।

अमुष्मात् संस्कृत पञ्चर्मा एकवचनान्त पुल्लिंग सवनाम रूप है। इनके प्राकृत रूप अमुत्री, अमूत्र और अमहिन्तो होत हैं। इनमें 'श्रमु' अग रूप की प्राप्ति चपरोक्त विधि श्रनुसार, तत्परचात पुत्र मख्या ३-१२ से प्राप्तांग 'श्रमु' मे स्थित श्रान्त्य हस्व स्वर 'ख' के 'श्रागे पञ्चभी एकवचन बोधक प्रत्ययक। सन्माव होने से 'दीर्घ 'ऊ' की प्राप्ति छौर ३८ से पाप्ताग 'छम्' मे पळवमी विमक्ति क पक्वचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'डिम=श्रस्' क स्थान पर प्राकृत में क्रम से 'क्यो टिहन्ती' प्रत्यवीं को पारित होकर कम से 'अमुओ, अमुख और अमारिन्तो' रूप सिद्ध हो जाते हैं।

अमीम्य संस्कृत पञ्चभी बहुत्रचनान्त पुल्जिंग सर्वनाम रूप है। इनके प्राकृत रूप श्रमहि तो भीर अमुसुन्तो होत हे। इनमें 'अम्' अग रूप की प्राप्ति उपराक्त विधि-अनुमार, तत्परवात् सूत्र-सज्या ११६ से शातात 'श्रमु' में स्थित श्रान्य हस्त्र 'ठ' के 'श्राने पश्चमी बहुवचन बोधक प्रत्यय का सदमाय होत से' दीर्घ 'ङ' की प्राप्ति और ३-६ से प्राप्ताग 'खमू' में पछनी जिमक्ति के बहुवचन में मस्ट्रतीय माप्तच्य प्रत्यय 'भ्यस्' के स्थान पर प्राकृत में कम से 'हिन्तो' और 'मुन्तो' प्रचयों की प्राप्ति होकर अमृहिन्ती और अमसुन्ती रूप सिद्ध ही जाते हैं।

असुष्य संस्कृत पच्छी एक बचनान्त पुरिताम सर्वनाम कर है। इसक शाहन रूप रूप जीर जासुरम होते हैं। इसमें 'ज्ञामुं ज्ञान रूप की माध्ति जवशोक विधि ज्ञानार सम्प्रतान मृत्र के ३-३ से प्रथम रूप में पच्छी विभिन्न के एक बचन में संस्कृतीय प्राप्तत्व प्रस्थय 'रूप ज्ञाम विभिन्न के एक बचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रस्थय हम ज्ञाम विभिन्न के एक बचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रस्था हम ज्ञाम विभिन्न के एक बचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रस्था हम ज्ञाम विभिन्न के एक बचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रस्था हम ज्ञाम विभिन्न के एक बचन से संस्कृतीय प्राप्तव्य की प्राप्ति वैक्तियक रूप से हां कर प्रथम रूप असूर्णों मिद्ध हो जाता है।

हितीय रूप 'श्रमुसा' में सूत्र मख्या २-१० से पष्टी विभक्ति के एकववन में संस्कृति प्रा'म प्रत्यय 'हम्=श्रस्' के स्थान पर प्राफृत म 'स्स' प्रत्यय की प्राप्ति होकर हितीय रूप श्रमुस्प में सिंह हो जाना है।

अभीपास सन्कृत पर्छा बहुबबनान्त पुल्लिंग सर्घनाम रूप है । इसका भाइन रूप कर्षः हाता है। इसमें 'छानुं खाग रूप की प्राप्ति उपरोक्त विधि ध्रमुनार, तत्वरपान् सूत्र मंख्या रेश वे प्राप्तां 'छानुं में स्थित खान्य द्वाव क्वा सान्तर होने से' वार्ष 'क्क' की प्राप्ति कीर २६ से प्राप्तां 'खमु' में पर्ष्यु विमिन्ति के सहवान संस्थान प्राप्ति कार्या विभाव प्राप्ति के सहवान संस्थान प्राप्तिक प्रत्य की प्राप्ति होकर अमृत्य रूप विक्रम संस्थान पर प्राक्तन में 'ज' प्रत्यय की प्राप्ति होकर अमृत्य रूप विक्रम साता है ।

अमुनिमन् मंस्कृत सरतमी एक्ष्यचनोन्त पुष्टिमा मर्गनाम रूप है। इसका प्राप्त रूप राजीत होता है। इसमें 'खमुं 'खम रूप की पारित चपरोक्त विधि खमुमार, तरररपात सूत्र मरणा रे रे से प्रार्थित खमुं में सत्त्रमी विमावन के एक्ष्यपत मा सत्कृतीय प्राप्तच्य प्रस्पय हिन्दूरं व स्थान हो प्राप्तन मानिमें प्रस्पय की खादेश प्राप्ति होकर खमुनिम रूप मिद्ध हो जाता है।

छमोषु माछन मनमी यहुवयनान्न पुश्तिम मर्वनाम रूप है। इनका प्राह्न कर चन्नु होरा है। इसमें बामु अग रूप की प्रान्त उपयोक्त विधि चनुमार, मृत्यम् सृत्य स्था ३ (६ से बान अग्रु में स्थिन अन्य होन कर के 'खामें मनमी विभक्ति के पहुचपन का प्राप्य होन हो हैं। 'क्रें की प्राप्ति और ४४४६ में मानमी विभक्ति के बहुवचन में प्राप्ति बागू में संस्कृति कारून अग्रु के समान ही प्राह्न म भी 'मृ प्राप्त्य की प्राप्ति होकर चनुसु रूप मिंहता जाता है। ३ स्ट।

म्मावये छी वा ॥ ३-८६ ॥

सदमोल्यक्यञ्जन सुक्ति दमारान्तम्य म्याने ह्यादेशं म्या परवर ध्रव हर्ष इत्यादेशो या भवतः॥ अयम्मि । इयम्मि । वर्ष । अमुम्मि ॥

ः अर्थे —मेस्ट्रतं मर्बनाम शस्त् 'मास्' के प्राह्तकथास्तरं में सूत्र मेरवा १२९ में कार्य इत्यत व्यापन 'स्' वा लोव होते के प्रवास देश कव अपनु में सिथन वारव सम्बर्ध अवस्थित है। सहस् ।'ग्रद' के स्थान पर सप्तर्मा विभक्ति के एकवचन में सस्क्रनीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'ङि≔इ' के स्थान पर श्चादेश प्र!प्त प्रत्यय 'ग्सि' परे रहते पर वैकल्पिक रूप से (ऋौर क्रम से) 'श्रय और इय' अग रूपों की प्राप्ति हुआ करती है। उदाहरण इस प्रकार है —श्रमुब्मिन् च श्रयम्मि श्रीर इयम्मि श्रर्थात् उसमें । . धैकल्पिक पत्त का सद्भाव होने से पत्तान्तर में (श्रमुप्मिन्=) श्रमुम्मि रूप का भी सद्माव होता है।

अमुध्मिन् संस्कृत संप्तमी एकवचनान्त पुल्निंग सर्वनाम रूप है। इसके प्राकृत रूप श्रयम्मि, ,इयम्मि चौर श्रमुम्मि होते हैं। इनमे से भथम दो रूपों में सूत्र सख्या १-११ से मृत सक्कृत शब्द 'श्रद्स' में श्वित अन्त्य हतन्त न्यजन 'स' का लीप, ३-= से शेप सम्पूर्ण रूप 'अद' के स्थान पर 'आगे मध्यमी एकवचन बीधक प्रत्यय हिम' का सद्भाव होने से कम से 'अय' और 'इय' अग रूपों की षैक्रिल्पिक रूप से क्यादेश प्राप्ति तत्वश्चात् सूत्र सख्या ३११ से सप्तर्मा विमिक्त के एकवचन में परक्रतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'ङि≔इ' के स्थान पर प्राकृत में 'म्मि' प्रत्यय की व्यादेश प्राप्ति होकर क्रम से ्पत्र वैकल्पिक रूप से प्रथम चौर द्वितीय रूप अयम्मि चौर इयम्मि सिद्ध हो जाते हैं।

वतीय रूप (श्रमुद्मिन् =)अमुम्मि की सिद्धि सूत्र-सख्या ३-५५ में की गई है। ३ न्धा

युष्मद् स्तं तुं तुवं तुह तुमं सिना ॥ ३–६० ॥

युष्मदः सिना सह त तुं तुव तुह तुम इत्येते पश्चादेशा मनन्ति ॥ त तुं तुव तुह तुभ दिङ्ठो ॥

अर्थ -संस्कृत सर्वनाम शब्द युव्पद्' के प्रथमा विभक्ति के एकत्रचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय ं 'मि',की संयोजना होने पर 'मृल शब्द श्रौर प्रत्यय' दोनों के स्थान पर श्रादेश प्राप्त संस्कृत रूप 'स्वम्' किस्थान पर प्राफ़ृत में क्रम से पाँच कर्षों की श्रादेश प्राप्ति हुआ करती है। ये पाँच रूप क्रम से इस पिकार है --(त्वम्=) त, तु, तुव, तुह श्रीर तुम। उदाहरख इस प्रकार है --व्वम् दृष्ट = त, (श्रयवा) ें हु' (अथवा तुब, (श्रयवा) तुह (श्रयवा) तुमं दिट्टी श्रयति तू देखा गया।

रपम् सस्टत प्रथमा एकप्रचनान्त (त्रिलिंगात्मक) सर्वनामह्य है। इसके प्राकृत हव 'त. तु. हुन, हुई और तुम' होते है। इन पाँचों में सूत्र सख्या ३ ९० से 'त्वम्' के स्थान पर इन पाँचों रूपों को क्षम से आदश-प्राप्ति होकर मे पाँच रूप कम मे त, तुं, तुर्च तुह और तुम सिद्ध हो जाते हैं।

हम्दः सम्कृत विशेषणात्मक रूप है। इसका प्राकृत रूप दिट्टो होता है। इसमें सूत्र-संख्या १-१०= में गर' के स्थान पर 'इ' की प्राप्ति, २ ३४ से 'ष्ट' के स्थान पर 'ठ' की प्राप्ति, २-८६ से आ देश प्राप्त 'ठ' को द्वित्व 'ठठ' को प्राप्ति, २ ६० से आदेश प्राप्त पूर्व 'ठ्' के स्थान पर 'ट' की प्राप्ति कीर ३-२ मे , भागांग 'दिट्ट' में व्यकारान्त पुल्लिंग में प्रथमा विमक्ति के एकवचन में सैस्टर्जीय प्राप्तव्य प्रस्वय 'मि' के है स्थान पर प्राइत में 'हो=त्रो' प्रत्यय की आदेश प्राप्ति हो कर हिट्ठा हव सिद्ध हो जाता है। ३-६०॥

भे तुन्भे तुन्भ तुम्ह तुन्हे उन्हे जसा ॥ ३-६१ ॥

युष्मदो जसा मह में तुन्मे तुन्म तुम्ह तुम्हे उन्हें इत्येते पढादेशा भवन्ति ॥ इत् तुन्म तुम्ह तुन्हें उन्हें चिट्टह । न्मी महन्मी ना (३१०४) इति वननान् तुन्हें। हा एव चाष्टरूप्यम् ॥

अर्थ — सहकृत सर्वनाम शब्द 'युष्पद्' क प्रथमा विमक्ति के बत्यवन में संहजीय शत्य हर 'पास्' की मयोजना हाने पर 'मूल शब्द जीर पत्यय' होनों क स्थान पर कादेश नाम संस्त रूप दे 'के स्थान पर पाद्वत में कम से छह रूपों की खादेश नामि हुना करती है। वे छह रूप कम स रूप तर हैं —में, तुब्भे, तुब्भ, तुम्ह, तुब्दे और उन्हें। उदाहरण इस प्रकार हैं —यूप्म विश्व = में, (क्श्र तुम्भे, (खायवा) तुब्भ, (अथवा) तुम्ह, (अथवा) तुम्ह, आयवा) तुम्ह, (अथवा) तुम्हें और (खायवा) उन्हें चिट्ट क्रवान तुम के होते हो। सून-मच्या दे १०४ के विचान से खादेश पान दित्रोय रूप 'तुम्मे' में स्थित 'दम' खीर काम पर चैकल्यिक रूप से 'म्ह' और 'दम्मे' की कम से खादेश नामि हुखा करता है, तरतुमार बट सर है के खातिरक्ष दे एव और इस प्रकार होते हैं — 'तुम्हें और तुम्में,' वो 'यूप्य' क स्थान पर बाहर हैं हैं खात रुपों की कम से (एव वैकल्यिक रूप से) खादेश नामि हुखा करता है।

य्यम् सस्कृत प्रथमा महुव उत्तान्त (त्रिलिगासक) नर्यनाम रूप है। इनक श्रष्ट्र है चाठ होते हैं —मे, तुक्मे, तुम्क, तुम्क, तुम्क, तुम्क, द्वार हुए हैं। द्वार तुम्के। इतन से प्रथम एए करें। स्वासंख्या के ६१ से मन्यूर्ण मस्कृत रूप 'यूयम्' के स्थान पर इन एड रूप' की चादरा प्रालि हैं। ये एड रूप 'मे, तुक्मे, तुक्मे, तुक्मे, तुम्के, तुम्के, सीर उन्हें मिद हो जात है।

रोप दो रूपों में-(यान यूपप्=) तुन्हें श्रीर तुन्के म सूत्र मस्या ३ १०४ म ह्या प्राप्त हिसीय रूप 'तुहमे' में स्थित 'हम खश के स्थाप पर 'हह श्रीर 'उम' खरा रूप की साईसन्सर्व होकर कम म सातवी श्रीर खाठवो रूप 'तुन्हे एव पुरुक्त' मा निद्ध हो जाने हैं।

ार्निक्य मंद्रक्त अवसंग वियापद का रूप है। इसका प्राप्तन रूप विदुर होता है। इस सूत्र साराया ४१६ से सांकृतीय कार्यरा प्राप्त रूप 'तिष्ट' की मूल पातु 'त्या क स्था' वर बाहुर्य 'पिष्टु' रूप को खोडेश प्राप्ति कीर ३१४६ स बर्तमान काल क हिलान पुरुष क बहुर्यप में वर्ष्ट प्राप्त्रम्य प्रस्तिपरीय शत्यय 'पा' के स्था' पर प्राप्त्र म 'ह' प्रत्यम की बाहिस न दि राक्ट निहारी रूप मिद्र हो जाता है। दे ६१ ॥

तं तुं तुमं तुवं तुह तुमे तुए यमा ॥ ३-६२ - ॥

युष्पदीमा मह परे सप्तादेशा भवन्ति ॥ वं तुं तुमं तुव तुव तुमं तुए बन्दामि,॥

अर्थ —सस्कृत सबनाम शब्द 'युप्पद्' के द्वितीया विमक्ति के एकवचन में संस्कृतीय शास्त्रव्य प्रस्यय 'खाँम = म' की सबोजना होने पर 'मुल शब्द श्रीर प्रत्यव' दोनों क स्थान पर खादेश प्राप्त सस्कत रूप 'त्वाम' के स्थान पर प्राकृत में कम से सात रूपों की खादेश प्राप्ति हुन्ना करती है। वे मात रूप क्रम से इस प्रकार है — त, तु, तुम, तुब, तुह, तुमे श्रीर तुष। चदाहरण इम प्रकार है — श्रहम) स्वाम बन्दामि = (श्रह) त, (श्रथवा) तु, (श्रथवा) तुम, (श्रथवा) तुव, (श्रथवा) तुह, (श्रथवा) तुमे श्रीर (श्रथका) तल बन्दामि = श्रथीत (में) तमे बन्दना करता हैं।

त्वाम् सस्कृत द्वितीया एकवचनान्त (त्रिलिंगात्मक) मर्वनाम रूप है। इसके प्राकृत रूप सात होते है। त, तु, तुम, तुम, तुम, तुम, थोर तुए। इन सातो क्यों में सूध सख्या ३ ६२ से सस्कृत रूप 'खाम' कस्थान पर क्रम से इन मातो रूपों का आदेश प्राप्ति हाकर ये सातों रूप द्रम से 'त. त. तम तव . तह तमे और तए सिद्ध हो जाते हैं।

वन्दामि' कियापद रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १६ म की गई है। ३६२॥

वो तज्म तब्मे तुब्हे उब्हे में शसा ॥ ३-६३।।

युष्पदः शसा सह एते पढादेशा भवन्ति ॥ यो तुज्भ तुब्मे । ब्मो म्हज्मी वेति वचनात तुम्हें तुन्भे तुच्हें उच्हें भे पेच्छामि ॥

अर्थ —सःकृत सर्वनाम शब्द 'युष्मट्' के द्वितायां विभक्ति के बहुवचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'शस = असु की सयोजना होने पर 'मूल शब्द और प्रत्यय' टोनों के स्थान पर आदेश प्राप्त संस्कृत रूप 'शुप्मान' के स्थान पर प्राकृत मे कम से छह रूपों को श्रादेश प्राप्ति हुन्ना करती हैं। वे छह रूप क्रम से इस प्रकार हैं - बो, तुरुम, तुरुमे, तुरहे, उन्हे खौर भे। सूत्र सरया ३-१०४ के विधान से खादेश प्राप्त रितीय रूप 'तुडमे' में स्थित 'डम' अश के स्थान पर बेकलिपक रूप से 'स्ट' और 'उम्ह' अश रूप को क्रम से आदेश प्राप्ति हुआ करती है, तदनुमार उक्त छह रूपों के अतिरिक्त दो रूप और इस प्रकार होते हैं — 'तुन्हें श्रीर तुज्मे' यों 'युष्मान' के स्थान पर प्राकृत में कुल श्राठ रूपों की हम से (एवं वैकल्पिक रूप में) आदेश प्राप्ति हुआ करती है। उदाहरण इम प्रकार है - (अध्मू) युष्मान प्रेले = बी, (श्रयवा) तुज्म, (श्रयवा) तुज्मे, (श्रयवा) तुन्हे, (श्रयवा) तुज्मे (श्रयवा) तुर्दे, (श्रयवा) ^{चय}दे श्रीर (श्रथवा) भे पेच्छामि श्रर्थात (में) श्राप (सभी) को देखता हू ।

युष्माद् संस्कृत द्वितीया बहुवधनान्त त्रिलिंगात्मक सर्वनाम रूप है। इसके प्राकृत रूप ब्याठ होत हैं — यो, तुज्ञक, तुब्के, तुम्हे, तुज्के, तुय्हे, त्यरे और भे। इन आठो रूपो में सुप्रसप्या रे ६३ से सस्तृत रूप 'युष्तान्' के स्थान पर क्रम से इन आठों रूपों की कादेश प्राप्ति हो कर ये आठो रूप कम से 'बी, तुज्जा तुब्भे, तुम्हे, तुज्ज्ञे, तुर्द्दे, उरहे, श्रीर भे' मिद्र हो नाते हैं।

्यर्थ —संस्कृत सर्वेनाम शब्दे 'युप्मद्' के प्राकृत स्पान्तर में पञ्चमी विमक्ति ६ ण्डासः। सस्कृतीय प्राप्तन्य प्रत्यय 'डिम = श्रस्' के प्राकृतीय स्थानीय प्रत्यय 'तो, दो=श्रा, दु=3, हि हिन ही लुक्त्र प्रत्ययों की कम से प्राप्ति होने पर सम्पूर्ण मूल सस्कृत शब्द 'युव्मद्' के स्थान पर प्राप्ट रूपीय में क्रम से पाँच श्रम रूपो की प्राप्ति होती है, जो कि क्रम से इस प्रकार है —तह, तुर, तुम तुर की तुब्म । सूत्र सख्या ३-१०४ के निर्देश से प्राप्तांग पाँचवें रूप 'तुब्म' में स्थित व्म' श्रश के स्थान शर्म से एव वेकल्पिक रूप से 'म्ह श्रीर उम्म' श्रश रूप की श्रादेश प्राप्ति हुश्रा करती है। यों 'गुफर्' हश पाँच अग रूपों के अतिरिक्त ये दो रूप 'तुन्ह और तुज्म' और होते हैं। इस प्रकार 'युप्नर्' क पारं रूपान्तर में पञ्चमी विभक्ति के एक्वचन में प्रत्ययों के संयोजनार्य सात श्रग रूप की का प्राप्ति होती हैं, तत्परवात् सार्वो प्राप्तागो में से प्रत्येक अग में अम से (एव वैकल्पिक न्या छह छह प्रत्ययों की अर्थात 'त्तो, श्रो, उ, हि, हिन्तो और लुक्' प्रत्ययों की प्राप्ति शंती है। इन प्रश 'युप्मद्' के पश्चमी विभक्ति के एकवचन में प्राकृत में बयालीस (= ४२) हप होते हें, जो कि कम म ! प्रकार हैं - 'तह' अग के रूप - तहस्तो, तईखो, तईव, तईहि, वईहिन्तो और तह (नवतन) वर्ष तेरे से । 'तुव' प्रम के रूप - तुवस्रो, तुवाश्रो, तुवाठ, तुवाहि तुवाहिन्ता और तुवा (=त्वत्-) श्रमीन ह से। 'तुम' अग के रूप -तुमत्तो, तुमाओ, तुमाव, तुमाहि, तुमाहिन्ती और तुमा (न्वतः) वर्षा तेरे से । यों शेपाग 'तुह, तुब्भ, तुन्ह, श्रीर तुब्क' के रूप भी समक तना चाहिये।

प्राकृत में प्राप्त रूप 'तत्तो' की प्राप्ति 'त्वत' से हुई है। इसमे सूत्र-मख्या २ अध्म 'व ध लोप हुआ है और १ ३७ में विसर्ग के स्थान पर 'डो=आ' की प्राप्ति होकर 'तसी' प्राप्तन रूव विकि हुआ है। अब इस रूप 'वत्तो' को उक्त ४२ रूपों से मिन्न ही जानना।

नीचे माधनिका उन्हीं रूपों की की जा रही है, जो कि वृति में उल्लिक्ति हैं, अह शामस्य शा क्रवीं की साधनिका स्वयमेष कर लेनी चाहिये।

त्वत् (श्रयमा 'त्वद्') मस्कृत पद्धमी एकवचनान्त (त्रिलिंगात्मक) सर्वनाम रूप है। इन्ह प्राकृत कर तहती, वुवची, वुमची, वुक्ती, वुक्सी, वुक्क्षी श्रीर वुक्क्षी होते है। इनमें स प्रथम प्र रुवों से सूत्र सख्या ३ ६६ से मूल सस्कृत राध्द 'युष्मद्' फ स्थान पर क्रम स वाँत प्रवों की प्यादश-प्रापित छुदू श्रीर सातवें क्यों में स्व-मख्या ३ १०४ के निर्देश से छट्टे श्रीर सातव श्रग कप की प्राप्ति तत्परवाण 98 म से साती अग हर्वों में सूत्र सख्या ३-द से पचमी विमक्ति के एकव नगर्थ म 'ते।' ब्रत्यव की प्रावि होकर कम में मार्ती रूप-'तहत्ती, तुवत्ती, तमती, तृहत्ती, तु-मती, तृन्दत्ता श्रीर तुन्झती विद हो जाते हैं।

त्वतः संस्कृत विद्वित रूपक शब्द है। इमका ं।न पर 'हो ≃ लोव और १-३७ से 🗽 ो जाता है। ३-६६ ॥

। है। इसमा सूत्र संख्या २०४ ^स हाकर प्राञ्च नदित रूप 'तती'

तुच्ह तुच्म तांहन्तो डिसिना ॥ ३-६७ ॥

ः युष्पदो ङसिना सहितस्य एते त्रय ब्रादेशा भनन्ति ॥ तुरह तुन्म तहिन्तो त्र्यागश्री । भो म्ह जम्मी वेति वेचनात् तुम्ह । तुन्म । एव च पत्र्य रूपाणि ॥

अर्थ —सम्कृत सर्वनाम राष्ट्र 'युप्पद्' क पञ्चमी विभक्ति के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तय 'दिस = अस' की सयोजना होन पर प्राप्त सस्कृतीय क्रव 'त्वत' के स्थान पर प्राप्त कम से (एव वैकित्म रूप से) तीन रूपों की आदेश प्राप्त हुआ। करती है। य आदश प्राप्त रूप ये हैं — 'वृत्त, तुक्म और तहिन्तो'। चदाहरण इस प्रकार हैं —त्वत आगत =तुष्ह अथवा तुष्म अथवा तहिन्ता आगओ अर्थात तुन्दारे से - (तेरे से) आया हुआ है। सूत्र सख्या रे १०४ के विधान म उपरोक्त आदेश प्राप्त द्वितोय रूप 'तुक्म' मे स्थिन 'कम अश के थान पर 'म्ह' और 'उम्म' की वैकित्यक रूप मे आदेश प्राप्त हुआ करती है, तद्नुसार 'दवत्' क स्थान पर हो और आदेश भाग रूपों का मद्भाव पाया जाता है। जो कि इस प्रकार है — 'तुन्ह और तुन्क्त'। यों पद्धमी एकपचनान्त (में) युष्पद् के प्राप्त रूप 'दात्' के द्विपीक रीति से आदेश-प्राप्त पूष्ट रूप जानना।

स्वत् (≃त्वर्) सस्कृत पञ्चमी एकवचनान्त त्रिलिंगात्मक सर्वनाम रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप पौंच होते हैं —तुरुह, तुब्म, तहिन्ती, तुन्ह श्रीर तुब्म। इसमें स्त्र-सख्या ३ ९७ से 'त्वत्' रूप के स्थान पर इन पौंचों रूपों की श्रादेश प्राप्ति कम में (तथा वैकल्पिक रूप से) होका कम से ये पाँचों रूप 'बिंग्ड, तुम्म तहिन्तो, तुम्ह श्रीर तुब्झ' सिद्ध हो जाते हैं।

'भागओ' रूप की सिद्धि सुत्र-सच्या १ २०९ में की गई है। ३-६७ ॥

्तुब्भ-तुब्होब्होम्हा भ्यसि ॥ ३-६८ ॥

युष्पदी स्यति परत एते चरवार आदेशा भवन्ति ॥ स्यमस्तु यथाप्राप्तमेत्र ॥ उभ्मचो । तुरहत्तो । उद्दत्तो । उद्दत्तो । उद्दत्तो । न्द्र-ज्मौ वेति प्रचनात् तुद्रव्हचो । तुज्मत्तो ॥ एव दो-दु-हि हिन्तो-सुन्तोष्चप्युदाहार्यम् ॥

अर्थ — सास्कृत मर्बनाम शब्द 'युष्मद् के श्राकृत रूपान्तर मे प्रवान विमन्तित क प्रहुवयन में प्राप्त य मस्कृतीय परंत्रय 'श्राम्' क प्राकृतीय स्थानीय परंत्रय 'ता, दो=श्रो, हु= ३, ६, हिन्ती और खिलो' श्राप्त होने पर 'युष्मद्' क स्थान पर चार आदेश आ में की कम मे प्राप्ति हुआ करती हैं। प्रवित्ता अत्येक आदेश प्राप्त आ गा ब्रह्म प्रवाम बहुप्यन बोधक प्रत्यों की मयोजना होती है। प्रवास का में क्या करता होती है। प्रवास का मा क्या हुए कुरुक्त और उन्हर'। सून सम्प्रा ३-१०३ क विनान में

उपत ऋ।देश प्राप्त प्रथम ऋ ग 'तुरम' में श्थित 'टम' ऋ शृ के स्थान पर बैक्लिक रूप स'क श्रीर 'च्फा' श्रशास्त्रको प्राप्ति हुआ। करती है, तद्युसार उक्ते चार श्रगरूर्व क श्रीतिरिक्तः अ ग रूपों की प्राप्ति और होती है, जो कि इस प्रकार है - 'वुन्ह' और 'वुज्मां:। यो पर्वमा बहुक्त के प्रत्ययों के सबोजनार्थ कुल छह ऋग रूपों की प्राप्ति होती है। प्रचमी बहुवचन में 'प्रमुधार कें स्थान पर 'तो' दा≈थी, दुःव, हि, हिन्तो श्रीर सुन्तो' यों छह पत्ययों की श्रादेश प्राप्ति का किएन हैं। ये छह ही प्रत्यय काम से उक्त छह आ गों में से पत्येक आ ग में सयो। चित होते हैं, तरनुभार पत्री बहुवचन में सस्कृतीय रूप 'युष्पत्' के प्राकृतीय रूप छत्तास होते हैं । उदाहरण इम प्रकार हैं --

त्तो-प्रत्यय≈तुब्मत्तो, तुब्हतो चब्हतो, तुम्हतो, तुम्हतो, तुक्ततो ।

श्रो-प्रत्यय=वुरमाधा, वुरशश्रो, परवाही, उम्हाश्री, वुम्हाश्री, वुरमाश्री।

च-प्रत्यय ≈त्रवमात्र तुरुपोहु चण्हात्, जन्हात्र, तुन्हात्, तुनमात्र,। वो शेष प्राथय कि लिल श्रीर सुन्तो' की सयोजना करके स्वयमेव ममफ लेना चाहिये।

युष्मत् सरहत पद्धमी यहुवचनान्त । प्रतिगात्म ह मर्वनाम हर है। इन हे प्राहत हर-बुंप्मण तुटहत्ती, बटहत्ती, बम्हत्ती, बुम्हत्ती श्रीर तुज्यता होते हैं। इनम से प्रथम बार रूर्ग में सूत्र तंख्या रेष्ड से मृत सस्तृत शब्द 'युष्मर्' के स्थान पर प्राकृत में चार श्रंग रूप 'तुब्ध पुर_ा-उब्ह-उन्ह' क' भार प्राप्ति, रोप दो रूपों में सूत्र सन्या ई १०४ के विधान से पूर्वास्त पात प्रवस^{ेश्च} ग 'सुध्म' में स्थित ^{'धा}' प्प न के स्थान पर कम से 'मह और उक्त' की प्राप्ति होने से उक्त पञ्चम श्रीर पट्ट श्र ग हर की प्राप्ति तत्परचातु सूत्र मरूपा ३ ६ से उन्नत प्राप्तांग छहीं से पद्धनी विभिन्न फ बहुबचन स संस्कृतीय प्राप्त प्रत्यय भ्यम के स्थान पर प्राकृत में छादेश प्राप्त प्रस्वय ती, छी, उ, हि, हिन्ती, सुन्ती म से प्रथम प्रत्र 'तो की प्राप्ति होकः उपत हह ही शक्त मप तृत्मत्तो तुम्हता, उम्हत्तो, उम्हत्तो वी तुज्झत्तं।' सिद्ध हो जात हैं । ३-६८ ॥

नड-तु-ते-तुम्हं,-तुह्-तुह्-तुव-तुम-तुमे-तुमो-तुमाइ-दि-दे-ड-ए-तुक्सोडभोय्हा इसा ॥ ३-६६ ॥

युष्पदो डमा पष्टयेक वचननमहित्तस्म एते व्यष्टाडणाडेशा भवन्ति ॥ तह । तु । त तुम्र तुइ । तुई । तुप । तुम । तुमे । तुमो । तुमाइ । दि । दे । इ । ए । तुष्म । उष्म । उष्क्षण व्मी म्ह-जमी नेनि बचनात् तुम्ह । तुन्म । उम्ह । उन्म । एन च द्वानिशति स्वाणि ॥

अर्थ —मंस्कृत मर्यनाम शरर 'युष्मर्' क पछी विभक्ति क एकवारा म संस्कृतीय प्रामध्य व्यवस् 'इम्=अस' भी मयीत्रना होने पर प्राप्त मस्टनीय रूप 'तव' खथवा त के प्राक्त रूपन्तर में मर्जू रू 'तव' श्रयवा ते रूप में स्थान पर सम से अठारह रूप की चाहेश प्राप्ति हुआ करती है। उद्गहरी

'तम श्रथ वा 'ते' सरकृत पच्छी एकवचनान्त (शिलिंगात्मक) सर्वनाम रूप हैं। इसके प्राष्ट्रंत रूप (२२) होते हें —तइ, तु, ते, तुग्ह, तुह, तुह, तुह, तुम, तुमे, तुमो, तुमाइ, दि दे, इ. ए. तुब्भ, उद्भ, उद्भ, उद्भ, उ्द्भ, उद्भ, उद्भ,

रोप १६ वें से २६ वें तक के चार रूपों में सूत्र संख्या ३-१०४ के विघान से एक सोलहवें छोर सतरहब रूप में शिवत इस त्राश के श्यान पर क्रम से तथा चैकित्यक रूप से 'मा' छीर 'इस' छश की आरेश प्राप्ति हाकर उक्त शेष चार रूप 'तुम्ह, तुज्झ, उम्ह छोर उज्झ भी सिद्ध हो जाते हैं।

'भण' रूप का सिद्धि सूत्र मंख्या ३-५० में की गई है। ३-६६ ॥

तु वो भे तुद्भं तुद्भाण तुवाण तुमाण तुहाण उम्हाण आमा॥ ३-१००॥

युष्मद् थामा महितस्य एते दशादेशा भवन्ति ॥ तु । यो । मे । तुष्म । तुष्

भर्षे — संस्कृत नर्वतान शस्त्र 'युष्मन्' के वध्ते विमक्षित के बहुववन में संस्कृतीय प्राप्तव्य भ्रयद 'प्राम्' की सयोजना होने वर प्राप्त संस्कृत रूप 'युष्माकम्' श्रयवा व' केस्यान वर प्राकृत-रुवान्तर में सबे प्रयम ये दश रूप 'तु, वो, भे तुष्म, तुष्मं, तुष्माण, तुवाख, तुमाण, तुराण स्वीर उन्हाणं आदेश-रूप से प्राप्त होते हैं। तत्वरचात्- द्वा तत्व राष्ट्र के विवाद म उपाक्ष प्राप्त होते हैं। तत्वरचात्- द्वा तत्व राष्ट्र के विवाद म उपाक्ष प्राप्त होते हैं। तत्वरचात्- द्वा तत्व राष्ट्र के विवाद म उपाक्ष प्राप्त हुए। देश रूपों म से छट्ठे रूप से लगाकर दश्वें रूप के आत्व में आगम हप आव्या राष्ट्र के विवाद म उपाक्ष हुए। प्राप्त हुणा फरती है, तद्वुनार पोच रूपों मा में अपाक्ष प्राप्त प्रथम दश म्योव विवाद में अपाक्ष आदेश प्राप्त हुणा करती है, तद्वुनार छह आदेश पात र वैक्विय रूप म 'पर आग में अपाक्ष आदेश प्राप्त हुणा करती है, तद्वुनार छह आदेश पात रूपों का निर्माण और श्व प्रशा होता है— जुन्ह और जुन्म, पुन्ह और जुन्म, वुन्ह आदेश प्राप्त रूपों का निर्माण और श्व प्राप्त होता है — वुन्ह और जुन्म, प्रयु के विवाद के प्रयु के विवाद के प्रयु के विवाद के विवाद रूपों के

चदाहरण इस मकार है —युध्नाकम अथना व धनम्=तु, वा - भूना १ वर्गी २३ वॉ रूप तुष्माण घण अर्थात तुम सभी का धन ।

युष्माकम् सस्कृत पद्यो बहुवचनान्त त्रिलिगासक मवनाम हव है। इवह प्राष्ट्रहर रें, वो भे "

से लगाकर तुष्काएँ तक २३ होत हैं। इनम से प्रधम राहरी
में सूत्र सख्या ३-१०० की प्राप्ति, ११ वे से १४ वे तक के हवों में सूत्र सख्या १२७ का प्राप्ति, १६ वे प २१ वें तक के हवों में। सूत्र सख्या ३-१०० की प्राप्ति चीर २२ वें तथा २३ वें में सूत्र-पर्या १ १० का
प्राप्ति होकर प्रथम हव से लगाकर २३ वें स्व तक की व्यथित 'तु थो, भे तुष्म तृष्म, नाभाण तुष्मान,
तुमाण, तुह्मान, तुम्हान, तुम्मान, तुष्मान, तुमान, तुम्ह, तुम्म तुम्म तुम्म तुम्ह, तुम्म तुम्ह, तुम्म तुम्म

'धण' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या 🗗 '२० में की गई हैं । ३ १०० ॥

तुमे तुमए तुमाइ तइ तए डिना ॥ ३-१०१ ॥

पुष्पदो हिना सप्तम्येक वचनेन सहितस्मः एते, पत्रचादेशा मनन्ति ॥ तुमे तुम् तुन् तह तव ठित्र्य ॥

अर्थ — साकृत सर्वनाम शहर 'युष्पर्' में पन्तमी विभिन्त के एकवचन में मेहृतीय वाल्ल्य प्रत्यय 'डि = इ' की संयोजना होने शान्त संस्कृत रूप-'स्विप' के स्थान पर प्राकृत रूपान्ता में प्रविच महित अग्रस्था में कम में पौच रूपों की खोटरा प्राप्ति होती है। य पानों रूप बन से इस प्रकार हैं — (स्विप =) तुमे, तुमप दुमाइ, तद, खोर तप। वदाहरण इस प्रकार हैं — स्विप रिधनम-दुमें, दुन्र-नुमाइ, तह खोर तए टिक्सं खयात तुम्क में खयवा तुन्क पर स्थित है। ्षियं मस्तृत सन्तमी एकत्रचनान्त त्रिजिगात्मक सर्वनाम है। इनके प्राक्कत में पाच रूप होत हैं। तुमे, तुमय, तुमाइ, तह खोर तए, इनमें सूत्र मख्या ३ १०१ से सस्कृत सर्वनाम शब्द 'युष्पद्' में मप्तमा एकत्रचन में मस्कृतीय पातव्य प्रत्यय 'डि=इ' की सयोजना होने पर प्राप्त रूप 'त्विय' के स्थान पर उक्त पाँगों रूपों की कम स आवश्य प्राप्ति हो कर कम से य पाँचो रूप 'तुने, तुमय, तुमइ, तर और तए' सिद्ध हो.जाते हें।

ाठिअ रूप की निद्धि सूत्र-सख्या ३-१६ में की गई है। ३१०९ ॥

तु-तुत्र-तुस-तुह-तुब्भा ठौ॥ ३-१०२ ॥

युष्पदो डौ परत एते पश्चादेशा भनन्ति । डोस्तु यथा प्राप्तमेन ॥ तुम्मि । तुनम्मि । तुमम्मि । तुदम्मि । तुन्भम्मि । ब्भो म्ह-ज्मौ वेति नचनात् तुम्हम्मि । तुन्मम्मि । इत्यादि ॥

अर्थ — सरकृत सर्वनाम शब्द "युष्मद्" के प्राकृत रूपान्तर में सममी विभिन्त के एक वचन में सरकृतीय प्राप्तव्य पत्यय "हि,=इ" ने प्राकृतीय स्थानीय प्रत्यय "मिन" (ओर 'डे=ए") प्रत्यय प्राप्त होने पर 'युप्पद्" के स्थान पर प्राप्तत में पाँच श्रम रूपों की कम स श्राप्त होती है, जो कि इस प्रकार हैं — प्रत्यक्ष प्राप्त होती है, जो कि इस प्रकार हैं — प्रत्यक्ष जुन, तुन, तुन और तुन्न। श्राहरण यों हैं — त्ययि = तुन्मि, तुन्मिम, तुमिम तुद्दिम श्रीर दुप्पन्न । सून सख्या ३ १०८ के विधान से उपोक्त प्रश्नम श्रम रूप 'तुन्म' में स्थित 'दम' श्रम के स्थान पर कृम से तथा वैकृत्विक रूप से 'म्ह' श्रीर 'उफ्न' श्रम रूप की प्राप्ति हुश्या करती है, तदतुमार ने श्रीर श्रम रूपों स्थान रूपों हम प्रकार प्राप्ति होती हैं — तुन्ह' श्रीर 'तुज्म'। ऐसी स्थिति में 'निम' प्रत्यय की स्थानना होने पर दो श्रीर रूपों का निर्माण होना है — तुन्हिन्म और तुज्मिन।

पृत्ति में इत्यादि' शब्द का उल्लेख किया हुआ है, इससे अनुमान किया जा मकता है कि इपोक्त भाग सात आगा में से प्रथम अग क अविरिज्त शेप छुद अग रूवों में सुन सन्या ३ ११ के विश्वान से सस्कृतीय प्रत्यय 'डि=इ' के स्थान पर है=ए'प्रत्यय की मयोजना भी होना चाहिये, त'तुमार छह रूवों की प्राप्ति क' सभावना होती है, जो कि इम पकार है — तुवे, तुने, तुहे तुब्भे तुम्हें और तुज्के, यो पृत्ति के आ त में उल्लिखित 'इत्यादि' शार्द के सकेत में प्रमाणित होता है।

त्यिं बह्हत सप्तमी एकवचनात्त त्रिनिंगास्मक सर्वनाम रूप है। इसक प्राष्ट्रन तुस्मि, तुब्हिम, तुम्मि, तुहिम, तुहिम, तुम्मि, तुहिम, तुहिम और तुहिम, तहिम, त

सुषि ॥ ३-१०३ ॥

युष्पदः सुषि परतः तु तुन तुम तुह-तुन्मा मवन्ति ॥ तुम् । तुवेषु । तुमेषु । तुस् तुन्मेषु ॥ नमो म्ह-न्द्रमा नेति प्रचनात् तुम्हेषु । तुन्भेषु ॥ केचितु सुष्पेरव विक्रन्यमिन्छन्नि तन्मते तुप्रसु । तुमसु । तुहसु । तुन्मसु । तुन्मस्याःवमपीन्छन्यःयः तुन्मासु । तुम्हासु तुन्भासु ॥

अर्थ — सस्वत मर्वनाम शन्द "युष्मद्" क प्राक्तन रूपान्तर में सम्भी विमित्ति के बहुववन व "सुष्म-सु" प्रत्यय पर रहते पर "सुष्म-दू" के स्थान पर प्राकृत में पाँच आग रहतों की आदेश गित हुंच करती हैं। जो कि इस प्रकार हैं — युष्मादु-दुव, तुर, तुव, तुव, तो और तुष्म त्र तहरण वो हैं — युष्मादु-दुव, तुव, तुव, तो और तुष्म त्र तहरण वो हैं — युष्मादु-दुव, तुवेसु, तुमेसु, । तुदेसु और तुष्में सुष्म में कि विचान से प्रचम अग रूप 'तुष्म' में कि 'क्या के स्थान पर कम से और वैकल्पिक रूप से 'म्ह' और 'क्या के स्थान पर कम से और वैकल्पिक रूप से 'म्ह' और 'क्या का प्राप्त हैं की तुष्म' में 'तु प्रस्था की आप रूपों की प्राप्ति और तिल्व कि स्थान स्थान स्थान प्राप्त की प्राप्ति की स्थान होते हैं। प्रस्था की प्राप्ति होकर 'तुष्में त्र 'तुष्में हैं 'तुष्म स्थान से प्राप्ति होकर 'तुष्में त्र दुष्में से स्थानमा होते हैं।

कोई कोई क्याकरणाचार्य 'तु' प्रत्यय परे रहने पर उपरोक्त रीति से प्रार्थांग ऋकारोग्त रूपें हे स्थत अन्यत्य 'त्र के स्थान पर उपर वर्धित एव सूत्र सत्या ६-१५ से प्रारतक्य 'त्र' की प्रार्थित का विषय चिकलियक रूप से ही मानते हैं, जो कि र्रं प्रधार हैं — युष्णाचु= सुबसु, सुबसु सुहसु सुक्सु, सुब्ध और सुज्यन्तु। अतर बाल रूपों में और स्व रूपों में अपर साल रूपों में और स्व रूपों से प्रधार हैं — युष्णाचु= सुबसु, सुबसु सुहसु सुक्सु सुक

कोई पोई पाइत मापा तत्त्रज्ञ प्रामांग जुरुम' में स्थित कराय स्वर 'क्ष' के स्थान वा 'तुं' अत्वय वरे रहने पर ज्या का सदमाय भी जैशीलफ रूप में मानते हैं। इनके मत से 'तुष्तामु' कर रे ज्योर प्राप्ता के स्वर्माम में जिशीलफ रूप में मानते हैं। इनके मत से 'तुष्तामु' कर रे ज्योर प्राप्ता के स्वर्माम के स्वर्म के स्वर्माम के स्वर्म के स्व

क्रम से प्राप्ति, तत्वरवात् सूत्र सत्या ४ ४४० से प्राप्ताग इन पार्चो क्रम से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'सुप = सु' क समान ही प्राक्तन में भी सु' प्रत्यय की प्राप्ति, पत्र द्वितीय से पवम रूवों में सूत्र सख्या ३ १४ से प्राप्तिग में स्थित खन्त्य स्वर 'ख' के स्थान पर 'खागे सप्तमी बहुवचन बोधक प्रत्यय 'सु' का सद्भाव होने से' 'ए' की प्राप्ति होकर क्रम से पाच रूप तुसुन, तुसेनु, तुसेनु , स्वेहनु, खीर तुक्केनु सिद्ध हो जात हैं।

छट्टे त्रीर सातवें रूपों में सूत्र मख्या रे १०४ के विधान से उपरोक्त पांचवें प्राप्ताम में स्थित 'छन' अश के स्थान पर कम से तथा वैंकल्पिक रूप से 'म्ह' त्रीर 'उम त्र्यरा की प्राप्ति हाने से 'तुम्द श्रीर तुप्त,' श्रम रूपों की प्राप्ति एव रोप सावनिका की भाष्त्र च उरोक्त सूत्र मख्या रे-'४ तथा ४ ४४ न से हाकर छट्टा तथा सर्तिवा रूप तुम्हेलु और तुष्होलु मी सिद्ध हो जाते हैं।

श्राठवें रूप से लगाकर तेरहवें रूप तक में सूत्र सख्या ३ १०३ की दृत्ति से पूर्वीक सातों श्रम रूपों में ियत श्रम्य रूप 'श्र के स्थान पर सूत्र सख्या ३ १४ से प्राप्तस्य 'ए' की निषेव स्थित, एवं यया प्राप्त श्रम रूपों में हो सूत्र सख्या ४ ४४८ से सप्तमी के बहुवचनार्थ में 'तु' प्रत्यय का प्राप्ति होकर श्राठवें रूप से तेरहवें रूप तक की श्रयीत 'तुषद्ध, तुमद्ध, तुह्दु, तुव्मद्ध, तुम्हु, श्रोर तुज्झ्तु' रूपों की मिद्ध हो जाती है।

शप चौरहनें रूप से लगाकर मोलहवें रूग में सूत्र सख्या वे १०वे की पृत्ति से पूर्वीत प्राप्ताग 'वुष्म, तुम्ह और तुक्म में रिथत श्रन्य स्वर 'श्र' के स्थान पर 'श्रा' की प्राप्ति, यों प्राप्तांग श्राकारान्त रूपों में मृत्र मन्द्रा ४ ४४= स मदनमी विभक्ति के बहुवचनार्थ में सु प्रत्येश को समाप्ति होकर चौन्ह्यां पन्द्रह्वा और सोनहवा रूप 'तुक्तासु 'बुम्हासु ओर तुक्तासु' भी सिद्ध हो जाते दें। दे-१०वे ॥

व्मो म्ह-इम्ही वा ॥ ३-१०४ ॥

युष्मदादेशेषु यो द्विरुक्तो भस्तस्य म्ह ज्ञाहत्येनाबादेशी वा भवतः ॥ पचे म एवास्ते । वर्षेव चोदाहृतम् ॥

अर्थ — उपरोक्त सूत्र संस्था २ ६ १ २ ६३ २ ६४, २ ६६, २ ६०, २ १०० और २ १०३ में ऐना कथन कथा गया है। क सस्क्रत सर्वताम शाद 'युष्मद्' के स्थान पर प्राक्तन में पिकलियक रूप से (युष्मद्' के स्थान पर प्राक्तन में पिकलियक रूप से (युष्मद्' के स्थान पर प्राक्तन में पिकलियक रूप से (युष्मद्' के स्थान पर प्राक्तन में पिकलियक रूप की प्राप्त द्वान क्यों की राम के स्थान पर 'युष्म' के स्थान पर वैकलियक रूप से पद प्रमान के स्थान पर 'युष्म' क्यों प्राप्त द्वान से प्रमान के स्थान पर 'युष्म' क्यों प्राप्त के स्थान पर 'युष्म' क्यों प्राप्त के स्थान पर 'युष्म' क्यों से प्राप्त के स्थान पर स्था वैकलियक रूप से मानित जानना चाहिये। वैकलियक पण का सद्भाव होने में प्राप्त से द्वान पर 'युष्म' के स्थान पर 'युष्म' का स्थान से स्थान पर 'युष्म' का स्थान पर 'युष्म' के स्थान पर 'युष्म' का स्थान स्थान से स्थान पर 'युष्म' के स्थान पर 'युष्म' का स्थान स्थान से स्थान पर 'युष्म' के स्थान पर 'युष्म' का स्थान स्था

अस्मदो स्मि अस्मि अस्हि हं अहं अह्यं सिना।। ३-१७४॥

श्रस्मदः सिना यह एते पढादेशा सवन्ति ॥ श्रज्ज मिस हासिया मापि तेण ॥ उस्न न श्रम्मि कुरिया। यम्डि करेपि । जेण ह विद्वा । कि पम्हुहम्मि श्रहं । श्रद्धय क्रयपणानः

अर्थ — सस्कृत मर्यताम शहर अस्मद्ं के प्रथमा विभिन्नत के ण्कवचन से संदुन्त प्रप्राप्त प्रत्य 'मि की मयानना होन पर प्राप्त रूप 'श्रहम्' कर्गान पर प्राक्त में (प्रत्यव साहेत मून गा कर्यान पर) कम से (तथा नैकिटियक रूप से) छह रूपा का आदेश प्राप्ति हुपा करता है। वे बाहि प्राप्त छह रूप दम प्रकार हैं — (अस्म मि) व्यहम् = 'मि, आहेन अहित ह, आह पीर अद्य पर्यत् में। इन आदेश प्राप्त छह रूप के वनाहरण कम में इन प्रकार हैं — प्रय प्रहम् हासिता है विशे तेन=अज्ञाम्म हासिआ मामि तण अर्थात हे मिल शात में उनसे ह्याई गई यान उनने भाष प्रवेत साथ। यहां पर 'अहम्' के प्राक्त रूपान्तर में 'मिन' का प्रयाग हिया गया है। यह प्रयोग प्रेरणापं भाय रूप है। उनमा न अहम् क्रिया अर्थत उठ वैठा । (यान अनुतर साथ रूपान अर्थन आप सामि सत करो, क्योंकि) में (वुन्हारे पर) क्रोजिन (ग्रह्मवाली) नहीं हु। वर्ष पर 'अहम् रूपान पर प्राप्तृत म 'अस्म रूपा कराया गया है।

श्रहम् करोमि = श्रम्ड् करेमि = मैं बरता हूँ श्रथवा में करती हूँ।

यन श्रहम बृद्धा=जेण हं विद्धा=तिम (कारण) से मैं बृद्ध हूँ।

(क्म बमुटोडिस्स (यम्ष्ट ख्रांस) ख्रह्म् = किं वन्हुटुरेम् श्रह ख्र्यीन् क्या मं मूला हुश्रा है ^{हार} क्या में मुल गर्या हूं।

ं श्रहम् छत प्रणाम = श्रह्यं कय प्ययामी श्रधीत में छत-न्याम (याने कर लिया है प्रणाम विमने ऐसा) हूँ। यों चवरोक्त छह उन्हर्स्यों म संस्कृतीय रूर 'अप्मू (= में)' के श्रादेश प्राप्त छह प्राष्ट्रतीय रूपों का विभूतीन कराया गया है।

'अउन' चहवय स्व की मिढि सूत्र-मख्या १-२३ म की गई है ।

अहम्, संस्कृत प्रथमा एकवयनान्त जिनिगात्मक सर्वनाम रूप है। इसका श्रांहन रूप 'नित्र' है। इसमे सूक्ष-मख्या ३ १०५ से 'छहप' के स्थान पर 'नित्र' चादेश पारित हो सर 'नित्र' रूप मिछ् रा जाना है।

'हासिता' सरकत प्रेरणार्थक नक्षिन विशेषणात्मक हव है। - उत्तर हामित्रा हाता है।

इनमें सुत्र सख्या ३ १४२ क्योर ३ १४३ स मूल सरकृत घातु के समान हीं प्राकृतीय हलन्त धातु 'हस्' मे स्थित शादि 'श्र' को प्रेरणाथक श्रवस्था हाने से श्रा की प्राप्ति, ४-२३६ से प्रत्य हल प्रेरणार्थक धातु हास' में विकरण प्रत्यय क्य' की प्राप्त, , १४६ स प्राप्त बिकरण प्रत्यय 'श्र' क स्थान पर आगे क' धायक प्रत्यय का सद्भाव होने स इ की प्राप्ति ४ ४४- से प्राप्ताग प्रेरणार्थक रूप 'हासि' में सरक्रत कसान ही शकृत म भी भूत कुर्न्त वाचक 'क्त' प्रत्यय स्चक 'त' को प्राप्ति, १ १०० से प्राप्त प्रत्यय 'त' में स्थित हतन्त 'तृ' का लोप और ३३२ एव २४ क निर्दश में प्राप्त रूप 'क्षांसिख्य' को पहिंतगस्य से स्त्रातिगत्व क निर्माण हेतु स्त्रातिंग सुचक 'स्त्रा' प्रत्यय की प्राप्ति एव १-४ से पूव प्राप्त 'होमिन्न' में प्राप्त · स्त्रीलिंग अर्थक 'खा' प्रत्यय की सन्धि होकर हाासेआ रूप मिद्ध हो जाता है।

मामि' अव्यय की सिद्धि सब-सरचा २१९५ भ की गई है।

'तेण' सर्वनाम रूप की सिद्धि मत्र मत्या १ ३३ में की गई है।

उन्नम सम्कत श्राज्ञार्थक क्रियापर का रूप है। इपना प्राकृत रूप भी उन्नम ही होता है। इसमें ्सूर सख्या ४ २३६ म मूल प्राकृत हलन्त धातु 'उन्नम्' में विकरण प्रस्यय 'श्र' की प्राप्ति श्रीर ३-१०४ से श्राज्ञार्थक लकार में द्वितीय पुरुष के एक बचन में 'लुक' रूप श्रार्थात प्राप्तव्य प्रत्यय की लोपापस्था प्राप्त , होकर 'उन्नम कियापद की मिद्धि हो जाती है।

'न' अध्यय रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ १ में की गई है।

1

'अहं में' सरहत प्रथमा एक बचनान्त त्रिनिगात्मक मर्बनाम रूप हैं। इनका प्राकृत रूप 'खिन्म' होता है। इपमें मर्ज-संख्या ३-१०५ से 'अहम' के स्थान पर 'श्रम्मि' रूप की श्रादेश पारित हो कर 'अस्मि' रूप सिद्ध हो जाता है।

कुपिता मस्कृत तिद्धित विशेषणात्मक स्त्रीलिंग रूप है। इम का प्राकृत रूप 'कुविन्ना' होता है। इमम सूत्र सख्या १-२३१ से मृत सस्छत घाषु 'कुप' में स्थित 'प' के स्थान पर 'व' की प्राप्ति; ४ १३६ सी प्राप्त हतन्त धातु 'हुन्' में विकरण प्रत्यय 'म्र' की प्राप्ति, ३१४६ से पाप्त विकरण प्रत्यय 'म्र' के 'श्रामे भूत कुरन्त वाचक 'क़≔त' प्रत्यय का सद्भाव होने से' 'इ' की प्राप्ति, ४ ४४⊏ से भूत कुरन्त अर्थ में सस्टत के समान ही प्राप्टत में भी 'क=त' प्रस्यय की प्राप्ति, १ १०७ से प्राप्त प्रत्यय 'त' में से 'हनन्त त्र' का लोप, ह-३२ एव २ ४ के निर्देश से प्राप्त रूप 'क़विका' को पुल्लिगन से स्त्रीलिंगस्व के निर्माण-हेतु भीतिंग सूचक 'खा' प्रत्यय की प्राप्ति और १५ में पूर्व प्राप्त 'कुविक' में प्राप्त श्रीलिंग झर्यक 'झा' मत्यय की सिंघ हीकर कुषिशा रूप निद्ध ही जाता है।

'अहम' संख्यत प्रथमाण्क वचनान्त त्रिनियास्मक मजनाम रूप है। इमका प्रापृत रूप 'चिन्हि' होता है। इसमें सूत्र सस्या ३ १०५ से 'छह्म' क स्थान पर 'श्रम्हि' रूप की आदेश प्राप्ति हो हर 'अन्हिं' रूप सिद्ध ही जाता है।

'करोमि' कियापट रू। की मिद्धि सूत्र सख्या १ २९ में की गई है।

'जेण' मर्वनाम रूप की सिद्धि स्त्र-सख्या १-६६ में की गई है।

'अहम्' मस्ट्रत प्रथमा एक वचनान्त त्रिलिगात्मक मर्वनाम रूप है। इनका प्राफ्त रूप है। हा हैं। इसम सूत्र सरवा द-१८५ से 'करम' क स्थान पर 'ह कप की आदेश प्राप्ति होकर 'ह' रूप हिस्स जाता है ।

वृद्धा सन्द्रत विशेषण कव है। इसका प्राकृत रूप विद्धा होता है। इसमे सूत्र संख्या ११ व स 'भर' के स्थान पर 'इ' की प्राप्ति, ३-३२ एव २ ४ के निर्देश से प्राप्त रूप 'गृह से विह' में पुल्लिए र रत्रीलिंगत्व व निर्माण हेतु रत्रीलिंग सूचक 'श्रा' अथय की प्राप्ति, ४ ४४८ से प्राप्तांग 'विद्वा' में भाग रान्त स्त्रीलिंग रूप में सस्कृत प्रथमा विमक्ति के एक वचन में संस्कृत के समान ही प्राकृत में मा प्रायन प्रत्यय 'सि=स' की प्राप्ति और १-११ से प्राप्त प्रत्यय 'स्' हलन्त होने से इस 'स' प्रत्यय का साप शेवा ध्यमा एक वचनार्थक स्त्रीलिंग रूप विद्या' सिंह हो जाता है ।

'र्कि' श्रय्यय रूप की मिद्धि सूत्र सख्या १२। में की गई है।

प्रमुख्ट सम्हत विशेषणात्मक रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप प्रदुट्ट होता है। इसमें मूर्ग ^{संदर्} २ ७६ से 'र' का लोप, ४ २४८ से 'म्' को 'म्ह' रूप से निपात प्राप्ति अर्थातृ नियम का अमाय होने है द्याप स्थिति की प्राप्ति, रे-१३१ से 'ऋ' के स्थान पर 'ठ' की प्राप्ति, २३४ से 'टु' के स्थान पर 'ठे' ई मास्ति, २ मर्ट से प्रान्त 'ठ' वो द्वित्व 'ठठ' को प्राप्ति, २-६० से प्रान्त पूर्व 'ठ' के स्थान पर 'ट' ही प्राप्ति स्त्रीर १-११ स श्रन्त्य विसर्ग क्रव हलात न्यञ्जन का लीप होकर प्रमुष्ट क्रव सिद्ध ही जाता है।

अस्मि सम्भुत कियापर रूप है। इसका शकुत रूप 'म्मि' होता है। इसमें सूत्र संख्या है। से मूल माकृत धातु 'श्रम्' म वर्तमान काल के कृतीय पुरुष के एक्यचनार्य में मन्द्रतीय पामन्य प्र 'मि' की सरोजना होग पर प्राप्त संस्कृतीय रूप 'ऋक्ति' के त्यान पर प्राकृत में 'स्टि=स्म ह्प ह छादेश प्राप्ति होकर 'स्मि' रूप सिद्ध हो जाता है।

'अह' मर्षनाम रूप की सिद्धि सूत्र सत्या ? ४० में की गई है।

'अह्य' सवनाम रूप की सिद्ध सूत्र संख्या ? १९९ में की गई हैं।

कृत प्रणाम मस्टत विशेषणात्मक रूप हैं। इसकी प्रापुत रूप शय प्रणामी हीता है। इस मृत्र मंत्या ११२६ से 'ऋ के स्थान पर 'श्च' की प्राप्ति, १-१७७ से 'ग' का लोप, ११८० से लोप हैं 'तु' के परचान रोप रहे हुए 'ख' के स्थान पर 'ख' की प्राप्ति, २ ४६ में 'रू' का लोर, ६-८६ में सोप र र्' में परचन जीप रहे हुए 'व' का द्वित्व पव' की माति और ३ न संप्रथमा विमक्ति के मृहववत है प्राप्तांत 'क्व प्यक्षाम म व्यक्षारान्त पुल्तिंग में संस्कृतीय प्राप्तस्य प्रत्यय मि≔स' के स्थान पर प्राप्^{त है} 'हो = श्रो प्रायय की मप्राप्ति होकर कय-व्यणाओं रूप सिंह हो जाना है। रे-१०४ !!,

अम्ह अम्हे अम्हो मो वयं भे जसा ॥ ३-१०६ ॥

श्रम्मदो जमा सह एते पढादेशा गानित ॥ श्रम्ह श्रम्हे श्रम्हो मो वय भे मणामो ॥

अर्थ — सस्कृत सर्वनाम शस्द 'ऋरमद्' के प्रथमा विभक्ति के बहुबचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्र-यय जस' की मयोजना होने पर 'मूल शुष्ट और प्रस्वय दोनों के स्थान पर आदेश गान संस्कृत रूप 'धयम' के स्थान पर प्राफुन में हम से छह रूपों की आदेश प्राप्ति हुचा करती है। वे छह रूप कम से इस एकार हैं —(वयम्=) अरह, अरहे, अरहो, मो, वय और में। उदाहरण इस प्रकार हैं —वयम् भणाम = ऋरह ऋरह करहो, मो वय में भणामी अर्थातृ हम अध्ययन करते हैंं।

चयम्' सस्कृत प्रथमा चहुवचनान्त त्रिलिंगात्मक समनाम रूप है । इसके प्राकृत रूप श्रम्त, अर्थे अर्थते, मो, वय श्रीर भे हात है। इनमें सृत्र सख्या १-१०६ से मूल संस्कृत सर्वनाम शब्द 'श्रस्मदू' ए प्रथमा बहुवचन में सरकृतीय शावच्य प्रत्य 'जम् की सप्राप्ति होने पर प्राप्त रूप 'वयम्' के स्थान पर प्राप्त में उक्त छह रूपों की इस स ख्यादेश श्रीर होकर बस से छह रूप 'अम्ह, अम्हे, अम्हो, मो, प्रय श्रीर में' सिद्ध हो जाते हैं।

भणाम सस्टूल कियापर रूप है। इसका प्राफ्टल रूप मणामी होता है। इसमें सूत्र-स<या ४-२३६ में प्राप्टल हलन्तु धातु भण' में विकरण प्रस्थय 'श्व' की प्राप्ति, ३ १४५ से प्राप्त विकरण प्रस्थय 'श्व' के स्थान पर 'श्वा' थी प्रस्ति श्वीर ३-१४४ से वर्तमान काल के स्तीय पुरुष के बहुबचन में सस्कृतीय प्राप्तस्य प्रस्थय 'म' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'मो' प्रस्थय की प्राप्ति होकर 'भणामी' रूप सिद्ध होजाता है। ३ १०६॥

यो ए मि अम्मि अम्ह सम्ह सं ससं सिमं अह असा ॥ ३-१०७ ॥

प्यस्मदोमा मह एते दशादेशा भगन्ति ॥ यो यां मि व्यम्मि प्रम्ह मम्ह म मुमं मिम प्रहंपच्छे ॥

अर्थ — संग्रुत सर्वनाम शहर श्रास्त्र के द्वितीया विश्वक्ति के एकवचन में सस्त्रुतीय प्राप्तस्व भयप 'श्रम' की मयोजना होने पर 'मृल शस्त्र श्रोर प्रत्यय' दोनों के स्थाम पर श्रादेश-प्राप्त संस्कृत रूप 'माम्' श्रथवा मा के स्थान पर प्राप्त में कम मे इस रूपों की खादेश प्राप्ति हुआ करती हैं। पे दम रूप कम से इन प्रकार हें — (माम्=) जे, ज मि, श्रास्त्र, सम्ह, मन्ह, म, मम मिम, और श्रह। उदाहरख इस प्रस्त हैं — माम् प्रस्त — जो, ज, मि, श्रास्त्र, सम्ह, म, ममं, मिम श्राहं पेस्ट्र श्रायोग ग्रुके देवो।

माम् अथवा मा सम्हत द्वितीया एकवचनान्त त्रिलिंगात्मक सर्वनाम रूप है। इसके प्राप्तत रूप प्णे. ए. मि, श्राप्ति बन्द, मन्द, मं, मम, मिमं, और श्रह' होते हैं। इसमें सूत्र-सख्या ३ १०० से मूख सम्हत मर्वनाम शब्द 'श्रस्मद्र' के द्वितीया विभक्ति के एकवचन में संम्हतीय प्राप्तव्य प्रसम् सप्राप्ति होने पर प्राप्त रूप 'माम् श्रयया मा के स्थान पर प्राक्रत में उक्त दश रूपों को क्यस क्ष्य प्राप्ति हो कर क्रम से ये टशंरूप — ण, ण, मि, अम्मि, अम्ह, सम्द्र, स, सम, सिम दौर ध् सिद्ध हो जात हैं।

पेच्छ कियापद रूप की मिद्धि सूत्र मरया *१-२३* में की गई है। ३ १००॥

अम्हे अम्हो अम्ह से शसा ॥ ३-१०=॥

श्रह्मद्ः शसा सह एते चत्वार श्रादेशा मनन्ति ॥ श्रम्हे श्रम्हो श्रम्ह गं पेंछ ॥

अर्थ — संस्कृत सवााम शन्द 'ऋसमृद्' के द्वितीया विभक्ति क सहवयन में संश्रुताय प्राप्त भत्यय 'शस् = स्त्रस्' की सयोजना होने पर 'मूल शन्द स्त्रीर भत्यय' दोनों क स्थान पर स्त्रादेश प्राप्त संग्र रूप' व्यस्मान अथवा न'केस्थान पर प्राकृत में त्रम से चार रूपों की आईरा प्रति हुआ इस्पर्ट वे आदेश-प्राप्त चार रूप कम से इस प्रकार है — अस्मान् अथवान अस्हे, अन्हो अन्ह और ह उदाहरण इस प्रकार हं - अस्मान अथवा न पश्य = अन्हे, अन्हो, अन्ह में पेक्त्र असीन हमें क्रक हम को देखो।

अस्मान् श्रथवा न सस्कृत द्वितीया बहुवचनान्त त्रिलिंगात्मक के मर्बनाम रूप है। इसक शर् रूप अन्हें, अन्हों, अन्ह और से होत हैं। इनमें सूत्र तख्या ३-१०८ स सस्कृत मृत मर्वनाम गर्म हैं । 'खस्मद्' में द्वितीया विभक्ति के बहुबचन में संस्कृतीय प्राप्तब्य प्रस्वय 'शम=चम' की संवातना स्र पर प्राप्त रूप 'श्रस्मान श्रथवान' के स्थान पर प्राष्ट्रत म उक्त चार रूपों की कम से आहेरा प्राप्त होकर कम से चारों रूप 'अम्हें, अम्हों, अम्ह क्रीर णे' मिद्र हो जात हैं.।

'पेच्छ' ियापद रूप की मिब्रि सूत्र मख्या १-२३ में की गई है। ३१० = ॥

मि मे मम ममए ममाइ मइ मए मयाइ से टा ॥२–१०६ ॥

🕝 । श्रस्मद्प्टा सह एते नवादेशा भवन्ति ॥ मि मे मम ममए ममाइ मइ मए स्वार रो कथ ॥

अर्थ —सम्द्रत सर्वनाम शन्द 'खस्मद्' क तृतीया जिमक्ति के एकवान में मेस्ट्रोव प्राप्तव भरतव 'टा = था' की संवोजना होने पर मृत शन्द और प्रत्यय 'दोनों के स्वान पर बादरा आप महत्त रूप 'मया' के स्थान पर प्राकृत म कम से नव रूपां की आदेश प्राप्ति हुआ करती है। वे श्राश्राप्राप्त नवें रूप कम से इस प्रकार हैं -- (मया=) मि, मे, मर्म, ममए, ममाइ, मह, मप, मयाइ और रो क्वाइ(ह इस प्रकार है — मया कृतम् = मि, मे, मम, ममप, ममाइ, मइ, मय, मयाइ, गें, कर्य = हाया। ग्रन्त ह ष्मयवा मेरे से किया हुआ है।

क प्रियादय हिन्दी ज्याख्या सहित क्ष [१६३]

'' 'भया' सस्कत तुर्ताया एक उचनान्त त्रिलिगात्मक मर्बनाम रूप है। इसक प्राकृत रूप 'मि, में, भम, ममए, ममाइ, मइ, मण, मयाइ श्रीर से होते हैं। इनमें सूत्र सख्या ३-१०६ से मूल मण्कत सर्वनाम शुश्च श्वासद्' मे तृतीया विभक्ति के प्रवचन में साकृत्य प्राप्तन्य प्रत्यय टा = श्रा' का संशक्ति होने पर प्राप्त रूप 'मया' वे स्थान पर प्राकृत में उक्त नव रूपों की क्रम म श्राव्या प्राप्ति होकर ये नत्र ही रूप 'मि, से, मम, ममए, ममाइ मइ, मए, मयाइ श्रीर से 'सिद्ध हो जाने हैं।

क्य कियापर रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ १२६ में भी गई है। -१०६ ॥

अम्हेहि अम्हाहि अम्ह अम्हे से भिसा॥ ३-११०॥

श्रहमदो भिमा सह एते पञ्चादेशा भानित ॥ श्रम्हेहि श्रम्हाहि श्रम्ह श्रम्हे से क्रय ॥

अथः — सस्कृत सर्वनाम शब्द 'श्रस्मब्' के वृतीया विभक्ति क बहुत्रचन म सस्कृतीय प्राप्तब्य 'निस्' की सयोजना होने पर 'मूल शब्द और प्रत्यय दोर्नों के स्थान पर आदेश प्राप्त सस्कृत रूप-, 'अस्मिभ 'के स्थान पर प्राकृत में क्रम से पाँच रूपों की आदेश प्राप्ति हुआ करता है। वे आदेश प्राप्त पाँच रूप क्रम से इस प्रकार हैं — (अस्माभ =) अन्हेहि, अन्हाहि, अन्ह, अन्हे और ए। बदाहरसा इस प्रकार हैं — (अस्माभ =) अन्हेहि, अन्हाहि, अन्हाहि, अन्हाहि, अन्हाहि, अन्हाहि, अन्हाहि, अन्हाहि, अन्हाहि, स्वाप्त हम सभी से अथवा हमान सिंपा गया है।

अस्मा। अं सस्कृत तृतीया बहु वचनाम्त त्रिलिंगासम्म सर्वनाम रूप है। इसक प्राकृत रूप श्रम्होहि, श्रम्हाहि, श्रम्ह श्रम्हें श्रीर 'णे' होते हैं। इनमें सूत्र सरया ३११० सं सास्तृत सर्वनाम राष्ट्र श्रास्मक् में तृतीया विभक्ति के बहुवचन में सास्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'भिष्त' की सयोजना होने पर श्राप्त रूप श्रमामि 'के स्थान पर प्राष्ट्रत में चक्त पाँचा रूपों की क्रम से श्रादेश प्राप्ति होकर क्षम से ये पाँचों रूप 'अस्होहि, अम्हाहि, अम्ह, अम्हे श्रीर णे' मिद्ध हो जाते हैं।

'क्य' कियापर रूप की मिद्धि सुत्र सख्या १-१२६ में की गई है। ३-११०,

मइ-मम-मह-मज्भा डसी ॥ ३-१११ ॥

, अस्मदो ङर्मा पञ्चभ्येकाचने परत एते चतार आदंशा भानित । डमेस्तु यथा भाममेव ॥ मइत्तो-ममत्तो- महत्तो मज्भत्तो आगश्रो ॥ मत्तो इति तु मत्त इत्यस्य ॥ एत दो-दू-रहि-हिन्तो जुदाप्युदाहार्यम् ॥

अर्थ —मस्छत सर्वनाम 'त्रसमर्' व प्राष्ट्रन रूपान्तर मे पचमी विभक्ति के एक धपन में मस्ट्रनीय भाष्तस्य प्रत्यय 'दिसि=श्रम्' क स्थान पर सत्र मस्या रे-⊏ के श्रतुमार प्राकृत में प्रास्तव्य प्रत्यय 'सो, दो=ब्यो, दु=ड, हि, हिन्तो ब्योर लुक' का कम से प्राप्ति होने पर 'प्रश्मद्' के स्थान पर प्राप्त में हर ह चार ब्या रूपों की प्राप्ति होती है। वे चारो ब्या रूप कम से इस प्रकार है — (ब्रस्मद्र=) मह, मह, क ब्योर मक्क। इन प्राप्तांग चारों रूपों में से प्रश्यक रूप में पचर्मा विमास के एक वचनार्थ में काम 'क दो=ब्यो, दु=ड, हि, हिन्तो ब्योर लुक' प्रत्ययों की प्राप्ति होने से वश्चमी एक वचनार्थक रूपों का हत्व चौकीन होता हैं। जो कि वम से इस प्रकार हैं —

'मह' के रूप —(धरमद् के मन खयना मद् =) महत्तो, मईखो, मईव भईहि, महिस्स प्रें मई। (खर्यात् गुक्त से)

'मम' के रूप—(म —मत् व्यथवो मद्=) ममनो, ममात्रो, ममात्र, ममाहि मनाहि स्वाहि स्व

'मह' के रूप—(स —मत् अथवा मद् =) महत्तो, महाओ, महाउ, महाहि, महाहिना कैं। महा। (अर्थात् मुक्त से)

मज्क' के स्व-(म-भन श्रथवा मर्=) मज्यत्ती, मज्याश्री, मज्याह, मञ्जाह, मञ्जाह

यृत्ति में प्रदर्शित उगहरण इस प्रकार है -

मत् (मट्) व्यागत =मइत्तो ममत्तो महत्ता मञ्जूतो व्यागश्रो व्यथीत मेर से—(मुक्त में) शार्ष हुव्या हैं ।

सार्क्षत म 'मत्त' विशेषणां साक एक शब्द हैं, जिमवा खर्ब होता है—मस्त, पागर्ल खवना नरि क्षिया हुखा, इम शान्द का प्राव्यत रूपान्तर भी 'मत्त' ही होता है, तत्तुनार व्यमा विश्वीत क प्रश्वित में पुल्तिग में सूत्र मत्त्वा ६२ के खमुनार इमका रूप 'मत्तो' वनता है, इस्तिबे प्रयक्तर वृत्ति में लिये हैं कि सार्क्षत म प्रयम्नी विश्वित के पक्ष्मवान में 'खरमङ् के प्राप्त स्व 'मन् को प्राप्त खमार्थ हा बर्ग्या में मानकर 'तो' वत्यय लगाकर 'मत्तो' रूप बनाने की भूल नहीं कर देना चाहिय । सक्षित यह प्राप्त हैं स्वना चाहिये कि प्राकृतीय प्राप्त रूप 'मत्तो' की प्राप्ति खगगरूप सत्त्व' से प्राप्त हुई हैं।

'मन् स्थया मह्' संस्तृत व्रम्थमी एकष्यनान्त विकिशात्मक सर्धनाम रूप है। इसके ब्राष्ट्रव दें। 'महत्तो, समसी, महत्तो और सममत्तो होते हैं। इतमें सूत्र मख्वा दे १११ स मृत् सम्ब्र महत्त सर्वताय रहा। 'स्थरमह्' के स्वान पर प्रम्थमी के वश्यपन स मास्तव्य प्रत्यों की संवापना होने पर माइत मृत्रक खारी स्वा रूपों की प्रम से प्राप्ति एवं 3-द स भारतीय चारी में पर्याग विमक्ति के वश्यपन संसार अ प्राप्तव्य प्रत्ये प सन्द्यम' के स्वान पर साकृत में 'सो' सादि शत्यवा का क्षम स प्राप्ति हो इर बक्त वारी रूप सहसी, समसी, महत्तो सीर सक्कृता 'क्षम से विक हो जात है। 'आगओ रूप की सिद्धि सूत्र मख्या १-२०९ में की गई है।

कत्त साहत विशेषणात्मक रूप है। इसका शाहत रूप मत्तो होता है। इसमें सूत्र सस्या ३-० से ाधमा विभक्ति क एकवचन में खकारान्त पुल्लिंग में साकृतीय प्राप्तब्य प्रत्यम 'सि' के ध्यान पर शाकृत व 'डो≔खो' प्रत्यव की प्राप्ति होवर प्राक्त रूप कक्ती सिद्ध हो जाता है। ३-१९१ ॥

ममाम्ही भ्यसि ॥ ३-११२ ॥

श्रस्मदो भ्यस्ति परतो मम श्रम्ह इत्वादेशौ भगतः । भ्यसस्तु यथा प्राप्तम् ॥ ममत्तो । प्रम्हत्तो । ममाहिन्तो । श्रम्हाहिन्तों । ममासुन्तो । श्रम्हासुन्तो । ममेसुन्तो । श्रम्हेसुन्तो ॥

अर्थ — सरहत मर्बनाम शब्द 'क्रम्मद' के प्राकृत रूपान्तर में पक्षमी विभक्ति के बहुवचन में मरहतीय प्राम्च्य प्रत्यय 'ज्यस' के स्थान पर शक्षतीय प्राम्च्य प्रत्यय ची, दो, दु हि, हिन्दा कीर कुन्ती' प्राप्त होन पर मृत्त सरकृत मर्वनाम शब्द 'क्ष्म्मद' के स्थान पर प्राकृत में क्ष्म से दो खाग रूपों की खादेश प्राप्त हुआ करती है। वे णामच्य खाग रूप इस प्रकार हैं — 'मम खोर खम्ह'। इस प्रकार खादरा प्राप्त इन दोनों खनों से से प्रत्येक खाग म पद्धमी विभक्ति के बहुवचन में सूत्र सरया ३ ६ के इनुमार हह छह प्रत्यय हम म सयोजित होते हैं, वो 'क्ष्मस्द' क प्रद्धमी बहुज्ञचन में सम्कृतीय प्राप्त प्रस्तान' क प्राकृत रूपान्तर में चारह रूप होते हैं, वो कि क्ष्म से इस प्रकार हैं —

पस्कृत अस्मत् = (सम के रूप =) समत्तो, समाश्रो, समात्र, समाहि, समाहिन्तो श्रोर समानुन्तो । (श्रम्ह क रूप) = श्रम्हन्तो, श्रम्हाश्रो, अम्हाश्र, अम्हाहि, अम्हाहिन्तो श्रोर अम्हासुन्तो ।

सूत्र सरया ३ १५ से इवरोक्त प्राप्तांत 'भम और 'खम्ह' में स्थित अन्त्य स्वर 'ख' के स्वान पर 'हे' ने प्राप्ति कैकल्विक रूद से 'हि, हिन्तों और सुन्तो' प्रत्यय प्राप्त होने पर हुआ करती है, तद्युग्तर प्राप्त छात रूद के तीन तान रूव और होते हैं, जो कि इस प्रकार हैं —मम के रूव = मगेहि, मगेहिन्तो और मगेबुन्तो। अहह के त्व = अम्हीहित अम्हीहिन्तों, और अम्हेबुन्तो। यों उपरोक्त वारह रूवों में देन स्वर्त क्वें के श्रीर जाड़ने से पद्धार्ग बहुवचन म सस्कृत रूव 'खस्तत्' के प्राकृत में हुन अठारह स्व होत हैं। प्रयक्तार न पृक्ति में अस्मत्' के नेयल आठ प्राकृत रूव ही लिसे हैं, अत्वय इन आठों स्वों धामितिका निस्न प्रकार में हैं —

अस्मत् सःकृत वड्यमी बहुत्यनान्त त्रिनिगात्मक मर्यनाम रूप है। इसके ब्राष्ट्रत छाट रूप इस भवार हें -ममसो, खन्हसी, ममाहित्तो, खन्हाहित्ती, ममामुत्ती, खन्हासुन्ती, ममेमुन्ती खीर खन्हेसु तो। वनमें सूत्र संत्या १११०-से पचनी त्रिभक्ति के बहुवयन में संस्कृतीय सर्यनाम शस्त्र 'छस्मद्' के स्थान पर बाहृत मनो खन रूप 'एम खीर खन्ह' की प्रास्ति, त्रुत्यचान् तीसरे रूप से धारम्य कर क छट्टे

में मइ मम मह महं मज्भ मज्भ अम्ह अम्ह उसा ॥ ३-११३॥

श्रस्मदी उसा पञ्चेक वचनेन सहितस्य एते नवादेशा भवन्ति ॥ म मह भग मह हो मज्म मज्भ सम्ह स्रम्ह धण ॥

अर्थ — संस्कृत सर्थनाम रान्द 'खस्मद्' क प्राकृत रूपान्तर मे प्रश्ने विमिक्त के गळवषन म बहु तीय प्राप्तक्य प्रथ्य 'इस्=श्रम्' के प्राकृतिय स्थानीय प्रस्थ 'स्म' प्राप्त होने पर 'मृत्त रास्द श्रीर श्रयः दोनों के ही आदेश प्राप्त संस्कृत रूप समः अथवा 'मे के स्थान पर प्राकृत में पच्छी एकद्यनाथ में वर रूपों की कम से प्राप्तरा प्राप्ति हुआ करती हैं। जा कि हम प्रकार हैं — सम अथवा म=से, मह, सम, सम, सम, सम, सम, सम, सम, सम्प्त, सम्बन्ध, सक्ता, अक्ता, अक्त और अम्ह अर्थान सेरा। जनाहरण — सम्बन्धना मे धनम्नम् मद सम सम सम्बन्धन सक्ता स्थान स्था

सम श्रमवा में संस्कृत पर्छी एकवचनान्त (श्रिक्षिमारमक) सर्वनाम रूप है। इसक प्राह्त कर हो होत है। से, यह, सम, सह, सह, सग्क सग्क श्रम्ह श्रीर श्रम्ह। हतमें सूत्र सख्या ३ ११३ स मून संहर श्रम्द 'श्रमत्य' व पष्छा विभक्ति क एकचचन म प्राप्त रूप सम श्रथमा से के स्थान पर बाकुन से उसोन नव हो रूपों भी व्याद्य प्राप्ति होकर कम से ये नव हा रूप 'से, सह, सम, सह, सह, सन्ता, स्प्ता, स्पता, स्पता,

'भण' रूप की सिद्धि सूत्र सम्या न ५० में की गई है। ३ ११३ ॥

गे गो मज्भ अम्ह अम्ह अम्हे अम्हो अम्हाण ममाण महाण मज्भाण आमा ॥ ३-११४॥

श्चरमद् श्रामा सहितस्य एते एकादशादेशा भवन्ति ॥ र्रो गा मक्क श्रम्ह क्षम्ह क्षम्ह श्रम्हां श्रम्हां श्रम्हां प्रमारा महारा मक्कारा घर्षे ॥ क्रवा स्पार्ट्ल-स्वीर्ष (१-२७) इत्यतुन्तरे । श्रम्हार्ष । ममार्ष । महार्ष । प्रकार । एव च पत्र्यदश स्पार्थि ॥

अथ -- संस्कृत सर्वनाम शन्द 'श्रामद्' क पष्टो विभक्ति के बहुवचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'स्राम्' की संयोजना होने पर मूल शब्द श्रीर प्रत्यय दानों के स्थान पर स्रादेश प्राप्त सस्कृत रूप 'श्रक्तावम् श्रथवा न के स्थान पर प्राकृत में श्रथांत प्राकृत मृत शब्द श्रीर प्राप्त प्रत्यय 'ण' दोनों के ही स्थान पर कम से ग्यारह रूपों की आदश प्राप्ति हुआ करती है। वे ग्यारह ही रूप इस प्रकार है ---श्चानाकम अथवान = ऐ णो, सज्क, अन्ह, अन्ह अन्ह, अन्हो, अन्होण, समाण, महाण, श्रीर मज्माण । उदाहरण इन प्रकार है - अस्मावम् अथया न धनम् = गोणो मज्म अन्ह अन्ह अन्हे अन्हो-श्रम्हाणं ममारा महारा मज्ञाण धण श्रर्थात हम सभी का (श्रथवा हमारा) धन (है)। सूत्र सरया १ २७ में ऐसा विधान प्रदर्शित किया गया है कि-पष्टा विभावत के बहुवचन में प्राप्तव्य प्राकृतीय प्रत्यय 'ण' के ऊपर अर्थात् अन्त मे वैकल्पिक रूप से अनुस्वार का प्राप्ति हुआ करती हैं, तद्नुसार उपरोक्त ग्यारह रूपों में से आठवें रूप से प्रारम्भ करक ग्यारहतें रूप तक अर्थात इन चार रूपों के अन्त में श्यित एव पष्टा विभिन्ति के बहुवचन के अर्थ में मंभावित प्रत्यय 'गा' पर नेपिल्पक रूप म अनुस्वार की प्राप्ति होती है, जो कि इस प्रकार है - अग्हाण, समाण, सहाण और सन्माण। यों अस्माकम् श्रथवान 'के प्राकृत रूपान्तर में उपरोक्त ग्यारह रूपो म इन चार रूपो को श्रोर सयोजना करने पर माष्ट्रत में पच्ठी विभक्ति के बहुत्वन में दुल प द्रह रूप होत हैं।

अस्माकम् अथवा न संस्कृत पर्धा बहुवचनान्त त्रिलिंगात्मक सवनाम म्दप् है। इसके प्राकृत रूप पन्द्रह होते हैं। ऐ, जो, मज्म, श्रम्ह, श्रम्ह, श्रम्हे श्रम्हो श्रम्हमाख, गमाण, महाण, मज्माख, श्रम्हाण, ममाण महाण और अब्भाण। इतमें स प्रथम ग्यारह रूपा में सूत्र सख्या ३ ११४ से पछी विभक्ति के बहुवचन म मध्रत मूल शब्द 'श्रासद्' में प्राप्तत्र्य पत्यय 'श्राम्' क योग से प्राप्त रूप 'श्रासमक्म् श्रथवा न के स्थान पर उक्त प्रथम ग्यारह रूपो की श्रादेश प्राप्ति होकर 'ण, णो, मज्झ, अम्ट, अम्ह, अम्हे, अम्हो, अम्हाण, समाण, महाण श्रोर सज्झाण इस प्रकार प्रथम ग्यारह रूप मिद्ध हो जाते हैं।

शेष चार रूपों में सूत्र सटया १-२७ से (बारहवें रूप से प्रारम करके पन्द्रहवें रूप तक में) पदी विभक्ति बहुवचन बोधक प्रत्यय 'ण' का मटुभाव होने से इस प्रत्यय रूप 'ण' क अन्त में आगम रूप अनुस्वार की प्राध्ति होकर शेप चार 'अम्ट्राण, ममाण महाण और मज्झाण' भी सिद्ध हो जाते हैं । ३-११४ ॥

मि मइ ममाइ मए मे डिना ॥ ३-११५ ।

श्रम्मदो टिना सहितस्य एते पश्चादेशा भनन्ति ॥ मि मह ममाह मए मे ठिन्नं ॥

अर्थ - मन्हत सर्वनाम शब्द 'श्रस्मदू' के मन्नमी विभक्ति क एकवचन म मन्द्रतीय भाष्त्रस्य भिष्य हि=इ' की सर्याजना होने पर 'मूल राज् श्रीर प्रथय' टोनों के स्थान पर श्रादेश प्राप्त सस्कृत ^{क्रद 'मिय'} के स्थान पर प्राकृत में (पाकृतीय मूल शब्द श्रीर प्राप्तस्य प्राष्ट्रताय शस्यय दोनों क ही स्थान

'मार्च म कृत मत्त्रमां ० रथवनात्त निर्तिगात्मक सर्मनाम रूप है। इनक प्राक्त रूप मिन्न गमाइ. मण और में हात हैं। इसम सूत्र सख्या ३-१९५ से सत्त्रमां विभक्ति के एक्चवन म सहत्तर 'खास्मद्' म मनात्त प्रत्यय 'हि=इ' की मयाजना होन पर प्राप्त रूप 'मिन्स' क स्थान पर इक्त पींगें। क' कम में प्राक्त म खादेश प्राप्ति होकर ये पाँगें रूप 'मिन्स', ममाइ, मण श्रीर में 'मड नाते हैं।

ठिजे रूप की सिद्धि मूत्र मग्द्या है १६ में की गई है। ३ ११५ ॥ 🗥

अम्ह-सम-मह-मङ्भा हो ॥ ३-११६ ॥

अस्मदो हाँ परत पते चरवार ऋादेशा भवन्ति '॥ होस्तु यथा प्राप्तम् ॥ क्रम्। समस्मि सहस्मि सङ्ग्रास्नि ठिश्र ॥

अर्थ — मस्कृत रूर्यनाम राज्य 'श्रस्यह्' क प्राष्ट्रन स्वान्तर में मस्तमी विमित्त क व्यवस्य मास्त्रतीय प्रास्त्रय प्रत्यय 'वि=ह' क प्राष्ट्रतीय ग्यानीय प्रत्यय सूत्र मृत्या १११ से प्रास्त्रय 'गिम' एन को संयोजना होन पर मस्ट्रत शब्द 'श्रम्मद्' क श्यान पर प्राष्ट्रत में बार श्रंग रूपों की खारस वाित हैं। करती हैं एय नरश्य्यान मस्तमी एक्ययानाथ में उन खादेश प्रास्त्र खाम रूपों में प्रायय का संग्रे हुआ करती हैं। उस विधानानुमार 'श्रम्मद् में प्रश्तिय प्रास्त्रय चार खाम रूप दें प्रकार है — शक्त अन्ह, मम मह चीर मनका। उद्दारण इन प्रवार हैं — मिव स्विन्म् नम्बद्धिम ममिव महीन महीन मिवन हैं।

'माय सारहत मध्यमी एश्वचनास्त त्रिलियासक मबीमा साहि । इसवी प्राष्ट्रत स्वाध्यक्ष स्वाध्यक्य स्वाध्यक्ष स्वाध्यक्य स्वाध्यक्ष स्वाध्यक्ष स्वाध्यक्ष स्वाध्यक्ष स्वाध्यक्ष स्वाध्यक्ष स्वाध्य

ाडिम' रूप की मिद्धि नम्प्र मन्या ने १६ म की गई है। ३ १ १६ ॥

मुपि।। ३-११७॥

प्रस्मद: सुपि परे अस्तादय अत्यार् आदेशा भवन्ति ॥ अस्तेसु । ममेसु । महेपु । ,मम्भेम् । एत्य विकल्पमते तु । श्रम्हस् । ममम् । महस् । मज्भस् । श्रम्हस्यात्व मपीच्छत्यन्यः । भ्यम्हासु ॥

गर्थ - संग्रुत सबनाम शब्द 'अम्मद्' के प्राकृत रूपान्तर में सप्तमी विभक्ति के बहुत्रचन में सस्क्राय प्राप्तस्य प्रत्यय सुप=सु के समान ही प्राष्ट्रत में भा प्राप्तव्य प्रत्यय 'सु' की मयोजना होने पर मम्हन शहर 'खरमद्' के स्थाप पर प्राक्षत में चार खग रूर्ण की आदेश प्राप्ति हुआ करती है एव तत्परचान सप्तमी बहुउचनार्थ में उन आदेश प्राप्त चारी जाग रूपों में 'सु' प्रत्यय की सयोजना होती है। णक्त विधानातुसार 'श्रश्मद्' के प्राकृतीय प्राप्तब्य चार ऋगरूप इस प्रकार हैं — प्रश्मद्=ध्रम्ह, सम, सह श्रीर मन्त । इन श्रगहर्पों का प्रत्यय सहित स्थिति इस प्रकार है -श्रामासु = प्रस्देषु, ममेषु, भहेतु श्रीर मःभेषु श्वर्यात हम सभा पर श्रथवा हमारे पर, हम सभी में श्रथवा हमारे में ।

किन्ही किन्हीं की मान्यता है कि मध्तमी बहुव बनार्थ में प्राप्तत्व्य प्रत्यय 'सु' की सवाध्ति होने पर उत्त चारों प्राप्तांगों में शित अन्त्य स्वर 'श्र के स्थान पर 'एँ की प्राप्ति वैकल्पिक रूप से होती हैं। तत्तुमार उक्त आदेश प्राप्त चारों अगों में 'स प्रत्यव प्राप्त होने वर इम प्रकार रूप स्थिति बनती हैं -प्रमृद्ध, मम्यु महसु श्रीर मञ्मुत । इतम श्रन्त्य स्वर 'श्र' के स्थान पर प्राप्तब्य 'ए' का श्रमांव प्रदर्शिन क्या गया है। कोई एक ऐसा मी मानता है कि सरकृत शब्द 'अरमद्' के स्थान पर मर्ब प्रयम आदेश भाष्तांग 'ऋष्ट्' में 'सु प्रत्यक्ष की संशक्ति होने पर अव्ह' में स्थित अन्त्य स्वर 'स्र' के स्थान पर 'स्रा' की प्राधित होनी है। इसक सन स 'चन्ह' में 'सु' प्रत्यय की सयोचना होने पर सप्नमी बहुब बनार्थ में थहराभुं रूप की भी मश्राप्त होती है। इस प्रशर 'श्रश्मास' के प्राकृत में उक्त नव रूप होते हैं।

अस्मानु' मरहत म'तमी बहुवचनान्त त्रिलिंगोत्मक सर्वनाम रूप है। इसके प्रायत रूप 'श्रम्हेस भनेषु महेतु मडमेर्जु, अन्हसु समयु, सन्तु सङक्ष श्रीर अन्हानु' हाते हें। इनमें सूत्र मख्या ३ १९० से मस्तमा स्मिक्ति के बहुवचन म 'सुप=मु' प्रत्यय की सयो नना होने पर सहहत मृत शब्द 'श्रहमद् के श्यान पर पाहन सक्तम स चार अन्ह, सस सह और से क' अगरू वों को संशाधित, न परतान सूत्र मध्या - १८ में पारनागों के त्यन में स्थित प्रम्त्य स्वर 'अ' के स्थीन पर प्रथम चार रूपों में श्रांगे मध्नमी बह षचन नोधक प्रत्यव 'सुका मन्माव होने से ए की प्राप्ति' ३ ११७ की पृत्ति से पांचवे रूप से प्रारम्भ करके चाठवें रूप तक में उकत जान्य स्वर 'श्र के स्थान पर प्राप्तत्व्य 'प' का चामाय प्रदर्शित करके श्रान्य स्वर 'ख' को वया पूर्व स्वरित का ही मद्भाव, प्रवित नववें रूप में २ ११० की दृत्ति से प्राप्त मधमांत 'झन्ह' में स्थित श्रन्तय स्वर' झ' दे स्थान पर 'खा' की पाष्टि खोर सुब्र-मरूबा ४ ४४० में

उपरोक्त रोति से प्राप्त नज हो श्रमों में सप्तमी विभक्ति के बहुववर म 'सु' प्रत्यव हा मना पार कम से ये नव ही रूप 'अन्हेंसु, ममेसु, महेनु, मङ्ग्लेतु, अन्द्रसु, ममयु, महसु, मद्रग्ले, ब्रो(४५) सिद्ध हो जात हैं। ३-११०॥

त्रेस्ती तृतीयादौ ॥ ३-११= ii

त्रेः स्थान ती इत्यादेशो भगति नृतीयादौ ॥ तीहि कय । तीहिन्त धामश्रा । वि धर्ण । तीस ठिय ॥

अर्थ —सरप्टत सख्या वाचक शन्द्र 'त्रि श्रर्थातु 'तीन' नित्य बहुत्र रनात्मह हे इन वि रा क एकवचन और द्विवचन में रूपा का निर्माण नहीं होता है। क्यों कि यह वि' शह उन मंत्या याचक है, जो कि 'एक' और 'टो' से नित्य ही श्रधिक होत हैं। हुनीया विमिध पद्मना विक्रिंद विभक्ति श्रीर सहमी विभक्ति के बहुबचन में कम से प्रयों की समाति होने पर इस मस्कृत शर्म (के स्थान पर प्राकुन म 'ता' खन रूप की श्रादेश-प्राप्ति हाती है, तत्वरवात प्राक्तरोय प्रान्त ता' मड विमक्तियों के बहुवचन बाधक प्रत्ययों की मयोजना की नाती है। उदाहरण इम प्रकार है -

सृतीया विमक्ति बहुवचन -- त्रिभे कृतम् = तीहिं कय श्रर्थात तीन द्वारा किया गर्वा है। पत्र बहुवयन - निभ्य भागत = लाहिन्ती श्रामश्रा श्रयांत् तीनों (क पाम) म श्राम हुआ है। प बहुवचन -- प्रयाणाम् धनम् = विरह धण अर्थात् नानीं का धा और मप्तना बहुरवन -- त्रिपु विश्वः तीसु ठिष्य ध्यमीत् सीनी पर स्थित है।

त्रिक्तः सरष्टत वृतीया बहुबचनान्त मध्या मक सर्वनाम (छीर विशेषण) हव है। इवका भा कद तीहि हाता है। इसमें सूत्र मन्या १ १८= म मूल मस्कृत शब्द किंश के स्थान पर ब्राज्य म 'ता' ड रूप की थादेश प्राप्ति चौर ३ ७ मे तृतीया विभक्ति र बहुवचन में प्राप्नांग 'र्ता में मेरहुर्तीय प्राप्तस्य रण 'भिम' क स्थान पर प्राष्ट्रत म हिं' प्रस्थय की आदश पृक्षि हो हर तीहिं स्वानड हो जाना है।

. क्य रूप की सिद्धि सूत्र मन्या १ १२६ में का गई है।

जिम्य मस्तृत पद्मता बहुत्रचनात्त मन्यानिक मर्पनाम (चीर विनयण) सप है। इमस शह रूप तीहिन्तो होता है। इसमें सूत्र संस्था रे रहेन संसूत संस्था हारू वि' करशन गर पाइन में प र्श्वत ६५ की आदेश प्राप्ति और २६ म पद्मिश विमक्ति के बहुबचन में शर्मात 'ती' में नाह नीव नि प्रलाय 'स्वस् के स्थान पर प्राकृत म 'हिन्तो' प्रत्यय की आद्शासि हो हर नीहिन्ती हव निर्देश साना है।

'भागभी' रूप की मिडि मूत्र सएवा ' fos म की गई है।

'' अयाणाम् मस्कत पष्ठी बहुउचनान्त सन्यात्मक सर्वनाम (ब्बीर विशेषण) रूप है। इसका प्राकृत रूप तिएह होता है। इसमे मूत्र सख्वा ३ १६८ से मूल सस्कृत शब्द त्रि' के स्थान पर प्राकृत में त्री' खगरूप की आदश प्राप्ति, ६-/२३ मे पष्ठी विमन्ति के बहुवचन में प्राप्ताग 'तीं में सस्कृतीय प्राप्तक्य प्रस्थ 'ख्याम्' के म्यान पर प्राकृत में 'एह प्रत्यय का ज्यादेश और १८४ से प्राप्त प्रत्यय एहं' सयुक्त न्यञ्जनात्मक होने से खगरूप 'तीं' में स्थित अन्त्य नर्घ स्वर 'ई के स्थान पर हुस्य स्वर 'इ' का प्राप्ति होकर प्राकृतीय रूप 'तिण्ह' मिद्ध हो जाता है।

'भण' रूप की मिद्धि सूत्र मख्या है ५० में की गई हैं।

ंनियु सरकृत सप्तर्मा बहुत्रचनान्त मख्याःसक सर्वनाम (श्रीर चिशेषण्) रूप है। इसका पोक्टत रूप तीषु होता है। इसमें सूत्र सख्या ३११० से सूल सख्यत शण्यं 'ति' के स्थान पर प्राकृत में 'ती' श्राग रूप की श्रादेश प्राप्ति श्रीर ४४४८ से मध्तनी विभवित क बहुत्रचन में प्राप्तागं 'ती' में सख्तनीय प्राप्तच्य प्रत्यय 'पुप=सु' के ममान हो प्राकृत में भो 'सु' भ्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राकृतीय रूप तीसु सिद्ध हो जाता है।

'ठिअ' रूप की मिद्धि सूत्र-सरया ३-१६ में की गई है। ३-१८ ॥

द्वे दों वे ॥ ३-११६ ॥

हि शन्दस्य तृतीयादी दो वे इत्यादेशी भनतः ॥ दोहि वेहि कय । दोहिन्तो नेहिन्तो श्रामश्रो । दोएह वेएह घर्ण । दोसु वेसु ठिस्र ।

अर्थ — संस्कृत सरया बाचक शब्द 'हि' अर्थात 'दो' नित्य प्राकृत म (न कि संस्कृत में) बहुवचना'मक है, इस 'हि' शब्द के एकप्रवन म सर्वों का निर्माण नहीं होता है, क्यांकि यह 'हि' शब्द उम संख्या का बाचक है, जो कि नित्य ही 'एठ' में श्राधिक हैं। तृनीया प्रिमक्ति, प्रचानिक एव हिं। वर्ती विभक्ति, वर्षा विभक्ति और संदर्भ विभक्ति कोर संदर्भ कि महास्त हैं। तृत्व प्रचान के स्वाप्त को स्वाप्त के सहस्त विभक्ति होता है, तत्व रच्या कि संयान पर प्राकृत म क्रम स 'शे' और 'वे' श्राव क्यों की श्रावेश प्राप्ति होती है, तत्व रच्या कि संयोग पर प्राकृत म क्रम स 'शे' और 'वे' सं क्रम से दक्त विभक्तिया के बहुवचन नाथक प्रवयों का संयोगना की जाती है। उदाहरण इम प्रकृत के लिलें से सहस्त विभक्तिया के बहुवचन नहारेशाम कृतम्होहि अथवा वेहि कथ श्राधीन दो से किया गथा है। पंचमी बहुवचन नहारेयाम् श्रायत होन्ती श्रायम वेहिन्ता श्रायशे श्रायत हो (क वास) से श्राया हुषा है। पंची बहुवचन नहारेयाम् श्रायत होन्ति क्रय श्राय वेहिन्ता श्रायशे श्रायति होने का प्रवास की स्वास को प्रवास होने से स्वास अथवा हुषा है। पंची बहुवचन नहारे ध्रायति हो ध्रायति हो कि प्रवास की स्वास की स्वास को स्वास हो कि स्वास की स्

हास्यास् साकृत तृतीया द्विष्यनान्त मस्यातमक मर्यनाम (श्रीर विशेषण) हर है। वर् प्राप्तन कर टोहि' छोर 'विहि' होते हैं। इनसे मूत्र सख्या 3-११९ से मूल मांस्त शस्य हिंदे स्वार न प्राप्तन म कर में 'श्रीर 'वे' श्रार करों थी श्रावेश प्राप्ति ३ १३० से मत्तृतीय द्विष्यन प्राप्त प्राप्तन में बहुवयनात्मय पर वी (पर्याय श्रायस्था की) प्राप्ति श्रोर ३ ७ से मृतीया विभाग के बहुवयने प्राप्तीय 'वें श्रीर 'वे' में मत्त्वतीय प्राप्तव्य प्रयाम्' के स्थान पर मास्तृत में 'हि' प्रायय का भाग प्राप्ति हाकर क्रम से श्रोनों रूप द्वारि और क्षेत्रि सिद्ध हो जाते हैं।।

क्य रूप का सिद्धि सूत्र मख्या १ १२६ में का गई है।

द्वास्याम सम्कृत पद्धमी द्वियचनान्त सख्यात्मक सर्वनाम (श्रीर विशेषण) का है। सि प्राष्ट्रत रूप 'वेहिन्ती' छीर 'वेहिन्ती' होते हैं। इनमें सूत्र सख्या ३११६ में मूल साधन रूप 'व के स्थान पर प्राफत से कम से 'दा' श्रीर 'व' श्र्यारूपों की श्रादेश प्राप्ति, २-१३० से द्विचन क स्थार पर बहुवचन क रूप का सद्भाव श्रीर ३६ से पट्टचमी विभक्ति के बहुवचन में प्राप्तांग 'ते' श्रीर र में सरकृतीय प्राप्तन्य प्रयास' वे स्थान पर प्राकृत में 'हिन्ती' प्रत्यय की श्राक्श प्राप्ति होडा है। से नेता रूप 'दोहिन्तो' श्रीर 'वेहिन्ती' मिक हो जात हैं।

'भागभी' रूप की निद्धि मूत्र मख्या १ रे०" में की गई है।

हयो मन्यून पट्टी हिवचनान्त मन्यास्मक मर्बनाम (खोर विशेषण) ६० ई। इनक प्राकृत स् 'दायह' खोर 'वयल' होते ई। इनमें सूत्र मन्या ३-११६ स मूत्र मंस्कृत शहर 'हि' के स्थान पर आकृत के कम में वो' खोर ये खामस्या की धादेश प्रास्ति, ३ १३० स हिवचन के स्थान पर बहुवचन के रूप के मद्भाव खोर ३ १२३ स पट्टो विमक्ति क बहुवचन म बास्तीय 'वो' खीर वे' में मस्कृताव प्राप्तस्य दूर्य 'खाम्' के स्थान पर प्राकृत में 'यह प्रस्यय की प्रादेश प्राप्ति होकर प्रभ में बालें रूप 'देशव्हें' और केवल' मिद्र हो जान हैं

ें धर्म कर पही सिद्धि सूत्र परया है ५० में की गई हैं।

हिने' रूप को बिद्धि मुझ मन्या है हह म की गई है। देखहा।

दुवे दोशिए वेशिए च जस्-शसा ॥ ३-१२०:॥

जस् गस्या सहितस्य हेः स्थाने दुवे दोषिण वेषिण इत्येते दो वे इत्येता च आदेशा गर्मान्त ॥ दुवे दोषिण वेषिण दो वे ठिआ पेच्छ वा । हस्यः सयोगे (१-८४) इति हस्यत्ये एण विषिण ॥

अर्थ — संस्कृत सरण वाचक शहर 'दि र भाषृत रूपा' तर में प्रथमा विभक्ति के बहुवचन के त्रयय 'त्रास की र दिलांचा विभक्ति के बहुवचन के प्रयय 'त्रास' की प्राप्ति होने पर मृत शहर 'दि' और त्यय' होनों व स्थान पर होनों ही, विभक्तियों में समान रूप से और क्रम से पाँच आदेश रूपों की प्राप्ति होने व आदेश प्राप्त पाँचा रूप कम में इस प्रकार हीं —(प्रथमा) द्वी = दुवे, होरिए, वेरिए, ते और । (दिनाया) द्वी = दुवे, होरिए, वेरिए, वेरिए

ही माजून प्रथमा डियचमा स और हिनीया द्विचनान्त सख्याश्मक मर्बनाम (और विशेषण) रूप है। इसका प्राकृत रूप सात राते हैं — दुषे, देरियण, वेरियण, दो, ये, दुरियण और विशिष्ण। इन में से प्रथम पाँच रूपों ने सूत्र मराया ३ १६० से डित्र यस क स्थान पर, महुचचन की शास्ति छोर २-१२० से प्रथमा हिनीया क बहुवचन में साकृतीय शासन्य प्रत्यप 'अस्' और 'शस्' की प्रास्ति होने पर 'मूल राब्स और प्रथम' होनो के ही स्थान पर खबत पाँची स्वां की जम से खादेरा-शस्ति होकर रूम से इन पाँची रूपों 'डेंगे, होणिया, के पिया हो के रूप से प्रविक्त हो कर की से प्रविक्त हो कर की से प्रविक्त हो कर हो स्थान पर क्रम से इन्हिस्तर 'अ' और 'दे' की प्रास्ति हो ताती है। शेष ने रूपों में सूच सख्या रे-६४ से प्रविक्त विदेश सर्वीय रूपों 'डेंगे स्थान पर क्रम से इन्हिस्तर 'अ' और 'दे' की प्रास्ति हो हर सहे मातवे रूप दुर्णिया अरो मात्रियत 'खो' और 'शिक्या' को भी सिद्धि हो जाती है।

िर्यते। सस्तृत रूप है। इनवा प्राष्ट्रन रूप ठिश्वा होता है। इनसे सूत्र मन्या ४ १६ से मूल भाकृत थातु 'ग्या = तिस्तुं कं स्थान पर श्राकृत से 'ठा' श्वाग रूप की ब्यादेश प्राप्ति, दे-१४६ से प्राप्त भादुं 'था' स स्थित श्रान्त्य,स्वर 'ब्या' के स्थान पर 'श्वागे भूत कृत्दत से मन्यत्थित प्रत्येव 'ल' ल' का सद्माव होने स 'इ की प्रास्ति, ४ ४४६ से मृत छन्दत के कींध में साकृतीय प्रात्तव प्रस्तर का भी प्राकृत में भी इमी कार्य में त' प्रत्यय की प्रास्ति, १ १७० से उक्त प्रास्त प्रत्य 'न मीवनाइ 'त' का लोग, ३-१३० से द्विप्यन के स्थान पर बहुबचन का सद्माय कीर र्रं से प्रधम सिंध सहुबचन में माहतीय प्रास्तवय प्रत्यय 'जस' का प्राकृत म लोग एव १ १२ में उक्त प्रात्त पर तुंच ह' प्रत्यय क कारण से पूर्वीक 'ठिका' में स्थित कान्य हान्य स्वर 'ख्र' क स्थान पर हीर्ष स्वर 'धा' का रूप हाकर 'ठिका' रूप मिद्ध हो जाता है।

पिन्छ कियापद हव की सिद्धि सुझ मन्या ! ?? में की गई है। ३ १००॥

त्रेस्तिरियाः ॥ ३-१२१ ॥

जम् शस् स्यां सहितस्य त्रेः तिष्णि इत्यादेशो भवति ॥ निष्यि विद्या पेट्य म

अर्थ — मानून सख्या वाचन गहर 'त्रि' व प्राकृत स्वान्तर में प्रधमा विभवित के बहुत्तर 'जस्' प्रस्वय वरे रहने वर तथा द्वितीया विभवित के बहुत्त्वय म 'दास' प्रस्वय वर रहने वर दोने वर दोने विभक्ति के सहत्त्वय में 'दास' प्रस्वय वर रहने वर दोने विभक्ति में समान रूप स मूल शहर और प्रस्वय दोने वह हाथान वर 'तिनित्त् 'रूप दार्ग प्राप्त होती है।'जैस प्रथमा क सहुत्वयन में 'श्रय' का रूपा वर तिवित्त और द्वितीया क बहुत्त्वय मिंगा 'प्राप्त होती है। 'जैस प्रथम के सहित है। वाक्यात्मक उदाहरण इस प्रकार है — प्रय विगा विश्व विद्याल विश्व विश्व विश्व विद्याल विश्व विश्व विद्याल विश्व विद्याल विद्याल

त्रय मारृत प्रथमा बहुषचनान्त मत्यात्मक सर्यनाम (श्रीर विश्ववण) रूप है। इसश् शां रूप 'निविण होता है। इससे सूत्र मच्या ३ १२१ से प्रथमा । वर्भाक बहुषवन में सरहुगन शां कर्यय अस्' की प्राष्ट्रत में प्राप्ति होकर 'मूल शब्द 'नि' श्रीर 'अम अस्यय दोनों क स्थान पर 'पर' रूप की कार्यश प्राप्ति होकर 'निविण रूप मिद्ध हा जाता है।

'ठिशा वियाप' रूप की सिद्धि सुत्र सख्या दे १२० में पा गई है। जिनम सूत्र मस्या दे १३१ इस शार सोधनिका में क्षमाय जानना, क्योंकि वहां पर दिवचन का रूपान्तर मिद्ध करना पहाँदे, इर यही पर बहुवचन का का सद्माय है। इस साधनिका म नक्षमा सूत्रों का प्रयोग जानगा। पर्व विशिष्ठ की साधनिका भी 'त्रय व्यक्तिका' क समान ही सुद्ध मख्या दे १२१ क विधान में दर्शेष्ठ हों' में समम की पाटिये।

पेक्छ ियापर रूप की मिद्रि मूत्र मृत्या रे न्हें म की गई है । ३-१३० ॥ ।

चतुरस्वतारो चउरो चतारि ॥ ३-१२२ ॥

चतुर् शब्दस्य जम्-शम्भ्या -मह चतारी चउरो चत्तारि इत्येते बादेशा भर्नति ॥ ॥रो । चत्रो । चत्तारि चिट्ठन्ति पेच्छ या ॥

अर्थ — सस्कृत सख्या वाचक शब्द 'चतु '= (चरि) के ब्राक्षन क्यान्तर से प्रथमा विभक्ति के वचन से 'चस्' पर रहने पर तथा द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में 'शम' पर रहने पर देगों । तिक्षणों में ममान रूप से 'मून शब्द श्रीर प्रत्यय' रानों के ही स्थान पर तीन रूपों की श्रादेश प्राप्ति । ही है। तो हि इप प्रकार है — गयमा के बहुवचन स सम्क्रनाय रूप चत्वार के प्राक्षन रूपान्तर तारों, चत्ररा श्रार चतारि तथा द्विनीया के बहुवचन से मस्क्रनीय रूप चतुर के प्राक्षन रूपान्तर सा तारों, चत्ररा श्रीर चतारि' ही होते हैं। या प्रथमा द्विनीया के बहुवचन स को का समानता ही जानना हिय । वाक्यात्मक उदाहरण इप प्रकार है — चवार तिष्ठ नेत = चतारों चत्ररों, चत्रारि चिट्ठन्ति र्यात्वारि (च्यक्ति) हिवा नेति । चत्रिक हैं। चतुर पश्य = चतारा चरा चत्रारि पच्छ वर्षान्वार (व्यक्तियों) । हलों।

चत्यार सस्क्रन प्रथमा बहुबबनान्त मह्योत्मक मर्पनाम (श्रीर प्रिशेषण्) रूप है। इसके कृत रूप चलारी, चत्रशे श्रीर चलारि होत हैं। इसमे सूत्र मरया ३१२२ से प्रथमा विभक्ति के विचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'जम्' परे रहते पर मूल श्रान्त 'चतुर श्रीर प्रत्यय' होनों के स्थान पर कितानों रूपों को श्रान्त प्राप्ति होकर (श्रम में) तोनों रूप चतारी, चत्ररे श्रीर चतारि सिद्ध हो ते हैं।

चतुर सम्ब्रन द्वितीया बहुबचनान्त सम्वातमक मत्रनाम (और शिशेषण) रूप है। इपरे हत रूप चतारा, चबरो और चत्तारि होते हैं। इनम मासूत्र मरवा ३१०० में दिनाया त्रिभिन्त के विचन में सम्ब्रनीय प्राप्तव्य पत्यय पत्यय परे रहन पर मूल राष्ट्र पेचतुर और प्रव्यय वोनों के स्थान पर क्वींनों रूपों की आदेश प्राप्ति हो तह हो तह हो तह हो तह हो तह हो हत है।

चिद्रवन्ति कियापर रूप को सिद्धि स्त्र सरया है है।

'ऐच्छ' कियापद रूप की सिद्धि सूत्र सम्या १-२२ में की गई है। ४-६२२ ॥

संरुवाया आमी गृह गृहं ॥ ३-१२३ ॥

सल्या शन्दारवरस्यामो एह एह इत्यादेशी भनतः ॥ दोण्डः विण्डः । चउण्डः । पञ्चएहः । १६ । मचण्डः । श्रद्वण्डः ॥ एतं दोएडः । तिएः । चउण्डः । पञ्चण्डः । सचएडः । यदण्डः ॥ नगरह । दमरहं । पराणस्मरह दिनमाण । अद्वारमरह मनाणमाहस्मीण ॥ कनीनाम् । सन्ना ारुलानिकाराद निभारताहे ने भवति ॥

अर्थ — मण्डत सत्या वाचक शर्म के प्राष्ट्रत स्वान्तर में वही विमण्डि वे स्वान्तर मस्तृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'खाम व स्थान वर कम म 'एह' खीर 'एह' प्रथ्या को खादेश गीव कि रिंग् र्याहरण इम प्रशार है — ह्यों = रोपह शीर रात्ट खर्यांत्र रात्ता, य्वाणाम् = किर होर कि खर्यात्तात्तीन वा, यवणाम् = क्ष्यर होर होर प्रयुद्ध खर्यात् चार वा, 'वद्यानाम् = प्रद्यवर होर होर प्रथात्त तीन वा, यहणाम् = खरुह खीर खरुह खर्यात् होर का, मतानाम्= मनह खीर नक्षर हर्यात् का, खराजाम्= वर्षर खीर नक्षर हर्यात् का, खराजाम्= वर्षर खीर वर्षर खरुह खर्यात् चार का, नवानाम्= वर्षर वर्षर हर्यात् का, द्वानाम्= वर्षर हर्यात् दरा का, व्यावरात्नाम् विवत्नताम्- वर्षर प्रयोत् का, प्रशानाम् वर्षर वर्षर स्वयः वर्षात् वर्षर कर्यात् वर्षर हिन्यां का, प्रशानाम् वर्षर वर्षात कर्पर प्रयोत् वर्षर हर्यात् का, प्रशानाम् वर्षर वर्षात कर्पर प्रयोत् वर्षर हर्यात् कर्पर प्रयोत् वर्षर वर्षात कर्पर प्रयोत् वर्षर कर्पर वर्षात कर्पर प्रयोत् वर्षर वर्षात कर्पर प्रयोत् वर्षर वर्षात कर्पर प्रयोत् वर्षर वर्ष वर्षर वर्षर

यह प्यान स स्प्रना चाहिये कि कि त्रि त्रि श्रीर चतुर' सम्या वायक शहाँ के बाहन ह्यान स्वीता लियों स विभक्ति बाधक श्रवस्था स समान रूप हो राते हैं। श्रथीन् इनमें कि मेर सीहरी जाता है।

हुयो मस्तृत वर्षी दिवचना न मत्यात्मक मजनाम (श्रीर विशेषण) रूप है। इसके वाइन मा रेक्ट चीर दोग्य होन में। इसम मृत्र मख्या -११६ स मृत्त संस्त तरह हिं क स्थान वर शाहर में इसम मारे गाँक, खादेश दाति, २७२० में हिवचन के स्थान वर सहुबचा का मद्मान चीर रेक्ट । वर्षी, विभ क्त क सहुब रून म सम्हतीय जायत्य अस्वय 'ब्याम के स्थान वर प्राहुक में 'नह' चीर मी ज्यों तो खादरा प्राति (बाम मा) सकर गानो रूप 'होग्यु कब 'होग्यु मिक्ट सा पात हैं।

अयाणाम सस्टन पदा सहत्वनानन भगवा मह मर्बनाम (चीर निरोवण) का है। इसे के कित कर सिवर चीर निर्वेद होता है। इसस मूब मरवा है रहे के सुन सहत्व राहर निर्वेद होता है। इसस मूब मरवा है रहे के सुन सहत्व राहर निर्वेद होता है। इसस मूब सहत्व राहर निर्वेद होता है। इसस मान सहत्व राहर निर्वेद होता है। इसस प्राप्त के स्थान के स्थान का महिन में चर चीर 'एह जावची की (का से) आइरानादि है। देश मान कर नीएई 'सिट' में प्राप्त है। इस मान कर नीएई 'सिट' में प्राप्त है। इस साम कर नीएई 'सिट' में प्राप्त है। इस साम से का साम से से निर्वेद है। इस से का साम से से निर्वेद है। इस है। इस से से से निर्वेद है। इस है।

चतुर्णाम मन्द्रन पष्टा बहुउचनान्त सख्यात्मक सर्वनाम (श्रीर विशेषण) रूप है। इमके प्राकृत क्रम चरण्ड' और चरण्ड' होते हैं। इतम सुत्र सख्या १ १७७ स त' का लोप. २ ७६ से 'र' का लाप श्रीर ३ ६२३ स प्राप्ताग चत्र' में पष्टा विमक्ति के बहुवचन में सरहतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'श्राम' क म्यान वरं प्राकृत में पर खीर पहें प्रत्ययों का कम से खादेश प्राप्ति हाकर दोनों रूप 'चडण्ट' खीर 'चउण्ह' भिद्ध हो जाते हैं।

पञ्चानाम् सस्कृत पृष्टी बहुरचनान्त मख्यात्मक सर्वनाम (श्वीर विशेषण) रूप है। इसरे प्राप्तत रूप पञ्चण्ह और पञ्चण्ड क्षात है। इनमें सत्र सख्या ३-१२३ से सरकत के समान ही प्राफ्रनीय खग . . ह. ('पञ्च म पष्टा विभाक्त क बहुबचन म संस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'स्त्राम' के स्थान पर पाकृत में 'ण्ह' . श्रोर 'ण्ड' प्रत्ययो की रम से श्रादेश प्राप्ति होकर टोनों रूप पञ्चण्ह' श्रीर पञ्चण्ह' सिद्ध हो जात है।

पण्णाम्, मस्तत पत्नी बहवचनान्त सरयात्मक भर्वनाम (श्रीर निशेषण) रूप है । इसके प्राकृत . रूप 'छण्ड' श्रीर 'छण्ड होते हैं । इनमें सुत्र मरया १ ४६४ से मुल संस्कृत शब्द पट में स्थित 'प' व्यवस्त · प स्थान पर श्राकृत म छ' ब्यञ्जन की श्रादेश प्राप्ति, १११ से (श्रथवा २-७७ मे) श्रन्य हलन्त व्यञ्जन ंट' का लोप श्रीर ३ १२३ से प्राप्ताम 'छ' में पर्छा विभक्ति के वह उचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'चाम् म स्थान पर प्राकृत में 'पढ़' श्रीर 'पह प्रत्ययां का कम से श्रादेश प्राप्ति होकर दोनी रूप 'छण्ट' श्रीर ' 'छण्ह' मिद्ध हो जाते हैं।

सप्नानाम् सरकृत पर्छ। यहवचनान्त मख्यात्मक मर्वनाम (श्रीर विशेषण) रूप है । इसवे भाकृत रूप 'मत्तरह' श्रीर 'मत्तरह' होते हैं। इनम सूत्र सटया २ ७० से मूल मस्ट्रत शरू 'सप्त' म स्थित िहलात प' का लोप, २ महिसे लोप तए 'प' के पश्चात शेप गहे हुए 'त' को द्वित्व 'स' का प्राप्ति ऋौग ि १९५ से प्राप्तींग 'क्त में प्रष्टा विभक्ति के बहुबचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'खाम' क स्थान पर पाछन म पर' श्रोग पर प्रत्यया की कम से श्रादेश प्राप्ति होकर दोनों रूप 'सत्तणह श्रांर 'सत्तणह' विद्वही जात हैं।

अप्टानाम सर्क्षन पन्छी बहाचनान्त मख्यासक मर्वनाम (श्रीर विशेषण) म्य है । इसके प्रयूत ेरूप श्रद्ध श्रीर श्रद्धक होत हैं। इनमें मूत्र सन्या २-३८ मे मृत सन्धन शब्द 'श्रष्ट' म रिधत मयुक्त ़^{क्य चुन} र्थं के स्थान परंठ की प्राप्ति, २ म्हसे प्राप्त 'ठ' को डिल्व ठठ' की प्राप्ति, २ ६० म प्राप्त ्राज्य ४ कर्यान पर ० ना कारण, पुत 'ठ कर्यान पर 'ट'की प्राप्ति छौर ३-१२३ से प्राप्तीय 'छट्ट' में पष्ठा विभक्ति वे बहुवयन में मस्ट्रिंग्य प्राप्तव्य प्रत्यय 'स्नाम्' व स्थान वर प्राकृत में कम से 'वह' स्त्रीर 'व्ह' प्रत्ययों की स्नानेश प्राप्ति रोरर नेनें रूप 'श्रट्रफ्त' श्रोर 'श्रट्रफ्द' सिद्ध हो जाते हैं।

नवानाम् सर्कत् प्रदर्शे बहुवचना त सर्यात्मक सर्वनाम् (श्रीर विशेषण) रूप है । इमरा प्रापन रूप 'नवष्ट् होता है। इसमें सूत्र मत्या ३१९३ से मूल मस्टत के ममान ही प्राष्ट्रनीय ध्यम रूप 'नव'

इझानाम् मध्यत् पट्टा उद्वयनान्त मध्यास्यक सर्थनाम् (श्रीर विशेषण) रूप है। १९१९ भाकृत रूप दमाद् हाना है। इसमें सूत्र मद्या १२६० से शाक स्थान पर स' का शाकि १००० प्रथम दाय राज श्री के स्थान पर 'श्री की प्राप्ति को ३ १०३ से पट्टा विर्माक्त के वृद्धन से मण्डा प्रथम दाय प्रथम दाय प्रथम दाय प्रथम दाय प्रथम के स्थान पर प्राप्ति से 'एद' प्रायम की स्थादश पारित हाकर 'एसण्ड' रूप मित्र स' जाता है।

पञ्चवृङ्गानाम सम्कृत वन्त्री प्रदुष्यभाग्त मध्यासम सर्वतास (और विश्वण्य) कव है। इतम प्राकृत कव वर्णासम्ब होता है। इतम सूत्र मध्या २-८३ स सबुक्त ब्याज 'द्रा' क स्थात वर व्याच होता है। इतम सूत्र मध्या २-८३ स सबुक्त ब्याज 'द्रा' क स्थात वर व्याच हस्त्र वर्ण का खादेश प्राप्ति, ४-२६ म 'द्रा' वर्ण क स्थात वर 'व्या का खादेश प्राप्ति, १-२६० से 'द्रा क स्थात वर 'म्' की प्राप्ति, १-८४ स प्रथम भपे स्थर का क्रस्थान वर 'खा' को प्राप्ति खीर ३ १२० से वच्छा विभक्ति क बहुत्र प्रस्त म स्थर प्राप्त 'द्रा' क स्थानीय हव 'नाम' के स्थात वर 'एहं' प्रथ्य को खादरा प्राप्ति होका 'व्यवस्त्र प्रप्ति का जाता है।

धमयन्ताहरुपामान् मध्यत पट्टा सहुवय तात्र स्व है। इमका बाकुत रूप मान माना तारी। इमस मृत् मण्या २ १६ म अ में स्थित हुं का सात, हेन्द्र माना, हुं 'ह क्ष्यांक्र

ि ३०६ 1

शेप रहे हए 'श' के स्थान पर 'म' की प्राप्ति, २-७६ में 'स्त्री में स्थित 'र' का लोप, २ =६ से लोप हुए 'र' क परचात रोप रहे हुए 'सी' में स्थित 'स' की द्वित्व 'स्न' की बान्ति ३६ में पर्व्या निमक्ति के बहुबचन में संस्कृतीय प्राप्त य प्रत्यय 'श्राम्' क स्थानीय रूप 'ग्राम् क स्थान पर प्राकृत म 'ण' प्रत्यय की आदेश प्राप्ति और १-२० से आदेश प्राप्त प्रत्यय ण क अपन में आगम रूप अनुस्वार' का प्राप्ति होकर 'समण साहस्सीण' रूप मिद्र हो जाता है।

कतीनाम् माकृत पष्टी बहुबबनात्न प्रशान्त मर्बनान (श्रीर विशेषण) रूप है। इसका प्राफ़त रूप कइएह होता है। इसमें सुत्र सहया १ १७० से 'तु को लाप, १ ८४ से लोप हुए 'तु के परचात् शेप रहे हुए दीर्घ स्वर 'इ' के स्थान पर 'खागे पट्टी यहवचन बायक मयुक्त ब्याखनात्मक प्रत्यय का सद्भाव होन से' हस्य स्वर 'इ' की प्राप्ति श्वीर ३ १२३ म पर्थ्वा विभक्ति क बहुवचन में मस्कृतीय प्राप्ताः य प्रत्यय 'खाम्' क स्थानीय रूप 'नाम् क स्थान पर प्राकृत म 'एड प्रत्यय का खादेश प्राप्ति होकर भाक्तीय रूप 'कडण्ह' मिद्ध हो जाता है। ३ १२३॥

शेषे ऽ दन्तनत् ॥ ३-१२४ ॥

उपर्युक्तादन्यः शोपस्तत्र स्यादिनिधिरदन्तनद्ति दिश्यते । येध्नाकाराद्यन्तेषु पूर्वे मर्याणि नोक्ताणि तेषु जस् शसो र्जु मृ (३-४) इत्यादिनि अदन्ताविकार-निहितानि कार्याणि भगन्तीत्पर्थः ॥ तत्र जम् शसो लु क् इत्येतत् कार्यातिदेगः । माज्ञा निरी गुरू मही वह रेहन्ति पेच्छ वा ॥ अमोस्य (२-५) इत्येवत् कार्यानिदेशः । गिरि गुरु महि वहुगा मणि राजपु पेच्छ ॥ टा-त्रामोर्णः (३ ६) इत्येतत् कार्यातिदेशः । हाहाण कर्यः । मालाण गिरीण गुरुण सहीण पहुण धम् । टायास्तु । टो मा (३-२४) टा-उस् डोरदादिदेद्वा तु ङसे (३-२६) इति विधिरुक्त ॥ मिमो हि हिँ हिं (३-७) इत्येतत् ारायीतिदेशः । मालाहि गिरीहि गुरुहि सहीहि बहुहि कय । एर सानुनामिकानुस्वारयोरपि॥ डनेम् ची-दी-दु हि-हिन्तो लुकः (३-८) इत्वेवत् कायोतिदेशः। मालाम्रो । मालार । मालाहिन्तो ॥ उद्दीयो । उद्दीर । उद्दिहिन्तो ॥ रेणुम्रो ।घेणुर । घेणु-^{हिन्तो} श्रागश्री। हि लुक्री तु प्रतिपेरस्पेते (३-१२७, १२६)। स्पसम् चो ठाँदृ हि हिन्ती सुन्तो (३-६) इत्पेतत् कार्यातिदेशः। मानाहिन्तो । मालामुन्तो । हिस्तुनिपेस्स्यते (३-१२७) एन गिरोहिन्तो इत्यादि ॥ इस. इस (३-१०) इत्येतत् कायातिदेश । गिरिस्म । गुरुस्म । ^{दिहिस्म} । मुहस्म ॥ स्त्रिया तु टा-टम डी: (३-२६) इत्यायुक्तम् ॥ डि म्मि छी (३ ११) ^{इत्येतत्} कार्यातिदेशः । गिरिम्मि । गुरुम्मि । टहिम्मि । महुम्मि । उस्तुनिये स्यतं (३-१२८)

स्तियों तु टा-ठस् छे: (३-२६) इत्याद्यक्तम् ॥ जम्-शम्-टस् चा दो-डामि रीपः। इ इत्येतत कार्यातिदेश: । गिरी गुरू चिट्टन्ति । गिरीयो गुरूयो स्नामयो । गिरोग गुरू ए म्यमि वा (३-१३) इत्येतत कार्यातिदेशी न प्रवर्तते (इन्ती दीव: (३-१६) इति निया नात ॥ टाम-गर्म्यत (३ १४) ॥ मिन्स्यस सुनि (३-१५) इत्येवत कार्याविदेशस्तु मिर (3- 28) 11

वर्थ -इस सुर म अकारान्त शहरों के अतिरिक्त आकारान्त, इहारान्त, उनागांश क यह-लिग बाले शुख्दों के लिये विभक्ति यो उक्त प्रत्ययों में सब्धित हेनी विधि का उत्पान रिपार्य जो कि पहल नहीं कही गई है। तदनमार मर्च प्रथम इस 'सर्व-पामान्य-विधि की बहुबीपणा हांग कि 'जिन श्राकारान्त श्रावि शररों के निये पहल तरे प्रत्यय विधि वही बतलाई गई है, उमसे 'मधा शरा के लिये वहीं गई अन्यय विधि क समान हा इन आवारान्त आदि शाओं के निये भा मनस चाहिये। इन व्यापक ऋथ काली घोषणा के ऋतुमार 'तम, श्रम, राम्' श्रापि विमले मानक मण्डे स्थान पर प्राक्त भाषा में अकारान्त शर्दा में अहत वाले प्रथ्यों की कार्य विकि सौर प्रभाव शीण्या चाकारान्त चारि शर्मे क स्निरे मा तान जना चाहिय। इन 'यावक ।थाव मूरता को यहां वर 'हा दश ज्ञाद्य में उत्तिव्यत की गह है। मर्व प्रथम मूत्र मख्या २४ - जम् रामा जुक का कार्या नेशान मुलाहरण नेन रे -प्रथमा विभक्ति के चहुवचन के उपारण -माला, गिरव, मुख, मात्व, प रानन्ते = माला, गिरी, गुरु, महा, युः रहन्ति=भालांग पहाड़, गुरूनन, मिवयी श्रीर बहुने मुरेतीर रती हैं। इसा प्रकार स द्विनीया विभाक्त के बहुनयन के बदाहरण या हैं --

माला, गिरीन, गुरूर, मला वचू अच = माला गुरू मही, वहू वे-द्र=शनाबी हा ६ थी, सुर तनों की, मीलयों की चीर बहु वा का देखी। इन वयना और द्वित्तिश विमाल के प्रदेश उद्गादरणा म बाद्यायान्त इकारास्त अकारान्त स्त्रीर अकारान्त पुन्तिय वर्ष स्त्रीनित ६ रघी क्षरागुन्त शार के प्रत्यव वेथि मा काय शांच होती है, लेमा झान कराया गया है।

'समान्य (३ ६) मूत्र हा काय सनिद्राता क उद्दाहरण इर अधार है — गाँख मु मालोगु, वर्ग, मामन्यम सन्तायम प्रकृष्णात, गुरू, महि यह गामणि सारु व्यवद्रशाह गुर का, मर्था को, वपु बा, धाम मुख्या रा कोर विलिशन माफ करने याज का गुला। इन प्रार म भी चारारात गर्द क मनान ही हितिया जिमिल के एडवयन में श्युक्त होन वार्त शायण ही! शीलना प्रश्रीत की गई है।

'टा याम र्खे ' (३६) सूत्र में कार्व प्रतिदेशना का अवस्य वर्शक ब्हारान सम प्रशाह हाहा पुत्रम-हाराम वय=गराय स, राधवा त्व से हिवा गवो है। यह तुनाम विशक्ति क प्रश्यन फगारका हुचा, घटो विमक्ति क बहुबबन में हाने बान कावानिदेश के दशक्षण निरत स्वार में है

हितासम्, गुरुणाम्, गिराणाम्, मखानाम्, वधुनाम धनम्-मालाण्, गिराण्, गुरुण्, महाण, वहुण (व-मालाओं का, पहाडा का, गुरू जनों का, मिल्यों का, बहुषो का धन । तृनीया जिमिक के विचन के प्रत्यय 'टा' से सम्बन्धिन नो सृत्र पहले कहे गये ह, जो कि इस प्रकार हें — टो णा, (३-२४) ोर 'टा इस के रटादिरेहा तु इसे ('- ६), इनकी कार्य विधि इनका पृत्त में बतलाये गये विधान के सुमार हा समभ लेता चाहिये। तृनीया जिमकि के बहुवचन के क्यों के निर्माण हतु जा सूत्र मिना हि है हि', (३ ७) कहा गया है, उसका कार्यो। तन्श इन ज्याकारान्त, इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त, कारान्त पुल्लिग ख्रयवा खीलिंग खीर नपु सर्कांग वाले राट्सें के लिए मो प्राप्त होता है, यह ध्यान में इ। उनाहरण इस प्रकार हैं -मालाभि, गिरिंभ, गुरूमि, सर्खाभि, वधूभि कृतम् = मालाहि, गिरीहि, इहि, तहीहि, वहु हि गय = मालाखों से पहाडा स. गुरू जनों से, सिखयों से, वधुश्रो से किया गया है। सी प्रकार से इन शुर्जों में 'हिं' खीर दि' प्रत्यया की समस्ति मो तृकाया विभक्ति क बहुवचन के निर्माण

पञ्चमी विभक्ति के एकवचन के रूपा के निर्माण हेतु जो सूत्र—इसेम् सो-दो-दु-हि-हिन्ती-लुक म) हहा गया है, उमरा कार्यानिदेश इन आशारान्त, इरारान्त ककारान्त खादि खोलिंग वाल शब्दों के लिंग भी होता है। उनाहरण इम प्रकार हैं — नालाया, बुद्धवा, बुद्धे, खे वां, धनो आगम =मालाआ, बीलाउ, मालाहिन्तो बुद्धीखो, बुद्धीच बुद्धीहिन्तो, बेस्तुओं, धेस्तुड, धेस्तुहिनो आगश्ची=माला से, गाव सं, बुद्धि से आया हुआ है। इम सम्बन्ध म सूत्र सरया ३१-६ और ३-१० में बल्लिखिन नियम का जा भ्यान रखना चाहिये, निमा कि आगे बतलाया जाने वाला है। तदनुपार 'लुक प्रत्यय को और हि भ्याय का' इन हरनें व लिच क्रमांब होता है। सुन्न सहया ३-३० के अनुमार आकारान्त शानों ने लिये भ्याय का' इन हरनें व लिच क्रमांब होता है। सुन्न सहया ३-३० के अनुमार आकारान्त शानों ने लिये

पञ्चमी विभक्ति क सहवचन क सर्वा क तिर्माण हेतु जो सुत्र—'श्वमन चौ दा दु हि हिन्तो मुन्तो (रे ६)' पड़ा गया है, उमका नार्वीतिदेश इन आकारान्त आदि शब्दा क लिये भी होता है। उदाहरण इन प्रकार है —मालाश्व =गहलाहितो, माचामु तो, 'मालची मालाओ मालाव' रूप पृत्ति में प्रदान नहीं विधे गये है, किन्तु इतका सद्भाव है। केवल 'हि' प्रयय का स्वमात्र जानता, जैना कि सूत्र सख्या रिश्वे में १९ किन्तु इतका तिये शिवा जाने वाला है। इत्री प्रकार में 'गिरीहिन्नो' स्वादि केशें की प्रकार विभिन्नों कर लेनी चाहिये, ऐसा तात्र्यं प्रतिश्वीन होता है।

पर्न्तो विभक्ति के एकवचन के रूप के निर्माण हेतु तो मूत्र-- इस स्म (३ १०)' करा गया ई, रणका कार्यातिदश पुल्लिस क्रीर नपु मकलिम बाल इकारान्त, उत्तरान्त श्रादि शस्त्रों वे लिय भी होता है। उत्तरुख इस प्रकार हें —ितरो∷ितस्य=ितिर का, पहाइ का; गुरो≔गुगस्स=पुरूतन का, दम्म≔ विदेस = दही का, मुलस्य=मुह्दम = मुद्र का, इस्यादि । स्नीलिंग वाले शस्त्रों के लिये इस मूत्र मंगया वे-to

सत्वमी विमक्ति क एकवणत के रूपों क तिर्माण हतु नो मूत्र हे कि है (११) भिंता किया गया है, उसका कार्याविदेश पुलिंगा और नतु सक लिंग नाल इकारान, उद्याप १४ हो । के लिंग भी होता है। कि तु इसमें यह विशेषता , रही हुई है हि है = " प्रत्ये का मद्भाव (कारे) के लिंग भी होता है। कि तु इसमें यह विशेषता , रही हुई है हि है = " प्रत्ये का मद्भाव (कारे) लिंग नहीं होता है, जैना था सूत्र सख्या ३ १२ व में ऐसा निषय कर दिया गया है। जार का प्रकार है — 'हे हैं'। उसी प्रकार से मिलिंग वाले खाकारान्त, इकारान्त कारान्त का रही लिंग कि में कि निर्माण में स्वावित वाल शार्श के निर्माण में हिला है, कि स्वावित वाल शार्श के निर्माण का प्रतिवित्त वाल शार्श के निर्माण का प्रतिवित्त वाल शार्श के निर्माण का प्रतिवित्त का स्वावित वाल शार्श के उदाहरण इस प्रवार है — 'तरी-विशिव्यवार के प्रवार का प्रतिवित्त का स्वावित वाल शार्श के उदाहरण इस प्रवार है — 'तरी-विशिव्यवार का प्रतिवित्त का स्वावित वाल शार्श के उदाहरण इस प्रवार है — 'तरी-विशिव्यवार का प्रवार का स्वावित वाल स्वावित का स्वावित क

मूत्र मान्या दे-६६ स्विम थां को कार्यानिहेशना वी प्राणि, उपरोक्त चाहाशाल अधा प्रतापात काहि हाह्या के सबव में नहीं होती है, किन्तु मूत्र मध्या दे ६ इदुना लंका का हार्या के साम में नहीं होती है, किन्तु मूत्र मध्या दे ६ इदुना लंका का हार्या के प्राणित होती है, हे का विधान शृष्टी के निया किया होती है, हे का विधान शृष्टी विधान प्रताप नाम प्रताप नाम का होता है। इस विधान प्रताप नाम का है। इस विधान प्रताप निवेद कार्या है। इस विधान का निवेद कार्या में का है। इस विधान कार्या कार्य कार्या कार्य कार्या कार्य कार्या कार्या कार्या कार्य कार्या कार्या कार्या कार्य कार्य कार्य कार्या कार्य कार्या कार्य का

माला सस्कृत प्रथमो विभिन्त और द्वितीया निभक्ति के बहुनचन का स्त्रीलिंग रूप है। इसका ाकृत रूप माला होता है। इसम सूत्र सल्या ३ ४ से मस्कृत प्रथमा श्रीर द्वितीया विभक्ति क बहुवचन । प्राप्तब्य प्रत्यय जस ऋौर शम का प्राकृत म लोप हाकर प्राकृत रूप माला सिद्ध हो जाता है।

गिरय श्रीर गिरीन् सस्कृत में कम से प्रथमा विभावत श्रीर द्वितीया विमन्ति के बहुवचनीय हिंचगरूप हें। इन दोनों का प्राफ़त समान रूप गिर्ग होता है। इसम सुत्र सख्या ३ १२ से ऋौर ३ ९८ ने मूल प्राकृत रूप गिरि में स्थित ऋन्त्य द्वस्य स्पर 'इ' के स्थान पर दीर्घस्यर 'ई' की प्राप्ति, तत्वर्घात । ४ से सस्कृतीय प्रथमा ऋोर द्विनीया विभक्ति के बहुवचन में प्राप्तब्य प्रत्यय जस ऋौर शस का गक्त में लोप होकर दोनों निमन्तियों के बहवचन में प्राकृत रूप *गिरी* सिद्ध हो जाता हैं।

गुरुव और गुरून संकत में त्रम से प्रथमा विभक्ति और दितीया विभक्ति के बहुवचनीय ुल्लिंगरूप हैं। इन दोनों का प्राकृत रूप गुरू होता है। इम में सत्र सख्या ३१२ से श्रीर ३१८ से मूल गष्टत रूप गुरु में स्थित श्रान्त्य द्वस्य स्वर 'उ' के स्थान पर ई।ई स्वर 'ऊ' की प्राप्ति, तत्परचात् ३४ मे सरुतीय प्रथमा श्रीर द्वितीया विभक्ति के बहुवचत में प्राप्तब्य प्रत्यय जस श्रीर शस का पाकृत में लोप शेकर दोनों विभक्तिया के बहवचन में प्राकृत रूप गुरू मिद्ध हो जाता है।

'सही' प्रथमा द्वितीया विभक्ति के बहुवचनान्त रूप की सिद्धि मूत्र सख्या है २० में की गई है। 'एह' प्रथमा द्वितीया विभक्ति के बहवचनान्त रूप की सिद्धि सूत्र सख्या है है।

'रेहान्त' कियापट म्ब्य की सिद्धि सूत्र मख्या है हि में की गई है।

'पेच्छ' वियापद रूप की मिद्धि सूत्र सख्या १ २३ में की गई है।

'वा' श्रव्यय रूप की सिद्धि सत्र सख्या ? १७ में की गई है।

'गिरिं' रूप की सिद्धि सुत्र सरया १ २३ में की गई है।

गुरुम् संस्कृत द्वितीया विमक्ति का एक्वचनान्त पुल्तिग रूप है। इमका प्राकृत रूप गुरु होता है। इसमें सूत्र संख्या ३ ५ से सस्क्रतीय प्राप्तच्य प्रस्यय 'ऋम्' में स्थित 'त्र्य कालीप हो कर प्राकृत में म्' प्रत्यय की प्राप्ति श्रीर १-२ र से प्राप्त प्रत्यय 'म्' क स्थान पर श्रनुस्वार की प्राप्ति हो कर प्राकृतीय रुष गुरु मिद्ध हो जाताँ है।

संखीम संस्कृत द्वितीया विभक्ति का एकवचनान्त खीलिंग रूप है। इसका प्राप्त रूप महि होता हैं। इसमें सूत्र सख्या १ ६ न्फ से 'ख़्क स्थान पर 'हे' की श्राप्ति, ३३६ से प्राप्त रूप 'मर्का' म स्थित भन्य दार्घ स्वर 'ई' के स्थान पर झस्त्र स्वर 'इ' की प्राप्ति, ३ ४ म द्वितोया विमक्ति के एडवचन में प्राकृत म 'म्' प्रत्ययको प्राप्ति ब्बीर १ २३ से प्राप्त प्रत्यय 'म' केस्थान पर अनुस्वार की प्राप्ति हो कर प्राप्ट नीय ह्व सहिं सिद्ध हो जाता है।

'छा' रूप की मिद्धि सुत्र सर्ह्या है ३५ म की गई है।

ग्रामण्यम् संस्टृत द्वितीया विभक्ति का एकवचनान्त विशेषणात्मक पुल्लिग 🚾 है। 📆 प्राप्टन रूप गामणि होता है। इसमें सूत्र संख्या २ ७६ से मृल संस्कृत हवा प्रामणा में स्थित प' ब्ह्युहर लीप, दे 8द में प्राप्त रूप गामणी में स्थित श्रात्स्य दीच स्वर हैं। के स्थान पर हार स्वर 'ह' बाहार २ ४ म दिनीया विभक्ति के एक्यचन में प्राकृत में 'म' प्रत्यव की मारित और १२३ में वान्त्र प्रचार ये स्थान पर श्रनस्वार की प्रास्ति होकर प्राक्षनीय हुए गामार्ग मिद्र हो जाता है।

खलप्यम सरवत दिवाया विभक्ति का व्यवचनानन विशेषणात्मक परिनग रूप है। इनहा ६३ रूप सल्यु होता है। इसमें मूत्र मध्या ६ ८३ में मूल रूप यलपू म स्थित श्रम्य शीर्घ स्वर 'क' दें स्वर पर द्वरव स्वर 'व' की प्राप्ति, र ४ में द्वितीया विभक्ति के एक्यपन में प्राफ्त में 'म' प्रत्यय का प्रार्टि क्षे १ २३ में प्राप्त प्रत्यय 'सु के स्थान पर अनुस्वार को प्राप्ति हा हर प्राक्रनीय ऋष खन्नई मित्र हो आग है।

'येच्छ' कियापर रूप की मिद्धि सुत्र सख्या १-२३ में की गई है।

हाहा संस्कृत छताया विमक्ति का एकश्चनान्त पुल्तिम रूप है। इमका प्राप्टन हव हाराव हैं। है। इसमें सूब सख्या १ ६ से गृतीया विभक्ति के एकवयन में मंश्कृतीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'टा = पा' के स्थान पर प्राप्त में गा' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राक्षतीय रूप हाहाण सिद्ध ही जाता है।

'क्य' कियापर रूप की मिद्धि एवं मध्या १-१२६ म की गई है।

मालानाम संस्थत पद्मा विमक्ति का बहुबचनान्त म्बीलग रूप है। इसका प्राप्टन रूप माध्य होता है इसमें सूत्र संस्था पर में पर्छा विभक्ति क महुवयन म संस्कृतीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'चाम् (प्राप्त क्ष स्वान पर प्राप्तन में 'स्व प्रत्यय की मानि हो कर प्राप्तनाय रूप मालाण सिक्ष हा जाता है।

गिरीणाम् मस्तृत पद्मी विभक्ति या बहु इपनान्त पुल्लित रूप है। इसर वाह्न हविति।वि है। इस े मूत्र मञ्चा ३ रेन सं सूत्र पाइन शब्द शिति सं स्थित आरूप हात्र श्वर १६ ६ छा।। इस बहुबचना एवं परवय का सर्भाव हान संदाध स्वर 'ई वी आध्नि और ३ है से बात वर विर्ा है व" विमत्ति के महुक्चनाथ में सन्हतीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'काम् = णाम्' क स्थान वर श्राहत 'त' श्रावय की हा राष्ट्र मिरीण रच मिद्र ही जाता है।

प्रस्थाम मार्थन पर्छ। विमास का धारक्यमा न पुश्चिम रूप है। धमहा पाइन हर गुहत हर है। इसमें भा ज्यानेवल गिराण रूप के समान ही मृद्ध मत्रहा ३१० चीर ३६ से ब्रम में इक्ट स्थ भवर को पापना वी फ्रान्ति एव पर्छ। सहुवधनाथ में फारन मा "व्य" ६ यय की घारिन हो का दूरत का बिद हो बाग है।

संखीनाम् सम्बत्त पष्टी विभिन्त का बहुवचनोन्त स्त्रीक्षिंग रूप है। इसका प्राकृत रूप सहीण होता है। इसमें मूत्र सख्या ११८० से 'ख' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति श्रीर ३६ से प्राप्त रूप सही में ग्री विभक्ति के बहुवचनार्थ में संस्कृतीय प्राप्तव्य शस्यय 'श्राम् = नाम्' के स्थान पर प्राकृत में 'ण' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राकृत रूप सहीण सिद्ध हो जाता है।

षधनाम् मस्कृत पछी विमक्ति का बहुबचनान्त स्त्रीलिंग रूप है। इसका प्राकृत रूप बहुण होता है। इसमें भी उपरोक्त महीण रूप के समात ही सूत्र सख्या १-१८० और ३ ६ से क्रम से 'य' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति और पछी बहुबचनार्थ में प्राकृत मे 'ण' प्रायय की प्राप्ति होकर चहुण रूप सिद्ध हो जाता है।

'धण' सज्ञा रूप की सिंहि सत्र मरया है-५० में की गई है।

भालाभि संकृत तृतीया विभक्तिका बहुवचनान्त स्त्रीलगरूप है। इसका प्राकृत रूप मालाहि होता है। इसमें सूत्र सख्या २-७ से तृतीया विभक्ति के बहुउचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय भिस् के स्थान पर प्राकृत में 'हि' प्रथय की पाप्ति होकर प्राकृतीय रूप मालाहि सिद्ध हो जाता है।

गिरिपि संस्कृत सुनीया विभक्ति का बहुतचनान्त पुल्लिंग रूप है। इनका प्राकृत रूप गिरीरि होना है। इनमें सूत्र सल्वा ३ १६ में सून प्राकृत राष्ट्र गिरि में स्थित खत्य हुश्च स्वर 'हं' के खाने एतीया बहुवचनान्त प्रत्यय का मद्भाव होने में शिष स्वर 'हं' की पाष्टि खीर ३ ७ से सुतीया विभक्ति के बहुवचन में संस्कृतीय प्राप्तक्य प्रत्यय मिस के स्थान पर प्राकृत में 'हि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राकृतीय रूप गिरीरिह सिद्ध हो जाता है।

गुरुभि सस्क्रन हतीया विभक्ति का बहुन बनान्त पुल्लिग रूप है। इनका प्राक्षन रूप गुरुदि होता है। इनमें मून-सन्या ३ १६ से मून शब्द गुरु में स्थित छन्त्य हुश्य स्वर 'व' के छागे हतीया बहुवचनान्त प्रत्यय को मद्भान होने से दोध स्वर ऊ' को प्रास्ति छोर ३ ७ से हतीया विभक्ति के नहुवचन में सन्हापित्र प्रास्तव्य प्रत्यय 'मिम्' के स्थान पर प्राकृत में 'हि' प्रत्यय की प्रास्ति होकर गुरूपि रूप मिद्ध हो जाता है।

सिल्यों में मध्यन होनीया दिमित्तिका बहुवचनान्त स्त्रीतिंग रूप है। इनका प्राक्षन रूप सहीहि होता है। इपमें सूत्र मेंख्य ११८० में 'ख्' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति और ३-० से हतीया विमक्ति 'है यहुवचन में सक्ष्रतीय प्राप्तक्य पत्यय 'भिन्' के स्थान पर प्राप्तन में 'हि' प्रस्थय की प्राप्ति होका स्टिशिटी रूप सिद्ध हो पाला है।

ष्ट्रिम सस्कृत तृतीया विभक्ति का बहुबयनान्त स्त्रीलिंग रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप बहूरि होता है। इसम सूत्र-सल्या १ रद्ध से 'घ्' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति स्त्रीर बे-असे तृतीया विभक्ति कष्डुबयन में संस्कृतीय प्राप्त्रथ प्राय्य 'भिन् के स्थान पर प्राकृत में 'हि' प्रस्थय की प्राप्ति होकर पहुर्ति रूप मिठ हो चाता है र 'कय' रूप को सिद्धि सूत्र सदया १ १२६ में की गई है।

मालाया मस्टन पञ्चमी विभक्ति का एकप्रचानान्न फ्रीलिंग क्रव है। इप ह प्राप्त हर करे मालाउ, मालाहिन्तो होते हैं। इनमें सूत्र सख्या रेन्द्र सं श्रीर रे १२४ के निर्देश स वद्मना(र-४६ एकपचन में मेरहतीय शानस्य प्रत्यय 'हिम=श्रम=या ' के स्थान पर प्राप्तन प्र क्रम में 'का, इ.सन प्रत्यय का प्राप्ति हो कर कम स प्राप्तिय कप सालाओं, सालाउ, सालादिको विद्व हो जाने हैं।

युक्त्या संस्कृत पद्ममी विभाक्त का एकवचनान्त खीलिंग रूप है। इसके पाक्त हर हाँ। युद्धीव, बुद्धीहिन्तो होते हैं। इनमें सूत्र सख्या ३-१२ से मूल शक्त पृद्धि में स्थित भन्न इन्त 'इ' के आगे पद्ममा विभक्ति के एक्ष्यचनान्त प्रत्यर्था का महमाव होने स शुर्प स्वर्ग ई क्ष्टि " तत्परचात् ३ म में श्रीर ३ १२४ के निर्देश म पत्रमी विमक्ति क एक्षपन में मस्हनत्य गरापरप 'द्रति=ग्रत≈ग्रत्=ग्रान्' के स्थान पर प्राकृत में कम से 'खो, उ. हिन्तो' प्रायशं को पानि शंसक से प्राकृतीय रूप युद्धी भी, युद्धीत युद्धीहिन्ती, मिद्ध हा जाते हैं।

'थेणूओ, धेणुड, धेणुदिन्तो' रूर्वी की सिद्धि सूत्र मन्य हे हे प की गई है।

'आगओ' हव की सिद्धि सूत्र-मख्यः १ २०६ म की गई है।

मालाम्य मंस्कृत पद्मभी विभक्ति का यहुबचनान्त स्त्रःशिंग रूप है। इसके प्राहुत ह मालाहिन्ती, मालागुन्ती होते हैं। इनमें सूत्र-मण्या ३६ म पंत्रमा विभक्ति के बहुवधन में संदर्भ प्राप्तच्य प्रस्वय प्रथम क स्थान पर प्राप्तुन से क्षम स हिन्ता, सुन्ती प्रस्ववों की प्राप्ति होगर प्राप्तु व र मालाहिन्ती, माला सुन्ता प्रम से विद्व हा बारे हैं।

मिरिज्यः मस्कृत पद्ममा विमक्ति का बहुबचनान्त पुन्तिग रूप है। इमवा प्राकृत रूप ^{हिस्}रि हाता है। इसमें सूत्र मख्या ३ १६ में मूल रूप विदि में स्थित आसय हाथ १थर है का श्रीपाला र्ष। श्राप्ति स्त्रीर ३६ में पद्ममी विभक्ति क सहुवचन में संस्कृतीय शास्त्रव शस्य श्रद्ध र स्वार्टी प्राक्त म हिन्तो प्रायय का मानि होकर प्राकृताय रूप गिरीहिन्ती सिद्ध हो जना है।

'गिरिन्म' रूप का मिद्धि मूब-मन्या हे हैं है में की गई है।

मुखे मंत्रुत बर्सा विभक्ति का पक्षपानान्त पुल्लिम स्प है। इसरा प्राप्तुत रूप सुरावर् है। इसमें सूत्र संस्था ३ र० से चीर ३ १२४ के ल्हिंग स पद्या विभीषत के सरुपतन म संस्कृतक इस प्रत्यय 'बस्=चम' क स्पान पर प्राकृत में 'सन' प्रायप की प्राति होकट गुरुत्स मार्ग निक्र हो आता है

इडवः सम्बृत पत्नी विभवित का प्रवयनान्त नगु सम्जित रूप है। इसका ग्राकृत रूप है। होता है। इसम मृत् मध्या १ १८० म मूल संस्कृत रूप की में लिए में के स्थान पर १ के जा तपरचान् मूब-मंग्या ३१० से भीर ३१०४ के निर्देश से बच्ने विमाहन के प्रतवन में मान्यर

ें मुखस्य सस्कृत पष्टी पिमिक्त का एक्वचनान्त नपुमकर्लिंग रूप है। इमका प्राकृत रूप पेतुहस्त होता है। इसमें सूत्र सरवा १ प्राप्त के स्थान पर 'हे' प्राप्ति सत्परचात ३-१० से पष्टा विमक्ति के एक्वचन में 'स्त' प्रत्यय की प्राप्ति होकर सुहुस्स रूप मिद्ध हो जाता है।

ि गिरी सस्कृत सन्नमी विभक्तिक) एकवचनान्त पुल्लिग रूप है। इसका प्राफुत रूप गिरिम्म हिरोता है। इसमें सूत्र सख्या ३ (१ से और ३ १२४ के निर्देश से मूल प्राफुत रूप गिरि मे सन्नमी। । विभक्तिके एकवचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यक 'डि=इ' के स्थान पर माऊत में 'म्मि' प्रत्यय की प्राप्ति। । सो से रुपाकृतीय रूत *गिरिम्म* सिछ हो जाता है।

ग्रुपे संस्कृत सप्तभी विभक्ति का एकवचनान्तु पुलिंजग रूप है। इसका प्राकृत रूप गुरुस्मि होता है। इसमें सूत्र सख्या ३११ से ऋषेर ३१२४ के निर्द्धश में उररोक्त गिरिस्मि रूप के समान ही किंग प्रस्थय की प्राप्ति हो कर गुरुस्मि रूप सिद्ध हो जाता है।

गृष्नि व्यथवा दयनि मस्कृत सप्तमी विभक्ति का एकववनान्त नपुसक्तिंग रूप है। इसका प्राक्ठत रूप दाहिन्मि होता है। इसम सूत्र-सत्या १-१८० से मूल सस्कृत शब्द दिथ में स्थित 'घ व्यञ्जन के स्थान पर प्राकृत में 'ह व्यञ्जन की प्राप्ति, तस्त्रचात् ३११ से छोर ३१२४ के निर्देश से प्राप्त प्रोक्चत रूप दिह में सप्तमी विमक्ति के एकवचन म सस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'बि = इ' के स्थान पर प्राकृत में 'स्मि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर दक्षिम्म रूप सिद्ध हो जाता है।

मधुनि संकृत संप्तनी विभक्ति का एकवचनान्त नतु सकलिंग रूप है। इसका प्राकृत रूप महुन्मि होता है। इसमे सूत्र सख्या १-१८० से मूल संस्कृत राज्य मधु में स्थित 'घ्' व्यञ्जन के स्थान पर प्राकृत में ह' ग्यञ्जन की प्राप्ति, तस्वरचात् ३११ से श्रीर ३१२४ के निर्देश से वपरोक्त प्राकृत रूप दिहिन्म 'क ममान हो' मिन' प्रत्यय की प्राप्ति होकर महुन्मि रूप सिद्ध हो जाता है।

'गिरी' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ३२२ में की गई है।

गुरू प्रथमा बहुवचनान्त रूप की सिद्धि इमी सूत्र ? १२४ में ऊपर की गई है।

चिट्टन्ति कियापर रूप की मिद्धि सूत्र सख्या ?-?० की गई हैं।

गिरीओ रूप की सिद्धि एकववनान्त श्रवस्था में तो सूत्र सक्या हरह में की गई है, तथा वहुवननान्त श्रवस्था में सूत्र सख्या हरह में की गई है।

पुरे चौर गुरुम्य कम से मश्हत पद्मशी विमक्ति के प्रक्रवचनात श्रीर बहुव रनान्त पुर्लितप स्वार्थ इन दोनों का प्राकृत रूपान्तर एक जैमा ही—(समान रूप हो) गुरुको होता है। इममें सप्र मख्या ३-१२ से और ३-१६ से कम मे एकवचन में और बहुवचन में मृन शाह गुरु में लिन कराह स्यर 'ख' को बीच स्वर 'झ' की प्राप्ति, तत्वश्चात स्वय सख्या दे-८ से खीर देह से तथा इ विश्व कें में प्राप्त प्राप्त रूप 'गुरू' में पद्ममी विभक्ति क एकवचन में मन्त्रताय प्राप्तस्य प्रत्यय इक्टिया म्यान पर प्रायत में 'दो = श्रो' प्रस्यय को प्राप्ति पूर्व इसा विभक्ति के बहुबचन में सर्हर्श्व दारमर™ भ्यस' के स्थान पर भी हो = छो प्रत्यय को प्राप्ति हो कर होती चचनी मा मतात व्यित बला प्राप्त रूप गरओं मिद्र हो जाता है।

आगओ कियापर रूप की सिद्धि सब मह्या १ २०९ में को गई है। 'गिरीण' रूप को मिदि हमी सब है-१६४ म उपर की गई है। 'गुरूण' रूप की मिदि इमी मूत ह-१३४ म उपर की गई है। 'धण' र प की सिद्धि सन्न-संख्या है-५० में की गई है। १२८॥

न दीवों सो ॥ ३-१२५॥

इत्टन्तपोरथज्ञित्-शम् छम्पादेशे को इत्यहिमन् परतो दीर्पोन माति ॥ धीरा वाउको ॥ गो इति तिम् अगी । अगीओ ॥

क्यरं --इकारान्त उकारान्त शब्धं में मृत्र मंख्या ३-२२ के अनुमार प्रथमा बीर्धः विमक्ति के बहु क्यन में संस्थती प्रान्तव्य प्रत्यव 'तम खीर 'शम' के स्थान पर पाइल में 'ले' क्षान मान्ति होते पर इन शक्तों में स्थित चास्य हुन्य स्वर 'इ' बाधवा 'व' को श्रीपत्व की प्रानि नहीं है है इसी प्रकार म मृत्र संस्था २-२३ क चतुमार दशी इकागन्त और त्रकाश त शहरों में पंद ॥ विर्यन एक यथा में माहतीय पाप्तस्य बत्यय । इति चन' के स्थान पर प्राष्ट्रा म 'ता प्रस्वय की पां'' ! पर अपत्त्व रश्य स्वर इ कथवा 'त्र' मी दार्थाय की प्राप्ति नहीं होती है। हदाहरण इस प्रकार धानकः= धामिता, धार्मन = धामिणो । यायव = धारणो, वायन = वारणा दया क ब्रशहरण इस प्रकार है - अम्ते = समित्ती सीम वायी = वावकी, हावादि!

बदन - "क्ट विमित्रतयों में श्रीर क्ता शारी में 'ली' प्रत्यव का सद्माव होन वर सम्ब रवर की दीचना की प्राप्ति नहीं होता, ऐमा बची बहा गया है ?

उत्तर — वर्षेति यदि बन्नत विश्वविद्यों में 'ना' प्रायय का गदमाव ारी ही हर कार्त रहा है का राह्मां करोगा ऐमी हुशा में इकाशन्त की। बकाशन्त सारन में लिया कारव झाल श्वर का करें। क् हारित हा भागों है। बदाहरस्त इस अकार है - बागत ह मागो; हार्गाह, - बागा, मार्थ ह हान्यी 'बादर = बाफ, बाद्यु = बाड; बादा = बाडबी, सारि ।

'अधिरणी बाउणा' और 'असी, रूपों हो मिद्धि मृत मन्या है कि म की मां है।

अरने सस्कृत पत्रचमी विभक्तिका एक वचनान्त पुल्लिंग रूप है। इसका प्राकृत रूप श्रीगिश्रो होता है। इसमें मत्र सख्या २ ७= से मूल शब्न 'खिनन' में स्थित 'न' का लोप, २ नह से लोप हर 'न' के ,पश्चात रोप रहे हुए 'ग्' को द्वित्य 'ग् ग्न' की प्राप्ति, ३-१२ से श्रीर ३-१२४ के निर्देश से पाप्त रूप · श्रांगा' में स्थित श्रन्त्य हुस्व स्वर 'इ' के श्रागे पचमी विमक्ति के एक वचन के प्रत्यय का सदुभाव होने से दोई 'ई' को प्राप्ति श्रीर ३ = से तथा ३-१२४ से प्राप्त प्राकृत रूप 'श्रागी' में पचमी विभक्तिके एकवचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'ङसि=श्रस' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'दो=श्री' प्रत्यय की प्राप्ति होकर अरगीओ रूप सिद्ध हो जाता है। १२४ ॥

डसे लुक्॥ ३-१२६॥

श्राकारान्तादिभ्योदन्तात् प्राप्तौ इसेर्लुग् न भवति ॥ मालतो । मालायो । मालाउ । मालाहिन्तो श्रागश्रो । एव श्रम्मीश्रो । वाउस्रो । इत्यादि ॥

अर्थे - प्रावृत्त में पञ्चमी विभक्ति के एक्षचन में खकारान्त शब्नों के समान ही सूत्र मख्या २ १२४ फे निर्देश से श्राकारान्त, इकारान्त उकारान्त पुल्लिंग श्रयंवा स्त्रीलिंग शब्दों में सस्क्रतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'इसि=श्रम्' के स्थान पर प्राकृत में सूत्र सख्या ३-= से प्राप्तन्य प्रत्यय 'त्तो, दो, दु हिन्तो' का होप नहीं हुआ करता है। उदाहरण इस प्रकार है —मालया आगत =मालत्तो, मालाओ, मालाउ माला हिन्तो श्रागश्रो । इमी प्रकार से इकारान्त, उकारान्त शब्दा के उदाहरण यों हैं —श्रग्ने =श्रग्गोश्रो=श्रग्न से इषादि। घायो =बाऊन्रो = षायु से इत्यादि।

मालाया सस्त्रत पञ्चमी एकषचनान्त स्त्रोलिंग रूप। इसके पाकृत रूप मालत्तो, मालाग्री, मालाउ, मालाहिन्तो होते हैं। इनम से प्रथम ऋष में सूत्र सख्या १ ५ से मूल शर्र माना म स्थित धन्त्य भैर्षे स्वर 'छा' के स्थान पर हन्त्र स्वर 'श्र' की प्राप्ति, त प्रधात सूत्र सख्या ३-८ से स्त्रीर ३-१२४ के निर्देश से तथा ३ १२६ के विधान से पछमी विभक्ति के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'इसि=छम' फ स्थान पर प्राकृत में लो' प्रत्यव की प्राप्ति हो कर प्रथम रूप मालात्ता रूप सिद्ध हो जाता है।

'मालाओ, मालाउ, गालाहिन्तो' रूपो की सिद्धि सुत्र सख्या है १२४ में की गई है। 'आगओ' मियापट रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ २०९ में की गई है।

'अग्गाओ' रूप की मिन्द्र सुध सख्या ने १न्थ में की गई है।

षायो सस्यत पद्धनी एकवचनान्त पुल्लिंग रूप है। इसका प्राग्नन रूप बाऊची होता है। इसमें हैं। सख्या १ १७० से मृत शहद 'बायु' में थित 'यु' व्यञ्जन का लीव, ३ १२ से माप्त रूप 'बाड' में रियत भारत हाय स्वर 'अ के स्थान पर पद्धमी एक उचन के प्रत्यय का सद्भाव होने में दीर्घ स्वर 'क' की प्राप्ति: ^{क्ताश्चात} १ = से प्राप्त रूप वाऊ में पछामी विभक्ति के एकवचन में नग्छतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'हमि=स्वम' ^फ स्थान पर प्राकृत में 'दो≔को' प्रत्यय की प्राप्ति होकर चाऊओं रूप मिद्ध हो ज्ञाना है। १२६ '।

भ्यसर्च हि: ॥ ३-१२७॥

श्राकारान्वादिस्यो दन्वत्रत् प्राप्ती स्थानी हमेश्र हिने भन्नवि ॥ मालादिन्वी (भाजानून एर्ज श्रम्गीहिन्तो । इत्यादि ॥ मालाश्रो । मालाउ । मालाहिन्तो ॥ एर्ज श्रम्भीया । इतः (

वर्ष -प्राष्ट्रत मापा क पदामी विभक्ति के एक्ष्यपन में और बहुबचन में ऋशागन्दर्रेश समान हो सद-मख्या ३ १२४ के निर्देश से चाकारान्त, इकारान्त, वकारान्त प्रस्थित चदश की शन्त्री में क्रम से संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'हिम = ब्रस' क्रीर 'श्यत' क स्थान पर प्राकृत में स्वरण १ म से प्राप्तरय प्रत्यय 'तो, हो, दू, हि हिन्ती शीर १ ह से 'तो, हा, दू, हि, हिन्ता, मृन्ता' में म'र शत्यय की प्राप्ति नहीं होती है। उदाहरण इम प्रकार है —मालाया =मानायी, मानाइ, सामां स्टा माला सं, इत्यादि । मालाभ्यः=मालाहिन्तो, मार्लासुन्तो = मालाश्री से, इत्यादि । धरिनभ्य = धर्मी । = थानियों से, इत्यादि । थान = धार्माश्रो = श्रीन से, इत्यादि ॥

'मालाहिन्तो' और मालामुन्तो सर्पा की सिद्धि मन्न महवा है १६८ में की गई है।

अस्तिन्य' संख्त पद्में वे बहुवचनान्त पुलिंग रूप है। इनका प्राहृत का सम्बंधिती ए है। इसमें सूत्र मंख्या २ ७८ से मूल शस्द 'खिनि' में स्थित 'न' ब्याझन का आप, स्टिश्में सेंग्रू 'न्' व्यञ्जन क परपात् राप रहे हुए 'ग' का द्वित्व 'गग' की प्राप्ति, ३-१६ स प्राप्त कप 'खण है रियत कान्त्य द्वरण स्वर 'इ' के क्यांग पद्मनी विभक्ति के यहुवपन के प्रत्यय का सद्गाव शर्वे मर' स्वर 'ई' को प्रांध्य चीर ३६ म तथा ३६न्छ के निर्देश म प्राप्त रूप चर्मा में ^{९५}' विभवित् क बहुवचन म प्राष्ट्रन मं 'हिन्ती प्रत्यय की प्राप्ति हाक्र अमारित्नी हर विदर aiai É i

मालाओ' 'मालाउँ चीर 'मालाहिन्ती' रूपों की निद्धि मन्न नंख्या है रेन्द्र में बी वर्द है। अम्मीओ हव की सिद्धि सूत्र संख्या है रिनेन में की गई है । ॥ १२० ॥

हे हैं: 11 3-१२८ ॥

व्याकारान्तादिस्यो दन्तवन् प्राप्तां होर्डे न मत्रति ॥ व्यामास्मि । ^{बार्डास} हहिस्सि । महस्मि ॥

भर्थ -- प्राप्टन भाषा क नव्या विभवित के प्रकर्मन में गुर मेंग्रण ३ १६ क महुन क्षकारान्त शब्दी में मेंसूर्तीय प्राप्तस्य प्रथम 'डिन्ह' क स्थातः पर माठत में माध्य राज वास वास वि बी प्राप्ति प्राप्ताराञ्च, इहासन्त, प्रशासन प्राप्ते में नहीं हुमा करने हैं। इस बारासर स्पृति में मृषु मध्या ? १२४ के निर्देश में केंदल एक प्रत्यय 'शिय' की ही मतभी दिमाणि के एवदबंद में डार्ट रोता है । वदारश्य इस प्रकार है -धाती = धीमिय-धीम में, बाबी-बाविमा एक स्टा दव'त=र्शिन=र्श में चौर मणुनि=नदुग्नि=गयु में, दर्जार्श

असी सरकृत मध्तमी विभाक्ति का एकव बनान्त पुलिनग रूप है। इसका पाकृत रूप श्रामिम होता है। इमर्पे सुत्र सख्या २ ०० से मृल शब्द आनित में स्थित न् व्यञ्जन का लीव, २-८६ से लोव हुए 'न्' क पश्चान रोप गहे हुए 'ग्' व्यञ्चन की द्विरम 'ग्ग्' की प्राप्ति, तत्पश्चान सूम सख्या ३-११ से श्रीर ३-१२४ क निर्देश से प्रोप्त रूप श्रामिन में सप्तमी विमक्ति के एक उत्तन में सरक्षतीय प्राप्तव्य प्रत्यय डि = इ' के स्थान पर प्राकृत में 'मिम प्रत्यय की प्राप्ति ही कर अरिग्रामिम रूप सिद्ध हो जाता है।

षायो संस्कृत संप्तम विभक्ति का एकपचनान्त पुल्चित रूप है। इसका प्राकृत रूप बाउम्मि होता , हैं। इनमें सूत्र सख्या ११०० से मून शब्य पायु में रिधत 'यु' व्यञ्जन का लोप, तस्पश्चान् पाप्त रूप वाड . में सूत्र सख्या ३-९१ से श्रीर ३ १२४ क निर्देश में सन्तमी तिमक्ति के एकवचन में संस्कृतीय प्राप्तब्य , प्रत्यय 'ङि≂इ' के स्थान पर प्राकृत में ' मेन' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर *चात्राम्म* रूप सिद्ध हो जाता है।

'दह्यिम्म' श्रीर 'महुम्मि' रूपों को भिद्धि सूत्र सख्या है १२४ में की गर है। १२८ ।,

एत ॥ ३-१२६ ॥

श्राकारान्तादीनामर्थात् टा-शस्-िमस्-स्थम्-सुप्सु परतो दन्तरत् एत्व न भरति ॥ हाहाण क्य ॥ मालात्रो पेच्छ ॥ मालाहि कय ॥ मालाहिन्तो । मालासुन्तो श्रागयो ॥ . मानासु ठित्र ॥ एव ग्रम्मिणो । नाउसो । इत्यादि ॥

अर्थ — अकारान्त शब्दों में तृतीया विमक्ति के एकवचन में, द्विनीया विमक्ति के एकवचन में, चनाया विभक्ति के बहुउचन में, पद्ममो विभक्ति के बहुउचन में श्रीर सप्तमी विभक्ति के बहुउचन में सूत्र संख्या ३ १४ से तथा ३ १४ से उक्त विभक्तियों से संबंधित प्रत्ययों 🚮 प्राप्ति के पूर्व प्रकारान्त शब्दों में स्थित अन्त्य स्वर 'स्त्र' क स्थान पर जैसे 'ण' स्वर को प्राप्त हो जाता है, नैसी 'ए' की प्राप्ति इन धाकारान्त, इकारान्त, उकारान्त खादि पुल्चिम खथमा सीलिंग शब्हों में स्थित खन्त्य स्वर 'खा, ६, उ^{र आ}दिक स्थान पर सूत्र चख्या ३-१२४ के निर्देश से उक्त विमक्तियों के प्रत्ययों की **प्राप्ति होने** पर नहीं हुना करती है। उदाहरण इम प्रकार हैं -हाहा कृतम्=ाहाण कय = गन्पर्य मे ख्यावा रेव में किया गया है, इन उदाहरण में आकारात शब्द हाहा में छतीया विभक्ति से मचिवत 'ण' पत्यय की प्रास्ति होने पर भी श्रकारान्त शब्द 'वच्छ + स्य = वच्छेण के समान शब्दात्य स्वर 'आस' क स्थान पर ए' की प्राप्ति नहीं हुई है। माला परव = माला को पेन्द्र=मालाक्षां को दक्षो, इस उदाहरू ए में श्राहारान्त शहर 'माला म द्विनाया विमक्ति में सबधित 'स्रो' प्रत्यय की शक्ति होने पर मा भकारान्त शब्द (वब्द्र + (शस =) लुक'=बच्दे के समान शब्दांत्य स्वर (श्रां) के स्वान पर 'ण' की मान्ति नहीं हुई है। मालाभि जुतम्=मानाहि यय ≕मालाओं से किया हुआ है, इस टप्टान्त में भी 'चनय स्वर था' के स्थान पर ए' की शास्त्र नहीं हुई हैं। मोलाभ्य श्रागन =मालाहिन्तो, मालामुन्छो

खागबी=मालाओं से खाया हवा है। इस पत्र रा बहुबबनान्त एशहरण में मी 'बर्बद्देशनी, क्रिक्ट् के समान धन्त्य स्पर 'धा' क स्थान पर 'ए' की प्राप्ति नहीं हुई है। मालास क्षित्रमू = माण कृष्य =मालाकों पर रमया हुआ है। इनमें मा बच्छेन के समान क्रम्य स्वर 'का' मात पर ए स्व नहीं हुई है। इसी प्रशास म इकारान्त, चकाशात शाली का वकाक बताहरण इस दक्षा है-थानीन = थांगाएं। = श्रानियों की, इस नदाहरण म द्विनीया विभवित ए बहुवचन में 'बर्गे इ सा श्रमि =श्रमि शन्दान्त्य स्वर 'इ' ये स्थान पर 'o' या महमाय नहीं हवा है। यावर =शार्य ह यायुक्तों का, इसमें भी 'बच्छे' के मनान ।हुनाया बहुवचना मह प्रन्यव का सुद्रमाय हीन कर है बाय = बात शहरात्य स्वर 'त' के स्थान पर 'ग' की प्राप्ति नहीं हुई है। वी कन्य उत्पार है के कल्पना स्थापीय पर सेना चाहिये. लेमा सदेन उत्तिहार ने पृत्ति में प्रश्त शहर इ पाहि से दिया है।

द्याद्याण' रूप की निद्धि मुख सरया है रेरे४ में की गई है।

'क्यं रूप की सिद्धि सुत्र-संख्या १ १२६ में की गई है। .

'मालाभा' रूप की सिद्धि सुत्र महत्या है है में की गई है ।

'केरत' इव को मिदि ग्रंप संख्या १-२३ में की गई है।

'मालाभि मंस्टन एनोया बहुव रनास्त स्त्रीविष रूप है। इसका अक्टन रूप मानाहि होत्सी' इसमें गुत्र संख्या देन्य से तथा दे १२४ के निर्देश से हुनीया विस्तित के महुनयम में संग्रुपीय प्राप्ति व्रावय 'मिम' के स्थान पर प्राष्ट्री म 'हि' पायप की प्राप्ति हो हर मालाहि रूप विश्व ही आधी है।

mb Ku की बिद्धि गढ सम्या ? टेन्ड में की गई है।

'मालाहिन्स और मामासुन्ती' रवें की विद्वित पूर महवा *१-१२*७ है की ता है ।

'भागभां' रूप की मिद्धि गुत्र मन्या रे २०९ में की गई है।

मालालु सरहत मन्त्रवी बहुवयास्त्र स्वर्तिग रूप है। इतका बाहुत रूप भी बालानु हीतः है। इससे मुद्र मंत्रा ४ ४४= से सन्त्रमी विवस्ति क बहुववन में मंत्र तीव वालव्य वस्त्व 'तुर अस्त्र है ही पातन में मी 'सु' प्रमय बो पा प्त हाहर मातामु मय विद्य ही शाला है।

र्वत्र अनुका मिकि युष्टर्माया है से में बर गई है।

भारतियों और बाउमी रही की सिद्ध बुद महादा है है। में के री १३-१६६ छ

11 3-2 / दिवननस्य ४%

मयांनी शिम हीतो स्पादीतां

मार्गि ॥ हो देख

इम्बन्त । हुरे इसन्ति । दंदि । देदिनी

ा अर्थ -- सभी प्रकार के शब्दों में सभी विभक्तियों के प्रत्ययों की सयोजना होने पर मस्क्रतीय प्राप्तव्य द्विवचन के प्रत्ययों के स्थान पर प्राकृत में बहुबचन के प्रत्ययों की प्राप्ति हुआ करती है । इसी प्रकार से सभी घातुओं में सभी प्रकारों के श्रथवा काल के प्रत्ययों की सयोजना होने पर मस्कृतीय प्राप्तव्य द्विवयत-घोषक प्रस्वयों के स्थान पर प्राकृत में बहुवचन के प्रत्ययों की प्राप्ति हवा करती है। प्राकृत मापा में सस्कृत मापा के समान द्वित्रचन बोधक प्रत्ययों का श्रमाव है, तर्तुमार द्वित्रचन के स्थान पर न्त्राकृत में बहुबचन का ही पयोग हुन्ना करता है। यह सर्व सामान्य नियग समो शब्दों के लिये तथा सभी . ।धातुर्थों के लिये समझना चाहिये। इम सिद्धान्तानुमार प्राफ़त में केवल दो ही बचन हैं एकवचन श्रीर षहुरचन के कुछ उदाहरण इस प्रकार है —द्वी श्रयवा हे कुठन =दीरिण लुणन्ति =दी करते हैं। इस उदाहरण में यह प्रशित किया गया है कि मस्कृत में कुहत कियापद रूप द्वित्रचनात्मक है, जबकि प्राकृत में कुणुन्ति किया पर कर बहु बबनात्म ह है, यह स्थिति बनजाती है कि प्राकृत में दियचन का अभाव हो कर उनके स्थान पर बहु उचन की ही प्राध्ति होती है। ही अथवा है कुकत' = दुवे कुणन्ति = वे दी दी (कामों) को करते हैं। इस उदाहरण में 'डी श्रयना हे' पर दि बचनात्मक एव दिलीया विभक्ति वाले हैं, जयिक इनका प्राकृत रूपान्तर 'दुचे' पर बहुवचनात्मक श्रीर द्विनीया विमन्ति वाला है । कुरुत किया पर सस्तृत में द्विवचनात्मक है, जबकि प्राकृत में इसको रूपान्तर बहुवचनात्मक है। यन्य टप्टान्त इस

भकार ह्		
[।] द्र ि भाक्ति≈सस्कृत दिवचनात्मद	б	भाकृत चहुएचनात्मक
मृताया द्वाभ्याम		दोहिं=दा से।
पचमी द्वाभ्याम् ।	=	दोहिन्तो, हो सुन्तो = दो से।
सप्तमी द्वयो	±	दोसु=दो में, दो पर ।
प्रथमा हस्तौ	=	हत्या =दो हाय ।
दिताया हस्ती	=	इत्या ≃ दो हाथों को ।
मयमान्यानी	=	षाया = दौ पँर।
दिवीया पादी	=	षाया = दी वैसे की ।
मयमा-सत्तको	=	थण्या =दी स्तन ।
दितीया स्तनकी	=	थणया≕ोर्ने स्तर्ने को ।
मयमा नयते (नपु)	=	नयणा (पु०)=दो धासे।
द्विनीया नथने (सपु)	=	नयणा (पु ०)=होनों घोषां को ।

पों सरकत भाषा की व्योता से प्राकृत भाषा में रहे हुए वचन संबंधी अन्तर का नगम सेना

'होंगिया' रूप की मिद्धि सूत्र मख्या है १२० में की गई है।

षाहिय ।

पुरुत संस्कृत यर्तनानकाशीन द्वित्रधनात्मक प्रथम पुरुष का कियावर सर्व है। १९८८ स्वान्तर कृषान्तर क्यान्ति राता है। इसमें मूत्र मध्या ४ १४ से संस्कृतीय मूल घातु तुरुम् वह कावत प्रापृत में 'छण व्यारेश की प्राप्ति, रे-१२० स द्वित्रधन क स्थान पर बहुत्रधन के प्रयम का श्री रे १४० से यतमान वाल म प्रथम पुरुष क बहुत्रधनाय में 'न्ति' प्रथप की प्राप्ति होत्रकृति स्वान्ति हो प्राप्ति होत्रकृति

दर्षे रूप की मिद्धि मूत्र महायो ह-१९० म की गई है।

'कुणन्ति वियापर रूप की मिद्धि इनी पूत्र में उपर की गई है।

हास्त्रास् संस्कृत स्निय विभिन्न का द्वित रागमक संग्या रूप विशेषा वर है। इनसे भन्न रूप होहि होना है। इनसे सुत्रम क्या के-११६ से संस्कृत के मून शहर दि के स्थान वर प्राक्त में 'हें। की क्यारण प्राप्ति, तत्वरचान १० में स्त्रीर ३-१२४ के निर्देश से नया व ११० क विचान से इ हो प्राप्त रूप 'दा' म स्त्राया विभिन्ति के सदुक्यन म संस्कृताय शास्त्रय प्रस्यय भवन् कराति हो। प्रस्यव की प्राप्ति होका 'दोसिं' रूप सिद्ध हो जाता है।

'होहिन्तो' रूप की मिद्धि मूत्र मन्या है ११९ में की गई है।

हाम्याम संस्कृत बद्रामा विस्वित का दिक्षनारमक संख्या एवं विशेष ए पर है। हनका वर्ष कर तेत्र स्वाह स्वा

होंसु रूप की मिद्रि गुत्र मन्या हे १२९ में का गई है।

पाड़ी संस्कृत की प्रविधानिक के किया का स्पूर्ण अन्य सहया है रहेकों के प्रविधानिक प्रविधानिक के स्वाहत

से लोप हुए 'द्व्यञ्जन के परचातृ शेप गहे हुए 'स्र' स्वर क्रेस्थान पर 'य की प्रास्ति, ३-१३० से दिवयन के स्थान पर बहुबचन के प्रयोग की आहेश-गानित, ३-१२ से प्राप्त शहर 'पाय' में स्थित श्रान्य हाल स्वर 'श्र' के स्थान पर प्रथमा दितीया विमन्ति के चहुवचन के प्रत्यय का मदुमाव होने से दोर्घ स्वर 'त्रा' की प्राप्ति और ३-४ से प्रयमा तथा द्वितीया विमक्ति के द्वित्रवन में क्रम से संस्कतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'थी' तथा और के स्थान पर प्राकतमें ३ १३० क्रे निर्देश से श्रादेश प्राप्त पत्यय 'जस-शस्' का लोप होकर पाया रूप सिद्ध हो जाता है।

स्तनकी संस्कृत की प्रथमा एव द्वितीया विमेक्ति के द्वित्रचन को पुल्लिंग हर है। इन हा प्राकृत रूप थणया होता है। इसमें सूत्र सख्या-२-४५ से 'स्त' के स्थान पर 'थ की प्रान्ति, १ २२८ से 'न' के स्थान पर ण' की प्राप्ति, १-१७० से स्वार्थक प्रत्यय 'क' का लोप, १-१८० से लोप हुए 'क' व्यव्जन के परचात् रोप रहे हुए 'श्रो' सें स्थित 'श्र' क स्थान पर 'य' की प्राप्ति, ३-१३० से द्विवचन क स्थान पर बहुवचन कं प्रयोग की आदेश प्राध्ति, ३-१२ से मून संस्कृत शब्द 'स्तनक' से प्राप्त प्राकृत शब्द 'थणय' में स्थित श्रात्य हरत रार 'ख के स्थान पर श्रामे प्रथमा-द्विताया विभक्ति के बहुतचन के प्रत्यय का सदमाव होने से दीर्घ स्वर 'क्या' को प्राप्ति और ३-४ से प्रथमा एउ द्वितीया विमक्ति के द्विवचन में कम से संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'स्त्री' एवं 'स्त्रीट' क स्थान पर प्राकृत में ३-१३० के निर्दश से श्रादेश प्राप्त प्रत्यय 'जस्=शस' का लोप हो कर थणया रूप सिद्ध हो जाता है।

नयने सस्कृत की प्रथमा एव द्वितीया विमक्ति के द्वित्र उन का नपु सकलिंग रूप है। इसका प्राकृत रूप नयणा होता है। इसमें सूत्र सट्या १ २२= से मूल सहजुत शब्द 'नयन' में स्थित द्विनोय 'न' के स्थान पर 'ण' की प्राप्ति, । ३३ से प्राकृत में प्राप्त शब्द 'नयण की नपु मकलिंगश्व से पुल्लिंगत्व की प्राप्ति, रे दि॰ से द्विवचन के स्थान पर बहुबचन के प्रयोग की छादेश प्राप्ति, र देर से प्राप्त प्राक्तन शब्द 'नयण' में स्थित अन्त्य हस्य स्वर 'श्र' के स्थान पर आगो प्रथमा द्वितीया विमक्ति के बहुवचन के प्रत्ययों का सद्माव होने से वीर्घ स्वर 'ख्रो' की प्राप्ति खीर ३-४ से प्रथमा एव द्वितीया विमक्ति के द्विवचन में क्रम से प्राप्तब्य नपुसक्तिंग बाधक प्रत्यय 'ई के स्थान पर प्राकृत में २-१३० के निर्देश से तथा १३३ के विधान से श्रादेश प्राप्त प्रत्यय 'जस शस्' का लोप होकर नयणा रूप सिद्ध हो जाता है। १३०।।

चतुर्थ्याः पष्ठी ॥ २-१३१ ॥

चतुर्थ्याः स्थाने पष्ठी भवति ॥ मुणिस्म । मुणीख देह ॥ नमो देनसम । देवाल ॥

अथ -प्राकृत मापा में चतुर्यी विमक्ति बोधक प्रत्यों का अभाव होने से चतुरी विमक्ति को संयोत्तना के लिये पर्न्या विभक्ति में प्रयुव्यवान प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है। तर्नुमार पत्रयी क स्थान पर पर्धाको सद्भाव होकर सदर्भ के चतुनार चतुर्थी का धर्य निकाल लिया जाता है। हराहरण इम प्रकार है -- मुनये = मुणिहल = मुनि के लिये। मुनिध्य दर्ते = मुणीण देइ = मुनियों के लिये

कुरत संस्कृत वर्तमानकालीन द्विवचनात्मक प्रथम पुरुष का कियापर रूप है। समारह रूपान्तर क्रुस्पन्ति होता है। इसमें सूत्र सख्या ४ ६४ से सस्कृतीय मूल, धातु हुनुन = ५ हात्रक प्राकृत में 'कुण' श्रादेश की प्राप्ति, ३-१३० से द्विवचन के स्थान पर बहुवचन के प्रयाग की शर और ३ १४२ से बतमान काल म प्रथम पुरुष के बहुवचनार्थ में 'नित' प्रस्थय की प्राप्ति होता हुरीन रूप सिद्ध हो जाता है।

दुवे' रूप की सिद्धि सूत्र सख्यों ने १२० में की गई है।

'कुणन्ति' क्रियापद रूप की सिद्धि इसी सूत्र में ऊपर की गई है।

हाभ्याम् सरकृत तुनीया विभवित का द्विव ननारमक सख्या रूप विशेषण पर है। इपहा गई। रूप दोहिं होता है। इनम सूत्रस ख्या ३ ११६ से मस्कृत के मून शब्द 'हि' के स्थान पर प्राकत में 'है स की आदेश प्राप्ति, सत्परचात् ३ ७ से और दे-१२४ के निर्देश से तथा ३ १३० के विधान संप्राहरन प्राप्त रूप 'दी' में सुनोया विभक्ति के बहुबचन में मस्कताय प्राप्तव्य प्रस्यव भ्याम्' कस्थान वर्गी प्रस्थव की प्राप्ति होकर 'दोहिंग रूप सिद्ध हो जाता है।

'होहिन्तो' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ३ ११९ में की गई है'।

द्वाभ्याम् संस्कृत पञ्चमो विभक्ति का द्विवचनात्मक मख्या ऋष विशेष १ पर है। इनहां शहू रूप दोसुन्ता है। इसमें सूत्र सख्या ३११६ से सस्कृत के मूल शब्द श्रद्ध के स्थात पर प्राकृत में श रूप की श्रादेश प्रोप्ति, तत्परचात ३६ मे ब्बीर ३१२४ के निर्देग से तथा ३१३० के विशा^{त ह} प्राकतीय प्रान्त रूप टी' में पञ्चमी विभक्ति के बहुबवन में मंस्कृतीय प्रास्तव्य प्रस्यय 'भ्याप्' हाना पर 'सन्तो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर 'दोसुन्तो' रूप सिद्ध हो जाता है।

होंस' रूप की सिद्धि सूत्र मरया ३११९ में की गई है।

हस्ती संस्कृत की प्रथमा एव द्विताया विभक्ति के द्विषयन का पुनित्रग रूप है। इवि प्राकृत रूप हत्या होता है। इसमें तूर सख्या २ ४८ से स्त' के स्थान पर'थ की प्रास्ति, रूप से वि 'थ' को द्वित्व 'थ्य' की प्राप्ति २ ६० से प्राप्त पूर्व 'थ' के स्थान पर 'त' की पार्ति ३ १३० र हिवचन के स्थान पर बहुवचन के प्रयोग को खारेश पानित, ३ १२ में प्राप्त शब्द 'हरवा' में विवह भ द्वस्य स्वर 'ख' के स्थान पर आगे प्रथमा द्विनीया के बहुवचन के प्रत्यय का सद्भाव होने से दीवारी 'आ' का प्राप्ति श्रीर ३४ से प्रथमा तथा द्वितीया विभक्ति के द्विपतन में कम से सङ्गाव श^{न्तर} प्रत्यय 'बी' तथा ब्रीट' के स्थान पर प्राकृत में ३-१३० से ब्राहेश गाल प्रत्यम 'जम्बान' का ह हाहर हत्था रूप सिद्ध हो जाता है।

पादी सरठत की प्रथमा एवं दितीया विभक्ति के द्विवयन का पुल्लिग इन है। इतहा वाह रूप पाया होता है। इनमें यूत्र सल्वा १-१०० से मूल शब्द बाद में श्वित 'दू व्यव्जन का सोवा १-१-

स्तनकी सस्कृत की प्रथमा एव द्वितोया विमेक्ति के द्विवचन की पुल्लिंग रूप है। इस का प्राकृत रूप यणया होता है। इसमें सूत्र सख्या २-४५ से 'स्त' के स्थान पर 'ख' की प्राप्ति, १ २०६ से 'त' के स्थान पर ए' की प्राप्ति, १ २०६ से 'त' के स्थान पर ए' की प्राप्ति, १-१०० से लोप हुए 'क' व्यव्जन के परचान पर ए' की प्राप्ति, १-१०० से हिवचन क स्थान पर चहुवचन के प्रयोग की श्रादेश प्राप्ति, ३-१२ से मून सम्कृत शब्द 'स्त्राक' से प्राप्त पाकृत शब्द 'थणय' में स्वित अन्य हस्व स्वर 'क्ष' के स्थान पर खाने प्रथमा-द्विताया विमिक्त के बहुवचन के प्रयय का सद्माय होने स दीर्च स्वर 'ख्या' की प्राप्ति और २-४ से प्रथमा एव द्वितीया विमक्ति के द्विवचन में कम से संस्कृतीय प्राप्तक्य प्रस्थ 'ख्या' एवं 'ख्रीट' के स्थान पर प्राकृत में ३-१३० के निर्देश से ख्रादेश प्राप्त प्रस्थय 'ख्री' एवं 'ख्रीट' के स्थान पर प्राकृत में ३-१३० के निर्देश से ख्रादेश प्राप्त प्रस्थय 'ख्री' एवं 'ख्रीट' के स्थान पर प्राकृत में ३-१३० के निर्देश से ख्रादेश प्राप्त प्रस्थय 'ख्री स्वर्ण रूप सिद्ध हो जाता है।

नपने सस्कृत की प्रथमा पव द्वितीया विमक्ति के द्विवधन का नयु सक्तिंग रूप है। इनका प्राष्ठत रूप नयणा होता है। इनमें सूत्र सख्या १ २२ से मूल सक्तृत शब्द 'नयन' में रियन द्विनोय 'न' के स्थान पर 'ण' की प्राप्ति, १ ३३ से प्राष्ठन में प्राप्त शब्द 'नयण को नयु मक्तिगश्व से पुल्तिगश्व की प्राप्ति, १ १३० से द्विवधन के स्थान पर बहुवधन के प्रयोग की आदेश प्राप्ति, १-१२ से प्राप्त प्राप्तुन शब्द 'नयण' में श्वित खन्त्य हृत्व स्वर 'ख' के स्थान पर आगे प्रथमा द्वितीया विमक्ति के बहुवधन के प्रत्ययों का स्प्राप्त होने से दीर्घ स्वर 'खा' की प्राप्ति और १-४ से प्रथमा पत्र द्वितीया विमक्ति के द्विवधन में क्रम से प्राप्तव्य नयु सक्तिंग बोधक प्रत्यय 'ई के स्थान पर प्राप्तव्य स्वर सिद्ध हो जाता है। १२०॥ विधान से खादेश प्राप्तव्य 'जस शक्त को लोग होकर नयंगा रूप सिद्ध हो जाता है। १३०॥

चतुर्थ्याः पष्ठी ॥ ३-१३१ ॥

चतुथ्याः स्थाने पष्ठी भवति ॥ मुखिस्त । मुखीख देह ॥ नमी देवस्त । देवाख ॥

भय —प्राकृत भाषा मे चतुर्थी विमक्ति बोधक प्रत्ययों का द्यमाय होने से चतुर्भी विमक्ति को संयोजना के लिये पट्ठी विभक्ति में प्रयुग्धगात प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है। तद्तुनार चतुर्थी के स्थोन पर पर्धी का सद्भाव होकर सदर्भ के इन्तुनार चतुर्थी का द्यर्थ निकाल लिया जाता है। इदाहरण इन प्रकार है —मुनये=मुणिस्त्र = मुनि के लिये। मुनिध्य द्देव = मुणीण देइ = मुनियों के लिये

क्रम सस्कृत वर्तवानकालीन द्विवचनात्मक प्रथम पुरुष का कियापर रूप है। इसहारू रूपान्तर क्ष्मान्ति होता है। इनमें सूत्र सख्या ४-१४ से संस्कृतीय मूल घातु हुरूना =इ कारास प्राकृत में 'कुए' ब्यारेश की प्राप्ति, रे-१३० से द्विवचन के स्थान पर बहुबचन के प्रवाप श रा श्रीर ३ १४२ से बतमान काल म प्रथम पुरुष के बहुबचनार्थ में 'नित' प्रत्यव की प्राणि हो हा पूर्ण रूप सिद्ध हो जाता है।

दुने' रूप की सिद्धि सूत्र सट्या है ? २० में की गई है।

'कुणन्ति कियापर रूप की सिद्धि इसी सूत्र में उत्पर की गई है।

द्वाभ्याम् संस्कृत तृनीया विमन्ति का द्विव गनारमक संख्या रूपः विशेषण वर है। इवहा वि कप नोहिं होता है। इनमें सूत्रस ख्या व १९६ से मस्कृत के सून शब्द 'हि के स्थान पर प्राकृत में 'हे प्र की आदेश प्राप्ति, सत्परचात् ३ ७ मे और ३ १२४ के निर्देश मे तथा ३ १३० के विधान से प्राहरर प्राप्त रूप 'ते।' में सुनीया विमक्ति के बहुत्रचन में सहक्रताय बाध्नव्य प्रस्थव :>वर्ष' क स्वान वह प्र प्रत्यच की प्राप्ति होकर 'होटिं' रूप सिक्र हो जाता है।

'होहिन्तो' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या न ११९ में की गई है।

हाभ्याम् संस्कृत पञ्चमी विभन्ति का द्वित्रचनात्मक मख्या रूप विशेष ॥ पर है। इमहाबाई। रूप दोसुन्ता है। इसमें सूत्र सख्या ३११६ से मध्कृत के मूल शब्द शहु करधान पर प्राइत हैं प् रूप की आदिश प्रीप्ति, तत्परवात ३६ से और ३१२५ के निर्देश से तबा ३१३० के दिशार है प्राकृतीय प्राप्त रूप दो' में पळवमी विमहित हे बहुवयन में संस्कृतीय प्राप्तत्र्य प्रत्यय 'श्याप' हारी पर 'सुन्ती' प्रत्यय भी प्राप्ति होकर 'दीमुन्ती' रूप मिद्र हो जाता है।

दोसु' रूप की सिद्धि सूत्र मन्या ३ ११९ में की गई है।

ट्स्ती संख्त की प्रथमा एव दिवीया विमक्ति के द्विवचन का पुलिंग रूप है। इन प्राकृत रूप हत्या होना है। इसमें मूत्र-मख्या २ ४ ८ से स्त्र' के स्थान पर घ की प्रास्ति, र-दर स 'थ' को द्वित्त्र 'थथ' की प्राप्ति २ ६० से प्राप्त पूर्व 'ध' के स्थान पर 'त की प्राप्ति, ३ १९' रं द्वियान के स्थान पर बहुबयन के प्रयोग का आहेता प्रतित, दे १२ में प्राप्त त्राव्ह 'हरवा' में शिवत कर हाय स्वर 'का' के स्थान पर प्रामे प्रथमा द्विनीया के बहुवचन के प्रत्यव का मह्माय होने में क्षिप 'आ' की प्राप्ति और ३४ म प्रथमा तथा द्विताया विमक्ति के द्विचयन में कम से मंकृताय धार्ग श्रत्यय 'खी' तथा खीट' के स्वात पर बाहुन में दे-१३० में झारेस गप्त बत्वय 'जबूरान्' डा ह हो हर हरथा रूप सिद्ध हो जाता है।

पादी सारुत की प्रथमा एव दिलीया विभिन्त के दिवयन को पुल्तिग रूप है। इमहा वा रूप पाया होता है। इपमें पूत्र सल्या १-१०० से मूल शब्द वार में स्थित दू व्यञ्जन का काँप, १-१०

तादर्थ्य डेर्बा॥ ३-१३२॥

तादर्भ्वितिहतस्य ङ्रेश्वतुर्भ्वेक्षत्रचनम्य स्थाने पण्ठी ना मनति ॥ देनस्य । देनाय । देनार्थिमत्यथः ॥ द्रेरिति किम् । देवाण ॥

अर्थ — ताद्रश्ये स्त्रथात उसके लिये अथवा उपकाय उपकार क्या में प्रयुक्त की जाने वाली विनुधी विभक्ति के एक्ववन में सम्कृतीय प्राप्तश्य प्रत्यय 'डे-ए' के स्थानीय सम्कृतीय रूप 'आय' कि प्राप्त प्राप्त राष्ट्रतीय रूप 'आय' कि प्राप्त प्राप्त राष्ट्रती में वे कि रूप से हुआ करती हैं। तद्वुमार प्राप्त राष्ट्रती में वर्जी विभक्ति एक्वयन में कभी पद्यो विभक्ति के एक्वयन की प्राप्त होती है तो कभी मस्कृतीय चतुर्थी विभक्ति के मनान ही 'आय' प्रत्यय की प्राप्ति मो हुआ करती है। परन्तु सुक्यत स्त्रीर आधिकाराज बोक्त राष्ट्री में चतुर्थी विभक्ति के स्थान पर पद्या विभक्ति के एक्वयन के प्रत्यय की ही प्राप्ति होती है। उदाहरण मों है — देवार्थम=देवाय अथवा देवस्स अर्थात देवता के लिये।

परन — मून सूत्र में चतुर्थी विभक्ति के एकत्रवन में प्रत्यय 'डे' का उन्नेख क्यों किया गया है ?

उत्तर—न्यां कि चतुर्थी विभक्ति में दो वचन होते हैं। एक उचन जोर व दुवचन, तन्तुमार पाइन राग्रों में केवल स्वतुर्भी निभक्ति के एक उचन में हो मैं किवल स्वतुर्भी निभक्ति के एक उचन में हो मैं किवल स्वतुर्भी निभक्ति के एक उचन में हो मैं किवल स्वतुर्भी निभक्ति हो हो सह उचन में तो पट्टी विभक्ति में भारतस्य प्राकृत प्रत्यय की हो प्राप्ति होती है। इस अन्तर को प्रत्यित करने के लिये ही 'है' प्रत्यय की सूचना मूल सूच म पदान का गई है। उदाहरण इम प्रकार है -देवेश्य =देवाण अपोर् ने अताओं के लिये। यहाँ पर 'देवाण' में 'ण प्रत्यय पट्टी सद्धवयन हा है, जोकि चतुर्थी विभक्ति के बहुत्वन से अर्थ में "धुक्त हुआ है। यों यह विश्वाति निर्मारित किया गया है कि प्राकृत में चतुर्थी निभक्ति के बहुत्वन में और पट्टी विभक्ति के वहुत्वन में और पट्टी विभक्ति के वहुत्वन में मी कि हो कि प्रकृत पर्वय की पति हुआ करती है। अर्थर है ना किवल एक उचन में ही है और वह भी वैक्षति हर से हैं। निरंथ कर से नहीं।

देशर्थम, सहकृत तादः पै-सूचक चतुर्धा विभक्तिः का एकवचनान्त रूप हो। उमने प्राष्ट्रन रूप देनस्म श्रीर देवाव होते हो। इनमें से प्रथम रूप देवरस की सिद्धि मूत्र सख्या १९३१ में को गई है। दिनीय रूप में सूत्र सख्या ३१३२ से सरकृत के समान ही प्राप्तृत में भी। सरकृतीय प्राप्तृत्य प्रत्यय 'ड=ण= श्राय' का प्राप्ति होकर,देवाय रूप मिद्ध हो जाता है।

े देवाण' रूप की सिद्धि मूत्र संरया ह-१हर में की गई है। १३२॥

देता है। नमो देवाय = नमी देवस्म=देवता के लिये जनस्कार हो। देवेश्य =देवाण=देशवार्को सामाः इत दृष्टान्तों से प्रनीत होता है कि प्रष्टी विभक्ति के एक्वचन के अवदा बहुदन क प्रवाहरू प्राकृत में चतुर्थी विभक्ति के एक्वंचन में छोर बहुउचन म हम से होता है।

सुनय मापृत चतुर्थी विभक्ति का एकवचनान्त पुल्लिंग स्व है। इसका बाह्त स्व हैंग होता है। इसम सूत्र सरया १-२-६ से मूल मस्कृत शहर मू न में स्थित 'न' व्यवत्रत क शावशा व प्राप्ति, ३१३१ स चतुर्थी विमक्तिक स्थान पर पद्या निर्मक्ति की खाँदेश प्राप्ति, ३१ मध्य म प्राप्त कप मुणि में चतुर्वी विभक्ति के स्थानीय पत्नी, विभक्ति-बोब क-प्रयय 'स्प का प्राप्ति शह माणिस्स हप सिंद हो जाता है।

मुनिम्य मस्कृत चतुर्थी विमक्ति का बहुउचनान्त पुहिनग कर है। इसका प्राह्त रपहरी ेहोता है। इसमें सूत्र सख्या १-२२८ से मुनि म स्थित 'न्' के ,हवान पर 'ख' को प्राप्ति, रेसरे चतुर्थी विमक्ति के स्थान पर पत्री निमक्ति की आदेश नातिन, ३-१२ मे प्राप्त प्राकृत का मुणि वेशिः थ्यन्तेय हस्य स्वर 'इ' के स्थान पर श्रागे चतुर्था विमन्तित के स्थानीय पट्टो विमक्ति बोयक बहुदवर्ग्या ' प्रस्थय का सद्माव होने मे दीर्घ स्तर 'ई की प्राप्ति, तत्वरचात् ३-६ से प्राप्त पाक्ताय हा हा • चतुर्था विमिषत के स्थानीय पछी जिमिक बोज ह बहुबबनात्म ह मस्तुनाय प्रावन्त्र प्रयप्ति । स्थान पर प्राकृत म ण' प्रत्यय की प्राप्ति हो हर मुलीण रूप निद्ध हो जाता है।

'रेड' रूप की मिद्धि सत्र सन्या ? २०१ में की गई है।

'नमी रूप की मिद्धि मन्न मह्या है ४६ में की गई है।

हेर य संस्कृत चतुर्थी जिभक्ति का एकवचनान्त पुल्लिम रूप है। इसका प्राञ्चत रूप र्वास ए है। इसमें सूत्र सराया ३-१३१ स चतुर्धी विमक्ति क स्थान पर पत्री विमक्ति क_्त्रयोग करन का शा प्रानि, २ ९० में पष्टी विभक्ति के एकदचन में प्राक्तत म 'स्व' परवय की प्राप्ति हो हर हक्त है। मिद्ध हो नाता है।

हेथेम्य माफन चतुर्शि विभवित का बहुवेपनान्त पुल्तिग रूप है। इसका ब्राहर हर 👯 होता है । इसमें मूत्र मंख्या ३ १३२ म चतुर्ती विमन्ति के स्थान पर पती विमन्ति से इट्ड परंत की मार्रेश प्रति, ३ १२ स देव शहर म स्थित अल्य हं व स्वर 'स क स्वान पर चनुवी विकर' द स्थानीय प्रमुग विभक्ति बोधक बहुब बतात्मक प्रायय का सन्भाव होते में शीप स्वर 'शा' रू सचर्षा १६ मे ब्राप्त प्राष्ट्रत रूप देवा मे न्युर्जी विमिष्त के स्वानाय पत्री विमि^{हिन वर्} बहुक्चनास्त्रकं संस्ट्रनीय प्राप्तब्य प्रत्य 'खास्' के स्थान वर प्राप्तन में, 'ख प्रयद की प्राप्त होंसी देशण रूप मिद्र हा जाता है। १३१ ॥

हे भ्यानं पर पष्ठी विभवित का प्रयोग होता हुन्ना देखा जाता है। ऐसी स्थिति कभी कमी छीर कहीं कहीं र ही होती है, नित्य श्रीर सर्वत्र ऐसा नहीं होता है। द्वितीया के स्थान पर पष्ठी के प्रयोग के उदाहरण र्ग हें —सीमाधर वन्दे≃मीमाधरस्त वन्दे=में मीमाधर को बदना करता हु, तस्या मुखम् स्मराम≔ितस्सा [हरत भरिमो= हम उसके मुख को स्मरण करते हैं। तृतीया के स्थान पर पष्ठी के प्रयोग के दृशन्त इस कार हैं -- धनेन लन्य =धलस्य लद्धो=धन से वह प्राप्त हजा है, चिरेण मुक्ता=चिरस्य मुका=चिर काल रं वह मुक्त हुई है। ते एतत अनाचरितम=नेसि एश्रम श्रणाइएण=उनके द्वारा यह आचरित नहीं हुआ ं, इन उदाहरणों में घनेन के स्थान पर घणस्य का, चिरेण क स्थान पर चिरस्त का श्रीर ते क स्थान पर मिं का प्रयोग यह बतलाता है कि तुनीया के स्थान पर प्राप्तत में पर्व्या का प्रयोग किया गया है। पञ्चमी हं स्थान पर पष्ठों के प्रयोग के उदाहरण निम्न प्रकार से हैं --चोरात विमेति=चोरस्स वीहड्=यह चोर ो हरता है, इतराणि लघु अन्तराणि येभ्य पादान्तेन सहितेभ्य≔इश्वराइ लहुश्रक्खराइ जाण पायन्ति मेल्ल सहिश्राण, इन उदाहरणों में चौरात के स्थान पर चौरस्स का, येभ्य के स्थान पर जाण का और उहितेभ्य के स्थान पर सिह आए का प्रयोग यह बनलाता है कि पञ्चमी के स्थान पर प्राफ़त में पष्ठी का ।योग क्या गया है। अन्तिम उदाहरण अधूरा होने से हिन्दी अर्थ नहीं लिखा जा सका है। इसी प्रकार ते सप्तमी विभिन्नत के स्थान पर पष्ठी विभक्ति के प्रयोग का नमुना थों है —पुष्ठे केश भार'=पिद्रीए हस भारो=पीठ पर केशों का भार याने समृह है। इस उदाहरण में पष्ठे के स्थान पर पिट्रोए का प्रयोग यह न्दर्शित करता है कि सप्तमी के स्थान पर प्राकृत में पष्ठी का प्रयोग किया गया है।

सामाधरम् सम्कृत द्विताया एकवचनो त पुल्लिग रूप है। इनका प्राकृत रूप सीमाधरस्त (क्या गया) है। इसमें सूत्र सख्या ३१३४ से द्वितीया के स्थान पर पष्ठी का प्रयोग हुआ है, |खुनार सूत्र मख्या ३-१० से प्राफ़्त रूप सीमा धर में सत्कृतीय प्राप्तन्य प्रत्यय डस्=ध्रस् के स्थान |र पस प्रत्यय की प्राप्ति होकर सीमाधरस्त रूप की मिद्धि जाती है।

षन्दे' रूप की सिढि सूत्र सख्या १-२४ में की गा है।

'तिस्सा' रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या है हंश में की गई है।

सुर्जम् सस्कृत द्वितीया एकवचनान्त नपुसक्तिंग रूप है। इसका प्राकृत रूप सुक्त्स है। |पमें पृत्र सख्या ३ १३४ से द्वितीया के स्थान पर पर्य्का का प्रयोग हुचा है, १-१८० से 'ख' के स्थान |र 'ह' को प्राप्ति चौर ३-१० से प्राप्त प्राकृत रूप सुक्ष में पप्की विमन्ति के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तब्य |स्यप 'कस ≈ चास् के स्थान पर प्राकृत से 'सम' प्रत्यय की शांदित क्षेकर महम्स रूप मिद्ध को जाता है।

त्मराम सरहत वर्तमान कालीन हर्नाया पुरुष का बहुचचनान्त रूप है। इसका प्राकृत रूप भीरोगो होता है। इसमें मूत्र सख्या ४-७४ से सरहतीय मूल घातु 'स्मृ=स्मर्' के स्थान पर 'मर्' की मोहेरा प्राप्ति, ४ २३६ से हलन्त व्यञ्जनान्त घातु 'मर्' में विकरण प्रत्यव 'स' की प्राप्ति, ३ १४४ वय शब्दात् परस्य तादध्येटे हिंद् खाडः वष्ठी च वा भवति ॥ वहार् वहान वहा

अर्थ — संस्कृत में 'वच' एक शस्त्र है, जिसका प्रास्त्र रूप 'वह' होता है। इस 'वह' एएं लिये चतुर्थी के एक प्रचन में 'ताद्ध्यें' = 'उसके लिये' इस अर्थ में सस्कृतीय प्राप्तथ्य प्रवाय 'बाव' बाक के स्वितिश्क पक्षी विभक्ति के एक वचन में प्राकृतीय प्राप्तथ्य पर्व्य 'सा' के साथ साथ एक और इस 'ब्राइ' की प्राप्ति मो वैकेल्पिक रूप से हुआ करती है। यों 'वधार्यम्' के सोन रूप प्राप्त कर्य के लिये, क्षां का जावा करती हैं, जो कि इस प्रकार हें — उधार्यम् = इहाइ, वहस्त, वहाय स्वर्गत् वव के लिये, क्षां के लिये। हाइ प्यान में रहे कि इन रूपों को वह स्थिति वैकल्पिक है, जैना कि सूत्र में और वृत्व में 'र स्वयंय्य की एक्लेख करके मुचित विया गया है।

वधार्थन सहक्रत टार्फ्य-मुच ह बतुर्थी विभक्ति का एह वबना-त रूप है। इन हे पाइन हा श्री वहस्स और यहाय होते हैं। इनमें से भ्रथम रूप में मून संबुद्धा १-१ = अ सून संबुद्धा प्राप्त कर के स्थान पर 'ह' की प्राप्त , ३-१३३ से चतुर्थी विभक्ति के एक यचन में संस्कृतीय प्राप्त प्राप्त कर के स्थान पर प्राप्त के निर्माण करने हैं के स्थान पर प्राप्त के निर्माण करने हैं के स्थान पर प्राप्त के स्थान पर प्राप्त के स्थान पर 'खाइ' प्रत्य की आहेर प्राप्त हैं। हितीय रूप 'बहस्त' में पूत्र संन्य हैं। में चतुर्थी विभक्ति के स्थान पर प्राप्त के स्थान पर प्राप्त के आहेरा प्राप्त तरवृत्तार हैं है से से स्थान पर प्राप्त के प्राप्त के प्राप्त के स्थान पर प्राप्त के स्थान पर प्राप्त के प्राप्त के प्राप्त के प्रविच के स्थान के प्रविच के स्थान कर से से कि हिन्द कर से प्राप्ति, तरस्वात है प्र में मीविहार कि स्थान पर प्राप्त के स्थान कर पराप्त के स्थान के स्थान कर से से कि हिन्द कर से प्राप्ति, तरस्वात है प्र में मीविहार कि स्थान पर प्राप्त कर से से सिंह है। से सिंह हो जाता है। १३३ ॥

क्वचिद् द्वितीयादेः ॥ ३-१३४ ॥

हितीयादीना विमक्तीना स्थाने पष्ठी मवित कचित् ॥ सीमा-धरस उन्हें। तिन सुद्दस्य गरिमो । अन हितीयायाः पष्ठी ॥ धणस्य लहो । धनेन लच्च इन्पर्थः । नित्स हो चिरेण सुक्तेत्पर्थः । तिसिभेश्रमणाइएण । तैरेतदनाचरितम् । मत्र तृतीयायाः ॥ आस्मिने बीहद्द । चौराहिमेतीत्पर्यः । इसराई जाण लहु श्रम्दाराइ पायन्ति मिन्ल महिमान पदान्तेन महितेम्य इतराणीति । श्रत्र पश्चम्याः ॥

अर्थे —प्राष्ट्रत मापा में हमी कमी चनिवगित रूप से उपयुक्तविमक्तियों क खान वर हिना हरू विभक्ति का प्रयोग भी हो जाया करता है। तरनुमार द्वितोयां, वृतीया, पश्चमी और सर्दर्ग दि^{क्षण}

, अनाचारितम्=अनाचीर्णम् संस्कृत प्रथमा विमक्ति का एकवचनान्त विशवणात्मक नेषु संकलिंग हा ह्रव है। इसको प्राकृत ह्रव ऋणाइएण होता है। इसमें सूत्र सख्या १-२२८ से 'न' के स्थान पर 'रा की गामि. १ १७७ से 'च' का लोप, १-५४ से लोप हुए 'च' के पश्चात शेप रहे हुए दीर्घ स्वर 'ई' के स्थान ।र समुक्त ब्यञ्जन र्ण्=एण्' का सद्भाव होने से हस्व स्वर 'इ' की प्राप्ति, २ ७६ से रेफ रूप हलन्त व्यञ्चन 'र'का लोव, रूम्ध से लोप हुए'र्' के ।श्चात् शेष रह हुष 'ण को द्विष्व ण्ण' की प्राप्ति श्रीर र प्रमे प्राप्त रूप 'श्रुणाइएसा, में प्रथमा विभक्ति के एकवचन में नपु सक्तिंग में संस्कृतीय प्राप्तव्य ात्यय 'सि' क स्थानीय सस्कृतीय प्रत्यय 'म् के स्थान पर प्राकृत में भी 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर भणाइण्ण रूप सिद्ध हो जाता है।

चोरात् सःकृत पञ्चमी विभिवत का एकषचनान्त पुल्लिंग रूप है। इसका प्राकृत रूप चोरस्स है इसमें सूत्र सख्या र १३४ से पछ्मिती विभक्ति के स्थान पर पष्ठी विभक्ति क प्रयोग करने की छादेश गारित, तृदनुनार '३-४० से मूल शब्द 'चोर' में पष्ठी विभक्ति के एकवचन में संस्कृतीय पारतव्य प्रत्यय 'हम=श्रत' के स्थान पर प्राकृत में 'स्त' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राकृत रूप चोरस्त मिद्ध हो जाता है।

ारिभोति सस्कृत वर्तमानकालीन प्रथम पुरुप बोधक एकवचनान्त श्रकर्मक कियापर का रूप हैं। इसका प्राकृत रूप बोहह होता है। इसमें सूत्र सख्या ४ ४३ से सस्कृतीय मृत धातु 'विम' के स्थान पर प्राफ़त में 'बीह रूप को आदेश प्राप्ति, ४२३६ से हलन्त व्यञ्जनान्त धाव 'बीह' में विकरण प्रत्यय 'त्र की प्राप्ति और रे १ १६ से वर्तमान कालोन प्रथम पुरुष के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'ति' क स्थान'पर प्राकृत में 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राकृत रूप पहिङ्कि सिद्ध हो जाता है।

इतराणि संस्कृत प्रथमा एव द्वितीया विभिन्त का बहुवचनान्त विशेषणात्मक नपु मकलिंग का रूप है। इसका प्राकृत रूप इश्रराइ होता है। इसमें सूत्र सख्या १ १३० में 'तृ' का लोप, तल्यश्रान रे २६ से प्रयमा एप द्वितीया विमक्ति के बहुवचन में संस्कृतीय प्राप्तत्र्य पत्यय व्यानि' के स्थान पर ^{पाष्टत} में प्राप्त शब्द 'इश्रर' में स्थित श्रन्त्य हस्त्र स्वर 'ब्र' को दीर्घ स्वर 'श्रा' की प्राप्ति पूर्वक इ' मत्यय की पारित होकर प्राष्ट्रत रूप इअराइ सिद्ध हो जाता है।

'जाण' रूप की सिद्धि सत्र संरचा ३ हर में की गई है।

लपु अक्षरााणि संस्कृत प्रथमा एव द्विर्धाया विमक्ति का चहुवचनान्त नपु मक्रलिंग का रूप है। इमका प्राकृत रूप लह श्रवलशाइ होता है। इसमें सूत्र मख्या ११=७ में ध' के स्थान पर 'ह' की प्राप्ति. ९३ से 'ए' के स्थान पर 'ख' की प्राप्ति, २ ८६ से प्राप्त 'ख' की द्विरव 'खल' की प्राप्ति, २६० से प्राप्त पूर्व 'रा' के स्थान पर 'फ़' की प्राप्ति, तत्वश्चात् ३ २६ से प्रथमा एव द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में सस्हर्नाय प्राप्तब्य प्रत्यय 'श्रानि' के स्थान पर प्राकृत में प्राप्त शब्द 'लहु अक्लर' में स्थित अस्य छन्द स्वर 'ख' को दीर्ष स्वर 'आ' की शांति पूर्वक 'इ ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राक्तत रूप लहु-अक्खराई निद्ध हो नाता है।

से प्राप्त विकरण प्रत्यव 'श्र' के स्थान पर आगे हुनीया पुरुष योधक बहुवचनान्त प्रत्यः सहार होने से 'इ' की प्राप्ति और २-१४४ से प्राप्त बातु रूप 'मार' में बतमान कालान हनाव पुसरका बहुवचनान्त प्रत्यय 'मो' की प्राप्ति हाकर *मरिमो* रूप सिद्ध हो जाता है।

धनेन संस्कृत तृतीया विभक्ति का एक्ष्यचनास्त नुष्टुं सक स्थित है। इनहा पारा के धणसा है। इनमें सूत्र सरया ३-१२४ से तृतीया विभक्ति के स्थित पर पार्डी विभक्ति हार- करने की ध्यादेश प्राप्ति, १-२ म से मूल संस्कृत शहर धन में स्थित 'त' कस्थान पर 'ए' एउड़" और ३-१० से प्राप्त प्राप्तुत हप घण में संस्कृतिय प्राप्त्यय प्रस्तय 'इन्- अस् के स्थान पर पार्डि 'स्स' प्रत्यय की प्राप्ति होकर धणस्स रूप की सिद्धि हो जातो है।

लब्ध सम्कृत प्रथमा विभिवत के एक्यचनान्त विशेषण का रूप है। इनका प्राइन रहता होता है। इनमें सूत्र सख्या २ ७६ से इतन्त ब्यखन 'य' का लोप, २ ०६ से लोप हुए 'य' इत्तर व्यखन 'य' का लोप, २ ०६ से लोप हुए 'य' इत्तर विशेष के प्राचन पूर्व 'ध के क्यान पर दूर' हो प्राधिन करे २-२ से प्राप्त पाकृत रूप 'लख' में प्रथमा जिमक्षित के एक्यचन में सम्कृतीय प्राप्त-य प्रत्य की प्रधान पर प्राकृत में 'डी = ज्यों प्रयाय की प्राप्त पर प्राप्त प्रस्तय हो', म ए ' ही इम्ब्राह्म प्राप्त प्राकृत शब्द 'लख' में दियत क्षत्य का स्वाप्त प्रस्तासक लोप हो कर तत्वरचात हो करा दिशों का प्राप्त प्रकृत कर लही तिह हो आप हो

ानिरण मस्कृत तृतीया विभक्ति का एक उचनान्त नपु मक्तिगा रूप है। इसका प्राह्त में विरस्स है। इसमें मून सख्या २-१२४ से एतीया विभक्ति क स्थान पर पर्व्या विभक्ति के ब्रवीग हर्म की आवेश जानित, तद्युमार १-१० से मूल शहर 'चिर मे पत्नी विभक्ति क एक्वयन में मंह्न' प्रास्तव्य प्रत्यय 'छन् = धन्' के स्थान पर प्राकृत स्त' प्रत्यय का प्राप्ति होकर प्राकृत स्विति हो जाता है।

मुक्ता सस्पृत प्रथम! यिमक्ति का ण्डबचनान्त क्रीलिग् विशेषण का स्पर्ध ! इवहा प्रृते रूप मुक्ता होता है। इसमें सूत्र मख्या २ ३० से 'त् का लोप्, २ मा में सोप हुए 'त्' के वमत हैं वह हुए 'क को द्विन 'क्क को शिंत चीर रेष्ट से प्रथमा विमिन्त क गुरुवयन में मह्यू माप्ताच्य प्रत्यय ित ' के स्थान पर माक्ष्त शास्त्र स्वरं को र्रोपना की प्राप्ति होने से मूल प्रार्ट श्वरं ' मुक्ता में स्थित क्षा माप्ति होने से मूल प्रार्ट ' मुक्ता में स्थित क्षान्य दीर्घ हवर 'खा' को वथा स्थित को प्राप्ति हो हर मुक्ता हव विदर्ध हो चाता है।

'तेसि' रूप का मिद्धि मूत्र संख्या हेन्द्र! में की गई हैं।

'लप' मधनाम रूप को मिद्धि पुत्र महत्वा हेन्द्रभ म की गई है।

अर्थ -प्राकृत भाषा म वभी वभी हितीया विभक्ति श्रीर तृतीया विभक्ति के स्थान पर महभी ि विभक्ति का प्रयोग भी पाया जाता है। उदाहरण इस बकार ई —प्रामम् नमामि=गामे बनामि ऋषीत । में राम में वपता हूँ, नगरम् न यामि=नयरे न ज्ञामि श्रर्थात् में नगर को नहीं जाता हू, इन उदाहरर्णों । संसरहत में बयुक्त द्वितीया विभक्ति के स्थान पर प्राकृत में सप्तमी का प्रयोग किया गया है। तुनीया के स्थान पर मत्रमा कं प्रयोग कं द्वपान्त इस प्रकार है - मया वेषिता मन्तिर्तान=मइ वेविरीण मलीश्राह ः = क्रीपती हुई मेरे द्वारा वे मृदित किये गये हैं। त्रिभि तै ऋल कृता पथ्वी=उन तोना द्वारा पथ्वी - श्रलकृत हुइ है। इन दृष्टान्तों म सस्क्रतीय लुनीया निमक्ति केस्यान पर प्राकृत में समसी विमक्ति का - प्रयोग इष्टि गोचर हो रहा है। यों प्राष्ट्रत में कमा कमी और कही कहीं पर विभक्तियों के प्रयोग में , अनियमितता पाई जाती है।

श्रामम सन्द्रत द्वितीया विभक्ति का एकवचनान्त रूप है। इन हा प्राञ्चन रूप गामे है। इसम सूत्र सरचा २ ७६ स 'र का लाप, ३ १३५ से द्वितीया के स्थान पर प्राकृत में सप्तमी विमक्ति के प्रयोग करने की आदेश प्राप्ति. ३ ११ से प्राप्त प्राकृत शब्द 'गाम' से सप्तमी विभक्ति के एकवचन स संस्कृतीय मामय प्रत्यय 'डि=इ' के स्थान पर प्राकृत में है=ए' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर गामे रूप सिद्ध ही जाता है।

यसामि मस्कृत हे वर्तमानकालीन तृतीय पुरुष का एकवचनान्त अवर्मक क्रियापर का रूप है। इसका प्राकृत रूप मा वसामि ही होता में । इसम सूत्र-सख्या ४ २३६ से मूल प्राकृत हलन्त चातु 'वस' में विकरण प्रत्यय 'श्र' की प्राप्ति, ३ १४४ से प्राप्त विकरण प्रत्यय 'श्र' के स्थान पर 'श्रा' की प्राप्ति श्रीर रे १४१ म प्राप्त घातु 'वना' में पर्तमान हालीन ततीय पुरुष रू एक्वचन में 'मि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर वसामि रूप सिद्ध हो जाता है।

नगर संस्कृत के द्वितीया विभक्ति का एकप्रधनान्त नपु मक्लिंग का रूप है। इसका प्राप्तत रूप नयरे (प्रदान किया गया) है। इसमें सूत्र सत्या १-१७० से 'ग' का लोप, १-१८> से लोप हुए 'ग' के पश्चात् रोप रहे हुए 'त्र' के स्थान पर 'य की प्राप्ति, ३-१३४ से द्विनीया के स्थान पर प्राकृत में सप्तमी विमक्ति के प्रयोग करने का आदेश प्राप्ति और ३-११ से प्राप्त प्राप्त शब्द 'नयर' में सप्तमी विमक्ति के प्रवचन म सस्कृतीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'डि-इ' के स्थान पर प्राकृत में 'डे=ए' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर नयरे रूप सिद्ध ही जाता है।

'न' भव्यय एप की सिद्धि सूत्र सच्या १- इ में की गई है।

'चामि' वियापर रूप की सिद्धि सूत्र सख्या रेन्रे ०४ में की गई है।

सया मस्कृत की तृतीया विभक्ति का एकदानान्त अस्मद् मर्बनाम का रूप है। इसका प्राप्त ^{हें प} मह है। इसमें सुत्र सख्या ३-१३५ से चुर्ताया के स्थान पर प्राकुत में सप्तमी विभक्ति के प्रयोग

्पादान्तिमभत्-सहितम्य' सस्कृत पद्धमी विमक्ति का बहवर्षनांन्त विशेषणायह हा रेत इमना प्राकृत रूप पायन्तिमिल्ल सहित्राण है। इसमें सूत्र सख्या १-१७० से पूर्व व्यञ्जन हा हार १३० से लोप हुए 'द्' व्यञ्जन के परचात शेप रहे हुए 'खा' को 'या' की प्राप्ति, १-न४ से प्राप्त 'या' के कि दीर्घ स्वर 'श्रा' के स्थान पर श्रागे संयुक्त व्यञ्जन 'न्ति' का सद्भाव होने से द्वस्व स्वर 'श्र' ६। १६ व १४६ से सस्तुर्ताय प्रत्यय 'मत् के स्थान पर प्राकृत में 'इल्ल' प्रस्यय की प्राप्ति, १-१० से प्राप्त पाइन ह 'पायन्तिम' में स्थित श्वन्त्य हरन स्वर 'श्व' के श्वागे श्वाम 'शत्वय इन्त' में श्वित स्वर 'इ' हा महर्म होन से लोप: १ ४ से प्राप्त प्राफ्टत रूप पायन्तिम + इन्ल' में स्थि होकर प्राफ्टवीय रूप पायन्तिम र प्राप्ति, १-१७० से 'सिहत' में स्थित 'तू' व्यक्षत का लीप, ३-१३४ से पद्भवी विमिति के स्थान पर श विमक्ति के प्रयोग करने की श्रादेश प्राप्ति, ३-१२ से प्राक्तनीय प्राप्त रूप 'पायन्तिमिनन-महिध' में कि श्चन्त्य द्वस्व स्वर 'ख' क स्थान पर पष्टी विमक्ति के बहुवचन के प्रत्यय का सद्माव होने से दीर्घ ख 'फ' को प्राप्ति और ३ ६ से प्राप्त प्राफुन रूप 'पायन्तिसिल्ल-सिहश्रा' में पर्छा विमक्ति के बहुवयन में संग्रुसर प्राप्तव्य प्रत्यय 'स्वाम्' के स्थान पर प्राकृत में 'खु' प्रत्यय की प्राप्ति ही कर प्राकृत पर पायानि भी सहिआण की सिद्धि हो जाती है।

पृथ्वे मस्कृत सप्तमी विभक्ति का एकवचनान्त नपु मक जि । रूप है । इसका प्रोकृत रूप हि है। इसमें सूत्र संख्या १-१२० से 'ऋ' के स्थान पर 'इ' की प्राप्ति २०० से प' का सार, १८६३ लाप हुए 'प' के पश्चात शेप रहे हुए 'ठ' की द्वित्व 'ठठ' की प्राप्ति, २६ के प्राप्त पूर्व 'ठ' के सार पर 'ट' की प्राप्ति, १-३% की पृत्ति से मूल मंस्कृत शब्द पृष्ठ का नयु महाज्ञिगत्त्र से प्राक्षन में झीविन्ध का पारित, तदसुमार ३ ३१ और २-४ से प्राकृत मे प्रान्त शब्द 'प्पेट्ट' मं स्त्रीलगत्य शोत ह प्रत्यव प्रान्ते र्का प्राप्ति, :-१३४ से संस्कृतीय सप्तमी।विमक्ति के स्थान पर प्राकृत में पर्शा दिनक्ति के प्रथाग करने क त्रादेश प्रास्ति, तदतुमार ३ २६ से प्रास्त प्राकृत स्त्रीलिंग रूप पिट्टी में पटो विमक्ति क पड़वप^{र में} सस्क्रतीय प्राप्तब्य प्रत्यथ 'इस्≕ क्षम्' के स्थान पर ए' प्रत्यय को प्राप्ति होकर प्राष्ट्रत हप विहर्दीर मिन्न हो जाता है।

चेदा-मार सस्कृत प्रथमा विभक्ति का एकदचनान्त पुल्लिंग कर है।इसका प्राहृत का केश मारी होता है। इसमें सुत्र संख्या १२६० म 'श' के स्थान पर 'म' का प्रास्ति, ३२ सं^{प्रदेश} विमक्ति के एकवयन में अकारान्त पुन्तिंग में संस्कृतीय प्राप्तन्य प्रत्यय भी के स्थान पर माहर है 'हो = बी' वी प्राप्ति होकर प्राष्ट्रत रूप केहा भारी मिद्र ही जाता है। १३४ ॥

द्वितीया-तृतीययोः सप्तमी ॥ ३–१३५

दिनीया तृतीपयोः स्थाने कचित् सप्तमो भरति ॥ गामे वसामि । नपरन हानि भत्र डितीयायाः ॥ मड येतिरीए मलिष्माइ ॥ वित्तु वेतु भलकिया पुद्दी । भत्र नुतीपाषाः ।

अलक्ता संस्कृत प्रथमा विभक्ति का एकवचनान्त स्त्रीलिंगात्मक विशेषण का स्त्य है। इनका । प्राष्ट्रत रूप ऋतिकथा होता है। इसमें सूत्र सख्या १-१२८ से ऋ के स्थान पर 'इ' की प्रास्ति, १-१७३ स 'तु य्यञ्जन वा लीप उत्परचातु ४ ४६८ स सरकृत व समान ही प्राकृत में भी छलफिछापद प्राकारान्त छीलिंगात्मक होने से प्रथमा विभिन्त के एकवचन मे प्राप्तस्य प्रस्पय 'मि' का लाप होकर ''अरुकिआ' भाकृत रूप सिद्ध हो जाता है।

'पुहची पद की सिद्धि सूत्र मख्या १ न १६ में की गई है। १३८॥

पचम्यास्तृतीया च ॥ ३-१३६ ॥

पश्चम्याः स्थाने कचित् तृतीयासप्तमयौ भन्नतः ॥ चोरेण बीह्इ । चोराद्विभेती-स्यर्थः ॥ अन्तेउरे, रमिउमागश्रो राया । श्रन्तः पुराद् रन्त्वागत इत्यार्थः ॥

अर्थ — कभी कभी सस्कृत भाषा में प्रयुक्त पचनी विमक्ति के स्थान पर प्राकृत भाषा में हतीया श्रथवा सप्तमी विभक्ति का प्रयोग भी ही जाया करता है। उदाहरण कम से इम प्रकार है — धोरात विमेति = घोरेण बीहइ=यह चोर से ढरता है, इस उदाहरण में सस्क्रतीय पचमी विमक्ति के ⁽ स्थान पर प्राकृत में तृतीया विमक्तिका प्रयोग किया गया है। टूनरा दृष्टान्त इन प्रकार हैं — श्रन्त ं पुरादु रन्त्वा त्रागत राजा=श्रन्तेवरे रमिन श्रागश्री राया=श्रन्तपुर में रमण परके राजा श्रागया ^{(है}, इम दृष्टान्त म 'श्रन्त पुराद्≔श्चन्त्वरे' शर्टों में मस्कृतीय पद्यमी विभक्षित के म्यान पर प्राकृत में मिल्तमो विमक्तिका प्रयोग देखा जा रहा है। यों श्रन्यत्र भी पचमी के स्थान पर तृतीया श्रयका ं सप्तमी विमक्ति का प्रयोग पाया जाय ता वह प्राकृत भाषा में ऋशुद्ध नहीं माना जायगा।

चोरात् संस्कृत प्रथमी विभक्ति का एकवचनान्त पुल्लिंग का है। इसका प्राप्टन रूप चौरेण , हैं। इसमें सूत्र सख्या ३१३६ से सस्कृतीय पछ्चमी विभक्ति कस्थान पर प्राकृत में तृतीया विभक्ति का , प्रयाग करन की आदेश प्राप्ति आरेर शोप साधनिका सूत्र सख्या ३ १३४ क अनुमार होकर चोरेण रूप सिंद ही जाता है।

षीहर कियापद को सिक्षि सूत्र सख्या ने १०४ में की गई है।

अस्त पुरात् (ह) सस्क्रन की पद्मनी विभिन्नत का एकवचनान्त नपु मक निग रूप है। इसका पाष्ट्रन रूप श्रान्त बरे होता है। इसमें सून-मल्या १६० में 'त' में स्थित 'ब्र' स्वर के स्थान पर 'ण ^{६वर} की प्रास्ति, २-७७ से 'विसर्ग=म' हलन्त व्यञ्जन का लीव, १-१७० से प' व्यञ्जन का लीव, ३-१३६ से मस्कृत्य पद्ममी विभवित के स्थान पर पाहन में मध्तमी विभक्ति का पयोग करने की व्यान्श प्रास्ति, त नुमार ३ ११ मे शाम प्राकृत शब्द 'श्रन्तवर' में सप्तमी विमन्ति के एकवचन में मस्कृतीय प्राप्तव्य भेंखय 'हि≈इ' के स्थान पर प्राञ्च में हे=ए प्रत्यय की प्राप्ति हो कर अन्ते उरे पड़ मिद्र हा चाता है।

करने की श्रादेश प्राप्ति, तर्तुमार सस्ट्रतीय सर्वनाम शब्द 'श्रामद' में मामी विमक्ति र १६६९०० संस्कृतीय प्रस्था हि=इ' श्री प्राप्ति होने पर ३-११४ में 'ब्रासन् + इ' के स्थान पर 'मइ' के पाता रर्फ होकर प्राफ़त रूप 'गड़' सिद्ध हो जाता है।

विषित्र। संस्कृत में तृतीया विभक्ति के एकवचनान्त स्त्रोलिगात्मक विशेषण का रूप है। इयस हरू रूप वैविशीण होता है। इसमें सूत्र सस्या १-२३१ से मृत सस्टुत शहद विवृत्त म स्थित प' इ खात ए 'व्' की प्राप्ति, १-१७७ से 'त्' का लोप, १-१४२ से लाप हुए 'त्' क प्रधान रोप गहे हुए स्वर 'त्र' के सर पर 'रि' को ब्राप्ति, ३ ३२ और २ ४ से ब्राप्त रूप येतिरि में ट्यीनिंगहण्ड प्रस्वय 'डीर्झ' ई। पिन, १ ४ से प्राप्त ऋष 'वेबिरि + ई' में सधि हाकर वेबिरी' की प्राप्ति, ३ १३४ से गृतीय विमक्ति कस्त पर प्राकृत में मध्तमी विभक्ति के प्रयोग करने की व्यादेश प्राप्ति, तद्तुमार ३⁻६ मे प्राप्त क्री^{हिंग}ा विशोषण रूप विविश् म सलमा विमक्ति के एकवचन में मस्क्रतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'हि = इ' के सार प श्राकृत में 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर प्राकृत विशेषणात्मक स्नोतिंग ऋष वेषिरींण मिद्ध ही जाना है।

मृतितानि मन्छन प्रथमा विभक्ति का बहुरचनान्त थिशेषणा सक नपु महर्तिंग दाहर है। इमका प्राप्टन रूप मलियाड होता है। इपमें सूत्र सल्या ४१२६ से मून मस्कृत धातु 'गृर् कं स्वावस प्राकृत में मल् रूप को ब्राटेश माध्य, ४ ४४८ में सरकृत के ममान हो प्राकृत में मा विशेषक्रीवर क्रथं में 'मल' धातु म 'इत' प्रत्यय का प्राप्त, १-१७७ में पाप्त रूव 'मलित' म स्थित 'त व्ययन हा हा. धीर ३२६ स प्राप्त रूप मिल ब' में प्रयमा विसक्ति के बहुवचन में नपुस हरिंग म धन्य हुर हार 'अब को नाय स्वर 'आ को वामि पूर्वक '६' प्रस्थय की प्राप्ति हो कर मिल भाई का मिछ हो वाता है।

जिभि मस्हृत कृतीयां विमक्ति का सहुरप्रशान्त महत्वाह्म विशास हा हा है। (१६) ^{हारा} ह्य तिसु है। इसम मूत्र सख्या रे-३६ से र' का लाप, ३ १३। से तृतीया विभ के का गत पर पाइन ह मध्तमो विभक्ति क प्रयाग करने की चादेश-गाध्ति, तद्नुपार ४८४= स सप्तमा विभक्ति के बहु^{बद्दार} वंग्हन के ममान ही प्राष्ट्रन प भी 'मु' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर तिमु विशेषणात्म क मय निद्ध है। आर्थ

ति संश्कृत सुताया विभक्तिका सहुव प्रशन्त तट् सर्वनाम का पुल्लिग रूप है। इप दा दा^{हर हर} नसु है। इसम तूत्र मंद्या २ ६७ म मूल सस्ट्रन सर्वताम शह्द 'तद्' म हिश्न चान्य हमान खप्रत द्'रा ाप, ३ १-१ में हताया विमक्ति के स्थान पर प्राहत में सप्तमी विभक्ति का श्याप हरत की मार् वारिन, रे १४ में बाहन मं बारत सर्वनाम शहर 'त' में स्थित चन्त्य खर 'ब' के स्थान वर मध्यमें रेपर्व ढ सहुद्रपन बो उक्त प्रत्यय 'सुका सङ्माव होन से '०' की पानि चीर ४*४४* व ने प्राप्त ≭प^{न्}र ममनी विमलि के बहुबबन में सरहत के सराज ही बाहत में भी 'सु अध्यय का प्रति हो हा शाहुं' वर्षनाम रूप मेम मिद हो जाना है।

विद्युत्ज्योतम् सन्द्रन का द्वितीया विभक्ति का एक्वचनान्त नपु मक्ति। का रूप है। इसका - फत रूप विक्जुडनीय होता है। इसमें सूत्र सख्या २ २४ से सयुक्त व्यञ्जन 'ख्' क स्थान पर 'ज्' -ग्राप्ति, २ दह से छादेशन्त्राप्त व्यञ्जन 'जु' को द्वित्व 'च्ज्' की प्राप्ति, २-०० से प्रथम इलन्त व्यञ्जन 'का लोप, २ ७८ से द्वितीय 'यु' व्यञ्जन का लीप, २८६ से लोप हुए य के परचात रोप रहे हुए खन 'ज' का द्वित्य 'क्ज की प्राप्ति, १-१७७ से द्वितीय 'तु' व्यखन का लोप, १ १८० से लोप हुए ' ब्यञ्जन के पश्चात शेष रहे हुए 'अ' स्वर के स्थान पर 'य' वर्णकी प्रास्ति, ३-४ म प्राप्त प्राकृत . व्ह 'विब्जुज्ञोय' में द्वितीया विभक्ति के एकवचन में संस्कृतीय प्राप्तन्य प्रत्यय 'श्रम्' के स्थान पर कृत में मू शत्यय की प्राप्ति श्रीर १२३ से प्राप्त प्रत्यय 'मू के स्थान पर पूर्वस्थ ज्यञ्जन 'य' पर नुस्वार की प्राप्ति होकर प्राकृत पद विञ्जुडजोथ सिद्ध हो जाता है।

स्मराति सरकत का वर्तमान कालीन प्रथम पुरुष का एक्ववनान्त कियापर का रूप है। इमका । इत रूप मरह होता है। इसम सूत्र सख्या ४ **८४ से मूल सस्कृत घातु 'स्मृ=स्मर'** क स्थान पर प्राकृत 'भर' रूप को आदेश-शाप्ति, ४-२३६ से भारत हलन्त चातु 'भर' में विकरण पत्यय 'श्र' को प्राप्ति ौर २ १३६ से प्राप्त प्राकृत बातु 'भर' में वर्तनान क्षाचीन प्रथन पुक्त के एक्तववरार्थ में संस्कृतीय ाचन्य प्रत्यय ति' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति ही कर प्राकृत रूप 'भरइ' सिद्ध हो ाउं है।

राजो संस्का की सप्तमी विविध्ति का एकवचनान्त स्त्रीलिंग का रूप है। इनकी बाक्टन रूप चें हैं। इसमें सुत्र सख्या २ अ६ से मूज मस्कत शब्द 'रात्रि में स्थिन द्वितीय 'र्' व्यञ्जनन का लोव मध्से लोप हुए 'र' व्यञ्जन के परवात् शेप रहे हुए 'त्' को द्वित्व 'त्' की प्राप्ति, १-५४ से चाहि एं 'रा' में स्थित दीघ स्वर 'आ' के स्थान पर आगे सयुक्त न्यज्जन 'त्ति' का सदुमाव होने से द्वस्व ^{इर 'द्य'} की प्राप्ति, ३ १३७ से सप्तमी विमक्ति के स्थान पर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग करने का गरेश प्राप्ति, तद्नुसार ३ ४ से द्विनीया जिमक्ति के एकत्रचन में सस्कृतीय प्राप्तब्य प्रस्यय 'श्रम्' के यान पर प्राकृत में 'मृ' प्रायय की प्राप्ति श्रीर १-२३ मे प्राप्त प्रस्थय 'म' के स्थान पर शब्त्रस्य पूर्व ाएँ 'चि' पर अनुस्वार की प्राप्ति हाकर रिलं रूप सिद्ध हो जाता है।

तिरिमन् सःकृत का सन्तमी विभक्ति एकवचनान्त सर्वनाम पुल्लिंग का रूप है। इसका प्राकृत ^{९५ तेण है। इसमें सुत्र संख्या २-७० से मून संस्कृतीय मर्बनाम शब्द 'तद्' में स्थित अन्त्य हलन्त} म्बद्धान 'द्' का लोप, ३ १३७ का पृत्ति से सप्तर्भाविभक्ति के स्थान पर तृनीया विभक्ति का प्रयोग ^{करन} की क्यादेश प्राप्ति, तदनुसार ३-६ से तृतीया विमक्ति के एक्वचन में सस्पृतीय प्राप्तज्य प्रत्यय दाः आर' के स्थान पर प्राकृत में 'ण' प्रथ्य की प्राप्ति, ३ १४ से सृतीया विमक्ति प्राप्त प्रत्यय 'ण' हे कारण से पूर्वोक्त प्रास्त प्राकृत शब्द 'त' में स्थित श्रात्य स्वर 'श्र' के स्थान पर 'रु' स्वर की प्राप्ति स्रोर १२७ से मान्त प्राकृत रूप 'तेण' में स्थित श्रन्त्य वर्ष 'रा' पर श्रनुस्वार की प्राप्ति होक्र वेण रूप सिद्ध हो जाता है।

रन्त्वा मस्कृत का सबन्धास्मक भून कुश्नत का सब है। इसका प्राक्तन स्व रिन होता है।। स्व स्व सख्या ४ २६६ में मूल प्राक्तनीय हलन्त धातु 'रम्' से विकाण प्रन्यय 'स्व' की प्राप्ति, र ११० हरू विकरण प्रत्यय 'स्व' के स्थान पर 'इ को प्राप्ति, र २१४० से प्राप्त धातु रूव 'पिम' में मेंबरनाना हूं कुत्रन्तार्थ में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रस्यय 'स्वा' के स्थान पर प्राकृत में 'तुम्' प्रस्थव की प्रारोगना है, शिक्ष से प्राप्त प्रत्यय 'तुम्' में स्थित 'तृ' व्यक्तत का लोप, १ २६ म प्राप्त कर रिन प्रमृत परिवा प्रयाम 'म्' के स्थान पर पूर्व म स्थित हर र 'उ' पर श्रानुस्वार का प्राप्ति होक्तर प्राकृताय रूर एने हैं। प्राप्ति हो स्थान पर पूर्व म स्थित हर 'उ' पर श्रानुस्वार का प्राप्ति होक्तर प्राकृताय रूर एने हैं। प्राप्ति हो स्थान पर पूर्व म स्थित हर 'उ' पर श्रानुस्वार का प्राप्ति होक्तर प्राकृताय रूर एने हैं। प्राप्ति हो स्थान पर पूर्व म स्थित हर 'उ' पर श्रानुस्वार का प्राप्ति होक्तर प्राकृताय रूर एने हैं। प्राप्ति हो स्थान पर पूर्व म

अगगत संस्कृत प्रथमा विभक्ति का एकवचनान्त विशेषणात्मक पुनिन रूप है। इनधार स्ट्रिंग स्थापका होता है। इनमें सूत्र सख्या १-१७० म त्' व्यञ्चन का लोप श्रोर ३२ म प्रथमा १व्यव्य स्ट्रिंग म नस्कृत्य नार्य य स्थापका स्थापका

राया पर की मिढि सूत्र सख्या ३-४९ में की गई है। १३६ ॥

सप्तम्या द्वितीया ॥ ३-१३७॥

· सप्तम्याः स्याने कचिद् द्वितीया मरति ॥ निज्जुञ्नीय भरह रिंत ॥ धार्ष नर्रः वर्षे च्य्यते । तेण कालेण । तेण ममएण । तस्मिन् काले तस्मिन् ममये इत्यर्थे ॥ प्रथमा^{दा हा} द्वितीया च्य्यते चउनीमपि जिणारसा । चतुर्निशतिरपि जिनवरा हत्यर्थेः ॥

ां प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में सस्क्रतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'जस' का प्राकृत में लो । होकर प्रथमा-ाह्यचनान्त प्राष्ट्रत पद किणवरा सिद्ध हो जाता है। ३-१३०॥

क्यडोर्य लुक् ॥ ३-१३⊏ ॥

क्यडन्तस्य क्यड्पन्तस्य वा सनिवनी यस्य लुग् भवति ॥ गहन्नाड । गहन्नान्य । ागुरु गुरु भवति गुरुरिपाचरति वेरपर्थः । क्यड्षु । दमदमाइ । दमदमाञ्चइ ॥ लोहित्राह । ोहियाधह ।

ेअर्थ —सस्तृत, प्राकृत श्रादि भाषात्रों में सज्ञात्रों पर से घातुत्रों अर्थात् क्षियात्रों के बनाने का विधान पाया जाता है, तश्तुसार वे नाम घातु कहलाते हैं और इसी रीति से प्राप्त घातुओं में श्रन्य सर्व सामान्य घातुत्रों के समान ही जाल वाचक एव पुरुप वोधक प्रत्ययों की सयोजना की जाती है। जब सक्षत सहार्कों में 'क्यड' श्रीर 'क्यड प' = 'य' श्रीर 'इ' प्रत्ययों की सयोजना की जाती है, त्व में शब्द नामार्थक नहीं रहकर घातु ऋर्थक बन जाते हैं, यों घातु खग की प्राप्ति होने पर तत्परचात् उनमें काल बाचक तथा पुरुष बोधक प्रत्यय जोड़े जाते हैं। ऐसे घातु-रूपों से तब 'इच्छा, खाचरण, श्रभ्याम' स्वादि बहुत से श्रथ प्रस्फुटित होते हैं। जहा स्वपने लिये किसी वस्तु की इच्छा की जाय पहीं 'इन्छा धर्थ में' उस वस्तु के बोधक नाम के आगे 'क्यच्=य' प्रत्यय लगाकर तत्परचात काल वाचक प्रत्यय जोडे जाते हैं। उदाहरण इस प्रकार है - पुत्रीयति = (पुत्र + ई + य + ति)=वह अपने पुत्र होने की इच्छा करता है। कवीयति=(कवि+ई+य+ति)=अपने आप कवि यनना चाहता है। कर्जीयति -सुर कर्मा बनना चाहता है। राजीर्वात श्राप राना बनना चाहता है, इत्यादि। कमी कमी 'क्यच= य' 'यवहार करना अथवा समसना' के अथ में भो आ जाता है। जैसे —पुत्रीयति छात्रम् गुरु ≈ गुरु अपने छात्र के साथ पत्रवत व्यवहार करता है। प्राप्तादीयति छुटया मिलु =िमलारी अपनी मीपड़ी को महल जेसा सममता है।

जहां एक पदार्थ किसी दूसरे जैमा व्यवहार करे, वहां जिसके सदृश व्यवहार करता हो, इसके याचक नाम के व्यागे 'वयह =य' प्रत्यण लगाया जाता है एव तत्परचामु काल बोधक प्रत्यर्था की सयो नना होती है। जैसे --शिष्य पुत्रायर=शिष्य पुत्र के समान व्यवहार करता है, गोप कृष्णायते=गोप कृष्ण के समान व्यवहार करता है। विद्वायते = वह विद्वान के सददा व्यवहार करता है। प्रश्नयति = वह प्रश्न फरता है, मिश्रयति=भिलावट करता है, लवणयति=वह खारा सेमा करता है। यह लवण रूप सनाता है। पुत्राह=बह पुत्र खेला स्ववहार करता है, विवरति =बह विवा जैसा स्ववहार करता है। इसी प्रकार से ^{, गुणाय त}, दोषायने, द्रमायते दुलायते, सुलायते' इत्यादि सेंदर्शे नाम पातु रूप हैं। पक्त 'हयड' भीर श्यहम्' के स्थानीम प्रत्यय 'य' का माइल में लोप हो जाता है और तरणचान प्राष्ट्रतीय काल-

पारें सस्कृत का सप्तर्मा विमन्ति का एकवचनान्त पुहिंगा का स्व है। इसमें सूत्र सक्या २ १२० को युक्ति में सप्तमी विमक्ति के स्थान पर एनीया विमक्ति धेन्स करने की आदेश प्राप्ति, तदनुसार २ ६ से तृतीया विभक्ति के एकवचन में सम्कृतीय प्राक्तव प्रत्य र था। ये स्थान पर प्राप्त त साथ पे प्रत्यय की प्राप्ति, २ १४ से तृतीया विमक्ति का प्रत्य पे। प्रत्य मूल प्राप्त है। इसमें की स्थान पर पर वो प्रत्य वर्ण की प्रयुक्त पर की प्राप्त की प्रत्य वर्ण की प्रयुक्त पर पर वो प्रत्य प्राप्त की प्राप्त की

'तेण' सर्वनाम रूप की सिबि ऊपर इसी सुत्र में की गई है।

समये संस्कृत को सप्तमी विभक्ति का प्रविधानन्त पुल्लिए का रूप है। इमहायाई मा समर ए है। इसमे सूत्र सब्या १-१७० से मूल संस्कृत शान 'समय' में स्थित 'य व्यञ्जत वा तीर, 1 17 वी, गृलि स सप्तमी विभक्ति के स्थान पर आष्ट्रत में गृलीया विभक्ति का प्रयोग करने के बारत हो हो। विस्तुतार ३ ६ से तृतीया विभक्ति के एकववन में संस्कृतीय प्राप्तक्ष प्रत्यय (टा=मा' के स्वात हो हो। में पा' प्रत्यय की प्राप्ति, ३ १४ से तृतीया वभक्ति का प्रत्यय पा' प्राप्त होने से मून प्राप्त कर है की सिंधत चा स्थान पर 'चा' के स्थान पर 'पा' की प्राप्ति चौर १ २० से प्राप्त पाइन हो। मन प में स्थान चा स्थान पर 'चा' के स्थान पर 'चा' की प्राप्ति चौर १ २० से प्राप्त पाइन हो। मन प में स्थान चा स्थान पर 'चा' के स्थान पर 'चा' की प्राप्ति हो कर समयण रूप मिद्र हो जाता है।

चतुर्गिद्याति मारहत का प्रथमान्त सख्यात्मक विशेषण का नव है इमकाँ प्राष्ट्रत हर बारि है। इसर मूत्र सरवारि १७७ से प्रथम 'त' स्वत्रजन का लोग, र-८६ से रेफ कव 'र' धारुवन का ही १६० से विष्ट हरव ह' के स्थान वर इसी स्प्रामुमार खितम वर्ण 'ति' रा लोग के हूव श्रीच क्वर 'र' को प्राप्ति, १-२६० से 'ता हरार 'स' वी प्राप्ति, १-१६० की पूचि से प्रथमा विश्वकि के स्थान वर द्वितीया विभक्ति का प्रयोग का के कि चारित प्राप्ति, १-१६० की पूचि से प्रथमा विश्वकि के स्वत्रवार का में सहतीय प्राप्तव्यव प्रयोग की दिश्वन प्राप्त के स्वत्रव स्वत्रव प्राप्त के स्वत्रव स्वत्रव स्वत्रव प्राप्त के स्वत्रव स्वत्य स्वत्य स्वत्रव स्वत्रव स्वत्रव स्वत्य स्

'पि' धापय की सिद्धि ग्रूत्र-संख्या १४१ में की गई है।

जिनक्या संस्टित का प्रथमो विभवित का बहुवयनाता बुल्लिंग का रूप है। इतक दी रूप विभवता होता है। इसमें सूत्र-मुख्या १-२२ से में 'में के स्थान पर 'ल' की आति, है। है प्राप्त प्राप्त राव्य 'क्षिएवर में स्वित व्यत्य हृद्ध स्वर 'सां के स्थान पर प्रथमा विभवित का बहुस्य बोपक प्रयय का मनुसाव होते से वीर्य स्वर 'सां को गति भीर ३-३ में बात बाहुन स्यह दिवस # प्राकृत व्याकस्य #

हतात सहर का प्रवास काल का हिताय पुरुष के एक प्रवास काल का हिताय पुरुष के मिल से हिताय पुरुष के प्रकास किया है हतीय पुरुष के दितीय पुरुष के एक प्रचाय में प्राष्ट्रत में कमसे सि' खौर 'से' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर हतारी तथा हससे रूप सिद्ध हो जाते हैं।

चैपसे साफ़त का वर्तमानकालका द्वितीय पुरुष का एकवचनान्त आसमेवणीय अकर्मक क्रिया द ना रुप है। इनक प्राकृत रूप वेबसि और वेबसे होते हैं। इनमें सूत्र संख्वा र २३१ से प' के स्थान र व' की प्रीस्ति और २२१४० में पान्त 'वेब' घातु में वर्तमानकाल के द्वितीय पुरुष के एकवचनार्थ में तमसे 'सि और 'स' प्रत्यवों की प्राप्ति होकर वेचसि और वेचसे रूप सिद्ध हो जाते हैं। २-१४०॥

किता मि: ॥ ३-१४१॥

य त्रयस्याद्यस्य वचनस्य स्थाने ्मिये स्थानीयस्य भीरिकार मर । न स्रिये इत्यर्थन्॥

के) एक बचन में वर्तमानकाले में प्रयुक्त के स्थान पर प्राकृत में 'भि' प्रत्यय की मि=इसामि=में हमती हूँ अथवा में हमती नम् सूत्र क अधिकार से प्राकृतीय प्राप्त काया करता है, तरतुमार लीप हुए स्वर 'इ' १-२३ के अनुसार अनुस्तार हो जाता है। मि≕हे यह जाणय 'रूसिड मकक = हे यह-

हानी ! में रोष करने के लिए समय हैं । इस उदार ाथानि के स्थान पर सक की प्राप्ति हुई है, जो पह प्रशित करना है कि प्राप्तब्य पत्थय कि' के स्थान पर प्रव्यस्य 'इ' स्वर का लोग होकर राज प्रस्वय रूप इलन्त 'मृ' का खनुस्वार हो गया है । आसमनेपदीय घाड़ का उदाहरण इस प्रकार है ~न स्त्रिये = न सर क्रिये = न स

, , चदाहरण इक

हत्तामि संस्कृत का वर्तमानकाल का तृतीय पुरुष का एक ययनान्त परस्मैप्रीय श्रव्यक्षंक विया-पर का रूप है। इसका प्राकृत रूप मी हसामि ही होता है। इसमें सूत्र मटया-२-१४४ में मृत्र प्रावृत भू (समें में स्पित श्वन्य द्वाव देवर 'ख' को 'झा' की प्राप्ति स्पीर ३-१४१ से प्राप्त प्रापृतीय पातु 'हम।

मेद पाया जाता है, ब्राकुन भाषा में बैसा नहीं है, तदनुषार ब्राकुत-मार्था में काल-बाधक एवं पुरुद्दरन प्रत्ययों की श्रणी एक ही प्रकार की है, सस्तुत के समान " परश्मेवर्शय फोर आत्मनेवन्य" इन्हों हे भिन्न मिन्न लेली का प्राष्ट्रत में श्रमाव ही जानना । उमी प्रकार से संस्कृत म जैम रश प्रवार के हा होत हैं, बेंसे प्र हार के लकारों का भी प्राष्ट्रत म खमान है, किन्तु प्राष्ट्रत मापा में वर्तमान-काल मुक्क भविष्यवाल आज्ञायक, विवि प्रयंक और वियानिपत्ति अर्थात लुट रुकार यां हल हह सहार्थे हर ही प्राप्टत में पाय वाते हैं। सूत्र मख्या ३-१४८ में श्रदाार्थक लकार क लिए 'प्रज्ञी' शर हा दर विया गया है और ३-१६५ में विधिलिंड क लिए सप्तमी शब्द का प्रयोग हुआ है।

इम मूझ में बर्तमान काल के श्यम पुरुष के एक वचन क प्रत्ययों का निर्मा किया गया रे. न्यु सार सरकृत मापा में परस्मैपदीय श्रीर श्रात्मने पदीय रूप मे प्रयुक्त होने वाले प्रत्यय वि' और रहे स्थान पर प्राकृत स "इच = इ" श्रीर "एच=ण" प्रत्ययो की प्राप्ति होती है। बदाहरण इम प्रकार (-इसति = इमइ और इसए=यह इमता है अथवा यह हनती है। वयते=तेयह और वयप=यह इधेगी श्रथना वह कोंपती है। उपरोक्त "इच् छीर एच" प्रत्ययों म जो हलन्त चुकार लगेवा गया है, प्रशाह तारपर्य है कि खागे सूत्र सख्या ४-३१८ में इनके सम्बन्ध में पैशाधी भाषा को हुन्द्र मे विशय थिर्द है लाई जाने वाली है, इसीलिए हलन्त घकार की योजना खत्त्य रूप से करी ही खावस्य हना पर्रा है।

"हसइ" कियापर रूप की मिदि मूत्र सख्या ?-१९८ में की गई है। इसति संस्त्र श र मान काल का प्रथम पुरुष का एकघचनान्त कियापद का रूप है। इसका प्राञ्चन रूप हमद हाता है। इस में गुत्र-सख्या ३-१३६ में संस्कृती। प्रत्यय "ति" के स्वान पर प्राकृत में 'व" प्रत्यय की वारि सार हराए रूप मिद्र हो जाना है।

येपते माञ्च का बतमानहाल का प्रथम पुरुष का प्रवचनान्त आत्मी पर्शय क्रियाश का श है। इमके प्राफुत राप चयद और वेबए हाते हैं। इनमें सूत्र मरवा १-२३१ से व फेस्वान पर व प प्राप्ति और ३-१३६ स सम्द्रनीय पत्यय 'ते' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'क्र' में 'इ' स्रीर 'उ' प्रत्यये हा हा" होकर छम में दोनों प्राष्ट्रनीय कियापता के रूप धेयर चीर वेवल सिंह हो जाते हैं। ६-१३६॥

द्वितीयस्य सि से ॥ ३-१४०॥

त्यादीना पर्स्मपदानामारमनेपदानां च हितायम्य प्रयस्य मवन्धिन भाषाननहरी स्थाने सि में इत्येताबार्दशी अपतः॥ इसिन । इसने । वेबिन । वेबिन ॥

अर्र — मन्दन भाषा में दितीय पुरुष के एक वचा में वर्तमान काल में ६एकत होने बासे का^{है}. वर्रीय चीर आसमे वर्रीय प्रायय मिं, तथा म के स्थान पर प्राकृत म भी कीर सं प्रायमी ही कारी प्राप्ति हुच्या करती है । उदाराण इस प्रकार हैं -हिमिन्द्रिमीम चौर हममें-तू हुमता है चयुश न्द्रहरी है। वेदमन्त्रेविम की। बबसे = प कॉरना है प्रथया न कॉरना है।

धातु सु' स स्थित 'ऋ' के स्थान पर प्रार्कृत में 'खर' की प्राप्ति हो कर प्रोकृत में 'सर' प्रयास्प की प्राप्ति, तत्वरचात् । रिश की वृत्ति से वर्तेमान काल के ततीय पुरुष के एकमान में सरहन में प्राप्तब्य चात्मनेपरोय प्राप्तर्रय प्रत्यय 'इ' के स्थान पर प्राकृत मे प्राप्तन्य प्रत्यय 'मि' में रियत हस्य स्नर 'इ' का लाप होकर हजन्त रूप से प्राप्त 'मृ' प्रत्यय की अनुग्नार की प्राप्ति स्त्रीर १-२३ से प्राप्त हलन्त प्रत्यय 'म' को अनुस्तार को प्राप्ति होकर प्राकृत किया पर का रूप मर मिद्ध हो जाता है १३-५४१ ॥

वहुप्ताचस्य न्ति न्ते इरे ॥ ३–१४२ ॥

त्यादीना पर्स्मपदात्मनेपदानामाद्यत्रय सत्रन्थिनो बहुषु वर्तमानस्य वचनम्य त्थाने न्ति न्ते इरे इत्यादेणा भगन्ति ॥ इसन्ति । वेगन्ति । हमिज्जन्ति । रमिजन्ति । गज्नन्ते से मेहा ॥ नीहन्ते रुक्ससाण च ॥ उत्पन्नतन्ते कर्-हिस्रय-पायरे कव्य-रूपणाइ ॥ दोषिण नि न पहुष्पिर बाह् । न प्रभनत इत्यर्थः ॥ निन्छुहिरे । विचुभ्यन्तीत्यर्थः ॥ वनचिद् इरे एकत्रेषि । सम्बरे गामचिक्त्वक्लो । शुप्यतीत्यर्थः ॥

अर्थ --- महरूत भाषा में प्रथम (पुरुष धन्य पुरुष) के बहुवचन में वर्तमान काल में प्रयुक्त होने वाले परस्मैपदीय स्त्रोर स्त्रात्मनेपदीय प्रत्यय 'स्त्रनित स्त्रोर 'स्त्रन्ते' के स्थान पर प्राकृत में 'न्ति, न्ते श्रीर इरे' प्रत्यवों की आदेश मान्ति हुआ करती है। उदाहरण इम प्रकार हैं —हसन्ति=हसन्ति=ने हैंसते हें श्रयवा हैंसती हैं। वेपन्ते=वेवन्ति=ते कांपते हं श्रयवा वे कापती हैं। हासयन्ति=हिसज्जन्ति=ये हैंसाय जाते ऋथता वे हैं नाई जातो हूं। रमयन्ति=रमिजन्ति=ते खेनाये जाते हैं। ऋथवा सेलायी'जाती हैं। गर्नेन्ति से मेघा =गज्ञ ते से मेहा = बादल श्राकाश में गर्नता करते हैं । जिम्यति राज्ञसेभ्य = बीहन्ते रक्षमाण = वे राचमों से डरते हें श्रयत्रा डरती हैं। उत्पद्यन्ते कवि हर्प्य मागरे काग्य रत्नानि = खपजन्ते कह हिअय सायरे कव्व रयणाह कवियों के हृत्य रूप ममुद्र में काव्य रूप रतन उत्पन्त होते रहते हैं।ही अपि न प्रमवत बाहू =दोरिए वि न पहुष्पिरे बाहू =दोनां हा नुवाएँ प्रभावित नहीं होती हैं। विद्यापन्ति=विच्छुहिरे=ने घबराते हैं अथना वे घवडाती हैं। वे चवल होती हैं। इन उगहरणों की देखने से पना चलता है कि सरमतीय परस्मैपदीय श्रमवा ब्यात्मनेपदीय प्रत्ययों के स्थान पर वर्तभान काल ^{प्रथम} पुरुष के बहुवचन में प्राकृत मे 'न्ति, न्ते श्रीर इरे' प्रत्ययों को प्राप्ति हुन्ना करती है। पहीं पहीं वा बतेमान काल के श्यम पुरुष के बहुवचन में प्राष्ट्रत में बहुवचनीय परयय 'इरे' की प्रान्ति भी देगी वाती है। बदाहरण इस प्रकार है —शुष्यति प्राम कर्दम =सुमद्दरे गाम धिक्यलो =गाँव का कीचढ़ मुत्रता है। इस बद्राहरण में सम्मृतीय क्रियापर 'शुष्ट्याति' एक्यचनात्मक है तट्नुमार इसका प्राकृत स्पान्तर ब्रमई श्रयंत्रा समय होना चाहिय या, किन्तु 'स्मइरे' ऐमा रूपान्तर फरफ प्राप्ततीय बहुवचनात्मक प्रत्यय 'इरे' की सयो नना की गई है। ऐमा प्रमण कभी कमो ही देखा जाता है, सर्वप्र नेही। इस 'बहुलम्' मूत्र के अन्तर्गत ही मममना धाहिय ।

में वर्तमानकाल के तृतीय पुरुष के एक बचन में संस्कृतीय प्राप्तब्य प्रथय 'मि' के समान है पर्या 'मि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राक्तीय रूप हसामि निड हो जाता है।

वेपे संस्कृत का वर्तमानकाल का सतीन पुरुष का एकवचनान्त आसनेपश्य प्रारसील का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप वेवामि होता है। इसमें सूत्र सट्या १ २३१ से मूल मर्रह एउ म स्थित प्' के स्थान पर 'व्' की प्रास्ति, ४ २३६ से प्रास्त हतुन्त बाृतु 'वे व' में विकरण मान प्र प्राप्ति, दे-१४४ से माप्त विकृत्ण परयुय 'ख' के स्थान पर दार्घ दुवर 'खा' की प्राप्ति और दे १४। क प्राक्तीय घातु 'वेवा' में वर्तमानकाल कृत्तीय पुरुष के एरवनन में संस्ट्रीय था मनगर प प्रत्यय'इ'के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'मि' प्रत्येष की प्राप्ति हाकर प्राकृतीय रूप वेदामि मिड हो जा।

हे यह-ज्ञानक ! सरकृत का सबीधन का एक बचनान्त पुल्लिम विशेषण का रूप है। ह प्राष्ट्रत रूप हे बहु जाण्य । होता है। इसमें युप्र सख्या २-८३ से 'झ = ज + म ' म कित म' कार लोप होने से 'झा' के म्यान पर प्राकृत में 'जा' की प्राप्ति, १ २२८ में 'न' के स्थान पर 'व' की म १-१६७ से 'फ्' व्यंजन का लीव, १-१८० से लीव हुए व्यंजन क' के पर्श्वान शेर्प रहे हुए 'ब' र सन 'य' की प्राप्ति छीर १ ३८ से संयोधन ये एक वचन में प्रथमा निर्मात के समान है। १ - इ 15 त्राकृतीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'स्रो=ध्यो' कि' खमात्र हो सर प्राकृतीय रूप हें बहु-जाणय ' मिंद्र हो जागरी

रोपितुम् मन्द्रत का देल्वर्थं कृतन्त-का रूप है। इमका प्राकृत रूप रुसिव होता है। इमका मध्या ४-२३६ में मूल मस्ट्रत चातु 'रूप' में स्थित हस्य खर 'व को प्राकृत में दीर्घ खर 'ऊ' हर । १ २६० से 'प्' के त्यान पर 'म्' की प्रान्ति, १-१७७ में त' त्यञ्जन का लीव सीर १-२६ से स्टिश 'म' के स्थान पर शनुस्वार की माध्ति होकर बाकुतीय रूप हरित्र मिद्र ही जाता दें।

शाकीम संस्कृत का यत्तवानकाल के स्तीय पुरुष की एक्यानान्त परानैगरिक प्रा कियापद का रू। है। इसका प्राकृत रूप मेनक होता है। इसमें मूत्र संख्या १-२६० स रा व पर 'स' की प्राप्ति, ४ २३० से 'क' को किल 'कह' की शांति, प्राकृत में गण भेर का कमाहर् संस्कृत पातु 'राष्' में पंचम गण योतक पात विकरण प्रत्यय 'मो=रनु=नु' का नंदन म समाव, हर शेव रूप में प्राप्त पातु 'नक्क' में दे रूथर की यूनि से वर्तमानकात क स्तीय पुरुष के प्रवास हैं। म प्राप्तस्य प्रत्यय मि में स्थित हरव स्थर दें का लीव होवर हलन्त रूप में प्राप्त में प्राप्त के बीर १२३ में मान्त इलन्त प्रथ्य 'म्' को अप्तरवार की प्राप्ति हो कर पाछन विचायर का अप सिद्ध ही आवा है।

'म' भन्यप की सिद्धि सूत्र मंटया १-५ की गई है।

शिये मध्यत का वर्ततमान काल का नृशीय पुरुष का एक वध्यानत आसानेवरीय कर् अवसंक क्रियावद का रूप है। इसका प्राञ्चन रूप गरे होता है। इसमें मुजन्मख्या ४ १६४ में मून म

वहुष्त्रायस्य नित न्ते इरे ॥ ३–१४२ ॥

त्यादीना परस्मेंपदात्मनेपदानामाद्यत्रय समिन्यनी बहुंछ प्रतिमानस्य वचनम्य स्थाने नित न्ते इरे इत्यादेशा भगन्ति । इसन्ति । प्रेगन्ति । इसिज्जन्ति । रिमर्जन्ति । गज्नन्ते से मेहा ॥ प्रोहन्ते रक्समाख च ॥ उप्यजनन्तं कद्द-हिग्रय-पायरे कन्प-रथणाड ॥ दोष्णि नि न पहुष्पिर बाहू । न प्रभग्न इत्यर्थः ॥ निज्कुहिरे । वित्तुभ्यन्तीत्यर्थः ॥ यग्निद् इरे एक्त्येषि । समझरे गामचिक्सक्तो । शुष्यतीत्यर्थः ॥

अर्थ — मस्कृत भाषा में प्रथम (पुरुष श्रान्य पुरुष) के महुत्रचन में वर्तनान काल म प्रयुक्त ं होने वाले परस्मैपदीय खोर चात्मनेपदीय प्रत्यय 'स्रन्ति जीर 'खन्ते' के स्थान पर प्राकृत में 'न्ति, न्ते श्रीर इरे' प्रत्ययों की श्रादेश पाष्ति हुआ करती है। उदाहरण इस प्रकार हैं --हसन्ति=हमन्ति=प्रे हँसते हें श्रथवा हँमती हैं। वेपन्ते=वेवन्ति=वे कांपते हें श्रथवा वे कापनी हैं। हासयन्ति=हिमजन्ति=वे हँसाय जाते श्रथता वे हँमाई जातो हैं। रमयन्ति=रभिज्ञन्ति=ते सेनाये जाने हैं श्रथवा सेलायी'जाती हैं। गर्नित ये मेघा = गज्जन्ते से मेहा = बादल आकाश में गर्जना करते हैं । बिम्यति रात्तसिभ्य:=योहन्ते रक्षमाख च वे राज्ञमों से डरते हें श्रथवा डरती हैं। उत्पद्यन्ते किव हदा मागरे काव्य रत्नानि = चापज्ञन्त कह हिअय सायरे कठत रयणाह कवियों के हहय रूप ममुद्र मे काश्य रूप रहन उत्पन्त होते रहते हैं। हो थाप न प्रमवत बाहू =दोषिए वि न पहुष्पिरे बाहू =दोनां हा सुनानें प्रमावित नहीं होती हैं। विद्याग्यन्ति=विच्छुहिरे=ये पवराते हैं श्रथवा वे पपडाती हैं। वे चंयल होती हैं। इन उंगहरणों की देखने से पता चलता है कि सरमुतीय परस्मैपदीय श्रमवा श्रामनेपदीय प्रत्ययों के स्थान पर वर्तभान काल प्रथम पुरुष के बहुयचन में प्राकृत में 'नित, न्ते और इरे' प्रत्ययों की प्राप्ति हुन्ना करती है। कहीं कहीं पर वर्तमान काल के श्यम पुरुष के बहुवचन में प्राकृत में बहुवचनीय मत्यय 'इरे' की प्राप्ति भी देगी जाती है। चत्राहरण इन प्रकार है -शुष्यति प्राम कर्दम =सुनइरे गाम चिक्रसलो = गाँव का कीयड़ क्षिता है। इस चर्राहरण में सम्मृतीय कियापर 'शुष्यति' एक्वचनारमक है तर्मुमार इसका प्राकृत रूपान्तर मूमइ अथवा सुमद होना चाहिये या, किन्तु 'सुमइरे' ऐमा रूपान्तर करके प्राष्ट्रतीय ^{बहुबचनात्मक} प्रत्यव 'इरे' की मयोजना की गई है। ऐमा प्रमाग कभी कमी ही देखा जाता है, सर्वप्र नहीं। इस बहुलम् सूत्र के अन्वर्गत ही ममम्मना चाहिय।

हत्तन्ति संस्कृत का वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष का बहुवचनान्त परामंपरीय हर्द्धहरू का रुष है। इनका प्राकृत रूप भी हसन्ति ही होता है। इसमें मूत्र सरवा ३ १४२ से प्राप्ट पणु १८३ वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के बहुवचन म 'न्ति' प्रत्यय की प्राप्ति होकर ट्सन्ति रूप निद्ध ए उग्धरि

वियन्ते संस्कृत का वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष का बहुवचनान्त आसमनव्याव अध्यक्षिण का रूप है। इसका प्राकृत रूप प्रवन्ति होता है। इसमें सून सद्या १ २३१ में मूल आतु 'वेर' नैं। दे 'प' के स्थान पर 'व' की प्राप्ति, तत्वकात् प्राप्तान 'वेव' में वर्तमानकात क प्रथम पुरुष क स्थुस्त में आसनेपदीय प्राप्तव परस्य 'खनते='ते' के स्थान पर् प्राप्तन में 'नित' प्रस्पव भी प्राप्त रूप के स्थान पर प्राप्तन में 'नित' प्रस्पव भी प्राप्त रूप के स्थान पर प्राप्तन रूप के स्थान पर प्राप्तन रूप के स्थान पर प्राप्त रूप स्थान पर प्राप्त रूप के स्थान पर प्राप्त रूप के स्थान पर प्राप्त रूप स्थान पर स्थान पर प्राप्त रूप स्थान पर स्थान स्थान स्थान स्थान स्थान स्थान स्थान स्थान स्यान स्थान स्थान

हामयन्ति माछन या वर्तमान पाल का प्रथम पुरुष रूप बहुवचनात वार्ताः व्यक्षमं कियापद का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप हित्र होता है। इसमें पूत्र मंत्रा शार्ति मूल यातु हत में भान विधि व्यर्थ में 'इन्न' प्रत्यय की प्राप्ति, ११० से हम' धानु में विष्व के स्वर 'खा' क खारी प्राप्त वत्यय 'इन्ज्ञ' की इ' होने में लोग, १-४ से हलन्त 'हत' के नाव में वर्तिन हुए प्रत्यय रूप 'इन्ज्य' की सिक्ष होकर 'हिसन्ज्ञ' खार की प्राप्ति और १५२ से प्राप्तीत 'विध्व यतान काल के बहुवचनात्मक प्रथम पुरुष म 'न्ति' प्रत्यय की प्राप्ति हो हरे हिसन्जिन काल है।

रमयिन सरकृत का वर्तमान होत के प्रथम पुरुष का सहयचनारत भाव विधि सोन्ह हिर्म का यह है। इसका प्राकृत रूप रिमन्नित होता है। इसमे सूत्र मत्या ३-१६० स सूप प्रानृ में माय विधि सोतक 'इ.ज.' प्रस्यय की प्राप्ति, १-१० में 'रम' धातु में स्थित का स्थ कार 'का काणा माय विधि सोतक 'इ.ज.' की स्था की प्राप्ति, १-५० में 'रम' धातु में स्थित का स्थ कार 'का काणा में काणा के है हुए प्रस्थ रूप 'हार' सिध हो हर रिमन्ने भाव में काणा के है हुए प्रस्थ रूप 'हार' सिध हो हर रिमन्ने माय सिमन्ने भावतमानकाल के हैं पण पुरुष प्रस्थ में माय सिमन्ने भावतमानकाल के हैं पण पुरुष प्रस्थ माय सिमन्ने भावतमानकाल के हैं पण पुरुष प्रस्थ माय सिमन्ने सिप्ति प्रस्थ की प्राप्ति हो हर रिमन्नित रूप निद्ध हो जाता है।

'गमनी' 'ररे' चीर 'मेहा' तीनों रूपों की सिद्ध सूत्र नरवा १-१८७ में बीगई हैं।

ादिन्यति संस्टन या यसेमानकात के प्रथम पुरुष के बहुवयनात्मक खक्सेक क्रियादर कर है। इसका प्राक्त रूप योहन्ते होता है। इसमें सूत्र-सदया-४-४३ स सय-अर्थक संस्टार-देव 'मा' स्थान पर प्राष्ट्रन में 'मांक धातु-रूप की कादेश-प्राप्ति कीर के-१८३ से प्राप्ता 'बीक्ष' में बडानार" के प्रथम पुरुष के बहुवयन में 'न्ये' प्राप्ता का प्राप्ति होकर बहुन्ते रूप विद्वारों साता है।

राशसंस्य संस्कृत या पद्मणी विमक्ति का यदुवधनात्त वुँ हिन्नगर पर्दे। इनका झार्ग ह दक्तमान दे। इनमें सूत्र-संस्था १-८४ से 'ग' में स्थित होर्थ स्वर 'खा' के स्थान पर 'स' दा हाने २-६ से 'ए' के स्थान पर 'स की पालि, र-म्ह से प्राध्त 'ख' को द्वित्व 'युक्त की प्राणि, र-वर । -२० से प्राप्त प्रत्यय 'ण' पर श्रनुस्वार की प्राप्ति हो कर प्राक्तन-रूप *रक्लसाण* सिद्ध हो जातो है।

उत्पद्यन्ते सस्कृत का वर्तगोनकाल का प्रथम पुरुप का महुनचनान्त व्यक्तमेक कियापर ज रूप है। हमका प्राष्ट्रत रूप उत्पद्यत्त ते होता है। हममें सून सख्या २०१ से प्रथम हलन्त व्यञ्जन न' वा लोप, २८६ से लोप हुप हलन्त व्यञ्जन 'त्' के परचात् रोप रहे हुप 'प' को द्वित्व 'प्त' की प्राप्ति २४ स सयुक्त व्यक्तक 'यं को 'ज' की प्राप्ति, २८६ से प्राप्त 'ज' को द्वित्व 'ज' को प्राप्ति और १४४ से प्राप्ताग 'उप्पद्य में वर्तमान काल के प्रथम पुरुप के यहुनचन में 'न्ते' प्रस्यय की प्राप्ति भिक्त प्राष्ट्रत क्रियापद को रूप उप्पद्यक्तन्ते सिद्ध हो जातो है।

कारी हुन्य सागरे सस्कृत का समासारमक सन्तमी विभक्ति का एकवचनान्त पुल्लिंग रूप है। सिना प्राकृत रूप 'कइहिश्रय साथरे' होता है। इनमें सूत्र सख्या र-१७० से 'व' का लोन, र १२८ से ऋ' के स्थान पर इ' का प्रानि, र ९०० से 'द्' का लोप, र-१०० से 'प्' का लोप, र १८० से लोप हुए प' के परचान रोप रहे हुए श्व' क स्थान पर 'व' की प्राप्ति, यां प्रान्तींग 'कइ हिश्रय सायर' में १ ९१ में मत्तमी विभिन्त के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य भवि = इ के स्थान पर शकुत में दे प्रस्थय की प्राप्ति, प्राप्त प्रत्यय 'डे' में हन'त 'ड' इ'यबज्ञ कोने से प्राप्ताग मूल राष्ट्र 'कइ हिश्रय सायर' म स्थित श्वन्त्य स्वर 'श्व का लोग हाकर होग हन-न श्वग में उपगेस्त 'द' प्रत्यय की प्राप्ति सेकर प्राकृत सप्तस्यन्त रूप *सह दिश्रय साय*रे सिंद हो जातो है।

फान्य रहनानि सरकृत का समास त्मक प्रथमा विमक्ति का चहुनचनानत नतु मक निगातमक सहा का कर है। इन का प्राकृत रूप वश्य-रयगाइ होता है। इन में सुत्र सख्या १-न दे से 'का' में रियत ही वंदन एं 'का' के स्थान पर स्वस्य स्वर 'खा' को प्राप्ति, २ प्यः से 'यं' वा लोप, २ प्रः से लोप हुए 'यं' के परचात रोप गहे हुए व' को द्विस्य 'क्व' की, २-प्र्य से हल त व्यञ्ज्ञन 'न' का लोप, २ १०१ से लाप हुए 'वं' के पूर्व में 'खा' की खागन रूप भाषत, १-९०० से खाप रूप में प्राप्त रूप में प्राप्त रूप में माति 'खा के स्थान पर 'य' की प्राप्ति, १ २२ से 'न' के स्थान पर 'ण' को प्राप्ति, यो प्राप्ता क्या प्राप्त 'खा के स्थान पर 'य' की प्राप्ति, १ २२ से 'न' के स्थान पर 'ण' को प्राप्ति, यो प्राप्ता क्या प्राप्त 'स्पर्त' में ३ २६ से प्रथमा विक्र कि बहुवचन में नतु मक लिग में खान्य इस को शोर्प स्वर की प्राप्ति होते हुए सरस्त्रीय प्राप्त की प्राप्ति होते हुए सरस्त्र-रस्पार्ध सिद्ध हो जाता है।

'रोंगिय' सख्यात्नक विशेषण पर की सिद्धि सूत्र सख्या ?-१२० में की गई है।

'कि थीर 'न' दोनो श्रव्यय की सिद्धि प्रत्र सट्यों १-६ म की गई है।

प्रभवत संस्कृत का वर्तमानकाल का प्रथम पुरुष का दिवयनान्त व्यव्यं कि दिवया क्षा के दिवया कि स्वाप कि स

विश्वस्थित संस्कृत वा वर्तमानकाल का प्रथम पुरुष का पहुष रतान्त शक्त कि क्षित्रार हैं। इसका प्राकृत रूप विच्छुदिर होता है। इसमें पुत्र मत्या २३ से मृत संस्कृत था। 'बहुनी' से का 'द्ध' के स्थान पर 'द्ध' की प्राप्ति, २ तर से प्राप्त 'द्ध' की द्विरय 'द्ध द्ध की प्राप्ति, २ तर से प्राप्त 'द्ध' की द्विरय 'द्ध द्ध की प्राप्ति, १ तर से प्राप्ति की स्थान पर 'द्ध' की वारित, ४ २३३ का प्राप्ति हर हो दि वारित, ४ २३३ का प्राप्ति हर है से प्राप्ति विकरण प्रदय 'द्ध' की द्वार प्राप्ति हर है से प्राप्ति विकरण प्रदय 'द्ध' की द्वार से से प्राप्ति की द्वार की प्राप्ति की द्वार प्राप्ति से द्वार प्राप्ति की द्वार की प्राप्ति की द्वार प्राप्ति की द्वार की प्राप्ति की प

शुष्यति संस्कृत का यर्तमानकाल का प्रयंत पुरुष का ध्रम्यचनान्त पश्येक विवास है। इसाम प्राष्ट्रत कर स्मादर है। इसमें सूत्र-मरवा है-रहें के संस्कृतीय मूल पानु 'गृष् में दिन्हों स्वार के जो बीर 'प्' के स्वान पर कम से दो उन्दर 'स' का सावित, ४-२२६ में काहि क्षा हार हों। के संवान पर दीर्च श्वर 'के वो वादित, ८ २३६ से प्राप्त काल प्रयंत के वे प्राप्ति, ५ १४२ की वृद्धि से एक प्रयंत के व्यान पर स्वायम के प्रयोग करों को मान्यन को क्षा तहा की स्वाप करों को मान्यन को क्षा तहा से विवास के स्वयंत करों की मान्यन को क्षा तहा से विवास के स्वयंत करों की मान्यन को स्वयंत करों के स्वयंत के स्वयंत करों की मान्यन को स्वयंत के स्वयंत्र के स्वयंत्

यास-स्वर्भः संशत का प्रथमा विमक्तिका एक वयतातृत पुँगिवत का रव है। इवडा ही वादत को रच गोम-पिक्कली होता है। इसमें मूद भंग्या २ ४६ से मार्ग में लिया है उत्पर्धः है

े तोप, ३ १४२ की प्रति के आधार से मृत्त सम्कृत शब्द 'कदभ' क स्थान पर देशन भाषामें 'विक्लह्त' शन्द की श्रादेश प्राप्ति, ३ २ से प्राप्त देशन शब्द गाम चिम्बह्तें में प्रथमा विमक्ति के एकवचन में श्रकाम , रान्त बुँहिंना में सम्कृतीय प्राप्तब्य भत्यय 'सि' क्र स्थान पर प्राकृत में 'डो=त्रो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर , देशन प्राप्ति पद 'गाम ।चिक्काळो' सिद्ध हो जाता है । ३-१४२ ॥

मध्यमस्येत्था-हचौ ॥ ३-१४३॥

ः त्यादीना परस्मेपदात्मनेपदाना मध्यमस्य त्रयस्य बहुषु पर्तमानस्य स्थाने इत्या ह्य् इत्येतापादेशाः भवतः ॥ हमित्या । इसह । नेवित्या । नेवह । पाहुलकादित्यान्यवापि । त्ययत्ते रोचते ।ज ज त रोडत्या । हय् इति चकारः इह–इचोर्हस्य (४-२६८) इत्यव विशोगणार्थः ॥

अर्थ — नस्कृत बातु श्रों में बर्तनात काल के द्वितीय पुरुप के द्वित्तवनार्थ में तथा बहुत्रचनाथ मिपसमैपतीय बातु बां में क्रम से सबाजित होते बाले प्रत्यय थस् तथा थि के स्थान पर छोर 'आस्प्रतेपश्च घातु वों में ऋब से मबाजित होते बाले प्रत्यय 'इधे' और 'घ्वे' के स्थान पर शक्तत में ''इत्या' आरे 'ह्वू-ह' प्रत्ययों की आहेश सबित होती हैं। उद्दाहरण इस पकार हैं — हमय = हसित्या और

हसय तथा हसय मध्यत हे वर्तमान काल क द्वितीय पुरुष के कम से द्विवनन स्वीर बहुबजन क स्वर्धिक क्रियापर क रूप हैं। इनके प्राक्षत कप दोनों व पनों में ममान रूप मही हिन्छा पर इनह होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र मख्या १-११० में द्वियम के स्थान पर बहुबचन दा न्योग वस्ते हों स्विहेश प्रीक्षित, र १० में हम भातु हे स्वन्य स्वर 'स्व' के स्वाने प्राप्त प्रस्यय 'द्राया' की 'ट' पा सर्माय

' निमाण किया जाकर इन 'ह' प्रस्यय के मनव में शोर सेन. माया में क्षोने वाले पश्चितन को प्रवर्शित ^{'किया} जायगा। श्रत्तएन 'सुन्न रचना' करने की दृष्टि से 'ह' प्रस्यय क जन्त में क्लस्त 'च्'को मयोचना

की गई है।

होने में लोप, तत्वरचात प्राप्तीम चातु 'हस्' में दे-१४३ से वर्तमान काल के दिवाब प्रमाह पर श्रीर बहुबचन में मस्टनीय प्राप्तस्य शस्यय 'थस्' तथा 'थ' के स्यान पर पाष्ट्रन में 'राश प्राप्त प्राप्ति होकर प्रथम रूप हसिरशा सिद्ध हो। जाता है।

हिनाय रूप हमह स सूत्र सख्या ३ १४३ से हम धातु में वर्तमान काल के हिनाय पुरुष हारा श्रीर बहुवचन में संस्कृतीय प्रास्तव्य प्रत्यय 'थस श्रीर 'थ' के स्थान पर प्राष्ट्रा म र' बच्च स्थ हा कर द्वितीय रूप हस्तर भी मिद्ध ही जाता है।

विषेथे और विषय्ते मस्त्रन के वर्तमान काल के हितीय पुरुष के कम से दिश्यन और म्यु के आध्यतिपदीय अक्स क क्रियापद क रूप हैं। इन प्राक्तन रूप दानीं वचर्ता में ममान रूप में है। 🧐 थीर वेवह होते हैं। इनमें सूत्र मरया १-२३१ से 'प' व्यञ्जन के स्थान पर व' की पालि, म्या प्रथम रूप म सूत्र मद्भा ३ १३० से द्विषयन के स्थान पर बहुययन का प्रयोग दरन की बाहेराय १ १० से प्राप्त प्राकृत घातु 'वेब' म स्थित धन्त्य स्वर'श्च'क खागे प्राप्तरथ प्रायप 'इ'या की'ह'वा मा होने से लोप, तरवरवात प्राप्तांग धातु 'त्रेष' में ३-१४३ से वर्तमान काल य हिनीय पुरा व हि में तथा बहुवचन में मन्हतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'इधे' और लवे' के स्थान पर माहन में 'र्था' प्राप्ति होकर प्रथम रूप विवित्था मिद्र हो जाता है।

हिनीय रूप थेयह में मूत्र सख्या ३ १४३ से माछन में ब्राप्त पात्र वेब में बर्तगानमः द्विनीय पुरुष के हिस्यन में और सहुषचन म संस्कृतीय प्राप्तच्य प्रश्य और 'प्यें' के की त्राकृत में 'ह प्रायय ही पाप्ति होकर द्विनाय स्व वेपह मी सिंद ही जाता है।

'ज' (पर्वनाम) रूप की निद्धि मूत्र मंद्या १ रे४ में की गई है।

त' (मर्बनाम) रूप की विक्षि गुत्र सहया ? ९९ में की गई हैं ।

रोक्ते संस्ट्रन का वर्तमान काल का प्रथम पुरुष का एक्टब्यना व्यासिन्दर्भिकाः कियापर का रूप है। इपका (आप) प्राक्त रूप गेरणा है। इपम गुरु मंत्रा १९४० म और नोप, ११० स लोप हुद प् के परवात रोह रहे हुए स्वर 'ख' के कार्त प्रस्वपार के 'इ'या के 'ह' प भन्नाव होते में लाय, ३ र-४३ की शुक्त म वर्गमात बाल के प्रथम पुरुव के एडवन। में मार् रातम्य श्रास्मावर्श्व प्रत्यय 'वे' क स्थार वर प्राकृत में हिनीय वृहर पाण ह बहु रक्तीव बरदव 'इ'वी व' ्राप्ति होका (माप) पाछतीय हरा खेइत्या निष्क हो। खाता है । ३ रेट३ ॥

त्रनीवस्य मो-म्-माः ॥ ३-१४४ ॥

स्यादीतां परम्परदान्त्रनेरहानां छत्रीयस्य गयम्य संरन्तिको बहुनु वर्तनाहरू

अर्थ — संस्कृत घातुओं में वर्तमान वाल के छतीय पुरूप के द्वियवनार्थ मंत्रया बहुवचनार्थ में परस्मैपदीय घातुओं में क्षम से सयोजित होने वाले प्रत्यय 'वस्' और 'मस्' के स्थान पर तथा खास्मनेपदीय घातुओं में क्षम से सयोजित होने वाले प्रत्यय 'वहे' एव महे' के स्थान पर प्राकृत में नमान रूप से 'मो, मु, और म' में से विसी भी एक प्रत्यय की आदेश प्राप्त होती हैं। उदाहरण इस प्रकार है — हसाव और इसाम = इसामो अथवा हसामु अथवा हसाम = इस दोनों अथवा हम (सब) हैंसते हें या हैंसती है। स्वरावहे और त्वरामहें = तुवरामों अथवा तुवरामु अथवा तुवराम = इम ्रोनों अथवा इम (सब) शोष्टता वस्त हे या शोष्टता करती है।

र एकाय और हसाम सस्कृत के वर्तमान बाल के उतीय पुरुष के बमा सि द्विषयन के और यहु त्वयन क परामैपदीय अवसंक विवाद के रूप हैं। इनके प्राष्ट्रत रूप दोनों वयनों म समान रूप से ही , हसामो, हसामु और हसाम होते हैं। इनमें सूत्र सरवा रे १४४ से प्राष्ट्रत घातु 'हस' में विवत अन्त्व रत्तर , व्योक स्थान पर 'आ की प्राप्ति, ३-१३० से द्विषयन के स्थान पर बहुवयन का प्रयोग करने की छादण प्राप्ति, यों प्राप्ताग 'हसा' में २-१४४ से वर्तमान काल के दुर्गय पुरुष के द्विषयनार्थ में एव बहुवयनाथ में सम्हन में कम से प्राप्तान्य प्रस्वय 'वस' और 'सस' के स्थान पर प्राष्ट्रत में कम से 'मो सु, म' प्रत्यों की प्राप्ति होकर कम से द्विषयनीय अथवा बहुवयनीय शक्षत रूप हसामो, हसामु और हसाम सिद्ध हो जाति है।

श्रत एवेच् से ॥ ३-१४५ ॥

त्यादे स्थाने भी एच् से इत्येवायादेशी उनकी वावकारान्वादेव भावतो नान्यम्मात्॥

हमए । इससे ।। तुनरण । तुनरसे ॥ ऋत्ए करसे ॥ अन इति किए । ठाइ । टापि ॥ रहा वमुत्रामि ॥ होह । होनि ॥ एउकारोकारान्ताद् एच से एउ भरत इति जिसीतर ज निषयार्थः । तेनाकारान्तात् इच् सि इत्वेताविष सिद्धां ॥ इमह । इससि ॥ ववर । बर्तवर

अर्थ —सूत्र मटया ३-१३६ म श्रीर ३ १४० में वर्तमान पात र पर परा में प्रपन्तुम ६५ में तथा दितीय पूरुप के अर्थ म कम म जो 'प्च=ए' एव से' प्रस्वय का बन्तेल किया गरा है के प्रत्यय केवल श्रवारान्त धातुल्लों म प्रयुक्त विच जा मवते हैं। इनका प्रयोग श्रादागा र धारा है है घातुत्रों में नहीं विया जा महता है। उदाहरण इस प्रकार है - हम्रांत=हमण= वह हमगरे करार हमती है। हमाम=हममे= तू हमता है अथवा तू हमती है। स्वरते = तुवरण= गह पा । बरता है की यह जल्दी परती है। खरस = तुबरमें = तू जल्दी परता है खबना 7ू जल्दी करेगा है। कर नः 🐃 पह करता है व्यथवा यह करती है। करोबि = करती = तु करता है व्यथवा पू करता है। इपा"।

प्रक्त'-श्रकारान्त घातुत्रों में ही 'ण' तथा 'में' का प्रयोग विषा जा मक्ता ई ऐरा ^{लड़े ह} गया है ?

उत्तर -खकागन्त धातुक्रों के चतिरिक्त खाकासन्त, भाकासन्त धातुश्रों म इन ^{स्}र ^{हरी} प्रापयों को प्रयाग कभी भी नहीं ताता है जोर छाड़ागन्त धावुषा हे खिलिक हो। धावुषी हैं है। है। तथा 'सि' का ही प्रथाय हाता है, ऐसी निहचयाताब स्थिति होते स हा 'खकारान्त' चैम बिन्दह ने शर की सर्वाचना करनी पर्ना है। पदाहरण इस प्रवार हैं - ल्व्डिन = ठाउ = पर ठहरा। है करा ठहरती है। तिष्ठमि=ठामि=तृ ठहरता है थथवा तू टहरती है। चरुवानि=वरुवाह=वर एल प्रथमा वह मूलती है। वट्यासि =यसुमामि = सू पूजना है खबमा स मूलती है। भग != । व होता है श्रवपा यह होती है। भवनि =होनि = दूशना है अपना दृशेता है सर्वानि

मुल सुत्र में चवर का 'ठब' ओड़ाहै बसा है, त्मना तायर्व यह भी है कि पाद व्यक्ति वह मीन ले कि क्यारान पातुकी म क्या ए' और 'स' प्राथ्य ही और आते हैं और s' नवा वि महीं और जाते हैं, ऐसा विवशत और निश्चवात्मक कम का निवेच करने के लिए हा कि थी पूर में स्थान दिया गया है, तर्तुमार पाटर गण यह खन्छी तरह से सामा सांब करें पार्की में ले 'o' और 'म'रे ममान हा 'इ तथा 'मि' को भीपालि अवस्थात हार्जी व्यवसारत के विवाय व्याहारा न काकागान्त व्याति प्रदुर्धी में वेवल 'द' तथा वि^वर्वाद्रा^ता र गत में भी प्रास्ति का निर्मयागाए रच म निषेत है। इस प्रकार से साकारात्व, क्षेत्र धातुची के मगापशे चहारा-त शबुची मंगी इ' अथा 'ति' दारदी की भावि कावादम^{व १}' इस विवेध ते से सर प्रशासित होता है कि चकारात्त पातुका में भी 'इ. त मि में इन चार्त हैं से प्राथमों को प्राणि वार्गा है, परवतु काहारावर और एउन कादि बातुकों में स्वय द की_{र कि} यों का प्रयोग किया जो सकता है। 'ए और सें' का नहीं। श्रकारान्त धातुश्रों के उदाहरण इस ार है -हसित=हसइ = वह हँसठा है श्रथवा वह हँमतो है। हसित = हसि = तू हँसता है श्रथवा ्मती है। वेपते = रेगइ = वह कापता है अथवा वह कापती है। वेपसे = वेबसि = त कापता है अथवा शंपनी हैं । इत्यादि ।

'हसए' (क्रियापद) रुप की मिढि सूत्र सख्यो है-१३९ में की गई है।

'हससे' (त्रियापद) रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ३ १४० में की गई है।

त्परते संस्कृत का वर्तमान कोल का प्रथम पुरुष का एक बचनान्त आस्मनेपरीय अकर्मक गपद का रूप है। इसका प्राकृतीय रूप तुवरए होता है। इसमें सूत्र सख्या ४१७० से सस्कृतीय ं 'लर' के स्थान पर प्राकृत में 'तुवर' रूप की आदेश प्रीप्त, ४२३६ से वर्तमान काल के प्रथम र क एकवचन में शातव्य संस्कृतीय छात्मनेपदीय प्रत्यय 'ते' के स्थान पर प्राकृत में 'ए' प्रत्यय की व होकर तुषरए रूप सिद्ध हो जाता है।

त्वरसे संस्कृत का बत्तमान काल का द्वितीय पुरुष का परुवचनान्त आरमने ब्हीय अकर्मक गापर का रूप है।इसका शक्षत रूप तुबरसे होता है। इसम सूत्र सरवा ४ १७० से 'त्वर्' के स्थान 'तुनर्' की आदेश प्राप्ति, ४-२३६ स 'तुवर्' मे विकरण प्रत्यय 'श्र' की प्राप्ति श्रौर ३-१४० से मान काल के द्वितीय पुरुष के एकवचन में प्राप्तव्य सस्तृतीय-ब्राह्मनेपर्दीय प्रत्यय 'से' के स्थान ं प्राकृत में भी 'स' प्रत्यय की प्राप्ति होकर तुलरसे रूप सिद्ध हो जाता है।

फरोति संस्कृत का वर्तमानकाल का मध्य पुरुष का एकवचना त प्रस्मैवदीय संकर्मक कियापद हि। इसका प्राकृत रूप करए होता है। इसमें सूत्र सरवा ४ २३४ से मूल साकृत घातु 'हा' में ^{यत आ त्य 'अर' क स्थात पर 'अर' आदेश की प्राप्ति हाकर आग हद से 'कर' की प्रप्ति और ३ १३६} वर्तमान काल के प्रथम पुरुष के एकवचन में प्राप्तन्य संस्कृतीय परस्मैपदीय प्रत्यय 'ति' के स्थान र प्राप्त में 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति होकर करए रूप सिद्ध हो जाता हैं।

फरोंपि सरहत का वर्तमानकाल का द्विठीय पुरुष का एकवचातन्त परस्मैपदीय सकर्मक कियापद ा रूप है। इसका प्राकृत रूप करसे होता है। इममें सूत्र मख्ता ४ २२४ से सस्कृत बातु 'कु' के स्थान र प्राष्ट्रत में 'कर' रूप की प्राप्ति श्लीर ३ १४० से प्राप्तीग धातु 'कर' में वर्तमान काल के द्वितीय पुरुष ^{र एक बचन} म प्राष्ट्रत में 'से' प्रत्यय की प्राप्ति होकर करसे रूप मिद्ध हो जाता है।

टाइ (कियापर) रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ? १९९ में की गई है।

तिष्ठासि सरगृत का वर्तमान काल का द्वितीय पुरुप का एक यचनान्त परसमैपश्चिय अकर्मक क्षापद का रूप है। इमका प्राष्ट्रत रूप ठासि होता है। इसमें मूत्र मद्या ४ १६ से मूल सस्कृत पातु 'स्था' के खादेश प्राप्त सस्कृत राज 'तिष्ठ' के स्थात पर प्राकृत में 'ठा' स्व की प्रार्तिक' ने दे-१४० में यतमान जाल क द्वितीय पुरुष के एक यमन में सस्कृत्य प्राप्त प्रत्य प्रत्य की हत्ता प्राप्तत में भा 'मि' प्रत्यन की प्राप्ति होगर ठाति प्राकृत राज मिळ हो जाता है।

जहाति संख्न का वर्तमानकाल वा प्रथम पुरुष का एकवरनाल रहाँ वे क विद्यापद का रूप है। इसका प्राष्ट्रन रूप गमुखाइ होना है। इसम गुन्न अद्या ४ १ मे वह देश बातु 'बद्बा' क स्थान पर प्राष्ट्रन म 'बसुचा' रूप खत का प्रास्ति और ३ १३६ मे प्रत्यानभाव १३ पुरुष क प्रकचन म मार्जनीय प्राप्त्रक मत्य्य नि' के स्थान पर प्राष्ट्रन म '६ शख्द का गरा। प्राष्ट्रन रूप 'क्सुआह', मिद्ध हा जाता है'।

उद्यक्ति मेरहन का वर्तमानकाल पा हितीय पुरुष ना प्रश्वनाति पार्मेशत पर वियापर का रूप है। इनका प्राष्ट्रत रूप वसुष्यामि हाता है। इसमें मूत्र सख्या ४ ११ मारहन्ति भातु 'उद्या' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'वसुष्या' रूप चातु ष्रया को प्राप्ति सीर १ १८० में बन्द्रामा द्वितीय पुरुष के प्रश्वन्य में मंस्कृतीय प्राप्तक्य पत्यय 'सि' के मधान हा प्राष्ट्रत में भी वि इस प्राप्ति होकर प्राष्ट्रसाथ वियापर को रूप वसुभाति निद्ध हो जाता है।

'होंड़' (कियापर) रूप की मिद्धि स्त्र सख्या १-९ में की गई है।

भवासि महरूत वा वर्तमानहात वा दिलाव पुरुष वा प्रवचनारत पार्नेश्वहाँ तिवापद वा रूप है। इनवा बाहत रूप होनि होता है। इनके मूब सेत्या १ ड॰ में मार्रावद्ै। भू-भद्र' क ग्यान पर शहत में 'हा' रूप की ज्यादेश प्राप्ति कीर ११४० में वर्तमानहाने हैं। पुरुष क प्रवचन में सहतीय प्राप्त्य प्रवच्च मि' के ममान ही प्राप्तन में भी 'मि' प्राप्त की वा वह प्राप्तन रूप होसि निद्ध हो जाता है।

हसइ' (क्रियापर) रूप को भिदि मूत्र सरुवा है १६९ में को गई है। 'हमासि' (वियापर) रूप को भिदि सुग मन्त्रा है १५० में की गई है। 'रेखइ' (क्रियापर) रूप को भिद्धि सुग मन्त्रा है १३९ में की गई है। 'रेखई' (क्रियापर) रूप को भिद्धि सुग्र मत्य हैं-रेड० में बंदार्स है।

मिनास्तेः मिः ॥ ३-११६ ॥

मिना दिनोय विशादेशेन मह महो. मिसादेशी महति ॥ निष्टुरी वीति ॥ विशे में भादेशे सित करिय सुर्य ॥

अर्थ -सस्कृत में 'श्रम' ≡होना ऐंपी एक धातु है नियको बर्तमान काल के द्वितीय पुरुष के एक ाचत में सरक्रतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'सि का सयोजना होने पर 'श्रुचि' रूप बनता है। इस सरक्रतीय प्राप्त ाव 'श्रमि'=(त है =) के स्थान पर प्राञ्च में उक्त वर्तमात केलि के द्विनीय पुरूप के एक वचन में सूत्र-रख्या ३ १४० से मामञ्य शत्यय 'सि' खोर 'से' में से जब 'सि' प्रत्यय की सयोजना ही रही ही तो उस . समय में 'श्रस + सि' में मे 'श्रम' का लोग हो कर शेप प्राप्त रूप 'सि' ही उक्त 'श्रसि' रूप के स्थान पर शकृत में प्रयुक्त होता है। जनाहरण इन अकार है -निन्दुरा यन असि-निटदुरो ज सि = (अरे)। तू निन्दुर है। यहा पर सरक्तीय धातु 'असि' के स्थान पर प्राकृत में 'मि' रूप की आदेश प्राप्ति प्रदर्शित की

--, परन -- मूत सूत्र में 'सि' ऐमा निश्चयात्मक उल्लेख क्यों किया गया है ?

ng g ift -i

🗠 🍱 उत्तर —बतनानकाल के द्विशेष पुरुष के एकवचा में सुप्र-पख्या ३-९४० के अनुपार। प्राफ़तीय षातुश्रों में 'मि' फ़ौर 'स' यों टो प्रकार के प्रत्ययों की सयोजना होती है। टद्नुसार जब 'श्रस्' धातु मे 'सि' प्रस्वय की सबोजना होगी, तभा 'खन + सि' के स्थान पर प्राकृत में 'सि' रूप की खादेश-प्राप्ति होगी. थन्यशा नहीं। यदि 'ख्रम्' धातु में उक्त 'मि' प्रस्यय की सयोजना नहीं करके 'से' प्रस्यय की सयोजना का जायंगी तो उम संभय में सूत्र सख्या ३ १४८ के श्रृतुसार सम्क्रत रूप 'श्रस + मि'=प्राष्ट्रत रूप 'श्रस + सें क स्थान पर प्राकृत में अथि का की आदेश प्राप्ति होगी। यो 'सि' से सम्बन्धित विशेषता की प्रदेशित करने के लिये ही मूल सूत्र में 'सि' का उल्नेख निया गया है। उदाहरण इम प्रकार है ---रत्रमि= श्रीय तुम= तु है। यहाँ पर 'त्रांग' के स्थान पर 'मि' रूप की खादेश प्राप्ति नहीं करके 'श्रीत्य' रूप का प्रदेशीन क्या गर्या है, इन हा कारण प्राक्तनाय प्रत्यय 'सि' का प्रयोग नहीं किया जाकर 'से' का प्रयोग किया नाना ही है। यों श्रीन्यत भा ध्वान में रखना चाहिये।

'निदलुरो' रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या ? २५४ में की गई है।

'ज' (सर्वनाम) रूप की मिद्धि सूत्र सख्या १ ने४ में की गई है।

असि सामत का वर्तमानमाल का द्विताय पुरुष का एकवचतीन्त प्रसमेपदीय श्राकर्मक विद्यापन का रूप है। इसका प्राकृत रूप 'मि' होता है। इसमें पूत्र सख्या २ १४६ से सम्बर्ण संस्कृतीयवर 'श्रमि' क स्थान पर प्राकृत में बतमान हात के द्विनीय पुरुष के एक बचनार्थ में मूत्र सख्या ३-१४० के व्यादेशात गार 'मि' श्रोर 'से' प्रत्ययो में से 'मि' प्रत्यय की 'श्रमु' धातु में सयो नना करने पर प्राकृत में केवल 'मि' भावेश मिति हो कर 'रिस' हाप निद्ध हो जाता है।

आसे संस्कृत का बतमान राल का दिनीय पुरुष का एक उचनान्त आहमें के कियापत कर है। इमक्त भाकृत रूप ऋत्य हाता है। इसमें सूत्र तख्या ३ १८८ से मम्पूर्ण मस्कृतीय कियापर 'श्रमि' के स्थान पर गुत्र महत्रा ३ १४० के निदेशानुनार एवं ३ १४६ को पृत्ति के श्राणारानुनार प्राष्ट्रतीय प्रत्यय 'में' को सवी नना हो ने पर श्रास्थि रूप विद्व हो जाता है।

रयम् मस्ट्रत का सुम्मर् सर्वनाम का प्रथमानिमक्ति का एकववनात्व वितिनात्तक हरहै। १९ प्राष्ट्रत रूप तुम होता है इसम सूत्र सहया ३ ९० स यमनाविमक्ति क एकववन मृतरः हुए हैं। १ समान रूप से ही प्रथम विमक्ति को रेक प्रस्तव 'सि की मंथीतना होने पर सम्मूर्ण माहन प्रश्त है स्थान पर प्राकृत में 'तम' रूप सिद्ध हो जाता है। ३-१४६॥

मि-मो-मे-र्मिट्-म्हो-म्हा वा ॥ ३-११७

श्चरतेर्वातोः स्थाने मि मो म इत्यादेर्शे सह यथामत्यं स्टिस्हो म्हास्त्रावेश न मयन्ति ॥ एम स्टि। एपो स्मीत्यर्थः ॥ गय स्हो । गय स्ह । महारस्याद्रशाद्रवेश त तस्येत्यवसीयते । पत्ते श्वन्थि श्रह । श्वत्यि श्वम्हे । श्वन्थि श्वम्हो ॥ नतु च मिद्राव्यातं ति श्म-स्म-स्मन्ना स्टः (२-७४) इत्यनेन स्हादेशे स्हो इति सिस्पति । सत्यम् । क्ति विशेष विधी प्रायः सास्यमानावस्याद्गोकियते । श्वन्यया वन्त्रम् ॥ बन्हेतु । सन्ते । से विशेषे इत्यादर्थं स्वाय्यनारस्मणीयानि स्वः ॥

स्व-मान्या है-रिट म वर्तमारकान के मूनीय पुरुष के बहुबबनाय में प्रणुषों में केंद्रर क्षां लान प्रयाप 'भी, मु बीर म' बण्याय गय दें, जिनने से दम मूत्र म 'काल्' भार के नाम म जुनने से र बयल से प्रायय भी नवा म' का ही जनवात किवादे कीर नीय गूनाय प्रायय मुं को केंद्र लिए हैं हैं बा स नित्ययोग्यक कर में यहर जान म चारिए कि 'यमा' पातु के साम म 'मु' दश्यक कर दमीय का किया जाना दें हैं ेशका —पहले सूत्र सख्या २ ७८ में आपने बनलाया है कि 'पदम शब्द के सबुत्त ब्यखन के स्थान पर तथा 'श्म, ब्म, स्म और क्षां के स्थान पर प्राक्तन में 'म्ह' रूप की आदेश प्राप्ति होती है' जन्-सुसार 'अस्मि' नियादद में और 'स्म' क्रियापद में स्थित पदाश 'स्म' क स्थान पर 'म्ह' आदेश प्राप्ति होकर इष्ट पदाश म्ह' को प्राप्ति हो जाती है, तो ऐमी अपस्था में इप मूद सख्या देश अके निर्माण करने की कीन सी आवस्य म्हा दह जाती है?

उत्तर -यह सत्य है, परन्त नहाँ विमक्तियों के सब्ध में विधि विधानों का निर्माण किया जा रहा हा, वहाँ पर प्राथ माध्यमान अपस्था ही (मिद्ध को जाने वाली अपस्था हो) अर्थीकृत की जाती है। यदे विमक्तिया से सम्बन्धित विधि विधाना का निश्चयात्म क विधान निर्माण नहीं करके केवल ष्यञ्चन एव स्वर वर्षा के विकार से तथा परिवर्तन से सम्बन्धित नियमों पर ही श्रवलम्बित रह · जॉयरों तो प्राञ्चन मापा में जा निम क बोबक स्वह्नव मस्त्वत के समान ही पाये नाते हैं, बन के निपय में म र्थाणास्था जैमी स्थिति उत्पन्न ही जायगी, जैसे कि कुछ उदाहरण इम प्रकार है - मृतेन=प्रण्येण, प्रतेषु=वच्त्रेषु, सर्ग=व में ये=चे, ते=ते, के=हे, इचादि, इत विमक्तियुक्त पत्रों को साधनिका प्रथम एवस् दिवाय पाने में विधित वर्ण विकार से सम्बन्धित नियमों द्वारा भली भांति का जा सकता है, परन्तु छैनी स्थिति में मी तुतीय पाद में इन पर में पाये जाने बाने प्रत्ययों के लिये स्वतन्त्र कर से विधि विधानों का निर्माण किया गया है, जैने बच्छेण पर म सूत्र सन्या ३ ६ श्रीर ३-१८ का प्रयोग किया जाता है, षच्छेषु पर में सूर महवा ३-१८ का रायोग होता है, 'मब्बे, जे, ते, के' पूरी म मूत्र महवा ३ ४८ का श्राधार है, यो यह निष्कर्ष निकलता है कि केवल वर्ण विकार एवं वर्ण परिवर्तन से सम्बन्धित नियमोपनियमों पर ही अवनिव्यत नहीं रहकर विमक्ति से सम्बन्धित विधियों के सम्बन्ध में मर्बया चूनन तथा पयक नियमों को ही निर्माण किया जाना चाहिये, व्यतएव श्रापकी उपरोक्त शहा श्रयं रून्य ही है। यदि श्रावकी शका की सत्य माने तो विभक्तिस्वहृत बोधक मुत्रों का निर्माण 'खनारम्मणीय रूप हो जायगा, जो कि अनिष्कर एव निधातक प्रमाणित होगा। प्रत्यकार द्वारा पृत्ति में प्रदेशिन म-तब्ब का ऐमा सात्वर्य है।

'एस' (सर्वनाम) रूप की सिद्धि गूत्र सरवा १-३१ में की गई है।

अस्मि सहरत का वर्तमानकाल का सुनीय पुरुष का एक प्रचानन परस्तैपनीय खबर्गक कियापर का रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप हिंद होता है। इस से सूत्र सम्या दे-१८१ स मर्तमानकाल के तृतीय पुरुष के प्रदायन में 'खस् धातु में प्राष्ट्रनीय प्रत्यव 'मि' की प्राप्ति खीर दे-१४० से प्राप्त रूप 'खम् + मि' के स्थान पर 'हिंद' रूप की सिद्धि हो जाती है।

गता मंस्कृत का पुँक्तिन विशेषण का सब है । इसका प्राकृत का गय है। इबवें इक्क् १-११ में पशन्त विवर्ण स्व ध्यञ्चन को लोग, १ १७० में 'त व्यञ्चन की सीव, १ दिन स मा, इस न्यान के परचार शेप रहे हुए आ' स्वर के स्थान पर 'या' की वास्ति और १०४४ में दात्र स^{र्ने} ह म स्थित क्षेत्र रेका 'को स्थान पर आगे सथक स्थात 'रुते का सहमाय होने में हुन्द स्सर 'द ह द्राप्ति होकर 'शय' रूप ही मिदि हा जाती हैं।

म्म सरहत का वर्तमानहाल का नुवाव पुरुष का बहुवचनान्त परामैक्शेष चहनेह किए बा रूप है। इपका प्र'कृत रूप 'ग्हा' दिया गया है। इप रें मूत्र सत्या ३ १४४ से वर्त शतक्ष व ६ पुरुष के बहुवयन में 'श्रम' धातु से प्राप्तनाय प्रत्यय 'सो' की प्राप्ति और ३ १४० मे प्राप्त कर 'हर' मां' के स्थान पर 'न्हों' रूप की निद्धि हो जाती है।

'गय' (विशेषणात्नक) रूव की भिद्धि इसी सूत्र म ऊरर की गई हैं।

म्म सरहत का वर्तमानकाल का नुनीय पुरुष का चहुबधनानत परशीरशय धहरीह विका का रुप है। इसका प्राफुत रूप रहे होता है। इसमें सूत्र संख्या है ६५८ से बर्तनानकार कर्नात के बहुदचन में 'क्रम' धातु म प्राकृतिक प्रश्वय 'न का प्राप्ति कीर देन्। ७० से वात रूप व्यव्ह क स्थात वर मह' रूप की सिद्धि हा जाती है।

थारिम संरहत पा पर्तमानहाल का एतीय पुरुष हा एक्यबनान्त परसीवशय चड्रणह विदर्भ बा मार है। इव वा पाइन कर 'सरिव' मा होता है। इसमें मूत्र-संख्या ३ छिर से चनवात्रहान ह हार पुरुष क एक्ष्यपा में 'बस्' यातु में प्राहरीय प्रत्य 'मा' की प्राप्ति और स्नेश्य में पर रा थम + मि' क ग्यान पर 'जित्य' १० वी मिदि रा जाता है।

'अर' (मर्वनाम) रूप की निह्नि गुर महता है-१०५ म की गई है।

स्य मीरहत का यर्तमान ठाल का गुनोय पुरुष का बहुवचनास्त वरामेंकी,द चहर्में हैं। का रूप दें । इनका माइन रूप ⁴ सरिधा मी होना दें । इनम सुत्र मनवा दे रिट्र म बनैशामका कर् पुरुष के बहुतका ने काम काबु में भारतीय प्रश्वम मामुन' का प्राप्ति की र १ १४ म मामुन 'दास + या मुप्त' करवान पर कि व' रूप का मिदि हो आती है।

भगत् (मर्थनाम) १२ की मिंड मूत्र-मंदश १-१०१ से की गई हैं।

रम =मन्य रूप दी थिंग्र इसी गुत्र से छत्र सा गई है।

भारत (वर्ष प्रमा) हन की लिखि हुए गठवा ३-१०६ में की गई है।

'पर्छण (बारणवा) की मि दे गुर मनवा ह-इ ६ की गई है।

वच्छेतु' (पाछत पद) की मिद्धि सूत्र सख्या हे-१५ में की गई है।

'सब्दे' जे' 'ते श्रीर के चारों क्यों का मिदि सूत्र सख्या है-५८ में की गई है। ३ १४०॥

ग्रित्थिस्त्यादिना ॥ ३-१४८ ॥

श्रस्तै: स्थाने त्यादिभिः सह श्रात्थि उत्यादेशो भगति ॥ श्रात्थि सो । श्रात्यि ते । रेथ तुम । श्रात्थि तुम्हे । श्रात्थि श्राह् । श्रात्थि श्राम्हे ॥

अर्थ —सस्त्रत थातु 'श्रम' के प्राकृत-रूपान्तर में वर्तमानकाल के एकदचन के छोर बहुवचन के जां पुरुषों के प्रस्थों की सथोजना होने पर तीनों पुरुषों के दोनों चचनों में उक्त धातु 'श्रम्' तथा प्राप्तय क्ष्मों के स्थान पर समान रूप से एक हा रूप 'खिर्य' की खादेश प्राप्ति होती है। उदाहरण इस प्रकार —(१) स श्रस्ति=सो खिर्य=न हैं, (२) ती स्त श्रयमा ते सन्ति=ते श्रस्थ = वे वोनों श्रयमा वे (सब), (३) स्वमित्र=तुम श्राध्य = तू हैं, (४) युवाम स्थ श्रयमा यूयम् स्य = तुन्हें द्यार्थ = तुन दोनों श्रयमा व (सब) हो, (५) श्रद्धम् श्रम् = श्रम् दे ।सिय = हम दोनों श्रयमा हम (सब) है। यां 'श्रम' धातु के वर्तमानकाल के तीनों पुरुषों में श्रीर दोनों चनित्र प्रकार से रूप होते हैं —

पुरु प	एउपचन	षहुचचन
प्रथम	श्चरिय	অ ন্থি
डिनीय	सि खौर छाधि	धारिय
तृतीय	स्हि और अधिव	म्हो, म्ह और श्रारिय

इत प्रकार 'श्रास्' धातु के प्राकृत भाषा में आदेश पान रूप पाये जाते हैं, श्रीर केपल आदश ाप्त एक रूप 'श्राद्धि' हो तीनो पुरुषों के दोनों बचना में समान रूप से प्रयुक्त हाकर इच्छ तासर्य को प्रदर्भ हैं पिंठ कर देना है।

'अस्ति=अस्थ (कियावर) ह्य की निश्चिम्त्र सख्या १-४५ में की गई है।

'सी' (वर्षनाम पद्) की सिक्षि भूत सरवा-३-८१ में की गई है।

रिन्त (श्रीर स्तं) संक्ष्मन के वर्षमानकाल के अथम पुरुष के यहुबबनान्त (श्रीर द्वियन मान्त कम से) परसौपदीव श्रकर्मक कियापर के रूप हैं। इन दोनों का प्राकृत रूप श्रात्म ही होता है। इनम एवं मंख्या ३ १४८ से दोनों क्यों के स्थान पर 'श्रास्य' रूप मिळ हो लाना है।

'असि = अश्वि' (कियापद) रूप की सिद्धि मूत्र संख्यात १४६ में की गई है।

ते (मर्वनाम) रूप को मिद्धि गुत्र सरुया है ५८ में की गई है।

'तुम' (मर्थनाम' ह्य वी मिदि सूत-स्ट्या है १४५ म की गई है।

'रुथ श्रीर रथ' सरहत के बर्तनानकाल के द्वितीय पुरुष के का से द्विवारना रा नान्त परमीपत्राय व्यवसेक कियापन के रूप है। इतका प्राकृत रूप करिया होता है। इतः दूरर रे १/८ में नेनों रूपों के स्थान पर 'श्रत्यि' रूप भिद्र हो जाता है।

तुम्हें (नर्वनाम) रूप की मिद्धि मुत्र-मंत्या है ११ में की गई हैं। 'भरिम = गरिय' रूप की मिद्धि गुत्र-मेट्या है रेटउ में की गई है । 'भए' (मर्थनाम) रूप की चिद्धि गुत्र संख्या है १०५ में की गई है। 'स्म' (कीर रेप)='बरिय' रूप की सिद्धि सम्रमस्मा है १४७ में की गई है। 'अम्डे' सवनाभ रूप की मिदि सुत्र संद्रमा 🛭 १०५ में को गई है। ३०५० ॥

गेरदेदावावे ॥ ३-१४६ ॥

चे॰ स्थाने क्षत्र वत् कात्र कात्रे कते पत्तार भादेणा मवन्ति ॥ दरिमर) कार्र । इन्त षरावेड् ॥ हामेड् । हमावट् । हमावेड् ॥ उपमामेड् । उवसमावह् । उनसमावद् ॥ बहुआर्तिः फचिटेन्नान्ति । जागारह ॥ फचिट्ट भार नास्ति । पाष्ट । मारेह ॥

भगें — रूप सूप से वारम्म करके झांगे १४२ य तूल तरु जेरणार्थर क्रिया का लिंदन रह चा रहा है। जहाँ पर किमो की अस्था में कोई काम मुखा हा वहाँ मेरणा करते वाले का ज़ार चनाति के लिए मेरणार्थक किया का बयोग होता है। संस्था भाषा में भाषा भाषी भाषा साथ है भाषा भित्र - क्षय प्रावय भोदा जाना दे, इनक्षिये इन किया को 'खालना भी बार्च हैं। प्र हर हरें वेशालीक क्रिया का रूप यागना हो लो प्राप्टन घानु व सूत्र रूप से सर्वे प्रथम महा^{तृह्य प्रस्}र 'क्या' च त्यान पर साल्यान्याम 'क्या, मन्, काव सीर साथ प्र वर्षों म से की। मा वर्ष प्रपारण से बर भारतिमाराये विवासकी धन जावति, राध्यसम् प्राप्तीत रूप मातु में रिश कार्णस्वार चीक्ना पार कर काप था अयद तीवा चा करता है। चावानात घरदा 'मग व व व क पा तथना व्यापन भा का दर्भना ताहर यह लीव ही जाला है । इस प्रधार दिशी मी ५ पुँ ^{३ इ} को तक सम्पती के पूत्र में 'का, या बतात और का वें भी में कोई भी यक जिकान बीचक कर वें ने प्रार्थ भाषत क्रोपुन से एक धानु का क्रांग मेरक क्रांप्रे के सेवाह का जाता है। इस राष्ट्र वर्धे विश्व के

विवेचना आगे के सूत्रों में की जानेगी । पेरणार्थ ह कियाओं के कुछ मामान्य उदाहरण इन प्रकार है --दर्शयति=दरिसई=त्रह दिखलाता है। कारयति = कारह, करावई, करावेइ = वह कराता है। हामयति = हामेइ, हताबइ, हमाबेइ = वह हैंसाता है। उपशामय ते = उपमामेइ, उपसमाबद, उपमाबेद = वह शात हराता है। 'बहुलम् सूत्र के अधिकार से किमी किमी समय में और किमी किसी धातु में उनरोक्त एत्-ए' प्रत्यय की सयोजना नहीं भी होती है। जैसे --ज्ञापयति=जाणावेइ = वह बठलाता है। यहाँ पर ज्ञापयति' क स्थात पर 'जा ग्रेड' रूप का प्रेरणार्थक में निषेव कर दिया गया है। कही कही पर 'चावे' ात्यय की भी प्राप्ति नहीं होती है । जैसे →पाययति=पाएइ = यह विलाता ह । यहाँ पर 'पाययित' के थान पर 'पावेइ' रूप का निषेत्र हो जानना। दूसरा उदाहरण इस प्रकार है --मात्रयति = भावेइ ाह चितन करता है। यहाँ पर संस्कृत रूप 'भावयित' के स्थान पर प्राकृत में 'भावावेह' रूप के निर्माण हा श्रभाव ही जातना चाहिय। इसी प्रकार से प्रेरणार्थक कियाश्रो को विशेष विशेषनाएँ श्रागे के सूत्रों में और भी श्रधिक बतलाई जाने वाली हैं।

इर्ज्याति संस्कृत प्रेरणार्थक किया का रूप है। इमका प्राकृत रूप दरिसई होता है। इसमें सूत्र मख्या- -१०४ से रेफ रूप श्लन्त व्यञ्जन 'र' में श्रागम रूप 'इ' की प्राप्ति, १-२६० से 'श' फे स्थान रर में की प्राप्ति. ३ १४६ से प्रेरणार्थक-िया-बोधक सस्क्रतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'खय' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'अन्=अ' प्रस्यय की प्राप्ति और ३-१'६ से प्राप्त प्रेरणार्थक प्राकृत गातु दूरिस' में वर्तमान-जाल के प्रथम पुरुष के एक्वंचन में संस्कृतीय प्रापत्य प्रत्यय 'ति' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' प्रत्यय की गिम होकर प्रेरणार्थक-क्रिया बोधक प्राकृतीय घात रूप दारेसइ मिद्ध हो जाता है।

कारयाति संस्कृत प्रेरणार्थक किया का रूप है। इसके प्राकृत रूप कारेड, करावड, और करावेड होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या-३-१४३ से मूल प्राकृत बातु 'कर' मे स्थित आदि हस्य स्वर ष' के स्थान पर आगे धेरणार्थक-किया बोधक-प्रत्यय 'अनु' अथवा 'एन' का लोप होने से दीर्घ स्वर था' की प्राप्ति. २-१४८ से प्राप्त पेरणार्थक घातु स्रंग 'कार' में स्थित स्त्रनस्य स्वर 'स्व' के स्थान पर स्त्रागे वर्तमानकाल बोधक प्रस्वय का सद्भाव होने से 'ए' की प्राप्ति और ३-१३६ मे प्राप्त प्रेरणार्थक प्राप्तन वातु 'भारे' में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एकवचन म सस्कृतीय प्राप्तम्य प्रत्यय 'ति' के स्थान पर माइत स 'इ' प्रत्यस की भाषित होतर प्रथम रूप कारेड सिद्ध हो जाता है।

करावइ एव करायेद में सूत्र सख्या १ १४६ से मूल शष्टत घातु 'कर' में णिनन्त चर्यात पेरणार्थक माव में सरष्टतीय प्राप्तच्य प्रस्वय 'श्रय' के स्थान पर प्राकृत में क्रम से आया और श्राव' भरवय की प्राप्ति, १-४ से मूल घातु 'कर' में स्वित अन्त्य द्वस्व स्वर 'ख' के साथ में आगत प्रत्यय 'भाव एव भावे' में स्थित चादि दीर्घ स्वर 'आ' की संधि होकर खंगरूप 'कराव चौर करावे' की प्राप्ति धीर ३१६९ से प्राप्त प्रेरस्तर्थक प्राफ्टत घातु व्यर्गों में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के प्रवचन में सस्क्रतीय मातम्य शत्यय 'ति' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'इ' प्रत्यय की मान्ति हो कर द्विनीय श्रीर तृतीय रूप कम से ण्रायह और प्राचेंड दोनों ही सिद्ध हो जाते हैं।

ते (सर्जनाम) रूप को भिद्धि सूत्र सख्या है ५८ में की गई है।

'तुम' (सर्वनाम' रूप ची खिद्धि सूत्र-सख्या व १४६ म की गई है।

'स्थ श्रीर स्थ' सरक्षन के उर्तमानकाल के द्वितीय पुरुष के क्रम से द्वियनानत रहा का नान्त परमीवशेय श्रक्षकीक कियावन के रूप है। इनका प्राक्षन रूप श्रिक्षि होता है। इतके प ३१४८ से बोनो रूपों क स्थान पर 'श्रिक्षि' रूप मिद्ध हो जीता है।

तुम्हें' (नर्बनाम) रूप की सिद्धि सूत्र-सन्या ने ९१ में की गई हैं।
'अनिम = अस्यि' रूप की मिद्धि सूत्र-सस्या ने १४७ में की गई है।
'अह' (सर्वनाम) रूप की भिद्धि सूत्र सख्या ने १०५ में का गई है।
'स्म (श्रीर स्व)='श्रस्थि' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ने १४७ में की गई है।
'अम्हें' सबनाम रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ने १०५ में को गई है।

गेरदेदावात्रे ॥ ३-१४६ ॥

णेः स्थाने श्रत् एत् श्राप्त श्रावे एते चरपार श्रादेशा भवन्ति ॥ दरिमद्र १ कार्य । करापेड ॥ हामेड । हसापड । दसापेड ॥ उपसामेड । उपसमापड । उपसमापेड ॥ बहुलाहित कचिदेन्नास्ति । आणापेइ ॥ कचिद् श्राप्त नास्ति । पाएइ । भावेड ॥

विवेचना आगे के सूत्रों में की जावेगी। प्रेरणार्थक क्रियाओं के उन्न सामान्य उदाहरण इम प्रकार है -दर्शयति=दर्सिई=वह दिखलाता है : कारयति = कारड, करावर्ड, करावर = वह कराता है। हामयति = हासेइ, हसावइ, हसावेइ = वह हैंसाता है। उपशामय ते = उनमामेइ, उनममाबद, उनसमाबेइ = यह शांत कराता है। 'बहलम सूत्र के अधिकार से किसी किसी समय में और किमी किसी धात में उनरोक्त 'एन-ए' प्रत्यय की सयोजना नहीं भी होती है। जैसे -ज्ञापयति=जाणावेइ = वह बतलाता है। यहाँ पर 'झापयति' क स्थात पर 'जारोइ' रूप का प्रेरणार्थक में निपेय कर दिया गया है। कही कही पर 'आवे' शस्यय की भी प्राप्ति नहीं होती है । जैसे -पायय त=वाएड = बह विज्ञाता है। यहाँ पर 'वाययति' के ध्यान पर 'पाचेइ' रूप का निपेव ही जानना । दसरा उदाहरण इन प्रकार है - मावर्यात = भावेइ षह चितन करता है। यहाँ पर संस्कृत रूप 'मावयित' के स्थान पर प्राकृत में 'मावानेह' रूप के निर्माण का श्रभाव ही जातना चाहिय। इसी प्रकार से श्रेरणार्थक कियाओं हो विशेष विशेष गएँ श्रागे हे एत्रों में और भी ऋधिक बतलाई जाने वाली हैं।

इजीयाति सरकत प्रेरणार्थक किया का रूप है। इसका प्राकृत रूप दरिसह होता है। इसम सूत्र-मट्या -१०४ से रेफ रूप इलन्त स्थळतन 'र' में श्रागम रूप 'ह' की प्राप्ति, १ २६० से 'श' के स्थान पर स' की प्राप्ति. ३ १४६ से प्रेरणार्थक-िया-बोधक सहजनीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'ख्रय' के स्थान पर मारुत में 'अत = अ' प्रत्यय की प्राप्ति और ३-१'६ से प्राप्त प्रेरणार्थक प्राकृत पात दरिस' में वर्तमान-फाल के प्रथम पुरुष के एकवंचन में संस्कृतीय प्राप्तच्य प्रथ्य 'ति' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' प्रत्यय की माप्ति होकर प्रेरणार्थक-क्रिया बोचक प्राक्षतीय घात रूप दारसङ मिस हो जाता है।

कारयाति संकत प्रेरणार्थक किया का रूप है। इसके प्राञ्जन रूप कारेड, करावड, श्रीर करावेड होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या-३-१४३ से मूल प्राकृत थात 'कर' में स्थित आदि हाश स्वर 'म' के स्थान पर आगे श्रेरणार्थक किया बोधक प्रत्यय 'अतु' अथवा 'यतु' का लोप होने से दीर्घ स्वर 'आ' की प्राप्ति, ३-१४८ से श्राप्त प्रेरणार्थक घातु अंग 'कार' में स्थित चन्त्य स्वर 'ख' के स्थान पर आगे वर्तमानकाल बोधक प्रस्वय का सद्भाव होने से 'ए' की प्राप्ति और ३-१३६ से प्राप्त प्रेरणार्थक प्राकृत धातु 'मारे' में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एकवचन म संस्कृतीय प्राप्तव्य पत्यय ति' के स्थान पर माहत म 'इ' प्रत्यम की शान्ति होकर प्रथम रूप कारेड़ मिछ हो जाता है।

करावइ एव करावेद में सूत्र-सख्या ११४६ से मूल शहन धातु 'का' में णिन'त श्रर्थात् प्रेरणार्थक माव में सरफ़र्ताय प्राप्तच्य प्रायय 'त्रय' के स्थान पर शाउत में क्रम से 'ऋाव धीर ध्याव' भिष्यकी प्राप्ति, १ ४ से मूल घातु 'कर' में क्षित ऋत्त्य द्वश्य स्वर 'श्र' के साथ में द्यागत प्रत्यय 'घाव एव घावे' में स्थित चादि दीर्घ स्वर 'छा' की संधि होकर खगरूप 'कराव खीर करावे' की प्राप्ति भीर ३१६९ में प्राप्त प्रेरणार्यक प्राकृत धातु खंगों में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एक्षवचन में मस्प्रनीय भागम्य भरवय 'ति' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'इ' प्र'यय की मास्ति हो कर द्विनीय स्थीर सुतीय रूप कम से क्रावह और क्रावेह दोनों ही सिद्ध हो जाते हैं।

हास्यति माञ्स प्रेरणार्थेक विया या रूप है। इसक प्राकृत रूप हासेइ हेमाइइ और अपे हाते हैं। इनमें से प्रथम रूप में मूत्र मख्या ३ १४३ से मूल प्राष्ट्रत धात 'हम' में स्थित शाहि हुन भ 'स्र' के स्थान पर स्थागे प्रेरणार्थक किया बोधक प्रत्यये 'स्रत' स्थवा 'व्त' ना लोप होने मर्नाए ग 'खा' भी प्राप्ति, ३ १४८ से प्राप्त प्रेरणाथव घातु खगः (हास' म स्थित च खारार 'च रायात पर ही वतमानवाल बोधक प्रत्यय का सटभाज होने से 'ए' की प्राप्ति और ३-१३६ से प्राप्त प्रेरण प्रेरण धातु श्रम 'हास' में वर्तमानकाल क प्रथम पुरुप के एक्चचन में साकृतीय प्राप्तव्य पत्रय ^{शृत} हार पर प्राकृत में 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति हो दर प्रथम रूप हासेड़ सिख हो जाता है।

हमावइ श्रोर हसावइ में सूत्र मख्या २-१४६ में मूल प्राकृत-धार्त 'हम' में लिपन हा प्रत्णार्थम भाव में साकृतीय प्राप्तय्य प्रत्यय 'खय' के स्थान पर प्राकृत में कम से 'खाव और बार' हैं" की प्राप्ति, १४ में मूल घातु 'हम' में स्थित इप्तस्य हस्य स्वर' द्यंक साथ में चागत प्रस्यय 'क्षाक आवे' म स्थित आदि दीर्घ स्वर 'आ' को मंधि होकर खग रूप 'हसार और हमावे' का शांत हो। १३६ स प्राप्त प्रेरणार्थक प्राष्ट्रत घातु श्रयों में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एक्वचन में सर्^{कृत्व हा} व्य प्रथय 'ति' क स्थान पर प्राष्ट्रत में 'इ' प्रत्यय की पाष्ट्रि होनर द्वितीय खीर हताय सप हम रसायंड श्रीर हसायंड दोनों ही सिद्ध हो जाते हैं।

उपझामयाति संस्टत प्रेरणार्थक विद्या का रूप है। इसके प्राकृत-रूप, प्रवसामेश, व्यवस धीर उपममावें इहात हैं। इनम मे प्रथम रूप में मूत्र सच्या १२३१ सं 'प' के स्थान पर 'व' ही भ १ २६० से 'श' के स्थान पर 'मृ' का प्रान्ति, ३ १६६ से णिजन्त अर्थात प्ररणाथक भाव में सह प्राप्तब्य प्रत्यय 'स्रय' के स्थात पर प्राकृत म 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति स्त्रीर ३१-६ स ६ प्रेरणार्थक प्राकृत घातु खंग 'उवनामे म वर्तमानकाल क प्रथम पुरुग के एक्वचन में साहताय प्रा^{या}री प्रत्यय 'ति' क स्थान पर प्राकृत में इ' प्रत्यय को प्राप्ति होकर प्रथम रूप *उपसामेड* मिस हो जाता है।

उबसमावह और उपममाबेह में मूत्र संख्या १ रहरे से 'व' के स्थान पर 'व' श्री प्रा^(त,) ' स 'दा च स्थान वर 'स्' को प्राप्ति, ३ १०९ स प्राप्त प्राप्तुत धातु 'उपनम्' में लिझन्त धर्यान होत्या भाव म संस्कृतीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'श्रय र स्थान वर प्राष्ट्रत में क्रम से होतों क्रवा म 'श्राध ही हन्ते प्रत्ययो की प्राप्ति, यों प्राप्त प्रेरण थक रूप वजनमाव चोर व्यवमाय म सूत्र मध्या * (*) स बहें प काल क प्रथम पुरुष के व्हरवयन स सहकाय आल्ड्य प्रत्यय 'ति' के स्थान वर प्राष्ट्रन में शार्न के 'इ' प्रस्थाय की प्राप्ति होकर ग्रम से दाना रूप उथतमाथइ खीर उखतमाथइ मिद्र हो बाते हैं।

हा।पयति मन्तृत प्रेरणार्थक किया का रूप है। इसका प्राप्तन रूप नाणावें शहा है। इसमें सूत्र मस्त्रा-८-७ से मूल मग्छन थारु 'हा' के स्थान वर प्रावृत में 'जाण रच का आवश वर् ३ १४६ से प्राप्त रूप 'ताव से जिल्लात अयात प्रेरणायक मात्र में संस्कृतीय प्रारतस्य पस्वव 'सद' ६ म्यान पर प्राष्ट्रन म 'ब्राव' शयय की प्राप्ति चौर देनदेह से पास्त प्रेरणार्थक विचा रूप जाणाई हें हैं निकाल क^{ें}प्रथम पुरुष क पंकवचन'में सम्हतीर्य प्राप्तब्य प्रत्यय 'ति' के स्थान पर प्राक्रन में 'इ' शत्यय प्राप्ति होकर पाकृतीय प्रेरणार्थक किया का रूप *जाणाचेड़* मिछ हो जाता है।

पाययति सस्त्रत प्रेरणायक विया का रूप है। इसमा प्राकृत रूप पापइ होता है। इसमें सूत्र या ३ १४६ म मूल प्राष्ट्रत घातु 'पा' मे जिनन्त व्यर्थात प्रेरणार्थे मात्र में संस्कृतीय प्राप्तस्य प्रश्यय य' के स्थान पर प्राकृत में 'प' प्रत्यय की प्राप्ति ख्रीर ३ १३६ से प्राप्त प्ररणार्थक किया रूप 'पाप' मे मानकाल के प्रथम पुरुप क परयचन में सस्कृतीय प्राप्तस्य 'ति' कस्थान पर प्राकृत में 'इ' य की प्राप्ति होकर प्राकृतीय प्रेरणार्थक विया का रूप प्राप्त विद्य हो जाता है।

भाषयति सस्त्रत प्रेरणार्थक किया का स्व है। इसका प्राष्ट्रत स्व भावेइ होता है। इसमें प्रुतया-१-१० से मूल प्राक्त घातु भाव में स्थित स्वास्य स्वर 'श्र' का स्थागे िणजन्त बायिक प्रत्ययात्मक
ं 'ण' का मद्भाव हाने स नाव, ३ १४६ से प्राप्त हलन्त प्रेरणार्थक किया 'भाव' में सस्कृतीय प्राप्तव्य
य 'स्थय' के स्थान पर प्राफ्त में िणजन्त बोधक प्रत्यय 'ए' की प्राप्ति श्रोर ३ १३६ से प्राप्त प्रेरणार्थक
या एवं 'भावे' में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एम्बचन में मस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'ति' के स्थाप
प्राकृत म इ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राकृतीय प्रेरणाधक क्रिया का रूप भावेइ मिद्ध हो
ता है। ३-१४६॥

गुर्नादेरविर्वा ॥ ३-१५०॥

गुर्नादेर्णे. स्थाने ऋवि इत्यादेशो वा भनति ॥ शोपितम् । सोमनिस्र । सोसिस्र ॥ वेतम् । तोसनिर्म । तोसिस्र ॥

अर्थ — जिन घाषुत्रों म आदि स्वर मुरू अर्थात दोष होता है, वन घाषुत्रों म णिनन्त अर्थ म गाँग प्रेरणार्थक माय क निर्माण म वपरोक्त मृत्र मर्प ३ १४६ में वर्णित िण्जन्त बोधक प्रत्यय 'श्रत त' आव श्रोर आवे । म से सोई भी प्रत्यय नहीं जोडा जाता है, दिन्तु वयत कही प्रत्यय 'श्रवि' । प्राप्त वैकल्पिक एव से हुआ करती है। तन्तुमार आदि स्वर दीव वाली घाषुओं में िण्यन्त में म स्मी 'आवि' प्रत्यय जुडना भी है श्रीर क्मी किसी भी प्रकार क प्रत्यय यो नहीं जोड करक । वात कर्ष प्रश्वित कर दिया जाता है। द्वाहरण इम प्रकार है — गोपितम् — मोमिवक अयया । । । स्व व्याहित अयदा । स्व व्याहित अयदा । स्व व्याहित अयदा । स्व व्याहित अयदा हो । स्व व्याहित अयदा । स्व व्याहित अयदा । स्व व्याहित अयदा । स्व व्याहित अयदा । से व्याहित अयदा । से व्याहित अयदा । से व्याहित । से विकास क्षीर नोसिक और नोसिक में स्व विकास क्षीर प्रति करते हुल क्सी भी प्रकार के प्रिचन वायक प्राप्य की मयोजना नहीं करक

मी इन कियाओं का रूप शिजन्त अर्थ सहित प्रदर्शित कर दिया गया है, यों अन्य आस्तिर, ं स्वावुओं के सम्यन्य में भी शिजन्त-अर्थ के सद्भाव में 'अवि' प्रत्यय की वैकिश्वक थिति के नत्व चाहिये तथा शिजन्त अर्थ वोधक-प्रत्य का अभाव होने पर भी ऐसी घातुओं में शिवन्त क्षय का स्त्र जान लेना चाहिये।

शीपितम् सस्कृत प्रेश्णार्थक निया का रूप है। इसके प्राकृत रूप नोसिय कीर भीजि र हैं। इसके प्राकृत रूप नोसिय कीर भीजि र हैं। इसके प्राकृत रूप नोसिय की प्राकृत है। इसके प्राकृत रूप ने स्थित होतों प्रधार है। इसके प्राकृत का स्थान पर प्राकृत में 'स्' की प्राप्ति, र १४० से प्राप्त रूप नोस्' में आदि स्वर एप प्रेर्पार्थक-माव में प्राकृत में 'अपि प्रस्यव की प्राप्ति, १ ४४६ से भूत-अवस्य आप में साहत क मण्ड प्राकृत में भी प्राप्त रूप 'सोसिव' में 'त' प्रस्यय की प्राप्ति, १-१५० से प्राप्त प्रययय 'ते में सरक्ष स्वयान का लोप, १-१५ से प्राप्त रूप सोसिविश्व में प्रथमा विभाक्त क प्रवचन में श्वारात रूप में साहतीय प्राप्तक्य प्रययय 'ति' के स्थान पर प्राकृत में 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति कीर र दे में प्राप्त 'प्र' क स्थान पर प्राकृत में 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति कीर र दे में प्राप्त 'प्र' का स्थान पर प्रवित्त होकर प्राकृतीय मृतकृत्वीय एक प्रवचान के कि किया का प्रथम रूप सोसिविश्व भिद्ध हो जाता है।

सोसिय में सूत्र महवा १ २६० से मूल सरहत रूप शोप में स्थित 'श श्रीर प' के खात प की प्राप्ति, ३ १५० से प्रेरणार्थक माय का सदमान होने पर भी प्रेरणार्थक प्रत्यय 'श्राव ' हा है है कि स्थान स्थान होने पर भी प्रेरणार्थक प्रत्यय 'श्राव ही प्राप्ति, १ में विकरण प्रत्यय 'श्राव ही प्राप्ति, १ में विकरण प्रत्यय 'श्राव ही प्राप्ति, १ में प्राप्ति विकरण प्रत्यय 'श्राव है स्थान पर आगे भूत कुन्द्रत श्रव्यक प्रत्यव 'त' का सद्भाव हात प्राप्ति, १ अपने से भूत कुन्द्रत श्रव्यक हो प्राप्ति, १ अपने स्थान हो प्राप्ति हो अपने ही प्राप्ति हो अपने ही प्राप्ति हो अपने हो प्राप्ति के प्रत्यक हो प्राप्ति हो अपने हैं सामान ही सुत्र सल्या द २४ श्रीर १ २३ से प्राप्त होकर हितीय रूप सोसिस मा सिंह हा जाना है

तोसिश्र में सूत्र सरवा १-२६० से मृत संस्कृत चानु तोप में स्थित 'प' के स्थान पर 'स्' की गाति, ३-१५० से प्रेरणाय क-मान का सद्भाव होने पर भी प्रेरणार्थ क नस्वय 'श्रवि' का वैकलियक रूप ते स्नमात, ४२३६ से प्राक्तनीय प्राप्त हल त रूप 'तो म्' मे विकरण प्रत्यय 'स्र' की प्राप्ति, ३ १४६ से ाप्त विकरण प्रत्यय 'अ' के स्थान पर आगे भूत कृदन्त अर्थ क प्रत्यय 'त' का सद्माव होने से 'इ' का गाप्ति, ४ ४४८ से भूत कुर्न्त अर्थ में सहकृत के समान हो प्राकृत में भी 'त' प्रस्यय की प्राप्ति, १-१७७ से गान्त 'त' वर्ण में से हत त ब्यञ्जन 'त्' का लीप, यों प्राप्त रूप 'तोसिख' में शेप सावनिका मयम रूप के प्तमान ही सूत्र सख्या ३२८ श्रीर १२३ से प्राप्त हो कर दिनोय रूप*नो सिं*श मासिद्ध हो जाता है। ३-१४०॥

भ्रमे राडो वा १। ३-१५१॥

श्रमे: परस्य गोराड बादेणो या भवति ॥ भमाडइ । भमाडेह । पर्व । भामेड । श्मायह । भमावेड ॥

अर्थ - सस्कृत भाषा की धातु श्रम् के प्राकृत रूप भम् में णितन्त श्रथीत प्रेरणाय के माय के श्वर्य में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रेरणाय क प्रत्यय अय' क स्थान पर प्राकृत में बैकिनियक रूप से 'आड' प्रस्यय का त्रारेश-पालि हुन्ना करती है। उहाहरण इम वकार है - श्रामयति=भमाडइ अथवा भमाडेइ=प्रह पुनाता है। वैकल्पिक-पत्त का सद्भाव होने से प्रेरगार्थ कमान में जहां भन् धातु से 'स्राड प्रत्यय का थमात्र होगा वहाँ पर सूत्र मख्या ३-१४९ के अनुपार प्रेरणाय कमात्र में 'अत्, एत्, आप श्रीर श्रावे मत्यवा में स किसी भी एक प्रत्यय का सद्भाव होगा । जैस भ्रामयति=भामद, भामेइ भमावद छोर समा षर=वह घुनाता है। यों प्रावृत घातु 'भम् क प्रेरणार्थक-भाव मछ इ रूपों का सद्भाव होता है। ^{संगधात इच्द काल बाधक प्रत्नेया को संयोजना होती है।}

भागपति सन्तत प्रेरणाध र-किया का रूप है। इनके प्राकृत रूप भगाउद मनाहें। भागइ. भागेइ, ममायह श्रीर ममावेद होते हैं। इनमे से प्रयम दा करों में सूत्र सख्या र-४६ स मूच संस्कृत घातु 'प्रम् में स्थित 'र् व्यञ्जन का लाव, ३-१४१ से प्राप्ताय 'मम् में प्रेरणाय क-भाव में माकृताय प्राप्तव्य मत्यय 'झम' क स्थान पर प्राकृत में 'झाड' प्रत्यय को वैक्रिक्वक रूप से प्राप्ति, ३१४८ से द्वितीय रूप में भारत प्रत्यय 'बाढ'में स्थित ख्रन्त्य स्वर 'ब्र' के स्थान पर आगे वर्तगानकाल रूप्रथम पुरुष के प्रस्वचन मोषक प्रायय का सद्भाव होने से वैकिन्यक रूप से 'ण' की प्राप्ति, यों प्राप्ताग 'ममाड श्रीर भमाडे' मे स्व सन्या ३ १३६ से वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष कं एक्यवन में मस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'ति' के स्थान पर प्रापृत में 'इ' की प्राप्ति हो कर भमादश और भमादेश प्रेरणार्य करूप मिद्र ही चाते हैं।

भामइ में मूत्र सरया २ पर से सत्कन घातु अप में स्थित र व्यञ्जन का लोव ३ ११३ म स्थ 'भम्' में स्थित श्रादि स्वर 'श्र' के स्थान पर श्रागे प्रेरणाथ क-नोधक-प्रस्थय का वैस्तिन हर सक्त कर देने से 'त्रा' की प्राप्ति, ४- ३६ स प्राप्ताग, माम म विकरण प्रत्यय 'त्र' की प्राप्ति और रे 'ह में प्राप्ताग 'भाम' में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एक वचनाथ में संस्कृतीय प्राप्तस्य प्रयर दिंग है स्यान पर प्राकृत में 'इ' प्रश्यय की प्राप्ति हो कर तुर्तीय क्षय मामइ भी मिछ हो जाता है।

भामें हमें 'भाम' व्यंग की प्राप्ति उपरोक्त ततीय स्त्य में वर्णित माधिनरा के संभाग सार म्त्र-मख्या ३-१८८ से अन्त्य स्वर 'ऋ' र स्थात पर 'ए' को प्रास्ति और ३१३६ स तर्शा का समान ही इ' प्रत्यय की प्राप्ति हो हर चतुर्य क्या भागेड मिद्ध हो नाता है।

ममावड श्रीर भमानेइ में मूत्र-सखवा ३-१४८ से पूर्वोक्त रीति से वाष्ताग 'मम्' में वेगगार्थ-भाव में वैक्टिपक रूप से संस्कृतिय भारतव्य प्रत्यय 'ख्रय क स्थान पर प्राकृत मे 'खाव और आवे प्रत वा क्षम मे प्राप्ति श्रीर र-१.६ से दोनों प्राप्तागी 'मनाव श्रीर भगवि' मे वर्तनानकात्र कार पुरुष के एक्वचन में मस्कृताय प्राप्तव्य प्रत्यय 'ति क स्थान वर शाकृत में 'इ' अव्यव की प्राप्त होंग प्रेरणार्थ क-माय में खन्तिम दोनों रूप समायह छोर समाये; कम से निढ हो जाते हैं। ३-११।॥

लुगाबी-बत-भाव-कर्मसु ॥ ३-१५२॥

थे: स्थाने लुक् स्थानि इत्यादेशी भनत को भान कर्मविहिते च प्रत्ये पात । कारित्र । करातिल । हानित्र । हमातिल्रं ॥ स्वानित्र । समातिल्र ॥ मात्र कर्मणीः । हर्ष श्रह । करातीश्रह । कारिज्यह । कराविज्यह । हामोश्रह । हमावीग्रह । हागिहता दमानिङज्ञ ॥

अर्थ — निम ममय में प्राक्षन घातु या में भून कू रत मम्बरी प्रत्यव त' लगा हुया हा ध्रती भाव बाब्य एवं कर्मिखियालय मध्य यो अस्वय लग हुए ही ता उन घातु वो में बेरलाय हमाय बा हिर्में अवस्था में मूत्र सख्या दे-१४६ में वर्णित प्रश्वार्थं ह मात्र प्रश्येष्ठ प्रश्येष 'स्नत्, वत, साय सीर का रा या तो लाप हो नायगा अथवा इन प्रम्यर्था र स्थान पर ये हिल्प ह गप म 'आवि' प्रश्वव ही शार गांति हो जावणी चौर उन धातुर्थों का भून छद्र-न अर्थ सहित खबदा माद प्राण्य क्मीनिश्रण इर म हिन प्रेरणार्थ ह-रूप या निर्माण हो जायना । उदाहरण इन प्रकार हैं — हारितम्=हारिजं भाषता हा ।वश=कराया हुमा, हानिनम् = हानिश्र श्रथवा ह्वाविश्र=त्राया हुमा श्रीर शामितम्=त्राविसं प्रर त्यमाविद्यं=न्नमाया हुचा, र बदाहरण भूत कृत्त मन्त्र वी हैं, इनमें में वधन स्पीने पेरएण्ड ब्दिया का मद्भाव प्रदर्शित हिया जाता हुआ हो दे पर मो इतम मूब-मनवा दे १४६ छ अनुमा हारे म प्राप्तस्य शिवन्त ध्रय वायक बत्यप 'झत् एत खान और झान' का सोन प्रदर्शन किया गर्द हैं। ्यकि द्वितोय द्वितीय रूपों में प्रेरणार्थर-भाव में प्राप्तत्र्य प्रत्ययों के स्थान पर आदश-प्राप्त प्रत्यय -प्रावि'का सद माव प्रदर्शित किया गया है। भाव वाचक श्रोर कर्मणि गचक उदाहरण इस प्रकार r —कार्यते=कारीग्रह, करात्रीग्रह, कारिज्जइ श्रीर कराविज्नइ=उससे कराया जाता है, हाश्यते = हासी ुःइ हमाबीश्रह, हासिज्ञह श्रीर हसाविज्ञह=उससे हमाया जाता है। इन उबाहरणों में भी स्वर्थात ्रारीबद्द, कारिज्यह, हासीश्रद्द स्त्रोर हासिज्यद्द में तो प्रेरणार्थक-भाव-प्रदर्शक-प्राययों का श्रभान प्रद-रीत करते हुए भी प्रेरणार्थक-भाव का सदुमाव प्रदर्शित किया गया है। जबकि रोप उद्धिरणों में श्रयीत् कराबीबाइ, कराबिबनड, हमाबीबाइ श्रीर हपाबिबनड ' में प्रेरणार्थक-भाव-प्रदर्शक-प्रत्यय 'श्रतु एत, 'राव श्रीर द्याव' के स्थान पर 'स्रावि परथय की श्रादेश-प्राप्ति प्रदर्शित करते हुए प्रेरसार्थक-भाव का ाद्माव प्रन्तुत किया गया है। इस प्रकार अन्यत्र भी यह समक्त लेना चाहिये कि प्राकृत-भाषा में ।।तुर्श्रों म भृत क्ररन्त मम्बन्बी प्रत्यय त' श्रीर भाव वाच्य∽क्रमण्यि।च्य प्रत्ययों के परे रहने पर ्णिनन्त∽बाधक प्रत्ययों का या तो लोप हो जायगा व्यथवा इन प्रत्ययों के स्थान पर 'यावि' प्रत्यय की .]किल्पिक स्वय से श्रादेश-ग्राप्ति हो जायगी।

कारितम् मंछत का भूत-कुर्न्तीय रूप है। इसके प्राकृत रूप कान्छि श्रोर करापिश्र होते हैं। लमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या ३-१४२ से मूल प्राष्ट्रत घातु 'कर' में स्थित व्याटि स्वर 'छा' क स्थान ार श्रामे भूत कुरुन्तीय प्रत्यय का सद्भाव होने से ३ १४२ छारा प्रेरणार्थक माब प्रदर्शक प्रत्यय का लीप ही जान से 'आ' की प्राप्ति, ३ १५६ से प्राप्तां ।' कार' में स्थित अन्त्य स्वर 'ख' के स्थान पर आगे भूत (इंदरत पायक प्रत्यय 'त' का सद्भाव होन से 'इ' को प्राप्ति, ४४४८ से प्राप्तांग 'कारि' में भूत कृदरत-, भाषक सरक्षत्रोय प्राप्तच्य प्रस्यय त' के समान ही प्राकृत में भी 'त' प्रस्यय की प्राप्ति, १ १७० से प्राप्त मध्यय 'त' में से हलन्त व्यञ्चन 'त' का लोप, ३ २४ मे प्राप्तांग 'कारिष्य' मे प्रथमा विभक्ति के एकवचन ^मिम सस्तृतोय प्राप्तच्य प्रस्यय 'मि' केस्थान पर प्राकृत में 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति श्रोर १ २३ मे प्राप्तः प्रत्यय 'म्' का पूर्व वर्ण पर अनुस्वार की प्राप्ति हो कर भून कुदन्तीय प्रेरणार्थ ह-माव-सूचक प्रथमान्त एकवच ,मीय प्राकृत-पर् कारिअ सिद्ध हो जाता है।

पराविष्य में सूत्र सख्या ३-१४२ से मृल ाष्ट्रत धातु 'कर' में प्रेरणार्थक भाष प्र-र्शक प्रायय ^{। श्रावि}' की प्राप्ति, श्रोर शेव साधनिका प्रथम रूप के समान हो प्राप्त होकर द्विनीय रूप कराशिय भी ि भिरा हो जाता है।

हासितन् सरहत छदन्त का रूप है। इसके प्राष्ट्रत रूप हामिय और हमाविसं होते हैं। इसन , म प्रथम रूप हासिख म सूत्र सत्या --१४१ से मूल प्राष्ट्रत घातु 'इस' में स्थित चादि स्वर 'ख' के स्थान , पर आगे भूत ऋरन्तीय प्रत्यय का सङ्भाव होने से ३ १४९ द्वारा प्रेरणार्थक माय प्रदर्शह प्रन्यय का लाप , हो जाने से 'झा' की प्राप्ति, ३ १४६ से प्राप्तीग 'हास' में स्थित अन्त्य स्वर 'ख' के स्थान पर आगे भृत , १६व राचक प्रस्वय 'त' का सद्भाव होने से 'इ' की प्राप्ति, ४ ४४- में प्राप्ताय 'हानि' में भूत ४६ त-

षाचक संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'त' के समान ही प्राकृत में भी 'त' प्रत्यय की प्राप्ति, र १३३ व रि प्रत्यय 'त' में से हलन्त व्यालन 'त' का लोप, ३ २४ से प्राप्तांग 'हानिक' में प्रथमा विमहित पार में महरूर्तीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'सि' के स्थान पर प्राकृत स 'म' प्रत्यय की प्राप्ति बीर १८३ हा प्रत्यय 'मृ' के स्थान पर पूर्व वर्ण पर अनुत्वार की प्राप्ति ही कर भूत क्रुव्तीय प्रेरणाध स्मार् प्रथमान्त एकपचनीय प्राकृत-पर हार्गसभ निद्ध हो जाता है।

द्वितीय रूप-(हासितम्=) हसाविष्य में सूत्र संट्या-३ १४२ से मूल ब्राकृत धातु 'हम' बेट ह र्थंक भाव प्रदर्शक परवय 'स्थावि' की प्राप्ति, प्राप्तींग 'हसावि' म रोप साधनिका प्रथम रूप द मारा मूत्र सख्या ४-४४=,१-१७०,३-२४ स्त्रीर १-२३ द्वारा होकर द्विनीय रूप हसाविम मी विद्वश नागर्

क्षामितम् सः कृत का भून-कृद्रन्तीय रूप है। इसके प्राकृत-रूप खाविद्य और वर्गार्थः है। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र मख्या २-३ से मूल मस्कृत धातु 'त्तम' म स्थित 'त्र' व्यञ्जन ह खाते । 'प' की प्राप्ति, ३-१५३ से प्राप्ताग 'प्रम' म स्थित कादि स्वर 'क्र' के स्थान पर बाग मून हरि प्रत्यय का सद्भाव होने से ३-१४२ द्वारा प्रेरणार्थक भाव प्रदर्शक प्रायय का लाप हो जान म प्रा प्राप्ति, ४ २३९ से प्राप्तांग इलन्त 'खाम्' में स्थित धान्त्य इल्क व्यञ्जन 'म्' में जिहरण प्रत्या 'प्र' शान्ति, ३-१४६ से प्राप्ताग 'धाम' में उक्तविकरण प्रत्यय 'श्र' के स्थान पर आगे मून सुराहर प्रस्थय 'त' का सङ्माव होने से 'इ' की ब्राप्ति, ४-४८८ से प्राप्तांग 'स्नामि' में मत कुर्त्तवायक संक्ष प्राप्तच्य प्रत्यय 'त' के समान ही ब्राक्तन में भी 'त' प्रत्यय को प्रा'प्त, ११७७ स प्रा'त प्रया 'त' मे हलन्त व्याजन 'त' का लोप, ३ २४ से प्राप्तांग स्वामिन्न' में प्रथमा विमक्ति के एक वचन में कहारी त्रपु सकतिंग में मत्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'सि' के स्थान पर प्राष्ट्रन में 'मृ' प्रयय की प्राप्त धीर ! ^{हा} मान्त प्रश्यय 'म्' के स्थान पर पूर्व वर्ण पर श्रनुस्वार को मान्ति होकर मृत कुरन्तीय बेरणार्वस्य सबर प्रयमान्त एकवचनीय प्राकृतीय प्रथम पर खामिल सिद्ध हो जाता है।

क्षमाविद्य में मूल प्राकृत खंग 'खम्' की प्राप्ति तपरोक्त प्रथम हप क समान धीर है। ११ मूल शहत घाषु 'खम्' में प्रेरणार्थक-भाव परशंक बत्यय 'खावि' की प्राप्ति, इइ प्रकार देश्णार्थंड हर प्राप्तांग 'समावि' मे रोप मामनिका प्रथम रूप क ममान हा सूत्र मण्या ४४७८, १ राज ३ र ४ १-२३ द्वारा होकर द्वितीय रूप रामायिजं भी सिद्ध ही जाता है।

कार्यत मंस्कृत प्रेरणार्थक रूप है। इसके प्राकृत रूप कार्रात्रह, कराबीश्रह, कार्रिया करायिज्ञ होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र-मंख्या दे १४३ से सूत्र प्राइतन्यातु वर'में स्थित साहि। 'मा' के म्यान पर खागे प्रेरणार्थक माव-मूचक प्रत्यव के मद्माय का ३-१५२ द्वारा सीव कर देते में " की प्राप्ति, १-१० से प्राप्तांग 'कार' में श्वित कारच स्त्रर 'ख' का खागे प्राप्त कर्मणि-वापह प्राप्त 'बे म स्थित दीर्घ स्पर 'ई' का सद्भाव होने से लोन, १ १६० से प्रातांग इलन्त 'कारू' में इनीन पर ाचक प्रत्यय 'ईख' को प्राप्ति, १-४ से हलन्त 'कार' के माथ में उक्त प्राप्त प्रत्यय 'ईख' को स्वि हो ाने से 'कारी अ' खंग की प्राप्ति और ३ १३६ से प्राप्ताग 'कारी अ' में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुप के हत्रचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'ते' के स्थान पर प्राष्ट्रत में इ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप ारीअइ सिद्ध ही जाता है।

करावी थह में सूत्र सख्या ३ १४२ से मूल ब्राकृत घातु 'कर' में घेरणार्थक प्रत्यय 'श्रावि' की ाति, १ ५ से 'कर'में स्थित श्रन्त्य स्वर 'ख' के साथ में श्रागे रहे हुए 'खावि' प्रत्यय के श्रादि स्वर 'खा' । सिंध, ३१६० से प्राप्ताग 'करावि' में कर्मणि प्रयोग वाचक प्रस्यय 'ईन्क्र' की प्राप्ति, १४ से त्रावि' में श्यित ज्ञन्त्य द्वस्वं स्वर 'इ' के साथ में ज्ञागे ज्ञाप्त ज्ञत्यय 'ईन्च' में स्थित ज्ञादि दीर्घ स्वर ' की मधि हीकर दोनों स्वरों के स्थान पर दीर्घ स्वर 'ई' की प्राप्ति छीर ३ १३९ से प्राप्तांग 'फरावीछ' वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एकवचन में संस्कृतीय प्राप्तच्य प्रथम 'ते' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' न्यय की प्राप्ति होकर दिनीय रूप करावीअड मिद्ध हो जाता है।

ें कारिज़ेंद्र में सुत्र सख्या ३-१५३ से मूल प्राष्ट्रत घातु 'कर' में स्थित ख्रादि स्वर 'ख्र' के स्थान पर ागे प्रेरणार्थक माव सूचक प्रत्यय के मदुमाव का ३ १४२ द्वारा लोप कर देने से 'आ' की प्राप्ति, १-१० ं प्राप्तांग 'कार' में स्थित अन्त्य स्वर 'श्र' का श्रागे प्राप्त वर्मीश प्रयोग-वाचक प्रस्यय इजा' में स्थित स म्बर 'इ' का मद्भाव होने से लोप, ३ १६० से प्राप्ताग हलन्त 'कार' में वमणि प्रयोग वाचक प्रत्यय ল' की प्राप्ति, १ ४ से हलन्त 'कार' के साथ में उक्त प्राप्त प्रत्यय 'इडज' की सिघ ही जाने से 'कारिज्ञ' ाग की प्राप्ति और ३ १३६ से प्राप्तांग 'कारिज्ञ' में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एकवचन में सरक्रतीय ¹⁶⁻¹य प्रत्यय 'ते' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर स्तीय हप कारिकाड़ भिद्ध हा तका है।

कराविज्ञह में सूत्र सख्या ३ १४२ से मुल प्राकृत धात 'कर' में प्रेग्णार्थंक प्रत्यय 'बावि' की ारित, १ ४ से 'कर' में स्थित अन्तय स्वर 'स्र' के साथ में आगे रहे हुए 'आवि' प्रत्यय के आदि स्वर त्रा' की संधि होकर 'कराबि' श्रम की प्राप्ति, १-१० से प्राप्तीम 'कराबि' में स्थित अन्त्य द्वस्य स्वर् 'इ' ा धारो कर्मणि प्रयोग पुचक प्राप्त प्रत्यय 'इउज' में स्थित खादि हस्य स्वर 'इ' का सदुभाव होने से लोप, १६० से प्राप्तांग हलन्त 'कराव' में फर्माण प्रयोगवाचक प्रथय 'इकव' की प्राप्ति, १ ४ से हलन्त हराव' के साथ में उक्त प्राप्त प्रत्यय 'इक्न' की सिंध हो कर कराविक्न' व्यंग की प्राप्ति कीर ३-१३६ से ाखांग 'कराविक्त' में वर्त्तभानकाल के प्रथम पुरुष के एकवचन में मरक्रतीय प्रास्तब्य प्रत्यय 'ते' के स्थान र माहत में 'इ' प्रत्यय की पारित होकर चतुर्थ रूप कराविज्जह मिद हो जाता है।"

हास्यते सन्द्रतं का कर्मणि बाचक रूप है। इसके प्राकृत रूप हामीकाइ, हमाबाधह, हामिनजह, गैर हसाविश्तदः। इतम से प्रथम रूप में मूत्र-सख्या ३-१४२ से मूल प्राष्ट्रत घातु 'हम' में स्थित चादि ^{कर 'का'} के स्थान पर आगे प्रेरणार्थक माव-सूचक प्रत्यय के सेंद्रमाय का ३ १५२ द्वारा लोर कर देने से

वाचक संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'त' के समान ही प्राकृत में भी 'त' प्रध्यप की प्राप्ति, रे रिव्यन ल प्रत्यय 'त' में से हलन्त व्यञ्जन 'त्' था लोव, ३ २४ से प्राप्ताम 'हानिश्च' म प्रथमा विमीत ह न्तर-में सस्क्रतीय प्राप्तब्य प्रस्यय 'सि' के स्थान पर प्राकृत में 'म्' प्रत्यय की प्राप्ति चौरी से का प्रत्यय भा के स्थान पर पूर्व वर्ण पर श्वनुत्वार की प्राप्ति हो कर भूत हुन् तीय प्रेरणार्थे स्थान प्रयमान्त एकपचनीय प्राकृत-पर हार्मिश मिद्ध हो जाता है।

हितीय रूप-(हासितम्=) हसाविश्व में सूत्र सख्या ३ १४२ से मृज प्राकृत थातु 'हम' है र " र्थक भाव प्रदर्शक पत्यय 'स्नावि' की प्राप्ति, प्राप्तिंग 'हमावि' में शेप साधनिका प्रथम हव क ए । मूत सर्या ४-४४८,१-१७७,३-२४ और १-२३ द्वारा होकर द्विनीय रूप हसाविम मी सिद्ध दार्य

क्षामितम् सस्कृत का भूत-कृत्न्तीय रूप है। इसके प्राकृत-रूप वामिश्र श्रीर गर्नाहर्षः हे । इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या २-१ से मूज संस्कृत पातु 'तम' में स्थित 'त्र' व्यञ्चा हरान 'त' की प्राप्ति, ३-१५३ से प्राप्ताग 'लम' म स्थित आदि स्वर 'झ' के स्थान पर आगे मूत्र 🚏 प्रत्यय का सद्भाव होन मे ३-१५२ द्वारा प्रेरणार्थक भाव प्रदर्शक प्रत्यय का लाप हो जान स पा प्राप्ति, ४२३९ से प्राप्तांग हलन्त 'प्राम्' में स्थित श्रन्त्य हलग्त व्यञ्जन 'म्' में विकरण प्राप्त' द प्रारित, ३-१५६ से प्रान्तांग 'त्माम' म उक्तविकरण प्रत्यय 'ख' क स्थान पर आगे मृत कृत्य प्रत्यय 'त' का मद्भाव होने से 'इ' की प्राप्ति, ४-४५८ से प्राप्ताग 'खामि' में मन गृहत्त्रावह साह प्राप्तस्य प्रत्यय 'त' के समान ही प्राक्तन में भी 'त' प्रत्यय को प्राप्ति, ११८७ स प्राप्त प्रया 'तं है हल-त य्यञ्जन 'त' का लोप, ३ २४ से प्राप्तींग 'खामिक' म प्रथमा विभक्ति क एकप्रवन में भरा नपु मक्तिंग में संस्कृतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'सि' के स्थान पर प्राकृत मे 'मृ' प्रत्यय की प्राप्ति कीर र ^श माध्त प्रत्यय 'म' के स्थान पर पूर्व वर्ण पर अनुस्वार का शाब्ति होकर भूत कृतन्तीय बेरणार्वस् मुगर प्रयमान्त एकवचनीय पाकुतीय प्रयम पर खामिशं सिद्ध हो जाता है।

खमाविष्य में मूल प्राकृत खंग 'स्नम्' की प्रास्ति उपगक प्रथम रूप के मनान झी^{त ३ (।} मूल प्राप्त पातु 'लम्' मे प्रेरणार्थक भाव न्दर्शक व्लयय 'श्रावि' की प्राप्ति, इइ प्रकार देश्यार्थक ह प्राप्तीय 'खमाबि' में शेव माधनिका प्रथम रूप के समान ही सूत्र मंद्रवा ४ ८७८, है रिक, ६ रह है १-२३ द्वारा होकर द्वितीय रूप रामाविश भी सिद्ध हो जाता है।

कार्यते मंस्कृत प्रेरणार्थक रूप है। इसके प्राकृत रूप कारीचर, कराबीचर, कारिड़ा है कराविम्मइ होते हैं। इनमें से प्रथम रूप में मूर-मंदया ३ १४३ से मूल ब्राह्मत प्रातु कर'में स्वित स्वी (म 'छ' क ग्यान पर खागे प्रेरणार्थर माव-मूचक प्रत्यय के नद्माय का ३ १४२ द्वारा सीय कर हैं। में क की प्राप्ति, १-१० से प्राप्तांग कार' म रियत अन्य स्वर 'ख' का आगे प्राप्त कर्मीजनाप हन्य पर पूर्व हैं है में स्वित दीर्घ स्वर 'ई' का सद्माव होने से स्रोप, ३ १६० से प्राप्तात इन्तर 'कार' में क्मेंतु वर करानिश्च में सूत्र तिया ३ १४२ से मूल प्राकृत वातु 'कर' में प्रेरणार्थक प्रत्यय 'श्वावि' की ।ति, १-४ से 'कर'में स्थित श्रन्य स्वर 'श्वा' के साथ में श्वामे रहे हुए 'श्वाबि' प्रत्यय के श्वादि स्वर 'श्वा' ने मिथ, ३ १६० से प्रास्ताम 'कराबि' में कर्माण प्रयोग वाचक प्रत्यय 'इश्व' की प्रास्ति, १-४ से हराबि' में स्थित श्वन्त्य इस्त्र' हर्न 'इ' के साथ में श्वामे प्रास्त प्रत्यय 'ईश्व' में स्थित श्वादि डीर्म स्वर 'हें की साथि हो कर दोनों स्वरों के स्थान पर दीर्घ स्वर 'ई' की प्रास्ति श्वीर ३ १३९ में प्रास्ताम 'करावीधा' वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एक वचन में सहतीय प्रास्त्रय प्रस्थय 'ते' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' न्यय की प्रास्ति हो कर द्विनीय रूप करावीगड़ मिद्ध हो जाता है।

कारिज्ञह में सुन्न सत्या ३-१५३ से मूल प्राक्त पातु 'कर' में स्थित ब्रादि स्वर 'खा' के स्थान पर गांगे प्रेरणार्थक माव सूचन प्रस्वय के मद्भाव का १ १४२ द्वारा लोप कर देने से 'ब्रा' की प्राप्ति, १-६० । प्राप्ताग 'कार' में स्थित ब्रन्त्य स्वर 'ब्रा' का ब्रागे प्राप्त कर्माण प्रयोग-साच क प्रस्वय इज्ञ' में स्थित स्व स्वर 'हे' का मद्भाव होने से लोप, ३-१६० से प्राप्ताग हलन्त 'कार' में क्मणि प्रयोग वाचक प्रस्वय इज्ञ' की प्राप्ति, १ ४ से हलन्त 'कार' के साथ में उक्त प्राप्त प्रत्यय 'इच्च' की स्वि हो जाने से 'कारिज्ञ' गग की प्राप्ति श्रीर ३-१३६ से प्राप्ताग 'कारिज्ञ' में बर्तमानकाल के प्रयम पुरुष के एकवचन में सहस्तीय गप्तव्य प्रस्वय 'ते' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' प्रस्वय की प्राप्ति होकर छतीय रूप क्मारिज्ञइ मिद्ध हा कारा है।

कराविष्ठतह में सूत्र सख्या १ १४० से मूल प्रान्छत घातुँ 'कर' में प्रेरणार्थंक प्रत्यय 'छावि' की गिरित, १ ४ से 'कर' में स्थित खन्त्य स्वर 'छा' के साथ में खारी रहे हुए 'छावि' प्रत्यय के खादि स्वर था' की सिंध होकर 'करावि' खग की प्राप्ति, १ १० से प्राप्ति। 'करावि' में स्थित खन्त्य हात्व रहर 'द' जा खारे कर्मणि प्रयोग मूलक प्राप्त प्रत्यय 'इजा' में स्थित खादि हात्व स्वर 'इ' का सद्भाव होने में लोश, १ १६० से प्राप्तांग हत्वन्त 'कराव्' में 'कर्मणि प्रयोगवाचक प्रत्यव 'इजन' की प्राप्ति, १ ४ से हत्वन्व हराव' के साथ में तक्क प्राप्त प्रत्यय 'इजन' की सिंध होकर कराविज्ञन' खग की प्राप्ति, थीर ३ १३६ से प्रत्याव' के साथ में तक्क प्राप्त प्रत्यव 'इजन' की सिंध होकर कराविज्ञन' खग की प्राप्ति छीर ३ १३६ से प्रत्यांग 'कराविज्ञन' में वर्षभानकाल के प्रथम पुरुष के प्रस्वयन में सास्त्रतीय प्राप्तवन्य प्रत्यय 'ते' के स्थान सरक्षता में 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर चर्चचे रूप कराविज्ञन' सिद्ध हो जाता है।

हास्यते सस्टत का कर्मणि-बाचक रूप है। इसक प्राक्ततं रूप हामोश्रद्ध, हमायीश्रद्ध, हासिज्जद्द, श्रीर हमाविश्वद्द। इनमें से प्रथम रूप में सूत-सख्या ३-१४३ से मूल प्राप्टन-धातु 'हम' में स्थित च्यादि 'वर'च' के स्थान पर आर्थ देशपार्थक माव-मूचक प्रस्तप के सद्माव का ३ १४२ द्वारा लोप कर देने से 'कारेइ' प्रेरणार्थक रूप की सिद्धि सूत्र सख्या ह १४९ मा की गई है।

क्षामयति मस्तत का प्रेरणायेक तप है। इनका प्राष्ट्रत रूप लामेइ होता है। इपने कृष्ट २ रे से मृल सस्त्रत धातु 'चम्' में स्थित खादि व्यञ्जन 'च' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'प' प्रवृत कार्य प्राप्ति, २-१४२ से प्राप्तांग 'खम्' में स्थित खादि स्वर 'ख' के खागे | ग्राप्तत बोचक प्रवृद्ध का द्वा होने से 'खा' की प्राप्ति, २-१४६ से प्राप्तांग 'खाम्' में शित्र त योधक प्रत्यय 'प्तृव्ण' का क्षिण के २ १३६ स शिचन्त रूप में प्राप्तांग 'खामे' में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एक्ष्यवन में न्यू प्राप्तव्य प्रत्यय 'ति' क स्थान पर प्राष्ट्रत में 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति हाकर शिवन्त खर्मक वर्तनारण प्राष्ट्रत क्षियायण का रूप खामेड सिद्ध हो जाता है।

पारिश खामिश और कारिशड़ कर्षों की सिद्धि सूत्र सहया ३१३२ में की गई है।

क्षाम्यते मध्यत का णिनन्त का रूप है। इनका माइत रूप सामीअइ होता है। इने सरवा २ ३ से मूल सम्युत भातु 'तम् रिवत खादि व्यातन 'त्त' के स्थान पर प्राकृत में 'त' माप्त खादेश प्राप्ति, ३ ११३ में प्राप्तांग 'खम्' में स्थित खादि स्वर 'ख' के खाने गूर सदया ३ ११८ सभ खिजन्त बोधक प्रत्यव की गूर सख्या ? ११२ से लोव स्वयस्था प्राप्त हो जाने से 'खा' को वालि, ११ से खिजन्त खर्थ सहित प्राप्तांग 'नाम्' में कर्मिख भाये प्रयान-बोतक प्रस्थय 'ईख' की प्राप्ति, ११ प्राप्तांग खाम्' में स्थित ख्रार्थ स्कृत व्यक्तन 'म्' के साथ में खामे प्राप्त प्रयाय 'ईख' की के १ ३ १३६ में खिजन्त खर्थ महित कमिख माये प्रयोग रूप से प्राप्तांग 'खाभीश्व' में यतमानकान ६ पुरुष क एक्षयपन में सास्ट्र-ीय प्राप्तस्य स्वर हो' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'इ' प्रत्यय का प्राप्त हो कि

कारिजनह" कियावर की मिद्धि मुत्र मह्मा ? १५२ में की गई है।

क्षाम्यते मस्तृत का रूप है। इमका प्राकृत रूप व्यामिश्वह होता है। इसमें मूत्र-सट्य ने मूल-सम्हत-चातु 'क्षम' में यित चादि व्यक्त 'क्ष' क स्थान पर प्राष्ट्रत में 'त' व्यक्त की व प्राप्ति, १ १४२ में प्राप्तीग 'क्षम' में स्थित चादि स्वर 'क्ष क चागे सूत्र-सम्या १-१४६ से व्र (जमन्त-मोणव-मस्वय की पूत्र संख्या १-१४२ क निर्देश में लोगावस्था प्राप्त हा जाने से 'या' की व १ १६० से (जमन्त-क्यर-सहित प्राप्तीग 'क्षाम्' में क्षिण-माथ-प्रयोग-चोशक प्राप्तय '१३६ बी र १ ४ से पास्ती । 'क्षाम्' में स्थित चन्य वस्त्रत व्यक्त 'म्' क माथ में चागे बाख प्राप्तय स्वर्ग 'हें चीर १-१-६ स (जमन्त-चर्य-सहित कर्यात-माय-प्रयोग रूप में प्राप्ता 'व्याधित्र' में बहुन' क प्रथम पुत्रय क प्रवयन से सम्हनीय प्राप्तय प्रयाप ते' च स्थान पर प्राप्तत में 'हे' प्राप्त की होहर प्राप्त-रूप क्षानिक्षह विद्व हो जाना है।

'कराविभ' करावीभद्र श्रीर कराविज्जइ तीनों रूपों की सिद्धि सुत्र सरया ३-१५२ में की : 8 :

समामयति साकृत का णिचन्त रूप है। इसका प्राकृत रूप सगामेइ होता है। इममे सुत्र सख्या se से मृल सरकृत-धातु सप्राम् में श्थित 'र' व्यञ्जन का लोप, ३-१५३ की पृत्ति से प्राप्तांग 'सगाम् श्रादि रूप से स्थित श्रनुस्वार महित 'श्र' क स्थान पर श्रागे 'णजन्त बोधक प्रस्थय का सद्भाव हाने ्भो 'श्रा' की प्राप्ति का अभाव, ३-१४६ से श्राप्ताग 'सगाम' में खिजन्त बोधक प्रत्यय 'एत=ए' की ति, धीर ३ ११६ से खिजनत अर्थक रूप से प्राप्ताग 'सगामे' में बतमानकाल के प्रथम पुरुष के एक-वन में सम्कृतीय प्राप्तब्य पत्यय 'ति' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राकृत-त्रियापर ारूप 'सगामेड सिद्ध हो जाता है।

फारिअ' रू। की सिद्धि सूत्र-सट्या ३-१५२ में की गई है।

होपयाति सस्कृत का प्रेरणार्थक रूप है। इसका प्राष्ट्रत रूप दूसेइ होता है। इसमें सूत्र सरया - ६० से मूल संस्कृत घाषु 'दू प्' में स्थित मूर्घन्य 'प क स्थान पर दनस्य सु' की प्रास्ति, ३ १४६ में ारतांग 'दूस' में णिजन्त अर्थक प्रत्यय 'प्त=ए' की प्राप्ति और ३ १३६ से णिच-त अर्थक रूप से प्रार्तांग [सै' में बतमानकाल के प्रथम पुरुष के एकधचन में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'ति' के स्थान पर प्राकृत ं 'इ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्राकृत कियापर का रूप दूसेड़ सिट हो जाता है।

फारवाति सस्वत का प्रेरणार्थक रूप है। इनका प्राष्ट्रत-रूप कारावेद (विद्या गया) है। इनमें थि सर्था ४ २३४ से मून सरकृत चातु कु' में स्थित श्रान्य 'ऋ' के स्थान पर 'कर' का प्राध्ति, ३-१४३ ी बृत्ति से प्राप्ताम 'कर' में थित छादि 'ख' के खामे णिजन्त योधक प्रस्यय 'खावे' का मदभाव होत हे कारण में 'आ' की प्राप्ति, ३१४६ से प्राप्तांग कार' में जिजन्त-बोधक प्रत्यय 'श्रावे' की प्राप्ति. े १ स प्राप्त्रांग 'कार' में स्थित चन्त्व 'ख के साथ में खाने खाये हुए प्रत्यय 'खाने' की सचि होकर दीर्घ आकार की प्राप्ति के साथ शिवनत-शर्थक अग 'कारावें' को प्राप्ति और ३ १३६ से णिवनत शर्थक-हप से प्राप्ताग 'कारावे' में वर्हमानकाल के प्रथम पुरुप के एकवयन में संस्कृतीय प्राप्तब्य शयय 'ति' के धान पर प्राकृत में 'इ' प्रस्थय की प्राप्ति हो कर प्राकृताय प्रेरणार्थक बत्तमान काली र कियापर का क्य माराषेड़ सिद्ध हो जाता है।

हा। हित संस्कृत का अन फुरन्तीय है। इनका प्राष्ट्रत रूप हासाविकी (क्या गया) है। इनमें सूत्र सरवा र-१५३ की वृत्ति से मुल प्राष्ट्रन धावु 'हत' में स्थित प्रादि 'खकार' के खागे प्रेरणार्थक प्रत्यम 'श्रावि' का सद्भाव होने के कारण सं 'खाकार' की प्राप्ति, ३-१५२ मे प्राप्तांग 'हाम में खान भूत पुरन्ताय प्रत्यय का सबुभाव हाने क कारण में प्रेरणार्थक भाव निर्माण में मूत्र मखदा १९८६ क भनुमार प्राप्तस्य प्रश्य 'झत् एत्, स्नाव स्त्रीर स्त्रावे' के स्थान पर 'व्यावि' प्रत्यय की प्राप्ति, ४४४= स णिजनत व्यर्थक रूप से प्राप्तांग 'हासाबि' में छदत्त व्यर्थक प्रत्यय 'न' को प्राप्त, र १३३ म इर्र्यन्त मात्र प्रत्यय 'त' में में हलनत व्यज्ञन 'त्' का लोप, ३२ से णिजनत वर्ष महित मृत हार्याप्त पातमक रूप से प्राप्ताय व्यकारान्त पुँहिला 'हासाबिव्य' में प्रथमा विभक्ति के एहवचन में न्रीय प्राप्तक्य भत्यय सि' क स्थान पर 'हो = व्या' प्रत्यय मी प्राप्ति होक्ट प्राप्तुण प्रहाणाहिने मा हम लाता है।

'जणी' रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १-१६२ में की गई है।

स्यामलया मेहरत खाकारान्त कीलिंग का रूप है। इस मा प्राप्टत रूप तामनाम्हार हो है। इस मा प्राप्टत रूप तामनाम्हार हो है। इस मा प्राप्टत रूप पान के प्राप्टत का लोप, १-२६० से लोप हुए य' क प्रधात शप रहे हुए हुन्द रा।' के स्थान पर हुए सी की प्राप्टत, ३-२२ से प्राप्टतीं मासला' मा स्थित खन्य प्रीर्थित से प्रत्यय 'का' की 'ई' की प्राप्टित, चीर ३-२६ से प्राप्टतीं में ईकारान्त स्थितिम 'सामलीं में हैं 'दें विभक्ति के एकपचन मा सस्कृताय प्राप्टतच्य पराय 'दा=या' क स्थान पर 'ए' प्रत्यय की प्राप्टत शक्ति हो हो हो हो हो हो है। इस सामलीए रूप का विश्व ह जारी है। ३-१४३॥

मा वा ॥ ३-१५४॥

श्रत था इति वर्तत । श्रादन्ताद्धातो मीं परे श्रत श्रान्मं वा भवति ॥ हमापि हर्^ह जालामि जालमि । लिहामि लिहमि ॥ श्रत इत्येप । होमि ॥

अर्थ — नो आकृत धातु अकारान्त हैं, अन्य शिवत जाय 'आं के स्थान पर खात 'तु । का स प्रारम्भ कीन यान पाल गोषक प्रवर्णों की अप्रित हों। पर 'मा' की अप्रित वैकल्पिक रूप में कि स्वारम्भ कीन यान पाल गोषक प्रवर्णों की अप्रित हों। पर 'मा' की अप्रित वैकल्पिक रूप में कि रहती हैं। इस प्रकार इस सूत्र का भी विचान धातुरथ अन्त्य 'आं का 'आं' रूप में परिलट कान कि ही बिया। या है। उदाहरण इस भकार है —हमानि —हमानि अथया हमिनि—में हैं तन हैं, अन्याप्त जाणानि अथया जाणानि —में जानता है, जिल्हामि —हिसानि अथया निर्दात निर्मा । कि साम है, इन हैं हस्या में प्रवित होता है कि खकारान्त धातुओं में सिथा अन्त्य 'आं' क पर 'म्' में आरंग होते हैं अप्रयास कर्म साम स्वारम होने के कारण में 'आ' की प्राप्ति वैक्तिक रूप से हुई है। या साम्यास अप्रयास विवति हैं।

प्रश्न-'क्षकागृत्त-मातुत्रीं' के लिये ही तेमा विगान क्यों दिया गया दें ?

उत्तर —जी पातु घडारान्त नहीं होकर अन्य स्वरान्त हैं, उनमें स्वित इन आन्वारर । 'चा' की मानि नहीं होती हैं, दमलिये क्वल 'कक्तरान्त पातुमी' कलिये ही पना विभान जेंं' पादियें 'असे —मदासि=होसि ≕में होता हूँ । इन वदाकरण में मानून-बाद्व 'हो' के सम्ब सं'की' हो . है, तद्युमार छ। में में से प्रारम्भ होने वाले काल बोषक प्रत्यय का सद्भाव होने पर भो उस अन्त्य स्वर 'ओ' को 'आ' का प्राप्ति नहीं हुई है, यों यह निष्कप प्राप्त हुन्ना है कि केवल 'अन्त्य ध्य' को ही 'खा' को प्राप्ति होती है, अन्य अन्त्य स्वर को नहीं ।

ु 'हसामि' कियापद की सिद्धि सूत्र मरया है १४१ में की गई है।

हसि सस्कृत वर्तमानकाल का रूप है। इनका प्राकृत रूप हमि होता है। इनमें सूत्र सख्या . ११४१ से मूल प्राकृत घातु 'इस' में वर्तमानकाल के तृतीय पुरुप के एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रयय 'मि' के ममान हा प्रकृत में मी सि प्रस्यय का प्राप्ति होकर प्राकृत रूप हसि सिद्ध हो , जाता है।

जानामि सस्कृत का वर्तमानकाल का रूप है। इसके प्राक्षत रूप जाणामि छोर जाणीम होते हैं। इसम सूत्र-सख्या-४-७ से सस्कृतीय मूल-धातु 'ज्ञा' के स्थानोय रूप 'जान' के स्थान पर प्राक्षत में 'जाण' रूप की आदेश प्राप्ति, ३-१४४ से प्राप्त प्राक्षत-धातु 'जाण' में स्थित अन्त्य स्तर 'अ' के आगे म्' से प्रारम्भ होने वाले काल-बोधक-प्रत्यय का सद्माव होने के कारण से यैकिट्विक रूप से 'आ' की प्राप्ति, और ३-१४१ से प्राप्ताम और जाण' में वर्तमानकाल के त्रतीय पुरुप के एकत्रचन में सक्कित्य प्राप्त प्राप्त के समान ही प्राक्षत में भी 'मि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर सम से दोनों कियापर-रूप-'जाणाभि और जाणाभि सिद्ध हो जाते हैं।

ल्खािम सरकृत वर्तमानकाल का रूप है। इसके प्राकृत-रूप लिहािम श्रीर लिहिम होते हैं।
म सूत्र-सख्या-१-१८३ से मूल सरकृत-वातु 'लिख्' में स्थित खन्य व्यान्तन 'प्' के स्थान पर प्राकृत में
'दे' की प्राप्ति, ४-२१६ से प्राप्त हलन्त घातु 'लि ह' में विकरण प्रत्यय 'क' की प्राप्ति, १-१४४ से प्राप्त निकरण प्रत्यय 'ख' के श्रामे 'म्' से प्रारम्म होने वाले काल बोधक प्राय्य का सद्भाव होने के कारण् से वैकत्पिक रूप से 'खा' की प्राप्ति खीर ३-१४१ से प्राप्तांग 'लिहा खीर लिह' में प्रत्मानकाल के ' एताय पुरुष के प्रक्षचन में सहक्रांय प्राप्तव्य प्रत्यय 'मि' के समान ही प्राकृत में मी 'मि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर कम से होनों क्रियापर-रूप लिहािम और लिहािम' सिद्ध हो जाते हैं।

भणानि सस्कृत वर्तमानकाल का रूप है। इनका प्राकृत रूप होनि होता है। इसमें सूत्र सत्या ४६० से मूल सहक्रत थातु 'मू' के स्थान पर प्राकृत में 'हो' रूप की 'व्यादश प्राप्ति 'वीर दे १४१ से प्राप्त प्राष्ट्रत थातु 'हो' में वर्तमानकाल के तृतीयपुरुष के एकवचन में मस्कृतीय प्राप्तय प्रप्यय 'मि' के ममान हो प्राप्तत में भी 'मि' प्रथय की प्राप्ति होकर प्राकृत कियापर का रूप टोमि सिद्ध हो जाता है। दे १४४॥

इच्च मो-मु-मे वा॥ ३-१५५॥

अकारान्तादातोः परेषु मो-सु-मेषु अत इस चकाराद् श्रास्य च या अवतः श

भणिमा भणामो । भणिषु भणामु । भणिम भणाम । पद्ये । भणमो । भणमु । भणमा ॥ स्वाप् । भणमा । भणिषु । भणेमा । भणेषु । भणेमा ॥ सवस्याः दामो । होसी ॥

अर्थ -- प्राकृत भाषा की खकारान्त धातुष्ठों में स्थित छ त्य 'ख' के स्थान वर कान वर्षक काल के तुतीय पुरुष के बहुतचन के प्रत्यन 'मो-मु-म' परे रहने पर वैक्तिक रूप से 'इ क' आ" हुआ करती है तथा मूल-सूत्र म चकार होत से उपरोक्त सूत्र मख्या ३-१४४ क अनुमार उम मन्दर्भ क स्थान पर इन्हों 'मो सु-म' प्रत्ययों के परे ५हने पर चैकल्विक रूप से 'झा' की प्रान्ति मी हथा क् है। उदाहरण इन प्रकार हैं —मलाम =मिलमो भलामो, मिलुमु मलामु, मिलुम मलाम, पैर्टीश र होने स तहाँ पर खरस्य 'श्र' को 'इ' खयवा 'श्रा' को प्राप्ति नहीं होगी वहाँ पा 'मणगी, मण्ड हैं मणम' रूप भी वर्नेंगे। इसी प्रकार से सूत्र सरवा ३ १४८ में ऐमा विधान निश्चित दिवा गरा है हिन 'वर्तमानराल के आज्ञार्यक-विधि-वर्षक लहारों के बीर वर्तमान कुरन्त क' प्रत्यों के दरे गरे : अकारान्त-धातुओं के अन्त्य 'अरार' को सैकह्वित रूप में 'एकार' की प्राप्ति भी हुवा कागृहि है नुमार वर्तमान शल के प्रत्यवों क वरे रहने पर अकाशन्त पातुओं क अन्वस्य 'स गर' को है 'ने रूप से 'एकार' की प्राप्ति होने का विधान होन से 'मण धान के दपरीक रूप के सरिशक्तिय हरूर श्रीर बनते हैं - भणमी, भणमु श्रीर भणेम, इन बारह ही क्यों का एक हा अर्थ होता है भी। वह दा कि—हम (मन) स्पष्ट रूप से बालते हैं—स्पष्ट रूप से कहन हैं। 'इप प्रकार में बन्य प्रश् भातुकों द मी कारवस्थ 'अकार' वा वंदितक रूप में 'बा खबवाड पथवा वे' की धारित हार ' कृत्रण से वर्तमानकाल के तुनीय पुरुष के बहुदचन के बत्यव 'मी-मु-म' पर रहने पर बारह क कर्च सनते 🗗 ।

प्रदेश -- प्रदेश गत्न पातुका के तिव है। ऐसा विधान वर्षा किया गया है ? शत्य गर भावतीं के प्रस्थाध स्वर के मस्याप में ऐसा विधान वर्षी नहीं अतलाया गया है ?

भणाम् सम्छत का श्रक्षमक रूप है। इसके प्राठ्व रूप बारह होते हैं भणमो, भणमु भणम, गामो, भणामु, भर्णाम, भर्णिमो, भिर्णिम, भर्णिमो, भर्णिमें स्वीत पर प्राकृत में क्रम से 'मो-मु-म' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर क्रम से 'गमो, भर्णिम स्वीत स्वाम सिद्ध हो जाते हैं।

ा भणामी, भणामु और भणाम में सूत्र सख्या ३ १४४ से मूल प्राञ्चन घातु 'मग' में स्थित अन्यय र 'श्रकार' के स्थान पर 'श्राकार' की वै बहिनक हव से प्राप्ति श्रीर ३ १८४६ से प्रयम तीन हवों के सन हो भी-मु-म' प्रत्यवों को कन से प्राप्ति 'हो बर चीना, वाँचना श्रीर छट्टा हन भगामी, भगामु रि भणाम सिद्ध हो जाते हैं।

मिणिनो, मिणिन और मिणिन में सूत्र संख्या ३ १४४ से मूल प्राक्षत घातु 'मण' में स्थित अन्य र 'अकार' के स्थान पर 'इकार' को वेकल्पिक रूप से प्राप्ति और ३-१४४ से प्रथम तीन रूपों के समान 'मी-सु-म' प्रस्यों को कम से प्राप्ति होकर सातवां, आठवा और नववां रूप भिणिमें।, मिणिन तिर्दे हो जाते हैं।

- 'भएंगो, भएंगु और भणंभ में मूत सख्या ३-१४८ से भून शक्त-चातु 'भण' में स्थित खन्य स्वर प्र' के स्थान पर 'ए' की वैकिनक रूर से प्राप्ति और ३ १४४ से प्रथम तीन रूपों के समान ही 'मो-सु-' प्रत्यों की क्रम से प्राप्ति हो कर दशका, स्वारहर्ता और वारह्वा रूप भणेमी, भणेमु और भणेम उद्ध हो जाता है।

भणाम मान्नत कियापर का रूप है। इनका प्राकृत रूप होसी होता है। इनमें सून संट्या १६० से मृत सख्त छातु 'सू=मन्' के स्थान पर प्राकृत में हो' रूप की खादेश प्राप्ति श्रीर ३ १८४ हे खादेश प्राकृत घातु 'हो में बर्तमानकाल क तृतीय पुरुष क सहचयन में सन्कृतीय शामन्य प्रत्य मान्' के स्थान पर प्राकृत में 'सी' मन्यय की प्राप्ति होकर प्राकृत कियापर का रूप होनी मिद्ध हो बाता है। ३-१४५ ॥

क्ते परवात इस्त्रं भगति॥ इसिम्र । पहिन्नं । निर्मतं । हामिन्नं । पहिन्नं ॥ वर्ष स्ट त्यादि तु सिद्धावस्थापेचणात् ॥ श्रव इस्येव । कार्य । तुत्र । हुन्नं ॥

अर्थ — अकारान्त पातु जो में यदि भूत करन्त का प्रत्यय 'त= व' लगा हुबा हो हा रव रा रान्त पातु खों के जन्त्य 'ख' क श्वान पर निश्चित रूप में 'ह' की पाप्ति हो जोनी हैं। वैत — रव हिम ब हमा हुआ, अववा हमें हुए को, पठितम् = पिंडिं = व्याह मा हुआ, अववा परे हुए को, पठितम् = पिंडिं = व्याह मा हुआ, अववा परे हुए को, कांमतम् = हिमा खा हुआ, पाठितम् = गांकि च हुआ, इत्यादि । इन द्याहरणों से ज्ञात होता है कि पातु औं मूत-करन्त वावक श्वच 'तव द सद्भाव होने के कारण से मूल घातु खों के अन्त्य 'ख' के स्थान पर 'ह' को प्राप्ति हो गां है। हो भाषा म सुद्ध पातु खों क मूत करन्ताय ह्या पे से भाषा म सुद्ध पातु खों क मूत करन्ताय ह्या ने भाषा वातु हैं जो कि चयों कि तियम म सर्थ हैं। जैसे — गतम् = गत्य = गत्य = त्या हुआ, नतम् = नवम् = नयम् = नया हुआ, अववा जिम हो तमा हा । विश्व हो जैसे — गतम्= गत्य = या हुआ, नतम् = नवम् = नया हुआ, अववा जिम हो तमा हो विश्व को पाति नहीं हुई हैं, इनका कारण यही हैं कि हत की प्रक्रिया संस्कृतीय हुई हैं हैं, इनका कारण यही हैं कि इन की प्रक्रिया संस्कृतीय हुई हैं और सत्यरचात्र प्राप्ततीय वर्ण विकार-गत नियमों में इन्हें प्राप्तत हवीं की बोगी हो रामाराश्च यह है कि सरक्तीय निद्ध अवस्था भी अपने से इन प्राप्त कर्जो का निर्माण हुआ है से हैं। स्वाह है कि सरक्तीय निद्ध अवस्था भी अपने से इन प्राप्त कर्जो का निर्माण हुआ है से हैं। हिंदें हैं हैं सरक हम प्रवास होने कर्जो कर्जो का निर्माण हुआ है से हो से स्वाहिये ।

प्रश्न — झकारान्त पानुभी में स्थित अन्त्य 'आ' के स्थान पर 'इ का प्राप्ति हा जाती है। ही क्यों कहा गया हैं ? ब्योर अन्य स्वरान्त पानुभी में स्थित अन्त्य स्वर कृत्यान पर 'इ' क्षा व क्यों नहीं होती हैं ?

उत्तर — पूँकि ककारान्त घातुरव कान्य 'व' के स्थान पर ही मूत-प्रान्ति व ताय कर 'द' की वाति हातो है तथा दूबरा घातुकां में स्थित कान्य किसी भी कान्य हदर के स्थान व' 'रें प्राप्ति नहीं होती है, इसीलिय जेमा निरम्वयात्मक विधान प्रश्तीत किया गया है। इसके मार्यत वे व्हाहरण इस प्रकार है — स्थानम् = मार्यत्र = प्रवान किया हुआ, न्रत्य = तुर्व = कहरा हुआ के व्याग्त स्थान स्थान हुआ को स्थान हुआ के की हुं में के विधान कर 'दा, प्रवाद की को प्रवाद की विधान कर 'दा, प्रवाद की विधान कर की विधान कर की विधान कर की की विधान कर की विधान की विधान की विधान की विधान की विधान कर की विधान की विधान कर की विधान की विधान कर की वि

हासितम् सम्कृत कृतन्तीय रूप है। इसका प्राकृत रूप हसिन्न होता है। इसमें सूत्र सस्या । १७७ से हलन्त व्यञ्जन 'तृ' का लोप, २ ४ से द्वितीया विमक्ति क एकवचन में सम्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय श्रम्' के स्थान पर प्राकृत में 'म्' प्रत्यय का प्राप्ति खीर १-२३ से प्राप्त शस्य 'म्' के स्थान पर पूर्व-स्व 'ख' पर श्रनुस्वार की प्राप्ति होकर हसिन्न रूप सिद्ध हो जाता है।

पितम् सम्क्रत भूत-कृद्र-तीय रूप का प्राकृत रूप पिडिश्व होता है। इसमे सूत्र सख्या ११६६ से 'ठ' ब्यञ्जन के स्थान पर 'ढ' की प्राप्ति, १-१७० से हलन्त व्यञ्जन 'त' का लोप, ३५ से द्वितीया विभक्ति क एकवचन में सस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'ख्रम्' के स्थान पर प्राक्तत में मू' प्रस्थ्य की प्राप्ति ख्रीर १-२३ से प्राप्त प्रत्यय मू' के स्थान पर पूर्व वर्ण 'ख्र' पर ख्रतुष्वार की प्राप्ति होकर पाठेश रूप सिद्ध हो जाता है।

नामेतम्, सम्कृत का भूत-कुर्न्ताय रूप है। इसका प्राकृत-रूप नविश्व होता है। इसमें पूज सरया ४ २२६ से मूल सस्कृत थातु 'नम्' में स्थित अन्य स्थलन म्' के स्थान पर 'व्' को प्राप्ति, ४ २३६ मे प्राप्ता 'नव्' में विकरण प्रत्यव 'ख' को प्राप्ति, ३-१५६ से प्राप्त विकरण प्रत्यव 'ख' के स्थान पर 'द' भी प्राप्ति, ४ १५६ से प्राप्त विकरण प्रत्यव 'ख' के स्थान पर 'द' भी प्राप्ति, ४ १५६ से प्राप्त में भी 'त' प्रत्यव को प्राप्ति, १-१५७ से प्राप्ति, ४ १५ से प्राप्ता 'नविश्व' में द्वितीय विभक्ति के एकवचन में संस्कृतिय पात्तव्य प्रत्यव 'व' में से हर्नन्त' ने का लोप, ३ ५ से प्राप्ता 'नविश्व' में द्वितीय विभक्ति के एकवचन में संस्कृतिय पात्तव्य प्रत्यव की प्राप्ति प्रत्यव भी प्राप्ति प्रत्यव की प्राप्ति प्रत्यव भी प्राप्ति प्रत्यव की प्राप्ति प्रत्यव भी प्राप्ति प्रत्यव भी प्राप्ति प्रत्यव की प्राप्ति प्रत्यव भी प्राप्ति प्रत्यव की प्राप्ति प्रत्यव भी प्राप्ति प्रत्यव की प्राप्ति से प्राप्ति प्रत्यव भी प्राप्ति स्थित हो जाता है।

'हासिने' प्रेरणार्थक रूप की सिद्धि सत्र सरया ? १५२ में की गई है।

णाठितम् सम्झत का प्रेरणार्थंक स्प है। इसका प्राष्ट्रत स्प पाढिसं होता है। इसमें मूत्र सरया १ १६६ से मूल सस्भृत भातु 'पठ' म स्थित हलान व्यञ्जन 'ठ के स्थान पर 'द्' को प्राप्ति, २-१४३ से प्राप्त 'पढ़े' में स्थित स्वादि स्वर 'अ' के स्थान पर त्रामें प्रेरणार्थक प्रत्यय का सद्भाव होकर मूत- इत्वीय-त्र्यक प्रत्यय का सांप होने से उस प्रेरणार्थक प्रत्यय का लोग होने के कारण स 'त्रा की प्राप्ति, १ १५६ से प्राप्त विकरण प्रत्यय 'स्व' की प्राप्ति, ३ १५६ से प्राप्त विकरण प्रत्यय 'स्व' क स्थान पर त्रामों भूत-इत्त्वीय प्रत्यय का योग होने के कारण से 'द्' की प्राप्ति, १ ४४६ से मास्त्रत में प्राप्ति पर त्राप्ति प्रत्यय का योग होने के कारण से 'द' की प्राप्ति, १ ४४६ से मास्त्रत में प्राप्तिय प्रत्यय की प्राप्ति १-१०० से भूत- कृत्त्वीय प्रत्यय को प्राप्ति १-१०० से भूत- कृत्त्वीय प्रत्यय को प्राप्ति १-१०० से भूत- कृत्त्वीय प्रत्यय को प्राप्ति के एक स्वयन सम्बन्धि प्रत्यय को प्राप्ति के स्वयन माकृत में 'म्' प्रत्यय को प्राप्ति स्वीर १ २३ से प्राप्त प्रयय 'ग्र' के स्थान प्राप्ति हो कर प्रेरणार्थक प्रदिश हव मिद्ध हो जाता है।

गय रूप की सिद्धि सूत्र-सख्या ?-९७ में की गई है।

नतम् साष्ट्रत का भूत फुन्न्तीय स्त्र है। इमका प्राकृत रूप न्यये होता है। इसक स्वरूप १-१७० में हलान व्यक्षन (तृ का लाव, ११म-१में लोव हुए तृ व्यक्षन क वश्यान रहे रहे हुर ६ रथान पर 'य' की प्रान्ति, १-४ से प्रान्ताम स्य में हितीया विभोक्त के प्रविधन में में में प्रत्यय की प्रान्ति कीर १२३ में वाष्ट्र इस्प्रम प्राय्य कम् क स्थान पर प्राप्ट्रत में 'म्' प्रत्यय की प्रान्ति कीर १२३ में वाष्ट्र इस्प्रम पूर्व वण य' पर क्षतुस्वार का प्रान्ति होकर नय स्त्व मिद्ध हो जाता है।

घ्णातम माष्ट्रत मृत-दुरन्ताय रूप है। इसका भाष्ट्रत रूप मार्च होता है। इसने स्वर्धन १६ स मृत सक्ष्ट्रत घातु 'ध्यें' के त्यान पर शक्ष्ट्रत म 'मां' रूप को झाहेत प्राप्ति, ६ १८६ म वृष्ट स्वर्धाय ध्ये में माष्ट्रत क समान ही प्राष्ट्रत में मी 'त', प्रत्यय ही प्राप्ति, १ १८५६ म पान मृत्यू व्याप्त विचे में से हतन्त व्याप्त ते' को लोग, १ १८० स लोग हुए 'त' व्याप्ता क वर्षात रेए रहि है के स्थान पर 'य की प्राप्ति, ३ । से प्राप्ती मार्गि हैतिया विभक्ति के प्रवचन में सेसावव्याप्ति विचेष्ट व्याप्ति हैं। विचेष्ट व्याप्ति हैं। से प्राप्ति हैं। विचेष्ट के स्थान पर प्राप्ति हो हर सूत् द्वरन्तीय हिर्निया विभक्ति के प्रवचन वा प्राष्ट्रत हम्मार्गित है। वार्वि हैं।

्र लनम्, संस्कृत, भूत-तृश्तीय म्य है। इसका प्राकृत स्व द्वाच होगाई। इसमें स्वन्त ४ २४८ से सम्पूर्ण संस्कृत शहर लने क स्वान पर, प्राप्तत में तुत्र श्री स्वन्दं आहेश प्राप्ति, ११ वें आहेश स्व से प्राप्ताय 'लु क्ष' में द्वितीया विमक्ति के एक्ष्यचन म संस्कृतिय प्राप्तव प्रस्व क्ष्में स्थान पर प्राप्तुन में में प्रस्वय की प्राप्ति और १-२३ से प्राप्त प्रस्वय 'स्व रागान पर पूर्व का 'क्षे अनुस्वार की प्राप्ति होकर भूत कृदस्तीय हिनोया-विमक्ति क एक्ष्यचन का प्राप्तुन-स्व सुर्ग विमा जाता है।

- (- 1

ं असम मंदर्त का भूत-कृत्तीय संव है । इसका नावृत सव हुई होता है। इसके स्वान्त १९६४ में भूत-कृत्तीय प्रत्यव का मद्भाव हो । क कारण के मूल संस्कृत चातु 'मू' के बात वादन अर्थ में भूत-कृत के भूत संस्कृत चातु 'मू' के बात वादन में 'ह' स्व की मानित ही प्राकृत में भी 'ल' क्षी की मानित, १-१७५ में प्रान्त प्रदेश में मूत बहुत में सी मानित के बहुत में भी प्रान्तित है की मानित है । स्व के किया विभाग के किया के प्रदेश में प्राप्त के स्व के

ष्ट्यः प्रत्या-तुम्-तव्य-भिष्यत्मु ,॥३-१५७॥

क्या तुम तन्येषु मनिष्य कालविद्विते च प्रत्यये वस्तीत वदारश्रकाराहिकारम माहि

ा । 'हमेळण ।' हमिऊण ॥ तुम् । हसेउ । हसिउ ॥ तन्य । हसेयन्त्रं । हसियन्त्रं ॥ मनिष्पत् । तेहिइ । हमिहिइ मि खेते हत्येन नेकाळण ॥

अथं — प्राकृत भाषा की अकारान्त धातुओं में मन्य-बक भूतकृरन्त चौतक मस्कृतीय प्राप्तध्य 'प्रवा होने पर अथवा हित्वर्थक-करन्त ग्रीतक सस्कृतीय प्राप्तक ये त्रिय 'प्रवा 'प्रवा 'प्रवा 'प्रवा 'प्रवा होने पर अथवा विधि-कृरन्त ग्रीतक संकृताय प्राप्त प्रवा होने पर अथवा भविष्यत नालं बीधक हुन्त व स्था है प्रवा होने 'प्रवा होने 'प्रवा स्था होत प्रवा 'प्रवा से हित प्रवा होने 'प्रवा होने प्रवा स्था होत जाया करती है । प्रवा क्षेत्र के स्थान पर 'प्रवा होने 'प्रवा स्था होत के कारण से कभी कभी वर्न अकारान्त ग्रीत्र होते हैं जि म्याप्त प्रवा होते हैं । मन्यन्यक भूत कुरन्त ग्रीत होती है । मन्यन्यक भूत कुरन्त ग्रीतक संस्कृतीय प्राप्तक प्रवा प्रवा करती है । मन्यन्यक भूत कुरन्त ग्रीतक संस्कृतीय प्राप्तक प्रव प्रवा हिस्स प्रवा हिस्स प्रवा हिस्स होते ज स्था हिस्स होते प्रवा हिस्स होते प्रवा हिस्स होते ज स्था हिस्स होते प्रवा हिस्स होते व स्था हिस्स होते ज स्था हिस्स होते हिस

ें 'प्रेश्व' — घ्र हारान्त घांतुओं के संस्वंत्र में ही ऐना विधान क्यों बनाया गया है ? ख्रंत्य स्तरान्त गतुर्थों के सम्बन्ध में ऐसे विवान की पानि क्यों नहीं होती है !

उत्तर — पूँकि चान्य स्वर का के स्थान पर ही 'ण', अथया 'इ' की आरेश प्राप्ति पाई जाती है और घन्य कि ही मां चार कर के हवान पर 'ण अथवा 'इ' की चारेश प्राप्ति नहीं पाई नाठा है, इन किय के उत्त करन्य 'ख के लिये ही पेंग विभान निर्धित किया गया है। जैसे — इन्या = का कम = कन्क, कर्म, स्व वशाहरण में सम्बन्धक मून कुरन्त न्योतक परयय 'क्रण' का मद्भाव होने पर मा थानु आकारान्त होने म इस धातु के च्यर्त्वक कर 'च्या के स्थान पर किमी भी प्रकार के अन्य स्वर की 'चारेश प्राप्ति निर्देश के प्रस्त प्राप्ति के स्थान पर किमी भी प्रकार के अन्य स्वर की 'चारेश प्राप्ति के हिंदे हैं, इस प्रकार यह भिद्धान्ति निर्देश हुआ कि कवल चकारान्त धातु में के चन्त्याय 'ख' के स्थान पर ही 'वस्त्रा', तुम तक्व व्यर्थ प्राप्ति के स्थान पर अपरोक्त प्रत्यों के पर रहने पर 'प' चयवा 'इ का 'चारेश प्राप्ति होती है, अन्य खन्त्याय स्वरों के स्थान पर अपरोक्त प्रत्यों के पर रहने पर भी किमी मा प्रस्य स्वर की चारेश प्राप्ति नहीं होती है। "

हसित्य। मस्टत् भून हुन्त का रूप है। इसक प्राक्तन रूप हसेक्रण बीर हिनक्रण हात हैं। इनम वृत्रे सहया ३ १४० में मूल प्राकृत घातुं 'हम' म स्थित जान्त्य स्वर 'खे' के स्थान पर कर्ने से 'फ' बीर 'इ श्राप्ति; ३-१४६ से सबन्य मृत छदन्त धर्यक मानव्य संस्कृतीय प्रस्यय 'क्न्या मता' प्रमुद्द सदः प्राफ्त में 'तृत्य' प्रस्यय की प्राप्ति चीर ११७० से भाकृत में प्राफ्त प्रस्यय की प्राप्ति चीर ११७० से भाकृत में प्राफ्त प्रस्यय की प्राप्ति होकर कम स दोनों प्राफ्त रूप हुसेड्य भीर है कि सिद हो जाते हैं।

हासितुस मस्त्रत का हैत्वर्थक-करन्त का रूप है। इनके प्राक्तन रूप हमें सीर स्वितंतारे इनमें मून संख्या रे १४७ से मूल प्राकृत घातु 'हम' म स्वित अन्त्य स्वर 'अ' क स्वान वर कर की रहें, की प्राप्ति, अ-४४८ से हेत्वर्थ करन्त के अपने में मान्त्रन म प्राप्तिय परवय (तुर्य क रुपान को होति में में तुन्य प्राप्ति प्राप्ति होते हैं हैं परवय तुन्य तुन्य की प्राप्ति होते के प्राप्ति होते हैं हैं परवय कृत 'वन्य में स्थित अन्य हमन्त्र में हे हैं परवय कृत 'वन्य में स्थित अन्य हमन्त्र में हे हैं परव्य क्ष्य 'व' पर अनुस्वार की प्राप्ति होते हैं से दाना प्राकृत रूप हमेरी भीर हिति हिन्स जाते हैं।

हासितव्यम् संश्वत का विधि जत्नत का रूप है। इसके प्राह्णन रूप हसे वार्व थी। दिन होते हैं। इसमे मूत्र-मंन्या दे-१४७ से मूल प्राह्णन धातु 'हम' में स्वित का स्व स्व स्व 'का का स्वास्त हो से 'क' खीर 'दे' की प्राप्ति, ४४८० से विधि-छत्नत के बार्य में संस्कृत में प्राप्त प्राप्त के समान हो प्राष्ट्रत में भी 'तह्य' प्रस्य की प्राप्ति; १-१७० से प्राप्त प्रस्य 'तह्य' में सिन ने 'हत्ते सा लोप; २-२४ से प्राप्तीय 'हसे सम्ब चीर हिस क्वत' में प्रयमा विभक्ति के प्रहवपन में मूल प्राप्त प्रयय 'मि' के स्यान पर प्राकृत म 'मू' प्रायय की प्राप्ति चीर १ २३ स प्राप्त प्रयप 'प्रस्त पर पूर्व वया 'क्व' पर खतुरवार की प्राप्ति होकर हम से दोनों प्राप्तृत रूप हस स्व सी। बांध्य

हासिष्यारी मश्द्रत का चकमैंन रूप हैं। इसके त्राकृत रूप हमिंदर कीर हमिंदर होने हैं। इ पृत्र-मध्या ३ १४७ से मूल प्राकृत घातु 'इस' में स्थित कार्य स्वर 'क्य' के स्थान वर जाते में क्ष्मत्र योधक प्रस्थय का सद्भाय होत के कारण में कान 'य बीर इ' की प्रातित ३-१६६ स कार में प्राप्ति बीर हिंस' में मिथप्पन काल-क्षमं क रूप के निर्माल का लिय 'वि' प्रस्थय की प्राप्ति कीर ३ १६६ प्राप्ति की स्वर्णन काल क्षमें कर पर्य प्राप्ति कीर होते हैं। माध्यत पुरुष के प्रस्थव वे प्राप्ति की प्राप्ति होकर मिथप्यनकाल का प्राष्ट्रत रूप हमें हिड़ कीर होतिहरू निज्ञ हो जाने हैं।

काऊण' बृहस्त रूप की मिद्धि सूत्र-मग्या १-३७ में की गई है। १ ११०॥

वर्तमाना-पञ्चमी-शतृषु वा ॥ १-**१**५=॥

वर्षेमाना पत्रमी शृत्यु परत सकारस्य स्थाने एकारी या गर्राठ ॥ वर्तमाना । इन

सह । इसेम इसिम । इसेम्र इसिम्र ॥ पञ्चमी । इसेउ इसउ । सुणेउ गुणउ ॥ शतृ । इसेन्तो ।सन्तो ॥ फचिक भगति । जयइ ॥ कचिदारगमि । सुणाउ ॥

अर्थ - प्राकृत भाषा को व्यकारान्त घातुओं में वर्तमानकाल के पुरुष बोधक-प्रस्थयों का सद-भाव होने पर अथवा अथवा आज्ञार्थक या विधि अर्थक लकारों के प्रत्ययों का सदुभाव होने पर अथवा शह बोधक यान वर्तमान छुद्दन्त बोतक-प्रत्ययों का सदुभाव होने पर उन श्रकारान्त धातुश्रा में स्थित श्चत्य स्वर श्र' क स्थान पर यैक्वियक रूप से ए' की प्राप्ति हुत्रा करतो है। वर्तमानकाल से सम्बन्धित उदाहरण इन प्रकार है —हसति=हसेइ ऋथवा हनइ = वह हँसता है। हसाम ≔हसेम ऋथवा हसिम श्रीर हसमु श्रथवा हिसमू=हम हमते हैं। इन उदाहरणों में यह बनलाया गया है कि 'हम' घात श्रकारान्त है श्रीर इसमे वर्तमान-काल द्योतक प्रस्यय 'इ' ख्रीर 'म' की प्राप्ति होने पर इस 'हस' धातु के अन्त्यस्य 'ख्र' के स्थान पर वैक्लिफ रूप से 'ए' की प्राप्ति हुई है। इसी प्रकार से आज्ञार्थक और विधि खर्थक लकारो क उनाहरण भी इस प्रकार हें --इसतु=हमेउ अथवा इसत=वह हैंसे, अणीतु (शणीतु)=सुणेउ अथवा सुणउ=नह सुने, इन त्याज्ञाथक बोधक उनाहरणों से भी यही प्रतीत होता है कि स्वकारान्त धातु 'हस श्रीर सुए (म स्थित अन्त्य 'श्र'क स्थान पर श्रागे श्राज्ञार्थक प्रत्ययका सट्माव होने के कारए। से र्षैकल्पिक रूप से 'ए' की प्राप्ति हुई हैं। वतमान-कृदन्त के उदाहरण यों हैं —हसत श्रथवा हसन् = हमेन्तो हसन्तो=हँमना हुआ, इम वर्तमान कुर्न्त-द्योतक उदाहरण में भी यही प्रदर्शित किया गया है कि प्राष्ट्रन चातु हत्त' क चन्त्यस्य 'म्म' क स्थान पर आगे वर्तमान-कृदन्त चोतक प्रत्यय 'न्त' का मदुभाव होने क कारण से वैकल्पिक रूप से 'ए' को प्राप्ति हुई है। इस प्रकार इस सूत्र में गृह विधान निश्चित किया गया है कि वर्त्तमानकाल क, छाझाथ विध्यर्थक लकार के छौर वर्तमानकाल छुदन्त के प्रत्यय परे रहने पर अकारान्त घातुओं के अन्त्यस्य 'अ' के स्थान पर वैत्र लिप क रूप से 'ए' की प्राप्ति होती है।

षमा क्यो ऐसा मा देखा जाता है कि खकारान्त बातु के खत्यस्य 'ब' के स्थान पर उपरोक्त भरवर्ष का मद्भाव होने पर भी 'v' की प्राप्ति नहीं होती हैं। जैसे —नयति=जयह=यह जीतता है। यहाँ पर प्राक्तत म 'जयेह' रूप नहीं बनेगा। कभी कमी खकारान्त बातु के खरव्यस्य 'ख' के स्थान पर उपरोक्त भव्यों का सद्भाव होने पर 'खा' का प्राप्ति भी देखी जाती हैं। जैसे —धूणोतु=मुगाउ= नह श्रवण करें। इप बदाहरण में खकारान्त प्राष्ट्रत धातु 'सुख' म स्थित खम्त्य 'ख' के स्थान पर खागे खाहार्थक्र-सठार क प्राव्य का सदसाब होकर 'खा' की प्राप्ति हो गई हैं।

हसाति मश्कृत का अवर्गक रूप है। इसके प्राष्ट्रन रूप हमेड और हमइ होते है। इनमें में भयम रूप में सूत्र मन्या ११५८ से मूल प्राकृत अवशान्त थातु 'हम' में स्थित अस्य 'ख' के स्थान पर पैकिन्यर रूप से 'ए' की प्राप्ति और ११६ से वर्तमाकाल के प्रथम पुरुप के एकवचन में मंस्कृतीय भागम्य प्रयुप 'ति' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' प्रस्थय का प्राप्ति होवर प्रथम रूप हुन्हें मिद्ध हो बाता है।

हिनीय रूप हसह की सिद्धि सूत्र मह्मा २१९८ में की गई है।

हसाम माठत का अवर्मक रूप है। इसके अपूत रूप हमेग, हमिम, हमेमु और मेनु स ि। इतम से प्रथम श्रीर तृताय रूपों में सूत्र मदया ३ १४० से मूल प्रावृत श्रवाराग्त पातु (४८ ३५० करत्य क्य' में स्थान पर वें किपक रूप म 'ए' को प्राप्ति और ३ १४४ से हम से प्राप्ति 'हर है हस' में बतमानवाल के रहतीय पुरुष के बहुबचनाथ म साकृतीय प्रावस्य प्रत्यय 'मन्' ह धाप ह प्राप्त म म से म चौर मुं प्रत्ययों की प्राप्ति होक्र प्रथम चौर हतीय रूप हतेन चौर हेरें सिद्ध है। जाते हैं।

हिमा तथा हिमा में मूत्र मख्या रे १४४ से मूल प्राकृत आकारान्त धातु 'हम' में लिए 🕶 था' य स्थान पर पेंटु हिपक रूप म 'इ' की प्राप्ति चौर ३ १४४ स जम से प्राप्तांग 'हिन् चौर हिन वर्तमानवाल क तुर्तीय पुरुष क बहुबचनार्थ में सरक्तीय प्राप्तस्य प्रयय 'मस्' के स्थान बर म रू' हम से 'म चौर मु' प्रययों की शन्ति होकर द्वितीय चौर चतुर्थ रूप'हासिम श्रीर हाति !' निर जाते हैं ।

एसत् संगृत का चाहार्थन रूप है। इसके प्राष्ट्रत हर हसेट चीर हमन होते हैं। सर न संख्या ३ रेथन से मृत प्राकृत व्यकारान्त घातु 'हम' म स्थित बास्य 'व्य' के स्थान पर वैद्देशिक कर 'ए' की प्राप्ति और ३ १७३ में उम स प्राप्तांग 'हते और हम' म आज्ञार्थक लहारार्थ में रूपा पूर" ष्णवचन से मन्फृत से प्राप्तस्य प्रस्यय 'तु' के स्थान पर प्राकृत सें 'दु≔इ' प्रत्यय की धा^{र्}ति हो इस धर होनी प्रायन नव 'हसेज और इसज' निद्ध हो नाते हैं।

थूणोतु संस्कृत वा आधार्थक रूप है। अथवा ऋगुयात मंख्वत का विधितिक का। (प्रशे श्वाहा जिस-प्रण श्राहन्त्रण सस्त्रार पूर्वक नियन्त विचार श्रीर वार्यना सर्वक) रूप है। इसह ह स्त्व सुरोत्र चीर सुगत्र तथा सुगात्र हात हैं। इत्तमे गूत्र संस्था २-७६ से मारून में भारत भात्र घी 🎏 में स्थित 'श्रु' के 'र' स्थलन का लीव, १-२६० में लीव हुए 'र' स्यलन के प्रश्नोन शेष रहे हुए छ नि तारुप 'श् के स्थान पर प्राकृत से राख 'म्' की प्राप्ति, स्टब्द से 'त' के स्थान पर 'ए की प्रा ४ २३६ में प्राप्त सु' में स्थित कास्य 'ड' व स्थान पर 'ख' वी प्राप्ति, व १४८ में प्राप्ति। 'हीं विवत्त व्यन्त्य 'वा' क स्थान पर कर में एवं मैकहिनक रूप में 'ए' और 'वा' को आलि, बीर ! 'न में कम में प्राप्तीं। 'मृण, सुंग और मुणा' में लाट लंबार और विधिनिव के क्या में है बाद्व में उ प्रस्य की शालि होकर मुण्ड मुण्ड श्रीर मुणाउ प्राप्त रूप निद्ध हो जाने हैं।

हमा = श्रमम् मंस्कृत का कृत्त्व रूप है। इसके प्राष्ट्रक रूप हमेन्सी सीर हमर्गी होते हैं। हर - में गूब बाबून बाबागाना पातु हम' र्त स्वित कारव 'का है स्वाम पर बारी वर्तन । महमाप क्षते के कारण में मैकल्पिक रूप में 'Q' भी बालित 'दे 'बा में अर ' राहृत में प्रभ्याग 'इसे और इस' में वर्तमान छ्यन्त के अर्थ में संस्कृत में प्राप्तथ्य प्रयय 'यार्' के स्थान र 'न्त' प्रयय की प्राप्ति और ३२ से प्राकृत में क्रम से प्राप्ताग 'इसेन्त और इसन्त' में प्रयमा विभक्ति एकवचन म अकारान्त पुल्लिंग में संस्कृतीय प्राप्तय्य प्रयय 'सि' के स्थान पर प्राकृत में 'डो = ओ' त्यय की प्राप्ति होकर क्रम से दोनों प्राकृत-पद हसेन्तो और हत्तन्ती सिद्ध हो जाते हैं।

जयाति संस्कृत का द्यकर्मक रूप है। इसका प्राकृत रूप जयह होता है। इसमें सूत्र सख्या-३ १३६ । संस्कृत के समान ही प्राकृत में भी प्रान्त घातु 'जय' में वर्तमानकाल के प्रथम पुरूप के एकवचन में संस्कृतिय प्राप्तस्य प्रथय 'ति' के स्थान पर प्राकृत में 'इ' प्रथय की प्राप्ति होकर जयह रूप सिद्ध हो ताता है। ३-१५ता

ज्जा-ज्जे ॥३-१५६॥

जना ज्ज इत्यादेशयोः परयोरकारस्य एकारो भगति ॥ हसेज्जा । हसेज्ज ॥ श्रव त्येन । होज्जा । होज्ज ॥

ं अर्थं — सूत्र सरया ३-१०० के निर्देश से धातुर्थों के धन्त में प्रान्त होने वाले वर्तमानकाल के, भिरप्तत काल के, खाहार्थक के खौर विष्यर्थक के समी प्रकार के प्रत्यों के स्थान पर खादेश रूप में प्राप्त होने वाले प्रत्यथं 'का खौर का के परे रहने पर खकारान्त घातुर्थों के ध्यान पर खादेश रूप में स्थान रर नित्यमेव 'ए' को प्राप्ति होतो है जैसे — हमन्ति-हिम्प्यन्ति-हमन्तु-हसेयु = हसें बा ध्यथा हमें उप दे हैं से हैं से हैं से हमें वर्तमान खादें पर 'हस' धातु खकारान्त है और इसमें वर्तमान खादि कारों में प्राप्तक्य प्राप्त कर्यान पर खादेश प्राप्त परव्य 'क्यान्त पर किसमें बर्त से 'हस' के प्रत्यक्ष 'खान्त पर कारों विना किमो वैकित्यक स्व मे प्राप्ति होते से 'हस' के प्रत्यक्ष 'खान्त पर के स्थान पर 'वर्त कारों के स्थान पर 'वर्त के स्थान पर खान कारों के स्थान पर किसमें 'एकार' की प्राप्ति का विचान प्यान में रक्षना चाहिये।

परन - 'श्रकारान्त घातुश्रों' के लिये ही ऐसा विधान क्यों बनाया गया है ?

उत्तर — जो प्राकृत घातु ब्रह्मरान्त नहीं होकर बन्य स्वरान्त हैं उनम ब्राह्मराम 'जा
का' प्रत्ययों का सद्भाव होने पर भी उन ब्रन्स स्वरों के स्थान पर बन्य किसी भी स्वर की ब्राह्मरा

प्राप्ति नहीं वाई आती है, इनलिये केवल ब्रह्मरान्त घातुओं के लिय ही ऐना ब्रियान बनाने की

प्रावस्यक्ता पही है। जैसे — भवन्ति भविष्यन्ति-भवन्तु मयेषु = होक्ना ब्रम्या हाज्य-वे होते हैं-वे

होन-ये होयें, इम बहाहरण में हो' धातु क्षोकारान्त हैं, इसी लिये कादेशन्त्राम प्रत्यय 'ब्रान्जन' का

क्ष्माव होने पर भी क्षकारान्त धातुओं क अन्त्यस्य 'ब्र' के स्थान पर 'प' की प्राप्ति के समान इम 'रा'

पातु के ब्राह्मराव 'ब्रोकार' के स्थान पर 'प्रकार' की प्राप्ति नहीं हुई है। यही ब्रन्टर्-भेद यह प्रदर्शिन

द्वितीय रूप हसाइ की सिद्धि सूत्र सख्या ? १९८ में की गई है।

हसाम सम्हत का अवर्षक रूप है। इसक भाष्ट्रत रूप हमेग, हिनम, हसमु चौर होन्द्र हो । इसमे से प्रथम और त्वाय रूपों में सूत्र मख्या रे १४८ से मूल प्राकृत खकारान्त वातु 'स' मार अन्य अ' के स्थान पर वैकित्यक रूप स ए' को प्रास्ति और रे १४४ से क्षम स प्राजीन 'से ई हस' में वतमानकाल के स्वीय पुरुष के बहुवचनाथ में संस्कृतीय प्रास्तव्य प्रस्य 'मस्' क चान र प्राप्त म म से 'म और सु' प्रस्वयों की प्राप्ति हो र प्रथम और सुतीय हव 'हतेन चौर सु

हसिम तथा हसिमु मे सूत्र सख्या ३-१४४ से मूल प्राकृत श्रकारान्त वातु 'हा' में विव न्य 'श्र' के स्थान पर वृद्दाल्पक रूप से 'इ' की प्राप्ति श्रीर ३ १४४ स कम से प्राप्ताग 'हिस श्रीर ६५ व वर्तमानकाल प तृतीय पुरुष च बहुवचनार्थ में संस्कृतीय प्राप्तत्वय प्रस्य 'कस्यान पर प्रकृत ' क्रम से 'म श्रीर मु' प्रययों की श्राप्ति होकर हितीय श्रीर चतुर्य रूप'हासम श्रीर हिति हैं । जाते हैं।

हसतु सस्वृत का खाझार्थक रूप है। इसके प्राकृत रूप हसेड खीर हमउ हावे हैं। इतने एं सदया ३ १४८ से मूल प्राकृत खनारान्त घातु 'हस' में स्थित खनरय 'ख' के स्थान पर बैकलिक हा है 'ए' की प्राप्ति खीर ३-१७३ से कम स प्राप्तांग 'हमें खीर हस' म खाझार्थक लकारार्थ में हुर्नीष प्रमुव एक्वचन में मस्कृत में प्राप्तव्य मत्यय तु' के स्थान पर प्राकृत में 'तु=3' प्रत्यय की प्राप्ति होका हम है दोनों प्राकृत कप 'हस्तेड खीर हसत्व' मिद्ध हो जाते हैं।

हरान = दमन् मंस्कृत का कृदन्त रूप है। इसके प्राष्ट्रन रूप हसेन्तो और हसन्ता होते हैं। इन्हें सुत्र मंग्या ३ १५६ में मूल प्राकृत व्यवारान्त चातु 'हम' में स्थित व्यन्त्य 'श्र' के स्थान पर श्रामे वर्जनन कृदन्त कर्यक प्रस्थय का सद्माय होने के कारण से यैकलिपक रूप में 'ए की शांकि, ३ १८१ से क्रम में ।।इन म प्राप्ताग 'हमे और हस' में वर्तमान छुदन्त के अर्थ में संस्कृत में प्राप्तब्य प्रस्यय 'शर्र' के स्थान 'न्त' प्रत्यय की प्राप्ति और ३ २ से प्राफत में हम से प्राप्ताग 'हसेन्त और हसन्त' में प्रथमा विभक्ति एकवचन म धकारान्त पुल्लिंग में सन्कृतीय प्राप्तव्य प्रन्यय 'सि' के स्थान पर प्राफ्त में 'डो = श्री' यय की प्राप्ति होकर क्रम से दोनों प्राकृत-पट हसेन्त्री और ट्सन्ती सिद्ध हो जाते हैं।

जयाति संस्कृत का श्रकर्मक रूप है। इसका प्राकृत रूप जयह होता है। इसमें सूत्र सख्या ३ १३६ संस्कृत के समान ही प्राकृत में भी प्राप्त धात 'जय' में वर्तमानकाल के प्रयम पुरूप के एकवचन में सितीय प्राप्तस्य प्रयय 'ति' के स्थान पर प्राक्त में 'ड' प्रयय की प्राप्ति ही कर जयह रूप सिद्ध ही ाता है। ३-१४=॥

ज्जा-ज्जे ॥३-१५६॥

ज्जा ज्ज इत्यादेशयी: परयोरकारस्य एकारो भवति ॥ इसेज्जा । इसेज्जा ॥ श्रत प्र । होज्जा । होज्ज ॥

अर्थ - मूत्र सख्या ३-१७७ के निर्देश से घातुओं के अन्त में प्राप्त होने वाले वर्तमानकाल के, विष्यत् काल के, श्राह्मार्थक के श्रीर विष्यर्थक के समी प्रकार के प्रत्ययों के स्थान पर आदेश रूप से ¹⁵त होने वाले प्रत्यय 'जा और ल' के परे रहने पर अकारान्त घातुर्आ के अस्यस्य 'श्र' के स्थान र नि'यमेव ए' को प्रान्ति होतो है । जैसे - हमन्ति-हसिप्यन्ति-हसन्त-हसेय = हसेजा अथवा हसेज्न= ं हैंपते हैं-वे हेंसेगे-ते हेंसे, इत्यादि । यहाँ पर 'हस' धातु श्रकारान्त है और इसमें वर्तमान श्रादि कारों में प्राप्तब्य प्रावृत प्रत्ययों के स्थान पर आदेश प्राप्त प्रत्यय 'ज्ञा-वन' की शापि होने से 'हम' के ^{[त्रवाध} 'श्रकार' के स्थान पर 'एकार की बिना किमी वैकल्पिक रूप में प्राप्ति हो गई है। यों स्वादेश ा। 'जा जा' प्रत्ययों का सद्भाव होने पर अन्य अकारान्त घातुओं में भी अन्त्य 'अ' के स्थान पर नेत्यमेष 'एकार' की माप्ति का विधान भ्यान में रवखना चाहिये।

परन - 'श्रकारान्त धातुश्रीं' के लिये ही ऐसा विधान क्यों बनाया गया है ?

उत्तर —जो प्राकृत धातु श्रद्धारान्त नहीं हो कर श्रन्य स्वरान्त हैं उनमें श्रादेश प्राप्त 'त्रा त्र' पत्ययों का सद्भाव होने पर भी उन अन्त्य स्वरों के स्थान पर अन्य किसी भी स्वर की आदेश । कि नहीं पाई आती है, इसलिये केवल अकारान्त धातुओं क लिय ही ऐपा विधान मनाने या माधरवक्ता पड़ी है। जैसे -- मवन्ति मविष्यन्ति भवन्तु-मवेयु = होन्ता अथवा हाउत=वे होते हैं-वे होंगे-प होचें, इस चदाहरण में हो' धातु श्रोकारान्त हें, इसी लिये आदेश-त्राप्त मचय 'त्रा-जन' का ^{नदुमाव} होने पर मी अकारान्त धातुद्यों के अन्त्यस्य 'झ' के स्थान पर 'ए' की प्राप्ति के समान इम 'रा' भागु के चन्त्यस्य 'खोकार' के स्थान पर 'यकार' की शाप्ति नहीं हुई है। यही अन्तर्-मेद यह प्रदर्शित

में प्राप्तस्य प्रस्य 'इ' के स्थान पर 'जा' प्रस्यय की आदेश प्राप्ति होकर लहें और लहजड़ है, प्रो हो जाते हैं।

'तेण' सर्वनाम रूप की मिद्धि सुत्र सरया ह-हर में की गई है।

आस्यते सम्द्रत का अस्मक रूप है। इपके प्राकृत रूप श्रष्टेज श्रान्त्रजेज श्रीर धना होते हैं। इनम सूत्र सम्या ४२१४ से मूल संस्कृत धातु 'ब्रास्' में स्थिन व्रमला ब्यायन स र एप 'छ' की श्रादरा प्राप्ति, २ ८६ से श्रावेश प्राप्त व्यञ्जन 'ख को द्वित्व 'छ्छ की बीप्राप्ति, २ १८ मह प्राप्त 'छछ' में से प्रथम 'छ' के स्थान पर 'च' की प्राप्ति, १८४ से मूल धातु 'धाग' में स्थित पार्स स्तर 'आ' के स्थान पर आगे 'स' के स्थान पर चपरोक्त रीति से सबक व्यञ्जन च्छ' वी प्राप्ति। से द्वस्य स्वर 'क्ष' की प्राप्ति हो कर प्राकृत में घातु रूप 'अच्छ' की प्राप्ति, वी १० की पृत्त ए प्राकृत चातु 'श्रच्छ' में भाव-प्रयोग-प्रथे में संस्कृतीय प्राप्तच्य प्रत्यय 'य' के स्थान वर प्राप्तन में बेटा रूप से 'इल और ईख' प्रथयों का कम से प्राप्ति हो कर भावे प्रशोग अर्थर खग 'बच्च रांध अच्छीअ की प्राप्ति, ४-२३६ से अथम कव 'अच्छ' में विकरण प्रत्यय 'अ' नी प्राप्ति, रे ११६ स प्रथम रूप अन्छ' और द्वितीय रूप 'खच्छिज्ज' में श्यित 'प्रत्य स्वर' ख' के स्थान पर आग प्र र की प्राप्ति होने से 'ब' की निरविषेत्र प्राप्ति, ३-१७७ से प्रयम श्रीर द्विनीय भावे प्रवेग प्रवेह पर क्यर्थात् 'शच्छे स्त्रीर व्यक्तिज्ञे' में वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष क एकवचन के सर्थ में साह^{शी हा} प्रत्यय 'ते' के स्थान पर प्राकृत में प्राप्तव्य प्रत्यय 'इ' के स्थान पर 'ज प्रस्वय की धादेश प्र'न । 'अच्छेच तथा अन्छिज्जीज्ज' रूप मिद्र हो जाते हैं, जबकि सुतीय रूप में, भाष प्रयाग रूप 'ज़रुद्रीक्ष' म वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के एकत्रचन में संस्कृतीय प्रास्तव्य प्रत्यय ते' काका प्राकृत में इ' प्रायय की कादेश प्राप्ति होकर 'अच्छीअङ कप भी सिद्ध हो जाता है। ॥३-१६०॥

हिंग्-वचेडींस-डुच्चं ॥३-१६१॥

दशेर्रचेश परस्य क्यस्य स्थाने यथामर्य डीम डुच इत्यादेशी मनतः॥ रि पवादः॥ दीवः। बुग्दः॥

अर्थ — हरा बीर बच् चातु का जब प्राह्त में क्मींण माबे प्रवाग वा तव प्रताता हो र चातुओं क प्राह्त रूपान्तर में क्मींण माबे प्रवाग अर्थक माहतीय प्रावक प्रप्य 'य के श्वात वर में सूक्रमाट्या र १६० व अतुनार प्राप्तक्य प्रन्य 'ईख , बीर इन्ज की प्रतिन नहीं होगे हैं कि क्मींण माबे प्रयोग चर्यक प्रयथ 'ईख और इन्ज' के श्वात वर कम म हमें चातु में से 'हैं,व नव प्राप्ति होती है और 'वच् चातु में 'हुछ प्रन्यप की प्राप्ति होती है, इन प्रकार स इन दोने 'ये' क्मींण माबे प्रयोग अथ में मूज न्योगी का निर्माण होना है। प्राप्त प्रत्ये की बीर नुच में क्यिं हकार' इन्में कर होने से पूर्वे कि चाहु 'हस्' में स्थित अन्य 'स्र्' का और न्'वम् में स्थित क्ष हा लोप हो जाता है। तत्पश्चात प्राकृत मापा के अन्य नियमो के अनुसार शेप रहे हुए धातु अश 'ट' श्रीर 'व' में कर्मणि भारे प्रयोग श्रर्थ क प्राप्त प्रस्थय ईस' तथा 'उच्च' की प्राप्ति हो कर इच्ट काल सवधित पुरुष बोधफ प्रत्यवों की सप्राप्ति हानी है। इस न्यिम को व्यर्थात मूत्र सख्या ३ १६१ को पूर्वीक सूत्र-सदया ३ १६० का श्रवदार ही समक्तना चाहिये। तदनुमार इस सूत्र म वर्णिन विधान पूर्वीक्त कमिण भावे भयोग श्चर्यक प्रत्यय 'ईश्च छीर इक्त' क लिये श्वपत्राद स्वरूप ही ई, ऐमा प्रन्थवार का सन्तव्य है। उप-रीक धातुओं क कमिण भावे प्रयोग के छर्थ में उदाहरण इस प्रकार हें — दृश्यत=दीसइ = (उसमे) देखा जाता है, उप्यते = बुद्यह = (उमसे) कहा जाता है।

हर्यते-साकृत वा कमाण रूप है। इनवा प्राकृत रूप दोनइ होता है। इसमें सूत्र सख्या ३ १६१ स मूल सस्कृत बातु 'दश में स्थित अन्त्य 'रा' क आग कर्माण प्रशेग अर्थक अत्यय 'डीम का मग्रान्ति होन से तथा प्राप्त प्रत्यय डीस' में स्थित श्रादि 'डकार' इत्सुजक हान स लोप, १-१० से रोप घातु श्ररा 'ट' में स्थित खारय स्पर 'तर,' का खागे कमिण श्योग खायक प्रत्यय 'ईस' का सप्रान्त हाने से इसम स्थित श्रादि स्पर 'ई' का सद्भाव क्षाने क कारण से लोप, १-५ से शेप हलन्त घातु श्रश 'ट्' के साथ में श्रागे प्राप्त प्रत्यय 'ईस' को सिघ होकर मूल मस्कृतीय कर्मणि प्रायोगिक रूप 'दृश्य' के स्थान पर प्राकृत म क्मीण प्रयोग अर्थक अग दीस' की सप्राध्नि और ३-'३६ से वर्तमान गलं क प्रथम पुरुप के एक्वचन के अर्थ में सस्प्रतीय प्राप्तब्य प्रत्यय 'ते' के स्थान पर प्राष्ट्रत में इ' प्रयय की ब्यादेण प्राप्ति होकर रीसङ् रूप मिद्ध हो जाता है।

जन्यते सरहत । का। अक्रमेक रूप है । इसका प्राकृत रूप बुचह होता है। इसमें सूत्र मनया १६१ से मुल संस्कृत धातु 'वच' में। स्थित ख्रन्त्य च' के आगे भाने प्रयोग अर्थ के प्रत्य दुर्च की गाप्ति होते से तथा प्राप्त प्रस्थय 'जुझ में स्थित आदि 'हकार' इत्सदाक होने से लोप, १-१० से लेप षातु श्ररा 'व' से स्थित श्रन्य स्वर 'ख' के श्राने सावे-प्रयोग श्रथक प्रत्य । "'उन्च' की सप्राप्ति होने स इनमें स्थित आदि स्वर 'व' का सद्भाव होने के बारण स लाप, १ ५ से शेप हल्न्त घातु खन 'व' के साथ म आगे प्राप्त प्रस्यय 'उच्च' की सिंघ होकर मूल संस्कृतीय मावे प्रायोगिक रूप 'उच्य' क स्थान पर प्राकृत में भाने प्रयोग अर्थक व्यग 'बुच की सप्राप्ति और ३१-६,से वर्तमानकाल के प्राम पुरुष के एकपचन के अर्थ में संस्कृतीय प्राप्तव्य प्रत्यय ते' क स्थान पर प्राप्टन म 'इ' प्रयय का आहेश प्राप्ति रीकर युच्चइ रव सिद्ध हो जाता है। ३-१६२ ॥

सी ही ही अभृतार्थस्य ॥ ३-१६२ ॥

भूतेर्षे निहितोद्यतन्यादिः प्रत्ययो भृतार्थः तस्य स्थानं मी ही ही य इत्यादेशा मनन्ति ॥ उत्तरम व्यञ्जनादीश्रविधानात 'स्वरान्तादेवाय विधिः॥ वामी । नाही । काहीश्र । श्रवापीत्। श्वक्तीत् । चक्रार् वेत्वर्थ । एव ठामी । ठाही । ठाहीश्व । श्वापं । देनिन्दी इएमन्पनी इन्यादी सिद्धावस्याश्रयणात् सस्तन्याः प्रयोगः ॥

अर्थ — सारत मापा में मूतकाल के तीन भेद किये गये हैं, जिनके नांम इम प्रशादि[१] सामान्य-भृत, इमका ख्रवर नाम ख्रवतन भूतकाल मा है खौर इससे तुरु व्हारकार [२] हारतन-भूत, इमका ख्रवर नाम ख्रन्चतन भूतकाल मी है खौर इससे वर व्हारकार [२] दरोज-भूत, इमका ख्रवर नाम ख्रन्चतन भूतकाल मी इस प्रकार तीन भूत शांकर साप है । वरोज-भूत, इमको लिट लकार कहते हैं। साख्यत भाषा में इस प्रकार तीन भूत शांकर साप प्रयोग किया जाता पा, एवं ख्राजकल की प्रचलित मस्कृत मापा म बिना भेद के इनका प्रयोग किया जाता है। इस सम्मान हो हिट नियम नहीं माना जाता है। । खाधुनिक समय में लकारों का मूतकाल के खर्ष में दिश किये प्रयोग कर लिया जाना है। इसका सामान्य परिचय इस प्रकार है —

- (?) अवि निरट रूप से व्यवीत हुए काल में व्ययवा गत हुछ दिनों में की गई शिव हैं अथवा उत्पन्न हुई किया के लिये सामान्य भूतकाल का व्ययवा अध्यत-भूतकाल का श्रेणिक जाता है।
- (२) प्रति निस्ट के काल की श्रपेता में कुछ दूर के काल में श्रथमा हुछ वर्ष शिष्ट का विया के लिये श्रयमा उत्पन्न हुई किया के लिये दास्तन भूतकाल का श्रयमा अनयतन-भूतका अर्थेग विया जाता है।
- (३) अत्यन्त दूर क काल मं अयवा अनेकानेक वर्षो पहिले की गई दिया क लिय करने उत्तरन हुई किया क लिये परोदन-भूनकाल का भ्योग किया जाता है। जो किया अपने प्रत्यक्त में हुई। उत्तरन क्षिये परोक्त मूनकाल का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। अन्य मापाओं को गाहाल में ३ में पूर्ण भूत, अपूर्ण भून श्रीर महिएन भूत के नियम और रूप पाये जाते हैं। यैसे रूप और नियम तन मापा में नहीं पाय जाते हैं, इन सभी के स्थान पर सरहत भाषा में एवल या तो सामान्य मून का स्व

हिन्दी-अर्थ

भूतकाल घे।धक प्रत्यय

माञ्चत ऋपान्तर

वित स्वरान्त धातुर्की प्रथम पुरुष—सी. ही, ही,श है लिये तथा एक्वचन हितीय ,, — ,, ,, ,, वि बहुवचन के लिये सतीय ,, — ,, ,, ,,

वृत की पृत्ति में दो उदाहरण इस प्रकार दि**ये** गये हैं —

iι.

सस्टित रूप

सिंद सकार में)

रि *नपापीत* (भ्रादि नष रूप में श्रयवा हमने फासी वीनों पुरुषों में चीर तीनों तृत ध्रथवा तुमने ष्यथवा षचनों मलुङ्लकार में प्रसने श्रथवा व्हानि कादी . ३ अक्सोत (श्रादि तब रूप किया ध्यथवा व्यथवा लड शकार में) पादीभ क्या या ध्यया रै चफार (श्रादि नव हर्ष कर चुके थे। लिट्लकार में) रै सस्थान् (बादि सव में ध्ययवा हम, नू अयया **छारी** रूप वीनों पुरुषों में चौर तुम, बह अधवा ये ठहरे, धयवा दीनों वचनों स लुड लकार से) पा टररे थे श्रववा टहर ठाही ^{ह गतिष्ठत्} (सादि नव रूप पुके थे। श्चयवा लक्ष लकार में) **डा**ही अ रे सस्थी (चादि सत्र रूप

इस प्रकार तीनों लकारों में, इनके तीनों पुरुषों में खीर तीनों बचनों (धयवा होने दरना प्राफत मापा में रूपों की तथा करवया की एक जैसी ही समानता होती है। इन दकार हा रास्त प्राफत मापा में जानना चाहिये।

खार्य-प्राप्टन में हुछ अन्तर कहीं वह विषय जाता है, उमका न्याहरण इन क्यारेन देवेन्द्र प्रय खन्नरीत् = देविन्द्रो इत्याम्टम्प्री-देवरान इन्द्र ऐसा बोला, इम उदाहरण में क्यान क् कालिक कियापद के रूप 'खन्नरीत' के स्थान पर प्राप्टत में 'खन्नरी' रूप प्रशान विधा गया है है एम्चन सूत्रमाल का खर्यात् लड् लंकार का म्य है और सम्कृतीय रूप पं श्राधार (पर) से श प्रथ मापा के वर्ण परिचर्तन मम्बन्धित नियमों द्वारा इसकी प्राप्ति हुई है। खन्नप्य ऐसे मून कालिए हिर्मा के रूपों को खार्प प्राक्त के रूप मान लिय है।

अवापीत, अकरोन और चकार महत्त के मृत कालिक लकारों के प्रथम पुरुष के महर्मक कियावद के रूप हैं। इन समी लगारा के सभी पुरुषों के चीर सभी वचतों के आग्न मान समुचय रूप से तीन होते हैं, जो कि ईम प्रकार हैं — काली, काली और कालीम इंदर्ज स्वाम्पर स्वाप्त कर से तीन होते हैं, जो कि ईम प्रकार हैं — काली, काली और कालीम इंदर्ज स्वाप्त कर 'कार के प्रवास पर 'कार के प्रवास कर काली के स्वाप्त कर किया के स्वाप्त के प्रवास के स्वाप्त के

अस्थात. आविष्ठत श्रोर तस्यों माइत के झम्में रूप हैं। इन सभी लागों के मा पूर्व के और सभी वचनों के प्राकृत स्वान्तर ममुख्य रूप स तीन होते हैं; जो कि इम प्रकृत से -चाना प्रा श्री गाईते मा वचनों के प्राकृत स्वान्तर समुख्य स्व स तीन होते हैं; जो कि इम प्रकृत से -चाना प्रा श्री गाईते । इनस सुज मरवा ४ १६ स मूल सम्कृत चातु 'ग्या' क स्थानापन्त रूप 'तिष्ठ' करावन प्राफृत में 'ठा' रूप की स्वारेश प्राप्ति और ३-१६२ से मूलकाल के रूपों के निर्माण होतु प्रार्थन प्राप्ति मूल कालिक नावारों के स्थान प्राप्ति से स्थान पर प्राप्ति में कालि से प्राप्ति से स्थान पर प्राप्ति में स्थान से सी, ही श्रीर ही मा प्राप्ति में प्राप्ति हो से प्राप्ति से सावारे से प्राप्ति से स्थान पर प्राप्ति में स्थान पर प्राप्ति में सावारे से सावारे से स्थान पर प्राप्ति में सावारे से सावारे स

ेहरेन्द्र' =देव +इन्द्र संस्कृत का रूप है। इमका प्राष्ट्रत रूप देविन्हें होता है। इगण हैं
सदया १-१० से सत्पुरुप समामात्मक शहर देव द्र की सींघ मेद करन स बादन स्वतंत्र शहर देव ने दिर सन्य रस्द 'ख' के बागि रह हुए शहर 'इन्द्र' म स्थित खादि रसर 'इ' का सद्गाय का के बाग्द ' साप, १५ स शाम हत त शहर 'देव' में स्थित खाय हल्लन स्वयुक्त 'व' क साय में खाति रह दूर ' 'इन्द्र से स्थित खादि रसर 'ड' वी सथि, २-७६ स 'इ' में स्थित स्वयुक्त 'र' का लाव खीर ३० स दार्घ देवि द' म प्रथमा विभक्ति के यहवयन क व्यर्थ में खहाराश्त बुँ क्लिंग म संस्कृत में माप्तन्य प्रत्युव में के स्थाव पर प्राष्ट्र में डॉ = की' अस्वय का मानि हाकर माहल पद हिन्ही सिंद की आला है। 'इण सर्वनाम रूप की सिद्धि सूत्र सख्या है-८५ में की गई है।

अववीत सम्कृत का सकर्मक रूप है। इनका आर्प प्राक्त रूप अव्यवी होता है। इसमें सूज-सद्या २-६६ से 'त' मे स्थित स्यञ्जन र्' का लोप, २-६६ से लोप हुए 'र्' के परचात होप रहे हुए स्यञ्जन वर्ष 'य' को दिख 'व्य की प्राप्ति और १-११ से पदान्त हलन्त व्यञ्जन 'त्' का लोप होकर अव्यक्ती रूप सिद्ध हो जाता है। ३-१६२ ॥

व्यञ्जनादीग्रः ॥ ३-१६३ ॥

च्यञ्जनान्ताद्वातेः परस्य भृतार्थस्यग्वतन्यादि प्रत्ययस्य ईत्र इत्यादेशो भनित ॥ हुनीम्र । स्रभृत् । स्रमात् । वस्त्रेत्यर्थ ॥ एव स्रच्छीस्र । स्नासिष्ट । स्नास्त । स्नासाचक्रे वा ॥ मेपदीस्र । स्रमृहीत् । स्रगृह्व त् । सम्राह वा ॥

अर्थ -प्राफ़त भाषा में पाई जाने वाली धातुत्रों में संस्कृत के समान गए भेर नहीं होता है. पर तु फिर भी प्राकृत घातुएँ दो भेदों में विभाजित हैं, कुछ व्यञ्जनान्त होती हैं तो हुछ स्वरान्त होती है, त्तरतुमार मृतकाल के ऋर्थ में प्राप्तन्य पाछत-प्रत्ययों में भेद पाया जाता है। इस प्रकार के विधि विधान म खरान्त पातुको में भून काल के क्रर्थ मे प्राप्तच्य प्राकृत प्रत्यर्थों का सूत्र मख्या ३-१६२ में वर्णन किया जा पुका है, श्रव व्यञ्जनान्त घातुर्श्वा क लिये भत काल के श्रर्थ में प्राप्तव्य प्राफुत प्रत्यय का चल्लेया इस स्त्र में किया जा रहा है। यह तो पहले ही लिखा जा चुका है कि सरकृत-भाषा में भूतकाल के व्यर्थ मे जिम तरह से तीन लकारों का-'लुइ-लइ-लिट अर्थाम् अयतन, हास्तन अथवा धनग्रतन और परोक्त' का विचान है, बैमा विधान प्राकृत भाषा में नहीं पाया जाता है, एव इन लकारों के तीनों पुरुषों के र्तीनों वचनों में जिम प्रकार से भिन्न भिन्न प्रस्वय पाये जाते ई यैमी ममी प्रकार की विमिन्नतार्घों का तया भावर्थों का भेद प्राष्ट्रत भाषा में नहीं पाया जाता है, अतएव संक्षिप्त रूप मे इस मूत्र में यही बत-लाया गया है कि प्राकृत-भाषा से पाई जाने वाली ब्यञ्जनान्त घातुत्रों में उनके सूल रूप के साथ में ही किमी भी प्रकार के मृत काल के श्रर्थ में और किमी भी पुरुष के किमी भी वचन के श्रर्थ में सेवन एक ही प्रत्यय 'ईश्च' की संयोजना कर दने सं इध्ट भूत काल घर्यक खीर इध्ट पुरूप के इध्ट वचन धर्यक पाष्ट्रत कियापर का रूप यस जाता है। प्राकृत में भूत काल के आर्थ में व्यञ्जना न धातुओं में इम प्राप्तव्य पत्वय (ईम्र) को संस्कृत में भनकाल के चर्य में प्राप्तच्ये मभी प्रकार के प्रत्ययों क क्यान पर व्यादेश प्राप्त मत्यय सममना चाहिये । इस विषयक उनाहरण इस प्रकार हैं -

प विशेष का और वचन विशेष का ज्ञान कर लिया जाता है श्रयवा स्वम्द पहिचान लिया जाता है।

ा अभन्न अभवत् श्रीर वसूव सस्युत के मृत कालिक लकारों के प्रथम पुरुष के एक वचन के ुकर्मक क्रियापद के रूप हैं। इन सभी लकारों का मभी पुरुषों का छौर सभी वचनों का प्रकृत स्वपान्तर इचय क्रव से एक ही हजीअ होता है। इसमें सूत्र सख्या ४ ६० से मूल संस्टत धातु भ्=भव' के स्थान ं प्राक्षत में हव' अग की आदेश प्राप्ति और ३ १६३ से आदेश प्राप्त आग 'हुन्' में मूत कालिक हारों में सभा पहलों के सभी वचनों में प्राप्तव्य संख्वाय प्रत्ययों के स्थान पर प्राष्ट्रत में केवल एक ही यय ईच्च' की श्रादश प्राप्ति होकर प्राष्ट्रत रूप हुरुवि सिद्ध हो जाता है।

आसिष्ठ, आस्त और आसाचके सम्प्रत के भत कालिक लकारों क प्रथम पुरुष काणकाचन के ाष्मक क्रियापद क रूप हैं। इस मभी लगारों का, सभी पुरुषों का और सभी वचनों का प्राष्ट्रत स्पान्तर मुच्चय हुप से एक ही अब्हरीय होता है। इसम सूत्र सरया ४ २१४ स मूल संख्त घातु 'बास' में ।यत श्व-स्य इलन्त च्यव्जन 'स्' के स्थान पर छ' की प्राप्ति, २ मध् से श्रादेश प्राप्त छ को द्विरव ^{[[}; छ' की प्रास्ति, २६० से द्विन्व-प्राप्त 'छ छ' में से प्रथम छ' के स्थान पर 'च' की प्राप्ति, १ =४ प्राप्तांत 'श्राच्छ' म स्थित दीर्घ स्वर 'आ' के स्थान पर श्रागे सयुक्त व्यञ्जन 'च्छ' का सर्भाव होते कारण से हृश्य स्वर 'श्र' की प्राप्ति, श्रीर ३ १६३ से खपरोक्त राति से शकुन में प्राप्ताग धात कप ाष्ट्र' में भन कालिक लकारों में सभी पुरुषों के सभी यचनों में प्राप्तव्य सरक्रताय प्रययों के स्थान पर क्त म फेवत पक्त ही प्रत्यय ईख' की आदेश प्राप्ति हा कर प्राष्ट्रत रूप अच्छी अभिद्व हो जाता है।

अग्रहीत्, अगृहणात् श्रीर जग्राह मध्यत के मृत फालिक लक्षारों के प्रयम पुरुष के एकवचन ं सप्मेंक कियादद के रूप हैं। इन सभी लकारा था, सभी पुरुष का और सभी वपनों का प्राहत रूपा ार समुच्चय रूप से फवल एक ही गेश्रीय होता है। इसमें सूत्र मख्या ४२-६ से मृत संस्कृत बात् 'यह' ंखान पर शहत में 'गेण्ड श्रम हव की श्रान्श प्राप्ति श्रीर --१६३ स प्राप्तन में प्राप्ताम धातु रूर ^{ग हो} म भूत-कालिक लकारों में सभी पुरुषों के सभी बचना में प्राप्तरूप मन्द्रतीय प्रथ्यां के स्थान बर ाष्ट्रत म बबल एक ही प्रन्यय 'ईश्व' की व्यादेश प्राप्त होकर प्राष्ट्रत रूप गेण्टी म मिद्र हो जाता 1 4 8 6 8 11

त्तेनास्तेरास्यहेसी ॥ ३-१६८॥

, अस्तवातोस्त्रेन भूतार्वेन प्रत्ययन सह श्रामि अहेमि इन्यादेशा भरतः । श्रामि गी म भह मा । जे भामि । ये भामित्रवर्थः । एव शहैति ॥

अर्थ - महत्त्व धाषु 'असु' क प्राकृत स्वान्तर म भूतकालिक तीनों लकारों के मभी पुरुषों में ^{त्र}पा इनके समी यचनों में संस्कृताय प्राप्तच्य प्रत्ययों क स्थान पर प्राक्कत में श्रादेश गाप्त प्रत्ययों की मंथोलना होने पर 'श्रम घातु+रुष्य वोषक प्रयय' के स्थान पर मेवल दो ह्याँ छो भार्ग प्रा' के हैं। वे ह्य इस प्रकार हें — भासि और श्रहेंभे। इन श्रादेश नात दार्ना क्यों में न व्यवस्ता मूलकालिक लकार के सभी पुर्वों के सभी वचनों का श्रार्थ प्रतिष्यानत हो जाता है। साथक तात्वर्य यह है कि मूलकाल में 'अन् घातु के कथल दो हुए होते हैं, र आमि भीर १ श्रार्थ, देरे सभी पुर्वों में तथा सभी वचनों में भयुक होते हैं। उदाहरण इस प्रकार है — भामि भीर १ श्रार्थ, देरे सभी पुर्वों में तथा सभी वचनों में भयुक होते हैं। उदाहरण इस प्रकार है — या भागा तर्ष श्राप्य अवसा दे व श्राप्य अवसा दे व श्राप्य क्ष्य है व श्राप्य अहि = वह या अवसा तू या अवसा दे व श्राप्य क्षय है व श्राप्य के हिल्यापर अवसा दे व श्राप्य के हिल्यापर अवसा के कियापर अवसान के हिल्यापर के हर्षों के स्थान पर श्राप्त में केवल एक ही कियापर अवस्व के हिल्यापर अवस्व के हिल्यापर अवस्व के हिल्यापर अवस्व के स्थान पर श्राप्त में केवल एक ही कियापर अवस्व के हिल्यापर अवस्व के हिल्यापर अवस्व के हिल्यापर अवस्व के हिल्यापर अवस्व के स्थान होते हैं। द्वारा चराहरण इस प्रकार है — ये भानत्व चे आमि स्वयं करें ये, यह चराहरण चत्र व व्यवसा कही है। द्वारा चराहरण इस प्रकार है — ये भानत ची हिला भी प्रकार है। ये, यह चराहरण चत्र व व्यवसा करें है कि स्थान है। ये स्थान के स्थान के स्थान पर श्राप्त क्षय व स्थान के स्थान है। यो स्थान का श्राप्त क्षय पुरुष के स्थान से स्थान के स्थान के स्थान के स्थान के स्थान हों से स्थान से से सा स्थान हों से सा हारों की रिष्ट से मर्यारा भेर का स्थान पाई जाता है, जो कि प्यान देने योग्य है।

आसीत, आसी श्रीर आसम माइन के भूनकाल के प्रथम दिनीय-सुनीय पुरुष के करप दें। इनके प्राकृत रूपान्तर श्रामि श्रीर श्राहेमि होते हैं। इनमें सूत्र-संख्या रे १६४ म ू । धातु 'श्रम' के भाय में भूनकाल चाचक ब्राइन प्रत्ययों को संयोजना होने पर रोनों के राध्यर श्रामि श्राय श्राहेम स्वरंग को सामि श्राय श्राहेमि श्रीर श्रोहों कि राध्यर श्राहेम श्रीर श्रोहों कि राध्यर श्रीम श्रीर श्रोहों कि राध्य श्रीम श्रीर श्रोहों कि राध्य श्रीम श्रीर श्रोहों कि राध्य श्रीम श्रीर श्रीम श्रीर श्रीम श्रीर श्रीम श्रीर श्रीम श्रीर श्रीम श्रीम हो स्वरंग श्रीम श्रीर श्रीम श्रीप श्रीम श्री

'तो' सर्वनाम रूप की सिद्धि सूत्र मख्या ३-८६ में की गई है।
'तुमं' मर्यनाम रूप की सिद्धि सूत्र-संख्या ३-९० में की गई है।
शह सर्वनाम रूप की सिद्धि सूत्र-संख्या १-१० में की गई है।
'ता' क्षव्यय रूप की सिद्धि सूत्र-संख्या १-६० में की गई है।
'जे मबनाम रूप की सिद्धि सूत्र मस्या १-४८ म की गई है।

आसन् मास्ट्रत के भूतकाल वाचक लंक लहार के प्रयम पुरुष क बहुबबत का हर है। श्री वास्ट्रत रूपान्तर स्मामि और बाद्दि होंगे हैं। इनमें मुख मंन्या ३ १६४ से मूल संस्ट्रत-वाई 'क्ट्री साम म मूतकाल-वाचक पास्ट्रत प्रयमी की मयानना होने पर शर्मों के हा श्यात पर 'ब्रांति कोर बहें रूपों का साइसा-यानि हो हा प्रास्ट्रत रूप 'आसि और अद्वेति निद्ध हो जात है। ३-१६४॥

ज्जात्सप्तम्या इ वी ॥३–१६५॥

सप्तम्यादशातः जजात्वर इ.जी प्रयोक्तव्यः ॥ भनेत् । होज्जइ । होज्ज ।

अर्थ —यहाँ पर 'सप्तमा' शन्द स 'लिक् लकार' का तास्त्ये हैं। यह लिह् लकार छह प्रकार न अर्थों में प्रयुक्त होता है। जो कि इस प्रकार हैं — १ बिधि, २ निमन्त्रण, ३ खामन्त्रण, छथवा निबदन प्रिश्चर्याच्य खथवा खमीष्ट अर्था, ५ सप्तरत और ६ प्रार्थना। प्राकृत मापा में मूल घातु के छागे 'झ' प्रवय की सयोजना कर देन से सप्तमी का अर्थात् लिंड लकार का रूप बन जाना है। यह प्रस्वय तीनों प्रकार के पुरुषों क दोनों बचनों में प्रयुक्त होता है। वैकल्पिक रूप से 'ज प्रस्वय क छागे कथा कभी पूर 'की प्राप्ति भी होती है। जैसे — भवेत = होजाइ खयवा होजा = होये। इस विषयक विरोण वर्णन छागे सूत्र सिख्या ३ ९७० और ३ १७० म क्या जा रहा है।

भिन्त संकत का लिड लगार का प्रथम पुरुष का प्रक्षयन पारू व है। इसक प्राकृत रूप होजइ श्रोर होज होते हैं। इनमें सूत्र सरया ४-६० से मूल साफ़त घातु भू=भष् क स्थान पर प्राकृत में 'हा' श्रग रूप की श्रादेश प्राप्ति, 、१७७ से विधि श्रथं में 'जा' प्रस्थय की प्राप्ति और ३ १६४ से प्राप्त प्रस्थ 'ज' के प्रधात बैकल्पिक रूप से इ' की प्राप्ति होकर प्राकृत रूप *होजाइ* श्रोर हो*जा* सिद्ध हो जाते हैं। ३-१६४॥

भविष्यति हिरादिः ॥३-१६६॥

मित्रपदर्थे निहित्ते प्रस्यये पर तस्यैनादिहिः प्रयोक्तव्यः ॥ होहिद् । भविष्यति मविता रियर्थः ॥ एन हाहिन्ति । हाहिसि । हाहित्था । हसिहिङ । काहिद् ॥

अर्थ — सस्तुत भाषा में भविष्यत् काल के हो मेर वाव जाते हैं, एक तो क्षत्यत् मिव्या क्षयोंत्त लूट लकार और दूमरा मामान्य भविष्यत् क्षयोत्त लूट लकार, कि सु प्राइत भाषा में तेतीं क्षार के भावव्यत् काल बाचक लकारों के स्थान वर एक ही प्रकार के प्रयों वा प्रयोग होता है। प्राइत-भाषा म भविष्यत् काल बाचक लकारों के निर्माण करने का मामान्य विष्य इम प्रकार है कि—क्ष प्रथम पातु क मूल क्षा के काल है जिस्सा कर काल है कि कि कर प्रथम पातु के मूल क्षा के काल है प्रवाद के लिए के तिर्माण कर के लिए के तिर्माण के विष्यत् के विष्यत् के तिर्माण के

एक्षचन

बद्धदन

प्रथम पुरुप-हिइ, हिए द्वितीय हिति. हिसे **ह**र्तीय शिमि

हि। नि हिन्ते, हिररे दिस्या, हिए। हिंगी, हिम् हिम्।

तृ तीय पुरुष क एक्वचन में तथा बहुवचन म येक्हिपक हर से खाय श्या मा धन है, दना वर्णन थाने सूत्र सरया १-१६७, ३ १६= श्रीर ३ १६६ श्रादि में दिया जान वाला है। इन प्रदान कार का तारवर्य यही है कि भविष्यत काल क व्यर्थ म घातु में मबे प्रथम 'हि' का प्रवेग किया कर चाहिये, तत्वश्चात पर्तमान वाल बोधक प्रत्यवों की सवीक्षना की जारी चाहिये। जैसे --म'क्फ्री श्चयवा मविता = होहिइ=होगा श्रयवा होने वाला होगा। मविष्यन्ति श्चयवा मवितार कीहिति व तेर अथवा होने वाले होंगे। मयिष्यित अथवा मवितामि = होहिमि =तु होगा अथवा तूहीन बाल हता मांप्रथय श्रथवा भावतास्य = होहित्या = तुम हांग श्रथपा तुम होने वाले होंगे। हसिस्यति श्रमवा हाँनग हसिहिइ=वह हैंसगा श्रयवा हैंमने वाला होगा । करिष्यति श्रयवा कर्ता = वाहिइ=वह बरेगा करता कर वाला होगा । इन उदाहरणों से प्रतीन होता है कि मंश्वत म प्राप्तस्य मविष्यत दान वाबक हुए छ। र्थार लुट लकार के स्थान पर प्राष्ट्रन में कैवल एक हा लकार होता है तथा इसी मामा य सना र श्राधार से हा मविष्यत काल याचक दोनों करारों का शर्थ प्रतिस्वतित हा नाता है।

मार्थियाति अथवा मिथता मस्तुत के क्रमश भविष्यत काल याचक सुट सहार और हर ल कार के प्रथम पुरुष क प्रक्ष्यचन के ऋष हैं। इनका प्राष्ट्रन ऋष होहिइ होता है। इसम स्वन्यद्वा ४३० से मूल संस्टत धातु भृ = मय' क स्थान पर प्र कृत म 'हा धाग हुए की प्राप्ति, ३ १६६ से प्रावस्ति रूप के अब में प्राप्तांग 'हो' में 'हि' प्रथय की प्राप्ति और व रैक्ट से मविव्वन काल के कर्य में प्राप्तांग हैं हैं में प्रथम पुरुष के ण्डबणन के अध में इ' ध्यय की प्राप्ति होकर प्राष्ट्रत हर प्राप्ति जाता है ।

भविष्याना, भवितार मंख्त क मविष्यतकालवायक तुर मकार और हुद सनार करे पुरुष के बहुवचन क रूप हैं। इनका प्राष्ट्रत रूप (यह हो) हाहिति होना है। इपसे सुण-मन्या ४ १० म मूल म'हत थातु 'भू=मव' के स्थान पर आहत में 'हो' चतु गए की प्राप्ति, दे-१६६ न मंत्रित्त्र क खय म प्राप्तांग हो। म 'ति' प्रस्यय की प्राप्ति कीर ३ १४२ में महिरवन्हाल क कर्य में बालांग 'ग' में प्रथम पुरुष के बहुवचन के कार्य में 'नित प्रयथ की प्राप्ति होकर ही हिन्ति रूप विद्व हो प्राप्ति हैं।

भाषित्यासि स्रथवा अधितामि साइत क समहा मविष्यनुहालवायक पुर सागर की ही सहार क दिवीय पुरुष के पहत्रपन के रूप है। इतहा शहत हुन (गमान रूप में) शामित हुन है। इसमें सूब-सरावा ४ ६० में मूल संस्कृत घातु भू=मव के स्थान वर आहत में 'हो' सह हव कें.र' मिष्ण्य अथवा भिन्तस्थ सम्झत के कमश भिन्धित नाल नाल तट लकार छोर छुट्टू हवार के डिताय पुरुष के बहुबचन के रूप हैं। इनका प्राकृत रूप (ममान रूप से) होरि ह्या होता है। हिमें सुन सत्या ४६० से सून सम्झत थातु 'भू=भव' क स्थान पर प्राकृत में 'हो' अग रूप की प्राप्ति १.१६६ म भिष्यत् काल के अर्थ म प्राप्ता हो' में 'हि' प्रयय का प्राप्ति, १.१० से भिष्यत काल के अर्थ म प्राप्ता हो' में 'हि' प्रयय का प्राप्ति, १.१० से भिष्यत काल के प्राप्ति होते हैं। हैं भी प्रयाप पुरुष बोधक प्रस्यय इत्या' में स्थित प्राप्ति विद्या काल के खर्य में प्राप्त हलन्त अग होरे में इत्या पुरुष के बहुबचन के अर्थ में 'इत्या' प्रयय की प्राप्ति और १५ से प्राप्त रूप 'होइ और स्था पुरुष हो कर हो हित्या रूप सिद्ध हो जाता है।

हार्जप्याति श्रथमा हसिता सस्कृत के कमश भिवय्यत काल वाचक ल्टलकार और लुट-लहार के प्रथम पुरुष के एकवचन के रूप हैं। इनका प्राष्ट्रत रूप (समान रूप से) हिमिदिइ होता है। इनमें प्रेर सच्या ११४७ से मूल प्राष्ट्रत-घातु 'हस' में स्थित श्रन्य 'श्र' के स्थान पर श्रागे भविष्यत काल-वाचक प्रत्यप 'हि' का सद्भाव होने के कारण से 'इ' की प्राप्ति, ३ १६६ से मविष्यत् काल के धर्य में प्राप्ति 'हिंस' में 'हि' प्रत्यय दी प्राप्ति, श्रीर ३ १३६ से मविष्यत् काल क श्रयं में प्राप्तांग 'हिसिहे' में प्रयम पुरुष क एक प्रचान के श्रर्थ में हु द्रत्यय की प्राप्ति होक्र 'स्विहिहें' रूप सिद्ध से जाता हैं।

'पाहिइ' कियापर रूप की सिद्धि सूत्र सख्या १ ५ में की गई है। ३-१६६॥

मि~मो-मु-मे स्सा हा न वा।। ३-१६७॥

भिनिष्यत्यधें मिमोम्रुमेषु तृतीय त्रिकादेशेषु परेषु तैपामेनादी स्मा हा इत्येती वा ^{मेपोक्तर्यो} । हेरपवादौ । पचे हिर्पि ॥ होस्सामि होद्दामि । होस्मामो होद्दामो । होस्मामृ होद्दापु । होस्माम होद्दाम ॥ पचे । होद्दिमि ॥ होद्दिम ॥ हिस्मु हा न मनि । ^{दिख}मामो । हमिहिसो ॥

भेथे - प्राष्ठत भाषा में भविष्वत्वाताल के धर्थ में त्तीयपुरूष क एवस्यत में ध्यथा घटुवयन इ शतुष्ठों में जब तमहा 'भि' प्रत्यम ध्यथता मी-मु-म प्रत्यय की मचीजना की जारही हो तब सूत्र-भेट्या हे '६६ के धनुमार भविष्यत् काल-पोतक प्राप्तस्य भर्षय 'हि' क ग्यान पर येवहिषक रूप स 'श्रा' घयता हा' मत्यय की भी मास्ति हुखा करती है। इस महार से तृतीय पुरुष के एक्यचब म ० म्या यहुवचन में मिविष्यत-काल-खोतक प्राप्तय प्रत्य 'हि' के स्थान पर बैहिरिक रूप से 'भा' पर्या 'प को प्राप्त की पूर्वील्लेखित मिविष्यत् काल-खोठक प्राप्तय प्रत्यय 'हि' के सिव प्रचान रूप के प्राप्त की प्राप्त की पूर्वील्लेखित मिविष्यत् काल-खोठक प्राप्तय्य प्रत्यय 'हि' के सिव प्रचान रूप कि मान में सिन प्राप्त की सह अपवाद रूप प्राप्त में बैहिन्य-स्थित वाली हा है इसस्ति प्राप्त कर स्वाप्त के प्रत्यय 'ति' के एवष्त्र के प्रथान के प्रथान के प्रयुवा का प्रत्ययों का सद्भाव होन पर मिविष्त का प्रयुव मित्र में प्राप्त हो सह साथ की होता ही है। उस वैद्वार के स्वाप्त मित्र में स्वाप्त का स्वय्या मिव्र कि स्वाप्त की होता ही है। उस वैद्वार के प्रयुवा प्रचान का स्वय्या प्रवास्त के उदाहरण इस प्रकार हैं — मिविष्या का स्वया प्रवास मित्र में होता होता हो होने वाला हो के साथ में प्रयुवा के प्रयुव्य के स्वया के स्वया मित्र मित्र

कभी वभी ऐसा भी देखा जाता है कि वनरोक्त प्राध्वव्य प्रत्यय स्मा' और 'हा' में स दर रा ही परवय 'स्मा' की प्राप्ति होती है और 'हा' की प्राप्ति नहीं होती है। जैसे —सीरवाम=रीमकार और हिसिहिमो। यहाँ पर 'हमिहामों रूप का खभाव प्रवृत्तित कर दिया गया है। पर हु दम विकेश कैकिंग्यक माय वाली हो जानना, जैसा कि वृत्ति में कांबर्' शब्द देकर स्पर्टीक्शण दिया गया है।

भिषस्यामि श्रवया भिषतास्य सन्द्रत के बनरा मिथनत् दाल वायक लूट् लहार मीर न वे तृतीय पुरत के एक्ययन के रूप है। इनके प्राइन रूप (ममान मा में। हासामि, होसीन के होसिम होते हैं। इनम सूत्र मंखवा ४ ६० में मून मंखन बात्र 'मू सम्ब के स्थान पर प्राइन म हा के स्पर्व हो प्राप्त , ३ १६० श्रीर ३-१६६ स भिष्यत् दाल के श्रार्थ में हमशा 'स्मा, हा लीर हि १२६ स भिष्यत् दाल के श्रार्थ में हमशा 'स्मा, हा लीर है। १८१ म भिष्यत् हाल के श्रार्थ में हमशा प्राप्तीय 'होगा, हाल है हैं। हम स्वायत् हाल के प्राप्त हो प्राप्त के स्वयं में हमार प्राप्तीय हो। सा हो हो हम स्वयं हम स्वयं हो। हम स्वयं हम हम स्वयं हम हम हम स्वयं हम स्वयं

नार्यस्याम चीर अवितास्म मंद्दन क चनश सविच्या काल पायक सुद् सहार से हैं। हु सकार क गुनीय पुरुष के सहुवचन क चय है। इनके प्राहन कव (ममान कव से) शामामा, हे गरे शेरमामु कोशमु कारिमु, शेरमाम, शेराम, शक्तिम कोते हैं। इनने एव सम्या ४ ६० से सूब सावन्य 'मू = भय्' के क्यान पर प्राष्ट्रन में 'हो' चीन कय का प्राप्ति, दे १६० चीर १-१५६ से भीवय्यान्काल क स क्यार 'क्या, हा चीर हि। प्रस्प को मूस प्राप्तीत 'हो' स जाति चीर - १५४ स माविच्या कार श्चर्य में काश प्राप्तांग 'होस्सा, होहा खीर होहि' में ततीय पुरुप के बहुनचन के अर्थ म कमश 'मी. म श्रीर म' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर होस्सामो, होहामो, होस्सामु, होष्टामु, होहिस, होस्साम, होहाम धौर *होहिम* रूप सिद्ध हो जाते हैं।

हार्सियाम श्रीर *हारितास्म* सस्क्रन केकनश भविष्यन काल प्राचक लुट् लक्कार श्रीर लुट॰ लगर के वर्तीय परुप के बहवचन के रूप हैं। इनके शाकत रूप (ममान रूप से) हिसस्तामा श्रीर हिस हिमो होते हैं। इनमें सूत्र सरवा ३ १५७ से मूल प्राकृत घातु 'हम में स्थित ख्रन्त्व 'ख्र' के स्थान पर खागे मविष्यत काल बाचक प्रत्यय 'स्ता' और 'हि' का सदभाव होने क कारण से 'इ' की प्राप्ति, ३-१६७ श्रीर रे १६९ से भविष्यत काल के अर्थ में प्राप्ताग 'हिन' में क्रमश 'स्ता और 'हि' प्रत्यय की प्राप्ति और रे रिष्ठ से मविष्य तु काल के खर्थ में जनशा जाताग 'हसिरमा' श्रोर 'हमिहि' में तृतीय पुरुष के बहुउचन के वर्ध में 'मो' प्रत्यय की प्राप्ति हो रर 'हा सरतामी' और हा सिहिमी' रूप सिद्ध हो जाते हैं। ३ १६७॥

मो-मु-माना हिस्सा हित्था ॥३-१६८॥

धातोः परी भविष्यति काले मो मु माना स्थान हिस्सा हिस्या इत्येती वा प्रयोक्त-च्यां ॥ होहिस्सा । होहित्था । हसिहिस्सा । हसिहित्था । पचे । होहिमो होस्सामो । होहामो । श्त्यांदि ॥

अर्थ - भविष्यत बाल क ऋर्थ में धातुश्रों में तृतीय पुरुष के बहुवचन बोधक प्रत्यय 'मी मु म' ^{9रे १}हने पर तथा भविष्यत काल द्योतक प्रत्यय 'हि श्रयवा स्ता द्ययवा हा' होने पर क्मी क्मी चैक्लिपक रूप से ऐमा हाता है कि उक्त मविष्यत्-काल चोतक प्रत्यय 'हिस्सा हा' के स्थान पर श्रीर उक्त पुरुष बाधक स्यय भा मुन्म' के स्थान पर ऋर्यात टोना ही प्रकार के प्रत्ययों के स्थान पर घातुक्रों में 'हिस्मा ष्यवा हित्या' मध्ययों को श्रादेश श्राप्ति होकर मविष्यत काल के श्रर्थ में तृतीय पुरुप के बहुत्रपन का भव श्रमिष्यक्त हो जाता है। यों घातुश्रो में रहे हुए 'हिस्मा हा' प्रययों का मी लीप हो जाता है श्रीर मों सुन्न' प्रत्ययों का भी लोप हो जाना है, तथा दीनों प्रनार के इन लुन प्रत्ययों के स्थान पर 'हिस्मा भथवा हित्या' मचया का आदश प्राप्ति हो कर तृतीय पुरुष के बहुयचन ए अर्थ में भविष्यत काल का रूप तैवार हो जाता ईं। जैसे -भविष्याम अथवा मविवास्म =हाहिस्मा श्रीर होहित्या=हम होंगे, ^{भूभि यह विधान वैक्लिपक स्थिति बाला है अतएव पत्तान्तर में 'होहिमो, होस्मामी श्रीर होहामा'} रैपान ह्वों का भी निर्माण हो सक्ता। दूसरा उटाहरण इस प्रकार है —हिसप्याम श्रयवा हिसताहम.= हीनिहिस्मा और हिसिहिस्था,=हम हुँसेंगे, पत्तान्तर में हिनिहिसो, हिनिस्सामी आदि रूपों का मी नदूनाय हांगा। इम प्रकार से वैकल्पिक स्थिति का सद्भाव मिद्यत काल के कार्य म तुनीय पुरुष क बहुयपन फे सम्बाध में जानना चाहिये।

सविष्याम भाषितास्म मस्टूत व कमरा सविष्यत् वाल-वाचक लूट सहार और हुन हा। के दुर्ताय पुरुष के बहुवचन के रूप हैं। इनके प्राष्ट्रत रूप (ममान रूप से) होहिंगा, हाटिया, होंध्या हो।सामा और होहानो होते हैं। इनम सुत्र सख्या ४ ६० से मूल सरहत घातु 'मून्भय' क स्थानवर शाव में 'हो' खग रूप की प्राप्ति, तरपरचात प्रवम और हितीय रूपों में ३ १६८ में मियच्यत हान के स्थं में तथा त्वीय पुरुष क बहुवचन के संभं में कमशा 'हिस्सा और हिर्मा' प्राप्तों की प्राप्ति होस्स होति होस्स और हिर्मा और होहिस्या' प्राप्तों की प्राप्ति होस्स 'होहिस्सा और होहिस्या' स्वाप्तों की प्राप्ति होस्स 'होहिस्सा और होहिस्या' स्वाप्ति हो साथ हो जाते हैं।

तृतीय रूप होहिमों में सूत्र सख्या ६ १६६ में उसीक रीति से प्राप्त थातु धन 'हे' में मॉक्स् काल खधक प्रत्यय 'हि' की प्राप्ति खीर १ १४४ से मिबद्यत् काल बोधक प्राप्तीन 'होहि' में तृत्रव दुरर के बहुबचन क खर्थ में 'मी' प्रत्यय की प्राप्ति होकर हो/हिनों हुत क्रिद्ध हो जाता है।

'होस्तामो श्रीर होहामो' रूर्व की मिद्धि सूत्र संख्या ३-१३७ में की गई है।

हसिष्याम श्रीर हसितास्म मस्छत क मगश भविष्यत्काल वाचन सुट सहार भी हुँ। सक्तार के तृतीय पुरुष क बहुवचन के रूप हैं। इनके प्राव्य-रूप (नमान-रूप स) हमिरिस्ता भी हिमिरिस्ता भी हिमिरिस्ता भी हिमिरिस्ता भी हिमिरिस्ता भी हिमिरिस्ता भी हिस्ता भी हमिरिस्ता हमिर्देश हमिरिस्ता हमिरि

मेः स्तं॥ ३-१६६॥

घातोः परं भविष्यति काले स्पादेशस्य स्थाने स्म वा वयोक्तन्यः ॥ होरां । हिम्म् । कित्तहस्सं ॥ पले । होदिमि । होस्यामि । होदामि । कित्तहदिमि ॥

अर्थ — मिद्यत्-काल क चर्ष में पातूचा में तृगीय-पुरुत क एक वयन-योगर-मयर मि पर रहन पर सथा मिद्यत्हाल-कोतक प्रत्यय 'हि स्वथ्या स्मा ख्याया हा" हो पर हमी इरी पैक्लिक रूप से ऐमा रोता है कि उक्त मिद्यत्-काल-कोतक प्रत्यम "दिश्मा हा क स्थान पर खड़" दीलों ही प्रकार के रूपयों के स्थान पर धातुका म कवल 'श्मे' प्रत्यम की कारिन प्रति शहर अदिन्त काल के खर्ष में तृगीय पुरुष के एव वचन वा ख्या प्रकृष्ट हो जाता है। घो धातुका में वह दूर 'हि-स्मा-हा' प्रत्यों का मा राजि हो जाता है खी। 'मि' प्रत्यम का भी लाव हो जाता है, रूपा रेमा मिक्सा के इस पुरुष प्रत्यों के स्थान पर क्षाया 'स्मा प्रत्या की सावेग्न-वालि शहर तृशेक पुरुष कर वमन के क्षायों में मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें — मिवस्यु-काल का रूप सीवार हो जाता है। जीमें काल सीवार हो जाता है। जीमें काल सीवार हो जाता है। जीमें काल सीवार हो काल सीवार हो जाता है। जीमें काल सीवार हो जाता है। जीमें काल सीवार हो सीवार हो सीवार हो सीवार हो सीवार हो जाता है। जीमें काल सीवार हो हो सीवार ह क्षा है हो हैंगा, चूँ कि यह विधान वैकिएनक-स्थिति वाला है अतएव वज्ञान्तर में 'होहिमि, होस्सामि शोर होहामि' हर्षों का भी निर्माण हो सकेगा। अन्य उदाहरण इम प्रकार है —हिस्सिमि अथवा भुगामिन्हिसिस=मैं हुँसुगा। कीर्तीयष्यामिनकित्तहस्स, वज्ञान्तर में कित्तहिसिन में कीर्तन वसँगा, स्थापिन

१न प्रकार से बैकिल्पिन-स्थिति का सद्माव भविष्यत् नाल के ऋर्य में तृनोय पुरुष के एकत्रवन वन्य में जानता चाहिये।

शेप रूप 'होहि। में, होस्सा। में तथा होहा। में की सिद्ध सूत्र-सख्या ?-१९७ में की गई है।

हार्षिणाभि अथवा हिस्तास्मि सस्कृत के कमश भविष्यत् काल वाचक लृद् लकार और लुट् । ह के रुठीय पुरुप के एक्चचन के रुप हैं। इनका प्राष्ट्रत-रूप (समान-रूप से) हिसस होता है। में इन सस्या २-१५७ से मृत प्राष्ट्रत धालु 'इस' में स्थित श्रन्त्य स्वर 'झ' में स्थान पर श्रामे भविष्यत् है वाचक प्रत्यय का सद्भाव होते के कारणा से 'इ' की भाषित, सत्यश्चात भारताम 'हिस' में स्थान पर श्रामे के स्वयं ते १६६ से भविष्यत् काल के अर्थ में स्वीय पुरुप के एकचचन में पूर्वीक सूत्रों में कथित प्राप्तव्य काल के अर्थ में स्वीय पुरुप के एकचचन में पूर्वीक सूत्रों में कथित प्राप्तव्य की श्राप्ते हो स्थान पर 'स्स' प्रत्यय की श्रापेश प्राप्ति हो कर स्वारीस्स रूप सिद्ध हो जाता है।

कीनेथियानि मास्त का सविष्यत्त काल यायक लुट लक्षार का स्नीय पुरुष के एक्ष्वपन का है। इसक प्राक्त रूप कि सहस्त स्त्रीर क्लिइनिस होते हैं। इसमें सूत्र सटया २ ०६ से 'ल' में वियत कि 'र' का लोप, २-६ स लोप हुए रेफ स्टन ट्र' क परचात राप रहे हुए 'त' को द्विच 'स' की लि, १-४ स स्त्रीद वर्ण का' में वियत दाप स्वर 'ई' के स्थान पर आगे प्राप्त मयुक्त व्यञ्जन 'त्त' का लाब होने के कारण स द्वार स्वर 'ह' की प्राप्त, '-१७० से 'वि' वर्ण में स्थित 'य' व्यञ्जन का लोप, विदार सक्त स्त्रीय क्ष्य का कि स्त्रीय स्वर पर 'कीर्निय' से प्राष्ट्रत म प्राप्तीय 'किसई' म ३ १६६ से मिष्टयन काल के स्त्रयं में प्राप्त के क्षयं म 'वि पुत्र के प्रक्षयन में सहस्त्रीय प्राप्तव्य प्रस्था 'व्यक्ति के स्थान पर प्राप्तन में प्राप्तव्य प्रस्था में पर स्वर के प्रक्षयन से सहस्त्रीय प्राप्तव्य प्रस्था 'व्यक्ति के स्थान पर प्राप्तन में प्राप्तव्य प्रस्था में पर स्वर के प्रक्षयन से सहस्त्रीय प्राप्तव्य प्रस्था 'व्यक्ति के स्थान पर प्राप्त में प्राप्तव्य प्रस्था में स्वर स्थान से सावर सावर स्वर स्वर से प्रक्ष के प्रक्षयन से सावर सावर स्वर हो का है।

हितीय रूप में सुत्र सदया ३ १६६ से प्राप्टल में प्रथम रूप के ममान ही प्रात्रीय क्लिश्न मिविष्यन् ते सुबह प्राप्त्रच प्रत्यच 'हि' की प्राप्ति कौर ३ १४१ में मविष्यत् काल के कमें में प्राप्तांग किवाहीं म रुतिय पुरुष के पदवयन क क्षर्य में 'मि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर क्लिशहिमि रूप भी १९६० १६ है। ३-१६६॥

क्र-दो-हं ॥३-१७०॥

वरीते र्दरातेश्र परी मिवष्यति शिहतस्य स्पादेशस्य स्थाने ह वा वर्षाकारः काह । दाहं । करिष्यामि दास्यामीत्यर्थः ॥ पत्रे । काहिमि । दाहिमि । इत्यादि ॥

अर्थ — सरकृत मापा से पाई जान वाली घाषु 'छ.' और 'दा' के प्राष्ट्रन स्वान्नर 'स' त्या' में मिवच्यत वाल के अध में प्राप्तव्य प्राष्ट्रन प्रस्ता 'हि' चादि के परे रहते वर तथा रू-निव-पुरर वे रह यथन वाधक प्रयय 'मि' के परे रहने वर तभी कभी चैकिव्यत रूप से मेमा होता है कि रह-में क्ष्य वाधक प्रयय 'मि' के स्थान वर कर्म कभी कभी चैकिव्यत रूप से मेमा होता है कि रह-में क्ष्य हाता छोतक प्रस्यय हि' आदि के स्थान वर क्ष्य होने घातुओं में क्ष्यल 'ह' प्रस्यय की ही आर्य्य प्राप्त हों। प्राप्त काल का अर्थ के ततीय पुरुष के एकवचन का अर्थ प्रकट हो जाता है। यो प्रयुक्त 'ह' प्रस्य की ही आर्य्य प्राप्त हों। प्राप्त हों प्राप्त है ही अर्थ प्रस्य 'हि' आदि का मो लीव हो जाता है की उप प्रवुक्त के एकवचन अर्थ के प्रस्य 'मि' हा भी लीव हो जाता है, तथा होनों ही प्रकार के दा तुव वाने हैं स्थान वर केवल पर ही प्रस्य 'ह' ही ही आर्य हो प्राप्त है। जैसे —करिच्यामि अर्थ का क्ष्य भीवच्या काल का रूप इन प्रशुक्त है केवल पर ही प्रस्य 'केविच्यत हो जाता है। जैसे —करिच्यामि अर्थ का क्ष्य केवल पर ही प्रस्य केवल पर ही प्रस्य केवल पर ही प्रस्य काल हो से हो जाता है। जैसे —करिच्यामि अर्थ का क्ष्य केवल पर क्ष्य केवल पर की निकार हो से क्ष्य हो प्रस्य हो हो का है से हो प्रस्य हो प्रस्त हो। केवल हिम्स हो क्ष्य है से हिम्स केवल हो से स्थान हो से स्थान हो। केवल 'दाहिमि' कर्य का भी मुक्त होगा हो क्षय हो से स्वान्य पर हो। केवल के सम्बन्ध में ही से निवाद कर हो। कि क्ष्य म सुतीय पुरुष के प्रस्थन के सम्बन्ध में ही सनाया गया है।

यरिष्याभि धीर यनौरिन संस्कृत के क्रमरा. मविष्या काल-वावर नृद हहार की हैं। लावार क रतीय पुरुष क प्रकार के रूप हैं। इनके प्राष्ट्र नरूप (समान रूप स) काई धीर कारियाँ हैं। इनमें सूद-संख्या ४ २६४ से मूल संस्कृत भातु 'छ' म स्थित धन्य । यर 'क्र' के स्थान वर 'दा' हैं। इनमें सूद-संख्या ४ २६४ से मूल मंद्रत भातु हो कर प्राप्टत म 'का' ब्युक्त-रूप की प्राप्ति, नरप्रमान प्रथम रूप से सूप मंद्रण की स्थान प्रथम के स्थान पर का के प्रयाप द्विष्ट की प्रयाप की स्थान पर की स्थान पर की स्थान पर की सामित की प्रयाप की की की स्थान पर कि रूपय की साईसा प्राप्ति हो कर 'वाई अप कि हैं। माता है। हो कि र 'वाई अप कि हो स्थान पर कि रूपय की साईसा प्राप्ति हो कर 'वाई अप कि हैं। माता है।

दिताय रूप कारिमा से 'बा' कार रूप का प्राप्ति मयम रूप के समात ही रोवर सूप केंद्र व १६६ से भारोग 'कर' में मबिस्मन काल-मूचक प्राप्तव्य प्रस्तय 'हि' की प्राप्ति कीर १ रेडने से स्मीनाई , काल क अर्थ में प्राप्तांग 'काहि' में तृतीय पुरुप के एक्यचन के अर्थ में 'मि' प्रत्यय की प्राप्त हो का काहीने रूप भी सिद्ध हो जाता है।

दास्यामि और दातास्मि संस्कृत के कमश भविष्यत काल वाचक लुट लकार श्रीर लुट् लकार क दवाय पुरुष के एक उचन क रूप हैं। इन के प्राकृत रूप (समान रूप से) दाह और दाहिमि होते हैं। इनम में प्रथम रूप में सूत्र सख्या ३-१७० से मूल प्राहृत घातु 'दा' में भविष्यत् काल के श्रथ में दुर्तीय ्रिष्ण क एक्वचन में पूर्वाक्त सुत्रों में (३-१६६ छोर ३-१८१ में) कथित प्राप्तब्य प्रत्यय 'हि' और 'मि' क्षानों के ही स्थान पर 'ह' प्रत्यय की आदेश प्राप्ति हो कर दाह रूप निद्ध हो जाता है।

हितीय रूप 'दाहिनि' म सूत्र सख्या ३-१६६ से प्राप्ताग 'दा' में भविष्यत काल सुचक प्राप्तव्य प्रत्यय हिं का प्राप्ति और ३- ४१ से भविष्यत्-काल के ऋर्थ में पाष्ताग 'दाहि' में तृतीय पुरुष के एक षवत रे श्रये में 'भि' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर *दा।ही में* रूप भी निद्ध हो जाता है। २० ७०॥

थु−र्गाम−रुदि−विदि -दृशि–मुचि-वचि-छिदि-भिदि-भुजां सोच्छं गन्छ रोच्छ वेच्छ दच्छ मोच्छ बोच्छं छेच्छ भेच्छं भोच्छ ॥ ३-१७१ ॥

थादीना धातुना भविष्पद्विहितम्यन्ताना स्थाने सीन्छमित्यादयो निपात्यन्ते ॥ सीन्छ । भाष्यापि ॥ गच्छ । गमिष्यामि ॥ सगच्छ । सगस्ये ॥ रोच्छ । रोदिष्यामि ॥ निद ज्ञाने । ^{देच्}व । नेदिष्यामि ॥ दच्छ । द्रच्यामि ॥ मोच्छ । मोच्यामि । वोच्छ । वस्यामि ॥ छेच्छं । इत्यामि ॥ भेच्छ । भेत्स्यामि । मोच्छ । मीच्ये ॥

अर्थ —मस्हत भाषा को इन दश (श्रथता ग्यारह) घातुओं 'श्रु, गम्, (सगमः, रुट् विट, दश ^{हुन्, बच्,} बिद्, मिद्, श्रीर मुज' के प्राकृत रूपान्तर में भविष्यत् काल बोधक प्रयय कश्यान पर श्रीर ^{हुशत} पुरुष के एकवचनार्थक प्रत्यय के स्थान पर रूट रूप की प्राप्ति होती है ख़ीर इमी रूट रूप से ही भीवपत काल-याचक तृतोय पुरुप के एकवचन का खर्थ प्रस्ट हा जाता है। इस प्रकार से प्राप्त रूढ र्षों में न तो मिक्टियत् काल बोधक प्रत्यय 'हिस्सा श्रयंवा हा की ही बायरय क्ता होती है छोर न ^{हैनाय पुरुष के प्रकासतार्थक प्रयय 'मि' को ही आपश्यक्ता पड़ती है। इम विधि में प्राप्त ये रूप} नित्तत क् ह्लाते हैं। उपरोक्त सम्झल मापा की इन दशा (अथवा ग्यारह) घातुओं के प्राफ्टत हपान्तर में मार्थपन् काल-योघक श्रवस्था में पाय जाने वाल रूट रूप में तृतीय पुरुष के एकवधन के श्रय म केनल पत्तावार की ही भाष्ति होक्स भविष्यत् काल द्यर्थक तुर्ताय पुरुष के एकबयन का रूप रूप यन जाता है। वेत (१) श्राच्यामि=सोच्छ = में सुत्रा, (२) गमिग्वामि = गण्द्र-में जाऊँगा, (३) मगुख्य=मगच्द्र= में साहार कहेंगा छथवा में भेल रक्त्यां (४) रोदिन्यामि = रोच्द्र=में रोक्रॅगा, (४) वेदिन्यामि हरू: बार्नुगा, (६) द्रत्यामि = इन्द्र=में द्रख्ँगा, (७) मोह्यामि = मोन्छ = में छोड़ेंगा, (=) बहवामि

= बोच्छ = में वहुँगा, (६) छेनवामि = छेच्छ=में छेदूँगा, (१०) मेसवामि = भेच्छ = में भेदूँगा ही (१०) भोद्य = मेन्डडमें छाउँगा। दवशस धान्यादेश कि विवस मित्रवस्वत् वास के निवसाने में शिं विवयक विवस विवस्ण सूत्र मसवा १ १०० म दिया जाने यासा है।

थोप्याभि सम्बन वा सवसक रूप है। इसवा प्राष्ट्रस रूपान्तर मान्य, हाता है। इसव हर सरवा रे ६४६ से सम्पूर्ण मान्वत-पद शोष्याचि क स्थान पर प्राष्ट्रत में मोन्य रूप को बाहत प्राप्त रेम मंत्रिय्वत् काल ऋषक तुर्ताय पुरुष के प्रयत्नन का बाधक रूप सोच्छ पिद्र ही पाता है।

ग सिष्यामि संग्वत का सविष्यत काल % यक सुनीय पुरुष के एक्षपत का सदर्स किंदि का रूप हैं। इसका ब्राइत स्थांतर गच्छ होता है। इसमें सूच-संख्या, ३ (०१ से मंदूण संग्वत दार्टर व्यासि के स्थान पर ब्राइन में गच्छ? रूप मिद्ध हो चाता है।

सगरचे सरष्टत वियापद का रूप है। इसका प्राकृत रूप संगद्धे होता है। इसके प्राकृत २१७१ स मस्कृत पद करथान पर प्राकृत पद की आदशामानि हाकर संगन्ते पर वी विकर जाता है।

चोडिच्यानि संस्कृत वियापद् का रूप है। इसका प्राष्ट्रत स्वान्तर गेक्द्र होता है। इसके स्व सरया दे ६७१ से सम्बूर्ण संस्कृत पद के स्थान पर प्राष्ट्रत पद का ब्यादेश प्रास्ति हाकर सक्ते हैं। हो जाता है।

इसी प्रकार से रोग मान प्राष्ट्रन हवा म वेष्ट्र, रूप्तं, मोच्छं, छोच्छं, छेच्छं भर्च हैं भीप्त भी सूत्र सरया १ १७१ स ही मास्ट्रीय सरवूण क्रियावरों के रूपों सी प्रसिद्ध रूट हा नाह ही प्राप्ति, होवर कम से ये प्राप्तुत त्रियावर के त्य स्वयसेय और खनायात ही विद्ध हो ठाउँ हैं। ई १००३

सोच्छाद्य इजादिषु हि लुक् च वा ॥ ३-१७२ ॥

सादीनां स्थानं इज्ञादिषु मिष्णदादादेशेषु यथासंत्यं मीष्ट्राद्यो भवन्ति। वै द्वीरे खून्त्य स्वराध्ययववना इत्यर्थः । दिलुक् च वा मर्गति ॥ सान्ध्रिः । पष्टे । मील्डिरि । मील्डिनि । मिल्डिनि । मिल्डिनि

वर्य -सूत्र सत्या ३-१७१ में निन सस्ट्रत धातुओं के प्राकृत क्यान्तर मविष्यत्काल वाचक भगाया क अर्थ में रुढ रूप से प्रदान किय गये हैं, उन रूढ रूपों में वर्तमान शालयोगक प्रहप बोधक पत्यर्थों की मयोजना करने से उसी पुरुष बोधक अर्थ की अभिन्यञ्चना भविष्यतकाल के अर्थ में प्रश्ट हो जाती है। वैकल्पिक रूप से कमी कभी उन रूढ रूपों के आगो भनिष्यत्काल बोधक प्रत्य 'हि' की व्ययना तृतीय पुरुष के मदुभाव में 'स्ना, हा' की व्ययना 'हिस्सा, हित्या' की प्राप्ति भी होती है। सरायात् पुरुप बोधक प्रत्ययों की लोड किया की जाती है। सारांश यह है कि इन ऋड ऋषों मे भविष्यत् काल बोधक मूल प्रत्यय 'हि' का वैकल्पिक रूप से लोप होना है। शेप मन्पूर्ण क्रिया भविष्यतकाल के पर्यंत के अर्थ में अन्य धातुओं के ममान ही इन रुढ प्राप्त धातु रुपों के लिये भी जावना चाहिये। न्याहरण इस प्रकार हैं --श्रोध्यति=सोच्छिड=वह सनेगा, पनान्तर में भविष्यत काल व्यर्थ क मत्यय 'हि' की पारित होने पर ओन्यति का प्राक्तन रूपातर 'मोच्छिहर्' = 'वह सुनेगा' ऐपा ही होगा। ^{प्रथम} पुरुष के बहुत्रचन का दृष्टान्त — भोर्थ्यान्त = सोन्छिन्त और पद्मान्तर में सोच्छिहिन्ति= ने इसो। द्विताय पुरुष क एक प्रवन का दृष्टान्त -- ग्रीप्य मे = ना च द्रिमि आर पत्तान्तर में मोचित्र हैनि = नृ कुनगा। द्वितीय पुरुष के बहत्रचन का दृष्टान्त -श्रोष्यथ=पोच्छि या खीर सोन्छि, पद्मान्तर में-भोक्छिहित्या और साच्छिन्हह=तुम सुनाग। तृतीय पुरुष के एम्बचन का रुप्टान्त -श्रोव्यामि = मोंच्छिम, पत्तान्तर में—साण्डिहिम, मो.च्डिस्मामि, सान्डिहामि, मोच्छिन्म श्रोर मोन्छ=मे सुर्गा। ततीय पुरुष ह बहुवचन का हुब्बान्त --श्रोध्याम =मोच्छि हेमो, पत्तान्तर में--मोच्छिस्सामी, मोच्छि हामो, मोन्छिहिस्सा, मोन्छिहित्या, सोच्छिहिसु श्रीर मोच्छित्मासु तथा साच्छिहासु, सोच्छिहिम षीर सोन्त्रिस्साम तथा मोच्छिहाम =हम सुर्नेगे । इमी सिद्धान्त की सपुष्टि प्रन्थकार पुन 'गम् = गच्छ थातु झारा करते हैं - प्रथम पुरुष के एकवचन का द्वारान्त-गमिष्यति = गब्दिह, पत्तान्तर मे गब्दि-हिस्वह जानेगा । प्रथम पुरुष के बहुयपन का दृष्टा त —गमिष्यन्ति=ग च्छन्ति, पनान्तर में गण्डिहिन्ति चे बावेंगे। हिनीय पुरुष के एकवचन का दष्टान्त —र्गामध्यमि=गब्दिसि, पद्मान्तर म गन्छिहिसि=तू वावगा। हिनीय पुरुष के बहुबचन का दृष्टान्त-गिकियय-गन्दित्या श्रीर गन्छि, पत्तान्तर में र्षोच्छिहित्या श्रीर मिच्छिहिह = तुम जाश्रोमे तृतीय पुरुष के पहत्रान का दृष्टान्त --मिन्यामि = गिन्द्रमि, पत्तान्नर में गच्छि हेमि, गन्छिस्सामि गन्छिहामि, गन्द्रिस्स छोर गण्छ = में बाउँगा। ^{तृग्य} पुरुष के बहुबचन का दृष्टा त —गनिष्याम =गष्टिन्नमो, पचन्तर में गन्दिहिमा, गच्छि।मामा, ^{ग्रीन्छहामो}, गब्द्धिहिस्सा, गब्द्धिहिस्था, गब्द्धिहिसु, गाब्द्धस्मासु गब्द्धिहासु, गब्द्धिस्त, गब्द्धिस्मास द्यार र्थाक्तराण= हम लायेगे। इमी प्रकार से रोप रही हुई उपरोक्त धातुओं के भी रूप स्वयमेव ममक सेन षाहिय ।

चपरीक बदाहरणा में बुछ एक पुरुष बोधक अत्यर्ग में मम्बन्धित बदाहरू वृक्तितर से दिये हैं, व हे स्वयमेव जान लेना चाहिय, वे प्रत्यय इम प्रधार है -ए, न्ते, इरे थी। है।

श्रीरयाति सावृत व मिवय्यत्ववाल प्रथम पुरुष क एक्ष्यपन का सबर्मक कियान वाक्षी इमक भाष्टत रूप सोच्छिद और माच्छिहिइ होते हैं । इनम सूध सम्या ३ १७१ स मून बहुन बनु ४ ६ न्यान पर प्राप्टत में मविष्यतपाल क प्रयोगार्थ 'माच्छ' की चादेश-प्राप्ति, ३१७७ से प्रार्था फच्छ' है श्यित श्रान्त्य स्वर 'श्रा के स्थान पर श्राणे भविष्यतुकाल बोधक प्राथम का सर्भाव होन क कारत सर् यी प्राप्ति, २-१६६ से द्वितीय रूप में प्राप्तांग माश्यि मं भविष्यत्काल क गावनार्थ है' शवर का रू २ १७२ स प्रथम हर म भविष्यतुकाल बोधक प्राप्त प्रथम 'हि' का वक्षिक रूप स सीव कौर रे सि स भविष्यतुकाल क कर्य में हम म प्राप्तांग 'सोचिद्र श्रीर माच्छ'ह' म प्रयम पुरुप के एडवपन इ वर में मातव्य प्रत्यय हैं भी प्राप्ति हाकर सोव्छित और सोव्छिटिङ ह्य मिस हो आत है।

श्रोध्यानित संस्कृत के अविष्यतकाल अथम पुरुष के बहुयचन का सक्ष्मीर कियापर वा सर्थे। इमक प्राप्टत रूप सी।चेळ्ठन्ति और मीच्छिहिन्त होत हैं। इतम मी।च्छ बीर माच्छिर श्रंग रूपें वा प्रा उपरेक्त एकवचनात्मक रूपा के समान ही जानना चाहिये, तत्वरचात मूत्र संख्या ३ १४२ से प्र^{त्राचार ह} के अब में रम स बात्तांग 'सान्छ और सान्छिह' म प्रथम पुरुष के बहुवबन क अर्थ में बालए हरा निन' की प्राप्ति होकर सोच्छिन्ति स्वीर सोच्छितिन रूप निराहा जाते हैं।

श्रोच्याति सरहत के भविष्यतकाल द्वितीय पुरुष क प्रवचन का सहसे विवाद हा हरहै। इसके प्राष्ट्रत कप मोल्छिमि चीर मोल्छिटिसि होते हैं। इनमें 'मा.ल्फ्र चीर मोल्डिटि' क्या की व प्राप्ति प्रथम पुरुष के एक्ष्यन क अर्थ म यर्जिस ववरोट युन सर्वा ३ १७१, ३ ११७, ३ १६६ हो। ३ १७२ में जातना चाहिय, तत्वरवात सुत्र महना ३ १४० स मविष्यत्वाल वे द्या म दम संवार्णन 'मोन्सि और सो न्यहि में द्विनीय पुरुष क छत्रवचन के चर्य में प्रान्वस्य प्रापय 'रेग' का वारित्र इर का म रोनें रूप सांध्यारी और सोध्याधि सिद्ध है। जाते हैं।

श्रीष्यय मंत्रित के मियप्यत्वाल अर्थक दिलाय पुरुष के यद्वयन का अवगेट क्रियांवा वा रूप है। इसके प्राकृत-रूप मो व्यापा मीच्यित माल्यितिस्था, मो विकेत होत है। इसमें 'मो'दर कीर सा। पद्धि' मूल कांग-रूपों की प्राप्ति प्रथम पुरुष वे प्रवचन क कार में विनिष्ठ जनशक सुवन्त्रश ३ १७१, ३ १४४) ३ १६६ और ३-१ वर से जानना पाहिय, लक्ष्मात वृद्ध-मंत्र्या २ १४४ श प्रविद्धार कार्र व कम में कम स मान्त्रीय 'मीच्यु कीर मोल्यिहि' में द्विनीय पुरुष क महुवचा क आप में हम ध प्रा'तस्य प्रत्यय 'हरण कीर ह' का चारी खेती में प्रांति होहर क्षम स चार्ग हप्-'सरे कार्य सोरिजत, मोरिजाहिया चौर सोरिजाहित' मिड हो सान दे। यह त्रिहेपना चौर स्थान है रह हि स्य-मध्या १ १० स प्राप्त प्राद्य 'इ या' के पूर्वस्य स्वर 'ई' का लाव हा जाना है । त्यावान मन क्रिया होगा दे।

श्रोष्यामि सरष्टत के भविष्यत्-काल तृतीय पुरुप के एकवचन का सकर्मक कियापर का रूप है। ् इसके प्राइत रूप सोन्छिमि, सो च्छित्मि, सोच्छिस्मामि, सोच्छिदामि, सोच्छिस्स श्रीर सोच्छ हाते हैं। ्रत्में सूत्र सख्या ३-६७१ से मूल संख्टत घातु 'श्रु' के स्थान पर श्राकृत में भविष्या हाल क प्रयोगार्थं ह 'सोच्छ' की स्रादश गामि, ३ ४५७ से प्रथम रूप स लगाकर पाँचवें रूप तक प्राप्त प्राकृत शब्द 'सोच्छ' ैं म (थित इत्यय स्वर 'क्रें' के स्थान पर द्यारी मविष्यत् काल वाचक प्रत्यय का मद्भाव होने के कारण से ैं हैं को शांति, --१६६ कोर दे-१६७ से द्वितीय रूप, सतीय रूप छीर चतुर्थ रूप में पूर्वोक्त रीति से प्राप्तांग '¦भोरिष्ठ' म भविष्यत काल वाचक प्रत्यय 'हि, स्ता ऋौर हा' की कम से प्राप्ति, ३ १७८ से प्रथम रूप में र्म किंध्स् वारु वाइक प्राम्ब्य प्रत्य क्षेत्र का लोग श्रीर ३-१४८ से मविष्यत् काल के ऋर्यम कला से मार प्रथम, हिर्नाय, तृताय और चतुर्थ रूपाग 'सोन्छि, सोचिछिह, सोचिछ्रामा और मान्छिहा' म तृनीय पुरुष के एक बचन के क्रिथे में प्राप्तिध्य प्रत्यय 'मि' की प्राप्ति हो कर क्रम से प्रथम चार रूप *'सीरिच्छामि* की^६छाहीमें, सा^दछरसामि छौर सामिछहामें सिद्ध हो जाते हैं।

पचम रूप सोव्छिस्स मे मूल-प्राष्टरु-स्थग 'सोच्छि' की प्राप्ति उपरोक्त चार रूपां में विखित विधि विषानानुसार जानना जाहिये, तत्पत्चात प्राप्ताग 'सोच्छि' में सूत्र सख्या ३१-६ से मविष्यत काल क ^{श्रय में तृताय-पुरुष के एक्वचन के माल में कवल 'स्स' प्रचय की हा प्राप्ति होकर एवं शेप समी एत} ^{६थक प्राप्त-च प्रत्ययों का खमाब होकर पचम रूप-'सो/च्छरस किछ हा जाता है।}

हार्हे द सोच्छ' की सिद्धि सुत्र सरया ह-१७१ में की गई है।

थोण्याम सम्बुत के भविष्यत् काल तृताय पुरुष के बहुवचन का सक्रमक क्रियापद का रूप है। ^{१नक प्राकृत} रूप यहाँ पर केवल छह हो दिये गय हैं जो कि इन प्रकार हैं— १ सॉच्छिमो, २ मोच्छि ^{[हम}। ३ सोन्छिस्सामा, ४ सोन्छिहामो, ४ सोन्छिहिस्सा श्रीर ६ सान्छिहित्या । इनम सूत्र सख्या ३ १०१ ^{म मू}ल सस्क्रत घातु 'श्रु' क स्थान पर प्राक्रत में भविष्यत काल के प्रयोगार्था सोच्छ रूप की व्यादेश ^{थाति}, ११५७ से प्राप्ताग 'सोच्छ' में स्थित श्रन्थ स्वर 'श्र के स्थान । पर श्राग मेबिय्यत काल-याचक भरव का सद्माव होन के कारण से इ' की प्राप्ति, तत्वश्वात् द्विनीय, तृत्ताय श्रीर चतुर्य रूपों में सूत्र-^{संद्}वा ११६६ और ३ १६७ से क्रमश भविष्यन काल वाचक भ्रत्यय 'रेह, ज्या श्रीर हा' की प्राप्ति, रे १६२ स प्रथम रूप में भविष्यत् काल वाचक प्राप्तच्य प्रत्यय हि का अववा स्ताका अथवा 'हा' रा वैविह, इ. सप से लोप, खन्त में सूत्र सदया ३ (४४ में उपरोक्त रीति से भविष्यत्र खर्य में प्राप्तांग भान्छ, सोन्छिह, सोन्छिह्मा और सो,न्छहा में तृतीय पुरुष क बहुरचन के अर्थ में प्राप्तव्य प्रत्यय ्रि) वा माति होवर यम से प्रथम चार रूप 'सोव्छिमी, सोव्छिमी, सोव्छिसी, सोव्छिस्सामी श्रीर षो।^हछहामी' सिद्ध हो जाते हैं।

पोंचयें और छट्ठे रूप 'सोन्छिहिस्मा तथा सीन्छिहिस्या' में मूल बद 'सोन्ट्र की प्रापि उप शक्त विश्विष् विषारों के कमुसार ही होकर सूत्र सरया ३ १६= स मविष्यन बाल क अर्थ में एनीय पुरुष

क वयहचन क मदमाय में काल क्रम में 'हिस्सा नथा हित्या' प्रत्यवीं का ही पानि शेक्षा दर हर क वतन्त्रं के प्राप्तन्य प्रत्ययों का स्थाप ही कर कम से वाँचयाँ स्त्रीर स्टटा रूप 'सीरिज्यहिस्सा सीर के सि हित्या' मी मिद्र हो जाते हैं।

गीनव्यति मानुत क भावायम् रास प्रथम पुरुष के एक्ष्यचन का श्रवनेत क्यारा का मार् इमक प्राष्ट्रत रूप गान्छइ श्रीर गान्छिहिइ हात ई। इतन सुत्र मत्या ११०१ समूच मार्ट पी 'राम्' व स्थान पर प्रावृत में भविष्यन काल क प्रयागार्थ 'राज्झ का की बादेश गाति, दे १४० मार्ग्न गुच्छ' में स्थित श्रान्य स्वर् श्र' कर मन पर स्वाग भावेच्या हान वाचक प्रत्येय का मर्भार १३ र कारण म 'इ' की प्राप्ति, ३ न्६० में दिनाय रूप म श्रान्तींग 'ग्रान्त्य' में मंत्रिया कात क काश्राप्त में प्रत्यय को प्राप्ति, रे १०० स प्रश्न-हत्व म मत्वव्यत् काल वायक प्राप्तन्य प्रयय हि'का येव हार हा से लाप चौर ३ १३६ स भविष्यत काल के चथ में इसम न प्राप्तांग 'गस्ति चौर'गर्द्ध में बार पुरुष य गक्त्रचन क अर्थ में प्राप्तब्य श्रयय इ'को सप्राप्ति होकर कम स दानीं हा प्रार्थिता की गारितिहिड' मिद्र हो जाते हैं।

गामिष्यन्ति मण्युत व भविष्यत् काल प्रवम पुरुष के बहुत्रधन का बाहमंह विवादा वा हर्र इसके प्राकृत रूप गन्दिनिन स्वीर गन्दिहिन हाते हैं। इनमं मिवण्वत्कात के सर्घ म मूबकान 'ग्राच्छ और गण्डिहें' को उपरोक्त पहचचन क क्यम म मान्त्रांग रूपों के समान ही शहर दूनर हु। इस ३ १४६ से प्रथम पुरुष क बहुरचन क नार्थ में प्रण्डब प्रत्यय 'निन' की माप्ति झहर अब सर्थे गान्जिन्त छीर गान्जिटिन्ति मिद्ध रा जाते हैं।

माभिष्यासि सम्हत के मित्रप्यत्काल दिनीय पुरुष के एठववन वा श्रवर्गें किया एक वर्गें इसक प्रापृत रूप गांन्युसि चीर गांच्छहिति होत हैं। इनमें भविष्या हाम चर्यां ह चंत हरी हा बाप हर पुरुष क वश्यवन क चर्य में वर्जिन जारोक मुत्र मगवा है १७४, है १४७, है १६६ और है '३२ में हैं है चाहिये, मन्वभात सूत्र मंख्या २-६४० में भावव्यतहास वे स्थम में बन में वारशंत 'मौरद वीर र वर्र र्च द्विताय पुरुष के पहत्रपा ने व्यर्थ में प्राप्तस्य प्रयय कि' की प्राप्ति हाका गारिकारी सीर गरिकार्य ह्य विद्वार अस है।

गामिन्यम भंदरन व माविष्यनदास हिनीय पुरंत र पहुरवत का बादमें ह दिवार वा हारे इमके प्राष्ट्रत हर गरिन्द्रथा, गांचद्रह, गरिज्ञहित्या और ग चहाँके होत है। इसमें मॉवटण्यहाध्याध द्यंग रूप 'गान्यु सीर गान्युंट' बाजावि दया पूत्र प ऊहा वर्शित व्यव पूत्र ह तहरदन ह या क्षित मृत मत्या ३-६७६, २ ११६, ६ १६६ थीर ३ १०२ म ज्ञानना पाहिय, तपावा, व सूर्व है। ३ १४३ म मदिव्यन्त्राल के श्रम में बन में प्राप्नांत 'स रह चीर वश्यिक में क्रिवेद पुरव के पहुंच के बार्ष में क्रम में माजब्द मन्त्रप देन्या और हो को पार्ने चीनी में प्रतित शेवह बार संबारित गरिज्या, मार्रिज्य, मार्रिजित्या श्रीर मार्रिजिय विक हो आहे हैं। इत्रते इसमें श्रीर शिष् चानना चाहिये कि प्रथम ख्रौर र्तृतीय 'रूपों म इत्था' प्रत्यय की प्राप्ति होने पर मूत्र मख्या ११० में श्रग रूप 'गेच्छि ख्रौर गेच्छि हि' म स्थित व्यन्त्य स्वर्ग 'इ' के व्यागे प्राप्त 'इत्था' प्रत्यय में स्थित स्नादि स्वर्ग'इ' का सदुमाव होने के कारण से लोप हो जाता है।

र्गाच्छस्स में मूल प्राष्टत खंग गांच्छ को प्राप्त चररोक्त बार रूपों में वर्णित विधि विधाना सुनार जानना चाहिये। तत्वरचात् प्राप्तांग 'गांच्छ' में सूत्र सट्या ३-१९६ से भविष्यतकाल के धार्थ में तिन्य पुरुष के एकवचन के सद्भाव में केवल 'स्म' प्रत्यय की ही प्राप्ति हाकर रोप मभी पतद्र्यक्र प्राप्यय अलगें का ध्रमाव होकर पद्रमा कप गांच्डस्स सिद्ध हा जाता है।

यह रूप 'गच्छ का सिद्धि सूत्र सख्या-:-१७१ में की गई है।

गामिष्याम सस्कृत के भविष्यत् वाल तृतीय-पुरुष के बहुवचन का अवर्मक कियाव का तर है। इनहें प्राकृत रूप यहां पर वेचल छुद ही दिय गये हैं, नािक इस प्रकार हैं — १ गन्छित्रों, २ गन्छि हों। ३ गन्छित्रस्मानो, ४ गन्छित्रहांग १ गन्छित्रहांगा छोर ६ गन्छित्रहांगा इनमें प्राप्ति रूपात 'गन्धि', हो भाित इस सुत्र से वश्रोक्त तृतीय पुरुष के एक प्रचन के अर्थ में विजित सुत्र मंग्या ३ १७१ तया ३ १५७ ते या ३ १५७ ते या ३ १५७ ते या ३ १५७ ते या ३ १५७ तो व से पात के सा प्राप्त व १ व से से हि हसा छीर हां हो हम म प्राप्ति, ३-१७० से प्रथम हत्व में भित्यत्व काल-यावक प्राप्त अप प्रथम हि स्रथमा हता अथवा हो हा लांप, छोर ३ १४४ से भविष्यत् काल के अर्थ में कम से प्राप्त प्रयम् हि हि हसा छीर पात्र व हों हा लांप, छोर ३ १४४ से भविष्यत् काल के अर्थ में कम से प्राप्त प्रयम्, द्विनीय, तृताय छीर पात्र व भािक्स, गन्छित्रहा से हि हसा छोर गन्छित्रनों, गन्छित्रहा के स्वर्थ में प्राप्त प्रयम के स्वर्थ में प्राप्त स्वर्थ के स्वर्थ में प्राप्त स्वर्थ के स्वर्थ में स्वर्थ से प्राप्त स्वर्थ के स्वर्थ में प्राप्त स्वर्थ के स्वर्थ में स्वर्थ से प्राप्त स्वर्थ के स्वर्थ में स्वर्थ में स्वर्थ के स्वर्थ में प्राप्त स्वर्थ के स्वर्थ में स्वर्थ के स्वर्थ में स्वर्थ के स्वर्थ में स्वर्थ में स्वर्थ के स्वर्थ में स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्थ में स्वर्थ के स्वर्य के स्वर्थ के स्वर्य के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्य के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्य के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्य के स्वर्य के स्वर्य के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्थ के स्वर्य के स्वर्य के स्वर्य के स्वर्य

गण्छिहरमा और गण्छिहत्या में मल कहा भाष्ट्र की श्राप्त प्रवरीक विधिर्श्वकर्ण इ. १३ मार ही होफर सत्र सर्-ा ३-१६८ से मविष्यत काल के द्राध म तृतीय प्रत के बहुबपत हे बहुहार र केवल कम से 'हिस्सा तथा हिस्या' प्रत्यवों की हा प्राप्ति होकर एव शव समी यतभ्यह प्राप्त्य हरहें हा श्रभाव होकर कम से पाँचयाँ तथा छड़ा रूप माच्छिटिरसा श्रीर मच्छिटिरश' भी विद्व हो १३ हो । ३-१७२॥

दु सु मु विध्यादिष्वेकिसमम्त्रयाणाम् ॥३-१७३॥

विष्यादिष्यर्षेषुत्वन्नानामेवत्वेथें वर्त्तमानानां त्रयासामपि त्रिवामां स्थान पर मंद्रय द सु मु इत्येते व्यादेशा मवन्ति ॥ इसउ मा । इसम् तुमं । इसागु कई ॥ देशाः वेच्छसु । वेच्छासु ॥ दकारोच्चारण मापान्तरार्धम् ॥

अर्थ--माहत में प्राप्तस्य प्राप्तार्थक विधि कर्थक और चा श्रीपर्यंत मात है होएड पुष पुमक मत्यय पाये जाते है, परन्तु प्राकृत-मापा म चपरोक्त तीनों प्रकार क सकारी के प्राप्य पर वैग है, होते हैं, तद्रतुमार प्राष्ट्रत-मापा में वक्त-लकारों क शानार्थ प्राप्तस्य प्रवर्धा या विधान दव ग्र दें हर गया है। प्राष्ट्रन भाषा के व्याकरण की रचना करने वाल विद्वान् महानुमाव अपरीण होती दक्षा है लकार्श के कार्य में बालग कालग रूप से प्राप्तव्य प्रत्ययों का विधान नहीं करक एक रा प्रकार र पर्दे या विधान कर देत हैं, ऐसी परिस्थित म वाचक अथवा पाठक की वुद्धि का ही वा करेंडा रह # तं कि यह ममयानुमार तथा मन्यन्धानुमार विचार कश्क यह निर्णय करत कि-वार पर किवास के लगार व्याह्मार्थक है व्यवसा विधि वर्षक है व्यवसा व्यामीपर्यक है। इस सूत्र में उपनेकस्थार्ग रूप में प्राप्तस्य एक्यचन-बाधक प्रयमी का क्षम से विधान किया गया है, हो कि इम प्रशास है -

प्रथम पुरुष के एवयकत के काथ म दु = उ' का पान्ति होती है।

हितीय पुरुष क एउ वचन म मद्माव में 'मु' प्रत्यय झाना है और मुनीय पुरुष ६ १३९९ क करिनात में 'मु' प्रत्य की मयाजना की जाता है। यो तीन प्रकार क पुत्रमें क त्रवया कर्य वपरोक्त सीली सकारों में में किसी भी सकार के प्रवर्शकरण म कारा 'ज, सु मूं प्राच्या का कर दिया साचा दि . चदाहरण दम प्रकार है.-प्रथम पुरुष हे प्रवत्तन का हजाज --मा हम्यु हवा सा क्षेत्र क्रमवा मा क्ष्मातु रूक्षित मान्यह हुँसे ४ दिनीय पुरुष ऋ ग्रव्ययन का इस्टाल्य रूपते हैं भागवा स्वम् इमलान्, स्वम् इस् , स्वम् इस्याः = गुमं इसमू=मृह्म । त्रशयः पुस्यः कः ग्रह्यकः हे इध्यान - चश्म श्मानि, पश्म बसेदम्, कश्म ब्रथामम=कर्त वनामु - . हेर्न् । वश्मल सक्ती ! विषय विषान की मंतुष्ति क क्षित्र हुनरा उद्दारमा इन प्रसार है -धमन कुरन के स्वयंत्रत वर हथा। (म) परदणु, (म) पायेना (म) दरवास्=(म) देम्बर = मन देखा रामवा वन दशा व बर । निर्दे

मुहुप के एकपचन का द्वानत — त्वम) पर्य व्यथवा (त्वम्) पर्यनात, (त्वम्) पर्य , (त्वम्) दृश्या = . (तुमी) पेण्डस्=तू देख, तू देखे स्रथवा तू दर्शनीय यन (श्रथवा तू टर्शनीय हो , तृतिय पुरुप के एकवचन ना न्यान्त -(श्रहम, परयानि, (श्रहम) परयेयम, (श्रहम) दृश्यासम्=(श्रहम्) पेन्छामुझ्में देख्ँ श्रयवा देखन याग्य बने ।

लोट लकार का प्रयोग मुख्यत 'खाज्ञा, निमत्रण, प्रार्थना उपदेश और आशीर्वाद' आदि खार्थ में होता है। जबकि लिड लकार का उपयोग 'सम्मत्र, खाझा, नियेदन, प्रार्थना, इच्छा, खाशीर्वाद, आशा तथा शक्ति' छादि छथों में हुछा करता है।

प्रथम पुरुष के प्रस्वचन के ऋर्य में प्राप्तव्य प्रत्यय 'उ' है, परन्तु सूत्र में 'उ' नहीं लिए कर हैं का उल्लेख करने का तास्पर्य केवल टचारण की सुविधा के लिये हैं। डीसा कि यही अर्थ सूत्र की पृत्ति में प्रश्च मापान्तरार्थम्' पर से श्वभिव्यक्त किया गया है।

हसतु. हसेत् श्रीर हस्यात् सस्कृत के क्रमश श्राझार्थक, विधि श्रर्थक श्रीर श्राशीपर्थक क प्रथम पुरुष के एकवचन के अकर्मक क्रियापद के रूप हैं। इन सभी रूपों के स्थान पर प्राप्टत में समान रुप स पक ही रूप इसउ होता है। इसमें सूत्र सरया ४२३६ से इलन्त प्राष्ट्रत धातु 'इसू में विकरण प्रत्य 'श्र' की प्राप्ति स्त्रीर ३१७३ से मूल प्राकृत धाषु 'हस' में उक्त तीनों लकारों के दर्य में प्रथम पुरुष ह प्रवचन के सद्भाव में प्राकृत में 'छ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर हस्तउ रूप मिद्ध हो जाता है।

'सा' सर्वनाम रूप की सिद्धि सूत्र सख्या है-हह में की गई है।

ह्स अथवा हसतात. हसे और हस्या साङ्त क कमरा आज्ञार्थक, विधि-अर्थक ओर भाशायथ क के द्वितीय पुरुष के एक वचन के अकर्मक कियापर के रूप हैं। इन सभी रूपों क स्थान पर भारत में समान रूप से एक रूप इससु होता है। इममें सूत्र सरया ४-२३६ से हलन्त प्राष्ट्रत घातु 'हस्' में विरुख प्रत्यय 'ख' की प्राप्ति और ३ १७३ से प्राकृत में प्राप्तांग 'हस' में उक्त तीनों लकारों के अर्थ मे ^{हिनाव} पुरुष के एम्बचन के सदुभाव में प्राक्षत में सु प्रत्यय का प्राप्ति हो कर हस्तमु रूप सिद्ध हो वाता है।

'तुम' सर्वनाम का मिडि सूत्र सख्या ३-९० में की गई है।

हतानि, हत्तेयम् और हस्यासम् सस्टुत के कमश आज्ञार्थक, विधि अर्थक और आर्शीप पंड ह हाताय पुरुप के एकवचन के अक्रमक कियापद के रूप हैं। इन समी रूपों के स्थान पर प्राष्ट्रत में हमान रूप से एक हो रूप हतासु होता है। इसमें सूत्र सरवा ४-२३६ से इलन्त प्राष्ट्रत चातु 'हम्' में दिश्रत प्रत्यय 'ख' की प्राप्ति, १-१४४ से प्राप्त विकरण प्रत्यय 'ख' के स्थान पर 'खा' की प्राप्ति और े १०१ स शहत में मास्तान (इसा' में उक्त दीनों लकारों के अर्थ में हतीय पुरुष क एरवपन के सदूमाय वे मास्त में 'मु' प्रत्यय की मान्ति हो कर हसामु रूप सिद्ध हो जाता है।

'अष्ट' मयनाम रूप की मिद्धि गूत्र सख्या हे-१०५ में या गई है।

परयतु, पर्वेत् और टस्यात् सरहत क बनश खाजार्यक, विधि धर्ष ६, भी धणा क प्रथम पुरुष क एक्वचन क अवर्धक कियापर क रूप हैं। इन सभी रूपों के खान पर शहर दें। हत्य से एक हा हत्य पेच्छ र होता है। इसमें सूत्र मंत्या ४ १८१ से मृत संस्कृत पातु हुश ४ १५० प्राफुन में 'पेच्छ' रूप की खादेश प्राप्ति और ३ १७३ से खादेश प्राप्त प्राप्त पागु परर्द में रण लकारों के चर्या में प्रथम पुरुष के एकपचन के सदुमाय में प्राइत में केवल व बन्दर की प्रति ह पेच्छउ रूप मिद्र हो जाना ई।

पर्य, पर्यतात पर्ये और एस्या संख्त के त्रमश छातार्थक, ति ध्वंव सार्रापर्य क लिड के दितीय पुरुष के गड़वचन के सहर्मक क्यापर के स्पूर्व । इन की हरेड वर प्राष्ट्रत में समान रूप सं एक रूप पेन्छतु होता है। इसमें सूत्र संन्या ४ ग्टर स मून संनर 'दरा' क स्थान पर प्राकृत में पेन्छ की छादेश-प्राप्ति और ३-१७३ स श्रादेश प्राप्त धार्^{त एप} में उक्त वीनों लवारों क व्यर्थ में द्विवीय पहुंच के वक्तवचन के सदुभाव में प्राप्तत में प्राप्तत में प्राप्तत म होंकर पेष्छम रूप सिद्ध हो जाता है।

परचानि, परचेयम् और टर्गासम् साकृत क काश काशार्थं क विधि वर्णं र की अण्य थ मुतीय पुरुष क पत्रवचन के सक्ति हिम्यापद क रूप है। इन सभी रूपों व स्थान पा स दृष्ट्र ह रूप में एक ही रूप पेच्छामु होता है। इसमें सुत्र सख्या ४ (मा से मून संस्कृत यातु 'हरां' व स्वय प्राष्ट्र में 'पेश्द्र' की आदेशप्राप्ति, ३ १४४ में आदेश प्राप्त पातु 'पेश्द्र' प श्विम कम्पान्तर प्र स्थान पर 'खा' की प्राप्ति कीर 🖫 १७३ से ब्राइत में ब्रान्तीय पेल्या' में उत्त नी में सहारी है 🕾 तुतीय पुरुष के एक्यमा हो सद्माय संभाउत से मु' प्रत्यय की प्रांति होक्द फंडाएए अन (६६ लाता है। ३-१७६ ॥

सोर्हिर्वा ॥ ३–१७४ ॥ ।

पूर्व सव विहितस्य मी: स्थानं दिसादशी वा मानि ॥ देदि । देस ॥

गर्थ -चाद्यार्थ क कर्यात लोट-एकार के, विधि-वर्ष कर्यात तिह,-महार द बीर द भं क-लिक्काकार के दिनीय पुरव के सहयवार के कार्य स माहरू में सुत्र मीरवा ने देवी है हिंग प्रत्यय का विधान क्षित्रा गया है, तम प्राप्तस्य प्रस्तर भू' क स्वात पर बेर्ड हिन्छ अप से हि इस्स चारेरा मालि होती है। इन यकार से माइल-माया में उठा ती में महार बालकार। के 15 निवृत्य पहण्यन के सद्भाव में देर बरवरों की प्राध्न हो कारों है, जो कि इस मकार हैं -(!) वृं की 'हि' । मुख्य प्रस्त्य में: 'मु' हो है, बिग्नु वैद्दृष्टिक एवं से इस 'हि। प्रन्यम की मा वर्ष 'सु' प्रन्यक का

पर बादग प्राप्त हुआ करती है। जैमे -देहि (=दत्तात), दद्या और देवा =देहि श्रीर देसु=तू दे, तू ने वाला हो और तू देने योग्य (दाता) हो । इस प्रकार से चन्य प्राकृत बातुओं में भी उक्त तीनों प्रकार हे लकारों क द्वितीय प्ररूप के एक्वचन के सद्भाव में सूत्र सरया ३-१७३ से प्राप्तब्य प्रत्यय 'सु' के स्थान ा 'हि' प्रत्यय की खादेश प्राप्ति बैक्कियक स्टब्स से की जा सकती है।

होह, इत्ताल, दद्या श्रीर देया संस्कृत के कमश श्राज्ञार्थ के, विवि श्रार्थ के, श्रीर श्रार्श व र्गंक द्वितीय पुरुष के एक्यचन के सकर्मक क्रियापद के रूप हैं। इन सभी रूपों के स्थान पर प्राकृत स ामान रूप से दो रूप-'देहि श्यीर देस्' होते हैं। इनमें सूत्र सख्या ४ २३८ से मूल प्राकृत-घातु 'दा' म खत अन्त्य स्वर 'आ' के स्थान पर ए' की प्रास्ति, तरव्यातु प्राकृत में प्रास्ताग 'दे' में कम से सुत्र सख्त्रा । १७४ से तथा ३ १७३ से उक्त तीनों प्रकार के लकारों के द्वितीय पुरुष के एकवचन के सदभाव में क्रम म 'हि' और 'सु' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर *हे।* हैं ' और देसु' रूप सिद्ध हो जाते हैं। ३-१७४॥

त्रत इन्ज स्विन्ज हीन्जे-लुको वा ॥ ३-१७५ ॥

श्रकारात्परस्य सो: इन्जस् इन्जिहि इन्जि इत्येते लुक च श्रादेशा वा भवन्ति ॥ हमे ^{नसु} । हसेज्जहि । हसेज्जे । हस । पद्मे । हससु ॥ श्यत इति कि**म** । होसु ॥ ठाहि ॥

अर्थ - आज्ञाधोक, विधि अर्थोक और आशीपर्थोक के दिनीय पुरुप ने एक्वचन के अर्थ में ^{ाहन स} सूत्र सरमा ५-१७३ म जिस सु प्रत्यय का विधान किया गया है उम प्राप्तब्य प्रत्यय 'सु' के यान पर फेवल 'प्रकारान्त घातुओं में ही बैक्लियक रूप से 'इज्ञ सु श्रथवा इज्जें प्रस्पर्या ी आदेश प्राप्ति हुआ। करती है। इस प्रकार से प्राकृत भाषा में उक्त लकारों के द्विनीय पुरुप के निष्पत के सद्भाव में फ्लिल श्रकारान्त घातुश्रों में चार प्रस्ययों की प्राप्ति हो जाती है। जो कि इम कार है -(१) 'सु', (२) इजासु, (२) इजाहि और (४) इज्जे। मुरय प्रत्यय तो 'सु' ही है, किन्तु हिरिपक हव से इन तीनों प्रत्ययों में से किमी भी एक प्रत्यय की कभी वभी उक्त 'तु' प्रत्यय के स्थान पर ^{प्रा}रेश प्रास्ति हो जाती है। कभी कभी ऐसा भी नेखा जाना है कि उपरोक्त चाग प्रकार के प्रस्ययों में स हमीं भी प्रकार के प्रत्यय की संयोजना नहीं हो हर अर्थात उक्त प्रत्ययों का मर्वथा लोप होकर वेपल मृल ^{राष्ट्रत} थातु के 'श्राविक्ल रूप' सात्र के प्रन्शंन से अथवा बोलने से उक्त लक्षारों क द्वितीय पुरुष प ^{7६६२ त} क श्रर्व में 'भाषाभिष्यक्ति' श्रर्थात् वैसा श्रर्थ प्रस्ट हो लाखा ई। इम क्वार से बस्त भार ^{रहार क म}यर्गे के ऋतिरिवत 'प्रस्यय लोप['] वाला पाँचगाँ रूप चौर ज्ञानना पाहिये। यह स्थिति देवल प्रकारान्त घातुर्घों के लिय ही जानना चाहिय । उदाहर ग इस प्रकार है —(स्वम्) हम घथवा हमतात् ्षिम्) हसे और (त्वम्) हस्या = (तुम) हसेजाषु, हसज्जिह, इसक्ने और हम। वज्ञान्तर में 'हमनु' मा होता है। इन सभी रुवों का यही हिन्दी अर्थ है कि—(तू) हैंन, (तू) हैंने और (नृ) हैंनने पाला **t** #

'अह' मर्वनाम रूप की सिद्धि सूत्र सरुवा है-१०५ में की गई हैं।

परचतु, परवेत् थौर हरयात् साइत के हमरा खाहार्यक, विधि धर्यक, चौर साहर के प्रथम पुरुष के एकवचन क ख़क्सेक कियापद क रूप हैं। इन सभी रूपों के स्वान पर प्राहन में द रूप से एक ही रूप पेन्छन होता है। इनमें सूत्र सरया ४१ दर से मून सम्बत धातु 'हरा के बात प्राकृत में 'पेन्छ' रूप की खादेश प्राप्ति और ३१७३ से खादेश प्राप्त प्राष्ट्रत धातु पेन्छ' नेन्छ। लकारों के खर्य में प्रथम पुरुष के एकवचन के मद्भान में प्राकृत में केवल 'च प्रत्यव हा प्राप्ति हैं फेन्छछ रूप मिद्ध हो जाता है।

परय, पश्यतात पश्ये थोर हत्या सस्तृत के कमश णाजार्थक, विशिष्यं श्रियाप्यं के तिह के दिनीय पुरुष के एकवधन के सकर्मक कियाप्य के रूप्हें। इन समी रों का पर प्राष्ट्रत में समान रूप से एक रूप पेच्छता होता है। इसमें सूर्व सल्या ४ १८१ स मून सरा। 'हरा' के स्थान पर प्राप्तत में 'पेच्छ की आदेश प्राप्ति और ३ १७३ से आदेश प्राप्त पादु प में वक्त तीनों लगारों के अर्थ में द्वितीय पुरुष के एकवचन के सद्भाव में प्राष्ट्रत में 'तु' म्यय के प्रहे कर पेच्छता स्पर्त हो कर पेच्छता स्पर्त हो साता है।

परयानि, परयेगम और दश्यासम् साम्छत के क्रमदा खाझार्थ व विवि धर्य व खीर खाणा के सर्वाय पुरुष के परुवचन के सकर्मक कियापद के रूप है। इन सभी रूपों के स्थान पर प्राहन ने का रूप से एक ही रूप पेच्छास होता है। इतमें सून सख्या ४ देन्द्र से मूल साम्छन घातु 'दश' के खान प्राप्त में पेच्छ' को खादेश प्राप्त , ३ १४४ से खादेश प्राप्त घातु 'पेच्छ' म स्थित खत्य व्यार' के स्थान पर 'खा' की प्राप्ति और ३ ६७३ से प्राप्त में प्राप्तीय वेच्छा' में चक्त तीनी सहारों है द्व्य तृतीय पुरुष के एक्यचन के सद्माय में प्राप्तृत में 'सु' प्रत्यय की प्राप्ति होकर पेच्छान रूप विद्र जाता है। ३-१७३॥

सोर्हिर्ना ॥ ३-१७४ ॥

पूर्व सूत्र विहितस्य सी: स्थाने हिरादेशी वा मनति ॥ देहि । देस ॥

अर्थ — आज्ञार्य क अर्थात लोट-लकार के, विधि-अर्थक अर्थात् लिड,-लकार क और खार य क-लिट लकार ने हितीप पुरप के एकवयन के अर्थ में प्राष्ट्रत में सुत्र तंदवा र १७२ में दिन प्रत्यय का विधान विचा गया है, एस प्राप्तव्य प्रत्यय 'तु' के त्यान पर वैकित्वक रूप म 'ति' प्रच्य ' आयेश प्राप्ति होती हैं। इन प्रकार से पाष्ट्रत-मापा में उक्त तीनों प्रचार के लकार्श के हितीयपुर्व एकवयन के सद्भान में दो प्रत्ययों की प्राप्ति हो लाती है, जो कि इम प्रकार हैं —(१) वु' और्र 'हि'। मुख्य प्रत्यय तो तु' हो है, किन्तु वैकित्वक हर से इम हि' प्रत्यय की मी उक्त 'तु' प्रत्यय के गी

अत इन्ज स्विन्ज हीन्जे-लुको वा ॥ ३-१७५ ॥

श्रकारात्परस्य सो: इज्जसु इज्नहि इज्जे इत्येते छुक् च श्रादेणा वा भनिन्त ॥ हमे-प्नमु । इसेज्जहि । हसेज्जे । हस । पद्मे । इससु ॥ श्रात इति किम् । होसु ॥ ठाहि ॥

अर्थ — श्राह्माध क, विधि व्यर्ध क चीर श्राह्माय क के हितीय पुरुप वे एक्वचन के श्राय में प्राह्म स सूत्र सर्या प्-१७३ स जिम सु प्रत्यय का विधान किया गया है उम प्रान्तव्य प्रत्यय 'सु' के स्थान पर केवल प्रकारान्त धावुओं में हो वैदिल्दक हर से 'इज्ज्ञ श्रुष्यवा हजार श्रुप्य प्रत्यय 'सु' के स्थान पर केवल प्रकारान्त धावुओं में हा नेवित्त हफा सापा में उक्त लहारों के हिनीय पुरुप के एक्वचन के सहसाव में केवल श्रुप्त हो श्रुप्त हो से प्राह्म हो सापा में उक्त लहारों के हिनीय पुरुप के एक्वचन के सहसाव में केवल श्रुप्त हो श्रुप्त हो श्रुप्त हो है। जो कि इत प्रह्म है से (भ् 'तु', 'तु', 'द्) इज्ज्य हु और 'सु') इज्ज्ञ । सुन्य प्रत्यय की 'मु' ही है, किन्तु प्रदेश के हम तीनों प्रत्यों में में किसी भी एक प्रत्यय को क्षी कभी उक्त 'तु' प्रत्यय के स्थान पर प्राव्या की प्रत्यों है। कभी कभी तेमा भी देखा जाना है कि उपरोक्त पार्ग प्रकार के प्रस्यों में में किसी भी प्रकार के प्रत्यय की सयो ना नहीं होकर धर्थांत उक्त प्रत्ययों का मववा लोव होकर केवल मूल प्रत्या सा के भ्या केवल हर्य मात्र के प्रत्यों के प्रविश्व हर्य मात्र के प्रत्यंत से प्रथा प्रवट हो जाता है। इम प्रकार से उक्त पर प्रवार के प्रयाद केवल प्रदेश मात्र कि प्रयोद से स्वर्य की स्वर्य प्रवट हो जाता है। इम प्रकार से उक्त पर प्रकार के प्रयाद केवल पर प्रवार के प्रत्यों के प्रविश्व केवल स्वर्य प्रवट हो जाता है। इम प्रकार से उक्त पर प्रवार के प्रयाद केवल पर प्रवार केवल स्वर्य प्रवट हो जाता है। इम प्रकार से उक्त पर प्रवार केवल स्वर्यों केवल हर्यों केवल हर्यों केवल हर्यों हिल्ल केवल से प्रवार केवल स्वर्यों केवल हर्यों केवल ह्या ह्या केवल हर्यों केव

प्रकृत — केवल श्रकारान्त घातुओं क लिये ही ही उपरोक्त चार प्रययों का बैहिनक क्या क्यों किया गया है? श्रन्य स्प्रशन्त घातुओं में इन प्रस्थयों की सयोगना का विधान क्यों नहीं कि गया है?

उत्तर — चूँ कि प्राष्ट्रत-भावा में खकारान्त घातुओं के खातिश्क थाय स्वरान्त भंदुर्ध में तकारों से सम्बन्धित दिसीय पुरूप के एकवचन के खर्य का जिमस्यक्ति म केवल हो अत्य 'तु' है 'शि' की प्राप्ति धी पाई जाती है, इसिलये परम्परा के प्रतिकृत विधान हरना खनुषित एर क्युड़ है, हि टिप्टिकी ए से पेयल खकारान्त-घातुओं के लिये ही उपरोक्त विधान सुनिक्षित विधान था है। इत्या शान्त घातुओं के उदाहरण इस मकार हें — (स्वम्) भव खधवा भवतान (त्वम्) भवे थीर (त्रः भूत्। = (तुम) होष्ठ = तू हो खयवा तू हो वे खयवा तू होने योग्य हो। दूसरा उत्राहरण इस वहार है (त्वम्) तिष्ठ खयवा विष्ठतात, (त्वम्) तिष्ठ खौर (त्वम्) तिष्ठ खयवा विष्ठतात, (त्वम्) तिष्ठ खौर (त्वम्) तिष्ठत्वा = (तुम) जाहि = तृगर, उहरे खौर तृजहरने योग्य हो। इस उद हरणों में दी गई - घातुर्षे 'हे' और ठा' कम से बोहारात्व ई खाकारान्त हैं, इसिलये सूज सख्या ३-१७४ क निधि विधान से अनारान्त नहीं होने क वारण मध् श्वीतों लकारों के दितीय पुरुप के एकवचन क खर्य में प्रकारान्त घातुर्खों में प्राप्तिय प्रत्य के एकवचन क खर्य में प्रकारान्त घातुर्खों में प्राप्ति इनमें नहीं हो सकती है। इसिलय यह सिदात निश्चित हुखा कि बवत प्रशा घातुर्खों में हो उक्त चार प्रत्य कोड़े जा सकती हैं, ख य स्वरान्त घातुर्खों में ये चार प्रयय नहीं वोई। सकती हैं। इसिलय विधान से अवश्वा निश्चत हुखा कि बवत प्रशा

हस अथवा हसतात हसे और हस्या माइत के क्रमश आझार्थक, विविध्यं कर्ष कारापिर्थक के द्वितीय पुरुष के प्रविध्यान के अर्क्षक क्रियावर कर वहीं । इन सभा स्वां के प्रविध्यान के अर्क्षक क्रियावर कर वहीं । इन सभा स्वां के प्रविध्यान के अर्क्षक क्रियावर कर वहीं । इन सभा स्वां के प्रविध्यान क्ष्य स्वां स्वां स्वां पर वॉच स्व दिये से हैं, जो कि इस मशार हैं -(१) हमजात, (१) हमजी (३) हमजी अर्था तीन स्वों से सूत्र स्वां १ १० से सूत्र में अर्था तीन स्वों से सूत्र स्वां १ १० से सूत्र में अर्था तातु (इसे में सिवत अन्त्य स्वर 'अ्य' क आगे प्रविध्य प्रव्या 'इंग्रजित इंग्रिं की इसे 'इं' स्वर का सद्भाव होने के कारण से लोग, २ १७४ से आइत में प्रविद्यान हम्यों 'हम' में वितीं तकरों के अथ में द्वितीय पुरुष के एक्वचन के सद्भाव म प्रावृत में क्रम स 'इंग्रजन, इंग्रिं की इक्त प्रविधीं की प्राप्ति और '-१ इल्लिन-प्रांग 'हम्' के माथ में बक्त प्राप्त प्रवां की मिथ होकर हिन्ह हमें इसे जीर इसे के स्विध हो जाते हैं।

चतुर्य रूप 'हस' में मूल अकारान्त धातु 'हस' क साय में सूत्र सरवा दे १४५ व उठ प्रारा प्रत्यों का लीप होकर चित्तियित लकारों क अर्थ में दिनीय पुरुष के एक्वचन क सहमें म 'हल' हैं सिद्ध हो जाता है।

वाँचवं रूप 'हसमु' की निद्धि सूत्र संख्या ह-१७३ से का गई है।

भव अथवा भवतात, भवे और भूया सरहत के कमण आहार्थक, विधि अर्थक, और श्राशापर्यंत्र वे द्वितीय पुरुष के एकवचन के ध्यकमंत्र कियापद क रूप हैं। इन सभी रूपों के स्थान पर शहत म समान रूप से एक ही रूप धोस होता है। इसमें सूत्र सर्या ४-६० से मूल संस्कृत धाद 'मू = ^{मब्' क} स्थान पर प्राकृत में 'हो' रूप की आदेश प्राप्ति और २ (७३ से प्राकृत म आदेश प्राप्त पातु श्रद्ग 'हो' में उक ताना लगारों क 'अर्थ म द्वितीय-पुरुष के एक उचन क सहमाय में 'सु' प्रत्यय की प्राान्त शकर प्राप्त कियापद का रूप होसु सिद्ध हो जाता है।

तिष्ठ श्रथमा तिष्ठतात् तिष्ठे श्रीर तिष्ठया सम्बन्त क कमश खाज्ञार्यक, विधि खर्यक खीर षाशापर्यक्र द्वित्य पुरुष क एकवचन के श्रवर्मक क्रियापद के रूप हैं। इन सभी रूपों क स्थान पर प्राष्ट्रत गमान रूप स एक हो रूप ठाहि होता है। इसमें सूत्र सख्या ४-१ स मृत सस्क्रन घातु 'स्था = तिष्ठ्' ह स्थान पर प्रावत में 'ठा' रूप का ऋदिश प्राप्ति और ३ १७४ से शकुत में खादेश प्राप्त धाद छड्ड 'ठा' म उक्त तानों लकारो के अर्थ म द्वितीय-पुरुष के एकवचन के सदुभाव म 'हि' प्रन्यय की प्राप्ति हो कर 'राहि' रूप सिद्ध हा जाता है। ५-१७४॥

बहुषु न्तु ह मो ॥ ३-१७६॥

निध्यादिपूत्पन्नाना बहुप्पर्येषु वर्तमानाना त्रयाखा त्रिकाखा स्थानं यथासख्य न्तु ह मो ^{हिरोत} यादशा भवन्ति ॥ न्तु । हसन्तु । हसन्तु हसेयुर्वा ॥ ह । हसह । हसत । हसेत या ॥ मो । मामो । इसाम । इसेम वा ॥ एवं तुवरन्तु । तुवरह । तुवरामी ॥

अर्थ - संस्कृत में प्राप्त आज्ञार्थक, विधि अर्थक और आशी,पर्यक क प्रथम द्वितीय आर तृतीय ९६२ व हिमचन में तथा बहुबचन में जो प्रत्यय घातुकों में नियमानुसार सयाजित किये जाते ई, उन भन व प्रचयों क स्थान पर प्राकृत म जिन छादेश प्राप्त प्रत्ययों की उपलब्धि है, उनका वियान इम स्प्र में रिया गया है, तदतुसार प्राप्टत घातुका म उक्त लकारों क क्षय में प्रथम-पुरुष क सहुबचन में 'न्तु' भाग का आदेश आंत्र होती है, द्वितीय पुरंप क बहुत्रचन में 'ह' प्रत्यय का मद्माव होता है श्रीर छनीय 589 क बहुवचन म 'मो' प्रत्यय का ध्वादेश भाव जानना चाहिये। यों तीनों लकारों के द्विययन प तथा बुद्धान क प्रत्ययों के स्थान ।र कथल एक एक प्रत्यय का ही हम से न्तु, ह श्रीर मों हा प्रथम पुरुष में दिवीय पुरुष में और स्तीय पुरुष में आदेश श्रामि जाननी चाहिये इनक कम से उदाहरण इस महार हैं --

न्त्रं मण्यय का उदाहरण — हसन्तु, हमेयु श्रीर हस्यासु = हमन्तु=ने हँसे, ये हँमते रहें घाया रहेमने चो पर हों । द्वितीय पुरुष के बहुवचमार्थ ग्लय 'ह' का उदाहरण —हमत, हमत स्रोट हस्यास्त=

हसन्त, हसेयु बार हस्यासु सास्त्रत क वमरा बाहार्थक, विधि बर्थक ब्रांर बाहार प्रथम पुरुष क बहुवचन क अकर्मक प्रस्तेपदीय नियापद के स्पे हैं। इन समा स्पों क खान पर प्र म समान रूप से एक ही रूप हमन्तु होता है। इसमें मूत्र मर्या ४ व्हर से प्राइत हक त पाष्टु (व किस्पा प्रत्यय 'श्व' की प्राप्ति ब्रीद १-१७६ से प्राष्ट्रत में प्राप्तांग हस' में उक्त तोर्शे प्रकार के क्यों व्यर्थ में प्रथम पुरुष के बहुबचन के सद्भाव में प्राप्तत में 'न्तु' प्रत्यय की प्राप्ति हाकर हसन्तु ह्यां हो जाता है।

हसत, हसेत और हस्यास्त संख्त क कम्य खाद्यार्थक, विधि खर्थक, श्रीर बार्शार्थ द्वितीय पुरुष के बहुजयन क खर्मक परमंपरी क्रियापर क रूप है। इन मभी रूपों क स्थान घर प्रार्थ समान रूप स एक ही रूप 'हसह' होता है। इनमें सूत्र मख्या ४-२६ से स्टब्स प्राप्त पाष्टु 'हम विकरण खन्य 'ख' वी प्राप्ति और ३ व्हर्स से प्राप्तुत में प्राप्तीय दक्ष में तरक सीती प्रकार के ह्वरां अप में द्वितीय पुरुष क बहुज्यन क मद्माय में प्राष्ट्रत म केरल एक ही अध्या 'ह' का प्राप्ति ह 'हसह' क्रम निम्न हो जाता है।

हराम हसेम श्रीर हरवास्म मश्कृत के बमशा उपशक्त नीर्ने प्रवार के लकारी रे हैं? पुरुष में बहुवयन के ब्रावर्भन परसीवण कियापर में सब हैं। इन समी रूपों के स्थान पर शहन में स रूप में एक ही रूप हमामी होता है। इनमें सूत्र-सण्या ४ २३६ स हल त आकृत वातु 'हम' में दि। प्रस्मय 'ख' भी प्राप्ति, रे १४४ से प्राप्त विकरण प्रस्मय 'ख' के स्थान पर आ' की प्राप्ति श्रीर ३ १४ _{ाष्ट्र} में प्राप्तम हमा' में एक्त तीनों प्रकार के लकारों के चर्च में तृतीय पुरुष के बहुवचन के सद्भाव में ब्ह्र में बतल एम हा प्रत्यय मो' थी प्राप्ति होकर हसामो रूप सिद्ध हो जाता है।

. तरताम्, त्वरेरत् श्रोर त्वरियीरम् सम्झव के बमश उक्त तार्नो लकाश ने प्रथम पुरुष के हिवचन क श्रव में क श्रासनेपदी हिवापद के रूप है। इन सभी रूपों क श्यान पर प्राकृत में समान रूप । एक ही रूप तुवर तु होता है। इसमे सूत्र मख्या ४ १०० से मूल सम्झत घातु 'द्रर्' के श्यान पर प्राकृत ' 'वुवर' की श्रादश प्राप्ति श्रोर ३ १०६ से उनत तीर्नो लकारों के प्रथम पुरुष के बहुवचन के सद्भाव म । इन, में प्राप्तों तुवर' में 'नतु' प्रत्यय नी प्राप्ति होकर तुवरन्तु रूप सिद्ध हो जग्ता है।

स्वरध्वम्, स्वरध्वम् श्रीर स्वरिपीध्वम् सस्कृत के क्रमश उक्त तीनां प्रकार के लकारों के द्वितीय हिंप के बहुवचन के श्रकर्मक श्रास्मनेवदी क्रियावद के रूप हैं। इन सभी रूपों के स्थान पर प्राकृत में अगान रूप स एक हो रूप बुचरह होता है। इसमें सूत्र सख्या ४-१७० से मूल सस्कृत घातु 'स्वर' के स्थान र प्राप्टत में 'बुचर' की श्रादेश प्राप्ति श्रोर ३ १७६ से उक्त तीनों लकारों के द्वितीय पुरूप के बहुवचन के वय में प्राकृत में प्राप्तीन 'तुवर' में 'ह' प्रयय की प्राप्ति होकर तुन्दरह रूप सिद्ध हो जाता है।

्ल्समहै, ल्रेसमिह श्रीर त्यारियांमिह सम्युत के कमरा उक्त तीनों मकार के लकारों के तुन्य गृर के बहुवचन में श्रवस्मक त्यात्मनेवनी कियापद के रूप हैं। इस सभी ह्वां के स्थान पर प्राष्ट्रत में भान रूप सफ्ट कात् प्राप्त के स्थान पर प्राष्ट्रत में भान रूप सफ्ट कातु 'स्वर' के स्थान रूप सफ्ट कातु 'स्वर' के स्थान रूप साइत में 'तुवर की खादश प्राप्त, ३ '४४ से खादेश प्राप्त घातु श्रव्ह 'तुवर' में स्थित खात्य स्थान रूप श्राप्त भी प्रत्य का सद्भाव होने के कारण से 'खा' की प्राप्ति श्रीर ३-१७६ में भाष अन्त था 'तुवरा' में इक्त तीनों प्रकार के लकारों क तृतीय पुरुष के बहुवचन के अथ में प्राप्टत में भी भाषा की प्राप्ति होकर तृत्वरामी हप सिद्ध हो जाता है। ३-१७६॥

वर्तमाना-भविष्यन्त्योश्च उज उजा वा ॥३-१७७॥

वर्तभानाया भिन्दिनस्याश्च निष्पादिषु च निहितस्य प्रत्ययस्य स्थाने जन जना इत्येता । दिनी ना भनतः । पत्ने यथा प्राप्तम् ॥ नर्तमाना । हसेजन । हसेजना । पढेजन । पत्ने । हसेजन । हसेजन । एते । विशेषा । पत्ने । हसेजन । हमेद्रा इत्यर्णः । पर्वे । हमेद्रा । पर्वे । प्रत्रे । पद्मीयत्रये । शहराएजना । श्ववनायानेजना । न ममणुनामानेजना । श्रम्येतन्यासामपीच्छन्ति । होजन । भनति । भनेत् । भनत् । श्रम्यत् । श्रम्यत् । भनिता । भविष्यति । श्रमनिष्पद्वेत्यर्थः ॥

अर्थ - प्राष्ट्रत मापा में वर्तमानकाल के, भविष्यतुकाल के, चानार्थक, विश्व प्रमुक्त हैर आशीपथक के तीनों पुरुष के बोनों वचनो म प्राप्तव्य सभी प्रकार क प्रत्यवों क स्थान पर बैझेलाइन से 'ज श्रीर जा' प्रत्यवों की आदेश प्राप्ति हुआ करती है और इस प्रकार क्वल ज अर्था मा प्रत्यय की ही सयोजना वर देने से उक्त तकारों के किमी भी प्रकार क पुरुष के किशा भी दवन हा हा सदर्भ के अनुसार उत्पन्न हो जाता है। यह विश्वत चैकिन्यक है, अताव पनान्तर में उक सहागे द प म महे गये प्रत्ययों की प्राप्ति भी यथा-नियमानुसार होती ही है। वर्तमानकाल का रशका मा हैं —हसति, (हसन्ति, हससि, हसथ, हसामि श्रीर हसाम)= हसैज और हसेज्या = पता ता मैन्स (इसए, हसन्ति, हसन्त, हसिरे, हसाम, हससे, हसित्था, इसह, हमामि, हसामी, हमामु और हमाम) वह हैंबना है, (वे हेंबते हें, तू हैंबता हे तुम हेंबते हो, में हैंबता हू और हम हैंबत हें।) दूबरा *" हर्ण —पठति-(पठन्ति, पठसि, पठथ, पठामि खोर पठाम)= पहेज खोर पढाना=पना तर मैना। (पढण पढिन्त, पढन्ते, पांडरे, पढिस, पढसे, पढित्था, पढ़र, पढामि, पढामी पडामु और पडाम ने पढता है (व पढते हें, तू पढता है, तुम पढते हो, मैं पढता हू और हम पढ़त हैं)। तीमरा सामक भृणोति-(शृष्वन्ति, शृणोपि, शृगुय, शृणोमि, श्रोर शृगुम श्रथवा शृष्म)= मुलेज श्रववा गुलिस पद्मान्तर में-सुगाइ, (सुगार, सुगानित, सुगाने, सुगारे, सुगामि, सुगाने, सुगानि, सुगानि, सुगानि, सुगानि, सुगानि, सुणामु और सुणाम)=यह बुनवा है, (व सुनवे ही, तृ बुनवा है, गुम सुनवे हो, में सुनवा हू धीर ह सुनते हैं)।

मविष्यत् काल का चराहरण इस प्रकार हे -- पठिन्यति-(पठिष्यन्ति, पठिष्यांस, परिष्यं, प च्यामि श्रीर पठिष्याम)= पडेडन श्रीर पहेडना, पद्मान्तर में-पडिहिइ (पडिहेण, पडिहिन्त परिह पांढिहरे, पांढिहिस, पांढिहिस, पांढिहित्था, पांढिहिह, पांढिहिस, पांढिहिसा, पांढिहिस, पांढिहिस, वहेंगा (वे वहेंगे, तू वहेंगा तुम वहोंगे, में वहूँगा श्रीर हम वहेंगे)।

गाज्ञार्थक और शिधि-अर्थक के क्यारा टरोहरण इन प्रवार हैं —हसतु-हबतान् (हरू हम-हसतात और हमत, इस्रांत तथा हमाम) तथा हसेत (हसेयु हम स्त्री हसेत, हस स्पृ हंसम)= इसज और हिसजा अथवा हमेजा, पद्मान्तर ग हसन (हमन्तु, हहम् तथा हमर, हमाह ब और हमामी)= वह हैंस, (वे हैंस, तु हैंस तथा तुम हैंमा, में हेंसूँ और हम हेंसे), वह हैंनना (व हुँसते बहु, तू हेंसता रह तथा तुम हुँमते वही, में हुमता बहु 'की हर हुँमते वह) । यो क्रम म लवार के तथा लिक लवार क ल-जा अध्यमी के साथ म प्राइत रूप जानना पारिय। बडी प श्च प्र प्राष्ट्रत घातुओं के सम्बन्ध में भी 'स्त्र श्रथवा सा' प्रथम की शांत्र रान पर वर्तनारह भविष्यत्वातात, आझायक सकार श्रीर विधि अधन सकार के अर्थ में तानों पुरुष क श्री वर्षी मनुमाय म ममम लेना पाहिये। इसी ता पर्य की सममाने क लिये पुन शा खारण बार स बीर ताते हें —चित्रिवातयति (ब्रतियानयीते बात्रिवात-ति, श्रतियानयण, बातिवान्यामि बीए ह

्रत्तपन कराता है, तुप उल्लंघन कराते हो, में उन्लंघन कराता हूँ चौर हम उल्लंघन कराते हें), व द्रक्तपन कराते हें) हम उल्लंघन कराते हें) हम उल्लंघन कराते हें) हम उल्लंघन कराते हें) हम उल्लंघन कराते हें। व द्रक्तपं हम परिवर्तन किय विना इन्हों प्राइत व्रियापद इत्यों हमें से प्रतिवर्धन स्वापद इत्यापद इत्य

प्राक्त भाषा के खन्य वैयाकरण विद्वान् यह भी कहत हैं कि सस्कृत भाषा में पाय जाने वाले जल-गांचक दरा ही लकार्रा के तोनों पुरुषों के सभी प्रकार के वचनों के अर्थ में प्रारत्व्य कुन ही प्रन्ययों ग्रेषात पर प्राकृत में 'ला अथवा जा!' प्रत्यय की सयोजना कर देने से प्राकृत भाषा में उक्त लकारों के भा पुरुषों के इप्ट बचन का तात्व्य अभिष्यक्त हो जाता है। इन मन्तव्य का सित्तप्त तात्व्य यहां है कि ॥ पुरुषों के इप्ट बचन का तात्व्य अभिष्यक्त हो जाता है। इन मन्तव्य का सित्तप्त तात्व्य यहां है कि ॥ उसे हिसी भी पाय को जोड़ 'त स उक्त काल के उक्त पुरुष के उक्त प्रचन का ध्वर्य परिस्कृतित हो जाता है। उनहरण इस प्रकार है - विति, भवत् , भवतु अभवत, अभूत वभूत, भूयात, भविता, भविव्यति और अभविष्यत् =होजन है होता है, वह होने, वह हो, वह हुआ, वह हुआ था, वह हो गया था, वह होने योग्य हो, वह होने होता है, वह होने के हिस्स प्रवित्यत् के कियापद के पर्राप्त के सित्त है। उन्हिस भाव और वह हुआ होता। इन उदाहरण स प्रतीत होता है कि पाइत के कियापद के पर्राप्त में सह किसी भा लकार के किसी भी पुरुष के किमी भी वचन का धर्य निकाला जा सकता (भाइत भावा में यों केवल दो प्रत्य्य ही 'अन ओर उना' सार्वकालिक और मार्ववाचित्र तथा सार्वकित्य है। किन्तु भ्यान में रहे कि यह स्थिति वैक्तियह है।

हतति, हत्तान्त, हसित हस्य, हतामि श्रीर हसाम सम्बद्ध क वर्तमानकाल के तीर्नो इसों के क्रमश पद्यव्यन के श्रीर बहुवचन क श्रकमें कियाय के रूप हैं। इनके प्राक्टन कमान त्य सण्य समुच्य हप से हसेवन श्रीर हसेवना हिते हैं। इनमें सूत्र सख्या ४०३६ से मूल प्राक्टन-किन बातु 'हत' में विकरण प्रत्यय श्र' की प्राप्ति, ३-१४६ से प्राप्त विकरण प्रत्यय 'श्र' के स्थान पर श्राम भाव प्रत्य वन श्रीर बना' का सदुमाव होने के कारण स 'य' की प्राप्ति श्रोर १९०० से प्राप्तान 'स्थ' में वक्त वर्तमानकाल के तीर्नों पुरुषों के दोनों वचनों के श्रथं में प्राप्तव्य सभी सस्वशीय प्रस्ययों प्र स्थान पर प्राक्षत में क्रम से 'उन श्रोर उना' प्रत्ययों की प्राप्ति होकर क्रम से होनों रूप हमन देर टसेंच्या मित हो जाते है।

पठाति, पठान्त पठाति, पठय पठामि जोर पठाम सरकृत के पर्तराजरात के तार्गाप्तर के कमश एकवचन के श्रीर बहुत्त्वन के सर्कत्त कियापद के रूप हैं। इनक प्राहृत त्व महुत्त्वकार व पढ़ेज श्रीर बहुत्वन के सरक्त एवं एकवचन के श्रीर बहुत्वन के सरक्त एवं १ १६६ से मृत सरक्त पातु 'वर्ट् व रिवत हन के क्षा 'दं' के स्थान पर 'दं' की स्थात हन के स्थान पर 'दं' की स्थात पर 'दं' की प्रावत के स्थान पर 'श्री के स्थान पर 'ए' की प्रावित श्रीर ३ १७०३ से प्रावतं परें वे वे सान कर के स्थान पर प्राहृत में के स्थान पर श्रीर जा प्रवर्ध के स्थान पर प्राहृत में के स्थान पर श्रीर जा प्रवर्ध के स्थान पर प्राहृत में के स्थान पर श्रीर श्री के स्थान पर श्री के स्थान स्थान

श्रणीति, श्रण्यन्ति, श्रणीय श्रण्य, श्रणीमि श्रीर ग्रम्म सस्त्र के वतमानसह इस्ते पुरुषों के कमरा एकवचन क तथा बहुनचन क सक्मंक कियावर के ह्य हैं। इनहें शहन का तस्त्र से और समुचय क्रय से ग्रुपेवन तथा मुखेवना होते हैं। इनमें सुन्न सर्वन १ ४६ से संस्तृत मध्य स्वय सहिन वद्यमगण्य धातु खग 'अनु में स्थित 'श्रु' के 'र' स्वव्यन हा लोव, १-६० मण्य हुए र' व्यव्यन के वधान श्रेप से हुए शु' में स्थित तालव्य 'श्र के स्थान वा प्राप्त में राध म' के स्थान वर प्राप्त में राध म' के स्थान वर प्राप्त में राध म' के स्थान वर भाग में स्थान वर प्राप्त में के प्राप्त ए 'श्रों के प्राप्त ए 'श्रों के स्थान वर 'श्र' के प्राप्त ए 'श्रों के स्थान वर 'श्र' के प्राप्त ए 'श्रों के स्थान वर 'श्र' के प्राप्त प्राप्त में स्थान चन्न स्थान वर 'श्र' के प्राप्त प्राप्त में स्थान चन्न स्थान वर्ष 'श्र' का प्राप्त में श्रेप के स्थान वर्ष 'श्र' का प्राप्त में स्थान चन्न से प्राप्त से प्राप्त से 'श्रेप न न न मा वर्षों के स्थान वर साइन में के न से श्रेप श्रेप से चन न मा वर्षों के स्थान वर्षों

'हसइ' कियापर-स्र की सित्ति सूत्र मध्या ३-१३९ में की गई है।

'यदइ' कियापर रूप की चिद्धि सूत्र मख्या १-१९९ में का गई है।

पाठित्याति, पाठित्यान्ति, पाठित्यासि, पाठित्यात्, पाठित्यामि कीर पाठित्यान संतर्भ हे ही स्था काल के तीनी पुरुषों के कवरा एकवपन के तथा यद्वपन के मकर्गक कियापर के करीं। इसी प्राकृत रूप मामन रूप से पढ़ेउत स्था पढ़ेउता होते हैं। इसी प्राकृत रूप मामन रूप से पढ़ेउता स्था पढ़ेउता होते हैं। इसी प्राकृत स्था क्य पढ़े की प्राप्ति इसा स्थ

अर्णित खरोत्त रीति श्रतुनार, तस्वश्चात् सूत्र सख्या ३ १७० से प्राप्तार पढे में भविष्यत् काल के समी

र्कुलों के मभी बचनों क ऋर्थ मे प्राप्तव्य सस्क्रतीय सर्व-प्रत्ययों क स्थान पर प्राकृत मे केवल दो प्रत्यय ही व्य तथा बना' की कम से पाष्टि हो कर पढेंडज तथा पढेंडजा रूप मिद्ध हो जाते हैं।

पाठिप्याति माकृत के भविष्यत् हाल के प्रथम पुरुष के एकवचन का सकर्मक कियापद का ऋष ई। . इसका प्राष्ट्रत रूप प द हेइ होता है। इसमें सूत्र सख्या १ 148 से मूल साकृत हलन्त घातु 'पठ्' में स्थित . अप्लय हलत ब्यञ्जन 'ठ' के स्थान पर ढ' की प्राप्त, ४ २३६ से प्राप्त प्राकृत घातु 'पढ् के श्र्यन्त्य हलन्त . हेब्ब्रुन ढ में विकरण प्रायय छा' की प्राप्ति, ३-१५७ से प्राप्त विकरण प्रत्यय 'ख्र' के स्थान पर 'इ' की मिमि, ३१६ से प्राप्त प्राक्तत धातु त्राङ्ग 'पिंढ' में भिविष्यत् काल बोधक प्राप्तव्य प्रत्यय 'हि' की प्राप्ति थीर ३ । ३६ मे मिन्यत् अर्थक प्राप्ताग 'विढिह में प्रथम पुरुष के एकवचन क व्यर्थ में 'इ' प्रत्यय की माप्ति होकर पाडिरिइ रू (मिद्ध हो जाता है ।

हसतु, हसतात्, हसन्तु, हस-ट्सतात्, हसत, हसानि, हसाम श्रीर हसेत्, हसेयु , टसे , . ^{इसन}, हसेयम्, हसेम, साइन के आज्ञार्य और विधि लिड अर्थक तीर्ना पुरुषों के एकत्रयन के तथा , वहुरचन के अकर्मक कियापद के रूप हैं। इनके प्राकृत रूप ममान रूप से और समुचय रूप से हसेज . ^{तथा हिसकता} (श्रथवा हसेडना) हाते हैं। इनमें से प्रथम रूप में सूत्र सख्या ३-१४६ से मूल पाछत घातु . 'हन' में स्थिन श्रन्त्य स्वर 'श्र' के स्थान पर 'ए' का प्राप्त, तथा द्वितीय रूप मे ४ २० म मे उक्त 'श्र' क ^{'स्थान पर'}६ की प्राप्ति, यो कव न प्राप्ताग 'इमे श्री॰ हिस' म सूत्र सख्या ३ १७७ से श्राद्वार्य श्रीर विधि हिह् क तीना पुरुषों के दोनों वचनो क अर्थ म प्राप्तस्य सस्कृतीय सर्व प्रत्ययों के स्थान पर प्राकृत में रेजल ^{, इ। प्रयथ} 'व्य तथा जा।' का हा कम से प्राप्ति हो कर हसेज्ज हसिज्जा रूप मिद्र हो जाते हैं।

हसर कियापद रूप की मिद्धि सूत्र संख्या ? १७३ में की गई है।

अतिपातयाति, अतिपातयन्ति, अतिपातयासि, अतिपातयथः, अतिपातयामि ख्रीर गातिपात राम मन्द्रत क बतमानकाल क प्रेरणार्थक कियाबाले तीनों पुरुषा क क्रमश दानों धचनों के सकमक ^{हियापर करू}। हो हो प्राकृत हार समान हाय से अहाराएला और अहवायां राजा होते हैं। इनमें सूर मृत्रा ११७० म मूल सम्कृत धातु 'ब्रतिवन्' में स्थित अथम 'त्' का लोप, १०३१ से 'व' के स्थान पर 'व' राप्राप्त, रे १३३ से प्रेट्स्यायर भाव के व्यक्तित्व के कारण से प्राप्त न्यव्यत व' में स्थित छ' क पान पर 'आ' को प्राप्ति, ४ २३६ स संस्कृत को मूल घातु 'खितपत् के अन्त्य इलन्त व्यञ्जन 'त' में विहाल प्रस्वय 'श्र' की प्राप्ति, १-१५० से उक्त प्राप्त श्रन्य 'त' का पुत लोव, र-१८० से लाव हुए 'त' क पानात् शेष रहे हुए 'अ' के स्थान पर 'य का वै हिंदिस रूप से माप्ति, ३ १४६ में प्रवस रूप में लोप हुए 'व' क परवात राप रहे हुए 'ब्र क स्था र पर 'य' का प्राप्ति नहीं होकर 'ए' को प्राप्ति, ३ ८४८ में द्विनीय ^{73 में भागोग 'श्रह्माय'} में प्रेरणार्थक भाव क श्रास्तित्व में 'श्रावे' प्रत्यय का प्राप्ति, र ४ में द्वितीय रूप में बाप्ताम 'बह्बाय' के साथ में प्राप्त प्रत्यय 'झावे' का मधि होकर 'बह्बायाव' बहु की प्राप्ति घंत

में सुत्र सरुया ३-१७० से कम से प्राप्ताग 'ग्रहवार' चीर 'ग्रहवायावे' में वर्तमानशर राज्य हैरे पुरुषों के दोनों बचनो म प्राप्तब्य सस्क्रतीय सर्व प्रत्ययों के स्थान पर प्राकृत में इदन 'मा प्रनर ए प्राप्ति हो हर अडवापजा श्रीर अडवायावेजना रूप सिद्ध हो जाते हैं।

'न' श्रान्यय की मिद्धि मूत्र संख्या १ ६ में की गई है।

समनुजानानि सरहत के वर्तमानकाल क तृतीय पहुए के वक्ष्यपन का महर्मह रियारा ए रूप हैं। इसके प्राक्तत रूप समग्राजाणामि और समग्राजाणेजा होते है। इनम सुत्र सर्वा । "र वार्य ही 'न' के स्थान पर 'रा' की प्राप्ति, ३-१४४ से प्रथम रूप म प्राप्ताग 'सगग्रजाल में एक घल्ड सा अ' क स्थान पर 'आ' की प्राप्ति और ३ १४१ से प्रथम रूप वाले प्राप्तांग 'सम्लुनाणा' में बडागनाह के तृतीय पुरुष क एकवचन क अर्थ में 'भि' प्रत्यय की प्राप्ति होकर प्रथम रूप समगुजाणाभि विदे हैं जाता है। द्वितीय रूप में सूत्र सख्या ३-१% से प्राप्तांग 'समग्रु तांग' में स्थित श्राय स्वर 'ध' र स्व पर 'ए' की प्राप्ति, तत्वश्चात् प्राप्तांग 'समसुजासे' में सूत्र परवा ३ १०० से वर्तमानकाल के स्तीय प्रा के एकवचन के अर्थ में प्राप्तव्य प्रत्यय 'मि' के स्थान पर 'जा प्रायय की प्राप्ति हो कर किन्ति है समणकाणेज्ञा भी सिद्ध हो जाता है।

वा' श्रव्यय की सिद्धि सत्र सख्या १-६७ में की गई हैं।

भवति, मधेत्, भवतु, अभवत, अभूत्, वभूव भूयात्, भविता, मधिप्यति, धीर धर्मी च्यत संस्कृत के त्रमरा लट, लिष्ट, लोट, लड़ लुड, लिट, लिड्। (त्राशिष), लुट, लुट कीर सूर लकारों के प्रथम पुरुष के एक्चचन के अक्रमक क्रियापर के रूट है। इन ममी रूपा के श्यान वा महुना रूप से प्राप्टन में एक रूप होज होता है। इममें मूत्र सन्या ४ ६० से सरकृत में प्राप्त थाड़ मू = हा स्थान पर प्राकृत में 'हो' अग-रूप की प्राप्ति और ३-१७० की पृत्ति में चक्र दश ही लहाग के सम म प्राप्तव्य संस्कृतीय सर्व-प्रययों के स्थान पर प्राकृत में केवल 'ज प्रत्यय को ही प्राप्ति हाइर उन्हें ही लकारों के प्रथम पुरुष के एकवचन के खप में प्राकृत-ियावद का रूप 'होजन' सिद्ध हो चारा है। 3-8001

मध्ये च स्वरान्ताद्वा ॥३–१७=॥

ब्बरान्ताद्वातोः प्रकृति प्रत्यययोर्मध्ये चकारात् प्रत्ययानां च स्थाने जन जना इन्ही वा गनतः वर्तमाना मिविष्यंन्त्योर्विष्यादिषु च ॥ वर्तमाना । हीज्जह । हीज्जाह । हीज्जा हाँउना । पदी । होई ॥ एवं होज्जिसि । होज्जिमि । होज्ज । होजना ॥ पदी । होसि इंगारि । मविष्यन्ति । होन्जहिर ।होन्जाहिर् ।होन्ज ।होन्जा । पर्व । होहिर ॥ एव होन्जहिति । िम्माक्ति । होज्ज । होज्जा । होहिसि । होज्जहिमि । होज्जहिमि । होज्जस्सामि । रोज्जहिसि । होज्जस्सं । होज्जा । होहिसि । होज्जहिमि । होज्जन्सामि । रोज्जहामि । होज्जस्सं । होज्ज । होज्जा । इत्यादि ॥ निष्योदिषु । होज्ज । होज्जा । ज्जा । मनतु भनेद्वेत्यर्थः । पद्मे । होउ ॥ स्वरान्तादितिकिम् । हसेज्ज । हसेज्जा । रिज्जतुवरेज्जा ॥

अर्थ -प्राकृत भाषा में जो स्वरान्त धातुए हें, उन स्वरान्त धातुश्रों के मृत श्रग श्रीर सयोजित व नानवाले वर्तमानकाल के, भविष्यत-काल के, आझार्थक और विधि अर्थक के पत्यय इन दोनों क ष्य में वैकल्पिक रूप से ब्ज व्यथवा ज्ञाका प्राप्ति (विकरण प्रत्यय जैसे रूप से) हुआ कर्ती है। मा कभी एसा भी होता है कि वर्तमानकाल क, भविष्यतकाल के, आज्ञार्थक और विधि अर्थक के ^{|पक} प्राप्तब्य प्रत्ययों के स्थान पर बैकिल्पिक रूप से 'ःज श्रयवा ब्जा'की व्यादेश प्राप्ति भी हुआ। ^{रता है। निष्कर्ष} रूप से वंक्तव्य यंह है कि स्वरान्त घातु श्रीर उक्त लकारों क अर्थ में प्राप्तव्य प्रत्ययों गाय में 'दन प्रथवा जा' की प्राप्ति वैकलिपक रूप से होती है। तथा कभी कभी उक्त लकारों के अर्थ शालुब्य सभी प्रकार के पुरुष बोचक तथा सभी प्रकार के बचन बोघक प्रत्ययों क स्थान पर भा हिराइ हप से 'ज अथवा जा' प्रत्यय की प्राप्ति हुआ करती है। उक्त लकारों से सम्बन्धित उदाहरण म से इस प्रकार हैं, सर्व-प्रथम चर्तमानकाल के उदाहरण दिये जा रहे हें - भवति=होउनइ, होउनाइ, ^{इन तया} होज्जा, बैंकल्पिक पत्त होने से पत्तान्तर में 'होह' भी होता है। भवमि=हीज्नसि, होज्नासि, म्ब तथा होज्जा, वैकल्पिक पत्त होने से पत्तान्तर में 'होसि' भी होता है। उपरोक्त दोनों उदाहरण कम वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष के तथा द्वितीय पुरुष के एक उचन के हैं। अब भाषिण्यत्काल के उटा स मंशीत किये जा रहे हैं मिवच्यवि-होज्जिहिइ, होज्नाहिइ, होज्न तथा होज्ना । सैक्लिफ पस दा ^{[भाव} होने के कारण से पत्तान्तर में 'होहिइ' रूप भो होता है। इनका हिन्दी व्यर्थ होता है वह होगा वना वह होगी। दूसरा चदाहरण अविष्यसि=होज्जहिसि, होज्जाहिसि, होज्न तथा होज्ना। यैकल्पिक होत से पनान्तर में 'होहिसि' रूप का भी सद्भाव होगा। इनका हिन्दी अर्थ होता है-तू होगा अयवा ^{हागा ।} तीसरा उदाहरण —भविष्यामि=होव्जिहिमि, होव्जाहिमि, होव्जन्सामि, होव्नहामि, होव्नस्स, ^{रत्र तथा हाउता, पत्तान्तर में होहिमि भी होता है। इनका हिन्दी-क्यर्थ यह है कि~में होकेंगा ध्ययवा} होऊँगी ।

भाहार्थक और विधि-अर्थक के उदाहरण इस प्रकार हें — मबतु सीर मदेत् ≖होबचन, ¹बाब, होबब तथा होबबा, पदान्तर में 'होड' भी होता है। इसका यह अब है कि चह हो अयवा वह वै। इस दशहरणों से यह विदित होता है कि वैकित्यक रूप से स्वरान्त घाड़ और प्रत्यप के मध्य में ब अपवाब्दा' की प्रास्ति दुई है सथा पद्मान्तर में प्रत्यों के स्थान पर ही 'उच स्थया ब्वा' का मिस हो गया है। साथ में यह भी बतला दिया गया है कि 'उपरोक्त दोनों विधि विध्यान यैकित्यक विकाल होते से त्रीय स्वस्था में स्त्री 'जब स्थया ब्वा' का धातु स्रीर मध्यय के सम्य में कागन ही हुआ है भीर न प्रत्येयों क स्थान पर धादेश ही हुआ है; किन्तु पूर्व मूर्यों में वर्णित मबनागान स से उपलब्ध लकार बोधक प्रत्ययों को ही प्राप्ति हुई है। यो तीनों प्रकार की स्थिति का बयर उस्त किया गया है, जो कि ध्यान देने यीग्य है।

महन -- मुल सूत्र म 'स्वरान्त' पर का अपयोग करक ग्रेमा विधान क्यों बनाया गया है हि सह स्वरान्त धातु श्रीर प्राप्तव्य लकार-बीयक प्रयमी के मध्य में हो वन खथना उन्ना है। बैर्शनिक स्रम श्रागम होता है है

उत्तर '—जी घातुं स्वरान्त नहीं हो कर स्यञ्जनान्त हैं, उनमें 'मूल घातु श्रंग और प्राप्तम सार रीधक प्रस्ययों के मध्यम में व्यागम रूप से 'उन व्ययवा उना' की प्राध्त नहीं होती है, इमिन्ड पर धातुओं की 'ऐमी विशेष स्थिति' का महरान करान के लिय ही मूल सूत्र में 'स्वरात पर का महार की गई है। किन्तु ऐसी स्थिति में भी यह बात ध्यान में रहे कि व्यक्षनान्त ध्या और प्रत्यों के मन उच अथवा उंजा' का आगम नहीं होने पर भी लेकार बोचक प्राप्तिच्य प्रत्यों के स्थान पर वैहातहरू में एक 'उन अथवा उना' प्रश्यवों की बादेश गरित हैं। होती हैं | जैसे:- हमित, हमित, हमास, हमास, हम व्यति, हमित्विसि, हसित्वामि, देसतुं और हसेत्=हसेंउन अथवा हसेजा-वह हमता है, तु हमता है, हमता हूं, वह हसिंगा, तू हमेगा, में हसू गा, वह हसे और यह हमता रहा दूसरा व्हाहरए प्रा है — खरते, धरमें, धरे, हारिष्यते, वारिष्यमें, धारिष्यें हारताम्, खरेम, वारे, खरेन, धरेमा है त्वरेय = तुपरेकत और तुपरेकता=वह शीवता करता है, तु शीवता करता है, में शावता करता है, शीवना करेगा, तु शीवता करेगा, में शीवता करेगा, वह शीवता बरे त शीवता कर में शीव वर्हें, वह शीमता करता रहें, तू शीमता करता रह व्यर्धि में शीमता करता रहें। इन 'इन ही। मा प्रथमी के सन्बन्ध में विस्तार पूर्वक सूत्र सहया है दिल्ली या विस्ता की किया कि सन्वन्ध में विस्तार पूर्वक सूत्र सहया है दिल्ली या गया है, छत विशेष विशेष विशेष यहाँ पर त्यात्रस्यहता नहीं रह जाती हैं.। - , गीर

भवाति मंस्कृत के यर्तमान ठाल के प्रथम पुरुष के प्रश्वचन छा अन्मक विशादर दा हरे हैं इसक प्राप्तत रूपान्तर होजनइ, होउनाइ, डॉजज, होजना, और होइन्होंते हैं। रन्में स्त्र-स्था ४५२ में म् संस्कृत-यातु भू = भव' के स्थान पर प्रकृत में 'हो। श्रंग, की प्राप्ति, । तरक्रवात् प्रथम सीर हिन्त रो म सूत्र सरया 3-१७८ स प्राप्तांग 'हो' में 'उन तथा बना' प्राद्यां की (जिकरण रूप से) वैकतिगरेक्ष' श्रीर ३ १ रह से प्राप्तांग 'होण्य तथा होण्या' म वर्तमानकाल के प्रयस पुरुष के पक्षपन के सर्व संस्कृतीय प्रायतच्य प्रयय 'ति' क' स्थान पर प्राकृत में 'ई' प्रत्यंय का प्राप्ति हो कर बीजन तथा हो वा हप मिर्द हो जाते हैं।

तृतीय चीर चतुर्य ह्वों में उपरोक्त रीति में आकारिक में प्रथमण्या व १०८ तवा ६ १७०७ वर्ष मानकात क प्रश्न पुरुष व एकम्बन क अर्थ में सङ्हतीय प्राप्तस्य प्राप्त के स्थान पर अश्वित में कन है 'जुर श्रीर रजा प्रयम् की प्राप्ति हांकर वृतीय स्त्रीर चहुडू क्य'होजन क्या होरजा' मी पित्र री कर हैं।

वेंद्वर्ग रूप होड़ की सिद्धि सूर्व संख्या १ ९ में की गई है।

भगित संख्त के वर्तमान माल के हिनोय पुरुष के एकवचन का ख़कर्मक कियापर का रूप है। महे प्राइत रूपावर हाडनसि, होडनासि, होडन, होडना और होसि होते है। इनम से प्रथम और हितीय औं में उपरात रीविं से प्रान्तान 'ही' में सूर्ज-सिंख्यों के रेडेर्ट से 'डर्ज होयों इनो' प्रत्ययों की (विकरण प स) वैकित्यक प्राप्त और उ-रेडर्ट से प्रार्टितिंग 'होडिन तथीं होडेर्ज' में वर्तमानकील 'के हितीय पुरुष परंत्रयम के अथ में सरक्ताय प्राप्तव्ये प्रयय 'सिंग के सिर्मान ही प्रकृत से भी मि' प्रत्ये की भीति कर होडजा। से रूप सिंह हो जाता है।

हतीय श्रीर चतुर्थ रूपों में उपरोक्त रीति से प्राप्तिमी ही में सुंत्र सेरबी है १७८ से तेथा ३-१७७ वर्गमानकात के द्वितीय पुरुष के एकवचन के श्रथ में सहक्ष्तीय प्राप्तव्य प्रस्वय 'सि', के स्थान पर हिन में कम से 'वन श्रीर बता' प्रस्वयों की प्राप्ति होकर हताय तथा चतुर्थ रूप 'होज्ज श्रीर होज्जा' मिद्र हो जाते हैं।

वैचेम हप 'हाँकि' की विद्धि सूत्र विंख्या है-१४५ में की गई है।

भविष्यति संस्कृत के मिब्यूनत काल के प्रथम पुरुष के एक्वचन का खरमंत्र कियापद का रूप कि मिंच प्राप्तत क्यान्तर होज्जिहिह, होज्जाहिंड, होजा,होग्जा और होहिंड होत हैं। इनमें से प्रथम ख़ोर इनाय रूपों में उपरोक्त रीति से प्राप्ताग-'हो' में सूत्र मुख्या १२-१७- से 'उन ख़थेवा जा' प्रत्ययों की विकरण रूप से वैकल्पिन प्राप्त, ३,१६ से प्राप्ताग-'होग्ज तथा होजा' में मिब्रियत काल विधिन खर्य श्रीहन में प्राप्तव्य प्रत्यय हि' की प्राप्त और २-१३६ से सिब्ब्यत काल के खर्य में प्राप्तत में स्मान्त्रया होजाहै से से प्रथम पुरुषों से स्कृति के प्रयोग में 'इ' प्रत्येय की प्राप्ति होकर होज्ञ हि और होजोहिंड रूप सिद्धे हो जातें हैं।

एशीय और चतुर्थ रूप 'टोडज तथा होजा' में पूत्र सद्या ३ '७५ से तथा ३ १७७ से प्राप्ताग है' में मिक्पित काल नाचक प्राप्तव्य प्रक्रितीय प्रत्यों के स्थान 'वर्र केम से 'इन तथा आ' प्रत्यों की है हत्तर से मिक्पित काल वाचर अब में आरिश नीमि होकर 'होजी तथा हो उजी' रूप भी मिख में बात हैं।

पचम रूप 'हो।हिइ' की सिद्धि सूत्र सरया ? १६६ में की गई है।

भेषिच्यास संस्का के महिर्द्यके 'इति के हित्तीक पूर्वेच के वर्कवन की स्वेमक कियोवर का रूप र होने अहरू रूपों र होजाहिंसि, होजाहिंसि, होर्डें, होर्डेंग और हाहिंसि होते हैं। इतेम स प्रथम भीर दिनीय रूपों में उपरोक्त रीति से प्राप्तिंग 'हो में स्तिन स्टिया ३-१७ में स्व दर्धों होगा प्रयुवों का तिकास रूप से) बैकहियक प्राप्ति, श्रर्देह से प्राप्तिंग 'होर्डेंग तथा होर्डेंगों में मर्थिन्यंग काल वायक कार्य में नाकृत में प्राप्तध्य प्रत्यय 'हि' की प्राप्ति कौर ३ १४० से मिवच्यन्काल क कार्य में प्राप्त्रन म से प्राप्ताय 'होलाहि तथा होजनाहि' में द्वितीय पुरुष के एक्वचन के कार्य में 'मि' प्रत्य हा शांत हा 'होजनाशित तथा होजनाहि। से सिद्ध हो जाते हैं।

तृतीय और चतुर्य रूप 'होजन तथा होजना' में सूत्र सख्या ३ ९७० से तथा ३ १०० में (राहे रीति से) प्राप्ताग 'हो' में भविष्यत् काल वाचक रूप से प्राप्तध्य द्वितीय पुरुष के एडरवन र कर्षरा मत्ययों के स्थान पर क्रम से 'जन तथा बना' प्रत्ययों की वैकल्पिक रूप से आदरा प्राप्ति होकर 'रूप तथा होज्जा' रूप सिद्ध हो जाते हैं।

पद्मम रूप 'होहि।सि' की सिद्धि सूत्र सदया ३-१६६ में की गई हैं।

भविष्यामि सस्कृत के भविष्यत् काल के तृतीय पुरुष के एकत्रवन का खर्काक विषाद् हार है। इसके प्राञ्चत-स्वांतर कम से होजबहिमि, होजबहिमें, होजबहिमें, होजबहिमें, होजबहिमें होजबहिमें होजबहिम से प्रायाग होज से प्राया उना' प्रत्ययों की (विकरण रूप से) कम से वैकल्तिक प्राप्ति, तत्यथात् कम से वागाना होज हो होजजा' में सूत्र सच्या ३ १६६ से तथा ३-१६७ से मविष्या काल गायक वर्ष में प्राप्ति में प्राप्ति विकरण स्वयं से प्राप्ति होजिए स्वा, हा' की कम से प्रयम हितीय स्वी में तथा त्या त्या तथा से प्रया काल वाचक व्ययं में कम से प्राप्ता प्रया वितीय नृतीय की प्रयुक्त से प्राप्ति होजिए होजिय होने से स्वा से स्वयं ३-१४१ से त्यांत्र प्रत्य के एक्यचन के अर्थ में 'मि' प्रयय की प्राप्ति होजिय होजिया होजिय होजिया होजिय होजिय होजिया होजिय होजिया होजिया

पद्मम रूप 'होज्ञस्त' में 'होबन' खद्म की प्राप्ति चवरोक्त रीति से होकर सूत्र-सख्या ३ १६६ भविष्यत-काल के खर्य में प्राप्तीग 'होबन' में तृतीय पुरुष क एकवचन के खर्म म प्रापश्य प्रस्वा 'में' स्याम पर 'स्तं' प्रस्वय की खादेश प्राप्ति होकर 'होबनस्स रूप सिद्ध हो लाता है।

छट्ठे और साववें रूप 'होउन तथा होउना' में 'हो' खड़ की उपरोक्त रिन स मि हा ति स्वाम एक स्वाम स्वाम कर किया ने १९४० से तथा के स्वाम के स्वाम में प्राप्त कर कि अपर्यों के स्वाम पर केवन 'उन तथा उना' परवर्षों की हो कम से प्राप्तित हो हर 'होउन तथा होउना' ह सिद्ध हो जाते हैं।

भवत तथा सबेव साहत के कम से आजार्यक, तथा विधि सिन् के प्रवम पुठव के प्रवस्वत । अकमेंक कियापद क कप हैं। इनके प्राकृत रूप समान रूप में दहीं पर पींप दिये गये हैं, होण होत्रवार्व, होज्जा, होज्जा तथा होता। इनसे पातुन्त्रीय कप 'हो' को श्राप्ति जनशेष्ट शैठि वर्त्रण तथारवातु प्रथम दो कपें में सुत्र सख्या ३-१७० से 'ठज तथा जजा' प्रत्ययों ,को (विकास कर से ्रभ्यम्थण्य क्षेत्र विश्व के काम से प्राप्ताम 'होज्य सथा होज्ज्ञा में लाट लकार के सथा लिड हुम्बार कप्राम पुरुष के एकवचन के व्यर्थ में प्राकृत म 'च' प्रायय की प्राप्ति होकर 'होव्ज्जात सथा होवनार कप्राम पुरुष के एकवचन के व्यर्थ में प्राकृत म 'च' प्रायय की प्राप्ति होकर 'होव्ज्जत सथा होवनार रूप सिद्ध हो जाते हैं।

ं तृतीय और चतुत्र रूपों में प्राप्ताग 'हो' में सूत्र सख्या ३ ७≒ से तथा ३ १७० से लांट् लकार क और लिब्र् लकार के अर्थ में प्राप्तब्य सभा प्रकार के पुरुप वोधक प्रथ्या के श्यान पर कम से तथा वैशिषक रूप से केवन 'जन तथा बना' प्रययो को हो आदेश-प्राप्ति होकर 'होज्ज तथा होज्जा' रूप मी विद्व हो जाते हैं।

पत्रम रूप 'होड' में उपरोक्त रीति से 'हो छाग की प्राप्ति होने के पश्चात् मूत्र संख्या २-१७३ से , बाट लकार के तथा विधि लिंड यथम पुरुष के एक्त्रचन के छार्थ में उ' प्रत्यय की प्राप्ति होकर 'होड' रूप मी सिद्ध हो जाता है।

हसति, हसारी, हसारी, हसिष्यति, हिस्थियाते, हासिष्यापि, हसतु और हसेत श्रादि संस्कृत के कम से वर्तमानकाल के, सिव्ययत् काल के, श्राहार्थक और निधि अर्थक प्रथम दितीय-तृताय प्रश् के एकवचन के श्रकर्मक कियापद के रूप हैं। इन सभी रूपे के स्थान पर समान रूप से पाकृत में 'सम्बन तथा हसे जा।' रूप होते हैं। इनमें सून सख्या ४२३६ से प्राकृत में प्राप्त मूल हलन्त घातु 'हस्' में विकरण प्रयय 'श्र' की प्राप्ति, ३-१४६ से प्राप्त विकरण प्रयय 'श्र' के स्थान पर 'ण' की प्राप्ति श्रीर है। से तथा ३१७० से प्राप्ता 'हसे' में सभी प्रकार के लकारों के श्र्यमें तीनों पुरुपों के होनों वचनों में प्राप्तव्य सभी प्रकार के प्रस्थों के स्थान पर 'श्रात्वय सभी प्रकार के प्रस्थों की कम से एवं वैक्तियक रूप से स्थादेश प्राप्त होकर 'हसेंग्रज कथा हसेंग्रज' रूप सिद्ध हो जाते हैं।

क्रियादिएसे: स्थाने जन जना वा देशी मन्तः ॥ होजन । होजना ॥ धन्निकरिक्तः। सह होजन वण्णास्त्रको ॥

अर्थ - 'देतु-देतुनद्भाव' के अर्थ में कियातिवित्त-लकार का ग्रयोग हुवा कामाई ।। रह मस्छन में 'लुड़् लकार कहते हैं। तब किमो होन बाला किया का किसी हुनरी किया कासीहर न नहीं होता पाया जाय, तब इन कियातिपाँच अर्थक लुछ लकार का प्रयोग किया पाता है। ईव-सुष्टि अभविष्यत् तदा सुमित्तम् अमित्रण्यत् =यदि अच्छा सृष्टि हुई होता तो सुभिन दर्गत पत्र प्रो की उत्पत्ति भी श्रन्त्री हुई होती। इन उदाहरण स प्रतीत होता है कि सुगित्त का होना श्रववा की है? युन्दि के रीम पर अथवा नहीं होने पर निर्मर करना है, यों खुद्धि कारण रूप होने हुई 'वृद्धि फन रूर होता है, इमालिय यह लकार हेतु-हेतुमत्' मात्र रूप कहा नामा है। इमाहा बना-न क्रियातिपत्ति भी है। यहाँ सस्कृत का लुड् लकार है, जो कि श्रेमेजी में—(Conditional mod) भ लाता है। कियाविपत्ति की रचना में यह विशेषता क्षेत्री है कि 'कारण वर्ष कार्य' हव स करीन तथा 'ऐमा होता तो ऐमा हो जाता' यों शर्त रूप से रहे हुए दी बापर्यों का एक सद्युक्त राक्य हर नार है। इसमे प्रदर्शित की जाने वाली दोनो कियाओं का किमा भी प्रतिकृत सामग्रा म 'ध्याप जैमा नि का रूप दिखलाई पड़ता है। इन लकार को हिन्दी में 'हेतु-हेतुमद मृतकाक' फराई तथा गुक्स भाषा में यह 'संदेत भूत हाल' नाम से भी बीला जाता है । उदाहरण इस प्रधार हैं - जर हथा हैं तया तण होजा = यदि जरा वर्षा हुइ होती तो धास हुआ होता । इम उदाहर्श म विशित हे गर्री पूर्व वाक्याश कारण रूप है और उत्तर वाक्याश कार्य रूप अथवा फल रूप है। या छ ह्याना (Cause and elfect) र श्वर्थ में क्रियाशिवति का प्रयोग होता है।

खर्भावत्वन्, समिविध्यन्, श्रमविध्यः, समिविध्यः, समायवयम् नीर समिविधागि सेर्। हिस्यातिपत्ति योगक राष्ट् लकार कतोनी पुरुषां क प्रस्वपन में तथा बहुरपत क प्रनारा कर्वतः परसीयत्री नियायन् के रूप है। इन ममा रूपीं का बाहन स्वान्तर भागान रूप से शिक्ष क्वम हाधार्थाः 'जइ' श्रव्यय की सिद्धि सूत्र सरया १४० में को गई है।

वियातिवित्त-प्रर्थ रु 'होज्ज' वियावद के रूप की सिद्धि इसी सूत्र में ऊवर की गई है।

षणैनीय सस्कृत के विशेषणात्मक सकारान्त पुँलिंग के प्रथमा त्रिभक्ति के प्रथमन का रूप है। इसमें सूत्र सख्या २ ७६ से रेफ रूप 'र्' व्यक्षन का लाप. रेट्द से लोप हुए रेफ रूप 'र्' के पश्चात को लाप. रेट्द से लोप हुए रेफ रूप 'र्' के पश्चात को लाप. रेट्द से लोप हुए रेफ रूप 'र्' के पश्चात को लाप. रेट्द से लोप हुए रेफ रूप 'र्' के पश्चात पर स्त्रा ने स्थान पर स्त्रा के स्वान पर स्त्रा के स्त्रा से स्वर्ण से सहयोग से तथा र र का स्त्रा सावित, र द्र ह में स्वादेश प्राप्त ने स्त्रा के स्त्र के स्त्रा के स्त्र क

न्त−माणौ ¶ ३-१**⊏०**॥

कियातिवत्ते: स्थाने न्तमार्का यादशो भनतः ॥ होन्तो । होमाको । व्यभनिष्यदित्यर्थः ॥ हरिक-ट्राके हरिकडू जड सि हरिकाहिव निनेतन्तो । न सहन्ता विश्व तो राष्ट्र-परिहव से जियन्तस्त ॥

अर्थ — सूत्र मनवा ३ १७६ में पूण खर्यक कियातिवित्त के खर्य म मानव्य प्रयय 'उन तथा एना हो उन्होंन किया जा खुका है, किन्तु यदि अपूर्ण हेतु-हेतुनह् भूत कालिक विधातिवित्त का रूप यनाना होते हम सम में धातु के मानांग म 'न्त तथा माण' प्रयय का सर्वोजना करने के परवात उक्त खपूर कृति स्वात के स्वात उक्त खपूर कृति कालिक विधातिवित्त के खर्थ म प्राप्त स्व में अक्षारान्त मज्ञा पहीं व मणान हो जिमांग बेवक प्रयय की सर्वोजना करना खावश्यक हो जाता है, वत्नुमार बर प्राप्त कियातिवर्णत का रूप जिमांग विशेष का स्व की सर्वोजना करना खावश्यक हो जाता है, वत्नुमार बर प्राप्त कियातिवर्णत का रूप जिमांग विशेष का साथ सम्बन्धित होता है, उत्त विशेष्य के निंग वचन खोर जिमांक खनुवार हो हम त्रिवांग कि प्राप्त करते हम प्रकार य अपूर्ण हेतु-हैंनु विशेष पर में भी निंग की, चचन की छोर विभक्ति की प्राप्त करते हुए विशार्थक मन्ना जैस स्व को लोक कियातिवर्णत के रूप विशार्थक सम्बन्ध की स्व को लोक हो जाते हैं, इमलिये इनमें इनसे मन्जीवर विशेष्ट वर्शो के खनुमार ही निंग की, वचन की कीर

क्रियातिपत्तेः स्थाने उन उना जा देगी मजतः ॥ होजन । होजनाना अनिक्पतित्तर्वः नइ होन्ज वण्णाशिन्नो ॥

अर्थ — हेतु-हेतु-इदाव' क अर्थ में कियातिवन्ति-लकार का प्रयाग हुआ करता है। हुई सस्क्रन में 'लुड् लकार कहतें हैं। जब किसी होने वाला किया का किसी दूनरा क्रिया क नहीं हनक नहीं होना पाया जाय, तब इन िवातिपत्ति अर्थक लुख लकार का प्रयाग किया पाता है। नैस-सुपृष्टि व्यमविष्यन तदा सुमित्तम् भ्रमितिष्यत् = यदि अन्त्रा वृष्टि हुई होता तो सुमित्त वर्षात श्रमार्थ की उत्पत्ति भी श्रन्छी हुई होती। इन बदाहरण स प्रतीत होता दें कि सुभिन्न का होना श्रववा नीहरू पृट्टि के होन पर अथवा नहीं होने पर निर्मर करता है, यों 'वृद्धि' कारण कर होता हुई 'मुभिर फल रूर होता है; इमीलिय यह लकार, 'हेनु हे रुमत्' भाव का कहा जाता है। इमीका अगर-क कियातिपत्ति भी है। यही सस्कृत का लड लकार है, लो कि अप्रेजी में—(Conditional mood) हा लाता है। कियातिपश्चिकी रचना में यह विशेषना होती है, कि 'कारण एवं कार्य' रूप से अवीर तथा 'ऐमा होता तो ऐसा हो जाता' यों रार्त रूप से रहे हद दो बाक्यों का एक संयुक्त वाक्य का बाव है। इसमे प्रदर्शित की जान वाली दोनों श्रियात्रों का फिसी भी प्रतिकृत सामगी से 'ग्रमाव जैना खिरी का रूप दिप्पलाई पहता है। इस लकार की हिन्दी में 'हेतु-हेतुमद् भूतकाल' करते हें तथा ग्रुवसन भाषा में यह 'संरेत भूतकाल' नाम से भी बोला जाता है। उदाहरण इम प्रकार हैं -- जह मेही होन तया तण होजा = यदि जल वर्षा हुई होती तो धास हुआ होता । इस बदाहरण से विदित होता है पूर्व वाक्यारा कारण रूप है और उत्तर वांक्यारा कार्य क्य अथवा फल रूप है। यो हेउ हर्यनम (Cause and effect) क श्रर्थ में कियातिपत्ति का प्रयोग होता है।

ब्राइन्त मापा में घातुनों व भामांगों में रू श्रथवा ला।' प्रत्ययों की संवोजना पर दन मेड धातुओं का रूप क्रियातिपत्ति नामक लकार के श्रर्थ में तैयार हो जाता है। यों सस्कृत माधा में क्रियार र्पात्त क अर्थे मे प्राप्तच्य प्रस्पर्यों क स्थान पर प्राक्तत में केवल उज अथवा उजा' प्रत्यर्गे की बाहा भी होती हैं। जैसे - अमिवण्यत्, अमिवण्यम्, अमिवण्य, अमिवण्यनं, अमिवण्यम् अरि अमिवण्य = हाउन तथा होउना = यह हुआ होना, ये हुए होते तु हुआ होता, तुम हुए होत, में हुमा हाता औ हम हुठ होते । दूसरा उदाहरण इय प्रकार है --यदि अमबिष्यत् प्रणतीय = जह होवन वरणणिज्ञा = व प्रणान स्रोग्य हुआ। शता (बालब स्रभूरा हे), इस प्रकार से 'कारण कार्योध्मक' क्रियातिवरित ^इ स्पह्म ममफ लेना चाहिये। क्षेत्र कोई आचार्य कहते हैं कि इमका खींग भूतकाल के सगात। भावत्यतकाल के व्यर्थ में भो हो मकता है।

थमविष्यत् , प्रमिविष्यत् , धमविष्य , धमविष्यत् , धर्मविष्यम् श्रीरं अमविष्याम सहतः क्रियातिपत्ति योघक लुड्लकार के तीनों पुरुषों के एक्ष्यचन के तथा बहुत्रचा क क्रमश^{्रह्म} प्रसमैपदी कियापद के रूप है। इन समा क्यों की प्राक्वत रूपोर्टनर समान रूप से होज प्यम हाजा है। ी। इनमें सूत्र सल्या ४ ६० से मूल सश्कृत घातु 'भू = भव' के स्थान पर 'हो' त्रम की प्राप्ति और उ-१७८ में क्रियातिपत्ति के अर्थ में ठीनों पुरुषों के दोनो यचनों में संस्कृतीय प्राप्तन्य प्रस्ववों के स्थान पर समज्ञव in से प्राकृत में 'जा तथा बना' प्रत्ययों की कम से प्राप्ति हो कर 'हो जा तथा हो जा।' रूप सिद्ध हो बाते हैं।

'जइ' श्रव्यय की सिढि स्ता सख्या १४० म की गई हैं।

कियातिपत्ति-अर्थक 'होज्ज' कियापद के रूप की सिद्धि इसी मूज में ऊपर की गई है।

वर्णनीय संस्कृत के जिरोपणात्मक आकारान्त पुँलिंग के प्रथमा जिमक्ति के एकवचन का रूप रै। इसका प्राकृत रूप वर्ष्णाणक्यो होता है। इसमें सूत्र सख्या २००६ से रेफ रूप 'र्' व्यञ्जन का लाप. ्री-इ. में लोप हुए रेफ रूप 'र्' के पश्चात् शेष रहे हुए 'ख' वर्ण को द्वित्व 'ण्ण' की प्राप्ति, १-२२८ स त' कस्थान पर 'ण' की प्राप्ति, १ पष्ठ से प्राप्त टीर्घ पर्ण 'णी' में स्थित दीर्घ स्वर 'ई' के स्थान पर प्राप्त ह्युक ष्यञ्जन का मद्मांत्र होने के कारण से हस्य स्वर 'इ' की प्राप्ति, १ २४४ के महयोग से नथा १-२ का प्रेरणा मे बिशपणाय प्रस्वयात्म ह वर्ण य' के स्थान पर 'ज' का ख्रावेंश प्राप्ति, २-८६ से छादेश प्राप्त बए 'ब' को द्वित्व 'क्न' की प्राप्ति छोर ३-२ से विशेषणाध्य ह स्थिति में प्राप्तांग प्राकृत शब्द 'वरणणिज में पुँक्तिंग श्रज्ञारान्तात्मक होन से प्रथमा विभक्ति के एकववन में सस्प्रतीय प्राप्तव्य प्रत्यय 'मि' के स्यान शर मारत में डो=म्रो मत्यय की प्राप्ति होकर पाष्ट्रतपद वण्णाणिक्यों सिद्ध हो जाता है। ३-१७६॥

न्स−मागो'॥ ३–१⊏० ॥

कियातिपत्तेः स्थाने न्तमार्को त्यादशी भगतः ॥ होन्तो । होमारको । त्यभविष्यदित्यर्थः॥ हरिएं-ट्राणे हरिक्ष जह सि हरिकाहित नितेमन्ती ।

न सहन्तो चित्र तो राहु-परिहच से जिल्रान्तस्स ।। अर्थ — सूत्र मन्या ३ १७६ म पूण श्रर्थक क्रियातिवित्त क श्रर्थ मे प्राप्तव्य प्रयय 'उन तथा उना ध क्लेल किया जा चुका है, किन्तु यदि ध्रवूर्ण हेतु हेतुगढ् मूत कालिक क्रियातिवीत्त का रूप बना ग धिने हम श्रथ में घाषु के माहाग में 'स्त तथा माए' प्रत्यय की मयोजना करने के प्रत्यात कर ध्रमून र्षु रेतुमद भूत कालिक कियातिपत्ति के अर्थ म प्राप्त रूप में श्रकारान्त सझा पर्दी क मानत ही विमन्ति कोवह मत्र्यय की सयो नता करना आवश्यक हो जाता है। तद्युमार बढ़ माप्त कियातिर्पात का रूप जिम किए के माथ में सन्बन्धित होता है, उस निशाय के लिंग नचन और विमक्ति अनुनार हो इस नियानि रिंग धर्यक पर में भी निंग की, बचन की धीर विभक्ति की प्राप्ति होती है। इस प्रकार य ध्वपूर्ण हेतु-हेतु । ^{मेर्} मृत कालिक कियातिपत्ति क रूप विशेषणात्मक स्थिति की प्राप्त करते हुए कियार्थक सजा जैन ^स काल हा ताते हैं, इमलिये इतमें इतसे मन्द्रत्यित विशेष्यात्तें के अनुमार ही लिंग की ययन की कीर

विमक्ति प्रत्ययों की प्राप्ति होती हैं। जैस होने पर प्राक्त रूपों के साथ में सहायक किया 'क्षत' का मद्माय चैकिल्वक रूप से होता है। जैसे — क्ष्मविष्यत = होन्तो अथग्रा होमाणो=हात [ह्र होता । इस चदाहरण में अपूर्ण हेतु हेतुमद् मूत कालिक कियातिविद्या रूप से प्राप्त रूप 'हाल न होमाण' में प्रथमा निमक्ति के एकवचन के अर्थ में प्राप्तव्य प्रत्यय 'हो = औ' की प्राप्ति वजनाई होरें यों प्राप्त्य निमक्ति कोषक प्रत्ययों की प्राप्ति अन्य अपूर्ण हेतु हेतुमद् मूतकालिक कियातिवित्त कर्मे लिय मी समझ लेना चाहिये। प्रथकार प्रथान्तर से उक्त तार्थ्य की स्पष्ट करने के लिये निम्म प्रधार वृत्ति में गाया को उद्युत करते हें —

गाथा — हरिण द्वार्णे हरिणहु[।] जइसि हरिएणाहिव निवेम तो ॥ न सहन्तो घिश्र तो राहु परिहव से जिश्चन्तस्स॥

त्तरहात —हरिणास्थाने हरियाहः । यदि हरियाधिप न्योशियव्य ॥ नासहिष्यथा एव तदा राहु परिमव खस्य जेवु ॥ (अथवा जयत)॥

अर्थ — त्रारं हरिण को गोर में धारण करने वाला चन्द्रमा । यदि तू हरिण क स्थान पर हरिक चिवित-सिंह को धारण करने वाला होता तो निश्चय ही तब तू राष्ट्र से परामय को (विस्कार हो) हा करने वाला नहीं होता, क्योंकि राष्ट्र सिंह में जीता जान वाला होने के कारण से (वह राष्ट्र क्यरने सिंह से डर जाना)।

इस वदाहरण में 'निवेसन्तो, सहन्तो और जिल्लानस्स पद खपूर्ण हेतु हेतुमद् भूतकालिक किं तिवित्त के रूप हैं। इनमें उत्त-खर्य में प्राप्तच्य प्रत्यय 'न्त' की प्राप्ति हुई है तथा विमक्तियोगस्त्रतः 'डों = खो' की और 'स्त' की सम्बन्धातुमार प्राप्ति होकर पदों का निर्माण हुखा है। इस त्वरह से र मिद्धान्त प्रमाणित होता है कि चक्त-खर्यक कियातिपत्ति के पदों में निरोध्य के खतुसार खयवा सम्बप् खतुसार निमक्ति बोंघक प्रत्ययों की प्राप्त होती है। यों ये क्यातिपत्ति स्वर्यक पद सक्षा के समान, विभक्ति-बोंघक प्रत्ययों की धारण करने वाले हो जाते हैं।

अमिष्यत् सम्कृत के कियाविवित्त प्रथम पुरुष के एकवंचन का रूप है। इसके शकृत रूर हीन श्रीर होमाणो होते हैं। इनमें सूत्र सख्या ४ ६० से मृत्त सस्कृत घातु 'मू-मम' के स्थान पर प्राप्त में 'स् की खादेश प्राप्ति, ३ ९ २० से प्राप्ताग 'हों में कियाविवित्त के खर्य में प्राप्तन में कम से 'न्त तथा मार प्रत्ययों की खादेश प्राप्ति खीर ३ २ से कियाविवित्त के खर्य में प्राप्ताग (डोन्त तथा होमाण में प्रथम विमक्ति के एकप्रथम में श्रकाशान्त पुँग्लिया में संस्कृतीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'मि' के स्थान पर प्राप्तृत में 'को खो' प्रत्यय की प्राप्ति होकर कम से दोनों रूप 'होन्ती' खीर होमाणो' सिंढ हो जात हैं।

द्यारण-स्थाने संस्कृत के सन्तमी विभक्ति के एक्ष्वचन का रूप है। इसका प्राष्ठत रूप हरिण्डुरि होता है। इसमें सूत्र-मध्या ४ १६ से 'स्था' के स्थान पर 'ठा' की प्रान्ति, र नह से खाररा प्रान्त 'ठ' र πगत पर द्विव 'ठठ' की प्राप्ति, २०६० से द्वित्य याप्त पर्वे 'ठ के स्थान पर 'ट' को प्राप्ति, १-२२० से त्ववन के क्यर्थ में सस्क्रनीय प्राप्तब्य प्रयय 'डि= इ' के स्थान पर पाकृत म 'डे= र' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर ब्राप्त पर 'हारिणदठाणे' सिद्ध हो जाता है।

हरिणाङ्ग सरज्ञत के सम्बोधन के एकतचन का रूप है। इपका बाहत रूप हरिणह्न होता है। . ' श्में सुत्र मख्या १ ८ ४ से 'सा' में श्यित दीर्घश्यर इया' के स्थान पर आगे सयुक्त वर्ण 'हु' का सद्भाव हीन क कारण से द्वस्य स्वर 'अ की प्राप्ति और ३३८ से सम्बोधन के णक्तवचन के ऋर्य में प्राप्तव्य मयप 'ढा=आ' की प्राप्ति का वें कल्पिक रूप से खमाव हो कर हरिण द्वारूप सिद्ध हो जाता है।

जइ श्रव्यय की सिद्धि सूत्र सख्या ? ४० में को गई है।

'सि' कियाप रूप की सिद्धि सत्र सख्या ३-१४१ में की गई है।

हरिणाधिषम् सस्कृत के द्वितीया-विभक्ति के एकवचन का रूप है। इपका प्राकृत रूप हरिणा-्कि हाता है। इनमें सूत्र सख्या १-१८७ से घ्'के स्थान पर 'ह्'को आदेश गास्ति, १-२३१ से 'प' के ^{शिवान पर 'व' की शाब्ति}, ३-५ से प्राकृत म प्राप्त शब्द हरियाहिय' में द्रिनीया विमक्ति के यकवचन के ^{(के अर्थ} में 'म्' प्रत्यय को प्राप्ति इपोर १२३ मे प्राप्त प्रस्यय 'म्' केस्थान पर पूर्ववर्ण 'व' पर भनुष्तार की प्राप्ति हो कर प्राकृतपद हारिणाहिए सिद्ध हो जाता है।

न्यवेशायिष्य माकृत के कियातिवृत्ति के अर्थ में द्वितीय पुरुष के एक वचन का रूप है। इसका ^{'फारन} रूपान्तर निवेसन्तो होता **है**। इसमें सूत्र संख्या १२० से मूल संस्कृत घातु 'निवेशय' में स्थित ^{'कालफ} 'श कस्थान पर प्राकृत में दृत्स्य स' की प्राप्ति, १-११ से सस्कृत घातु में स्थित अ्यन्त्य हलन्त ^{१६४ बुन भू}का लोप, ३-१=० से प्राकृत म प्रान्ताग 'निवेस में ियातिपत्ति के अध्य मू 'न्त' प्रत्यय की ^{মানি} श्रार ३२ से प्राकृत में कियातिपत्ति क अर्थ में प्राप्ताग 'निवेधन्त' में प्रथमा विमक्ति क एक उपन क्षित्रवं में 'हो=त्रों' प्रत्यय की माप्ति होकर 'निवेसन्ता' रूप मिद्ध हो जाता है।

'न' श्रव्यय की सिद्धि सुत्र सख्या १-९ में की गई है।

असाहिष्यथा सस्कृत के कियातिवृति के अय में द्वितीय पुरुष के प्रक्रवचन हा आत्मनेवृत्ती त्रिया-भ का रूप है। इसका प्राकृत रूप सहस्त्रों होता है। इसमें सूत्र मख्या ४--३६ से प्राकृत में प्राप्त र नत्त्व-'पातु'मह' में विकरण प्रथय 'अ' की प्रास्ति, ३-१८० से प्राकृत में प्रान्तांग 'सह' में कियातिपत्ति के श्रयं म ने प्रन्यय की प्राप्ति और ३२ से प्राकृत में कियातिपत्ति के धर्य में प्राप्तांग 'महन्त' में प्रयमा विभक्ति ६ एस्ववन के क्यों में 'डो=क्यो' प्रस्वय की प्राप्ति हो कर प्राकृत वद 'सहस्ती' निद्ध हा जाता है।

'दिचम' अन्यय की सिद्धि सूत्र सख्या ?-१८४ म की गई ई।

'तदा' सम्झत का श्राट्यय हैं। इसका शीकृत-(श्राप श्रीरा) में 'तो' होनों है। इसमें सुत्र ग्रुक्त ष्ठ ४१७ में मुलं संस्कृत अव्यय 'तदा' के स्वांन वर प्राकृत (अव घन) में 'तो' विद्व ही जाता है।

राष्ट्र पार्रभंच सस्कृत के द्वितीया विभक्ति क एकवंचैंन का केंप है। इपका शहत हव राह बीह होता है। इसमें यूत्र सख्या १- ८७ से 'भ' वर्ण क स्थान पर '६' वर्ण की आदेश प्रान्ति, १ ४ से द्वित निमक्ति के एक्वचन के खर्थ म 'म्' प्रत्यय की प्रास्ति और १२३ से प्रान्त प्रत्यय 'म्' व स्थानपर प् वर्ण 'व' पर श्रमुखार की प्राप्ति होकर प्राष्ट्रत पद'राहु परिहर्ष सिद्ध हो जाता है।

'से' सर्वनाम की सिद्धि सूर्व संख्या है ८१ में की गंडी है।

जेत (अथवा जयत) संस्कृत के पष्टी विभक्ति के एववचन का (अयवा त प्रत्यक्षेत्र अव्य त्मक पर का) रूप है। इसका प्राष्ट्रत में कियातिंपत्ति कें ध्यर्थ में पत्नी विमक्ति पूर्वर्क विधातम हर है। हैं। इसमें सूत्र सरवा १-१७० से सश्कृत विशेषगारमक वर 'जित' में' स्थित हलन्त 'न्' का लाप, रेरे से कियातिपत्ति के अर्थ में प्राकृत म प्राप्तान 'जिबा' में 'न्त' प्रश्यय की प्राप्ति श्रोर ३ १० में किवारियों के अर्थ में प्राप्तांग 'जिअन्तं' में पच्छी विमक्ति के एकपचन के अर्थ में संस्कृतीय प्राप्तंच्य प्रथ 'इन् स्थान पर प्राकृत में 'स्सं प्रख्य की प्राप्ति होकर 'जिल्लास्स' मिद्ध हो जाता है। ३ १ थ।

ः श्त्रानशः ॥ ३∸१⊏१ ॥ १

शतृ श्रानश् इत्येतयोः प्रत्येक न्त माण इत्येतानादेशी भनतः ॥ शत् । इतनो इ माणी ॥ श्रानश । वैवन्ती वैवमाणो ॥

ेशर्थ छदन्त चार प्रकार के होते हैं, निनकें नाम इस प्रकार हैं —हेल्वर्थ छत्ना, सब परुष कृदन्ति, कर्मिणि भूत कृदन्त और वेंतिमान क्रुन्ति, इनमें से तीन छद्दन्ता के सम्प्रन्य म पूर्व में दूनरे ब तींसरे पार्दी म यथा स्थान पर वर्णन कियां जा चुन है। चौंवे वर्तमान-हंदन्त की वणन हमेने कि जाता है। बर्तमान छुद्दन्त में प्रार्थ्त सब चर सिहा जैसे ही माने जाते हैं, इमलिये इनमें तीनों प्रशा लिंगों का सद्भाव माना जाता है स्रोर सङ्गार्कों के समान ही विमक्ति योघर प्रत्यवां की मा सयोजना की जाती हैं। मध्यत में वर्तमान-छदन्त के निर्माणार्थ घातु में सर्व प्रवम ना प्रकार क शर लगाये जाते हैं; जो कि इस मेरार हैं --(१) शह=अन और (र) शानच=आन श्रवंवा मात। व 5व ऐसे अर्जसर पर होते हैं, जर्चिक दो कियाए साथ साथ में होती हा । जैसे —तिष्ठन कार्विटवह कै हुआ पाता है । हमन् जल्पति=बर्ह हैंसता हुआ बोलता है । कम्पमोन गण्झति⇒बह कीवता हुआ आर हु । इत्यादि ।

प्राप्तत मापा में बंदीमोने-कृद्देश्य माब का निर्माण करना हो तो घाँतुंबी में संस्कृतीय प्राप्त प्रस्यय 'शत स्त्रीर खानश' में से प्रत्येक के स्थान पर 'न्त स्त्रीर माण' होनों ही मत्य्यों की स्त्रीहेत प्रारि

ो हैं। चूँ कि संस्कृत भाषों में तो धातुषें मुख्यंत दा प्रकार की होती हैं--- परस्मवदी श्रीर श्रास्मनेवंडी, नुसार पर्स्मैवर्दी घातुकी के वेर्तमान केंद्रन्त के केंद्र बनाने के लिप केंद्रल झातु ≓अतुं प्रस्यय की ंत होतीं है श्रीर कारमनेपदी धातुकों क वर्तमान छुदन्ते के रूप बनाने के लियें 'झान्छ्=आने श्रीथश त' प्रत्यय की प्रार्थ्ति होती है परन्तुं प्राकृत भाषा में घातुंग्री का ऐना भेन परस्मैपना अथवा खात्मने । जैसा नहीं पायाँ जाता है। इमलिये प्राकत भाषा की धातुओं में जेतेमान करून के रूपों का निर्माण ने के लिये न्तर और *माण*' दोनों *प्रत्यया* में से किसी भी एक प्रत्यय का सयो नना की जा सक्ती इसीलिय कहा गया है कि संस्कृतीय प्राप्तब्य वर्तमान कदन्तीय प्रस्यय 'शतृ=त्रात और शानप्=त्रान ावा मान' म से प्रत्येक के स्थान पर 'नने श्रीर भीएा' दोनों प्रत्यों की आदेश-पाष्ति होकर प्राकत 3 में किमी भी एक प्रत्यय की सयो नना कर देने से वर्तमान-कुन्त्त के अर्थ में उन धातु का रूप बन ता है। तत्र्वश्चात् सर्वे सामान्य सङ्घात्रों के समान ही सन्बेन्यन लिंग एव पचन के श्रनुसार सभी मिच्यों में उन वर्तमान क़रन्त सूच रू पदों में श्रीध हत विभक्ति के प्रत्ययों की संयोजना कर सद्रा क ान रूपों का निर्माण किया जा सकता है। जैसे -हसत् (प्रथमा विभक्ति के एकवचन के रूप में ल)=हमन्त अथवा हसमाण, (प्रथमा विभाक्त के एकवचन के रूप में 'हनन्ती अथवा हसमाणी')= ाता हुआ। वेपमात, (प्रथमा विभक्ति के एकवचन के रूप म-देपमान) = वेवन्त श्रीर वेबमाण, पयमा विभक्ति के एकवचन के रूप मे-चेवन्ती और वेवमाणी। इन नदाहरणों से स्पष्ट रूप में चह व होता है कि सस्कृत-मापा मे परस्मैपदी श्रीर आस्मिनपदी धातुश्रों में क्रम से 'शतु = श्रत श्रीर निचे = (आन अध्या) मान' प्रत्यर्थों की प्राप्ति होती है, किन्तु प्राक्तन भाषा की धातुर्श्नों में उपरोक्त कार के भेरों का अभाव होने से वतमान-क्रदन्त के अथ में 'नन तथा माण प्रत्ययों में से किसी भी एक यर को सयोचना की जा सकती है। तत्रश्चात यहाँ पर प्राप्त रूपों में अकारान्त पुँक्लिंग के सप्रान ही यमा विमक्ति के एकवचन के छर्थ में सूत्र सख्या २-२ से प्राप्तब्य प्रत्यय 'हो = आ' की सर्योजना की १६ै। यों श्राय विभक्तियों के सम्बन्ध में भी वर्तमान कुरन्त के श्रथ में प्राप्त रूपों की रियति की समझ ने चिहिया

हसत्=इसन् सम्कृत के वर्तमान कुर्न्त के प्रयमा विमक्ति के एकवचन का वुँ हिनग-योतक हव है। ^{9क माष्ट्रत} रूप इसन्तो और एसमामो होते हैं। इसमें सूत्र मख्या ४२६ में प्राफ्त में प्राप्त इसन्त ों 'हम' में विकरण प्रत्यत्र 'ख' को प्राप्ति, ३ १८१ से प्राप्त धातु खीग हम' म वतमान कुन्नत के खाद ं^{सभाताय} माप्तस्य म यय 'शहु=जत' क स्थान पर प्राकृत में कन स 'न्त छोर माण्' प्रत्ययों की मारित ी८ १२ स वर्तमान-कृदन्त क अर्थ मे प्राप्ताग अशरान्त प्राष्ट्रतपर 'हमन्त और हममाण' म पुँहिनग ^{प्रदमा विमक्ति के एक प्रचन के ऋर्थ में 'डो=को' प्रत्यय की प्राप्ति टो टर प्राकृतपद *हत्तन्तो* और} स्पाणी सिद्ध हो आते है।

षेपमान सरकृत के वर्तमान फुरन्त के एक्षचन था खुँ ल्लिंग चोतक ऋष है। इमके प्राकृत ^{ण वेद तो फोर वेवमाणो होते हैं। इनम सूत्र-सख्या १०३१ से मूल सस्कृत घातु यप' म स्थित अस्व} हलन्त ब्यब्जन 'प्' के स्थान पर 'व' भी प्राप्ति, प्र २३६ से ब्रादेश प्राप्त हलन्त व्यव्जन 'व' महिलक व प्रत्यय 'श्र' की प्रास्ति, ३ १८१ से प्राकृत मे प्रान्तांग 'वेव' में वर्तनान कुरन्त के श्रर्थ में सरकृता प्राप्त प्रत्यय 'शानच्=मान' के स्था। पर प्राकृत में कम मे 'न्त और मार्ग, प्रत्ययों की प्राप्ति और ११३ वर्तमान कुरन्त के श्रर्थ में प्राप्ताग श्रकांशन्त पुँल्लिग प्राकृतपर 'वेवन्त तथा वेवनाए' में प्रश्नाविष्त के एक उचन के अर्थ में हो = श्री' प्रत्यय की प्राप्ति हो कर प्राष्ट्रतपद *वेवन्तो* तथा वेवनाणी क्रम संक्ष हों जाते हैं। ३-१८ ॥

ई च स्त्रियाम् ॥ ३-१८३ ॥

स्त्रिया वर्तमानयोः शत्रानशोः स्थाने ई चक्रारात् न्तमाणां च मानि ॥ हर्ष हमन्ती । हसमाणी । वेवई । वेवन्ती । वेवमाणी ॥

अर्थः — प्राकृत मापा में स्त्रोलिंग के आर्थ में वर्तमान महत्त्व मात्र का निर्माण करना है व घातुर्ध्वा स सस्क्रनीय प्राप्तस्य प्रत्यय 'शत्ट≃श्रतः और शानच्≃धान व्यथवा सान' में से प्रत्येह क स्या पर 'न्त और माण तथा ई' या तीनों ही प्रत्ययों की आदेश गामि हीती है। परन्तु यह ध्वान में वही स्त्रालिंग स्थिति क सद्माव म जैसे संस्कृत में 'परस्मैपरी [']घातुओं में उक्त प्राप्तव्य प्रव्य 'शह=का^{' ह} स्यान पर 'ती क्षथवा न्ती' प्रत्यय की स्वरूप प्राप्ति हो जाती है तथा र्फालनेपदी घाउँ में उक्तप्रपर प्रत्यय 'शानच=झान अथवा मान' के स्थान पर 'ख्राना अथवा माना' प्रत्यय की स्वरूप प्राप्ति हाली वैसे ही प्राक्षत मापा में भो टीलिंग स्थिति के सद्भाव में उक्त रोति से खादेश प्राप्त वर्तमारूकृत अर्थक प्राप्तस्य प्रयय 'न्त और मण्ण' के स्थान पर 'न्ता, न्ना, माणी और माणा' प्रथम का सह प्राप्ति हो जाती है। जहाँ पर वर्तमान कुरन्त के धर्य में स्नीलिंग रियति के मद्भाव में उक्त प्राप्तन्य प्रत 'न्दी, न्दा, माणी और माणा' अध्ययों की सयोजना नहीं को जायगो, वहाँ पर केवल पातु इंग में स 'इ' की संयोजना कर देन मात्र से ही वह पर कीलिंग वाचक होता हुन्ना वतमान कर त प्रश्नंह प' । जायगा। इस प्रकार प्राकृत भाषा में स्नीलिंग के सद्भाव में वर्तमान छुदन्त के व्यर्थ में घातुर्जी में पे प्रकार के प्रत्ययों की प्राप्ति हो जाती है, जो कि इस प्रकार है - 'ई, न्ती, न्ता, माणा श्रीर माणी तरपञ्चात वर्तमान-ऋरन्त के अर्थ में प्राप्त दीर्घ ईकारान्त अथवा आकारान्त स्नीलिंग वाचक परी ह सना विभिक्तियों के रूप पहले वर्णित ईकारान्त श्रीर श्राकारान्त स्निम क्षाचक सङ्गा शुक्तों के समान हा बन जाया करते हैं। जैसे प्रथमा त्रिमिक के एडरचन के घर्य में यतमान-छश्न सूचक श्रीनिंग धावक पर्दों क वदाहरण इम प्रकार हैं —इसर्वा ध्यथमा हमन्ती = इसर्दे, हसन्ती, (हसन्ता), हमगाणा (बीर हमभाणा)=इँसती हुई (स्त्री) दूसरा चदाहरण --वेपमाना=वेवई, वेयन्ता, (वेयन्ता), धवमाणी (थीर वेबमाणा ,नहाँवती हुई। यो खन्य विमक्तियों के रूपों की भी वर्तमान करन्त के तरमाव में स्वय मेत्र वरूपना कर लेनी चाहिये।

हसती श्रथमा हसन्ती संस्कृत के वर्तमान-कृद्त्त के अर्थ में प्राप्त प्रथमा विमक्ति के एकपचन ... इ. स्री लिंग-बोतक रूप हैं। इनके प्राकृत रूप हमइ, हसन्तो -श्रीर हसमाणी होते हैं। इनमें सूत्र सख्या-४२३६ से मूल हलन्व प्राफत घातु हिस् मे विकरण प्रत्यय 'श्चरं की प्राप्ति, दे १८२ से तथा ३-१८६ से ूहम स म्थम रूप में तथा द्वितीय तृतीय रूपों में प्राप्त घातु श्रद्ध 'हस्' में वर्तमान कुश्न्त के श्रर्थ में प्राफृत म प्राप्तव्य प्रत्यय 'ई' छीर 'न्त तथा माण' प्रत्ययों की प्राप्ति, इ'३२ से। द्वितीय छीर तृतीय रूपों में वत-मान-इत्त्त क अर्थ में प्राप्त पद 'हसन्त और इसमाएँ' में स्त्रीलिंग-माव के प्र-र्रोन में 'डो = ई' प्रत्यय की माप्ति होने से 'हसन्ती तथा हममाखी' की प्राप्ति और ३ २= से वर्तमान-करन्त के अर्थ में प्राप्त स्त्रीलंग पर 'हमई, हमन्ती श्रीर हॅसमायी' में प्रथमा विभक्ति के एंकवचन में प्राप्तंच्य सस्कृतीय प्रश्यय 'सि' का प्राकृत में लोप होकर प्राकृत-पद 'हसई, हसन्ती श्रीर हसमाणी' सिद्ध हो जाते हैं।

विपमाना संस्कृत के वर्तमान कृद्रत के प्रथमा विभीक्त के एकवचन का स्त्रीलिंग-शोवक रूप है। १७३ प्राकृत रूप वेवई, वेवन्ती श्रीर वेवमाणी होते हैं। इनमें सूत्र सरया १-२३१ से मूल सन्दृत घातु ' 'वप्' में स्थित श्रन्त्य हलन्त व्यञ्जन 'प' के स्थान पर 'व्' की प्राप्ति, ४ २३६ से प्राप्त प्राकृत हलन्त घातु रिप देव' म विकरण प्रत्यय 'श्र' की प्रान्ति, ३ १⊏२ से तथा ३-१⊏१ से प्रान्ताग धातु 'वेव' में कम से भ्धम रूप में तथा द्वितीय तृतीय रूपों में वर्तमान छुर्न्त के अब में प्राकृत म प्राप्तव्य प्रन्यय 'ई' स्रीर ें तथा माण' प्रत्ययों की पान्ति, ३३२ से द्वितीय श्रीर तृतीय रूपों में वतमान-कृत्त्व के श्रर्थ में प्राप्त . पर 'ववन्त श्रीर वेवमाण' में स्त्रीलिंग भाव क प्रदर्शन में 'डी=ई' प्रस्वय की प्राप्ति होने से 'वेवन्ती थीर बेवमाणी क्यों को प्रान्ति, खीर ३-२८ से वर्तमान कृदन्त के खर्थ में प्रान्त स्त्रीलिंग-पद 'वर्गई, ^{पदा} और वेवमाणी' में प्रथमा विभक्ति के एक उचन के ऋथे में प्राप्तब्य मस्कृतीय प्रत्यय 'सि' का प्राकृत म लाप होरर प्राकृत पर 'नेषई, नेयन्ती खौर चेयमाणी' सिद्ध हो जात हैं। ३ १८२॥

इत्याचार्य श्री हेमचन्द्र विर्चिताया सिद्ध हेमचन्द्राभिधानस्योपज्ञ शब्दानुशासनवृत्तां श्रष्टमस्याध्यायस्य तृतीयः पादः ॥ ३ ॥

इस प्रकार श्री हेमचन्द्राचार्य द्वारा रचिते 'श्री सिद्ध हेमचन्द्र शब्दानुसामन' नामक सस्द्रत प्राकृत ध्याक्रएण के श्याठवें श्रव्यावक का नीसरा पाद 'स्वीपज्ञ पृत्ति सहित श्रयीन स्व निर्मित्र संस्कृतन्याका-^{'महाशिक}ा' सहित समान्त हुआ। इसके साथ साथ 'प्रियोदय' नामक हिन्दी व्याख्या रूप वित्रयन मी हैं अब पार का समान्त हुआ।।

पादान्त-मंगलाचरण

ऊर्घ स्पर्ग-निकेतनादपि तले पातालमूलादपि, रवत्कीर्तिर्भ्रमति चितीरवरमणे पारे पयोधरिप ।

वृत्ति में त्रादेश प्राप्त घातुत्रों को जदाहरण पूर्वक इस प्रकार समस्ताया गया है -हथपट-वजारद, पञ्जरह, उत्पालह, पिसुणह, सघड बोल्लंह चेवह, जन्पह, सीमह और सान्ध, इने झा सह, रूपों का एक ही अर्थ है = वह वहता है। चूँ कि यह आदेश विधि वैकटियक है अत, प्रतान्तर में क्यां क स्थान पर कहह रूप भी होता है।

पश्न - उब्बुनकइ' इस रूप की प्राप्ति कैसे होती है ?

उत्तर'- धुमक धातु का अर्थ भीषण करना होता है, न कि क्यन करना, इतालेवे हुन्हणा को अधिकृत धातु कथ के स्थान पर आदेश स्थिति की आप्ति नहीं होती है। इस बुक्र बातु में म् उपसर्ग हैं, जो कि 'ड' प्रथमा 'डब् के रूप में अवस्थित है। इस विवेचन से संस्कृत पातु रूप भाषा स्थान वर प्राकृत से बस्बुक्कइ रूप की खादेश प्राप्ति हुई है।

सरप्त घातुत्रों के स्थान पर प्राफर्त में उपलब्ध घातु मर्वो को अन्य वैवाकरणों ने पर भाषाओं के घातु रूपों' की मंझा दी है, परन्तु हमने (हेमचन्द्र ने) ता व्हन घातु रूपा को वैशन्तर रू में खादेश प्राप्त धातु ही मानी है, तथा ये ज़ाकत मापा की ही धातुरों हें, ऐना पूर्णतया नेमान क्रिया गर हैं, इसलिये इनमें विविध काल बोधक प्रत्ययों को तथा श्राज्ञार्थक श्रादि सभी!लकारों के खं ऋतें !

प्रथयों की जोड़ना चाहिये। योड़े से उदाहरण द्वस प्रकार हैं — राज्या की जोड़ना चाहिये। योड़े से उदाहरण दूस प्रकार हैं — (१) कथित = चजारिओ=कहा दूखा, (२) कथित्या=चजारिजण=कह करके, (३) क्यान्स वक्करण=इहना, कथन करना; (४) कथेयन्=धेक्करनतो = कहता हुईमा, (५) कथापेतव्यम् = वद्यिः अदय = कहना चाहिये, यों हजारों रूपो की साधना स्वयमेव कर लेनी चाहिये।

इन धातुओं में प्रयय, लोप, व्यागम आदि की विधियाँ संस्कृत घातुओं के समान ही जातन चाहिये। ४ गी

ा है है कि किस्ता । है हैं। इस्ताह है के किस्ताह । 18-311 से किस

र्दुःस निषयस्य कथेखिञ्चर इत्यादेशो वा भनीत ॥ खिञ्चरह दुःस क्रथयतीरुवयः ।

अर्थ -- 'दुः स को कहना, दुः ख को प्रकट करना' इस अर्थ में ब्राष्ट्रन में विकल्प सं जिपका प्रकार के घातु की आदेश प्राप्ति होती है। जैसे—इ स कथयति = णिखरह = वह दुल् को कहता है दुख को प्रकट करता है। ॥४ ॥ 🔔

🔪 जुगुप्ते । भुगा-दु : गुच्छ-दुगुञ्छाः । ११-४॥ ।

जुगुप्सरेते त्रय बादेशा वा भवन्ति ॥ सुण्डः दिगुन्छः । दुगुन्छः । प्रे । जुगुन्छः गलोपे । दउन्छइ । दुउन्छइ । जुउन्छइ ॥

अर्थ — 'मेणा करना, निन्दी करनी' इस अर्थ में प्रयुक्त होने वार्ली सखुत भाव 'जुर्गुप्त' के स्थान क्षिति हैं। वे क्षम से वों हें — (१) के (१) हुगुच्छ 'जीर (३) हुगुच्छ । 'जदार हम 'प्रभार हें — जुरुस्तित = छुणह, हुगुच्छ ह, हिह = वह मूर्णा करना है जिस्ति के विश्व कि पत्ति के विश्व के वि

सूत्र सस्या १ १७७ से मूल धार्तु चिंगु ईंछ में से विव क्व से मिंग का लोग होने पर पूर्वोक्त तीनो हा हम स वैव दिवक प्राप्ति यों होगी —(१) हुउच्छड़, (२) हुउच्छड़ और (३) जुउच्छड़ = वह इंश्ताई सेथेबा निकों करता है।।॥ थ्रा

बुर्साच-वीज्योगीर्व-वोज्जो ॥४--४॥

ष्ठिक्षेत्राचार र क्वियन्तस्य - च ीजेर्थशासंख्यमेताजीदेशौ धा भगतः ॥ स्थारवहाँ। बुहु-। बोज्यह १ बीजङ्गा -

🗏 ध्या-गो भी-गो ।।४-६॥

अन्योपया-सस्य का गा इत्यादेशी भवतः। काड । काळह । खिजकाड । खिजकाळह । वैदियनार्थः । गाह । गायह । काळा ।

गर्थ — संकृत धातु ध्ये' के स्थान पर प्राष्ट्रत में 'का' धातु का नित्य रूप से आर्देश प्राप्ति होता रें। प्रशार से गायन वरने ऋथक धातु 'गैं' के स्थान पर मी निर्ध्य रूप स 'गा' धातु की धारेश प्राप्ति रें। वैसे — प्रायक्ति-झाड़ श्रथका झाअड़ = वह ध्यान करना है।

प्यान पूर्वक देखने क अर्थ में जम 'प्ये घातु क पूर्व में 'निर' उपमर्ग को प्राप्ति होती है, उस देद में पर्य क स्थान पर 'की' घोतुं कुष को हो आदेश-प्राप्ति होती है। जैस-निर्मायित='एउमाद को जिसकाद्य के स्थान पूर्वक देखता हैं। 'भैं' घातु को 'उदाहरण थीं है - गायति = गाद क्ष्यवा 'द्र वह गाता है-गायन करता हैं। 'भैं इती मुत्र-मिद्धान्त से संस्कृत शर्द ध्यान श्रीर (गायन श्रयमा)गान क स्थान पर श्रव्स 'फाण' श्रीर 'गाण' राज्य को कमं स प्राप्ति होता है। जैसे —ध्यानम् इसणम् श्रीर गानम्जाए। दोनों शब्द नपु मकर्तित होने म इनमं सूत्र सच्या ५-२५ से अथमा विश्विक क वह बबन में 'ग्' क्र की प्राप्ति हुई है। सूत्र मख्या १-२३ स प्राप्त प्रत्येष 'म्' के स्थान पर अनुस्वार का प्राप्त होस्तं व स साण् श्रीर गाण रूपो का सिद्धि हो जाती है। ४-२॥

्रे ज्ञो जाण-मुखौ ॥ ४,-७॥

जायाते जीस सुस इत्यादेशी भगतः ॥ जास्त्रे । सुस्य । बहुलाधिकात् की निकल्प । जामित्रं । सार्य । जासिकस । सारुस । जासिस । सार्य । सर्वः

जर्थ —जानने रूप ज्ञानार्थेक घाँतु 'जा' के स्थान पर प्राकृत में वित्यह्म से 'पाणकीर हैं। इन दी घातुआं को कम से आदेश आर्थित होती है। जैसे—जानाति = जाणड़ अथवा कुणड़-वह डाल है। 'बहुल' सूत्र का सर्पत्र अधिकार होने से कहाँ कहाँ पर विकत्य से 'ज्ञा' से प्राच रूप 'था' मा है जाता है। जैसे —ज्ञात = जाणिअ अथवा णाय = जाना हुआ। ज्ञाराजाणिकण अथवा पाण ज्ञान करके। ज्ञानम् =जाणिअ अथवा पाण =ज्ञाना हुआ। क्षाराजाणिकण अथवा पाण प्राचना हुआ। वी वैक्रीलपक-स्थिति का मी प्राचन पाहिये।

प्राकृत में जो 'मणह' रूप ब्यां जाता है, उमकी प्राप्ति तो 'मानने-स्वीकार करने हर्षे सरकृत घातु 'मन्' से हुद है। जैसे-मन्यते=गणइ=पह मानता है अयवा वह स्वीकार करता है यों मण घातु को जाया, और सुण धातुओं स पृथक हो समक्रता चाहिया। ४-७॥

उदो घ्मो घुमा ॥ ४-= ॥

उदः परस्य थ्मो घातो धु मा इत्यादेणो मनति ॥ उद्धुमाइ ॥

अर्थ -- उद् उपमर्ग जुडा हुआ है जिसक ऐसी 'मा' धातु के स्थान पर प्राप्त में 'दुन' रूप मी 'प्रादेश प्राप्ति सेती है। जैसे-जदमित = जदुमह = वह पदीम करता है, यह नपान है। "

श्रदो घो दहः ॥ ४-६ ॥

े श्रद्धः परस्य दघाते र्देह इत्यादेशो भनति ॥ सहहद्य । सहहमाको नीवा ॥

अर्थ —अत् अञ्यय के माध संस्कृत चातु 'वा' के प्राप्त रूप 'द्याति' में रहे हुए 'द्या' की क स्थान पर प्राक्त म 'दह रूप को चादेश प्राप्ति कोती है। जैसे—अह्याति न सहहहन्बद खडा हरी है, वह वि वाम करता है। अहमानी जीर्च-सहहमाणी जीयो-अद्या करता हुमा जीव साला॥ ११।

🕆 पिन्नेः पिज्ज-डछ-पद्द-घोट्टाः ॥ ४–१० ॥

पिनते रेते चरनार स्त्रादेशा वा भगन्ति ॥ पिन्नड । उल्लड । पट्टड । घोट्टइ । पिस्रइ ॥

कर्थ — सम्छत घातु 'पा=िषव के स्थान पर प्राकृत में विकल्प से पिश्त हल्ल, पट्ट श्रीर घोट्ट'। चार श्रादेशों की प्राप्ति होती है। वैकल्पिक पत्त होने से पिय के स्थान पर 'पिश्च' रूप मी होता है। इस्प इस प्रकार है — पिश्वति—पिञ्जङ, उल्लंड, पट्टर श्रीर घोट्टड़-पह पीता है, वह पान करता है। गांतर में पिश्वति के स्थान पर पिअड़ रूप को प्राप्ति भी होगी। ४-१०।

उद्घातेरोरुम्मा वसुत्रा ॥ ४-११ ॥

उत्पूर्वस्य वाते श्रोरुम्मा वसुश्रा इत्येतांवादेशी वा भवतः ॥ श्रीरुम्माइ । वसुश्राइ । गर् ॥

भर्य —उत्त उपसर्ग सहित 'वा' घातु के स्थान पर प्राष्ट्रत में विकल्प से 'ब्रोरुम्मा खोर यसुष्टा' की खादेरा प्राप्ति होती है। पत्तान्तर में 'उद्वा = उद्घा' के स्थान पर 'उज्वा' रूप भी होगा। १६९७ वर्ष हं —उद्माति =भोरुम्माइ, प्रमुआइ खोर उद्याह=यह हवा करता है। ४-११॥

े निदातेरोहीरोड घौ ॥ ४-१२ ॥

निपूर्तस्य द्रातेः श्रोहीर उह्न इस्यादेशो वा मनतः ॥ श्रोहीरह । उह्नड । निनाइ ।

अर्थ - नि उपसर्ग सिंहत 'द्रा' घासु के स्थान पर प्राकृत में विकल्प से 'ओहार और उद्घ इन रूजों की आदेश प्राप्ति होती है। पत्तान्तर में 'निद्रा' के स्थान पर 'निद्रा' रूप मी होगा। जैसे—
सिंति-ऑहरिङ, उद्घड़ और निटाइ = वह निद्रा लेता है।। ४-१२॥

व्यावे राइग्वः ॥ ४-१३ ॥

श्रानिमते राह्म्य इत्यादेशो वा भगति ॥ स्नाह्म्यह । स्रम्याह ॥

भर्य —सस्तृत धातु 'आजिम्' के स्थान पर प्राकृत में विकल्प से 'आइम्प' रूप को खादेग ने रोती है। पत्तान्तर में खम्बा रूप मी हागा। जैसे---आजिमति=आइम्पड धीर अम्माड=यह पना है।

• स्नातेरबभुत्तः ॥ ४-१४ ॥

स्नावेरन्ध्रुत इस्यादेशो वा भनति ॥ श्रव्धत्तः । यहाइ ॥

अर्थ —संस्कृत मातु म्नो के स्थान पर प्राकृत में विकल्प से 'श्रामुत' रूप की श्राहेश श्री होती है। प्रचान्तर में 'यहा' रूप भी होगा। जैसे-रनावि-अब्मुत्तक श्रीर णहाइ-वह स्वान हाता है

समः 'स्त्य 'खाः ॥ है--१५ ॥

संपूर्वस्य स्त्यायते ,सा,इत्यादेशी भन्ति ॥ सखाइ ॥ संसाय ॥ . .

अर्थ —सम् विवशं के साथ सरकत धातु 'स्वै≃स्त्याथ' के स्थान वर प्राक्षन में 'ब्।' रूप क आदेश प्राप्ति होती है। जैसे—सस्त्यायाति≃सखाइ = बह घेरता है, वह फैनाता है। वह पर्व प्रक्र से जिन्तन करता है। सस्त्यनस्त्र सुख्याद्वात् म्यान कुरना, विल्वन कुरना गृ.४ १४॥

ू ' स्थप्टा-थक-चिद्द-निर्प्पाः, ॥ १८-१६ ॥ ३ . ४

निष्ठतेरेते चरवार श्रादेशा भवन्ति ॥ ठाड । ठाश्रह । ठाणं । पहिजो । उहिन्ने पहावित्रो । जुडापिश्रो । यक्तर ।। चिह्नहः । विहुक्तण । निरुपराम पहुलापिकारात् 'क्रवि भगति । यित्रं । शार्णं । परियमो । उत्त्यको । याक्तण् ॥

अर्थ —ठहरने व्यर्थ वाली सस्त्रत वातु 'स्था=विष्ठ' के स्थान वर प्राठ्न में चार व्यारेश हं की प्राप्ति होती है। वे इम प्रकार हिं — (१) का (१) युक्त (३) विद्वरणीर १४) तिरत्य । वदाहरण इ प्रकार हैं —ित्राति =ठाइ, ठाअइ, थ्यइड़ा, विद्वरु, विरुद्ध = यह ठहरता है। श्रन्य वदाहरण इ इम प्रकार हैं —(१) स्थानम् =ठाफ =स्थान । (२) प्रत्यित = विद्वर्षो = जाता हुआ, (३) शिवत = विद्वर्षो = उत्तर् हुआ क्षयदा उठा हुआ, (४) प्रत्यापिन' = पृष्टाविको = रहा । हुआ अपया स्वर्ष हुआ, (४) वृत्यापिनु = वहाविद्या = नठाया हुआ, स्थित्या = विद्विरुष = ठहर कर है।

बहुल सूत्र के अधिकार से कहाँ कहीं पर जक आदेश मानि नहीं मो होतों है, जैसे कि निस्यतः विश्व = ठहरा हुआ, रसा हुआ। स्थान = ब्राणं = हुयान । महिथुत्, च्यासियों = प्रम्यान किया हुआ। जाता हुआ। उत्थित = उत्थियो = उठा हुआ, और स्थित्या = थाजुल = ठहर करते। यो सर्वः आदेश रहित स्थिति भी भी समक्ष तेना आहिये गुँउ है रहा।

्डद्ण्ड -कुनकुरी ॥४-१७॥ ू

उद परस्य तिष्ठतेः ठ कुक्कर इत्यादेशी भारतः ॥उहहाः उक् कुरह ॥

अर्थ —जत ज्यसर्ग सहित होने पर स्या ≈ितन्न चातु कं स्थान पर 'ठ' श्रीट 'कुस्कुर' घातु-हव को आवेश पाप्ति होती है। जैसे —जिस्मुल लिक्कुर और उक्कुर्कुर ≠ वह उठना दें। ।८-१ वी `

्रम्लेर्बा-पव्वायौ ॥ ४-१८॥

म्लायतेर्गा पन्नाय इत्यादेशी वा भनतः ॥ वाड । पन्नायह । मिलाइ ॥

अर्थ —मुरमाना श्रथवा छुन्हलाना श्रर्थवाली सम्क्रुत घातु 'म्ले' के स्थान पर प्राक्ष्त में विकल्प स 'वा श्रीर पण्याय' इत दो घातुओं की श्रादेश प्राप्त होर्ना है वैकल्पिक पद्म होन से पद्मातर में 'मिला' रूप दी मी प्राप्ति होगा। वदाहरण इन प्रकार है — म्लायित - वाह, पट्यायह श्रोर मिलाइ = वह फुम्ह-माता है, वह सुरम्तता है।। ४-१८ ।।

निर्मो निम्माण-निम्मवी ॥ ४-१६ ॥

निर् पूर्वस्य मिमीनेरेतावादेशौ भनतः ॥ निम्माणइ । निम्मनइ ॥

अर्थ — निर्पु उपनर्गसिंहत 'मा' घातुक स्थान पर माकृत में 'निम्माण त्रोर निम्मय' ऐसे दा पाउ-रुपों की श्रादेश प्राप्ति होतो हैं। 'जैसे — *निार्भमिति = निम्माणह* श्रोर *निम्मवह* = वद निर्माख इस्ता है॥ ४-१६॥

चेर्सिंडकरो वा॥ ४-२०॥

चयतेथिज्मर इत्यादेशो वा भनति ॥ शिज्मरइ । पर्वे भिन्न नइ ॥

अर्थ --नष्ट होना श्रथं वार्ला सस्कृत घातु 'चि' के त्थान पर प्राकृत में 'गिउमर' धातु-रूप का पादस प्राप्त होती हैं । पत्तान्तर में 'फिउन' रूप की मी प्राप्ति होगा। जैमे-क्ष्यति श्रथमा क्षयते = पिक्तरह श्रथमा क्षिजनह = वह चीएा होता है, वह नष्ट होता है ॥ ४-र०॥

वदे र्थे सु म-नूम-सन्तुम-डक्कीम्बाल-पद्मालाः ॥ ४-२१ ॥

६६रेएपेन्तस्य एते पडादेशायाभवन्ति ॥ ग्रुमडा नृपडाग्यस्ये ग्रूपडा मनुमडा भडाशोम्बालडापकाल्डाङाध्यमहा।

भर्थे — प्रेरणार्थक प्रस्वय 'िन्यु' पूर्वक 'छड्' = 'छादि' घानु च स्थान पर प्राप्टन में विकल्प में हेर पातु-स्त्यों की आदेश प्राप्ति होती है, व कम से इस प्रकार हैं —(१) ग्रुम, (२) नूम, (३) मन्तुम, (१) दक्ष (४) घोन्वाल आरे (६) पत्र्याल । सूत्र-मंख्या १-२२६ में आदेश-प्राप्त स्त्य नून म श्यित भीदेनहार को स्पकार की शक्ति होने पर सातवा आदेश प्राप्त रूप 'स्प्स' में, देपा जाता है। वै कित्वक पत्त होने से खाठवा रूप 'छाय' भी होगा ' मभी के बदाहरण क्रम स इम प्रधार'-छा दयात (खायवा छा दयते) ≈ (१) णुमइ, (२) जूमइ, (३) णुमइ, (४) सन्तुमइ, (३) डक्ड, (,) आवा छड (७) पटवालड और (२) छायइ = वह ढां इता है, यह खाच्छादित करता है ॥ ४-२१॥

नित्रि पत्योर्णि होडः ॥ ४-२२ ॥

निष्टग पतेश्र एयन्तस्य णिहोड इत्यादेशो वा भगति ॥ णिहोडइ । पर्च । निगार पार्य।

अर्थ — 'नि' उपसर्ग सहित बृग् पाषु श्रीर पत्त घातु में प्रेरणार्थक 'एक्टन' प्रत्या साथ में प्रश्ने पर दोनों घातुओं के स्थान पर प्राकृत में विकल्प से 'शिहीड' घातु रुव की स्थान पर प्राकृत में विकल्प से 'शिहीड' घातु रुव की स्थान पर निकार है। जैसे — निकार्याति = णिहोडड़ = वह क ब्वाता है, पचान्तर में निकारयाति के स्थान पर निकार भी होगा।

पातयाति = णिहाडइ = वह गिराता है और पनान्तर में पांडेइ हुव भी होगा ॥४ ३३।

< दूडो दूमः ॥8-२३॥[∗]

दृहो एयन्तस्य दृम इत्योदेशो मनति ॥दृमेइ मज्म हिश्रय॥

अर्थ'—प्रेरणार्थक एवन्त प्रत्यय साथ में रहते पर दृष्ट् धातु के स्थान पर प्राकृत में दूम पाउँ त्र की आदेश प्राप्ति होती है। जैसे—दुनेशित सम हृदय = दूसेड़ मज्झ हिअय = पह मेर हर्य हो हुँ इं करता ईं-पीड़ा पहुँचाता है । १४ २३॥

धवले द्वीमः ॥४-२४॥

धालयतेषर्वन्तस्य दुमादेशो वा मवति ॥ दुमः । घालः । स्वराणा स्तरा (बहुनरः [४-२३८। इति दीर्वरामपि । दुमिश्र । घवलिवमिस्यर्थः ॥

शर्थ — प्रेरणार्थक रयन्त प्रत्यय के माथ संस्कृत धातु 'धवल' के स्थान पर प्राइत में दिक्ल हे 'दुम' धातु रूप की व्यावेश प्राप्ति होती हैं। जैसे —धवल्याति = हु मझे व्यवता भवलड़ = वह भक्त कार्या है, वह प्रकाशमान कराता है।

सुत्र-संख्या ४ २३८ के विधान स प्राक्कत मापा के पहें में रहे हुए स्वरों के स्थान वर प्राय कर के स्वरों की व्यवन दोर्घ के स्थान पर द्वार स्वरं, की और हार क्वर क स्थान पर दीर्घ स्वरं की प्राप्ति हुआ करिया कि प्राप्ति है । जैसे—धवितितम्=दूमिका अथवा दुमियं=मफेद कराया हुआ क्षमवा प्रकारमान कराया हुआ क्षमवा प्रकारमान कराया हुआ क्षमवा प्रकारमान कराया

तुले रोहामः ॥ ४--२५ ॥

तुलेर्ण्यन्तस्य स्रोहाम इत्यादेशो वा भगति ॥ स्रोहामड । तुल्ई ॥

भर्थ — मेरणार्थक प्रत्यव 'एयन्व' महित सस्कृत धातु तुन के स्थान पर प्राकृत में विकल्प से प्राह्म भातु रूप को आद्याप प्राप्ति हुआ करती है। जैसे—तुन्यति = ओहामइ = वह नील कराना । पनान्तर में 'तुलड़' = वह नाल कराना है ॥ ४-२४ ॥

विरिचेरोत्तुग्रडोल्तुग्ड-पल्हत्थाः ॥ ४-२६ ॥

विरेचयनेषयन्तर्य श्रोलुण्डादयस्त्रय श्रादेशा वा भगन्ति ॥ श्रोलुण्डह । उल्लुण्डह । इत्यह । विरेश्रह ॥

अर्थ —प्रेरणार्थंक प्रत्यय ज्वन्त सहित सहक्त घातु 'विश्व्' के स्थान पर प्राक्कत मापा में विकल्प । होन घातु आदेश हुआ करते हैं, जोकि कम से इस प्रकार हें —(१) खोलुण्ड, (२) जल्लुण्ड खौर है। प्रहस्य । व्हान्तर में विदेश रूप भी होगा। उदाहरण यों हे —िप्रदेशति = खोलुण्डइ, उहलुएडइ, व्हलुएडइ, व्हल्य = वह बाहिर निकलवाता है, वह विरेश्वन (भराना द्वकाना) कराता है। प्रतान्तर म रेरेव्यन का पिरेश्वह रूप भी बनेगा।। ४-२६॥

र् तडेराहोड-विहोडौ ॥ ४-२७ ॥

वडेर्वन्तस्य एतानादेशी ना भनतः ॥ त्राहोडह् । विहोडह् । पने । ताडेह ॥

अर्थ प्रेरणार्थक प्रत्यव 'एयन्त' सहित सस्कृत थाष्ट्र तड़ के स्थान पर प्राकृत में 'झाहोड' गैंग 'विद्याद ऐसी ने घातुस्त्रों की विक्तन सं आदेश प्राप्ति होती ईं। पद्मान्तर में 'ताड' रूप की भी विद्योगे। जैसे --ताडयाति = आहोडड़ स्त्रोर जिहोडड़ = यह मार पीट कराता ईं, यह नाइना आवाई। पद्मान्तर में 'ताडेड़ रूप होगा॥ ४ २७॥

मिश्रे वींसाल-मेलवी ॥४-२८॥

मिथयतेषर्यन्तस्य वीसाल मेलव इत्यादेशी वा भनतः ॥ पीसालड । मेलनइ । मिस्मइ॥

अर्थ - प्रेरलार्थक प्रत्यय 'त्यन्त' सहित संस्कृत थातु 'मिश्र' के स्थान पर प्राकृत-भाषा म ^{देह}ा स दो घाडु-रूपों को द्यादेश प्राप्ति होती है। वे हैं (१) बीमाल और मेलव। प्राप्तन म 'मिस्म' प्रमा होता। बराहरख वों है - *मिश्रयति = दीसालड़* और *मेलचड़* = वह मेल मिनाप कराना है, यह विवसेत कराता है। प्रचान्तर में मिससद रूप होता है। ४ ६ मा

उद्धूले गु गठः ॥४-२६ ॥

उद्बू लेएर्यन्तस्य गुएठ इत्यादेशो वा भनति ॥ गुएठइ,। पर्व । उद्ब लेह ॥

अर्थ — प्रेरणार्थक प्रत्यव 'त्यात' सहित तथा वद् उपसर्ग सहित सहत सातु वृत् क स्थाद स प्राकृत में 'गुण्ड' धातु रूप का विकल्प से आदेश प्राप्ति होती है। पनान्तर में उद्धूत कर मान्स्या' जैसे — उद्धूल्याति = गुण्ठङ अयना उद्गृष्टे । = यह वकावा है वह व्याप्त कराता है। यह बाह्यहरू कराता है। १४ २६ ॥

भ्रमेस्तालिऋग्ट-तमाडी ॥ ४-३०॥

अमयते एर्यन्तस्य तालिश्रण्ट तमाड इत्यादेशी या भवतः ॥ तालिश्रण्टइ.। वश्य मामेइ । भमाडेह । भमावेह ॥ ,

अर्थ —प्रेरिषार्थंक रवस्त प्रत्यय सहित संकृत बातु भ्रम् के स्थान पर प्राकृत भाषा में विस्त्रहें 'तालिश्वरूट खोर तमाड' ऐसे दो बातु रुपों को खादेश प्राप्ति होती हैं। जैन —भ्रमयाति =ताकिष्य खोर तमाडड़ =वह युमाता है। 'भागेड़, भमाडेड़', भमाडेड़' स्पभी होते हैं। '४-३० ॥

नशेर्विउड-नासव-हारव-विष्पगाल-पत्नावाः ॥ ४-३१ ॥

नशेषर्यन्तस्य एते पश्चादेशा वा भवन्ति ॥ विजडह । नासवह । हारवह । विष्णाहा पलावह । पत्ते । नामह ॥

अर्थ — नेर्स्णार्थक प्रत्यय स्थन्त सिहन माञ्चन घातु नश् के स्थान पर प्राष्ट्रत माधा में विश्वे में पांचे घातु रूपों की खादेश प्राप्ति होती है। वे क्षम से इस प्रकार हैं —(१) विषव, (२) नावव, (३) हारव, (४) विष्यगाल खीर (४) पलाव। इनके चदाहरण इस प्रकार हैं — नाजयंति ≈विवर्द्ध, नावशे हारवद, विष्यगालह खीर पलावइ = यह नाश कराता है।

पद्मान्तर स नासह मी होगा और इसका अर्थ भी 'वह नाश कगता है' होगा ॥ ४ रहे ॥

🌯 हरोटीय-देस-देक्खवाः ॥ ४-३२ ॥

दशेएर्यन्तस्य एते त्रय व्यदिशा भवन्ति ॥ दावड । दसइ । दक्खवई । दिस्स ॥

अय — प्रेरणार्थक प्रस्वय एयन्त सहित संस्कृत घातु दृश के स्थान पर प्राहुत भाषा मं विदयन तीन त्रावेरा होने हैं, वे जम से वॉ हैं —(१) दान, (१) दम खीर (१) 'वम्सव'। द्वाहे बहाहरण हैं हार हें — दर्शयात - दायह, उत्तरहर और इक्खवह = वह वस्ताता है अथवा वह प्रशित कराता है। हातर में दरिसह रूप होता है।। ४-३२॥

उद्घटेरुगः ॥ ४-३३॥

उन्पूर्वस्य घटेर्थ्यन्तस्य उन्म इत्यादेशो वा भगति ॥ उन्गइ । उन्घाडह ॥

जर्थ - प्रिरणार्थक प्रत्यय एवन्त सहित तथा उन उपमर्ग सहित सरक्रन घातु घट् के स्थान पर का मापा में विकला से 'जगा' ऐसे' घातु रूप की आदेश प्राप्ति हाती है। जैसे — उर्वाटयित = पर=वह प्रारम्म कराता है अथवा वह खुजा कराता(है। पज्ञान्तरे, उन्चाडड्, रूप भी होता है। १४-२२॥

~स्पृहः सिहः ॥ ४−३४ ॥

सृष्ट हो एयन्तस्य सिह्। इत्यादेशी भगति ॥ सिहड ॥

वर्ष —प्राणार्थक प्रत्यय स्वन्त सहित सन्क्रत थातु 'स्वृह्' कें स्थान पर प्राकृत भाषाः में नित्यः रूप विहे पातुः रूप की आदेश प्राप्ति होती हैं '।'जैसे '—स्टुह्याति = सिहरू = वह चाहना-इच्छा कराता । ४ इप्ता

संभावेरासंघः ॥ ४–३५ ॥

समानयतेरासङ्घ इत्यादेशो ्व भनति ॥ त्रासङ्घ । समानद ॥

अर्थ — सस्का-घातु सभावय के स्थान पर प्राकृत भाषा में विकल्प से 'आमद्व ऐस धातु,रूप भारत प्राप्ति होती हैं। पद्मान्तर में संभावय के स्थान पर सभाय रूप भी होगा। जैसे — ^{19पाते} = आसह्द, पद्मान्तर में 'संभावइ ≔वह सभायना कराता है'।। ४३४।।

् उन्नमे रुत्थंघोल्लाल -गुलु गुद्रञ्जोप्पेलाः ॥ ४–३६ ॥

उत्पूर्वस्य नमेएर्यन्तस्य एते चत्यार् आदेशा या गमन्ति ॥ उत्यद्धः । उल्लालहः । व्यद्धा उप्पेलहः। उन्नामङः ॥

सर्थे — प्रेरणार्थक प्रत्यव एवन्त सिहत नथा उत् उपमर्ग सिहत मंस्कृत थातु नम् के स्थान पर ैमावा में वैक्टियक रूप से चार धातुओं की आरेश शांति होती है। जी कि कम सं इस प्रकार -(१) वर्ल्यण, (२) वस्ताल (३) गुलुगुक्छ श्रीर (४) वर्षका। पत्तान्तर में 'वक्ताम' रूप की मी प्राप्ति । विस्तिरण इस प्रकारः— उल्लामपति = उत्यंवद, उल्लाखद, गुलुगुक्छद, उप्येवद श्रीर उल्लामद, हैता बढाता है। यह उपर बढाता है॥ ४-२६॥ [३५४] * त्रियोद्य हिन्दी व्याख्या सहित *

- प्रस्थापेः पट्टब-पेगडबी ॥ ४-३७ ॥

प्रपूर्वस्य तिष्टतेषयंन्तस्य पहुत्र पेषड्य इत्यादेशौ ्या भाग ॥ पद्वार् । पेखाः पहानइ ॥

अर्थ —नेरणार्थक प्रयय ण्यन्त सहित तथा प्र'र्चवपर्ग महिन संस्कृत बातु प्रसाप क साव। प्राक्तत-भाषा में विकल्प से 'पट्टर श्रीर पेण्डव' रूपों की खादेश प्राप्ति होतों हैं । जैस —प्रस्थापनि पट्टचड़ खीर पेण्डवड़ =वढ़ स्थापित करवाता है। पद्मान्तर में 'पट्टाचड़' रूप भी होता है। ४३७॥

🗢 विज्ञपेवींकाबुकी 🕕 ४-३= ॥

विपूर्वस्य जानतेएर्यन्तस्य चोक श्रप्तक इत्यादेशी वा भवतः ॥ नीकः। श्रवकः। विवता

अर्थ — प्रेरणार्थक प्रत्यय रयन्तं सहित 'तथा 'वि' 'उपसंगै सहित विशेष झान कराने घरा श्रथना निनय विनति कराने श्रयंक सस्कृष् घातु 'विद्यप', के स्थान पर माकृत माणा में 'वोड की श्रयुक्ष' ऐमी दो घातुओं की विकल्प से श्रादेश प्राप्ति होती हैं। प्रचान्तर में 'विद्याप्य' श्राहा रूपान्तर 'विष्णव' भी बनेगा । उदाहरण इस प्रकार हें — विज्ञापयित = घोकह, अष्टम्झ भी विष्णवह = वह विशेष झान करवाता है श्रयवा वह विनीत करवाता है ॥ ४-३६ ॥

अपेरित्तव--चच्चुप्प-पर्णामाः ॥ ४--३६॥

श्रर्वेण्यन्तस्य एते त्रय श्रादेशा वां भानित ॥ श्रन्तित्रहः । चन्तुश्रहः । पनिष् पचे श्रप्येहः॥

अर्थ — नेरणार्थक प्रत्यय ण्यन्त महित मंश्वत चातु 'खर्प' के स्थान पर,पाष्टत पोषा में विसर से तील घातु हवों को खादेश प्राप्ति होतो है। तो कि इम प्रकार स है —(१) खहितक (३) वन्दुवे खीर (३) व्यापन । पत्तान्तर में 'अर्प' रूप मी बनेगा। चीरों के उदाहरण इस प्रकार है — गर्वविते आहियक, चच्चुप्पक वृणामक और अप्येड़ ≕वह खर्पण करवाता है ॥ ४,३६॥ ।

• यापेर्जनः ॥ ४-४० ॥

याते एयन्तस्य ज्व इत्यादेशी वा भवति ॥ अपह जानेह ।।

अर्थ — मेरणार्थं ह प्रत्यय एयात सिहत सिहत पातु 'यात्' के स्थान पर माहत मापा में विश्व में 'जब' घातु रूप की खादेश प्राप्ति होती है। पद्मान्तर में 'जाब' रूप की भी प्राप्ति होगी ही। विस-यापयति = जयह खयवा जायेड़ – वह गमन करवाता है, वह व्यवीत करवाता है। ४ ४ १ ॥

प्लावेरोम्वाल-पव्वाली ॥ ४-४१ n

ष्त्राते ण्यंन्तस्य एतात्रादेशी या भवतः ॥ श्रीम्यालइ । पन्यालइ । पावेड ॥

अर्थ —प्रेरणार्थ≆ प्रत्यय रायन्त सहित 'मिगोन-तर वतर करने' 'खर्यक सस्टत-पातु 'साव' के ह्यान पर प्राहत भाषा म 'ख्रोम्पाल श्वीर पश्वाल' ऐसी हो घातुओं की विकत्प से श्वादेश प्राप्ति होती हैं।

पत्तान्तर में सावय के स्थान पर 'पाय' रूप का भी प्राप्ति होगी । जैसे —*प्लावयाति=ऑम्बालड़,* पत्तालड़ श्रीर पाषेड़ = बह मिगोबाता है, वह तर बतर करवाता है । वह मिंजवाता है ॥ ४-४१ ॥

विकोशेः पवलोडः ॥ ४-४२ ॥ —

विकोशवर्तेनीम धातीएर्यन्तम्य वक्सीड इत्यदिशी वा भनति ॥ वक्सीडर् । विकीसङ ॥

अर्थ — प्रेरण्थिक प्रत्यय एय त महित 'विक्रित कराना, फैलाना' श्रर्थक सम्कृत-घातु 'विकोश' ^{६ ।या}न पर प्राफ़्त भाषा में विकल्प से 'वक्कोड' घातु रूप की श्रादेश प्राप्ति होती है ।

पत्तान्तर में विकोशय के स्थान पर विकास रूप को भी प्राप्ति होगी। जैसे-विकाशयति= पन्तीहरू थथवा विकोसर = वह विकसित कराता है, वह फ्लाता है। ४-४२॥

रोमन्थे रोग्गाल-व्यगोली ॥ ४-४३ ॥

रीमन्येर्नामधातीव्यन्तस्य एतावैदिशी वा भनतः ॥ खोग्गालः । वग्गोलः । रोमन्यः ॥

अर्थ — चबाई हुई वस्तु को पुन ववाना' इम प्रथं में काम खाने वाली घातु 'रोमन्य' कं माय धुँहै हुण्प्रेरखार्थक प्रत्यव ए बन्त पूर्वक सम्पूर्ण घातु के स्थान पर प्राकृत भाषा में 'ख्रोग्गाल खीर वग्गील' षादेश की प्राप्ति विकल्प से होती है। प्रतान्तर म 'रोमन्य' का मदुमाव भी होगा। जैसे-रोमन्यगति= भागालइ, प्रग्गीलइ खबबा रोमन्थइ=बह चबाई हुई वस्तु को पुन चयाता है यह पगुराता है ॥८ ८३॥

क्रमेर्णिहुवः ॥ ४-४४ ॥

६मेः स्वार्थएयन्तस्य खिद्ध्य इत्यादेशो वा भवति ॥ खिद्ध्यद्व । कामेइ ॥

नर्थ — स्वार्थ में मेरणार्थक प्रत्यय रचन्त पूर्वक सस्त्रत धातु कम् के स्थान पर माष्ट्रत माषा म रिह्द के सारेण प्राप्ति विकल्प स होतो है। पेरचार्यक णिच् बत्याकी सचीजना से 'कम' घाड़ का रिद 'कान' हो जाया।। जसे — कामचेते = णितुषह खयवा कामेह = यह खपने लिये काम मोगा हा दिन हरता है, खयवा इच्छा कराता हैं॥ ४४४॥

🍍 प्रकाशे सुद्धः ॥ १--१५ ॥ 🕠

प्रकाशे वर्षन्तस्य खुब्बः इत्यादेशोः वा भवतिः । जुब्दइ । वयासेइ ॥

अर्थ —प्रेरणार्थक प्रस्वय एवन्त सहित संस्कृत चातु प्रकाश के स्थान पर प्राकृत भाषा में हुए की प्राप्ति विकल्प से, हातो, है। पद्मान्तर में 'पयास' रूप को भी प्राप्ति, होगी जैंने —रशसपति= णुटकह अवता,पयानेह=नुह् प्रकाश करवाता, है ।४४४ ॥

ः कम्पेर्विच्छोलः ॥ ४-४६ ॥ 🕆

कम्पे एर्यन्तम्य विच्छोल इत्यादेशो वा भनति । विच्छोलं । कम्पेर ॥

अर्थ - प्रेरणार्थक प्रत्यय ण्यन्त सहित संस्कृत-धातु कम्प क तथान पर प्राकृत भाषा में विद्वन व 'बिएकोल' की प्राप्ति होती है। वैकल्पि,पक् होने से, करूप की भी प्राप्ति होगी । जैसे,-कर्पपार्व-। विच्छी र इ व्यवना फ्रेपड़ = वहाकपाता है, वह घुत्रमाता है ॥ ४ ४६॥।

- खारोपे र्वुलः ॥ ४-४७ ॥

श्रारुहे एर्यन्तस्य वल इत्यादेशी वा मन्नति ॥ नलइ.। श्रारीवेद ॥

अर्थ--नेरणार्थक प्रत्यय रथन्त् सहित् संस्कृत् घातु छा रुह् के स्थान पर प्राकृत भाषा में विकर्त से 'वल' की प्राप्ति होती है। पत्तान्तर म आरोव को भी प्राप्ति होगी। जैसे —आरोहयार्त = वस अथवा *आरोपेड* = वह चढमाता है। ॥ ४ ४७ ॥

' दोलेरङ्कोल: ॥ ४-४**=** ॥,

दुले: स्मार्थे पयन्तस्य रह्वोल इत्यादेशो वा मनति ॥ रह्वोलः । दोनः ॥

अर्थ —स्वार्थ रूप मे प्रेरणार्थक प्रत्येय एयन्त सिंहत सेन्छन धातु दुल् के श्यान वर प्राष्ट्रत मावा में विक्लप से 'स्ह्रोल' की जादेशा प्राप्तिं होती है ।।पहान्तर में भोली की भोग्याप्ति होगी जैस-होलपाति =रङ्खोलाः श्रयवा दोला =वह हिलाता है श्रयवा वह मुलाता है ॥ ४-४= ॥

ं *रक्केरावः ॥ ४−४६ ॥

रुक्षे पर्यन्तस्य राव इत्यादेशो वा भवति ॥ रावेह । रञ्जेहः॥

अर्थ - प्रेरणाथक प्रत्यय एयन्त सिंहत सस्कृत घातु रञ्ज् के स्थान पर प्राकृत मापा में विकल्प 'राव' की श्रादेश प्राप्ति होती है। पद्मान्तर में रख की भा प्राप्ति होगी। जैसे रञ्जयाति=रावेड स्रथवा ज़्मेंड=वह रग लगाता है, वह ख़ुशी करता है ॥ ४-४६ ॥

घटेः परिवाडः ॥ १-५०॥

षटे एर्यन्तस्य परिवाड इत्यादेशी वा भवति ॥ परिवाडेड । घडेइ ॥

अर्थ - प्रेरणार्थक प्रत्यय प्यन्त सहित सस्कृत-धातु घट' के स्थान पर प्राकृत भाषा में विकल्य 'प^{र्}वाड' की आदेश प्राप्ति होती हैं। पत्तान्तर में घड की प्राप्ति भी होगी। जैसे *—घटपाति =* रंगांदेइ श्रथवा घंदेइ झवह निर्माण कर्वाता है । वह रचवाता है ॥ ४-४० ॥

वेष्टे: परिश्राल: ॥ ४-५१॥

वेष्टे एर्यन्तस्य परिश्राल इत्यादेशो वा भवति ॥ परिश्रालेइ । वेढेइ ॥

अर्थ -प्रेरणायक प्रन्यय एयन्त सहित संस्कृत-धातु 'बेष्ट््' के स्थान पर प्राष्ट्रत-भाषा में विकल्प 'परिक्राल' की व्यादेश प्राप्ति होतो है पद्मान्तर में वेढ की मी प्राप्ति होगी ! तैसे — *चेष्टयात* = अलिंड स्रथवा ऐंदेड = वह लिपेटता है स्रथवा लपेटाता है ॥ ४-५१॥

- कियः किसो वेस्त के च ॥ १-५२॥

गेरिति निवृत्तम् । क्रीगारतेः किण इत्यादेशो भनति । वेः परस्य तु द्विरुक्त केश्रकारा ण्यं मनति ॥ किणाइ । विक्रोइ । निकिणाइ ॥

अर्थ --प्रेरणार्थक प्रत्यय ण्यन्त सवर्धा प्रक्रिया एव इससे सवधित धादेश-शप्ति की यहाँ से ाति हो गई है। अब केवल सामान्य रूप से होने वाली आदेश~प्राप्ति का ही वर्णन कियो जानेगा।

वरीहते व्यर्थक संस्कृत थात की (कीणा) के स्थान पर प्राकृत-मापा में 'किण' बादेश ^{चे} होती है। जैसे *—कीणाति खथवा फीणीते =किणइ =* वह खरीदता है।

तिस समय में क्षी घातु के साथ में वि' उपमर्ग जुड़ा हुआ होता है तब प्राकृत-मापा में आदेश भाव किण बातु में रहे हुए 'कि' को द्विस्व 'कक' की प्राप्ति हो जाती है। जैसे — विकीणाति = विग्रेड ^{वद्द वेचता है। यह प्यान में रहे कि द्विरव को की प्राप्ति होने पर विकिश धातु में रहे हुए 'खकार'} भ लोप हो जाता 🕻 ।

• भिष्ठो, भा-बीही ना ४-,५३ ॥

िनमेतेरतावादेशाँ भनतः॥ माडः। भाइयं ∤्नीहड-। बीहियः॥ बहुत्ताविकासर् सीव

, अर्थ — दरने अर्थक मर्छन् वातु 'मा' क्र स्थान पर प्राक्तत आपा में 'मा और गाउ' शे हा प्राप्ति होनो है। जैसे — मयित- माझ- यह हरता है, विभाति- बीद्ड न्यह हरता है। भीन - बार पर बीहिज-हरा हुआ अथ्या हरे हुए को ।

बहुल मुत्र के खिकार से 'भीत' विशेषण का न्ह्यान्वर भीजी मी होता है। माश्र भा 'इरा हुखा' वेसा है ॥ ४-३३ ॥

ष्ट्रांबीडोल्बी ॥ ई-५४॥ 🔭 🗥

थालीयतेः श्रद्धी इत्यादेशीः भवति ॥ श्रिद्धियह । श्रद्धीयो ॥ ी

अर्थ — 'आ' उपसम सहित 'ती' घातु हो स्थान पर प्राञ्चत भाषा से 'शहती' हर रा हा प्राप्ति हाती है। जैसे — भाकियते= भाकियत= वह क्षाता है, यह प्रवेश करना है, वह ब्रालिङ्गत हाता हुन्या उदाहरण इस प्रकार हैं: — औक्षान 'के अल्लिणों के ब्राया हुन्या, प्रेरेश किया हुन्या, धोरामा हुन्या।। ४-५४।।

निलीडो<u>शिलीत्र्य</u>-गिलुक-गिरिग्य-लुक-लिक-ल्हिका: ।। ४-५५ ।।

ः विचीड् एते पढादेशाः या सयन्ति । विचीश्रहः। स्टिलुनः । विरिष्णः । तुः सिवः । स्टिकः । निचित्नः ॥

अर्थ — भेटनों श्रियम जीइना श्रर्थ में प्रयुक्त होने वाला निहत बातु मि + ली-किसी हर पर प्राकृत भाषा में विकल्प के छहें बातु क्यों को खादिश प्राप्ति होनी हैं। ये जन में इन प्रकार हैं (१) खिलीखा, (२) खिलुका, (३) जिरियन,(८) हुवा, (४) लिख और (६) हिस्सा।

चैत्रेहिषक पत्र होने से पद्मान्तर में निर्ला' के स्थान पर निन्धि सब की मी मानि होती। है जो उदाहरण कम 'वे इस प्रकार से लिखायते =िकश्वार, जिल्लाहर, जिल्लाहर,

्रक्षा पाइत व्याप्रसा-्

े विली**ङेर्विरा ॥ ४**०५६६॥ १०००

निलीडे थिरा इत्यादेशो वा भनति । विराड । विलिक्षेड ॥ 🐫 🥇 🔭 🥶 📑

अर्थ — नष्ट होना, निष्टुत्त होना, आदि ऋर्थंक संस्कृत-धातु 'यि + ला' केरियान पर प्राष्ट्रत भाषा ंबिइत्युसे 'विराधीत की बानेश प्राप्ति रीता है । वैकल्पिक पत्त होने से पत्तान्तर से 'वि+ली क थान पर बिलिंडम् 'ह्रेप की भी प्राप्ति होगी। जैसे -विशीयते-विरोइ अथवा विविधक्जेइ=वह नहूट ोवं इ श्रंथमा वह निवृत्त होता है ॥ ४-४६॥

• रुते ज्ञ-स्ग्टी ॥ ३-५७ ॥

र्रावेखाषादेशौ वा भवत ॥ रज्जः । रुखटः , रवडं ॥

वर्थ — ष्रावाज करने ष्टर्थक संस्कृत घातु 'रु' के स्थानं पर प्राष्ट्रं-भाषा में विवरूप में 'रुज्ज ीर हरट'की चादेश प्राप्ति होती है। वैप्तलियक पत्त होने स पत्तान्तर म 'क' क स्थोन पर 'रव की ॥ प्राप्ति होगो । जैमे *—रोतिं=रुञ्जइ* , रुण्टङ व्यथवा *इवड्=*त्रह 'प्रावाज करता है ॥ ४-४७ ॥ 🕠

ं श्रुटे ईग्रः ॥ ४-५⊏॥ ः

शृणीते हेण इत्यादेशी वा भवति ॥ हणइ । सुणइ ।

अर्थ - सुनने अर्थक संस्टत धातु श्रु' व स्थान पर प्राष्ट्रत भाषा में निवल्व स 'हणे' धातु-हर ी श्रान्श-प्राप्ति होती है। वैक्लियक वक्त होने से वक्तान्तर में श्रु' का ग्रुण स्वान्तर भी होगा। जैसे — ्षाति = हंणइ श्रथवा सुणइ=वह सुनवा हे ॥ ४-४५ ॥

धृगे घु व ॥ ४--५६॥

धुनाते धुन इत्यादेशी वा मनति ॥ धुनह । धुणह ॥ -

वर्ध — 'क्याना-हिलाना' अर्थक सरहत पृद्धि पू के स्थान पर प्राप्टत-भाषा में विकृत्य मे पुर' पातु-रव की आदेश प्राप्ति होती है। यैक लिपक पत्त होन से पत्ता तर म भूका धुण रूपान्तर मी ा। जिंच —धुनाति =धुषद्व अथवा धुणद्र =वंद फवाता दें—वह हिलाता है ॥ ४-४६ ॥

े भुवेहों--हुव–हवा[,] || ४-६०॥

धेरी घातीहीं हुत हा,इत्येते ऋादेशा चा,भव्रन्ति ॥ होड । होन्ति हुवड । हुतन्ति ।

हनह । हवन्ति ॥ पत्ते । मनह । परिहीस विहवी । भविषे । पमन्द्र । परिमन्द्र । स्वार् । कचिदन्यदिष । उञ्चास्त्र । भत्त ॥

गर्थ. —'होना' खर्यंक सस्क्रत-चातु मू = मव्' के स्थान् पर प्राकृत मापा ने दिक्त से 'म्र, हुव और हव' ऐसे तीन घातु -हर्पों की खादेश प्राप्ति होती है। वैकल्पिक पण होने त प्राप्ता हैं 'म=मव' का 'मय' रूपान्तर भी होगा : जैसे —भणाति =हाँड. हुण्ड और हुण्ड खावा भण्य-वर्षे" हैं । बहुत्वचन के उदाहरण इस प्रकार हैं '—भणन्ति = होनित, हुणन्ति और हुणन्ति खबबा मविं वे होते हैं ।

कुछ प्रकीर्णक उदाहरण यृति में इस प्रकार दिये गये हैं —

- (१) परिन्तिन-विभव = परिहीण विद्यको = घन-वैभय से होत हुआ। इस उग्रहरण में 'ख' के स्थान पर 'हव' रूप को प्रदर्शित किया गया है।
- (२) भिवत्म = भिवज = होने के लिये। इस हेलवर्ध-क्रयन्त के रूप में सस्कृत-वातु-रूप मार्थ के स्थान पर प्राकृत-माथा में भी 'मव्' रूप को हो प्रदर्शित क्या गया है।
- (३) प्रभावति = प्रभावह = यह समर्थ होता है, वह पहुचता है ख्रयवा वह उत्पन्न होता है। इत् वर्तमान कालिक कियापद में संस्कृत घातु रूप 'प्र + मव' के स्थान पर प्राकृत माषा में भी 'प + मव' हा प्रयोग किया गया है।
- (४) पारमणाति = पारमणह==वह पराजय करता है ध्रमवा तिरस्कार करता है। वह पर भने भने के स्थान पर भने कर का ही प्रश्निक किया गया है।

संभवति=सभवड़=(छ) वह उत्पन्न होता है. (य) समावना होती है सथवा (स) वतह होता है। इस उदाहरण में भी 'भव' के स्वान पर भव' को हो प्राप्ति हुई है।

कहीं कहीं पर 'मू=भव्' के स्थान पर उपरोक्त रूपों के व्यविशिक वान्य रूप भी देखे बाउ है। जैसे—उद्भवित = उस्मुबद्द=वह उत्पन्न होवा है। इस उदाहरण में 'मू=भव्' के स्थान पर मार्थ रूपान्तर में 'मुख' रूप का प्रयोग प्र'शित किया गया है। ऐसे विभिन्न तथा अनिर्धानत रूपों के हर्षणे 'बहुत्त' सुत्र की स्थिति को व्यात में रखना चाहिये।

कमी कमी सर्वधा चित्रयमित रूप मी 'मू-मव' के प्राष्ट्रत मापा मे दसे जात है। जैस-मूल्य-मत्त' = इत्यन्त हुआ। यह कमीण भूषकृत का रूप है। एसे रुपों को प्राप्ति 'कार्षप' सूत्र प सम्मन्धित है, ऐसा समकता चाहिये॥ ४-६०॥ निद्वर्जे परयये सुनो हु इत्यादेशो चा भनति । हुन्ति । अन्ते । हुन्तो । अनितीति किम् ।

्रथर —'ति' उपमर्भ नहां होने की स्थित में 'मू≍ मत' के स्थान पर प्राक्टत भाषा में विकल्प स 'हु' षातु रूप की प्रादश प्राप्ति होनी है । जैस*—भवन्ति = दुन्ति =* वे होते हें । भवन् = दुन्ती = होता हुया इन उदाहरणों में 'भव' क स्थान पर 'हु' का प्रयोग प्रदर्शित किया गर्या है ।

प्रश्न — 'वि' उपसर्ग का किपेत क्यों किया गया है ?

उत्तर —जहाँ पर 'ति' खपमर्ग पूर्व के अर्थ होगा वर्श पर 'भू=भव' घातु के स्थान पर प्राकृत मापा में 'हु' का भ्रादेश नाभि नहीं होगी । कैस—मत्रति=होइ=त्रह त्रिरोप प्रकार से होता है । यों यहाँ पर 'हु' रूप का निषेत्र कर दिया गया है ॥ ४-६१ ॥ ,

• पृथक्-स्पष्टे गिहनडः ॥ ४-६२ ॥

ृ पृथम्भृते स्पष्टे च कर्तिर स्रो खिन्नड इत्यादेशो भनति ॥ खिन्नडइ । पृथक् स्पष्टो वा मातीत्वर्थ.॥

अर्थ —पृथक् त्रर्थात् स्रलग करने के खर्थ में श्रीर स्पष्टीकरण करने के खर्थ में 'सू=भन' घातु ^{ह स्वा}न पर प्राकृत मापा में 'णि॰वड' घातु छ । की स्नादेश प्राप्ति होतो है । जैमे*— पृथम्सवाति* स्वयना ^{हा}टा भवति = णिज्वडडें = वर्ष खलग होतों हैं स्रथवा वह स्पष्ट होता हैं ॥ ४–६२ ॥

ं े प्रेमी हुप्पो वा॥ १–६३॥

^९स क्तु[']कस्य सुत्री हुप्प इत्यादेजो वा भवति ॥ प्रसुत्तं च प्रपूर्तस्यैनार्थः। शङ्गे चित्र ^{(प}ुष्यः) पत्ते। पमनेद्र ॥

अर्थ — जब 'भू = भव् धातु के साथ मे अ उपनार्ग जुंदा हुआ हो जोर जब 'अ' उपनार्ग वा धर्थ एक मेन्द्रजता हो तो एसे नमय में 'अ + भव घतु क स्थान पर 'बाइल-भाषा में विश्वत्य से 'हुप्य' पात्रत का आित होगी। इस हा तात्वर्य यही है कि 'शिक्त प्रमान जाते ' खर्च पूर्वक 'भू = भय' धातु को रेह्म में 'हुप्य' आदेश प्राप्ति होती है। पनान्तर में 'पमय' प्राप्ति का सा सांव्यान जाने गा पाहिये। वैष-ए गा 'चित्र न प्रभविति = एन्द्र स्वर्ग वाली ' निष्ठय ही यह शांक सन्वत्र नहीं होता है। पिका महत्र स्वान्तर इस प्रवार है — अगे ' चित्र अं न पहुष्य । पनान्तर से पतुष्पर' के हवान पर पिका स्वर्भ स्वभी बनता है।। प्र हुद्र ॥

• क्ते हुः ॥ ४∸६४ ॥

भ्रतः क्त प्रत्यये हुरादेणो भाति ॥ हुछ । छणुहुछ । पहुछ ॥

अर्थ — कर्मणि भूतकृदन्त प्रयम 'क=त' के साथ में 'मू' धार्य के ग्यान पर प्राहत प्राप्ता 'हू' धातु को आवेरा प्राप्ति होती है। जैसे—मूलस् = हुआ = हुआ। अन्य वपपता पूर्वह मू गातु । चदाहरण इस प्रकार हें —

- (१) चतुभूतम् = श्रगुहू श्र = श्रनुभव किया हुआ।
- (२) प्रभूतम्=पहूप्र=बहुत ॥ ४-६४ ॥

कृगेः कुणः ॥ ४-६५ ॥

कुग कुस इत्यादेशी या भवति ॥ कुसह ।करह ॥

अर्थ —सरहृत 'छ=करना' घातु के स्थान पर प्राकृत मार्था में प्रिरस्य से 'उठ' घातु हैं श्रादेश-प्राप्ति होती हैं। पत्तान्तर में 'पर' की प्राप्ति भी जानना । जैसे—करो*ति=टुणा* श्रपया ^{हर्}र सह परता है ॥ ४-६४ ॥

काणेचिते णिआरः ॥ ४-६६ ॥

काणेचितनिषयस्य क्रमी णियार इत्यादेशी वा भन्ति॥ विद्यारह । काणेचितं क्रोति।

अर्थ —कानी नतर से देवने अर्थक धातु 'कु के स्थान पर प्राक्षन मापा में विद्धान 'शिक्षार' की आदेरा-प्राति हाती है। जैस--काणेशिन करोति = णिआरड़ = वह कानी नहर से वन्या है।। ४-६६॥

· (निष्टम्भानष्टम्भे ़ सिंहु ह—संदार्स ॥/१८-६७ ॥

ं निष्टम्मित्रियस्यावष्टम्म विषयस्य च क्रंगी यथा मंत्य खिट्टूह महोद्य स्वादेशी ह सन्दरः ॥ खिट्टहह । निष्टम्म करोति । मंदाखह । खनष्टम्म करोति ॥

अर्थ — 'निर्मेष्ट करना 'अथवा चेटा रहित होना' इम व्यर्थक सालूत पातु (निहाम पूर्वक के स्थान पर प्राप्टत भाग में विद्यर से 'खिट्युड' धातु रूप की व्यदिश प्राति होती है। कैमे-निरम्ब करोति = णिद्युद्ध यह निरमेष्ट करना है अथवा यह पेटा रहित होना है। ******************

इसी प्रकार में 'अयलम्बन करना अथवा सहारा लेना' इस अर्थक सस्क्रन घातु 'अप्रष्टम्मपूर्वक कु' यात वर प्रीकृत भोषा में विकल्प से 'सदाण' घातु की आदेश प्राप्ति होती है। जैसे—अयष्टम्भ विन्तदाणइ = यह अवलस्वन•करता है अथवा वह सहारा लेता है।

पत्तान्तर में निष्टम्भ करोति का प्राक्तन रूपान्तर 'निरद्धम करेड़' ऐमा भी होगा, तथा एम्भ करोति' का प्राक्तत रूपान्तर 'जीदंडम करेड़' भी होगा ॥ ४-६०॥

• श्रमे वावम्फः ॥ ४-६८ ॥ •

थमनिष्यस्य कुगो वावम्फ इत्यादेशो वा भवति ॥ वावम्फड । थम कराति ॥

अर्थ — 'श्रम विषयक' छ पातु, के स्थान पर प्राकृत भाषा में विकल्प से 'वावस्क' धातु को सिपापि होती है। जैसे-श्रम करोति = वावस्कड़=वह परिश्रम करता है। पत्तान्तर में 'श्रम करोति' 'पम करें। पि करें। पात्र करें। पात्

• मन्युनौष्ठमालिन्ये णिव्योलः ॥ ४-६६ ॥

मन्युना करणेन यदोष्ठमालिन्य तद्विपयस्य कृगो णिब्बोल इत्यादेगो वा भवति ॥ बेलह। मन्युना श्रोष्ठ मलिन करोति ॥

थर्यं — क्रोध के कारण से होठ हो मितिन करने विषय के सस्कृत घात 'कु' के स्थान पर प्राक्तन । में विरुक्त से 'शिष्टोल' घातुं की खादेश प्रांत होती हैं। जैसे—'मन्युना ओष्ट मिन्न करोति' = 'शेलर = वह क्रोप से होठ को मितिन करतो हैं खथना करना है। पदान्तर्म म वृष्ण औद्दर मिलिण' करेड़' मी होता।

शैथिल्य लम्बने पयछः॥ ४-७०॥

शैथिन्य विषयस्य लम्बन विषयस्य च कृग पगल इत्यादेशो वा भगति ॥ पयल्लड । वित्ती भगति, लम्बते वा ॥

गर्थ-'शिथितता करना' अधवा ''डीता होना-लटकना' इस विषयर माहत धातु 'छ' है जान पर प्राष्टन भाषा में विरुष्य से 'पयन्त' धातु की आदेश प्राप्ति होती हैं। तैन--शिथिनी विषय । अस्यते = प्राप्तुद्र = वह शिथितता करता है अपवा वह दोताई करता है--वह द सा धान है। प्राप्ता दें सिहिट्ट । अपवा) छन्यंद्र होगा ॥ ४-७० ॥

निष्पाताच्छोटे गीलुङ्यः ॥ ४-७१॥

निष्पतन विषयस्य आच्छोटन विषयस्य च छुगो गीतुच्छ इत्यादेनो स्रोति। र्षीसुञ्छः । निष्पतति । श्राच्छोटयति वा ॥

अर्थ — 'गिरने द्यथरा कुरने' विषयक संस्कृत घातु 'हु' कूँ स्थान पर प्राप्तन भागा में रिलन 'णोतुक्त्र' घातु को स्नादश माप्ति होती है । जैमे-निष्पति-णीलुक्टरु=वह प्रिंश है सं आच्छोटयति = णीलुङ्खड्=बह कृत्तां है । पन्ना-तर' म णिप्पडंड श्रीर आछोडड भी ध्ना ॥४ भी

* हारे कम्मः ॥ १२-७२ ॥

छुर विषयम्य कुनः कम्म इत्यादेशी वा भनति ॥ कम्मइ । घर परीतीत्वर्थः॥

अर्थ - हजामत करने' अर्थक कि' चांतु के स्थान पर प्राञ्त भाषा में विदल्त से सम श्र की श्रादेश प्राप्ति होती है। जैसे — खुर करोति = कम्मड़ = नहें ईजामत कराता है। क्शान्त 'खर करेड' ऐमा भी होगा ॥ ४-७२ ॥

चाटौ गुर्ललः ॥ ४-७३ ॥ राष्ट्र

चाड विषयस्य कृगी गुलल इत्यादेशो वा मन्ति ॥ गुललह । चाड वरीवीलवे ॥

'अर्थ - 'खुशामट करना-चाटुकारी वरना' विषयक 'कु' धातु के स्थान पर प्राक्ष्त मणा विक्रस्य से 'गुलन' घातु को क्यादेश प्राप्ति हाती है। जैसे-चाटुकसोवि = गुल्लक्र=बह सुराामर का है-यह चाडुकारी करता है। पद्मान्तर में 'कांडुकरेड़' ऐसा भी होगां॥ ४४०३॥

रिसरेर्भर-भूर-भर-भल-लड-विम्हर-सुमर-पयर-पम्हुद्दाः ॥ ४-७३॥

स्मररेते ननदेणा वाुभनन्ति ॥ सरह। ऋरह। भरह। सल्छ। लब्छ। विम्हार। ग्रामरइ । पयरइ । पम्हुट्इ । सरइ ्।।

अर्थ —'सारण करना-याद करना' त्रार्थक संस्तृत घातु 'स्मर' क स्थान पर प्राष्ट्रा साच है विक्कृत में नव धातु क्यों की आदेश श्राति होता है। वे क्रम म इस प्रकार हे —(१) का । १) मूर्यः (२) मर, (४) भल, (४) लड (२) विन्हर, (७) सुमर, (८) पवर खीर (६) पम्ह्रह । चैन्हिनेक ५६१ ह न म पर्चोन्तर म 'स्मर्' के स्थान पर 'सर' कव की भी प्राप्ति होगी। इनटें चदाहरण क्रम से ईस प्रशारी—

स्मराति = (१) झरङ् (२) धरुरः, (३) भरङ्, (४) भङ्, (७) छउड़, (६) विस्टरङ्, (७) गुरूउ

विस्मुः 'पम्हुस-विम्ह्र-वीसराः ॥ ४-७५ ॥

निस्मरतेरेते खादेशा भगन्ति ॥ पम्हुमई । विम्हरह । वीसरह ॥

ें 'अर्थ' — भूलना-भूल जाना' अथवा 'जिस्मरण करना' अर्थक सस्कृत घातु 'विस्मर्' के स्थान रर प्राकृत भाषा में तान धातु की ऋादेश प्राप्ति होती है । जो कि इस प्रकार हें —(१) परहुस, (२) विस्हर थीर (१) वीतर । इनके उदाहरण इस प्रकार हं *-विस्मराति=पम्हसः, विम्हरः,* श्रीर *वीसरः,* -वह र्मृतता है श्रधवा वह जिस्मेरण कर्ता है।। ४-७४॥

, ्रुट्याहृगेः कोक-पोक्कौ ॥ ४-७६ ॥

्र च्याहरतेरेतानादेशी वा भनतः ॥ कोकह । हस्तत्वे तु कुकह । पोकड । पचे । नाहरड ॥

अर्थ - 'युलाना प्राह्मात करना' अर्थक संस्कृत -बातु 'ब्याह' के स्थान पर शकुत-भाषा में विकल्प से दो धातु-रूपों की अर्थादेश प्राप्ति होती है जाकि कम से इस प्रकार हैं—(१)कोक । और ^{भोक}। सूत्र सख्यां १ = ४ से विकल्प से दीर्घस्तर के स्थान पर श्रागे सयुक्त व्यञ्जन होने पर हश्त स्वर की प्राप्ति होती है द्यत 'कोक्क' के स्थान पर 'कुक्क' की भी प्राप्ति हो सकती है, पद्मान्तर में 'ब्याह' घातु का 'बाहर' रूप मी प्राप्त होगा ।

उत्तत चारों धातु-ह्वपों के उदोहरण कम मे इस प्रकार है —च्याहराते= (१)कोकड़, (२)रुकड़ ^{(३)पोक्कर} श्रीर (४)पाहरइ=पह बुलाता हे, वह श्राद्वान करता है ॥ ४-७६ ॥

· प्रसरेः पयह्नोवेह्नौ ॥ ४-७७ ॥

प्रसरतेः पयञ्च उवेञ्च इत्येतानादेशी ना भनतः ॥ पयञ्चह । उवेञ्चह । पसरह ॥

अर्थे — 'पन्नरना फैनना' श्रथक मस्टत-घातु 'प्र+सृ' के स्थान पर प्राक्रन-भाषा में विक्लर ^{मदा घातुका आदेश प्राप्ति हाती है। ने ये हे—(१) पयल्ल और (२) उबेल्ज । पत्तान्तर में प्र+सृके} ष्यान वर'वमर' की मा प्राप्ति होगा । जैमे -प्रतराति=(१) ग्यलड (२) उपेलड प्रोर (३)पतरइ=वह पमग्ता ६ मयबावह फेन्नता है।। ४-८७॥ ,

🛫 महमहो गन्धे ॥ ४–७=॥

प्रमस्ते र्गन्य विषये महमह इत्यादेणी वा भनति ॥ महमहर मालई । मालड-गन्नी ष्मरइ ॥ गन्ब इति किम् । पसरइ ॥

अर्थ — 'गन्य फेनना' इम सपूर्ण ऋर्थ में श्राकृत-भाषा में विकल्प में 'महमह धार कारेप प्राप्ति होती हैं।

जहा पर गम्ध फैलता है' ऐसे झर्ब में 'गम्ब' शहर स्वयमिन विद्यमान ही दर्श पर सामः प् रूप का अयोग नहीं निया जा मकता हैं, किन्तु पसर' धातु रूप का हो अयोग किया जा मस्य असलिए पृत्ति म 'गम्ब इतिकिम् = गांव ऐसा क्वा ? प्रश्त उटाहर आगे 'प्परई' किया पर हाग र समाधान क्या गया है कि 'गम्ब' कर्नों के साथ 'पसर' निया का प्रयोग होगा । जैसे — आउनी पर असरित = मालव गम्बो एसरइ = मालती-लता का गम्ब कैनता है। या महत्रह्भ थातु-हप हो थिं। स्वित को समभना जाहिय ॥ ४-४५॥

निस्तरेगींहर—नीलं-धाड---वरहाडाः ॥ ४-७६ ॥

निस्तर्रतेरेते चत्वार श्रादेशा वा भवन्ति ॥ गीहरह । नीलह । धाडह । यसहर नीमरह ॥

अर्थ — 'बाहर निकलता' खर्षक सरकृत घातु 'निस् + स्र' के स्थात पर प्राष्ट्र-भाषा में कित सं चार घातु-रुषों की खादेश प्र प्रि होती हैं। जो कि कम से इस प्रकार हैं — (१) ण्रीहर (६) म (३) घाड खीर (४) वरहाड । पैकिल क वह होने से 'निस् + स्रु' क स्थान पर 'नीसर' घातु ही । प्राप्ति होगी। पाँचों के उदाहरण इस प्रकार हैं — निस्तित (१) ण्रीहरह, () मीतर, (३) धार (४) वरहाडह, और (४) विसरह = वह बाहिर निक्तता है।। ४-४६।

जाघेरर्जमाः ॥ ४-८० ॥

जागर्ते जंग्म इत्यादेशी या भवति ॥ जग्मद्र । पर्चे जागरह ॥

जर्य —'तोगना श्रथया सचेत-सायधाने होना' श्रथंक साकृत-भार्तुं 'नागूं हे स्वात ' प्राकृत-भारत में विष्कृत म 'जमा' घातु की त्यादेश माति होता है। ये हिन्दक पत्तः हान स 'अगूं स्थान पर 'जागर' घातु-की भी प्राप्ति होगो। दीनों, के दशहरण कम स इम वकार है --जागरी जग्मह श्रथया जागरह=बह जागता ई-यह निद्रा त्यागता है श्रथया यह मात्रधान सचेट होती है।।हे-

व्याप्रेराञ्चढ्डः ॥ ४-८१ ॥

च्यावियतेरात्रह इत्यादेशी वा [!]मवति ॥ द्याद्यहोद । वाबरेर ॥

ंशर्थ — 'व्यापन होता, 'काम लगना' कर्यक्र सरुत घातु 'भ्या + पृ' क श्वास पर प्राप्त सी में विकरन में 'झा कड़' पातु नी अन्देश प्राप्ति होती है। यै बलिपक यह होने में 'भ्या + पृ' क स्थान ह ार' घात की भी प्राप्ति होगी । जैसे-स्यापियते =आअहडेइ अथवा वावरेइ = वह काप में लगता 8-5111

- भसंबृगेः साहर-साहट्रो ॥ ४-८२ ॥ 🕐

सङ्खातेः साहर साहङ्ग इत्यादेशी वा भवत ॥ साहरङ । साहङ्ग । सवरङ ॥

अर्थ —'सबरण करना समेटना' अर्थंक संस्कृत घातु 'स + पृ' करथान पर प्राप्टत भाषा वेक्क्य से दो धातु 'साहर और माहह' की आदेश प्राप्ति हाती है। पत्तान्तर में 'स+व़' के स्थान 'सवर' धातुका भी प्राप्ति होगी। तानों घातुत्रों के उदाहरण कम से इन प्रकार है —सकूणोर्ति = साहरइ. (२) साहट्टइ श्रीर (३) सवरइ = वह सबरण करता है श्रथवा यह समेटता है ॥ ४ ८२ ॥

्र 💉 ब्राह्डे : सन्नामः ॥ ४-५३ ॥

थाद्रियतेः सन्नाम इत्यादेशो वा भगति ॥ सन्नामइ । आदरइ ॥

अर्थ — 'श्राद्र करना सम्मान कश्ना' श्रर्थक संस्कृत धातुं श्रा + द के स्थान पर प्राष्ट्रत भाषा में इत्व से 'सन्नाम घातु की ऋादेश प्राप्ति होती हैं। बैंकल्पिक पत्त होने से 'झा+द' फे ान पर 'श्रादर' धातु की भी, प्राप्ति होगी । जैसे —शानियते = सन्नामइः श्रथता आदरह=तह दिर करता है अथवा वह सन्त्रान करता है-सन्मान करता है ॥ ४-६३ ॥

प्रहृगेः सारः।। १–८१ ।।

प्रहरते सार इत्यादेशों वा भवति ॥ सारइ । पहरइ ।

गर्थ -- 'प्रहार करना' अर्थक संस्कृत-पातु 'प्र + ह' क स्थान पर प्राष्ट्रत-भाषा म विद्रुत स ^{नार'} घातु की द्यादेश प्राप्त होनी है। वैक्लियक पत्त हाने से 'प्र+ ह' क स्थान पर '4हर' की मा वि होगी। दार्ना धातु स्त्रों के उदाहरण कम मे इस प्रकार ह --प्रहराते = सारइ स्थवा प्रहररू= (६ वहार करता है - यह चोट करती है । ४-- ५४ ॥

चवतरे रोह−छोरसी ॥४-=५॥

भावरते. श्रोह श्रोरस इत्यादेशी वा भावः ॥ श्रोहह । श्रोरसह । श्रोधरह ।'.

अर्थ —'नीचे उतरता' व्यर्थक संस्कृत घाषु 'झव + तृ फे स्वान पर प्राष्ट्रन भाषा में विशनप म 'बाह तथा कोरम' ऐस दो धातु को छादेश प्राप्ति होती है। वेकल्पिक पक्त होत से 'छय + ए' धानु

केस्यान पर 'स्रोन्नर' घातु की मी प्राप्ति होगी । उदाहःण या ई —*भन्तरानि=*(१) घष्ट (२) ओरसङ श्रीर (३) भीअरङ = यह नीचे उत्तरता है ॥ ४---- ।।.

🦜 शकेश्रय-भ्तर-न्तीर-पाराः ॥ ४- 🛱 ॥ ।

शक्तीतेरते चरनार श्रादेशा ना मनन्ति ॥ चयर । तर्ह । तीरह । पार । उन्न त्यजतेरपि चयइ । हानि करोति ॥ तरतेरपि तरह ॥ तीरयतेरपि तीरह ॥ पारपत्रिः पान कर्म संवाप्तीति ॥

अर्थ —'सबना-समर्व होना अर्थंक सहज्ञत-धातु 'शक' काखान पर प्राष्ट्रत मापा न विभा से चार घातु की आदेश प्राप्ति होती है। जो कि मान से इस प्रकार हैं -(१) चय, (१) तर, (३) हर श्रीर (४) पार । पद्मान्तर में 'शक' के स्थान पर 'सिक्ष' की भी प्राप्ति होगी । पैँग्विँ घातुनस्मी क प्रमुख कम से इन प्रकार है - राक्ताति = (१) चयइ, (२) तरह, (३) तरह, (४) गरह छोर (४) गहर = रा ममर्थ होता है। उपरोक्त आदेश-प्राप्त चारों घोतु द्वि-मर्थक है, स्वतन्त्र इन क विवापाव हा इभ प्रकार से होंगे —(१)त्यजाति = चयड़ = वह छोड़ता है अथवा वह हानि हता है। (२) तराति = तरङ् = वह तैरता है। (२)तीरयाति = तीरङ = वह समाप्त करता है धामा वह भीर् करता है। और (४)पारयात ≈ पारेड=पह पार पहुँचता है अथवा पूण करता हैं—पार्य की सन्ती, करता है।। यों चारों आदेश शाप्त धातु द्वि-अर्थक होने से सबवातुमार ही इनका अर्थ होति जाना चाहिये, यही वाल्पर्य पृत्तिकार का ई ॥ ४— ६६ ॥

फक्कस्थकः ॥ ४-८७॥

फक्ते स्थव इत्यादेशो वा भगति ॥ थवड ॥

अर्थ —'नीचे ज्ञाना' अर्थक संस्कृत-घातु फवा' के स्थान पर प्राष्ट्रय-मापा म 'थक धातु ही कारेश प्राप्ति होती है। जैन – फक्रांति=थङ्ग = वह नीचे जाता है समक्षा वह धावान ^{हाता} है।। ४-८७ ॥

📬 श्लाघः सलहः ॥ १–८५ः ॥

रलापनं मलह इत्यादेशी मवित ॥ मलहह ॥

अर्थ -- 'प्रशमा करना अर्थक संस्कृत-पातु 'रुगप्' क स्थान पर प्राष्ट्रन-भाषा सं 'तहर्' वा -की ब्यां^{न्}रा प्राप्ति होती है। जैसे —स्वपंत = स*ा ।*इ = वह प्रश्ना करता है ॥ ४००६ ॥।

खचेर्वेश्रडः ॥ ४-८६ ॥

खनते चेंग्रह इत्यादेशों वा भनति ॥ वेग्रहह । सचह ॥

अर्थ — 'जडना' श्रर्थक सस्कृत धातु 'खच्' के स्थान पर प्राकृत भाषा म विकला से 'वेश्रड' तु का त्रादरा प्राप्ति होती है। पत्तान्तर में 'खच' भी होगा जैमे *—खचिति = वेशडइ श्रथा खचड़* । पडता हे—जमाता है।। ४-५६॥

🍟 पचे. सोल्ज--पउलौ ॥४-६०॥

पचतेः सोल्ल पउल इत्यादेशो वा भनतः ॥ सोल्लड । पउलड । पयइ ॥

अर्थ --'पकाना' अर्थक मस्कृत-धातु पच' के स्थान पर प्राकृत भाषा में त्रिकरण से 'मीरल र पदल' ऐस दो धातु-र्घा आदेश प्राप्ति होती है। स्पान्तर 'पय' भा होगा। सैसे --पचित = सोख़र र पदलक अथवा पयड़ = वह पकाता है॥ ४ -.०॥

र सुचेरखड्डा व हेड–मेल्लोस्सिक–रेअविणल्लुञ्छ−धंसाडाः ॥ ४–६१ ॥

सुअवेरेते सप्तादेशा वा भानित ॥ छह्दइ । भग्नहेडइ । मेल्लइ । उस्मिक्कइ । रेग्नाइ । गुच्छर । धंमाडड - पन्ने । सुम्रह ।

भर्थ — छोडना-राग करना' धर्षक संस्कृत-धातु 'मुच' के स्थान पर प्राहत-प्राथा में विकल्य धात धातु की खादेश प्राप्ति होतो है। जो कि कम से इस प्रकार हैं — (१)छम्ड, (२)अयटेंड, भिंस (४)अत्सक्क (४)रेअव, (६)णिटट्रच्छ, खीर (७)धसाड, पत्तान्तर म मुअ' भी होगा। यों ही धातु-रुषो के उदाहरण कम से इम प्रकार हैं — मञ्चाति = (१)छट्डइ (२)अपटेंडइ, भिंसु, (४)असाडइ ध्रयवा मुअइ=यह छोड़ना है वा बह स्थान करती है।। ४-६१॥

दुःखे णिव्यलः ॥ ४-६२ ॥

रुख निषयम्य मुचेः खिन्नल डम्यादेशो वा भनति॥ णिन्नलेइ। दु.स मुखनीत्वर्षः॥

थर्य — दुख को श्रोहना' धर्य में सस्कृत-धातु 'तुच् क स्थान पर प्रोहत-प्राया में विरत्य 'विध्वत' (घातु) को आदेश शाधित होतो है। जैमे — दुख मुरूपति = पिटप रेड = यह दुख को त्वा है। पहान्तर म तुह मुणड़ होगा॥ ४ ६२॥

] बज्जेर्वेहव--वेलव--ज़्र् वो मच्छाः ॥४--६३॥ चरतार छाटेशा वा भवन्ति॥ वेहवर् । वेलवर । ज्रवर । वस्यः वश्रह ॥

अर्थ - 'ठ ाना' श्रर्थंक संस्कृत-घातु घड़ा h स्थान पर प्राकृत मापा में बिरून मे पार ग की आदेश प्राप्ति होती है। जो कि कम से इस प्रकार है -(१) वेहण, (२) वेहण, (३) जरह ही जमच्छ । स्वान्तर 'बच्च' भी होगो । उक्त वीची धातु-स्वी-के च्याहरण इसे प्रसार है -वडनर्य (१)नेटचइ, (२)नेलचइ, (३)जूरवइ, (४)उमच्छइ और ५५)वङवइ=वह ठ०ना है ॥४-१३।

• रचेरुगहाबह-विडविड्डाः ॥ ४-६४ ॥

रचेर्वातीरते त्रय खादेशा वा भनन्ति ॥ उग्गहर । श्रवहरू । विडनिट्टर । रपर ।

अर्थ -- 'निर्माण करना, बनाना' अर्थक सस्कृत घातु 'रच्' के स्था पर प्राष्ट्रत मापा में स्थि मे तीन (धातु) रूपों, की आदेश भांति होतो हैं। जो कि कम मे इस प्रकार है —(१) अगह, (१) प्र न्त्रीर (३) यिडविडु । बैकल्पिक पत्त होने से 'रय' मी होगा । उक्त चारों धातु ह्यों के उदाहरण इम इम प्रदार हें —रचयाते =[१] उग्महर, [१] अवहर, [१] विहविष्टुर चौर [४] रयः =वः 🕮 करती है-वह रचता है श्रथवा वह बनाती है ॥ ४-६४ ॥

समार्चेरुवहत्थ-सारव-समार-केलायाः ॥ ४-६३॥

ममारचेरतेचरनार थादेशा ना भनन्त ॥ उन्हत्थह । सारमह । ममारह । वैला ममारयह ॥

अर्थ'--'रचना-बनाना' धर्यक संस्कृत 'सँगारच्' के स्थान पर प्राकृत मापा में दिस्कृत धातु (रूपी) की व्यादेश प्राप्ति होती है। जो कि कम मे इन प्रकार है —(१) उपस्पत, (२) मा (३) मगार श्रीर (४) केंजाय । - 11 - T

प्रैक्टिक पत्त होन से 'समा + रघ्' के स्थान वर 'ममारब' मी होगा । उदाहरण देम प्रका' है नमारचयति = (१) उवहत्यह, (१) सारगड, (३) ममारद, (३) फेलायर जीर (1) ममारवइ = वह (है-वह बनाती है।। ४-६४ ॥

े , सिचे: सिच-सिम्पी ॥ ४-६६ ॥

सित्रतेरेतावादेशो वा मनतः ॥ सित्रह । सिम्पइ । सेग्रह ॥

गर्थ — 'सींचना' अर्थक सस्क्रत धातु 'सिच' के स्थान पर विकल्प से प्राकृत भाषा में 'सिख्य ौर मिन्प' ऐसे दो (धातु) रूपों की आदेश प्राप्ति होती है। पदान्तर में 'सिच' का 'सेख' भी होगा। दाहरण इस प्रकार ह — सिख्रति = (१) सिज्यह, (२) सिम्पह और (३) सेखड़ = यह सींचता ईं प्या सींचती है।। ४-६६॥

े प्रच्छः पुच्छः ॥ ४–६७ ॥

पृच्छे पुच्छादेशो भनति ॥ पुच्छइ ॥

्रं अर्थ — 'पूछना 'खथवा प्रश्न करना' खर्थक संस्कृत घातु 'प्रस्व' क स्थान पर प्राकृत भाषा में पुष्क' (बातु) रूप की आदेश प्राप्ति होती है। जैसे—पृच्छति = पुच्छह = वह पूछती ई खयवा वह प्रश्न स्का है।। ४-६७ में ''

ै गर्जेंबु[°]कः ॥ ४–६**८ ॥**

गर्जते वृक्त इत्यादेशों वा भवति ॥ वृक्त । गजनह ।

अर्थ —'गर्जन करना श्रयंवा गरजना' श्रयंक सस्क्रत घातु 'गर्ज्' के स्यान पर प्राकृत मापा ^{मे दिक्}ल स 'गुक्त' (घातु) रूप को श्रादेश प्राप्ति होती हैं।पचान्तर में 'गज्ञ' की प्राप्ति भो होगी। ^{त्रैम}—गर्जित ≖युक्तर श्रयंवा गज्ञह्≕वह गर्जन करता है श्रयंवा वह गरजता है '। ४-६न॥

' चुपे ढिकः ॥ ४-६६ ॥

ष्प-क्तृंकस्य गर्नेहिंक इत्यादेशो या भनति ॥ ढिक्इ । प्रुपमो गर्नेति ॥

अर्थ — 'वैल-भावड गर्बना करता है' इम खर्ध वाली गर्जना खर्थक घातु क निये प्राष्ट्रन भाषा में विद्रुप्त स 'ढव' (धातु) रूप की प्रादेश प्राप्ति होती हैं। जैसे—धृपमी गर्जीत = (टमहो) ढिण्ड = कैन गन्ना करता है। प्राष्ट्रत रूपान्तर 'वसहो गज्जड़' लेगा मी होगा ॥ ४-१६ ॥

राजेरम्घ-छज्ज-सह-रीर-रेहाः॥ ४-१०० ॥

राजिरेते पञ्चादेशा पा मुचन्ति ॥ श्रम्मह । छज्जह । महरू । रीरङ । रेस्ड । रायह ।

गर्थे—'शोमना, विराजना, चमकना' श्र्यंक मस्ट्रत-घातु 'राज्' के 'धान पा प्राप्टन-^{घाता म विरुद्ध} से पांच (घातु)-रूपों की छादेश प्राप्ति होती है। जाकि क्रम स्ट्रसपा है—

- मस्जेराउड्ड-शिउड्ड-बुड्ड-खुपाः -॥ ४-१०**१** ॥ [.]

मज्जतेरेते चत्वार श्रावेशा वा भगन्ति ॥ श्रावडुद । शिवडुद । शुक्र । सुन

अर्थ — 'मलन करना, ह्यना, श्रथवा स्नान करना' श्रथेक सेकृत-वातु 'मत्' क स्वतः श्रकृत-मावा में विकल्य से चार (धातु) रूगें की श्रादेश प्राप्ति होतो है। (१,वाग्द्र (१/वग् (३) पुष्ठ श्रीर (४) सुष्य । वैकल्पिक-पक्त होने ने 'मज्ज' की प्राप्ति मो होगो। बदाहरण व्यवस्य प्रकार है — मज्जाति = ,१) आउत्हड, (२) णिउत्हड, (१) गुरुड, (४) गुण्यह, धोर (१) पत्र । प्रमुक्त स्वतः है, वह द्वार्यो है, यह मञ्जन करती है। ४-१०१।

पुक्षेरारोल-बमालो ॥ ४--१०२॥

पुज्जेरेवाबादेशी वा भवतः ॥ श्रारोलह । वमालह । पुञ्जह ॥

अर्थ —'एकत्र करना, इकट्ठा करना' कार्यक सरकत-धातु 'पुरुष् के स्वान ६८ प्राही-र' म बिक्क में दो(धातु) रूपों की श्रावेश प्राप्ति होती है। (१) यारोल खीर (२) वमाल । विक्य होने से 'पुळन' की मी प्राप्ति होगी। चदाहरण कव से इन प्रकार है — पुजयति-(६) भारा पर, (६) इना खीर (३) पुजड़-वह एकत्र करता है, वह इकट्ठा करती है।। ४-१०२।।

🔭 लस्जे जींहः ॥ १–१०३ ॥

लज्जते जींह इन्यादेशी या भवति ॥ जीहरू । लज्जा ॥

भर्य — 'लग्ना फराा, शरमामा' धर्मभ में रहत-चातु 'लान' के स्वान वर प्राहन ग्रीस विकल्प में 'जीह' (घातु) रूप की खादेश प्राप्ति होती है। बैहल्पिक पह होते में 'कार्य हो। प्राप्ति होगी। जीम—'लखाति — जीहह द्यायया रूजह = यह लब्बा धरती है, वह गरमाना है। ४-(।

'तिजेरोसुक्कः ॥ १–१०४॥

तिनेरीसुक्त इत्यादेशी वा भरति ॥ श्रीसुबद्ध । तेयस ॥

अर्थ —'वीद्या वरना, तेज करना' अर्थक सम्छत-घातु 'तिज्ञ' के स्थान पर प्राष्टत-भाषा में विकल्प से 'क्रोसक्क' (घातु) रूप की क्यादेश प्राप्ति होती है। चैकल्पिक पक्त होने से 'तिक्र' की भी . प्राप्ति होगी । जैसे — तेजयाति (श्रथवा तिजिति) = ओसुकड़, तेअड़ = वह ती हग करती है, वह तेज करतः इं। 'तेश्र' घातु से सज्ञा–रूप 'तेत्रण' की प्राप्ति होती है। नपुसक लिंगवाले सज्ञा शब्द 'तेत्रण' का शर्य 'तेज करना, पैनाना, उत्तेजन' ऐसा होता है ॥ ४-१०४ ॥

मृजेहग्वुस–तुञ्छ–पुंछ-पुंस–फुस–पुस-तुह्-हुल-रोताणाः ॥४–१०५॥

मुजेरेते नवादेशा वा भवन्ति ॥ उन्घुसङ । खुञ्छइ । पुंसङ । फुमङ । लुहइ । हुँलड । रोसाग्रङ । पत्ते । मज्जङ ॥

अर्थ -- 'मार्जन करना, शुद्ध करना' ध्वर्थक संस्कृत बाबु 'मृज्' क खान पर प्राष्ट्रत-भाषा म विकरप स नव (घातु) रूपो की छादेश प्राप्ति होती है । (१) उग्छुस, (२) लुब्छ, (२) पुब्छ, (४)पुम (१) फ़ुन, (६) पुस, (७) लुह, (६) हुल श्रीर (६) रोसाण । वैकल्पिक पत्त होने से 'मर्ज्ज' भी होगा। नगहरण कम से इस प्रकार है —मार्छ=(१) जम्युसङ, (२) लुञ्छड, (३) पुञ्छड, (४) पुसङ, ि(१) फुसइ, (६) पुसइ, (७) लुहइ, (८) हुलइ, (६) खेसाणइ पक्षे मज्जइ = यह मार्जन करता है. । बह शुद्ध करता है ॥ ४-१०४ ॥

ैं भञ्जे वेंमय-मुसुमूर-मूर-सूर-सूड-विर-पविरञ्ज

करञ्ज-नीरञ्जाः ॥ ४-१०६ ॥

भन्नेरेते नवादेशा। वा भवन्ति ॥ वेमयह । मुसुपुरह । मुरह । मुरह , खडा । विरह । परिस्ञ्जइ । करञ्जइ । नोस्ञ्जइ । सञ्जइ ॥

अर्थ — 'भौंगना-तोड़ना' अर्थक संस्कृत-धातु 'भ ज' के स्थान पर प्राप्टन-भाषा मे विक्ल्प स ^{नद चा}तु रूरों की आदेश प्राप्ति होती हैं (१) वसय, (२) सुसुमूर (३) मूर, (४) सूर, (४) सह, ^{(+) दिर}, (७) पविर ज, (=) कर ज ऋौर (६) सीर ज ।

वैक विषक पत्त होते से 'सज्ज' भी होगा। उशहरण कम से वों हें — भनाकी = (१) वेमचड़ र (१) मुसम्रह, (३) मूरह. (४) सूरह, (४) सृहह, (६) विरङ,(७) पविरङजङ (८) परञ्जङ (६) नारञ्जह, श्रीर (१०) अञ्जह = बह भाँगता है अथवा वह तोहता है ॥ ४-१०६ ॥

श्र<u>न</u>ुत्रजे: पडिश्रगा: ॥ ४–१०७ ॥

[808]

श्रतुवने: पहिश्रमा इत्यादेशो वा भवति ।। पहिस्रमाइ । श्राणुवन्नः ॥

अर्थ —'श्रतुमरण करना, पीछे जाना' श्रर्थक संख्त-धात 'श्रतु + प्रज' के स्थान पर प्राहर-पात् में विकल्प से 'पहिश्रमा' (धातु) रूप की व्यादेश प्राप्ति होती है । वैकल्पिक पत्त हाने से 'ब्रगुस्प भी होगा। उदाहरण क्रम से वों हैं -अनुयजाति-पडिअग्गइ पतान्तर में अणुक्च्याः वह मनुगढ करता है, वह पीछे जाती है ॥ ४-६०७ ॥

अर्जेर्विडवः ॥४–१ ०८॥

श्रर्जेर्विद इत्यादेशो वा भनति ॥ विदवह । ऋज्जह ॥

अर्थ — दवार्जन करना, पैरा करना' द्यर्थक संस्कृत-घातु 'श्चर्ज' के स्थान पर प्राप्तु-मंश्व विकल्प से 'विद्य' घातु-रूप की आदेश प्राप्ति होती है ' बैकल्पिक पत्त होने स 'अल' भी होगा। शा हरण क्रम से इस प्रकार हैं -

अर्जयाति=१४डवड पद्मान्तर में अज्जड़=बह उपार्जन करता है. श्रथवा वह पैश हाते है 118-8-211

युजो जुञ्ज जुङ्ज-जुप्पाः ॥४-१०६॥

युजी जुझ जुज्ज जुप्प इत्यादेशा मनन्ति ॥ जुझह । जुज्जह । जुप्पह ॥

अर्थ —'जोड़ना, युक्त करना' कार्यक संस्कृत घातु 'युज' के स्थान पर प्राहत माण में क्रिशा है 'जुल, जुल श्रीर जुप्प' ऐसे तीन थातु रूपों की आदेश प्राप्ति होती है। बैक्टिनक पर हैं व 'जुज' की भी प्राप्ति होगा । जैमे -युज्यते = (१) जुज्जह, (२) जुज्जह, (३) कुव्यह पहार्ता महारा वह जोड़ता है, वह युक्त करता है ॥ ४-१०६ ॥

• भुजो भुज-जिम-जेम-कम्माएह-चमढ-समाण्-चड्डाः ॥ ४-११० ॥

भुन एतेऽष्टादेणा भवन्ति ॥ भुज्जर । जिमह । जेमह । कम्मेर । अपहर । मनाहर चम्दह । चहुई ॥

अर्थ -- 'मो नन करना, खाना' व्यर्थक मंस्टत-वातु 'सुत्र्' क स्थान पर प्राप्टन प्रापा है दिसा स चाट (घातु -) रूपों की चादेश प्राप्ति होती है। (१) सुन्त, (२) जिन, (१) रेन, (४) रेन (४) करह, (६) समद, (4) समाण और (-) पष्टु। मैंकल्पिक पक्ष होते से 'मुन' की प्रांति कारी इनके उदाहरण इस महार है —मुमानी (झयवा) मुरुक्ती =(1) मुज्यह, (1) निमन, (1) केनी

वोपेन कम्मवः ॥ ४-१११॥

उपेन युक्तस्य भुजे: कम्मव इत्यादेशो वा मनति ॥ कम्मनइ । उवहुज्जड ॥,

ी अर्थ —'वन उपसर्ग महित मुज् घातु के स्थान पर प्राकृत-भाषा में विकल्प से 'कम्मव' ^{[शतु -})रूप को श्रादेश प्राप्ति होती हैं । सैकल्पिक पत्त होने से 'उबहुउन' की भी प्राप्ति होगी। |सहस्य यों हे —उपस्*नक्ति = कम्मष*ड श्रयवा पत्तान्तर मे *उचह* उजड़ = वह चनभोग करता है |४१११॥

🗸 घटे र्गढः ॥ ४-११२॥

घटते गैंढ इत्यादेशो चा मनति ॥ गढइ । घडइ ॥

भर्थ — 'मनाना कार्थक संस्कृत-घातु 'घट्' के स्थान पर प्राकृत-भाषा में विकल्प से 'गट' ^{(यतु}-)रूप की आदेश प्राप्ति होता है । वैकल्पिक पच होने से 'घड' की मी प्राप्ति होगी । जैसे — ^{स्टति} (अथवा घटते) = गडड अथवा घडड़ =वह बनाता है ॥ ४ ११२ ॥

समो गलः॥ ४-११३॥

मम्पूर्वस्य घटते र्गल इत्यादेशी वा भवति ॥ सगलइ । सवडइ ॥

अर्थ — 'सम् = स' उपसर्ग सहिन सरकृत धातु 'घट्' क स्थान पर शष्टत-मापा म विग्न्य स ^{'गत्र'} (पतु -) रूप का आदेश प्राप्ति होती है, यों सरकृत धातु 'सघट' के स्थान पर प्राक्तत मापा में ^{गत्र घातु रप की आदेश प्राप्ति होती। 'सबड = भी प्राप्त होगा। जैसे — सघटते ≂ *सगल इ* अथया ^{भपदा} = वह सघटित करता है, वह मिलाती है॥ ४-११३॥}

🕶 हासेन स्फुटे र्मुरः ॥ ४–११४ ॥

हामैन करखेन यः स्फुटिस्तस्य ग्रुरादेशो या भवति ॥ ग्रुरड । हासेन स्फुटित ॥.

अर्थ-'मुस्कराना, सामान्य रूप से हॅसनो' अर्थय मस्ट्रत घातु 'स्टुट्' के स्थान पर प्राकृत भाग में विकल्प से 'सुर' (घातु) रूप की आदेश प्राप्ति होती है। पत्तान्तर में 'पुट' की मी प्राप्ति रेणा जैसे —हासेन स्फुटाने — मुरङ् अथवा फुटड़ =वह हेंसी के कारण में प्रमप्त होता है स्पन्न जित्रती हैं।। ४-११४॥ मगडोश्चिच-चित्रम्म-चिञ्चिल्ल-रीड-टिविडिक्काः ॥ ४ ११५॥

मएडेरेते पत्रादेशा वा मनन्ति ॥ चित्रह ै। चित्रमह । चित्रिप्रह । रीहर् । निव मएडड ।

अर्थ —'महित करना, त्रिभूपित करना शोमा युक्त बनाना' श्रथंक सस्हत-वात 'स्ट स्यान पर प्राकृत-मापा मं विकल्प से पाँच घातु-ह्यों पा आदेश प्राप्त होती है। आहि हैन प्रकार है —(१) चिल्ला, (२) बिल्लाख, (३) बिल्लिक्स, ১৪) ग्रेड छीर (४) दिविद्दिग पर 'मरह' की भी प्राप्ति होगी। स्वाहरण कम से इस प्रकार है —मण्डयात-(१) चित्रपर, । ᢊ (३) चिक्किलाइ, (४) रीहरू, ५) टिविडिकार, पत्तान्तर म मण्डर = वह मीटत करता है, वर यक्त बनाता है ॥ ४--११४ ॥

> तुरं स्तोड-तुट्ट-खुट्ट-खुडोक्खु डोल्लुक्क (ण्लुक्क लकोल्ल.रा ॥ ४–११६ ॥

तुहेरंते नवादेशा या भनन्ति ॥ तोडह । तुहर । सुबर । खुहर । उनसुदर । अ थिलुक्द । उल्लुरह । तुढ्द ॥

अर्थ — 'तीड़ना, खंडित करना, द्वरड़ा करना' ऋर्यक सर्द्धन-वात 'तुइ' व स्वात वर ह मापा म विकल्प से नव धातु रूपों की आदेश शामि होती है । जो कि कम से इम प्रकार है --(। (२) तुर (३) तुर, (४) सुर, (४) उन्नसुर, (६) उन्लुक,(४) णिलुक, (८) लुक श्रीर (६) उन्त्य । १५ में तुट भी होगा। उदाहरण कम स इस प्रकार हैं — मुडात=(१) सांडह (१) तुहार (१) सह खुरह, (४) उम्पुब्हर, (६) वन्तुक्षर, (७) गिरल्क्षर, (८) लुक्सर, (॰) वस्युक्त, वसासा ह तुरुइ=बह तोहता है, वह छाडिन करती है अयथा वह दुवड़ा करता है ॥ ४-११३ ॥

घृणों घुल-घोल-घुम्म-पहद्धाः ॥ ४--११७ ॥

घूर्तिने चरतार कादेशां मतन्ति ॥ पुत्तः । घोलः । पुम्मः । पहन्तः ॥ "

लथं — बृमना, कॉपना, डोलना, हिनना' खर्य ह सस्हन-मातु पूर्व के स्वान पा प्राहर-में चार (पातु) रूपों की आरंग प्राप्ति होती है। वे इम महार है -- , ह) पुन, (१) पात (। चीर (४) पदल्ला उदाहरण क्षम मे इन धकार है — ग्रणित =(१) एउइ (२) गोलंड, (३) पुन्म (d) पटलुड= यह मूतता है अवदा यह कॉवनो है, यह बोलना है यह हिशना है ॥ प्र-१३ ॥

🛂 त्रिवृतेर्हंसः ॥ ४--११८ ॥.

विष्टतेर्हंस इत्यादेशी या भवति ॥ हमइ । विवद्धः ॥

अर्थ — 'धसना, धमकर रहता, (गिर पडना '' अर्थक सस्कृत बातु 'विद्वन्' के स्थान पर एत भाषा में निकल्प से ढन' धातु-रूप का आदेश प्राप्ति होती है। वैकेल्पिक पत्त होने से वह भी होगा। जैसे — विवृत्तेते = डसड़ अथवा विवृहड़ = वह बसता है, यह धम कर रहता है अथवा वह गिर पडती है) ॥ ४-११८॥

ै बनथे रट्टः ॥ ४--११६ ॥

क्येरष्ट इत्यादेशो वा भवति । अङ्गड । कहड ॥

सर्थ — 'क्याथ वरना' 'उनालना-प्रकाना' अर्थक सस्कृत-धानु कथ्र' वस्यान पर प्राकृत-ापा म विकल्प से 'श्रष्ट धातु रूप की आदेश प्राप्ति होता है । मैं किल्पक पत्त होने से 'कढ़' की सी कि होगी। जैसे — क्यथानि-अट्टड़ अथवा कडड़-बह क्वाथ करता है—मह उपातता है अथवा वह हाती है 18-११९॥ —

'ब्रन्थे र्गग्ठः ॥ ४-१२०॥

यन्येर्गएठ इत्यादेशो वा भनति ॥ गएठइ । गएठी ॥

भर्य — गूँथता रचता, बन ना' अर्थक संस्कृत घातु 'प्रन्य' के स्थान पर प्राकृत मापा में ^{१६२} स 'गठ' (घातु) इत्य की आदेश प्राप्त होता है। पनान्तर में 'गय' नी मीप्राप्ति होगी। व — अष्टाप्ति = गण्डह अथवा गथइ = बह गूँथती है अथवा पह रचना करता है।

मस्टन खालिंगी सङ्घा शब्द 'यन्थिय' का प्राष्ट्रत एवान्तर गठी होगा। 'गठी' का नात्वर्य है ^{कि} अथरा जोड़'। 'गरठ' घातु से ही गठी शब्द एवा निर्माण हुआ है । ४-१-०॥

मन्थे धु सल-विरोली ॥ ४-१२१ ॥

मन्येर्पुमल विरोल इत्यादेशी वा भनतः ॥ घुनलड । निरोलइ । मन्थड ।

मर्य — गयना, विलोडना करना' अर्थक सन्द्रत घातु 'मय' के स्थान पर प्राहत भावा म रित स 'युनत और विरोत्न' लेने ना घातु स्वों का आदेश मिन होनी है। ये केल्विक पत्त होने स कैतिर में पत्य भी मा प्राप्ति होनी। जैसे —मन्याति = युसल्य, विरोल्ड अथवा मन्यड्र व्यव 'रेश्मेन करता है अथवा वह विलोदन करती है।। ८-११'॥

मग्डोश्चित्र=−चित्रक्रम−चिञ्चल्ल−रीड-टिविडिक्काः ॥ ४ ११५॥

मण्डेरेते पश्चादेशा वा भवन्ति ॥ चिश्चड]। चिश्चग्रड। चिश्चिद्धड । रीडर् । रिनिता मण्डड ।

अर्थ — 'महित करना, विभूषित करना शोभा युक्त बनाना' अर्थक सहत-थातु 'मरहर स्थान पर प्राक्तत-भाषा में विकल्प से पॉच धातु-रूपो को आदेश प्रांग्त होती है। चा हक हर प्रकार हैं (—(१) चिक्क, (२) चिक्कब्स, (३) चिक्रिचल्ल, १४) रोह और (४) टिविहिक्स प्रशान 'मरह' की भी प्राप्ति होंगो। चहाहरण कम से इस प्रकार हैं —मण्डयाति-(१) जिञ्चर, (१) जिलि (३) चिज्ञिच्छड़, (४) रीवड़, ५५) टिविडिक्कड़, प्रचान्तर में मण्डड़ = यह महित करता है, वर क्ष्र युक्त बनाता है। ४-११४॥

तुडं स्तोड-तुट्ट-खुट्ट-खुडोक्खु डोल्लुक्क णिलुक्क लुक्कोल्लुराः ॥ ४-११६ ॥

तुडेरेते नवादेशा चा भवन्ति ॥ तोडड | तुष्टड | सुबद | सुबड | उक्सुबद | उत्रु शिक्तुकड | उल्लुरड | तुडह ॥

अर्थ — तोडमा, खहित करना, दुकडा करना' खर्थक संस्कृत-धातु 'तुड' क स्थान पर शा मापा में विकल्प से नव धातु रुपों की खादेश प्राप्ति होती है। जो कि कम से इम प्रकार है —(1)ः (२) तुड (२)खुड, (४) खुड, (५) वक्खुड, (६) वल्खुक,(७) णिलुक, (८) लुक्क होर हो। में तुड भी होगा। वदाहरण कम से इस प्रकार है:— प्रवति =(१) तोडड, (१) तुड., (१) पुड़ी, खुड़, (५) उक्तुव्डड़, (६) उल्लुऊड़, (७) णिल्लुकड़, (८) लुक्ड़, (०) उल्लुख, प्रकारण हो तुड़ड़ वह तोहता है, वह प्रक्टिन करती है अथवा वह दुकड़ा करता है। ४ ११०।

. घूर्णो घुल-घोल-घुम्म-पहल्लाः ॥ १८-११७॥

घूर्ग्हेरेते चरवार श्रादेशां मवन्ति ॥ घुलइ । घोलड । घुम्मड । पहण्लर ॥

अथं — घूतना, कॉवना, डोलना, हिलना' अर्थे क सहरूत-यातु धूर्ग हैं ह्वान वर प्राहर-मात्र में चार (धातु-) रूपों की आदेश आित होती है। वे इन प्रकार है — (१) चुन, (१) ग्रेंन (३) प्रमासी और (४) पहल्ला ट्याहरण साम से इन प्रकार है — प्रणाति = (१) धूनह, (१) ग्रीना, (१) ग्रुंना की (४) पहल्ला = याहरण साम से इन प्रकार है — प्रणाति = (१) धूनह, (१) ग्रीना, (१) ग्रुंना की (४) पहल्ला = यह चूनना है अपना वह कॉवनो है, वह डोलना है यह विहान है। ४-२१०।।

🛂 त्रिवृतेर्डंसः ॥ ४--११८ ॥.

विरतेर्देस इत्यादेशो वा भवति ॥ हमइ । विवद्धः ॥

ं अर्थ — 'घसना, धनकर रहना, (गिर पडना '' अर्थक सस्कृत बातु 'विद्वृत्'के स्थान पर गुप्त मापा में विकल्प से दन' धातु-रूप को आदेश प्राप्ति हार्ता है। वैकल्पिक पत्त होने से वृत्रह भी होगा । जैसे *—विवर्तते = ढसइ* अथवा *विच्छुइ =* वह धमता है, वह धम कर रहर्ता ई अथवा वह गिर पडती है)।। ४–११८॥

ै क्वथे रट्टः ॥ ४--११६ ॥

कथेरह इत्यादेशो वा भनति । श्रष्टुड । कहड ॥

ं अर्थ — 'क्याय वरना' 'उबालना-पठाना' खर्यक सस्क्रन-घातु कथ्' कस्यान पर प्राक्तन-गया में विक्का से 'श्रष्ट' घातु रूप की कादेश प्राप्ति होता है । प्रैकिटियक पल होने से 'कढ' की भी भिति होगी। जैसे —*क्ष्म्याति=श्रद्धइ* श्रयवा कटड़=बह क्वाय करता है—यह उबालता है श्रयवा वह 'क्षाता है । प्र-११६ ॥

'यन्थे र्गग्ठः ॥ ४-१२०॥

प्रन्वेर्मएठ इत्यादेशो वा भनति ॥ गएठइ । गएठी ॥

े अर्थे — गूँथता रचना, बन ना' अर्थक संस्कृत घातु 'मन्य केस्थान पर प्राकृत भाषा में ^{विद्}रास 'गठ' (घातु) रूप की श्रादेश प्राप्त होता है। पत्तान्तर में 'गथ' की मी प्राप्ति कोगी। ^{देन — प्रफ्नाति = गण्ठह अथवा गथह = वह गूँथती है अथवा वह रचना करता है।}

सन्छन सार्तिमी सज्ञा शन्त्र *'मन्थि'* का श्राकृत रूपान्तर गर्छ होगा। 'गठी' का तार्त्वर्य हैं ^{'गेंठ' अथरा जोड़'। 'गरुठ' धातु से ही गठी शब्द का निर्माण हुया है ॥ ४-१⁻०॥}

मन्थे घु सल-विरोली ॥ ४-१२१ ॥

मन्येषु मल विरोल इत्यादेशी वा भवतः ॥ घुनलइ । विरोलइ । म थड ।

भर्य — गयना, बिलोडना फरना' ऋर्यक सन्ध्त धातु 'मय' के स्थान पर प्राह्न भाषा में रिक्त से 'पुषन और विरोत' ऐसे दा घातु रूपों को आदेश प्राप्ति होती है। यैक्तियर पर होन में हिंद के 'मन्य की मा प्राप्ति होगी। जैसे — मन्थाति = पुमल्ड, विरोल्ड अथवा मन्यर=वह मधना है पर मर्दन करता है अथवा यह जिलोइन करती है।। ८-१२।।

ह_लादेरवञ्चच्छः ॥ १-१२२ ॥

हलादते एर्यन्तम्याएयन्तस्य च अवअच्छ उत्यादेशो भन्नति ॥ सन्धन्देतं । इहार्य वा ॥ इकारो स्यन्तस्यापि परिग्रहार्थः ॥

अर्थ. — 'त्रानन्द वाना अथवा खुश होना' अर्थं ह सस्हत धातु 'ह्वाद के स्थान वर प्राह्त हा में 'सामान्य कालवाचक किया रूप में' श्रथवा 'प्रेरणार्थक बाचक किया रूप में' हानां हा रिपियें येवल 'श्रवश्रव्य' धातु रूप की श्रादेश प्राप्ति होती है। 'श्रप्रेरणार्थक कियानाचक रूप' का आहा यों है —इराइते = अरभच्छड़=वह प्रातन्द्र पाता है, वह सुश होती है। प्रेरणार्यह कियाबायह साह दृष्टान्त इम प्रकार से हैं —एलाइयाति≈अवअच्छड़=वह व्यानन्द कराता है, वह सुग कराती है। दोनो स्थित्यों में प्राक्त भाषा में उपरोक्त रीति से केंत्रल एक हो धातु रूप होता है।

'हका.' उच्चारण 'सूत्र प्रक्रिया' में प्रेरणार्थक प्रत्यय 'णि' का बोवक श्रथवा समाहह हा जाता है. ऐसा ध्यान में रक्षा जाना चाहिये॥ ४-१२२॥

नेः सदो मञ्जः ॥ ४-१२३ ॥ *

निपूर्वस्य सदो मजन इत्यादेशी भवति ॥ श्रचा एत्य प्रमन्त्रहा।

अर्थ —'नि' उपमर्ग महित सम्ब्रुत घातु 'सद् के स्थान, पर प्राकृत भाषा में मन्न' पातु हर् त्रादेश प्राप्ति होती हैं। जैसे *~आत्मा अत्र निर्साद्विच्यता एत्य गुमञा* = श्रा मा वर्ग पर ^{दे} है। ४-१-३॥

छिदेदु हाव-िण्डक्क -िण्डमोड-िण्डवर-िण्ल्लूर-लूराः ॥ ४-१२४ ॥

छिदेरेते पढादेणा ना भनन्ति । दुहान्ड । णिच्छल्लह् । णिचमीडह् । णिचनाड । दिन रड । लुरइ । पदी । छिन्दइ ॥

अर्थ — छेरना, स्व'वहन ररना' ष्रर्थंश संस्कृत धातु 'खिद्र' व स्थान वर प्राष्ट्रन प्राप वित्रला में छ द धातु क्यों की भाग प्राप्ति होती है। जी कि स्म स इन प्रनार है -(1) इन (२) खिण्छलन, (३) णिग्रहोस (४) खिज्यर, (४) णिल्सूर और (६) सूर। वैहन्विह वह होने सं हि की भी प्राप्ति हागी। न्याहरण कम स यों हं -िलिनात्ति=(१) द्वहारह, (२) णिच्छमह, (०) लिक्नी (४) णिव्यरङ, (५) णिल्ट्रङ, (६) छाङ । पन्नान्तर में छिन्दह=मह छेन्ता है स्वयत्रा चह सरिहत है। \$ 11 8-1 A 11

ञ्राडा ञ्रो ञ्रन्डोद्दालौ ॥४-१२५ ॥

त्राटा युक्तस्य छिरेरोयम्द उद्दात्त इत्यादेशौ वा मनतः ॥ ग्रोब्रम्दइ । उद्दात्तइ । खन्दइ ॥

कर्थ —'श्रा' उपमर्ग सहित संस्कृत-धातु 'खिंदु' के स्थान पर प्राकृत-भाषा में श्रा श्रन्द उदाल । दा घातु-हर्षों की विश्वन से खादेश प्राप्ति होती हैं। वैकल्पिक पत्त होने से अन्दिजन्द की मी प्राप्ति । हैं। उनहरुख वा हें —आन्दिजनाति = ओअन्द्रइ, उद्गलइ श्रथवा अन्दिजन्द्रइ = वह खींच लेता हैं ।वा यह हाथ से छीन लेती हैं।। ४-१२४॥

मृदो मल-मढ-परिहट्ट-ख़ड्ड-चड्ड-मड्ड-पन्नाडाः ॥४-१२६॥ •

सृद्नातेरेते सप्तादेशा भवन्ति ॥ मलङ । महङ । परिहट्ट । पङ्ड । चट्टड । महङ । ग्रह्म ॥

गर्थ — 'मर्दन करना, मसलना' खर्षक सरकृत-घातु 'मृद्' क स्वान पर प्राप्टत-भाषा में मात । । एकों भी खादेश प्राप्ति होती है। जो कि इम प्रकार है —(१) मल (२) मट, (३) परिष्ट, (४) खटू, । पे पढ़, (६) मट्ट और (७) पन्नाड । इन ह उदाहरख इन प्रकार हें — मृदनाति =(१) मलक, (ने) मडक, । । पे पद्माति =(१) मलक, । । पे पद्माति =(१) चहुड़, (५) चहुड़, (७) चहुड़, (७) चहुड़, (५) चहुड़, (७) चहुड़, (७)

स्पन्देश्चुलुचुलः ॥ ४-१२७ ॥

स्पन्देश्चलुचुल इत्यादेशी वा भवति ॥ चुलुचुलह । फन्दह ॥

णर्थं —'फरकना, थोहा हिलना' अर्थक सस्क्षत पातु 'स्वन्द्' ने स्थाप वर प्राकृत भाषा न जिस्त्व में 'बुलुकुन' पातु-रूप की आदेश प्राप्ति होती हैं। वैकल्पिक पत्त होने म 'फर्टर' की भी पाजि हासी। 'सहस्थ पो हें —स्वन्द्रति = चुतुज्जलङ् अथवा फर्न्ड़ = वह फरक्तो हे अथवा वह थाज हिलना है ॥४-६२७॥

निरः पदेर्वलः ॥ ४-१२८॥ -

निपूर्वस्य पदेवन इत्यादेशो वा भगति ॥ निव्यलंड । निप्पज्जः ॥

अर्थ — 'निर' उपमर्ग सहित सम्द्रत घातु 'पद्' के स्थान पर शक्त मापा में विद्या म फेला घातु रूप की खादेश पास्ति होता है। ये हिल्दक पत्त होने से 'निप्ज' की माप्रांति होगी। उगस्त अ प्रकार है — निष्पचले = निष्यल्य खावा निष्पज्य = यह निष्दल होता है यह सिद्ध होता है अपना स्थानित है। प्र-रम् ॥

• विसंबदे रिश्रट्ट-विलोट्ट-फंसाः ॥ ४-१२६॥

निमपूर्वम्य परेगते त्रय आदेशा वा समनित ॥ निश्रहर । तिलोहर । प्रपर । निलंका

अर्थ — वि' उपमर्ग तथा 'स' उपनर्ग, इस प्रकार दोनों उपसर्गों के साथ साहन-चातु 'स'। स्थान पर प्राज्ञन-भाषा म निकल्स से तीन चातु-स्त्यों का खादेश मासि होता है। जो कि इम फार्र्स (१) निश्चह, (२) त्रिलोह खीर (३) फम। वें कल्सिक पत्त होने से 'विमक्य' को भ, प्राप्ति हागा। शार्र्स कम से इम प्रकार हें — विस्तवहति = (१) विश्वहर, (१) विश्वोहर, (१) फतह खीर (४) विस्ववर भा जनमाणित करता है खयन वह खमस्य सामित करता है।। ४-४-४६।।

* शदो भड-पक्खोडी ॥ ४-१३०॥

शीयतेरेतावादेशी भनतः ॥ भडह् । पक्छोडह् ॥

शर्थ —'फडनर, टपकना' खर्षक संस्कृत-षातु 'राद्' के स्वान पर प्रकृत भाषा में से पाड स्पे भी खादेश प्राप्ति होतो है । ये यों हं —(१) फड और (२) पत्रबोड । बदाहरण इम प्रकार हें —शीष^{ते क} झंडड़ 'प्रीर पक्खोंडड ≕ प्रकृता है, वह टपकतो है, वह धोरे घोरे मम होती है ॥ ४-१३-॥

त्राफन्देर्गीहरः ॥ ४–१३१ ॥

श्राकन्देर्गीहर इत्यादेशी वा मनति ॥ गीहरह । श्रकन्दह ॥

अर्थ — आकन्दन करना, विस्ताना' अर्थक सरहत-बातु 'आ + कन्द्' के स्थान पर अहन-भाषा म बिररप में 'खोहर' धातु हव की आद्रा प्राप्ति होती है। यैकेरियक वत्त होते से बहर्न मी होता ' जग -आजन्त्रति = पीहरङ ध्यया अजन्दह = 16 आक्रान करती है खबबा यह विरुत्तता है ॥४-१३॥

- विदेज्री-विस्रो॥ ४-१३२॥

चिदेरेतानाटेशी वा मनतः । जूरह् । निख्रहः । चिज्रहः ॥

अर्थ —'सेंद करना, श्राफतोस करना' श्रार्थक सम्कत-धातु 'खिट्' के स्थान पर प्राकृत भाषा में करासे 'जूर और विसूर' ऐसे दो धातु-रूपों की श्रादेश प्राप्ति होती है। वैकेल्पिक पत्त में 'खिडन' भीप्राप्ति होगी। उदाहरण यों है -खिद्यते =(१) ज़रड़, (२) विसूरड़ और पत्त में खिज्जड़ = वह सेंद ला है, वह श्राफ्तोस करती है।। ४-१३२।।

ँ रुघेरुत्थङ्घः ॥ ४−१३३ ॥

स्पेरुत्थह्व इत्यादेशो वा भनति ॥ उत्यह्वड । रुन्थड ॥

अर्थ —'रोकना' द्वर्थंक सरकृत-घातु 'रुघ्' के स्थान पर प्राकृत-भाषा में विकल्प से 'उत्पय' उ-रुप की कारेश माप्ति होती हैं। वैकल्पिक पत्त होने से 'रुग्ध' की भी प्राप्ति होगी। जैसे —रुणादि = यगर क्षयवा रुच्छन्=बह रोकता है॥ ४-१२२॥

निपेधेईक: ॥ ४-१३४ ॥

निषेवतेहैंक इत्गादेशो वा भगति ॥ हकह । निसेहह ॥

अर्थ — 'निषय करना, निवारण करना' अर्थक सस्कृत घातु 'नि + पिष्' के स्थान पर प्राष्ट्रत-ाम में दिक्क्प से 'हुक्क' घातु-रूप की आदेश प्राप्ति होती है। चैकि पक पत्त होने से 'निसह' मी होगा। म —निषेपति = हुक्कड अथवा निसेद्धड़ = यह निषेत्र करती है अथवा निवारण करता है।। ४-(२३॥

‴ क्रुधेर्जुरः॥ ४–१३५॥

मुधेर्ज्र इत्यादेशों वा मनति ॥ जूरह । कुल्मह ।

अर्थ — 'कोष करना, गुस्सा करना' अर्थक सस्क्रन घाषु 'कृष' के स्थान पर प्राकृत भाषा में किस स'जूर' घातु रूप का आदेश प्राप्ति होती है। वैक्रिक्य पत्त होने में 'गुम्फ' भा हागा। अ — उच्यति = जूरद अथवा कुज्झह == वह त्रोध करती है, वह गुस्सा करती है। ध-१३६॥

🕶 जुनो जा-जम्मी ॥ ४-१३६ ॥

षापते जी जम्म इत्यादेशी भवतः ॥ जाश्रदः । जम्मदः ॥

अर्थ —'बलन्न होना' अर्थक सस्कृत-घातु 'बन्' के स्यान वर प्राष्ट्रत-भाषा में जा' और इम्न' हो ब्यादेरा प्राप्ति होती है । जैमे *— जायते = जाश* ब्रीर जम्मइ व्यह व्यत्प होता है। ११-११:।

तनेस्तड - तड्ड - तड्डव - विरल्ला ॥ १-१३० ॥

तनेरेते चरवार आदेशा वा भवन्ति ॥ तडह । तहा । तहाइ । विरन्तह । तहा

अर्थे — 'विस्तार करना, फैलाना 'श्र्यं क्र सस्कृत धातु 'तन के स्थान एर प्रज्ञा सामृष्टे चार धातु-रूपों की प्रावश-नामि विकल्य से होती हैं। जो को क्रम से इम प्रकार है—(1) में (२) तहु, (३) तहुव श्रीर (४) विश्वत । वैकल्पिक पद्म होने से 'तए' मा क्षेगा। व्यास्त क्रम से यो है — तनोति = (१) तहुद, (२) तहुवह, (४) विरत्वह, । पद्मान्तर में हों। = पद विश्वार करता है श्रयंचा वह फैलाती हैं।। ४-१२७।।

्रतपस्थिष्पः ॥ ४-१३८ ॥

तृप्यते स्थिप् इत्यादेशो भन्नति ॥ थिप्पइ ॥

अर्थ — 'तृप्त होना, सतुष्ट होता ' अर्थक मस्ट्रत धातु 'तृप्'क स्थान पर प्राहर-म म 'थिप्प' (अथवा थिंप) आदेश प्राप्ति होती है। जैसे — तृप्यति = थिप्पड़ (अथवा पिंड) वह तृप्त होती है, वह मन्तुष्ट होना है।। ४-१३८।।

उपसर्पेरब्लिश्रः ॥ ४-१३६् ॥

उपपूर्वस्य सुरे: छतगुगम्य अल्लिश्च इत्यादेशो वा भवति ॥ अल्लिश्च । उनसप्त ।

अर्थे —सरहन थाषु 'सृष्' में स्थित 'यहकर' स्वर को गुल करके प्राप्त पातु स्व स्वी के से 'वव' क्वमर्ग को स्वोक्ति करने पर उपनक्ष्य धातु स्व 'च्यस्पे' क स्थान पर प्राष्ट्रत मापा में कि से 'अक्लिअ' की आदेग प्राप्ति होती है। वैशिषक यज्ञ होने से 'डवमप्य' मो होगा। जैसे —उपनं अक्लिअइ अयग उपसप्यद=वह पान से-सप्ताप में-नाता है।। ४-र३६।।

संतपेर्भह्या ४-१४०॥

सवपे भेद्ध इन्यादेशो वा भगति ॥ ऋत्रह । पचे । र्सवप्पड ॥

्र अर्थ — सहस होना, सनाप करना' व्यर्थक मार्ट्स घाषु 'स + तप्' के स्थान पर श्राहुत शाय है विद्रहम से 'क्लब' की व्याप्श प्राप्ति होती है। वैकल्पिक एक होन से 'संतप्य' भी होगा। जैसे - संवर्षी = प्रस्तद व्ययपा सतप्पद=वह सत्तत होता है व्ययता वह संताप करती है।। ४-१४०॥

हयापेरोक्षमाः ॥ ४-१४१ ॥

च्याप्नोतेरोश्रमम् इत्यादेशी वा भनति ॥ श्रीय्रम्मड । वानेइ ॥

अर्थ — 'ब्याप्त करना' ऋर्थक संस्कृत-धातु 'वि + ऋष्ण्' क्र स्थान पर प्राकृत माणा में विकत्त से शाक्षण' का श्रादेश प्राप्ति होती हैं । वैकल्पिक पत्त होने से 'वाप्त' मी होगा । जैसे व्याप्नेगति=ओशनगड़ । अन श्रिष्ठ ।। अन्श्रिष्ठ ।।

समापेः समाणः ॥ ४-१४२ ॥

समाप्नोतेः समाण इत्यादेशो वा भवति ॥ समाग्रह । समाविह ॥

अर्थ — 'सपाप करना, पूरा करना' अर्थक मस्कृत वातु 'सम् + आप् क स्थान पर प्राकृत मापा 'विक्रव से समाण' की आदेश प्राप्ति होनी है। वैकल्पिक पत्त होने से 'ममाव' मी होता है। जैस — क्ष्मामोति=समाणइ अथवा समायेइ = यह समाप्त करता है अथवा यह पूरा करती है॥ ४—१४२॥ जिसे की किन्द्रसम्बद्धकर करने के किन्द्रसम्बद्धकर करने किन्द्रसम्बद्धकर करने

्षिपे र्गलस्थाड्डक्ख-सोल्ल-देल्ल-गोल्ल-छुह-हुल-परी-घत्ताः ॥ ४-१४३॥

षिपेरेते नगदेशा वा भगन्ति ॥ गलत्यः । श्रहश्यः । सोन्तः । पेन्तः । योन्तः । दुन्तते तु सुद्धः । हुत्हः । परीः । घत्तः । स्मिनः ॥

जर्थ — 'फेंकना, डालना' खर्यक सरन्त घातु 'तिष् के स्थान पर प्राष्ट्रत भाषा म विकल्प में निकास क्षेत्र आदित प्राप्ति होती है। जो कि काम से इस प्रकार हैं —(१, गलत्य, (०) ख्रद्दुस्य, १३) मोल्ल, (४) पेल्ल, (४) पोल्ल, (६) पोल्ल, (६) ख्रुह, (७) हुल, (८) परी खीर (६) घत्ता वैकिनक पद्म शेने स खिल की की की काम ।

हपोक घातुओं में से पाचना घातु 'णोहल में स्थित 'स्रोक्षार' स्वर वा विवस्त में 'हरवस्त' की होने पर बैक्टिन्द करने से 'जोहल' के स्थान पर 'गुहल' कर की भा न्नान्ति हमा करता है। भिरत बातु 'फिए के स्थान पर न्नाहत मापा में उक्त ग्यारह न्नाहा के चातु-रूप उपलप्प होते हैं। इन ह माहर का से इन न कार हें — 'हिम्मति = (१) महत्यह, (२) अहुम्तह, (२) मोल्यह, (४) पेल्यह, (४) मोल्यह, (३) मुल्लुह, (७) सुल्लुह, (७) सुल्लुह, (७) सुल्लुह, (७) सुल्लुह, (७) सुल्लुह, (४) मिल्यह = वह प्रकार है। मुल्लुह, (७) सुल्लुह, (७) स

· उत्तिचेपेर्यं लग्रञ्झोत्थवाल्लत्थोञ्भुत्तोस्सिक्-हङखुनाः ॥ ४**-१ ४४** ॥

उत्पूर्वंस्य विषेरते पडादेशा वा भवन्ति ॥ गुज्ञगुञ्छह । उत्यवह । बन्नत्वह । उद्वव उस्सिक्षह । हम्सुनड । उन्स्यवह ॥

अर्थ — 'वत्' वयसर्ग सहित संस्कृत घातु 'विष्' के स्थान पर प्राकृत मावा में विस्तर में घातु रुपों की ज्यादेश प्राप्ति होती हैं। जो कि इम प्यार हैं — (१) गुलगञ्झ, (२) उत्वव (३) इजिंक् (४) उट्युत्त, (४) उत्वव कोरे (६) इक्कृत्र । यैकल्विन पह होने से चित्रवान मा गंगा। व्यास इस प्रशार हैं — उत्विवर्ति = (१) गुलगुरुद्ध १, उत्ववद्ध १, इति इस्ववद्ध । प्रमुन्दर म चित्रवद्ध=वह क्रवा क्रिता है ॥ ४-१४४ ॥

आिं पेर्णीरवः ॥ ४-१४५ ॥

श्राट् पूर्वस्य चिपेर्शार्य इत्यादेशो वा भनति ॥ शीरवद् । श्रक्खियः ।

अंधे — 'था 'वपनर्ग सहित मण्डत घातु 'चिप' के ध्यान पर प्रावृत माना में पिर्न्न 'खारव 'को व्यादेश प्राप्ति होतो हैं। वेकल्पिक पच होने से 'श्रक्तिय 'भी धागा। वेह ' आक्षिपति = णीरकड व्यथवा अक्तिक्वड = वह श्राच्चेप करती है, वह टी∓ा करता है क्रवंश ब होपारीपण करती है।। ४-९४५॥

स्वपेः कमवस-लिस-लोट्टाः ॥ ४-१४६॥

स्तपेरेते त्रय खादेशा वा मतन्ति ॥ कमवसङ । लिसइ । लोट्टइ । सुग्रह ॥

अर्थ — 'मीना श्रथमा सो जाना , शयन करना 'श्रथं क मान्नत सात 'हिंग है सार प्राप्त भाषा म विकर्प में तीन (धातु) कर्षों की श्राहेश भाषि नोतों है (१) कमवन, (३) कि भी (३) की है। वैकल्पिक पत्त होने से 'सुन' भी होगा। टशहरण या है — स्विभित्त = (१) वन्तरी। (१) लिसन, (१) लिस

वेपेरार्यम्वायज्भौ ॥ ४-१४७ ॥

वेपेरायम्ब आपडम इत्यादेशी वा भावः ॥ आयम्बद् । आयडमह । वेन्ड ॥

अर्थ — 'वांपना अथना हिलना ' पर्यंक मस्टट बातु 'वेष् 'मे स्थान पर शाहत माणा विकत्य म ' धायम्य कीर श्रायकम ' ऐसे दो (धातु + रूपां का झाईरा श्राप्त होती है

वैकल्पिर पत्त होने से 'वंव' भी हाता। स्ताररण कम मे इम प्रकार हैं -विवतिनारी आपनार (म) आपन्तर ध्रमवा (में) वेवड = वह नित्ती हैं। यह हिजना है ध्रमया वह यरवराती है। ४-१४०॥

विलंपेर्भह्य-बडवडो ॥ ४-१४८ ॥

वित्तपेर्भेख-वडाड इत्यादेशी वा भवत: ॥ ऋपइ। वडवडइ। वित्तवड ॥

अर्थ — 'विलाप करना' श्रयंक संस्कृत घातु 'वि + लप' के स्थान पर प्राकृत मापा से 'फल और ϵ ' tसे दो (घातु) रूपों की श्रादेश प्राप्ति होती है । वैकल्पिक पत्त होने से 'विलव' भी होगा । जैसे— tति \equiv (१) अस्वह, (२) वडवडह श्रीर (३) विख्यह = वह विलाप करना है, वह जोर लोर से करती है ॥ ४-१४=॥

लिपो लिम्पः ॥ ४-१४६ ॥

लिम्पत लिम्प इत्यादेशो भगति ॥ लिम्पह ॥

कर्य — ' लीपना, लेप करना ' ध्यर्थक सस्कत-घातु ' लिप् ' के स्वान पर प्राकृत-भापा में प' (घातु) रूप की ख्रादेश प्राप्ति होती है ।_ जैसे — लिम्पाति = लिम्पड = वह लीपनी है, प करता है ॥ 2–१४६॥

गुप्येविर-गाडी ॥ ४-१५०॥

गुष्पतेरेतानादेशी वा भनतः ॥ विरह । गुडह । पन्ने । गुष्पह ॥

अर्थ — 'ब्याङ्गल होना' खर्थंक संस्कृत घातु 'गुप्य के स्थान पर प्राष्ट्रत-मापा में विकल्प में 'विर' यह 'तेमे दो (घातु) क्यों की आदेश प्राप्ति होती हैं। वैकल्पिक पर्छ होने से 'गुर्प' भी है। बैन — गप्यति = विरङ्, णर्डेङ अथवा गुप्पङ = वह ब्याङ्गल होता है, वह घषड़ाती है। १०।

कपो वहा िण ॥ ४-१५१॥

कपे अवह इत्यादेशो ण्यन्तो भगति ॥ अग्रहावेड । कृग करोतीत्यर्घ. ॥

भर्य — 'फुपा करना ' द्यर्थक सस्कृत पातु 'चप् के स्थान पर 'प्रेरणार्थक । प्रत्यय ' णिप ' $^{3.53}$ मापा में ' श्रवह + श्रावे ' = धवहाव रूप की श्रादेश पानि होतो है । जैमे — कृण करोति किएने = अवहायेड = वह रूपा करता है, वह दया करती है । ४-१४१॥

प्रदीपेस्ते ग्रव-सन्दुम--सन्धुकाइमुत्ता ॥ ४--१५२ ॥

प्रदीप्यतेरेते चत्वार आदेशा वा भवन्ति ॥ तेअवह । सन्दमह । सन्युद्ध । प्रनृत्त पत्ती नह ॥

अर्थ —'जलाना, छलगाना' स्रथवा 'प्रकाशित होना' खर्यक संस्टत घातु 'प्र+शप' इ सा पर प्राकृत मापा में विकरप से चार घातु -(रूबी) की श्रादेश प्राप्ति होती है। (१) तथन, (१) हर (३),सबुक और (४) अध्मुत । वैकल्पिक पूर्व होने में 'पलीय' भी होगा। जैसे - प्रशंपतः नी तेअयह (२) सन्दुमह, (३) सन्धुक्रह, (४) अब्युक्तह पद्मान्तर में पतीवह = वह प्रहाशिन होगा है पत वह जलाती है वह गुलगाती है ॥ ४-१५२ ॥

लुभेः संभावः ॥ १--१५३ ॥

लुस्यतेः समाव इत्योदेशो वा भवति ॥ संमावह । लुन्मह ॥

,, अर्थ — लोम करना, व्यासक्ति करना' व्यर्थक संस्कृत घातु लुम्' के र नन पर मान्त मान विकल्प से 'समाव (धातु) रूप की आदेश प्राप्ति होती है। व काल्पिक पत्त होने से 'लुटम' मी सर्वा है नैसे — लुम्याते = सभाषद व्यथवा लुटमइ≍वह लोम करता है, वह श्राप्तक्ति करती है ॥ ४-१३३॥

नुभेः खडर-पड्डुही ॥ ४–१५४॥

चुमेः राउर पड्डुह इत्यादेशी वा मनत h'राउरह । पट्डुहह । खुन्मह ॥ '

् अर्थ — 'खुर्य होना, डर से विहल होना' अर्थक संख्त यातु 'खुम के स्थान पर प्राप्टर-माग विकल्प से 'खबर तथा पह्बुह' ऐसे हो (घातु) रूपो की आदेश प्रान्ति होती है। वैकल्पिक वह बन 'खुदम' भो होता है । जैसे — धुम्यति=खउरइ, पहतुहरू अथवा खुदमड़=वह चुन्च हाता 🐍 ह हर से बिहल होती है ॥ ४-१४४ ॥

आडो रभे रम्भ-ढवी ॥ ४-१५५॥

आठः परस्य रभे रम्म ढव इत्यादेशी वा मवतः ॥ आरम्भइ । आहवइ । मारमः ।

वार्थ — 'बा' उपसर्ग महित संस्कृत भांतु 'रम्' के स्थान पर प्राष्ट्रत भागा म विरूत्र से 'बार' स्त्रीर बाढव' ऐमे शे (धातु) रूपों की स्त्रादेश शान्त होती है। वकल्पिक पर होने में 'बारम' भी में' हैं। जैसे - आरमते=(१) आरम्मइ, (२) आडवइ, चीर (२) आरमइ=वह चारम हाता है, इ शह करती है ॥ ४-१४४ ॥

उपालम्भे भारत-पचार-वेलवाः ॥ ४--१५६ ॥

उपालम्भेरते त्रय त्यादेशा वा भगन्ति ॥ भांधह । पचारह । वेलगह । उवालम्मह ॥

अर्थ — 'उपालम्म देना उलह्ना देना, ठपका देना' अर्थंक सन्कृत धातु 'उपा + लम के स्थान प्राप्त भाषा में विकल्प से तीन (धातु) रूपों को खादेश प्राप्ति होती हैं। जा कि कम से हम जा हैं — (१) कथ, (२) पचार, और (३)वेलव । वैकल्पिक पह होने से 'उवालम्भ' मा होता हैं,— गढम्भते=[१] झखड़, [२] पच्चारह, [३] वेळवड़ पद्मात्तर में उवालम्भ इ — वह वपालम्म देती अथवा वह उलहना देता है ॥ ४-१४६ ॥

अवेजू मभो जम्भा ॥ ४--४५७॥

् जुम्मेर्जम्मा इत्यादेशो भवति वेस्तु न भवति ॥ जम्भाड । जम्भाखह । अवेरिति किम् । ल-पसरा विश्रम्भह ॥

अर्थ — 'बँमाइ लेना' अर्थक सस्कृत घातु 'जूम्म के स्थान पर प्राकृत मापा में 'जम्मा अथवा म्माअ' (पांतु) रूप की आदेश प्राप्ति होतो है। जैसे — जूम्मते = जम्माइ अथवा जम्माअइ : वह जम्माई लेता है।

जररोक्त सस्कृत भातु 'जुम्म' में यदि 'वि' उपप्तर्ग जुडा हुआ हो तो 'जम्म' क स्थान पर र 'जम्मा अथवा जम्माअ' घातु रुप की आदेश प्राप्ति नहीं होगा। ऐसे समय में 'वि + जुम्म' सस्कृत "ह रूप का प्राष्ट्रत-रूपान्तर 'विश्वम्म' होगा। ऐसो स्थिति होने के कारण वि उपमर्ग का विधि निषये 'र्गित किया गया है। सैसे — केलि प्रसर विज्ञम्मते = केलि-पसरे विश्वम्मइ = कदली पौधा का लेलिव विश्वसित होता है।। ४-ग' ४७।।

भाराकान्ते नमेर्णिसुढः ॥ ४--१५८ ॥

माराकान्ते कर्तरि नमेथिंगुढ इत्यादेशीं भवति ॥ णिगुढइ । पर्व । या । भारा-

मर्थ — 'मार से आकान्त हो कर-द्याव पड़कर-नाचे नमना' धर्यक संस्कृत-पातु 'नम्' के स्यान रि प्राप्त भाषा में 'शिसुड' (धातु रूप) को आदेश प्राप्ति होती है । जैसे — माराकान्ती नमिति = विमुद्धा = योक क कारण से वह नमती है, अथवा कुकता है । कमा कमी इमी धर्म में 'नम' का कारे पेन प्राप्त रूपान कर तिया जाता है । जैसे — नमिति = शवड़ ॥ ५-१० मा

विश्रमे सिंद्या ॥ ४-१५६॥

विश्राम्यते खिन्ना इत्यादेशो वा भनति ॥ खिन्नाइ ॥ वीसमइ ॥

अर्थ — 'विश्राम करना, यक्तने पर त्याराम करना' अर्थक संस्कृत धांतु वि + श्रम =विधान स्थान पर पाछत भाषा में विकल्प से 'णिज्या' (धात) रूप की आदेश प्राप्ति हानी है। वैक्रीक श्वहत से 'वीसम' भी होता है । जैसे -विश्राम्याते = णिट्याइ श्रथना चीसमइ वह विभाग करता है। रे-'ध्री

त्राकमेरोहा बोत्थार च्छन्दाः ॥ ४<u>-१६०</u>॥

श्राक्रमतेरेते त्रय श्रादेशा वा मान्ति । श्रीहावइ । उत्थारइ । हुन्दइ : शरमर्॥ ,

अर्थ — आक्रमण करना, हमला करना अर्थक संस्कृत धातु आ + कम क स्थान पर प्राप्त मापा में विकल्प से तीन (धातु) रुवों की आदेश प्राप्ति होती है। जो कम से इस प्रकार हैं निश् खोहाव, (२) चत्यार, खोर (३) जुन्द । वैकिल्पक पत्त होने से 'झक्तम' भो होता है । इराहरण स्पन इस प्रकार हैं — आक्रमते = (१) ओहावड़, (२) उत्थारड़, (३) खुन्द्रड़ पहान्तर में अक्रमह = म थाकमण करता है वह हमला करता है।। ४-१६०।

भ्रमेष्टिरिटिल्ल-दु दुल्ल-दुदल्ल-चुक्कम्म-भम्मड-भमड-भमाड-तन-अंट−भंट-कम्प-सुम-गुम-फुम-फ़ुत-द्धन-द्धत-परी-पराः ॥ ४-१६१ ॥

भ्रमेरेतेष्टादशादेशा या मयन्ति । दिरिटिन्तड । दुन्द्वर । ददन्तड । वहन्ता मम्मडह । ममडह । ममाडह् । तलयटड । मटह । भगई । भुमई । गुमह । फुमह । फुम द्रमह । दुसह । परीह । परह । भगह ॥

अर्थ-- 'घूमना, फिरना' धर्यक संस्कृत पातु 'श्रम'' के स्थान पर प्राकृत मापा में विदश्य म घठारह (घातु) रूपों की खादेश प्राप्ति होगी है। जो कि कर्न से इस शकार है — (१) शिहि ह (२) हुन्दुरुत, (२) टढरुत, (४) पकम्म, (४) मम्मड, (६) ममह, (७) ममाड, (८) तनग्रंट, (६) मा (१०) मत, (११) सुन, (१२) गुन, (१३) फुन, (१४) फुन, (१४) हुन, (१६) हुन, (१७) वर्श औ (१८) पर ! चैकल्पिक पत्त होने से 'मम' मो होता है । चदाहरण कम से इम प्रकार है :- अमिरिन (१)दिखिटिल्ल्ड, (२) देदेल्ड, (२) चढरण्ड, (४) चढरम्बर, (५) सम्मदर, (६) समस्य, (७) समाग्र (८) राख भेटड, (९) झंटड, (१०) झनड, (११) मुनड, (१२) मुनड, (१३) फुमड, (१४) पुनी, [१५] हुमइ, [१२] हुसद [१०] पर्राइ, [१८] पर्रा, पत्तान्तर में भगद-पह चूमती है, वह किंगा है 11 82428 11

गमेरइ-श्रइच्छाग्रुवज्जावज्जसोक्कुसाक्कुस-पञ्चड्ड-पच्छन्द णिम्मह्-णी-णीणणोतुक्-पद्त्र्य रम्भ-परिञ्चल्ल-वोल-परित्रज्ञल गिरिगास गिवहावसेहावहरा ॥ ४-१६२ ॥

गमेरेते एकर्निशतिरादेशा वा भनन्ति ॥ ऋडेड । ऋइच्छाइ । ऋणुनज्जह । अवज्जमह । [[]उन्ह्रपड । श्रन्कुपइ । पचर्ड्ड । पच्छन्द६ । णिन्महइ । गीड । गीणड । गीलुक्क इ । पद्रस्र । हम्मइ।परिश्रन्लड। वोलइ। परिश्रलड। णिरिणासड। णिनहइ। श्रनसेहड। श्रनहरह। पि । गच्छर । हम्मर । गिहम्मर । गीहम्मर । त्याहम्मर । पहम्मर । इत्येते तु हम्म ोतानित्यस्येन भविष्यन्ति ॥

अर्थ —'गगन करना, जाना' खर्थक संस्कृत घातु 'गम्=गच्छ्न' के स्थान पर प्राकृत भाषा में ^{क्रिकास} (भातु) रूपों की व्यादेश प्राप्ति विकल्प से होती है। जो कि कम से इस प्रकार है — (१) व्यई, रि) भइन्छ, (३) श्रमुवन्त, (४) श्रवन्त्रस, (५) उक्कुम, (६) श्रक्कुम, (७) पन्चडू, (८) पन्छन्द, (६) ^{जिन्मह}, (२०) खा. (११) जीख, (१२) खीलुक, (१३) पदश्र, (१४) रम्म, (१५) परिश्रल्ल, **(१६**) बोल, ,(१३) परिश्रत, (१८) णिरिणास, (१६) णिवह, (२०)-श्रवसेह, श्रीर (२१) श्रवहर ।

वैकल्पिक पच होने से 'गच्छ' भी होता है। उक्त बाबीस प्रकार के धातु रूपों के उदाहरण अप सदम प्रकार है —

गच्छाति =(१) ऋईइ. (२) छाड्रन्छइ, (३) অगुग्रवज्ञइ, (४) ऋववनमइ, (५) उक्कुमइ, (७) भरहमइ, (७) पच्चड्डूइ, (८) पच्छन्टइ, (६) णिम्महइ, (१०) णीइ, (११) णीणइ, (१२) णीलुक्कड, (१३) प्रमह, (१८) रम्भइ, (१४) परिव्यन्तह, (१६) वोलइ, (१७) परिव्यलह, (१८) णिरिणासइ, (१६) षिबहर (२०) घवसेहइ, (२१) खबहरइ, श्रीर (२२) गच्छइ = वह गमन करता है श्रयवा वह गमन हरती है।

सस्क्रत भाषा में 'गमन करना, जाना' अर्थक 'हम्म' ऐमी एक श्रीर घातु है इसके आधार मे ^{प्राहुत}भाषा में भी 'जाना' अर्थ में 'हम्म' धातु रूप का प्रयोग देखा जाता **दे** — हम्मति = हम्मइ = वह बाता है अथवा वह गमन करती है।

विपरोक्त 'हम्म' धातु के पूर्व में कम से िंग, जो, जा, जोर प, उपमर्गी की सयोजना कर क इमी 'शता धर्य में' चार (घातु) रूर्ने का छोर मो निर्माण कर लिया जाता है, जो कि कम से इन प्रकार १ - (१) खिहम्म, (२) जीहम्म, (३) आहम्म, और (४) पहन्म। इनके उदाहरण इस प्रकार है -

[१] निहम्मित = णिहम्मइ = बह् जाती है अथवा वह गमन करता है। [1] निर्म्म णीहम्मइ वह निकलती है अथवा वह बाहर जाता है। [2] आहम्मित = आहम्मा वह खाता है अथवा वह आतान करता है। पहम्मित = पहम्मह = वह ते। गित से जाता है शिमा प्रदेशी सम्म स्वीती सम्म स्वीती सम्म तेने जाता है। ईस पकार से 'जाना अर्थे ह हम्म घातु के विभिन्न प्रदेशी सम्म तेना चाहिये॥ ४-१६२॥

ञाङा ञहिपच्चुञ्रः॥ ४-१६३ ॥

याटा सहितस्य गमेः यहिषच्या इत्यादेशोया भगति ॥ व्यहिष्युमा । स्व

अथ — 'आ' उपसर्ग सहित सरहत-शतु 'गम् = गच्छ' के स्थान पर आहत-भाषा में रिस्तरे स्थाहिपच्छुस (पातु) रूप की श्रादेश श्रादि होती है। वैकल्विक पत्त होते से 'श्रागच्छ' भी होता है। इसे आगच्छाते = आदिपच्छूअह अथवा आगच्छाह = वह श्राता है ॥ ४-१६०॥

समा ब्रिव्भिडः ॥ १-१६१ ॥

समायुक्तस्य गमेः अध्निड इत्यादेशो वा भवति ॥ अभ्भिडह । संगच्छ ॥

भर्य —'स' दपमर्ग सहित संकृत घातु 'गम = गण्ड' के स्थान २१ प्राष्ट्रत-भाषा में किस्त ' 'खिरमड' (धातु) रूप की खादेश प्राप्ति होती है। बैकिल्पिक पत्त होने से 'सगण्ड' भी होता है। बैमें' सगण्डाति = अध्मिद्ध श्रथमा संगण्डाइ = वह सगति करता है खर्यमा वह मिलती है ॥ १०-१६१

यभ्याडोम्मत्थः ॥ ४-१६५॥

श्रभ्याट् भ्यां युक्तस्य गमेः उम्भत्यः इत्यादेशो वा मवति ॥ उम्भत्यह । श्रम्भागम् श्रमिमुखमागच्छतीत्यर्थः ॥

अर्थ — 'खिम' उपमर्ग तथा 'खा' उपतर्ग सहित संस्कृत घाडु 'गम = गण्डू 'हे स्वाः' प्राकृत मापा में विकरन से उद्दूर्ण (धातु) रूप की खारेशा प्राप्ति होतो है। वैक्षत्विक पह हैने 'खरमागच्छ' भी होता है। जैसे -- अन्यागच्छाति = उन्तर्यम् अथवा शब्भागच्छाते = वह वात खाता है। ए-१६४।।

प्रत्याडा पत्नोट्टः ॥ ४-१६६ ॥

प्रस्वाट् स्पां युक्तस्य गमेः पत्नोष्ट इत्यादेशो वा मवति ॥ पत्नोद्वरः । पद्मागन्दरः ॥

शमेः पडिसा–परिसामौ ॥ ४–१६७ ॥

शमेरेतावादेशौ वा भवत: ॥ पिडसाइ । परिसामड । समइ ॥

अर्थ — 'शान्त होना, जुङ्य नहीं होना' छथक सस्मृत घातु 'श्राम् = शान्य' के स्थान पर प्राञ्चत-।शा में विकल्प से 'पिंडसा और पिरसाम' की ख्यादश प्राप्ति होती हैं। 'सम'मी होता हैं। तीनों घातु-रूप्रें उगहरण कम से इस प्रकार हैं — क्यान्यित = पांडिशांड, पारिसामङ खीर समङ = वह शान्त होता है । यन वह जुष नहीं होता है।। ४-१६७॥

रमे∙ संखुड्ड—खेड्डो₅भाव—किलिकिब—कोट्डम— मोट्टाय—णीसर—वेल्लाः ॥ ४−१६⊏ ॥

रमवेरेतेष्टादेशा वा भैशन्ति ॥ सखुङ्गड । खेड्गइ । उन्मावह । किलिकिञ्चह । कोट्डमइ । ोहावह । यीसरह । नेल्लड । रमंड ।

अर्थ - 'कीडा करना खेलना' अर्थक सस्कृत घातु 'रम्' के स्थान पर प्राइत मापा में विकल्प । याद बातु स्पों की आदेश प्राप्ति होती है। जो कि कम से इस प्रकार हैं — (१) सखुदू, (२) रोहू, (३) उन्माव, (४) किलिक्खि, (५) कोटदुम, (६) मोट्टाय, (७) ग्रीसर फ्रीर (८) वेल्ल । वैकल्पिक पछ अने से 'रम' मो होना हे। उक्त 'रोजना' आर्थक नव ही बातु रूपों के उदाहरण कम से इस प्रकार हें — ।वत=(१) संसुद्दर, (२) खोदुद्द (३) उडमाबह, (४) किलिक्खिह, (४) कोट्डमह, (६) मोट्टायइ, (७) ग्राप्त (८) रमह=वह रोजता है अथवा वह कीडा करता है। ४-१६८॥

ृ पूरेरग्घाडाग्घवोध्दुमाड् ग्रमाहिरेमाः ॥ ४–१६६ ॥

परितेषञ्चादेशा वा भवन्ति ॥ ध्यावाहर् । ध्यावनः । उद्गुमार् । घ्याप्तर् । घरिनर् । रा ॥

 41 4 प् 4 करता, पूरा करना अर्थक सः 6 पातु 'पूर्' के स्थान पर प्राकृत माया मे विकल्प 4 पात्र पातु रुमें की आदेश माति होतों हैं। 'जो कि कम से इस प्रकार हैं -(1) अन्याद, (2) अन्याद,

(३) चद्रमा, (४) अगुम और (४) अहिरेम। वैक्वियक पत्त होते से 'पूर' मो हाता है। उद्युद्ध घातुओं के उदाहरण कम से इस प्रकार हैं -पूरवात = (१) अग्याहरू, (२) अग्याहर, (३) अग्याहरू, (४) अंगुमइ, (५) अटिरेमइ श्रीर (६) पूरइ = यह पूर्ति करता है श्रयवा वह पूरा करता है।। १-१६,१

• त्वरस्तुवर-जञ्जहो ॥ ४-१७० ॥

त्वरतरेतावादेशौ भनतः ॥ तवरह । जसहह । तुन्तत्तो । जसहन्ता ॥

अर्थ--'त्यरा करना, शोध्रवा करना' धर्यक सरहत-घात 'त्वर' के स्थान पर प्राहत प्राप्त वुबर और जझह' ऐसे दो धावु रूपों को खादेश प्राप्ति होता है। इन दोनों धातु रूप ४ आहरत पर है इस प्रकार हैं —(त्वरपति खयवा) त्वरते = त्वरङ खयवा जगड़ = यह शाप्रठा करता 🕻 👯 हरू करता है। इसी घात का चर्तमान कुरन्त का चशहरण इम प्रकार है -त्यरन् नतुवस्तो, प्रशा नअहन्तो=शीघ्रता करता हथा, उतावल करता हथा ॥ ४-१७० ॥

त्यादिशत्रोस्त्रः ॥ ४-१७१ ॥

रवरतेस्त्यादी श्रविर च तुर इत्यादेशी भगति ॥ तुरइ । तुरन्ती ॥

अर्थ -- 'स्वरा फरना, शोधता करना' अर्थक संस्कृत धातु 'स्वर' के आंगे काल बावह हैं स 'ति = इ' श्रादि होने पर श्रयवा वर्तमान छुदन्त बोघक प्रस्यय 'शह = श्रत = न्त अगवा माल' श्रवश 'त्यर' का प्राप्टत रूपान्तर खादेश रूप से 'तूर' होता है । जैसे —त्वराति खबना त्वरतःमुख-स 🕬 करता है, वह शीवता करता है। *त्वरत्=तूरन्तो (खयवा तूरमाणो) जन*री करता हुना। यो त्^{रा} श्रान्य हवों की भी स्वयमेव साधना कर लेना चाहिये॥ ४-१७९ ॥

तुरो त्यादी ॥ ४-१७२ ॥

हनरो त्यादी तुर श्रादेशो भनति ॥ तुरिश्रो । तुरन्तो ॥

अर्थ —'शोमता करना' व्यर्थक संस्कृत घातु 'स्वर' के स्थान पर प्राकृत भेषा से 'हिन्द्' व्या काल चोवक प्रायय तथा इन्ति चादि बोचक अत्यय छागे रहते पर 'तुर आहरा की पाति रे^{ति है}ं र्जसे — त्वरित = तुरिशी = शोप्रवा किया हुचा । त्वरम्=तुरम्ती=शे प्रवा करता हुमा। ये बन्ध हरी का भी स्वयमेव कल्पना कर होना चाहिये ॥ ४-१७२ ॥

चरः खिर-भर-परभर-परचड-ग्विच्चल-ग्विट्टुआः ॥ ४-१७३ ॥

चीरेते पर्ड श्रादिशा भानित ॥ सिरइ। मरइ। पनमरइ। पर्चडड। णिचलइ।

इग्रह् ॥

अर्थ -- 'गिरना, गिर पडना, टवकना, महरना' व्यर्थक संस्कृत घातु 'त्तर्' के स्थान पर प्राकृत-वा में छह घातु ह्वों की आदेश प्रापि होती है। जा कि कव स इन प्रकार हें -(१) विर, (२) फर,) परमार, (४) व्हेंबेंड, (१) णिचवर्त श्रीर (६) खिट्टुअ। इतक उँदाहरण कर्म से इम प्रकार है -र्जि=(१) बिरइ, (२) झरइ (३) पञ्झरइ, (४) पच्चड३, (५) ाणिच्वछ३ श्रोर *(६) णिदुद्गइ* = वह र पड़ता है, वह टप इता है अथवा वह सहता है ॥ ४-१७३॥

उच्छल उत्थल्लः ॥ ४-१७४ ॥

उन्छल्तेरुरयञ्ज इत्यादेशो भनति ॥ उत्यञ्ज ॥

कर्थ —'बद्धलना, कूदना' ऋर्थक सस्क्रन बातु 'बन् + शल्=बच्द्रल्' के स्थान पर प्राक्रन भाषा में यत्न' पातु हा की खादेरा प्रापि होती है। जैस —उच्छलति-उत्थलुड्=वह बल्लता है खयवा वह ा है॥ ४-१७४॥

विगलेस्थिप-णिट्टुहो ॥ ४-१७५ ॥

विगलतेरेतावादेशी वा भनतः ॥ थिप्पड । खिद्डहइ । निगलइ ॥

अर्थ - 'गलजानो' अर्थक सम्क्रत-घातु 'वि } गल् के स्थान पर प्राप्तत मापा में विकल्प से ंव और णिट्टुर' मेने दो घातु रूपों की आदेश प्राप्ति होती है। पन्नान्तर में 'विगल' भी रोता है। ों धातु रूपों के उराहरण कम से इम प्रकार हैं *—विगलाति=(१) थिप्पइ, (२) णिटटुहइ, फ्रीर (३)* ^{ग हड़=वह सन जाता है, वह जार्ण शिर्ण हा जाता है ॥ ४-१७४ ॥}

ं देलि-बल्यो र्विसट्ट-बस्फौ ॥ ४–१७६ ॥

दत्ते वत्तेश्च पंथासत्त्य निसञ्च वस्फ इत्यादेशीना भवतः ॥ विग्रद्वहः । वस्फदः। पर्वे । । इ । यहाइ ॥

गय — 'फटना, ट्टना, टुन्डे टुक्डे होना' श्रथक सरमृत घातु 'त्ल' के स्थान पर प्राष्ट्रत मापा किस्त म 'विमह' पातु रूप की श्राईश ब्राप्ति होता है। वैकल्पिक पत्त होने से 'दन' मो होता है। ान पातु रुपा के उदाहरण क्रम से यों है — दलति = विसट्टड अथना दलड़ = वर फरता है, वह टूट भगना वह दुक्ड हु + इं होता है।

'लीटना, वापिस याना, श्रयवा मुहना टेढ़ा होना' यर्थक सस्टन पार्ड 'पन' क सान सार्क् मापा में विकल्प से 'वस्क' धातु रूप को आदश प्राप्ति होती हैं। वैकल्पिक पत होन में 'क्न के रूप है। दोनों धातु- रूपों के चढ़ा हरण कम से इम प्रकार है — एलति = एस्कड़ ध्रथा एम = भ लीटता है श्रयवा वह टेढा होता है। ४-१९५६॥

भ्रं शेः फिड-फिट्ट-फुट्ट-चुक्क-भुल्लाः ॥ ४--१७७ ॥ 🎺

श्र शोरेते पडादेणां वा मवन्ति ॥ फिडर् । फिट्टर्। फुटर् । फुट्टर । जुनर । एस पत्ते । ममह ।

अर्थ — 'फ्टना, फटना, टूटना ख्रयवा नष्ट होना' खर्यक सस्त्त पातु 'श्र रो के लाव हैं प्राक्तत भाषों में विकल्प से खह धातु रुपों की खादेश प्राप्ति होतो है। जो ि कम से इम् प्रधारें -(१) फिड, (६) फिट (३) फुट, (४) फुट, (४) फुटक, खौर (६) सुझ । वैविल्प्य पह होने स वकार्याः सस्कृत घातु रूप अशं का प्राप्तत रूपान्तर 'मसं' सो होता है। उक्त सातों प्रधार के वदारान बदा इस प्रकार है। अक्चरते (ख्रयवा अक्चरति) = [१] फिटुड, [१] फिटुड, [१] पुपड, [१] पुरार्द्र, [१] सुझ खीर [७] असइ = यह फुटना है, यह पटता है इटवा है ध्रयवा वह नर के होता है। ४-६७०॥

नशेर्णिरणास-णिवहानसेह-पहिसा-सेहावहरा: ॥ ४--१७७॥ 👝

नशोरंते पढादेशा रा भवन्ति ॥ खिरखामड । खियदह । श्रवमेहड । पिठिमा । हर्म श्रवहरह । पचे । नस्सह ॥

त्र्यावाहकाशोवालः ॥ ४--१७६ ॥

अवात् परम्य काणी वाम इत्यादेशी भवति ॥ श्रीवासई ॥

अर्थ — 'त्रव' उपमर्ग के साथ रही हुई सस्कृत घातु 'काश' के स्थान पर प्राकृत भाषा में 'त्रव

·कारा'का 'स्रोवास' रूपान्तर होता है। जैसे —अवकाशाति = ओवासइ=वह शोमा है स्रावा ह विरानित होता है ॥ ४-१८६ ।}

संदिशेरपाह: ।। ४-१८० ॥

संदिशतेरपाह इत्यादेशो वा भवति ॥ अपाहह । सदिसह ॥

अर्थ — सदेश देना खबर पहुँचाना' ऋर्थक सस्कृत बातु 'स + दिशु' के स्थान पर शाकृत भाषा विकल्प से 'अप्पाह धातुरूप की अपादेश प्रोप्ति होती है। वैकल्पिक पत्त होने से 'सदिस्' भी होता । जैसे —स*दिशति* = अप्पाहड़ श्रथवा स*दिसड*=वह सदेश देता है श्रथवा वह खबर पहुँचाठा है। 8-850 11

दशो निश्चच्छा पेच्छ। वयच्छात्र यज्भा-त्रज्ज-सञ्वत-देवस्त्रो-श्रवस्तात्रवस्तात अवल-पुर्लीञ्च-पुलञ्च-निञ्चाव ञ्चास-पासाः ।। ४-१८१ ॥

दशेरेते पञ्चदशादेशा भानित ॥ निम्रच्छइ । पेच्छइ । स्रायच्छइ । स्रवयज्भह । ^{लड}ा सन्तरह। देक्लह श्रीयरतह। श्रतकतह। श्रव्यक्लह। पुलोएह। पुलएह। अह । अन्त्रासइ । पासइ ॥ निज्ञाया इति तु निष्पायते स्वरादत्यन्ते भनिष्यति ॥

अर्थ —'देखनो' श्रर्थक सस्क्रत-घातु 'दृश्= पश्य के स्थान पर प्राकृतआपा मे पद्रह घातु हर्षो ो भादेश प्राप्ति होती ई। जाकि क्रम से इस प्रकार इ.—(१),(न अच्छ, (२) पेच्छ, (३) श्रावयच्छ, ^{१) भव्याम}, (१) वज्न, (६) सञ्चव, (७) देक्ख, (८) श्रीयक्च, (१) श्रवक्ख, (१०) श्रवस्थन्छ ११) पुनोए, (१२) पुलए, (१३) निख, (१४) खबब्रास, खौर (१४) पान ॥

शकुन धातु 'निब्का' की प्राप्ति तो सस्कृत बातु 'नि + ध्ये के द्यायार से होती हैं। उक्त रूप ^{मे प्राप्त प्राह्त घातु 'निक्सा' आकारान्त होने से स्वरान्त है छोर इनलिये सूत्र मख्या ४–२४० स} ^{१९में} काल बोधक प्रत्यवों की सयोजना करने के पूर्व विकल्प में 'ख्र' विकरण प्रत्यय की प्राप्ति होती है। 19 घातु का काल बीचक प्रत्यय सहित उदाहरण इस प्रकार है — निष्यायाति - निज्ञा भइ (अयवा निरमाइ)= यह देखता है अथवा वह निरिक्तण करता है।

'^{दश्}= परथ' के स्थान पर चादेश प्राप्त पन्द्रह घातु रूपों के उदाहरण कम से इम प्रकार हैं --^{१९}पति =(१) निभच्छइ, (२) पेच्छइ, (२) अवयच्छइ, (४) अवयज्झइ,(५) वडाइ, (६) सत्यवह, (त) हम्पह, (८) शोभक्सह, (१) अवक्सह, (१०) अवभक्सह, (११) पुनोपह (११) पुलपह, ^{११३}] निगह, (१४) अषमासह, श्रीर (१८) पासइ=वह देखता है ॥ ४-र⊏**।**॥

स्प्रंशः फासं-फंस-फरिस-छित्र-छिहालु खालिहाः॥ ४-१=२॥

स्प्रशतिरेते सप्त त्रादेशा भनन्त ॥ फायह । फयह । फरिसड । दिन्छ । कि श्रालु एइ। थालिहड ॥

अर्थ —'स्पर्श करना, छूना' व्यर्थक सस्कत-धातु 'स्परा' के स्थान पर पाकन-मापा है धातुत्रों की आदश प्राप्ति हांनी है। वें कम से इस प्रकार है —(१) फास, (२) कम, (३) कीम,(११ (४) खिह (६) श्रालु स श्रीर (७) श्रालिह। उक्त मार्जी एकार्य के चातुओं के उदाहरण अन में इन व है'—स्पृराति=(१) फासइ, (२) फसइ, (३) फरिसइ, (४) छियइ, (।) छिदुइ, (६) प्रादंगाः (७) आखिहड = वह छूता हे श्रथना वह सर्श,करता है ॥.४-१८२ h

प्रविशे रिछ: ॥ ४ -१⊏३ ॥

प्रविशे: रिस्र इत्यादेशो वा मरति ॥ रिश्रह । पविसह ॥

अथ - 'प्रवेश करना, पैठना, चुसना' अर्थ ह सन्द्रत घातु 'म + विरा' क स्थान पर ह मोपा में विकल्प से 'रिश्न' घातुं हर्प की श्रादेश प्राप्ति होती है। वैकल्पिक पर हान से पर भी होता है। जैसे —पविकृति ≐िरिभेड़ अर्थवा पॅतिसड़ वर प्रदेश करता है, वह पुनरा है र्थंदर जीवों हैं ॥ ४-१५३ ॥

प्रान्मृश्-मुंपोम्ह् सः ॥ ४-१५४ ॥

प्रात्वरयो मृश्वि मुख्णात्योम्हुम इत्यादशा मत्रति॥ वम्हुसः । प्रगृत प्रमुखाति वा ॥

अर्थ'--'म' त्रवनग महित 'हार्श करना अर्थ ह सस्टत वातु 'म + मुश' के त्यान वर हरा उपनर्गे सहित 'चौरता, चारी करता' अथक मन्द्रन बातु 'प्र+द्वप्' क न्यान पर याँ दाता बातु ही स्थान पर प्राकृत भाषा में केवल एक ही घातु-रूप 'पन्हुम' मा आहेरा प्राप्ति होना है। कि प्राष्ट्रत पातु 'पन्द्रुम' का प्रागागिह अर्थ मार्म के अनुवार कर लिया जाना चाहिय। उत्तरा प्रकार है —ममुज्ञाति=यम्दुसद=यह स्वरं करता है खपना वह छूना है । प्रमुरणानि =यम्बूनरू पारना है अवदा बद पोरा करता है। यों बतंगातुमार अथ हा समक्त मेना पादिव ॥ उन्हा

ं पिपे णिंबह-णिरिणास-णिरिणंडज-रोब-चड्डा ॥ ४-१८५॥

विपेरेते पञ्चादेशा मरान्ति वा ॥ विपद्वर । विरिणामर । विरिणनमा शंहर्य चड्डा पर्चे । पीमह ॥

अर्थ — 'पोसना, चूर्ग करना' अर्थक सरक्षत पातु 'पिप' के स्थान पर प्राकृत भाषा में विकल्प शंच भातु हवों की आदेश पानि होती है। जो िक कम से इस प्रकार है — (१) खिनह. (२) खिमा, (३) खिरिण का, (४) रोज और (५) चड्ड। वैकिट्स पन्न होने से 'पीस' भी होता है। इह पानुओं के उदाए एवं इम प्रकार है — 'विनादि = [१] जिनहड़, [२] जिरिण सइ, [३] 'रिण कह, [४] रोज चड़, [४] चड्ड और [६] पीसइ = वह पासता है अथवा वह चूण करता है। ४-१५५॥

भेषे भु ककः ॥ ४-१८६॥

भपे भुं क इत्यादेशो वा भनति ॥ भुक्द । भसइ ।

अर्थ---'भूँकना, कुत्ते का बोलना' खर्थक सस्कृत चातु 'भप' के स्थान पर प्राकृत मापा विकृत से 'मुक' चातु रूप की खादेश प्राप्ति होती है। वैकल्पिक पत्त होन से 'मस' भी होता है ने -- सपति = मुक्कड़ खथवा भसड़ = वह (कृत्ता) भूकता है।। ४-१८३॥

कृपेः कड्ढ–साम्रड्ढाञ्चाण च्छायञ्जाइच्छाः ॥ ४–१८७॥

रुपेरेते पडादेशा वा मनन्ति ॥ कडूइ । साम्रडूड । श्रञ्चड । श्रयाच्छइ । श्रयच्छड । ^{इन्}छड । पत्ते । क्रक्रिक्ट ।

अर्थ — ऐती करना, खबवा दींवता' त्रथक सस्क्ष्म थावु 'क्वय' के स्थान पर प्राकृत भाषा विस्ता से छह थातु ह्यों की खादेश प्राप्त होती है। तो कि क्ष्म से इन प्रकार है (१) एडू (२) यह (३) खह्व (४) खण्णण्य, (५) खादञ्य और (६) खाद्व । वैश्विक पत्त होने से 'किरम' होती है। उत्त एकार्थक सातों थातु में के उदाहरण कम से इन प्रकार है — एपैति = [१] म्टूड, विशादक होते हैं। अपन्य, [४] अपन्य हु, [६] आइक्य हैं। [७] प्रारंसक व्यह चेती हैं। अन्य हु, [६] अरुव हैं। इन स्थाप वह सेती करता है। ४-१०७॥

असावक्लोडः ॥ ४−१⊏⊏ ॥

श्रीत निषयस्य कृषेरवरहोड इत्यादेशो भगति ॥ श्रवस्तोडेड । श्रामि कोशात् कर्ष-

मर्थ — 'तलवार को म्यान में से खोचना' इस अर्थक संस्कृत यातु 'कृप' क स्थान पर प्राप्टत या में 'कक्लोड' यातु रूप की आदेश प्राप्ति होती हैं। नैसे — क्पीति = अक्सोडिड \approx वह तलवार क्यान में में) खींचता हैं॥ ४-१==॥

١,

्रहसे ग्रुड्स ॥ १--१६६ ॥

हसेगु इस इस्यादेगी वा भवति ॥ गुज्जह । इसह ।

अर्थ - 'हॅमना, हास्य करना' अर्थीक मस्कृत चातु 'हम्' के स्थान वर प्राकृत प्रशासात से 'गुच' घातु रूप की व्यादश प्राप्ति होती हैं। बैंकल्पिक पत्त होने स 'हस' मो हाता है। बैंध-हसति=गुजड, अथवा हसड = वह हैंसता ह अथवा यह हास्य करता है।। ४-१६६ ।।

स्र सेर्ह्स-डिम्भो ॥ ४-१६७ ॥

संसरेतावादेशी वा भनतः ॥ न्हसइ । परिन्हनइ सलित-वनगं । डिम्मरे । एंग

अर्थ —'खिसकना, मरकना, गिर पड़ना' श्रथक संस्कृत धातु 'ख्र म' इ स्थान पर प्रश्नि में 'ल्ह्स खीर डिम्म' ऐसे दो घातु रूपों का विकल्प से आदेश प्राप्ति होता है। बेंक्किक पर होने 'सस' मी होता है। तीनों के चदाहरण इम प्रकार है —श्वसते =(१ हहसङ, (२ हिम्मा कैपी ससइ = वह विसकता है, वह सरकता है श्रथमा वह गिर पहता है।

'परि' चयमर्ग के साथ 'स्न म्' के स्थान पर आदेश बाव्त 'वहम' धानु का कर पर्वाहरम' बाता है। इसका उदाहरण इस प्रकार है — साल्ज वसन परिलसत=सरिल वसण परिस्का पानी वाला (श्रयवा पानी में रहा हुआ) कपड़ा (लमकता है श्रयवा मरस्ता है ॥ ५- ६६० व

🕈 त्रसेर्डर बोडन वज्जाः ॥ ४–१६८ ॥

त्रसेरते त्रय धादेणा वा भगन्ति ॥ हरह | बें।जनह | वज्जह । तमह ।

कर्य — 'स्टरना, भव त्याता' अर्थक संस्कृत धातु 'त्रम् के स्थान पर प्राहत राषा में १९६० र 'टर, बोडन फ्रार बच' ऐसे तान घातु नवीं भी बाहेश प्राति होती है। बंबिहरू क्ष होते मांडी भी होता है। इक चारी घातु-हर्षे क इदाहरण इस प्रकार है -प्रम्यािः(र) सरहः (ह) वाम (२) बज्जह, और (४) तंसह=पह रुरता है अपना भय लाता है ॥ ४-१६८॥

न्यसोणिम-ग्रमी ॥ ४-१६६॥

न्यम्यतेरतावादेशी भगतः ॥ शिमइ । शुमद् ॥

शर्थे —'म्यापना करना' अर्थक मण्डन-बातु 'नि । अम् वे स्थान वर बादून भाग में सिन कोंद्र सुप्त' ऐसे था घातु रूपों की कादश वाति होती है। दाना क पश्हरण कम म इव प्रहार है -शिम्द तथा एमाइ = यह स्थापना करता है, यह स्थान दे थावना यह पाला है 10 है-11.5 %

पर्यसः पत्नोट्ट-पल्लट्ट-पल्हत्थाः ॥ ४-२०० ॥

पर्यस्यतेरेते त्रय श्रादेशा भवन्ति ॥ पत्नोष्ट्रः । पल्लह्डः । पल्हत्यः ॥

भ अर्थ — 'फेंकना, मार गिराना' अथवा 'पलटना विपरोत हाना' अर्थक सस्कृत घातु 'परि+ अत्-परेष के स्थान पर प्राप्टत भाषा में तीन बातु रूर्षा की आदेश प्राप्ति होती है। जो कि कम से इस प्रकार है — (१) पलाट. (२) पल्लट्ट, और (३) पल्हत्य। तीनों के बदाहरण यों है — पर्यस्याति = (१) प्लोट्ड, (१) पल्लइट, और (२) परहस्थइ = वह पलटता है अथवा वह विपरोत होता है ॥ ४ - २००॥

नि श्वसे र्भङ्घः ॥ ४-२०१ ॥ *

निःधसेर्फेह्व इत्यादेशो वा भवति ॥ ऋषड । नीससइ ।

अर्थ —''निश्वास लेना' अथवा 'नीसासा डालना' अर्थक सस्कृत घातु 'निर्+श्वस्' के स्थान पर प्राकृत भाषा में विकल्प से 'फल' घातु रूप की आदेश प्राप्ति होतो है। वैक्लिपक पत्त होने से 'नीसस' मो होता है। जैसे *—िन श्वासीति — झाखड़* अथवा *नीससड़*=बह निश्वास लेता है अथवा वह नेपासा डालता है।। ८-२०१।।

उल्लंसे रूस लोगुस्म-णिल्लप्त-पुलन्नात्र-गुन्नोल्लारोत्राः ॥ ४-२०२

उन्लेसेरवे पडा देशा वा भवन्ति ॥ ऊमलड । ऊनुम्मइ । खिल्लमड । पुलयायड । ^{पुनो}ल्लइ । हरम्त्वे तु गुञ्जुन्लड । यारोयड । उल्लसड ॥

अर्थ — 'वल्लांसत होना, खानित्त होना, सुरा हाना, तेज-युक्त होना' खर्षक सारत पातु 'वत + ^{तुम-कुनस्}' के स्थान पर,पाष्टत भाषा में विषक्ष से छह पातु रूपों की खादेरा प्राप्ति होती है। जो कि ^{कुम} से इस प्रकार हैं — (१) ऊपल, (२) ऊसुम्भ, (३) णिल्तस, (४) पुलखाख, (४) गुज्ञाल्य खीर (६) खारोख।

सूत-सटया १-६४ से 'गु जोल्ल' घातु ह्वय में रहे हुए दीर्घ स्वर 'श्रो' क स्थान पर श्रामे मयुक्त कि होने के कारण से 'च' की प्राप्ति विकल्प से हो जाती है, तरनुमार 'गु जोल्न' के स्थान पर 'गु जुन्न' रूप को श्रवस्थित भी विकल्प से 'पाई' जाती हैं। यों उपरोक्त श्रादेश प्राप्त छह घाउंशों के स्थान पर सात पातु हव समभे जाने चाहिये। वैकल्पिक पत्त होन स 'उल्जर्स भी होता है। श्राठों ही 'पें हवों क उदाहरण प्रम से इम प्रकार हें —उल्लमित=(१) उम्लह, (२) अपुम्मइ, (३) जिल्लमइ, (१) प्रमाश्य १(४) गु जोल्लई, (६) गु जुल्लई, (७) श्रामेश्व श्रीर (८) उल्लमई = यह उल्लमित होता (क्या मिद्द होता है, यह तेन-युक्त होता है। ४-२०२ ॥

- भासेभिंसः ॥ ४-२०३॥

भासेर्भिस इत्यादेशो ना भनति ॥ भिमंड । भासइ ॥

अर्थ —'प्रकाशमान होता, चमकना' खाँर्थक सम्कृत धातु 'मास' के ग्यान पर प्रांहर मण्याने 'मिस' घात रूप की प्राप्ति होंती हैं। बैंशल्यक पत्त होने में पतान्तर में सहरूत धात 'भाम' राष्ट्रास रूपान्तर 'मस' भी होता है। जैसे -भासते =भिसड प्रथवों भासड=बह प्रकाशमान हाता है प्रथा चमकता है ॥ ४-२०३॥

यसेर्घिसः॥ ४-२०१॥

ग्रसेचिंस इत्यादेशो वा भवति ॥ धिसइ । गसड ॥

अर्थ--'प्रसना, निगतना, मन्नर्ण करना' अर्थक संस्कृत वातु 'बस' के स्थान पर प्राकृत मात्र में विकल्प से 'धिस' धातु रूप की कादेश प्रीप्ति होती है। वैकल्पिक पत्त होने से 'गत भी होता है। वैस ग्रेसाति = विसइ थायवां गसइ=वह मसता है, वह निगलता है अथवा वह भराण करता है॥ ४-२०४॥

अवादगाहेर्वाहः ॥ ४-२०५॥

श्चनोत परस्य गाँहै वहि इत्यादेशों वा भवति । श्रोनाहर । श्रोगाहर्र ॥

अर्थ -- 'र्खन' चपसर्ग के साथ में रहाँ हुई सरकत-वातुं 'गाह' के स्थान पर प्राकृत माना विकरप से 'बाइ' धातु रूप की कादेश माति होती हैं। वैकल्पिक पंत्रे होन से 'गाह भी हीता है।

चर्यरोकि सस्टल उपर्सर्ग 'अव' का प्रोक्टल केपान्तर दोनों 'घात किये में 'ब्रो' हो नाता है। क ध्यान में रखां जाना चीहिये। टानों धार्ते रूपी के उगहरता कम से हाँत प्रकारे हैं - अवगाहवीति= ओवाहड़ खबँषा ओगोहड़=वह सम्यक श्रकार से ग्रहण करता है, वह खन्छी तरह से हर्याा4 करत है ॥ ४-२०४॥

" आह्हेश्रंड-वंलंगी॥ ४-२०६॥

श्रारुदेरेताबादेशी वा भवतः ॥ चढड । बलग्गइ । श्रारुद्ध ॥

अर्थ — क्यारोहत करना,चडना' अर्थक संस्तृत वातु 'आ + ठह' के स्थान पर प्राहर्न-माण में विकल्य से 'यह और बलेग्ग' एम दा चार्तु हवों को आदेश आम होती है। वैकल्पिक वर्ष होने स पनान्तर में सरकत-पातु 'आहर' का पाइन दवान्तर 'आहर' मी होता है। बैमे - आरोहिनिटी। चढ़ा, (२) चलम्मह और (२) आठहंड = वह खारीहर्ण करता है खेया मह चदता है ॥ ४-२०६।

' मुहे गुम्म-ग्रम्महो ॥ ४-२०७ ॥

मुहेरेतावादेशी वा भवतः ॥ गुम्मड । गुम्मडइ । मुन्भड ॥

अर्थ — 'मुंग्य होना श्रथ रा मोहित होना' श्रथं र सस्कृत बातु 'युह्' के स्थान पर प्राकृत भाषा र विस्तृत में 'चड श्रोर गुस्मड' ऐसे दो घातु रूपों की श्रादेश प्राप्ति होतो है। वैकल्पिक पत्त होने 'पुरुक्त' मी होता हैं। तोनों धातु रूपों के उदाहरणें इस प्रकार हैं — मुहाँदि= (१) गुस्में इ. (२) नहहें, श्रीर (३) गुस्में इच्च होता है श्रीर (३) गुस्में होता है श्रीर (३) गुस

दहेरहिऊलालु खी ॥ ४-२०= ॥

दहेरेतामदेशी वा भवतः ॥ ऋहिऊलङ । ऋ खिं खंड । उहह ॥

अर्थ — 'जलाना, दहन करना' अर्थक सास्त्रत थातु 'दह' के स्थान पर प्रास्त्रत भाषा मे विकल्प अहिउल' और आलु ल' ऐमे दो धातु स्त्रों की आदेश प्राप्ति होती है। वैकल्पिक पत्त होने से हैं 'में होता है। उक्त तीनों धातु स्त्रों के उदीहरणं केंमें से इसे प्रेकीर हैं — हेहाते-(१) अहिजल्ड / आहं लड़, और (३) उहाई = वह जलाता है अर्थवा वह दहन करता है। ४-२० ॥

ै यहो वल--गेगह--हर--पग--निरुवारार्हिपच्चुत्रा: ॥ ४--२०८ ॥

गरेरेंते पढादेशी वा भवन्ति ॥ वलई । गे॰हरूँ । हरक । पगर । निरुवारङ । व्यहिषच्छु ग्रह ।

थर्थ — 'महण करना, लेना' अर्थक सस्कृत थातु 'मह' के स्थान पर प्राकृत भाषा में छह घातु में भाइरा प्राप्ति होती हैं, जो कि कम से इस प्रकार हैं — (१) वल, (२) गेएह, (३) हर, (४) 1 (१) निरुवार और (६) ऑहिंपर्चुं छ। इनके उदांहरणें यों हैं — एहणानि = (१) चरुङ, (२) वह, (३) प्राप्त हैं प्रथाना वर वह, (४) प्राप्त, (५) निरुवारङ, और (६) अहिंपच्चुगड़ = वह प्रह्म करता है प्रथाना वर वह ॥ ४-२०६॥

• क्त्वा-तुम्-तब्येषु-घेत् ॥ ४-२१० ॥

प्रदः करना—तुम्—तब्येषु चेत् इत्यादेशो वा भनति॥ करना। घेन्षा । घेनुष्याणः। भैन मनति। गेषिद्द्यः । तुम् । चेतु । तब्यः। घेनव्यः।।

मर्थ —दो कियां की के पूर्विश्वेर सबध को बताने वांते 'करके' अर्थ वाले मर्बधार्य रूप्त क त्राताने पर, तथा 'के लिये' अर्थ जाले हें त्वर्थ कुड्न्ड के प्रयय लगाने पर और 'वाहिये' अर्थ वाले ***

'तब्य' खादि प्रत्यय लगाने पर सस्कृत घातु 'प्रह्' क स्थान पर प्राकृत माया में 'घेन्' धातु हा स खादेश प्राप्ति होनी हैं। सस्कृत प्रत्यय 'कस्वा' वाल सवधार्य कृतन्त का स्नाहरण यों है —गृहाता= चित्तृण खीर चित्तुआण खादि=प्रहण करके। कमी कमी 'प्रह्' घातु के स्थान पर उक्त सवगार्थ क्षन् के प्रत्यय लगने पर 'घेत्' घातु रूप की खादश श्राप्ति नहीं भी होती हैं। जैसे —गृहीता=भीवहर= प्रहण करके।

हेरवर्ष छद्गत के प्रत्यय 'तुम्' सम्बन्धी उदाहरण 'मह = घेत्' का इस प्रकार है।-महित्र चेजु-महिल करने के लिये। 'वाहिय' अर्थक 'तक्य' प्रत्यय का उदाहरण वों है -महित्रव्यन्येत पश्चि करना चाहिये खन्या महिल करने के योग्य है। यों 'मह' के स्थान पर प्राकृत भाषा स उक्त शर्में में बाहर प्राप्त 'चेत्' घातु रूप की स्थिति को जानना चाहिये। ४-११०॥

ै बचो बोत्॥ ४–२११'॥

वक्ते वींत् इत्यादेशी भगति क्ता- येषु ॥ वीच्ण । वीचु । वीचन्त्रं ॥

अर्थ — 'करके' धर्ष वाले सम्बन्धार्थ कृदन्त के प्रश्वय कागते पर तथा 'क लिये धर्ष वाल हैकां कृदन्त के प्रश्वय लगते पर खोर 'चाहिये' खर्थ वाले 'तन्य' प्रश्वय लगते पर सरहत घाडु 'वद् 'क स्वात के प्राफ्त के प्राप्त के प्राप्त

- स्द-भुज-मुचां तोन्त्यस्य ॥ ४-२४२ ॥

एपामन्त्यस्य क्त्वा तुम्-तब्येषु तो मत्रति ॥ रोजूण । रोजु । रोजव्य ॥ मोजूण मोजु । मोजव्य ॥ मोजूण । मोजु । मोजव्य ॥

अर्थ —संस्कृत बातु 'रुद् = रोना, सुन् = खाना और ग्रुच = छोड़ना' के शाहन स्वान्तर सबबार्थ एदन्त, हेन्वथ छुदन्त और 'चाहिये' अर्थक 'तन्त्र' प्रस्वय लगान पर घातुओं ने अत में से हुए 'द' न्वजनाचर के स्थान पर 'त' व्यज्जनाचर की प्राप्ति होती है। जैसे — हर्द = हन, सुन् = श्रुने सुन सुन् = श्रुने सुन् = श्रुने सुन् = श्रुने सुन् = श्रुने सुन् =

हा नाती है। या प्राफ़न हवान्तर में 'रुट्' का रोत्' सुब का मोत् श्रीर सुब का मात्' हो जाता है। इनके स्थाहरण कम से इप प्रकार है -(१) सहित्य = रोत्तम = रो करम, बदन करक. (२) रोहितम = गत् = रोत के ।लय, रुश्त करने के लिये और (३) स्राहितव्यम् = रोत्त-य=रोना चाहिये ग्रथमा राने क्याय है। (४) भूमच =भोत्तम = म्वा करक अथवा भावन करक, [4] भीमनुम् = भोत्त = खान के लिय श्रयवा मोनन करने के लिय और (ह) भीक्तव्यम् = भोत्तव्य=पाना चाहिय श्रयवा साना हे योग्य है। (७) मुक्खा -मीत्त्ग = छोड करहे त्याग करके, (८) मोक्तुम्= मोतु = छाडने के लिये क्षमा त्यागं करने के लिये श्रौर (९) मीक्त-यम् = मीक्तव्य = छोडना चाहिये श्रयता छाडने के याग्य है ॥ ४--१२ ॥

~ इशस्तेन इः॥ ४-२१३ ॥

दशोन्त्यभ्य तकारेश मह ्द्विसक्तप्ठकारी भवति ॥ दहुण । दहु । दहुच्य ॥

अर्थ - मबधार्थ कुर्नत, है (वर्थ बुडन्त श्रीर 'चाहिय' अयक 'तन्य' प्रत्ययों की मयाजना हाने पर साहन धातु दशुं के शाकृत रूपान्तर में 'त' सहित अन्त्यव्यञ्जन के स्थान पर द्विरा 'हु की शांप्र होता है। जैस —हण्ट्या = इट्ट्ण = देख काक, हण्टुम् = इट्टु = दखने के लिये और हप्ट्यम् = इट्ट्य =दलना चाहिय श्रयवा देखने के योग्य ॥ ४--१३ ॥

. आ कृगो भृत-भविष्यतोश्च ॥ ४-२१४॥

रुगोन्त्यस्य या इत्यादेशो भाति ॥ भृत-भिष्यत् कालयोश्र कारात् वत्रा-तुम्--^{त वेषु च}। क्राहीस्र । श्रकार्षीत । स्रकरोत् । चक्रार वा ॥ काहिड । करिष्यति । कर्ता ना ॥ क्षा। काउण । तुम् , काउ ॥ तब्य । कायव्य ॥

अर्थ - सब्धार्थ कुद्दन्त, हेरवर्थ कृदन्त और 'चाहिये' खर्यक तब्य'प्रत्यय लगने पर तथा मृत कालीन तथा मिनिया कालीन प्रत्यय लगने पर मस्त्रत घातु 'कृग'='कृ के श्रवस्यस्वर 'ऋ से धान पर 'आ' स्वर की प्राप्ति हाता है। उस्त रोति से प्राप्तन भाषा में ह्यान्तरित् का' धानु में पाँची हिवापति स्वां के उदाहरण कम से इम प्रकार ह -[?] कृत्वा = काऊण = करके, [?] वर्त्तर= भड=क(त के लिये, प्रतंदय = कायदर = करना चाहिय प्रथवा करन व योग्य, अरापीत्-(अरशेत भवश परार)=वाहीश्र=अमने किया, कारिष्यात (श्रथवा वर्ता)= मार्टर=वह वरेगा (श्रथवा रें। इनने वाला है)। यों 'करने अर्थक प्राष्ट्रत-बातु 'का' का स्वरू। जानना पादिन ॥ ४-२१४ ॥

🦜 गमिप्यमासां छः ॥ ४–२१५ ॥

एपामन्त्यस्य छो भवति ॥ गच्छइ । इच्छइ । जच्छइ । ग्रच्छइ ॥

अर्थ —प्राप्टत भाषा में सरहत घातु 'गम् , इष् , यम् श्रीर श्राम्' में स्थित बल्य थव्य रहे स्थान पर छ'का प्राप्ति होती है। यों 'गम्का गन्छ, इप का इन्छ, यप् का पच्छ श्रीर'आ ।। ध खन्छ' हो जाता हैं। इनके उदाहरण यों हैं —[१] मच्छति = मच्छड़=बह जाता है, [१] इच्छति = इ च्छड़ = वह इब्द्रा करता है, यह चाहना करता है, [३] यच्छित = जच्छड़ = यह विशाप काल ६ थह ठहरता है श्रथना वह देता है, *आस्ते = अच्छड़=*नह उर्पास्यत हाता है श्रथना वह बैठना है। 118-588 11

छिदि-भिदो न्दः॥ ४-२१६ ॥ 🛎

श्रनयोरन्त्यम्य नकाराकान्तो दकारो भवति ॥ छिन्दइ । भित्दइ ॥

अर्थ:-सम्प्रत धातु 'खिद्' और 'भिद्' के प्राकृत रूपान्तर में अन्त्य 'ड' के स्थान पर हन्त 'नकार' पृत्रक 'द' श्रथोत 'न्द' की प्राप्ति हाती है । जैस'—/छ गत्ति=छिन्द्र = वह देदता है, भिनाि-भिन्। इ = वह भेरता है अथवा वह काटता है।। ४-११६ ।

ᢏ युध–युध–गृध–क्रुध–सिध--मुहां उक्त. ॥ १--२१७ ॥

एपामन्त्यस्य द्विहक्तो भो भगति ॥ जुङ्भह् । बुङ्मह । गिङ्भह । हुङ्मह् । सिङ्मह मुद्रभाउ |

अर्थ —सस्कृत घातु 'युष् , वुष् ' गृथ , कृष , निध स्रोर मुह ' क द्यन्त्य ब्यव्झन क स्थान प प्राक्त भाषा में 'उमा' व्यञ्जन की प्राप्ति हो जातो है। इन घातुओं में श्रन्य वशा सबया पश्वितत पृ^{र्जी} प्रथम पाद तथा द्विताय पाद में वर्शित समिषान क अनुपार स्वयम इ. समफ सना चाहिय, हरहुना युद्ध करने व्यर्थक सरकृत थातु 'युच्' का जुक्क' हो जाता हे समकृत' व्यर्थक संस्कृत बातु 'बुच्' व 'युक्क' यन जाता है। 'प्रामस्त होने' श्रयंक संस्कृत धातु 'गृय के स्थान पर गिक्क' की प्राप्त हो ना है। 'काप करने' अथरु रातु 'कृष्' 'कु फ करूप में परिप्रिति हाता है। 'तिद्ध होना नफल हात प्रार्थक सन्द्रुत पातु सिघ' सिक्क में बद्ज बाता है। यों 'मोहित होना' श्रथक बातु 'मुह' का मुन्न बन जाता है। इनके किया पदीय चदाहरण इस प्रकार-ई —(१) सुध्यते ≕जुज्झाइ≍बह युद्ध क्राता । (२) उध्यत-युज्झड=व६ समसता है. (३) ग्रुप्यति=गिज्झर=वह थामक होता है (४) कुध्यति=कु यह रोध करता है, (4) सिध्यति = मिज्झड़ = वह सिंढ होता है खया। यह मक्ल हाता है और " महत्रति=मुज्झह = वह मोहित होता है ॥ ४-२१७॥

र हथो नध-मभी च ॥ ४-२१=॥

, हथोत्त्यस्य न्य म्म इत्येती चक्रारात् कातश्च भवति ॥ रुन्यह । रुम्भइ (रुज्याउ)।

अर्थ'—'रोकना' व्यर्थक सस्कृत घातु 'रुघ के व्यन्त्य व्यञ्जन 'घ के स्थान पर प्राकृत भाषा में की, व्यवा 'रम' की प्राप्ति को जाती है। मूल सूत्र में 'चकार' विया हुआ है, तरसुमार 'घ्' के स्थान का की प्राप्ति भी सूत्र मरया १-२१७ से हो जाती है, वों 'रुघ' के प्राकृत में 'रुग्न, रुग्म क्योर 'तान कप पाये जाते हैं। इनका उदाहरण इस प्रकार हें —रुणि हि = [१] रुम्थङ [२] रुम्भङ, उन्हरू = यह रोकता है। ४-२१८॥

• सद-पतो र्डः ॥ ४-२१६ ॥

थनयोरन्स्यस्य हो भन्नति ॥ सहइ । पहड् ॥

वर्ष —'गल जानो खयवा सूख जाना, शक्तिहीन हो जाना' अर्थक सस्ट्रन धातु 'सद्' स्पीर ना, भष्ट होना' खर्थक सस्कृत धातु 'पत् में स्थित, अन्त्य व्यव्जन 'द् श्वीर त' क स्थान पर प्राक्रव-में 'ह' व्यव्जन की प्राप्ति हो जाती है। जैसे —सीड़ित = सडड़=बह गल जाता है, वह सूख जाता यता वह शक्तिन हो जाता है। पतिनि-पडड़=बह गिरता है अथवा वहे अष्ट होता है।। ४-२१६॥

क्यथ-वर्धा हः ॥ ४-२२० ॥

यनपोरन्त्यस्य हो भवति ॥ कडड । वड्डूड पत्रय-कत्त्वयत्तो ॥ परियडूड लायएर्ण ॥ ^{बनाद्} वृधेः कृत गुरूस्य वर्षेश्चाविशेषेण ग्रहणम् ॥

भर्यं — 'वनाथ करना, उवालता, तवाना, गरम करना' अर्थं मुस्छन घातु 'क्यथ' के अन्य दे के स्थान पर बाछत मापा में 'ढ' अलर को खादेश प्राप्ति होती है। इसी प्रकार म 'वदना, उन्नति ने' अर्थंक मस्त घातु 'वृष्-प्रव' के अर्थ्य अल्प 'ध' के स्थान पर भी प्राफ्त भाषा में 'ढ' अल्प सोरी प्राप्ति होती है। प्राष्ट्रत भाषा में स्थानतिरत 'कढ और वहु' की अन्य साधिनकाल स्वयमेव मिना चीरिय। क्यान्तिरत धातुआ के उदाहरण इस प्रकार हें — न्यस्यते = (अथ्या क्ययोति) नडड वैया करना है अथ्या पर्याति। है। अर्थं प्रवयन्त्रत स्वव्या प्रवास करना है। अर्थं प्रवयन्त्रत स्वव्या क्यान क

परन -- मूल सूत्र में 'क्वथ-वर्घ' सेव दो शब्दों की स्थिति होते हुए भी 'वर्घा' जैना बहुब बनात्मक ^{यारा, व}रूप क्यों दिया गया है ? उत्तर — संख्त घातु 'वृत्व में स्थित ऋ' का हियापतीय ह्व म मुखे विभार शहर मूँचन 'वर्ब' रूप म स्वान्तिरत हो जाता है और ऐसा होने से उक्त दा घातुओं के श्रुतिरस्त इस तीनाए भी भी प्राप्ति हो जाती है, यो सामान्य रूप से तीनों घातुओं भी स्थान में रक्ष कर हो मूलसून के इस प्राप्त में प्राप्ति है। ऐसा स्पायकरण वृत्ति में मा किया प्रयाग विश्वा गया है, नहीं बहुनचन प्रस्पा का तार्थ्य है। ऐसा स्पायकरण वृत्ति में मा किया है। ४-२२०॥

* वेष्टः ॥ ४-२२१ ॥

ोष्ट वेष्टने उत्यम्य घातोः क ग ट ह इत्यादिना (२-७७) प लोपे न्त्यस्य हा मारि वेहड । वहिज्जद ॥

अर्थ — 'लपेटना' अर्थक सम्झत घातु 'बेप्ट्' म स्थित हनन्त 'पकार' ग्याबन का साम' २-७७ से लोप हो जाने के प्रधात रोप रहे हुए घातु हप 'बेट् के 'टकार' व्याबन के स्थान पक्ष भाषा में 'उकार' व्याबन का प्राप्ति हो जाती हैं। चगहरण इस मकार हैं — वेप्टेत = वेदड = वहता हैं अथवा वह घेरता हैं। दूमरा उदाहरण यों हैं -वेप्टाबते = वेदिकार = उनसे लेरेटा जाता है। ? १९

s समोहाः॥ –२२२॥

स पूर्वस्य वेष्टतेरन्त्यस्य द्विरक्तो लो भनति ॥ सवैद्वह ॥

अर्थ — 'स' उपसर्ग साथ म होन पर बैट घातु में 'पकार' को लोप हो जाने क पराठ री हुए श्रान्य वर्षा 'टकार' क स्थान पर द्विट्य रुप से 'क्ल' को मानि प्राक्षन मापा में आदश रुप सा ह । ज़ेंसे — सबेटले = सबेल्लड़ = वह (श्राच्छी तरह से) लपेटता है ॥ ४-२२२ ॥

बोदः॥ ४-२२३॥

उदः परस्य वेण्टतेरन्त्यस्य ज्ञा वा भवति ॥ उन्त्रेज्ञः । उन्त्रेदः ॥

अर्थ — 'उत्त' वपसर्ग साथ में शोने पर बेष्ट धातु में स्थित 'पकार' का लाव हो चाने ह वर शेप रहे हुँग श्वनस्य वर्ण 'दकार' के स्थान पर विकत्य से द्वित रूप से 'हल' दी प्राप्ति प्राण्व मार्थ श्रादेश रूप से होती हैं। जैसे — उद्देण्टतें = उद्देश्डड़ श्राथवा उद्देश्डड़ = बह यन्धनमुक्त करता है, प्र वह प्रथक करता है। ४-२२३॥

्र स्विद्धां इज. ॥ ४-२२४ ॥

अर्थ —'पमीना होना' अर्थक सस्कृत घातु 'स्विद्' तथा 'सपन्न होना, गिद्ध होना, भिलना' कै सस्कृत घातु 'सपेद्द' और 'स्पेद्द करना, श्रक्षमोम करना' अर्थक सस्कृत घातु 'सिद्द' इत्यादि ऐमी तुर्बों के अन्त्य व्यव्ज्ञन 'द्द' के स्थान पर प्राकृत भाषा में दिस्व रूप से 'उज' व्यव्ज्ञन की आदेश कि होती है। जैसे —सर्वोद्ध्य=स्वेद्ध्या च स्वयव्यः—सिक्चिर्यण्=सभी आगो मे पसीने वाली । सप्यवे=सपज्जइ = वह मपन्न होता है अथवा वह मिलता है। स्विद्याति = स्विज्ञइ = वह स्पेद सा है अथवा वह अपका वह अफसोस करता है।

मूल यूत्र में 'स्विद्' ऐसे बहुत्रचनान्त पद के प्रयोग करने का कारण यही है कि इस प्रकार की व 'व' वाला घातुएँ प्राकृत भाषा में अने कहें, जो कि 'दकारान्त' संस्कृत घातुओं से सविधानानुसार प हुई हैं॥ ४-२२४॥ •

' त्र<u>ज</u>ु–नृ<u>त</u>–मदां च्च ॥१–२२५॥

एपामन्तगस्य द्विरुक्तश्रो भवति ॥ वचा । नच्चड । मच्चड ॥

गर्थ — 'जाना, गमन करना' अर्थक सम्क्रत घातु 'व्रज' 'नाचना' अर्थक सम्क्रत घातु 'वृत' और विकाश अर्थक सम्क्रत घातु मुट्' के अन्त्य हतन्त व्यव्जन के स्थाने पर प्राक्षत-मापा में द्वित्व रुप' से के आदेश प्राप्ति होती है। जैस — चजाति = चच्चड़ = यह जाताहै, वह गमन करता है। चृत्याति = चिक्क = यह नाचता है। माद्याति = मच्चड़ = यह गर्य करता है, अथवा यह यकता है वह प्रमाद का है। ४- २४॥

स्द-नमो र्वः ॥ ४-२२६ ॥

श्रनयोरन्त्यस्य नो भनति ॥ रुनड । रोवइ । नवड ॥

🕶 उहिजः ॥ ४–२२७॥

उद्विजतेरन्त्यस्य मी भवति ॥ उन्विवद् । उन्वेवी ॥

क्षर्य — 'उद्वेग करना, बिन्न होना' क्रयंक सस्कृत घातुं 'उद् + विज' = उद्विन्' हे क्षन्यका नास्तर 'ज' के स्थान पर प्राकृत भाषा में 'व' व्यव्जननास्तर को बादेश प्राप्ति होतो है। वैस-अहिं (खथवा जिद्वजिते) = उद्यिषक = यह उद्देग करता है, यह बिन्न होता है। उद्देग = उद्येक = गोक र ।। ४-२२७।।

॰ खाद-धात्रो तु क् ॥ ४-२२८॥

श्रनयोरन्त्यस्य लुग् भवति ॥ खाड । साझइ । खाहिइ । साउ । घाइ , घाहि । घ बहुलाधिकारात् वतमाना भविष्यत्तिधि-त्रादि-एकत्रचन एत भति ॥ तेनेह न भर्ति सादन्ति । धातन्ति ॥ कस्चित्र भति । धातह सुरस्रो ॥

अर्थ —'मोजन करना, खाना' खर्यक संस्कृत घातु 'काद्' के खन्त्य हतन्त व्यक्षन 'दं' का 'दीइना' खर्यक संस्कृत घातु 'घाव' के खन्त्य हतन्त स्थळनन 'व' का प्राकृत मांगा में लोप होहरने 'का' खोर 'घा' ऐसे घातु रूप की ही प्राप्ति होती है।

सूत्र-सख्या ४-२४० से चवरोक्त रोति से प्राप्त घातु 'खा' ख्रीर 'घा' खाहरा न हो जो इनमें काल मोघक प्रत्यय लगने के पहिले विकरण रूप से 'ख्र' शरयय की वैकल्पिक रूप से प्राप्ति होता चदाहरण यों हैं —(१) खादाति=खाइ ध्ययवा खाजह=बह खाता है।(२) खादिण्यति =खादि खावेगा।(२) खादनु =खाठ = घह खावे। (४) धापति =धाइ ख्रीर घाअइ = घह दोइता (४) धापिष्यति =धाटिइ = बह घोडेगा। (१) धापतु = घाठ = वह दोडे।

'बहुलम्' स्र के अधिकार-सामर्घ्यं से 'लाद' का 'ला' खौर 'वाद' का 'लां बीरा निक्रित का 'लां को स्वित्र स्वित्र स्वित्र का स्वादे के एकवचन में ही होता है। इस कारण से बहुवनन के खौर 'था' ऐसा धातु रूप नहीं होकर 'लाद' तथा 'वाद' ऐसा धातु रूप ही होगा। जैमे —वादी खादिन = वे खाते हैं और धावनित = धावनित = वे दीहते हैं।

कहीं कहीं पर सरहत घातु 'धाव' के स्थान पर 'धा' रूप को प्रास्ति एक धवन में नहीं 'धाव' रूप को प्रास्ति भी देखी जाती है। जैने — नावति पुरत = धावड पुरती = बद श्रांगे दौड़त ।। ४-२२०॥

🔪 सुजोरः॥ ४–२२६॥

सुजो घातोरन्त्यस्य रो भगति ॥ निमिरह । गोतिरह । गोतिरामि ॥

अर्थ —सरकृत-धातु 'सृज' में रियत श्रन्त्य हलन्त व्यव्जन 'ज' के स्थान पर प्राकृत मापा में 'र' जनावर की आदेश प्राप्ति होती है। जैसे'-[१] निष्ट्रजित =िनिसिरइ = वह बाहिर निकालता है ववा वह त्याग करता हैं। [२] बयुत्*षृज्ञाति =चोस्तिरङ्* = वह परित्याग करता है ऋयवा वह छोड़ता ।[३] ब्युत्त्रज्ञामि = कोसिरामि = मैं परित्याग करता हूँ श्रथवा मैं छोडता हूँ ॥ ४-२२६॥

∕िश्कादीनां द्वित्वम् ॥ ४–२३० ॥

शकादीनामन्त्यस्य द्वित्व भनति ॥ शक् । सक्वड ॥ जिम् । जिम्मइ ॥ लग । लग्गइ ॥ ्। मग्गइ ॥ कुष् । कुष्गइ ॥ नश् । नस्तइ ॥ अट् । परिअद्वइ ॥ लुट् । पलोट्ड ॥ तुट् । 🛭 ॥ नट् । नट्ट ॥ सिव । सिव्यह ॥ इत्यादि ॥

र्थ —सस्तृत भाषा में उपलब्ध 'शक्' छादि कुछ एक घातुर्खी के खन्त्य व्यव्जन के स्थान ष्पाइत मापा में उसी व्यवज्ञन को द्वित्व रूप की प्राप्ति होती है। जैसे —[१] शक्नोति=सक्कइ= ह ममर्थ होता है। [२] जेमाति (अथवा जेमते)=जिम्मइ=वह खाता है अथवा वह मन्त्रण करता है। ैं] लगति=लग्गइ = प्रयोग होता है, मिलाप होता है। [४] मगति = मग्गइ = वह गमन करता है, ह बलता है। [4] कुप्यति = कुप्पड़ = मह क्रोध करता है। [6] नश्यति = नस्सड = वह नष्ट होता ^{। [७] परिअटति = परिअट्टइ = वह परिश्रमण करतो है, वह चारों स्रोर घूमता है। [८]} ी पद्धात-पद्धाहरू = यह लोटता है। । ९] तुर्टात-नुहरू = यह फाएता है अथवा वह दुःख देता है। ि] नटति=नट्टइ=प्रह नृत्य करता है वह नाचता है । सीव्यति=तिव्यइ=वह सीता है, वह सीवरा ^{रता है}। इत्यादि रूप से बन्य उरलब्य प्राक्रत-रातुकाका स्त्ररूप मी इसी प्रकार से 'द्वित्व' रूप में ^{|मम्} सेना चाहिये ॥ ४-२३० ॥

* स्फुटि-चलेः ॥ ४-२३१ ॥

थनपोरन्तपस्य द्वित्य वा भवति ॥ फुट्टर् । फुडर । चल्लर् । चल्लर् ॥

अर्थ — 'विक्रसित होना, खिजना अथवा टूट गफुटना' अर्थक महत्त घातु 'स्फुट् के अनस्य ^{रद्भार} कहान पर ग्रीर 'चनना, गमन करना' श्रथक संख्वक यातु चल के श्रन्त्य व्यव्जन ^{बेहार' क} स्थान पर प्राकृत भाषा में विक्ला सद्भा व्यव्दत को द्विव' रूप की प्राप्ति होती है। विम -(१) रहारति-हुट्टइ अथवा फुडड्=वह विक्रमित होता है, वह खित्तता है अथवा वह टूटता ंन्ड पुरना है।(?) च रति = चलड अथवा चलड=वह चलता है अथवा वह गमन करता है। ४-१३१

प्रादे मींले: ॥ -२३२॥

्धादेः परस्य मीलेरन्त्यम्य द्वित्वं वा मवित् ॥ पिमञ्जः । पमीलः । निम्हाः निमीलह् । नीमञ्जः । समीलः । उम्मिल्लः । उम्मीलः । प्राटेरिति क्रिम् । मीलः ॥

अर्थ — 'मूदना, बन्द फरना' अर्थक सस्वत यातु 'मील' के पूर्व में यदि 'प्र. नि. में, वर्न मांद उपसर्ग जुड़े हुए हो तो 'मील' घातु के अन्य हलन्त व्य-ननाम्नर 'लकार' के स्वान पर शक्त नक्ष में विकल्प से द्वित्व 'रुज की प्राप्ति होती है। जैसे — (१) ममीलिन-पमिल्लें अथवा पर्मारा सकीच करता है, वह सकुचाता है। (१) निमीलिन-चिमिल्लें अथवा निमीलं = वह औन मूंश है अथवा वह आँल मीचता है। (१) समीलिन-चिमिल्लें अथवा संगीलं = वह सकुचाता है। (१) समीलिन-चिमिल्लें अथवा संगीलं = वह सकुचाता है। कि समीलिन = उन्मिल्लें । अथवा तुम्मीलं = वह सकुचाता है। अथवा वह प्रकारामान होता है। यो अन्य ववसर्गों के साथ में भी 'मिल्ल कीर मांत्र की सिवित को समक लेना चाहिये।

परन — में आदि उपसर्गों के साथ ही जिकरप से दित्य 'रुत' की प्राप्ति होती है, ज्यान्त्रें कहा गया है ?

उत्तर --यदि मील्' धातु के पूर्व में 'अ' आदि उपसर्ग नहीं जुड़े हुए होंगे हो इस 'मील्' शर् में स्थित हल्नत अन्त्य व्यव्जननाचर 'लकार' को द्वित्य 'क्ल' की प्राप्ति नहीं होगा। तेसे --भीजीव मीळड़ -- वह मूँदता है, वह वन्द करता हैं। यों एक ही रूप 'मीळड़' ही प्रता है, इसके साथ फिड़ा' रूप नहीं बनेगा। ४-९३२॥

उवर्णस्यानः ॥ ४-२३३ ॥

धातोरन्त्यम्योवर्शस्य अतादेशो भाति ॥ न्हुड् । निरहाई ॥ हु । निहवड । खुई चाड ॥ रु । राइ ॥ कु । काड ॥ स्व । माउ । पसाड ॥

अर्थ — सन्छत घातुओं में स्थित अन्त्य स्वर 'त' के स्थान पर प्राप्टत ह्वान्तर में 'अई हो आदेश प्राप्ति होती हैं। जैसे — निन्दृते = निण्हलड़ = यह अपलाप करता है, वह निरा करता है। निन्दृते = निण्हलड़ = वह अपलाप करता है। क्यान करता है। क्यान करता है। क्यान स्वार में जाता है। स्वार में जाता है। स्वार में जाता है। स्वार में जाता है। स्वार में करता है। स्वार मे

उपरोक्त उदाहरण में 'नि+न्हु=निष्डव, नि+हु=निहर, न्यु=चद्य, क=रव, कु=क्द्र, श्रीर मू=मव' घातुवा को देखने मे नितिन को जाता है कि इनमें 'उ' श्रयया 'ऊ' स्वर क श्रान वर्ष 'श्रव' श्रवरारिकी प्राप्ति हुई है ॥ ४-२३३॥ 2

🕈 ऋवर्णस्यारः ॥ ४-२३४ ॥

धातीरन्त्यस्य ऋवर्णस्य यारादेशी भवति ॥ करइ । धरइ । मरइ । वरइ । सरइ । १६। तरह । जरह ॥

अर्थ —सस्क्रत घातुओं में स्थित अन्त्य स्वर 'ऋ के स्थान पर पाइत रूपान्तर मे 'अर' श्रज्ञराश क प्राप्ति हाती हैं। जैसे — कु≕ कर, । बृ≕घर । मृ≕ सर । बृ≕वर । सृ≕ सर । ह≕ हर । तु∽ तर । श्रीरज=जर।क्रियापदीय उहाहरए। इस प्रकार हे —[१]करोति =क्रइ = वह करता है। [२] ^{वरति=धरह=वह घारण करना है। [३] म्रियते=मरइ=वह मरता है श्रथवा वह देह त्याग करता} है। हुणोति = बरइ = बह पसद करता है वह सगाइ-सबघ करता है श्रथवा वह सेवा करता है। [4] सराते=सरइ = वह जाता है, वह सरकता है। [5] हराते = हरइ = वह चुराता हैं, वह ले जाता है।[७] तरार्ति = तरह = वह पार जाता है अथया वह तैरता है। [८] जरति = जरह = वह अल्प होता है, वह छोटा होता है ॥ ४-२३४ ॥

,वृपादीनामरिः ॥ ४-२३५ ॥

^{ष्ट्रप} इत्येवं प्रकाराणा घातृनाम् ऋवर्णस्य अरिः इत्यादेशो भनति ॥ **१**प् । वरिसड ॥ प्। करिसड ॥ मृप । मरिसइ ॥ हुप्। हरिसइ ॥ येपामरिरादेणी दृश्यते ते पृपादयः ॥

अर्थ —सस्कृत मापा में उपलब्ध वृष् छादि ऐमी सुद्ध धातुषे हैं, जिनका प्राकृत स्पान्तर हान पर इनमें अवस्थित 'ऋ' स्वर के स्थान पर प्राकृत-भाषा में 'श्रारि' श्रन्तराश की आदेश शांप हो जाती है। तंत —पृप=वरित्त । कृप्=करित । मप्=मरित । हृप्=हरित । इस आदेश संविधान क ^{क्रनुभार जहाँ जहाँ पर श्रथवा निप्त जिम धातु में 'ऋ'। स्वर के श्यान पर 'श्रारं' श्रादेश रूप श्राहरांश} हिन्नाचर होता हो सो उन उन धातुश्रों को 'युष्यदय' घातु श्रेणि में क्रथवा घातु गण क रूप में ^{ममम}ना चाहिये। वृत्ति में श्राये हुए धातुर्श्नों के कियापदीय उदाहरण क्रम से इस स्कार हैं —[7] ^{एति = वृरिसइ = बरसता है, पृष्टि करता है । [२] क्पीति=करिसइ = वह र्खीचना है । [३] मर्पेति =} भारताइ=वह सहन करता है अथवा वह त्रमा करता है। [४] हुप्पाति =हरिगड = यह खुश हाता देवह प्रमन्न हाता है ॥ ४-२३५ ॥

रुपादीनां दीर्घः ॥ ४-२३६ ॥

रुप इत्येवं प्रकराणा धात्ना स्वरस्य दीवों भवति ॥ रूमर । तूमर । समर । दूमर । विशामीमइ । इत्यादि ।

अर्थ —संस्कृत भाषा में चपनच्य हृस्य स्वर वाली 'ठप्' आदि फेंसी दुइ धातुर हैं, किसा प्राकृत रूपान्तर होने पर इनम अवस्थित हृध्य स्वर' कस्थान पर प्राकृत भाषा में 'तर्ष सर' क्षाचे पर प्राकृत भाषा में 'तर्ष सर' क्षाचे पर प्राकृत भाषा में 'तर्ष सर' क्षाचे प्राप्त हो जाती है। जैसे' —कप = रूपा। तुप = तूस। तुप = तुप =

युवर्णस्य ग्रमः ॥ ४~२३७॥

धातोरिवर्णस्य च विहरपाप गुको भरति । जेऊला । नेऊला । नेहा नेन्ति । उद्देश उद्दे न्ति । मोचूला । सोऊला । बर्राचिन भरति । नीको । उद्दीको ॥

अर्थ — सस्त्रत घातुओं के प्राकृत-ह्नान्तर में 'कित अथवा हितु' अर्थात कृतन वक्त की काल गोघक प्रस्यों की सयोजना होने पर भी प्राकृत मापा में घातुओं में रहे हुए 'इ का को की 'उ वर्ण' का गुण हो जाता है। जैसे — जिल्ला = जेडण = जीत करके। जील्ला = नेडण = ले ता हर कि मयान = नेडण = ले ता हर कि मयान = नेडण = ले ता ता हैं। 'डी' घातु का वराहरण — उने स्था = चडु वन्ते = चडु वन्ते = चडु हैं = वह आकाश में चड़ता हैं। इन चड़ हैं न व व आकाश में चड़ता हैं। इन चड़ हैं न व व आकाश में चड़ता हैं। इन चड़ होन = व अकाश में चढ़ता हैं। इन चड़ होन = व अकाश में चढ़ता गया हैं कि इनमें 'इ वर्ण' के स्थान पर 'च वर्ण' की गुण ह्व से प्राप्ति हुई है। अब कार्य व वर्ण' के स्थान पर 'खो वर्ण' की गुण ह्व से प्राप्ति हुई है। अब कार्य व वर्ण' के स्थान पर 'खो वर्ण' की गुण ह्व से प्राप्ति प्रश्लित की जारी हैं। जैसे — मुक्ता = मीतृत्र व वर्ण' के स्थान पर 'खो वर्ण' की गुण ह्व से प्राप्ति प्रश्लित की जारी हैं। जैसे — मुक्ता = मीतृत्र व कर के। अल्ला-सीउज्ज = गुल कर के। यों 'इ' वर्ण' का गुण 'घ' और 'उ' वर्ण' का गुण 'घ' और 'उ' वर्ण का गुण 'घ' की गुण होना है, इन स्थिति को घान में रखना चाहिये।

कमो कमी ऐसा भी देखा जाता है जब कि इ' वर्ण के स्थान पर ए' वर्ण की कीर 'ड वर्ण के स्थान पर 'खो वर्ण की गुण प्राप्ति नहीं होती है। जैसे — नीत ≕नी खो ≕ के जाया हुया। उड़ार्य छड़ी जो ≃ चड़ा हुआ। यहा पर 'नी' में स्थित खोर 'ड्डी' में स्थित 'इ वर्ण 'को 'छ वर्ण 'के रूप में गु प्राप्ति नहीं हुई है।

मूल सूत्र में बिल्लिखित 'यु वर्ग' के खाषार से 'इ वण तथा 'व वर्ण' को प्रतिविधित सर्ग जानी चाहिये खीर इमी प्रकार से वृत्ति में प्रदर्शित 'इ वर्ण' के खागे 'व वर्ण' के खागार सम् सख्या ४-२३६ की श्रद्धजानुसार 'व वर्ण' की से प्रोप्ति समकी जानो बाहिये ॥ ४-२३३॥

स्वराणां स्वराः ॥ ४-२३=॥

धातुषु स्तरामा स्थाने स्तरा बहुलं भनन्ति ॥ हवड । हिवड् ॥ चिम्नाइ । ज्ञमाड ॥ ,हरा। सद्हारा । धानइ । धुनइ ॥ रुवइ । रोनइ ॥ कचिन्नित्यम् । देड ॥ लेड । निहेड । मइ ॥ स्रार्षे । बेसि ॥

अर्थ —सरवृत भाषा की घातुत्रों में रहे हुए स्वरों क स्थान पर प्रावृत रूपान्तर में अन्य स्वरों । धारेरा शामि बहुतायत रूप से हुआ करती है। जैसे — (१) भवाति=हवड़ श्रीर हिवड़=यह होता ारि) चराते = चिणइ श्रीर चुणइ = वह इकट्टा करता है । (३) श्रद्धान = सद्दृहण श्रीर सद्दृहाण = दा अथवा विश्वास । (४) धावाति=धावइ और धुवड = वह दौडता है। (५) रोतित = रवड और लड़ = वह रोता है, वह रुदन करता है। इन उदाहरणों को देखते से विदित होता है कि सस्कृतीय ातुर्श्रों में अवस्थित स्वरों के स्थान पर प्राकृत-भाषा में विभिन्न स्वरों की व्यादेश प्राप्ति हुई है, श्चिय घातुत्रों के सबघ में भी स्वयमेव कल्पना कर लेना चाहिये।

कभी कभी ऐसा भी पाया जाता है कि सस्कृतीय धातु हों में रहे हुए स्वरों के स्थान पर प्राष्ट्रत ^{भातर में} नित्य रूप से खन्य स्वर की उपलब्धि श्रादेश रूप से हो जाती है। जैसे *—इदाति* (श्रयवा ते)=देर=वह देता है, वह सौंपता है। *लाति = लेड़* = वह लेता है स्रथवा प्रहण करता है। *विभोति*= ^{प्रहेड} = बह हरता है, वह भय खाता है। *नरुयाति = नासेड़* = वह नारा पाता है श्रयवा यह नष्ट होता

धार्ष प्राकृत म भी स्वरों के स्थान पर धन्य स्वरों की प्राप्ति देखी जाती हैं। जैसे -- वर्षीम= ^{|मि} = में कहता हू प्रथवा प्रतिपादन करता हू ॥ ४-२३⊏ ॥

व्यञ्जनाददन्ते ॥ ४-२३६ ॥

व्यञ्जनान्ताद्वातोरन्ते अकारो भगति ॥ भमइ । इसइ। कुणइ। चुम्बइ। मराइ। ^{रामम्} । पानः । सिश्चः । रुन्धः । मुसः । इरः । करः ॥ शनादीनां च प्रायः प्रयोगी नास्ति ॥

अर्थ -जिन संस्कृत घातुओं क श्रान्त में इलन्त ब्यञ्जन रहा हुआ है, ऐसी इलात ब्यञ्जनान्त ^{शतुभों} के प्रकृत रूपान्तर में इब त्य हलन्त ज्यञ्जन में विकत्स्य प्रत्यय के रूप से 'द्यकार' स्वर की ध्यागप ^{मापि} हुमा करती है, यो ज्यञ्जनान्त धातु प्राकृत मापा में श्रकारान्त घातु वन जाती हैं तथा तत्पश्चात रेंगे रात म बनी हुई श्रक्तारान्त प्राकृत घातुर्थों में काल प्रोपक प्रत्ययों की सयोजना की जाती है। वैम --मम् = मम । हस् = हस । कुण् = कुण कीर चुम्य=चुम्य इत्यादि । क्रियापदीय उदाहरण क्रम से दम म्बार हें —(१) अमाति = भमड़ = यह घूमता है, वद परिश्रमण करता है। (२) हसाति = हसा = वह

स्वरादनतो वा ॥ ४-२४०॥

श्रकारान्ताक्षितात् स्तरान्ताद्भातोरन्ते श्रकारागमो वा महित् ॥ पाइ पाश्रीण् घाश्रह् । जाइ जाश्रह् । क्षाह्र कृत्यह । जन्माह जन्माश्रह । उठनाह उन्नायह । मिलाह मिला श्रह्म । विक् ह निक्के सह् । होउल्यु हो स्रक्षता । श्रनत हित किम् । चिहन्छह । दुपुन्धह ॥

अर्थ — प्राकृत मापा में खकारान्त पातुर्थों को छोड़ कर किमी मी झन्य स्वराजिया कि खन्त में काल बोधक प्रत्यय जोड़ने के पूर्व विकरण प्रत्यय के ह्व में 'खकार' सा ह खागम रूप से प्राष्ट्रिक का प्रमुख के ह्व में 'खकार स्वर की प्राप्त के स्वर्ग के ह्व में 'खकार स्वर की प्राप्त कि सिनाय खन्य स्वरान्त पातु और रूप बोधक प्रस्थय के बीच में 'खकार स्वर की प्राप्त विकरन रूप से हो लाया करता है। जी —गावि पाड़ खयवा पाजड़ = वह रचण करता है। धावावि = धाड़ खयवा धाजड़ = वह शहना है। यावि चाड़ खयवा पाजड़ = वह जाता है। धावावि = धाड़ खयवा धाजड़ = वह थान खता है। धावावि = ह्याड़ खयवा हाजड़ = वह थान खता है। धावावि = ह्याड़ खयवा हाजड़ = वह थान खता है। धावावि = कम्माड़ खयवा लाजड़ = वह शहना होता है। धावावि = कम्माड़ खयवा लाजड़ = वह स्वता है। कह शुक्त होता है। म्लायवि = कि हा खवा ही । मूचा होजड़ होता है। कह शुक्त होता है। कह स्वता हो । कि स्वाप्त करते है। यो उपरोक्त व्यवहा कि खावा हो कि हम खागम कर से प्राप्त त्या प्रस्ता के बीच में 'खातर' स्वर का खागम विहरत से खावा हो कि हम खागम कर से प्राप्त विवार से सम्प्रान से मी खब में की इपरार की खाता है। इस प्रकार की स्विति हो खन्य भी समगा लेना चोहिये।

[्]र प्रहरा-- 'अकारान्त घातुओं में' व्यक्त रीति से प्राप्तव्य आगम रूप 'अकार' स्वर की प्राप्तिका निर्मेश्व प्रमी किया गया है ?

उत्तर -प्राकृत-भाषा का रचना प्रवाह हो ऐमा है कि श्रकारान्त धात श्रीर काल बायक त्यवों क बीच में कभी कभी आगम रूप से 'अकार' स्वर का प्राप्ति नहीं होती है और इन लिये । बारा त धातुओं को छोड़ कर क, श्रन्य स्वरान्त धातुओं के लिय ही विकल्प से 'श्रकार' रूप स्वर । श्रागम प्राप्तिका विधान किया गया है। जैसे *—िचाफित्सति*का 'विइच्*छई*' ही प्रश्टत-रूपान्तर ागा, न कि 'चिइच्छड' होगा । इसी प्रकार से जुगुपमति का प्राकृत क्यान्तर 'दुगुच्छड्ड' ही होगा, न s 'दुगुच्छ अइ' होगा। दोनों उदाहरणों का हिन्दी अर्थ क्रम से इन प्रकार हैं — (१) वह दवा करता थौर (२) वह घुणा करता है, वह निंदा करता है ॥ ४-२४० ॥

चि-जि-श्रु-हु-स्तु-लू-पू-धूगां गो हृस्त्रश्च ॥ ४-२४१ ॥

च्यादीना धातुनामन्ते शाकारागमीं भवति, एषा स्नरस्य च हस्तो भनति ॥ चि । णि है। जि । जिला है। श्रु। सुराह् । हुल है। स्तु। युगा है। स्तु। खुगा है। पुण है। ए। युण्डः ॥ बहुलाधिकारात् किनत् निकन्यः । उचिग्रः । उन्चेदः । जेऊण् । जिथिऊण् । प्र । विषर् ॥ सोऊष । सुणिऊष ॥

अर्थ -- (१) चि=(चय)=इकट्टा करना, (१) जि=(नयू)=जीतना, (३) श्रु=पुनना, शे हुँ=हवन करना, (५) स्तु =स्तुति करना, (६) लू = लूगना, छेदना. (७) पू =पवित्र करना, स्रोर ^{5)पू}च धुनना कपना 'इन सस्क्रतीय धातुत्रमा के प्राक्रत क्यान्तर में काल-बोधक प्रत्यया की जीड़ने के ^{[र्द 'णकोर' व्य≖तनात्त्र की स्त्रागम प्राप्ति होती है तथा घातु के स्त्रन्त में यदि दोर्घ स्वर रहा हुआ हा} ^{ए समको} हम्ब स्वरकी प्राप्ति हो जाती है। इन प्रकार की स्थिति से इनका प्राक्षन- रूपान्तर यों हा गता है —(१) चिल, (२) जिल, (३) मुल, (४) हुण, (४) सुत्त (६) लुल, (७) पुण और (८) सुग, ^{त्रवास्}रीय जनाहरण ऋम से गों.है —(१) चित्तगिति = चिणइ=वह इकट्टा करना है, (२) जयति= चिण्ड=ब्रह जीनता है, (३) ट्राणोति = सुण्ड = वह सुनता है, (४) जुहोति=ट्रण्ड = वर हरा हरता है, (४) म्तीति=थुगइ = यह स्तुति करता है (६) लुनगति=चगइ = वह ख्गता है, वद काटता है। अनाति=पुणइ = वह पांत्रत्र करता है और (८) धूनाति = धुगड = नह धुनता है, वह कवना है।

'बहुलम्' सूत्र के अधिकार से कहीं कहीं पर प्राकृत रूपान्तर म उक्त घातुओं म प्राप्तस्य णकार' पत्रनाहर को आगम प्राप्ति विकल्प में मो होती हैं । जैमें — उचिननोति=अचिवणः अधवा इस्प्रह=बद्द (मृत्र श्रादि को तोहकर) इक्ट्रा करता है। जिल्ला = गेंऊग ध्रयवा जिलिकण = विन राह्म विजय मात करके। श्रुचा =सोजग अथवा मुणिजग = मुन करके, ध्वण करक। इन उपाछ ^{दिक्षिणों} में 'खकार' व्यक्तात्त्वर की स्नागम प्राप्ति जित्तत्व से हुई है । यों अन्यत्र भी जान लका Meq 1

न वा कर्म-भावे व्य स्यस्य च लुक् ॥ ४-१४२ ॥

च्यादीना कमिण भावे च धर्तमानानामन्ते द्विरुक्तो वकारागमो वा मगति, तसंग योगे च क्यम्य लुक् ॥ चित्र्यइ चिणिडनइ । जिन्यइ जिलिडनइ ! सुन्यइ सुणिउनइ । इन् हृणिउनड । युव्यड युणिडनड । लुव्यड लुणिडनड । पुव्यइ पुणिडनइ । धुव्यड धुणिउनइ ॥ सं भविष्यति । चिव्यिदिड । इत्यादि ॥

अर्थ — सस्कत-भाषा म कर्म बाच्य तथा मात्र राज्य बनाने के लिये घातुओं में श्राम्तेद्दर्भ काज बोधक प्रत्यय जोड़ ने क पूर्व जैसे 'यक' = य' प्रत्यय जाड़ा जाता है, बैसे ही प्राष्ट्रत भाषा में में कम बाच्य तथा भाव वाच्य बनने के लिये घातुओं में काल बाघक प्रत्यय जाड़ने के पूर्व 'ईक' घरता 'इजन' प्रत्यय जोड़े जाते हैं, यह एक सब सामान्य निवम है, परन्तु 'चि, जि, सु, हु, सु, हु, हु, हो, धु' इन श्राठ घातुओं में उपरोक्त कर्मिण मात्र प्रयोग वाचक प्रय्य 'इस श्रयवा इन्ड' कस्थान पर हिन्द श्रयात दित्व 'वन' का प्राप्ति भी विकल्य से होती है श्रीर तत्यरवात वर्तमानकाल, भनिष्मात्र श्रादि के काल बाघक प्रत्यय जोड़े जाते हैं। यों 'ईश्र श्रयवा इन्ज' का लोव होकर इनके स्थानर करता 'वन' प्रत्यय की विकल्य में श्रादेश प्राप्ति हो जाती है।

बृत्ति में 'ब क्यस्य लुक' ऐमे जो शब्द लियों गये हैं, इनमें 'ब' व्यथ्य से यह लप्ते यननाया गया है कि इन घातुओं में ब्य' अश्वय जुड़ने पर स्त्र मख्या ४-२४१ में प्राप्त होने गह 'एए कार' ब्यञ्जनात्तर की व्यागम प्राप्ति मी नहीं होगी। 'क्यस्य' पद से यह विघा किया गया है कि 'ई म ब्यीर इक्त' प्रत्ययों का मो लोग हो जायगा। ऐमा व्यर्थ नोध 'लुक्,' विघान से जानना। '

उपरोक्त आठों ही धातु में क उमय स्थिति वायक उदाहरण वतमान काल में कम से इम इहा हूँ —(१) चीयते = चिटवर अथना चिणिज्यह = उमसे इक्ट्रा किया जाता है। (२) जीवते =िन में अथना जिणिज्यह = उससे जीना जाता है। (३) श्रूयते = मुख्यह अथना मुण्यिज्यह = उससे सुनी जाते है। (४) स्तुयते = युट्यह अथना युण्यज्यह = उमसे सुति की जाती है। (४) एयते = हुट्यह अथन सुण्यज्यह = उससे हमन किया जाता है। (६) त्युयते = खुट्यह अथना खुण्यज्ञह = उससे ल्ला जाता है उससे काटा जाता है। (७) पूपते = युट्यह अथना पुण्ड्यह = असे पवित्र किया जाता है और (४ ध्यते = घुट्यह अथना धुण्ड्यह = उससे सुना जाता है अथना उससे करा जाता है।

इन उदाहरणों को ध्यान पूर्वक देपने से विदित होता है कि 'जहां पर ध्व प्रत्यय का श्रामन वहावर सा श्रीर इन्त का लोप है तथा जहां पर सा श्रीर इन्त्र प्रत्यय हैं वहां पर ध्व प्रत्यय नहीं है।

भविष्यत् काल में भी ऐसे ही चंटाहरण श्ययमेव कल्पित कर लोना चाहिय। विश्वार सब क्यल नमूना रूप एक चटाहरण वृत्ति में दिया गया है, जो कि इस प्रकरा है —चीपिष्यतेनीयाहि

म्मश्रे: ॥ १-२४३ ॥

चग वर्मीण भावे च ग्रन्ते संयुक्तो मो वा भवति ॥ तत्सिनियोगे क्यस्य च छुक् ॥ मह। चिव्यह । चिणिव्जह । भविष्यति । चिम्मिहिइ । चिव्यहिइ । चिणिव्जिहिइ ॥

अर्थ — 'इष ट्वा बरना' अर्थक घातु 'चि' के कर्मणिभावे प्रयोग में काल बोघक प्रत्यय जोडने । वं विषक्त से समुक्त अर्थात द्वित्व 'मम' की आगम प्राप्ति विकल्प से होती हैं और ऐसा होने पर जगमें प्रयोग बोघक प्रत्यय 'द्व्य' अथवा 'ईष्य' अथवा 'इक्ज का लीप हो जाता है। यों 'चि' । में 'मम, द्व्य, ईक्ज, इक्ज' इन चारों प्रत्ययों में से विसी भी एक का प्रयोग वर्मीण भावे अर्थ में किया पड़ती है। परन्तु यह ध्यान मे रहे कि 'मम अथवा द्व्यं प्रत्यय का सद् भाव होने पर सूत्र सख्य पश्चे में प्राप्त होने पर सूत्र सख्या ११ में प्राप्त होने वाले णकार' व्यञ्जनाचर की प्राप्ति नहीं होगी। ऐसा बोघ वृत्ति में दिये गये अव्यय स जानना (उदाहरख इस प्रकार हैं —चियते-चिम्मइ, चिव्यइ, विश्वणकाइ अथवा भित्र=अससे इकट्ठा किया जाता है। भविष्यत काल सबवी उदाहरण इस प्रकार हैं —चीयिष्यते= क्याहर, चिव्यहर, चिली जीहर, (अथवा चिणी अहिर्) = दससे इकट्ठा किया जावगा। । शे के उदाहरण खुद ही जान लेना॥ ४-२४३॥

हन्खनोन्त्यस्य ॥ ४-२४४ ॥

श्रनयोः कर्म भावे न्त्यस्य द्विरुक्तो मो वा भरति ॥ तत्सनियोगे क्यस्य च लुक् ॥ १, हिण्डिज्ञः । सम्महः, स्विविज्ञः । भिन्यति । हिम्मिहिः, हिणिहिः । सिमिहिः । विद्यापि । विद्यापि ।। विद्यापि ।।

अर्थ — सस्कृत घातु "हन् श्रीर छन्' के प्राकृत-स्पान्तर में कर्मणि भावे प्रयोग में श्वन्त्य हलन्त हां' व्यव्यवनाचर के स्थान पर द्विक्ष्तत श्रयांत द्वित्व 'म्म' की विकल्पसे श्रादेश प्राप्ति होंती है र ६न प्रकार द्वित्य "म्म" की श्रादेश प्राप्ति होने पर कर्मीण नावे बोधक प्राक्षत प्रत्यय "ईश्र श्रीर ब' हा लोग हो नाता है। जहाँ पर द्विष्व "म्म" की प्राप्ति नहीं होगी वहीं पर कर्मिण-भाने वोषह नव "ईश्र श्रयवा इन्न" का सद्भाव रहेगा। जैसे — हन्यते-हम्मह श्रयवा हिण्जनह = यह मोशा हो है। सम्यते = स्वम्मह श्रयवा स्विण्जङ यह खोग जाता है। भिष्य्यत्-कालीन उदाहरण यों — हिनिष्यतः हिम्महिइ=यह मारा जायगा। हिन्य्यति, [हनिष्यते]-हिणिहइ=वह मारेगा

समनूपाद्र्धेः ॥ ४-२४=॥ 🗀

समन्त्रेम्यः परस्य रुधेरन्त्यस्य कम-भावे कस्तो वा भगति॥ तःसिन्गोने वर्षः लुक् ॥ संरुक्त्मह । अणुरुक्त्मड । उत्ररूक्तड । पर्वे । संरुन्विकतह ॥ अणुरुन्यिकार । उत्ररुपः भविष्यति । सरुक्तिमहिह । संरुन्धिहिह । इत्यादि ॥

अर्थ — 'स, खतु, श्रीर उप' जवमार्ग में से कोई मां उपसमें साथ में हो ता 'क्ष्य-हण'। के श्रान्य खबया हव न्य' क स्थान पर कर्मिण भावे प्रयोगार्थ में विकल्प से 'क्ष अववव हव के श्री आदेश प्राप्ति होते हैं। तथा इस प्रकार क 'क्ष्म' की आदेश प्राप्ति होने पर कपणि भाव प्रवेच प्रत्यय 'ईश्र अथवा इज्ज' का लोग हो जाता है। यो 'न्य' के स्थान पर 'क्ष्म' की आदेश प्राप्ति स वहां पर 'ईश्र अथवा इज्ज' प्रत्यय का सद्भाव अवश्यतेव रहेगा। जैसे — सरुप्यते = सल्या प्रत्यते = सल्या प्राप्ति स सल्या प्राप्ति स सल्या जाता है, श्री अवश्यते = सल्या जाता है। अवश्यते = स्थान का स्थान का स्थान हुआ जाता है, स्थान का हो। है। उपरुष्ट्यते = उपरुष्ट श्री अवश्यते का जाता है, श्री अवश्यते का जाता है। स्थान का जाता है। अवश्यते का जाता है। स्थान का जाता है। अवश्यते चाता है। मिवण्यत कालीन चण्यान वा वा है। स्थान का जाता है। स्थान का लियान स्थान का लियान स्थान का लियान स्थान का लियान स्थान का स्थान का लियान स्थान का लियान स्थान का स्थान का लियान स्थान का स्थान का लियान स्थान का स्थान का लियान स्थान स्थान का स्थान स्था

गमादीनां हित्वम् ॥ ४-२४६ ॥

गमादीनामन्त्यस्य कर्म-माने द्वित्व वा मनित ॥ तत्सिनियोगे क्यस्य च लुक् ॥ गर् गम्मइ । गमिज्जइ ॥ इस् । इस्सड । इसिज्जइ ॥ मण् । मएणड । भणिज्जड ॥ लुर् । हुन् । हुन् । हुन्विज्जइ ॥ रुद्द-नुमो वं । (४-२२६) इति कृतवकाहादेशो रुदिरन पठघते । हर् । इन् । रुविज्जइ ॥ लम् । लव्मइ । लहिज्जह ॥ कथ् कत्यइ । कहिज्जह । धुन् । ध

अर्थ — 'गम, इस, सण्, द्वा 'आदि छुद्ध एक प्राञ्चत धातुत्रों के कर्मणि मावे त्रथह प्रवीतें इन धातुत्रों के अन्त्य अत्तर को द्विय अत्तर को प्राप्ति विकल्प मे हो जाता है। जो द्विय रुप्ता के प्राप्ति होने पर कर्मीण मावे बोधक प्रत्यय 'ईख अयदा इल्ल' का लोप हो जाता है। जहाँ पर 'इस स्वर इल्ल प्रत्ययों का सद्भाव रहेगो वहाँ पर उक्त द्वित्व रूपतो की प्राप्ति नहीं हो सकेगी। यो होनों में हर ो हित्व श्रदारव रहेगा श्रथवा 'ईश्र या इक्ज' प्रत्यय ही रहेगा। जैसे —गम्यते=गम्मड श्रयवा ।भिज्ञइ=जाया जाता है। (२) हस्यते=हरसङ स्थयना हासिज्जङ = हैसा जाता है। *(२) भण्यते*= . १ण्णइ श्रयवा भणिज्ञाइ=कहा जाता है, बोला जाता है। (४) छुप्यते=छुप्पइ श्रयवा छुविज्ञाइ= र्श किया जाता है।

सूत्र-सख्या ४-२२६ में विधान किया गया है कि 'स्दू और नम्' धातुओं के अन्त्य अज्ञर को वधार' अत्तर की अपदेश प्राप्ति हो जाती है। तदनुसार यहा पर सन्कृतीय घातु 'रुद्' को 'रुब' रूप हान करके इसका क्दाहरण दिया जा रहा है। (4) रुद्धते = रुटकड़ अथवा रु*चिद्धाइ* = रोया जाता रेहरन किया जाता है। *(६) लभ्यते = लब्भइ श्र*यवा लहिज्जइ = प्राप्त किया जाता है। *(७)* म्प्लेन्यतथड श्रथवा फहिज्जड़=कहा जाता है। इन 'लम् श्रोर कथ' घातुर्श्रों में इसी सूत्र से प्रयम गर तो 'द्वित्त, भ्म श्रीर ध्य' की प्राप्ति हुई है श्रीर पुन सुत्र सख्या २−६० से 'व्म तथात्य' की माप्त होने से चपरोक्त उदाहरणों में 'लटम तथा कत्य' ऐसा स्त्रह्म प्रदर्शित किया गया है। (८) भुज्यते= . समह प्रथमा भुजिज्जइ=लाया जाता है, मोगा जाता है। यहाँ पर 'मुज्' की 'मुज्' की प्राप्ति ^{सूत्र सख्या ४-११० से हुई है, यह ध्यान में रखना चाहिये।}

मविष्यत् काल का दृष्टान्त इस प्रकार से है -गिमिष्यते =गिमिष्टि श्रथवा गिमिहिइ = बाया जायगा, इत्यादि रूप से समम्त लेना चाहिये ॥ ४-२४६ ॥

हृ-कृ-तृं-ज्ञामीरः ॥ ४-२५० ॥

एपामन्त्यस्य ईर इत्यादेशों व। भवति ॥ तत्सिनियोगे च वय-लुक् ॥ हीरह । हरि-^{त्रह् ॥} कीरह । करिज्जइ ॥ तीरइ । तरिज्जइ । जीरड । जरिज्जइ ।।

अर्थ -प्राकृत-मापा में (१) हरना, चोरना अर्थक घातु 'हु' के, (२) 'करना' अर्थक घातु हैं हैं, (३) 'वरना, पार पाना' अर्थक घातु 'तृ' के, और (४) 'जीय होना' अर्थक घातु 'तृ' के कर्माण भाव प्रयोग में शन्त्य स्वर 'श्वर' के स्थान पर 'ईर' अत्तरावयव की विडल्प से आदेश प्राप्ति होती है, पर्यात ह ना हीर, छ का कीर, तुका तीर, चौर जुका जीर ही जाता है और ऐमा होने पर कर्मीख भावे प्रयोगायक प्रत्यय 'ईश्र अथवा इल्ल'का लोप हो जाता है। यों जहाँ पर इन घातुओं में 'ईश्र भवता इता का सद्भाव है वहाँ पर इन घातुओं के अन्य स्वर 'ऋ' के स्थान पर 'ईर' आदेश की गत नहीं होती है। 'ईर' खादेश की प्राप्ति होने पर ही 'ईख खयुवा इझ' का लोप होता दे, यह विश्व वे हिनक है उक्त वारों प्रकार की पातुओं के उदाहरण क्रम से इन प्रकार है.—दियते-दिए भरता हारिजाइ = हरण किया जाता है अथवा बुराया जाता है। [?] क्रियते = फीरड़ अथवा रिक्तिद=किया जाता है। [३] तीथेते =तरिंद अथवा तारिज्ञ इ=र्टरा जाता है, पार पाया

••••••••••। कार्यो धातुष्ठों को या उभय स्थित को सम्यक् प्रकार से समक्र सेना चाहिय ॥ ४-५४॥

श्रजेंबिंडप्पः ॥ ४-२५१॥

श्चन्त्यस्मेति निष्टत्तम् । श्रर्जेबिंडप्प, इत्यादेशो वा भगति ॥ तत्सिविषोगे स्पत्त । लुक् ॥ विडप्पद्द । पर्च । विडयिक्जड । श्रव्जिक्जड ॥

अर्थ — उपरोक्त सूत्र सख्या १८-२४० तक श्रमेक घातुश्रों के श्रत्याहर को धारा भी होती रही है, परन्तु श्रव इस सूत्र से आरो के सूत्रों म मातुश्रों के स्थान पर वैकालक रूप से प्राधान किया जाने वाला है, इस लिये, श्रव यहाँ स स्थात प्रस् से अंतर प्रस् के आदि शब्द से समस्ता चाहिये।

खिपार्जन करना, पैदा करना' अर्थक सरकृत घातु 'अर्ज' का प्रोक्त हवा तर 'अर्थ' एगे हैं, परन्तु इस प्राकृत-घातु 'अर्ज' के स्थान पर क्रमीण नावे प्रयोगार्थ में प्राकृत भाग में विद्यत्त हैं, परन्तु इस प्राकृत-घातु क्ष्म के आवेश प्राप्ति होती हैं और ऐसी आवेश प्राप्ति विद्यत्त हैं अर्थ प्राप्ति होती हैं और ऐसी आवेश प्राप्ति विद्यत्त हैं अर्थ अर्थ हैं इन 'का लोग हो वो देन 'ईम अर्थ हैं प्राप्ति के लोग हैं। यो दन 'ईम अर्थ हैं प्राप्ति के लोग हैं। यो दन 'ईम अर्थ हैं प्राप्ति के लोग हैं। यो दन 'ईम अर्थ हैं प्राप्ति के लोग हैं। विद्यत्त अर्थ हैं प्राप्ति के लोग हैं। विद्यत्त अर्थ हैं प्राप्ति के लोग हैं। विद्यत्त अर्थ हैं प्राप्ति के लोग हैं।

जहाँ पर 'श्रजी' का प्राकृत रूपान्तर 'श्रजन' हो यदि रहेगा तो कर्मीण गावे प्रयोगाय हरू 'श्रजन' घातु में 'ईब श्रयथा हज्ज' प्रत्यव की सर्वोजना करके तत्यश्चात ही कान नोधक गर्वे के 'मयोजना की जा सकेगी! जैसे — अर्ज्यतें = विद्युट्ट (श्रयथा विद्युट्ट) श्रयथा अतिनाई = वार्टि क्या जाता है, पेदा किया जाता है। यो 'विद्युप श्रयथा विद्यु' में 'ईख, इज्ज' प्रयुच का सर्वे लावे जय कि 'श्रज्ज' में 'इज्ज' क्रयय का सद्माय है।

'बहुलम्' सूत्र के व्यथिशार से कहीं कहीं पर 'विदव' झारेश प्राप्त थात में । 'ईस स्ववाहां प्राय्य का सदमाय देखा जाता है । जैसा कि शृति में ब्दाहरण दिया गया है कि अध्येश चिद्याचित्रज्ञ = पैदा किया जाता है, चवार्जन किया जाता है ॥ ४-२११॥

, ज्ञो ग्रह्य-ग्रुज्जो॥ ४-२५२ ॥

जानातः कर्म-भावे गान्य गाज्ज इत्यादेशो वा भरतः । तत्सनियागे क्यस्य च लुक्।। व्यह, गुज्जह | पत्ते । जागिज्जह । मुग्गिज्यह ॥ मु हो। ग्री: ॥ (२-४२) इति गादेशे त । ार्जन्न ॥ नञ्जूर्वकस्य । श्रमाह्ज्जह् ॥

अर्थ - 'जानना' अर्थक संस्कृत घात 'ज्ञा' के प्राकृत क्यान्तर म कर्मणि मावे प्रयोग में 'ज्ञा' म्यान पर 'णय्त्र और गुज्जन' ऐसे दो धातुरूपों को विकल्प से आ देश प्राप्ति होती है। यों आ देश ािम होने पर कर्मणि मावे ऋर्थ बोध क प्रत्यय 'ईश्र ऋथवा इज्ज' का लोप हो जाता है ऋीर केवल ^{७३}न अथना णव्ज' में काल बीचक प्रत्यय जोडने मात्र से ही कर्मणि भावे बीघक-धर्य की उत्पत्ति ही ार्ग है। दोनों क कम से उदाहरण यों हैं - ज्ञायते = णुब्बड़ श्रथवा गुज्जड़ = जाना जाता है।

सूत्र सख्या ४-२४२ से प्रारम्भ करके सूत्र सख्या ४-२४० तक कुछ एक घातुर्घों के कर्मणि भाव-पर्य में नियमों का सांवधान किया जा रहा है श्रीर इस सिलसिलों में 'क्यस्य च लुक्त' ऐसे शन्दों का भी खाग किया जा रहा है, तद्तुसार 'क्य=य' प्रत्यय संस्कृत भाषा में क्रमीण भावे अर्थ में घातुओं के िस्तरं में हो जोडा जाता है ऋौर इसी 'क्य = य' प्रत्यय क स्थान पर प्राकृत-सापा में सूत्र सख्या ि ६० से 'ईम्र अथवा इन्ज' प्रत्यय की प्राकृत घातु में सयोजना करके कमिण माव-अर्थक प्रयोग हानिर्माण किया जाता है, परन्तु कुछ एक घातुष्टों में इन 'य' प्रत्यय बोषक 'ईश्र व्यथना इन्न' म्यर्गे का सोप हो जाने पर भी कर्माण भावे अर्थ प्रकट हो जाता है, ऐमा 'क्य च लुक्' शर्घ्यों से सम-मिना चाहिये।

उपर 'झा' धातु के 'खुब्ब ऋोर खुब्ब' रूपा की आदेश प्राप्ति बैकल्पिक बन्लाई गई है, अत वितर में 'शा धातु क सूत्र सख्या ४-७ से जाण श्रीर मुग' प्राकृत धातु रूप होने से इन क कर्मणि ^{शते} धर्य में क्रियावदीय रूप यों होंगे — ज्ञायते = जाणिज्जइ श्रयवा सुणिज्जइ = जाना जाता है। भव्यक्र तथा णज्जइ' में 'इजज' प्रत्यय का लाव है, जब कि 'जाणिज्जह स्त्रीर मुणिज्जह' में 'इज्म' ^{भवा का} मद्माल है, इस अन्तर को भ्यान में रखना चाहिये। किन्तु इन चारों कियाप^जें का अर्थ ^{हो 'बाना} जाता है' ऐमा एक हा है।

स्य सख्या २-४२ से ज्ञा' के स्थान पर 'णा' रूप की मा आदेश प्राप्ति होती है श्रीर ऐमा मन पर 'क्षायन' का एक प्रानृत रूपान्तर ।णाइज्जाइ ऐसा मी होता है। 'णाइज्जड' का अर्थ मी 'बाना जाता है' ऐमा ही होगा। यदि 'नहीं' श्रयक प्रत्यय 'न श्रयवा स्र' 'झा' धातु में जुड़ा हुआ णा तो इमके कियापरीय रूप यो होंगे'-- न ज्ञायते=भज्ञायते = भणाइनाइ = नहीं जाना जाता है। र्षे 'का' पातु क प्राकृत माया में कमिण माये-व्यर्थ में विधापदीय-व्यरूप जानना चाहिये॥ ४-२५२॥

च्याहरतेः कर्म-मावे वाहिष्य इत्यादेशो वा मनति ॥ तत्सनियोगे नगरप व हुइ। वाहिष्यइ । वाहरिज्जइ ॥

अर्थ — 'बालना, कहना अथवा आहान करना' अथक संस्कृत घातु 'व्या+ ह' हा हार्य स्वान्तर 'बाहर' होता है, परन्तु कर्मीण माब प्रयोग में उक्त घातु 'व्याह' क स्वान पर शहर कार में 'बाहिएप' एसे घातु रूप की विकल्प से आहर। प्राप्ति होती है तथा ऐसी बैहिएक प्रारेत आहे होने पर प्राफ्त-भाषा में कमिण माबे प्रयाग अर्थक प्रत्यय 'ईश्र अथमा इल्ल' हा लोश हो तावार। वॉ जहाँ पर 'ईश्र अथमा इल्ल' प्रत्ययों का लोग हा लायगा वहाँ पर 'क्याह' क स्वान पर 'बिएं का प्रयोग होगा और जहाँ पर 'ईश्र अथमा इल्ल' अथमा इल्ल' का लोग नहीं होगा वहाँ पर 'व्याह क स्वान प्रवाह के प्रयाग होगा और जहाँ पर 'व्याह क स्वान पर 'बाहर' का प्रयोग होगा। जैसे — स्वाहियते = वाहिएवह अथवा शहरिक्षड़ = बोना जाता है, क्ष्मा कहा जाता है अथवा आहान किया जाता है। ॥ ४- ४४॥

ञ्चारभेराढव्यः ॥ ४-२५४ ॥

याड पूर्वस्य रमेः कर्म-मावे ब्राह्म इत्यदिशो वा मनति। स्वस्य प रहे

अर्थ — 'आ' उपसमें सहित 'रम्' घातु सरहत माया में उपलम्य है, इमका कर्ष करना, ग्रुक करना 'ऐमा होता है। इस 'आरम्म' धातु को प्राक्षत स्वान्तर 'बादव' होता है, वर्ष कर्मण माये प्रयोग में सरहत घातु 'बारम' के स्थान पर प्राक्षत स्वान्तर 'जादव' ऐसे पातु हर है आदेश प्राप्ति किक्ल से हो जाती है, तथा ऐमी बैकल्पिक आदेश प्राप्ति, होने पर कर्मण माये प्रयोग प्राप्ति किक्ल से हो जाती है, तथा ऐमी बैकल्पिक आदेश प्राप्ति, होने पर कर्मण माये प्रयोग होंगे करें प्रयोग होंगे करें पर 'ईम प्रयोग होंगे होंगे करें पर 'ईम प्रयोग होंगे होंगे करें पर 'ईम प्रयाग पर 'आदव्य' कर्मण पर 'आवर्ष होंगे होंगे होंगे करें पर 'ईम प्रयाग पर 'कारम' के स्थान पर 'आवर्ष होंगे हैंगे हैंगे होंगे होंगे होंगे होंगे हैंगे होंगे होंगे हैंगे हैंगे हैंगे हैंगे हैंगे होंगे हैंगे हैंगे हैंगे हैंगे हैंगे हैंगे हैंगे हैंगे हैंगे ह

हिनह-सिचोः सिष्पः॥ ४-२५५॥

श्रनयोः कर्म-भावे सिष्य इत्यादेशो भवति, क्यस्य च छुरू ॥ मिष्यः । स्निही मिन्यते वा ॥

अर्थ — 'प्रीति करना, स्नेह करना' व्यर्थक मंश्कृत घातु -'स्निह्' के स्त्रीर 'भीवना, प्रिन्ह्ना' व्यर्थक संस्कृत घातु 'सिव्' के स्थान पर कर्मीण भावे अयोगार्थ में प्राकृत रूपान्तर में 'मिन्न' पाउँ हैं

बाक्स मध्ति हाती है, श्रीर ऐसी श्रादेश प्राध्ति होने पर कर्मण-मावे प्रयोग वाचक प्राकृत प्रत्यय म मधना इन्त" का लोप हो जाता है। उदाहरण यों है —(१) ास्तिहचते =सिप्पइ=प्रोति की जाती सेह विया जाता है। (२) सिच्यते = सिप्पइ = सींचा जाता है, छिटका जाता है। यों "स्तिह" श्रीर मन्" दोनों घातुर्श्वा के स्थान पर ''सिप्प'' इस एक ही घातु रूप की श्रादेश प्राप्ति होती है परन्त ों अर्ध प्रसमानुसार सममा लिये जाते है।। ४-२५**४**।।

यहे घेंप्पः ॥ ४-२५६ ॥

ग्रहेः कर्म भावे घेष्प इत्यादेशो वा भनति, क्यस्य च लुक् ॥ वेष्पइ । गिषिहज्जइ ॥

अर्थ - ' महरा कर म, लेना" अर्थक संस्कु धातु 'मह" का प्राकृत रूपान्तर "गिएह" होता है, ेतुकमणि-माने प्रयोग में इस 'प्रह' घातु के स्थान पर प्राकृत भाषा में 'घेष्'' ऐसे घातु रूप की ारेग प्राप्ति विकरण से होती है, तथा ऐसी चैंकल्पिक छादेश प्राप्ति होने पर कर्मणि भावे छर्य बोधक यय 'ईश्र श्रथ्या इब्ज' का प्राकृत रूपान्तर में लोप हो जता है, यों जहाँ पर ''ईश्र श्रथ्या इब्ज'' र्थों का लोप हो जायगा वहाँ पर ''ग्रह'' के स्थान पर ''घेष्प'' का प्रयोग होगा स्त्रीर जहाँ पर ''ई स्र ^{थवा इउज"} प्रत्ययों का लोप नहीं होगा वहाँ पर "प्रह" के स्थान पर "गिएह" घातु रूप का उपयोग यो नायगा । जैसे —गृहचते=चेप्पड स्थयवा *गिण्हिज्जड़* (स्थयवा *गिण्हीअड़*) = पहण किया जाता तिया जाता है॥ ४-२५६॥

स्पृशे शिखप्पः॥ ४-२५७॥

स्पृरातेः कर्म-भावे छिप्पादेशो वा भगति, क्यलुक् च ॥ छिप्पड । छिविज्जइ ॥

अर्थ - "छूना, स्पर्श करना" अर्थक संस्कृत घातु "स्परा" का प्राकृत रूपान्तर "छिव" होता है, ^{्तु कर्मणि}भावे प्रयोग में इम "स्पृश्" घातु के स्थान पर प्राप्टत भाषा में "छिष्प' देने घातु रूप की िरेरा प्राप्ति विकल्प से होती है, तथा ऐसी वैकल्पिक आदेश प्राप्ति होने पर कर्मणा मार्च आर्थ बोघक वय देख अथवा इडन" का प्राकृत रूपान्तर में लोप हो जाता है, यों जहाँ पर "ईश्र अथवा इजज" ^{[म्यों} का लोद हो जायगा वहाँ पर 'स्पृश' के स्थान पर 'खिरप' घातु रूप का प्रयोग होगा स्त्रीर जर्हा ^{र ई}क कथबा इकत' प्रत्ययों का लोप नहीं होगा वहापर 'स्पृश' के स्थान पर 'छिष' घातु रूप का ^{रोत किया} जायना । दोनां प्रकार के दृष्टान्त यो है - स्युरुयते = छिप्पर श्रयना छिपिषजार (श्रयना) र्वेशभः = धूषा जाता है, स्पर्श किया जाता है ॥ ४-२५०॥

श्रप्फुर्स्सादयः शब्दा आक्रमि प्रभृतीना धातुनाम् स्थाने केन सह वा लिक्क त्रफुरको । त्राकान्तः ॥ उक्कोसं । उत्कृष्टम् ॥ फुढ । स्पप्टम् ॥ त्रोलीको । त्रतिकातः । शस् विकसित: ॥ निसुद्दो । निवासित ॥ खुग्यो । रुग्य ॥ निहको । नष्टा ॥ पम्हुरा। ॥ प्रमुपितो वा ॥ निढत्तं । व्यक्तिंतमः । छित्तं । स्पृष्टम् ॥ निमित्रः । स्थापितम् । त्रीस्थ श्रास्वादितम् ॥ लुग्र । लूनम् ॥ जढं । त्यक्तम् ॥ भोमित्र । विप्तम् ॥ निर्द्धः । उद्गरः पन्हत्थ पलोट्ट च ॥ पर्यस्तम् । हीसमण् ॥ हेपितम् । इत्यादि ॥

अर्थ —सस्कृत मापा में धातुचो के श्रन्त में 'तकार'='क' प्रस्यय के जोड़ने म क्मील मृत्रू के रूप बनजाते हैं खीर तत्पञ्चात ये बने बनीये शब्द 'बिशेषण' जैमी स्थिति की प्राप्त कर क्रेंट हैं " सङ्घा शब्दों के समान हो इनक रूप मी ब्रिमिन्न-विमक्तिया में तथा वहनों म चनाय नामक्री जैसे—गम् से गत⇔गमा हुन्ना । मन् ने मत=माना हुन्ना । इत्यादि ।

प्राफ़त-भाषा में भी इसी तरह से कर्मणि भूत-फ़दन्त के, वर्ध में सरकृत मोषा क तुमन घातुष्रों में 'क्त=त' हे स्थान पर 'क्र' प्रत्यय की सयोजन की जाती है। जैसे -गत नापी =गण [प

मत = मधी=माना हुद्या।

त्रानेक घातुओं में 'त = छ' प्रत्यय जोडने के पूर्व हन घातुओं के धन्त्यावर 'श्रवार' ! 'इकार' की प्राप्ति हो जाती है, जैसे —पाठितम्=पाठिअ = पढ़ा हुआ। शुनम्=गुणिश=पुना दुवा यों रूप बन जाने पर इनके श्रान्य रूपभी विभिन्न विभ क्तवों में बनाय जा सरुते हैं।

उपरोक्त सविधान का प्रयोग, किये बिना भी प्राकृत मापा में अनेक शब्द ऐसे हैं जी किति अध्ययों के ही कमीण भूत छद त क अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। ऐसे शन्मों की यह स्थिति वें स्विष् हारें है और ये 'सिपात हो सिद्ध हुए' माने जाते हैं विामल विमक्तियों में तथा दोतों वचने महन शहीन स्दर चलाये जा सकते हैं। ऐसे शब्द 'विशेषण की कोटि' की प्राप्त कर लेते हैं, इन निय ये शर्में नि में प्रयुक्त किये जा सकते हैं। एक प्रकार म ये शब्द 'खाय' जैसे हां हैं।

'व्याकम्' श्रादि सस्टत घातुर्थी के स्थान पर 'क=त=व्य' प्रत्यय सहित प्राकृत में विर्देश से वि घातुओं ने आदेश स्थिति को निपात रूप से प्रहण का है, उन घातुओं में से हुछ एक घातुओं क हा (ही बनाये रूप में Ready made रूप में) नीचे दिये जा रहे हैं । यही इस सूत्र का तात्वर्य है !

⁽१) श्राकान्त = चत्पुरायो=द्रवाया हुत्रा । (२) उत्तरप्रम् = उक्कोसं = उत्तर, क्षविक संविक्ष (३) स्वटम् = फुल=स्पट श्रयवा व्यक्, माफा (१) श्रतिकान्त = बोलीणां = ह्यात हुंचा, बीता हुंबा

⁽५) विकसित = बोसट्टो = विकास पाया हुआ, खिला हुआ। (६) निपातित = निस्ट्रो = गिराबा हुआ। (७) रुग्ण = लुग्गो = मरन, भागा हुन्ना अथवा रोगी, बोमार । (८) तव्द = हिर्हो = नाश पावा हुना।

⁽१) प्रमृष्ट =पन्हुहो=चोरी किया हुन्या । (१०) प्रमृषित = बन्हुहो=चुराया हुन्ना । (११) कर्हिन्म

क्मीण भूत कृदन्त में यों छुद्ध एक घातुओं की व्यक्तियमित स्थिति 'क्यादेश रूप' से जाननी चाहिय। यह स्थिति वैकल्पिक हैं। इस स्थिति में कर्मीण भूत कृदन्त बोघक प्रस्यय 'त≔श्र' घातुओं में पहिल से ही (मह जात रूप से) जुडा हुआ हें। श्रतएव 'त = श्र' प्रस्यय को पुन जोड़ने की भावरंगकता नहीं है। यों ये विशेषणात्मक हैं, इस लिये सज्जाओं क समान ही इन क रूप मी विकित विभक्तियों में तथा बचनों में बनाये जा सकते हैं॥ ४-२४८॥

धातवोधीन्तरेषि ॥ ४-२५६ ॥

उक्तादर्थादर्थान्तरेषि धातवो वर्तन्ते ॥ विलः प्रायने पिडतः सादने पि वतते । इह । सादित, प्रायन करोति मा ॥ एव किलः सख्याने सङ्गाने पि । कलड । जानाति, क्षिम करोति मा ॥ एव किलः सख्याने सङ्गाने पि । कलड । जानाति, क्षिम करोति वा ॥ रिगि गतौ प्रवेशे पि ॥ रिगड । प्रमिश्ति गच्छिति मा ॥ कालने म्प आदेश प्राकृते । मम्पइ । अस्पार्थ । इच्छिति सादित वा ॥ फफतेः थव आदेश । इद्धि नीचा गिति करोति, विलम्प्रयति वा ॥ विलप्पुपालम्प्रयो र्मन्त आदेशः । म्पवड । विलावि, उपालमते भापते मा ॥ एम पिडनालेड । प्रतीचते रचति मा ॥ विचित् किष्दृप । पिति मा ॥ विचित् किष्दृप । पिति मा मानि ॥ विहरइ । प्राप्ति ॥ असुद्वरइ । सहसी भवि ॥ नीहरइ । विषित्वर्षे करोति ॥ विहरइ । प्रमित ॥ आहरु । सादित ॥ पिडहरु । पुन पूर्यति ॥ विहरह । स्वाति ॥ वम्बर्ध । देशान्तर गन्छित ॥ व्याहरू । स्वाति ॥ वम्बर्ध । देशान्तर गन्छित ॥ व्याहरू । स्वाति ॥ वम्बर्ध । देशान्तर गन्छित ॥

गर्थ —प्राष्ट्रत-भाषा में कुछ एक घोतुर्षे ऐमी है, जो कि निश्चित अर्थ वाली होती हइ भी कभी भी भन्य कर्ष में भी प्रयुक्त की जाती हुई देखो जाती है। यों ऐसी घातुर्षे ने श्वर्ष वाली हा जानी हैं, ^{९६} ता निजित कर्ष वाली और दूमरा वैक्टिपक कर्य वाली। इन घानुओं को दिन्धर्यक घानुओं इन इंटि में गिनना चाहिय। कुछ एक उदाहरण यों है —(१) यल्ड-प्राणन करोति अथवा स्वाकृति =

वह प्राण धारण करता है अथवा वह खाता है। यहाँ पर 'बल' घातु प्राण धारण इस हे इस म निश्चितार्थ वाला हाता हुइ भा 'पान' क अर्थ में भाषयुक्त हुई है। (?) करह=सम्यावकर्ण थ्ययमा जानाति=वह श्रावाज करता है श्रयमा वह जानता है। यहाँ पर 'क्ल' पातु श्रावाय हारा अथवा गणना करना अथ म सिनिश्चित होतो हुई भा जानना अर्थ को भी प्रकट कर रही है। मि रिगइ = माविज्ञाति प्रथवा गच्छाति ≈वह प्रवश करता ई श्रववा वह जाता है। वहाँ पर 'रित' कर्ड प्रवेश करने क अर्थ में विर्यात होती हुइ भी जाना अर्थ की प्रवृशित कर रही है (४) संस्थात 'काल' क स्थान पर प्राकृत भाषा से 'वस्क' धातु रूप की खादेश प्राप्ति होती है। यों 'वस्क' धातु हरी यथे पाये जाते हें --एक ता 'इच्छा करना' और दूपरा खाना-भोजन करना । बंध - एएएइअप्री अथवा खाइति = वह इन्द्रा करता है अथवा वह साता है (४) सम्बत धात 'पद्म' क स्थान १९ मार-भाषा में 'थक्क' धातु-रूप का आदेश शाप्त हाकर इसके भी दा अथ देखें जाते हैं (अ) नावे आना और (ब) बिलम्ब करना, ढील करना । इसका कियापदीय चदाहरण इस प्रकार है - यकर-नीवागरि करोति अथवा विलम्बयाति = वह नीचे जाता है अथवा वह विलम्ब करता है वह ढाल करता है (१) प्राकृत घातु 'मत्व' क तीन अब देखे जाते हैं --(अ) विज्ञाप करना, (म) उजहना देना, भौ((व) कहना भोलना । जैसे —झखड़ = (ऋ) विखयाति, (च) उपाष्टमते, (म) भाषते=प्रह विलाप करना है यह चलहना देता है खथमा वह बोलता है-महता है। यो सरमत घात 'वितव खौर उपातम्' र सार पर प्राष्ट्रत भाषा में 'मत्य' घाषु-रूप की स्नादेश-प्राप्ति विकल्प से होती है। (७) 'पहियान' घातु स थर्थ 'प्रवीत्ता करना' है, परन्तु फिर भी 'रत्ता करना' थर्थ मे भा प्रयुक्त होतो है । जैसे -पाईकार-प्रतक्षिते प्रथमा रक्षाति = वह शतासा करता है अथा वह रसा फरता है। याँ श्राकृत-भाषा वे रेस अनेक धातएँ हैं जो कि मैं बलियक रूप स दो दो अर्थों को धारण करती हैं।

प्राकृत भाषा म में भा कुछ घातुमें हैं जो कि चपनमें युक्त होने पर खबने निनित वर्ष में भिन्न खबं को ही प्रकट करती है कीर ऐसी स्थित विकित्य करती है। इस समय में कुछ एक घातुमों के उत्ताहरण यों हें — (१) पहरह=युक्यते = वह युद्ध करता है। वहाँ वर 'हर' घातु में 'प' उप भा जुड़ा हु मा है और निश्चित्र कर्य 'युद्ध करना' प्रकट करता है। वहाँ वर 'हर' घातु में 'प' उप भा जुड़ा हु मा है और निश्चित्र कर्य 'युद्ध करना' प्रकट करता है। है। हम वर्ष वर वर पातु में 'वर वर्षों वर 'हर' घातु में 'स' वरता है। वहाँ पर 'हर' घातु में 'त' वरता है। अक्षार इस क्षेत्र क्षार क्षेत्र क्षार क्षेत्र क्षार क्षेत्र क्षार क्षेत्र क्ष

इति प्राकृत-भाषा-व्याकरण-विचार-समाप्त



अथ शौरसेनी-भाषा-व्याकरगा-प्रारमा

तो दोनादी शौरसेन्यामयुक्तस्य ॥ ४-२६०॥

शौरसेन्या भाषायामनादात्रपदादी वर्तमानस्य तकारस्य दकारो माति, न स् वर्णान्तरेख मधुम्तो भत्रति ॥ तदो पूरिद-पदिञ्जेख मारुदिखा मन्तिदो ॥ ण्वस्मार् । ण्वस एदार्खो । श्रनादाविति किम् । तवा करेध जवा तम्स राइखी श्रखुक्तम्यखीया मापि॥ ह स्येति किम् । मचो । श्रय्य उत्तो श्रममाकिद मकार । इला सउन्तत्ते ॥

अर्थ — खब इस सूत्र-मख्या १-२६० से प्रारम्म कर हे सूत्र मख्या ४-२६६ तह वर्षत है वीस सूत्रों में शोरसेनी भाषा के ज्याकरण का तिचार किया जाया। इस म मून शर सरहा गर्ध हो होगा और उसो शब्द को शौरसेनो भाषा में स्वान्तर करने का सिवान प्रदर्शित दिवा नार शौरसेनी भाषा में खोर प्राकृत भाषा में सामान्यत एक स्ववा हा है, जहाँ अर्हों अन्तर है, उना के को इन सत्तावीम-सूत्रों में प्रश्रीत कर दिया जायगा। श्रेष मभा सवित्रान तथा सान्तर मार्श्व के समान ही जानना चाहिये।

शीरसेनी भाषा एक प्रकार से प्राकृत हो है ज्ञयवा प्राणत भाषा का छन हा है। इन नार्ने वे प्रकार से समानता होने पर भी जो छाति छात्व अन्तर है, वह इन मसाबीम सूर्गे में प्रहिं^{डी} जारहा है। संस्कृत नाटकों में प्राकृत-गद्याश शीरमेनी भाषा में ही सुख्यत लिखा गया है। प्राची^{त ।} में यह मापा सुख्यत मधुरा प्रदेश के छाम पाम में हो बाली जातो था।

सरकृत मापा में रहे हुए 'तकार' क्यञ्जनाल् र के स्थान पर शीरसेंगी मापा में 'र' क्यञ्ज की शांति जन समय में हो जाता है जम कि-(१) 'तकार' क्ञजनाल् वालय के आदि में ही हुआ हो, (२) जब कि वह 'तकार' किनी पर में आदि में भो न हा चार (३) नव कि वह 'तका ह खन्य हतन्त व्यञ्जनाल् के साथ सयुक्त रूप से-(भिते हुए रूप से सिंघ रूप से) भी नवी रही हो तो उस 'वकार' व्यञ्जनाल् र के स्थान पर 'दकार' की शांति हो जाय है। उशहरण इम प्रवार है तत शुरित-पतिल्लने माठितना मन्ति = वदो परित-पित्लने माठितना मन्ति = वदो परित-पित्लने माठितना मन्ति न वदो परित-पित्लने माठितना मन्ति । इस उदाहरण में 'तन' में 'त हा 'द' पूर्ण की हुद प्रतिहा वाले हुए 'तकार' स्वयः में 'वत' में 'त हा 'द' माया है। इसो तरह में 'पृरित, प्रतिनेत, माठिता, मन्तिन ' शारों में मा रहे हुर 'नकार' स्वयः के स्थान पर 'दकार' को स्थान पर 'दकार' के स्थान पर 'दकार' को खादेश मिति को गई है। यो खन्यप्र भी हैने र 'दकार' की स्थार में में सिवि को समम लेना चाहिये।

प्रकृत — 'वाक्य क आदि में अर्थात आरम में गई हुए 'तकार' के स्थात पर 'दकार' को आदेश

प्राप्त नहीं होती है, ऐसा क्यों कहा गया है ?

उत्तर - च कि शौरमेंनी भाषा में ऐसा रचना-प्रवाह पाया जाता है कि सस्कृत भाषा की रचना , का शौरमनाभाषा में रूपान्तर करते हुए वाक्य के श्रादि में यदि 'तकार' व्यञ्जन रहा हुआ हो तो र्वमक स्थान पर 'टकार' व्यञ्जन की स्थादेश प्राप्ति नहीं हाती है। जैसे —तथा फुरुथ यथा तस्य राज्ञ अनुक्रमनीया भवामि (ऋथवा भवेचम्)=तथा करेध जधा तस्त राइणी अणुकम्पणीमा भीमि= प्राप वैसा (प्रयत्न) करते हें, जिसस में उस रोजा की श्रतुक्त्म्या के योग्य (दया की पात्राणा) होती हू (श्रिया होऊँ)। इम चदाहरण में 'तथा' शब्द में स्थित 'तकार' वाक्य क खादि में खाया हुआ है खीर इसा कारण स इस 'तकार' के स्थान पर 'दकार' ब्येंझनाचर को श्रादेश प्राप्ति नहीं हुइ है। या सभी स्थाना पर बाक्य क आदि में रहे हुए 'तकार' व्यञ्जना कर क सम्बन्द म इन साम्धान को घ्यान म रखना चाहिय ।

परन - पद अथवा शब्द' के आदि में रहे हुए 'तकार' को भी 'दकार' की पाप्ति नहीं होती है, ^{[प्}माभाक्यों कहा गया है ?

उत्तर --शौरसेनी भाषा में ऐना 'श्रनुबन्व अथवा सविधान' भी पाया जाता है, जब कि पर ^{क त्रादि} में रहे हुए 'तकार' के स्थान पर 'दकार' का आदेश प्राप्ति नहा होती है जैसे —*तस्य=तस्स* ^{उपना तत} =तहो । इत्थादि । इन पनों के आदि में रहे हुए 'तकार' अच्चर्गे को 'दवार' अच्चर की भार्श प्राप्ति नहीं हुई है, यो अन्यत्र भी जान लेना चाहिये '

पदन — 'सयुक्त स्व से रहे हुए' तकार का भी दकार का प्राप्ति नहीं होती है, ऐसा क्यों कहा पया है।

उत्तर -शौरसेनी-मापा में उमी 'तकार' की 'दकार' की आदेश प्राप्ति होता है, जो कि हलन्त ^{न हो}, तथा किसा श्रन्य व्यक्तनात्तर के साथ में सिलो हुआ न हो, यों 'पृण स्वतन्त्र द्यथवा श्रमुक्त ^{तहार क स्थार पर हा 'दकार' की आदेश प्राप्ति होतों है। ऐमा ही सविधान शौरमेनी भाषा का सम-} हैं। वाहिय। जैम --मत्त = मत्ती = मद वाला अर्थार मतवाला। आर्थपुत = अय्यवत्ती = पति, ^{मत्र}, ष्रथवा स्वामो का पुत्र । हे साखि शङ्गनतले=हला सउन्तले' = हे सखि शङ्गनतना , इत्यानि । इन रिहालों म बर्धान 'सत्त, ब्यार्थ पुत्र, ब्यीर शकुन्तला' शब्दों में 'तकार' मयुक्त हव स-(मिनावट से)-^{'रा हुमा है} और इमी लिये इन सयुक्त 'तकारों' के स्थान कर 'दकार' व्यञ्जनात्तर का चादेश प्राप्ति ^{नहीं} हा सकता है । यहाँ स्थिति मर्वत्र ज्ञातम्य है ।

वृत्ति में 'असम्माविद्-सकार' ऐमा उदाहरण दिया हुआ है, इसका मस्कृत रूपान्तर 'अमस्मावित महार' ऐमा होता है। इस बदाहरण द्वारा यह घतलाया गया है कि 'प्रथम तकार' क स्थान पर ता

'दकार' की प्राप्ति हो गई है, क्योंकि यह 'तकार' न तो वादय के ब्राटि में हे ब्रौरन पर इहारा है है तथान यह हलन्त व्यथवा सयुक्त ही है और इर्ही कारणों से इम प्रथम तकार के स्थान पर देशर की स्थादेश प्राप्ति हो गई है। जब कि द्वितीय तकार हलन्त है स्थीर इसोलिये मुत्र मख्या र उठ में न हलन्त 'तकार' का लोप हा गया है। यों सयुक्त 'तकार' की व्यथवा हलन्त तकार की स्थिति शीर भाषा में होती है। इस बात को प्रदर्शित करन के लिये ही यह 'असम्भाविद-सकार' दशुक्षत हु'वर दिया गया है, जो कि स्नास तौर पर घ्यान देने के योग्य है। इस प्रकार संस्ट्रताय तहार हो दि शौरसेनी मापा में 'दकार' की स्थिति में बदल जाती है, यहीं इम सूत्र का तात्वर्य है।। ४-२६०॥

अधः क्वचित्॥ ४-२६१॥

वर्णीन्तरस्याधी वर्तमानस्य तस्य शौरसेन्या दो भन्नति । बनविष्ठस्यातुमार्षे महन्दी । निचिन्दी । अन्देउर ॥

अर्थ -यह सूत्र उपर बाले सूत्र मख्या ४-२६० का अपवाद रूप गुत्र है, क्यों कि व्य में यह बतलाया गया है कि सबुक्त रूप मे रहे हुए 'तकार' के स्थान पर 'दकार' का वाप्ति नरी होगाँ किन्दु इस सूत्र में यह कहा जा रहा है कि कहाँ नहीं ऐसा भी देखा जाता है जब कि मयुक्त रूप म ॥ हुए 'तकार' के स्थान पर भी 'दकार' की प्राप्ति हो जाती है, परन्तु इसम एक शर्त है वह यह है कि स्प्र तकार हुलन्त व्यञ्जन के परचात रही हुआ हो। यहाँ पर 'परचात' स्थिति का अब बीपक शहर करने लिया गया है। वृत्ति का सित्तार स्वर्श करण वों है कि-'किसी हलन्त व्यञ्जन के वरवात स्वयात स्वर रूप से बहे हुए तकार के स्थान पर शौरसनी-भाषा में 'दकार' की त्रादेश प्राप्ति ही जाया करता ('यह स्थिति कभी कभी श्रीर कहीं कहीं पर ही देखी जाती हैं इसी तात्वर्यको युक्ति में 'लह्या] ^{मारने} पर में सम्काया गया है चहाहरण इन प्रकार है [? , महान्त =महन्दी=सबसे पदा परम उरहाति, निश्चिन्त'=निरिचन्द्रो=निश्चिन्त। [#] अन्त पुर=अन्द्रे उर=रानियों का निपास स्थान। स्व^{हर्} उदाहरणां में 'न्त' व्यवयव में 'तकार' हलन्त क्य≂जन 'नकार' क साथ में परवर्ती झकर संयुक्त ^{हन ह} रहा हुआ है और इमा लिये इस सुत्र क आधार से उक्त 'तकार' शीरसेनी भोषा में 'दहार' करन है परिणत ही गया है। यह स्वष्ट रूप से च्यान में रह कि सूत्र सख्या ४-२६० में ऐसे 'तहार' ही 'एडार (स्थिति' का प्राप्ति कानिपेथ कियागया है। इस्त व्यविकृत सूत्र उक्त सूत्र का अपवार रूप सूत्र है। 11 8-468 11

बादेस्तावति ॥ ४-२६२ ॥

शीरसेन्याम् तावरहरू दे झादेस्तकारस्य दो वा भवति ॥ दाव । ताव ॥

कर्य —सस्कृत भाषा के 'तावत्' शब्द के श्रादि 'तकार' क स्थान पर शौरसेना भाषा में विकल्प कार' की श्रादश प्रक्ति होती हैं। जैसे *—तावत् = दाव* श्रयवा *ताव=*तव तक ॥ ४-५६२॥

त्रा त्रामन्त्र्ये सौ वेनो न: ॥ ४-२६३ ॥

शौरसेन्यामिनो नकारस्य श्रामन्त्र्ये मी परे त्याकारो वा भवति ॥ भो कञ्चुडया । ग । १वे । भो तबस्सि । भो मणस्मि ।

अर्थ—'इन्' अन्त बाले शन्दों के अन्त्य हलन्त 'नकार' के स्थान पर शोरसेनी मापा में मबो-शवक प्रयथ 'सु' परे रहते पर 'आकार' को आन्श प्राप्ति विकल्प मे हो जाती है। जैसे — ह कन्तु दिन् !=भो कन्नु उना अथवा भो कन्नु ह=श्रदे अत पुर के चपरामी ! [२] हे सुखिन = श्रिश अथवा भो सुहि!=हे सुख बाले ! [२] हे तपिन =भी तमितिका अथवा भो तमितिका श्रिशं करने बाले । हे मनिरु न् =भो मणितिका अथवा भो मणिति !=हे विचारवान् ॥ याँ रि'कस्थान पर मबो न के एक वचन में विकल्प से आकार को आदेश प्राप्ति हो जाती है। तर में 'आ' का लोप हो जायगा ॥ १-२६४ ॥

मो वा॥ ४–२६४॥

शौरतेन्यामामन्त्रये मौ परे नकारस्य मो वा भारति ॥ भी राय । मो विद्यय वर्म्म । मैं । भय कुतुमाउह । भयवं ! तित्य पत्रत्तेह । पत्ते । मयल-लोय-श्रन्ते स्थारि भयव है॥

भर्यः—मयोधन के एक वचन में 'तु' प्रत्यय परे रहने पर शौरसेनी मापा में सस्हतीय नकारान्त ों क खर्य हलन्त 'नकार' का लोप हो जाता है, सबोबन वाचक प्रत्यय का भी लीप हो जाता है : लोप होनेवाले न कार के स्थान पर विकल्प से हल त मकार की प्राप्त हो जाती है। यो शौरसेनी । में तकारान्त शर्मों के सबोधन के एक वचन में दो रूप हो जात हैं, एक तो मकारान्त रूप वाला थीर दूमरा मकारान्त रूप रहित पद । जैसे —हे राजन्! = भो राय खयवा भो राय-हे राजा! वेचय-वर्भन्!=भो विश्वय वस्में। खयवा भो विश्वय वस्मा = हे विजय-वर्मा। हे सुक्यम्यः विश्वय-वर्भन्!=भो विश्वय वस्में। खयवा भो विश्वय वस्मा = हे विजय-वर्मा। हे सुक्यम्यः विश्वय-वर्भन्। = भो विश्वय वस्में। खयवा भो विश्वय वस्मा = हे विजय-वर्मा। हे सुक्यम्यः विश्वय-वर्भन्। = भो विश्वय वस्में। खयवा हो बाले। हे सम्यान कुलु मायुध = भो मयव खयवा विश्वय-वर्मा अथवा भो सुक्यमः = हे खब्दे कर्मी वाले। हे सम्यान कुलु मायुध = भो मयव खयवा विश्वच कुलु मायुत्व । श्वया (खाव) तोर्थ की प्रश्नुत्व करो। हे सकल् -लोप-अतन्य वारिन्। भगवर! विश्वच न स्थल-लोश-अन्ते आसि भयव। हुक्लु चित्र स्थायन के एक बचन में नकारान्त सम्यो कित्र न दाहराखों में यह सत ब्यक्त किया गया है कि सबोधन के एक बचन में नकारान्त राम्सें कित्र नहार के स्थान पर मकार की प्राप्ति। वद्युनार मृत सन्या १-२३ से छनुस्वार की प्राप्ति। कित्र से से होते हैं ॥ ४-२६४॥

इह-हचोईस्य ॥४-२६=॥ 😘 🕫

इह शन्द संवधिनो, मध्यमस्येत्या-हचौ (३-१४३) इति विहितुस्य इंतस्र इद्यार शौरसेन्यां धो वा भवति ॥ इध । होघ । परिचायध ॥ पद्मे । इह । होह । परिचायह ॥

अर्थ-सर्छेत शब्द "इह" में रहे हुए "इकार" के स्थान पर शीर सेनी प्रापा में किसर। "धकार" की आदेश प्राप्ति होती है। जैसे -- इह = इध अययों इह = यहा पर सूत्र सक्या ३-१४१ : बतमान काल-बोधक सप्यम-पुरुष-वाचक बहु बचनी प्रत्यव "दृष्या और ह" वहें गये में तत्तुनार ए "इकार" प्रत्यय के स्थान पर भा शौर सेनो मांपा में वित्रवर से "वकार" कर प्रत्यत की आरेत में होती है। यों "इकार" के स्थान पर विवत्य से "धकार" की आदेश-प्राप्ति जानना पारिये । कें १ अयथ होध अथया होह = तुम होते हो । (२) पोरितायध्ये =परितायध्य अथवा पत्तिष्य = मेरज्ञ करते हो अथवा तुम पीष्ण करते हो ॥ ४- ६- ॥

भुवो भः ॥ ४-२६६ ॥

मवते ईकारस्य शारसेन्यां मो वा मनति ॥ मोदि होदि सुवदि, हुवदि ॥ मवदि, हवरि

अर्थ — सर्वत-भाषा में 'होना' अर्थक भू = मर्ब भी हु है, हैं के 'मर्ब पातु के क्षांत वर प्रत्य भाषा में सूत्र सरवा ४-६० स विकल्प से 'हव' 'हो' और हुव' घातु हुवें का आदेश वाित हाि वर्त्वतार इन आदेश प्राप्त 'हक्त, हो और हुव' घातु हुवें में स्थित 'हक्तर' के स्थान पर शी सन मां में विकल्प से 'मकार' को प्राप्ति होता है और ऐसा होने पर हव का मय, हा का मा तथा हव श मुं विकल्प से हो जाता है। जैमे — भयाति = (१) मोड़ि, (२) होिड़, (३) भ्रयहि, (४) हुवी (४) भ्रयहि और हिन्दी होता है।

सूत्र-सख्या ४ २७३ से वर्तमानकाल वाचक हुनीय पुरुष योधक एक वर्जनीय पृत्य पृत्र । स्थान पर दि की प्राप्ति होती है, जैसा कि ऊपर के उदाहरणों में बतलाया गया है। स्थानक द्वियान में यह स्थान म रखना चाहिये॥ ४ २६६॥

पूर्वस्य पुरवः ॥ ४-२७०॥

शीरसेन्यां पूर्व शन्दस्य पुरव इत्यादेशां या मवति ॥ अपुरव नाडय । अपुरवारा बच्चे । अपुरुव पर्द । अपुरुवारादे ॥

क्षर्य —मश्कृत शब्द पूर्व' का प्राष्ट्रत स्पान्तर 'पुडव होता है। यर हु शीरसेनी मापा में 'इ' शब्द क स्थान पर विकस्प से 'पुरव' शब्द की स्थादेश शक्ति होतो है। यो शीरसनी सापा में 'इंब

रौरसेनी भाषा सबधी 'पुरब' छौरु 'पुन्व' रान्दों के चदाहरण कम से इस प्रकार हैं ─(१) एंम नाटकम् = अपुरवं नाडचं अथवा अपुन्व नाडचं = श्रनीखा नाटक, अद्भुत खेत। (२) वह अगवस् अपुरवागद अथवा अपुन्वागद = श्रनीखी औषधि श्रथवा धद्भुत द्वा। (३) विष पदम् = अपुन्व पद श्रथवा अपुरव पद् = अनोखा पद, अद्रश्चत शब्द। इत्यादि ॥ ४ २००॥

. इत्व इय-दूर्णो ॥ ४-२७१ ॥

शीरसैन्या कत्वा प्रत्मयं स्य इयं दूख इत्यादेशी वा भवतः ॥ भविय, भीद्र्ण । इविष, [ख । पढिय, पढिदूंण । रिमर्य, पन्दूंण । पन्ने । भीचा । हीचा । पढिचा । रत्ता ॥

अय — अप्ययी रूप सम्बन्ध भूत कुद्दन्त के अर्थ में सस्कृत-भाषा में घातुओं में 'क्रवा=स्वा' या का योग होता है। ऐमा होने प्र धातु का अय करके' अर्थु वाला हो जाता है। जैमे — साकरके कर इत्यादि। शीरसेनी माषा में इसी सबध भूत कुद्दन्त के अर्थ में सस्कृतीय प्रन्यय 'त्वा' के स्थान विकल्प स 'इय अथवा दूण ऐसेन्गे प्रत्ययों की आदेश-पालि होती है। वैकल्पिक पत्त होने से मन्दर में सस्कृतीय प्रस्थय 'त्वा' के स्थान पर सूत्र सख्या २०६ में तथा २ =६ स 'ष्' का लोप होकर च चा' की प्राप्ति होती है। वैकल्पिक पत्त होने से मन्दर में कि प्राप्ति होती है। वैकल्पिक पत्त होने से मन्दर में कि प्राप्ति होती है। वैकल्पिक स्थान पर स्थान पर स्थान पर स्थान कर दिया विदेश होने स्थान स्थान स्थानित कर दिया विदेश होने स्थान मार्थिक स्थान स्थान

कृ-गमो डह्ययः॥ ४-२७२॥

आस्या परस्य करता प्रत्ययस्य हित् अडुश्र इत्यादेशीया भवति॥ कडुश्र । ^{अ। पद} । करिय । करिद्यान्। गच्छिय गच्छित्य ॥

अर्थ — नास्त्रत बातु 'फ = कर्रना' और 'गम् = गण्झ् =जाना' के समय सत छ्दन्त के रूप शीर-व भाषा में बनाना होना सूत्र सरवा ४ २०१ में वर्धिन प्रत्य 'इय, दूण और त्ता' के खिटिश्क विकल्प हिंदुध-कड्ड्य' प्रत्यय को भी खादेश जारित होता है।' 'छ दु ख' प्रत्यय में खादि 'इ' इन संज्ञा शित में 'क्' धातु के खन्त्य स्वर 'तर' का और 'गभ्' धातु के खन्त्य वर्ष 'धम्' का लीप हो जाता प्रव त्रस्थात शप रहे हुए पातु खश 'क्' और 'ग' में क्रवा=त्या=व्यर्थक 'खडुक' प्रत्यय को भी भिर में स्वोतना की जाती है। ज़ैसे — क्रत्या = क्रदुअ=करके। वैकहिषक पत्र होने में पद्मान्दर में

Ιr

दूराल = दूराडु = दूर मा शाकुत भाषा में पत्रमी विभक्ति के ण्कत्रचन में सूत्र मत्या १- में फे, हुन्हु हि, हिन्तों और लुक्' ऐसे छह प्रययों की छादेश प्राप्ति होती है, हिन्तु शौरमेनी माधा मा 'क्रा कोर छादु' ऐसे दो प्रथयों को ही छादेश प्राप्ति जानना चाहिये ॥ ४ २७६॥

इदानीमो दागि॥ ४-२७७॥

र्शीरसेन्यामिदानीमः स्थाने दाणि इत्यादेशो भवति ॥ श्रनन्तर सर्खीरं रे श्राण्वेदु श्रव्यो ॥ व्यत्ययात् प्राकृते ऽपि । श्रन्नं दाणि गोहिं ॥

अर्थ — सस्कृतीय खन्यय 'इटानीम' क स्थान पर शौरसेनो माया में क्वस 'दाणि' ऐम छपः की खादेश प्राप्ति होती है। जैसे —अनन्तर करणिय इट्टानीम् आज्ञाययन् हे आपं ! अनन्तरार दाणिं आणिट् अच्यो = हे महाराज ! ख्रव खाव इसके बाद में करने योग्य (कार्य का) होति माये । प्राष्ट्रत भाषा में 'इट्टानीम्' के स्थान पर तीन शब्द रूप पाये जाते हें — (१) एणिट्र. (१) ए

प्राकृत मापा में ऐसा मविधान पाया जाता है कि महित-भाषा के शहरों में रहे हुए हमें खबबा व्यव्जानों का परस्पर म 'व्यत्यव' अर्थात आगे का पोछे और पीछे का जागे हो कर सहाजक प्राकृतीय यन जाते हैं। जैसे —अन्य इदानीम् चो। धिम = अन्य प्रार्थि चोहिं = खब दूनरे का गुढ़ ज्ञान को (बोधिको) (समभाको ।।। ४ २००॥

तस्माताः ॥ १-२७=॥

श्रीरसेन्या तस्माच्छन्दस्य ता इत्यादेशो भन्नति ॥ ता जान पविसामि । ता एदिखा माखेख ॥

अर्थ — 'वन कारण में' ख्रयवा 'वनसे' खर्य के मम्बृत वह तरमात् के स्थान वर स्थेमन में 'ता' राहर रूप को खादेश प्राप्ति होतो है। जैसे — तरमान यायव प्रविशानि ≈ ता जाव परिवार है के का स्थाप में तुप तक में प्रवेश करता हैं। तम्मान् अरुम एतेन माने र का अरु एईचा कांदि कारख में इम मान में (ख्रिभमान में) — ख्रय यम वरी ख्रयात् छव ख्रिमा व स्थाप वर्ष 'ता' राहर का खर्थ ख्यान में रखना चाहिये॥ ४ २०८॥

मोन्त्याएगो वेदे तो. ॥ ४-२७६ ॥

शौरसेन्यामन्त्यानमकारात् पर इदेवो परयोर्णकारागमो ना भनति ॥ इकारे । जर्चi. ज्रच मिर्ण । सरिस श्विम, सरिसमिर्ण । एकारे । किंग्येद किमेद । एव ग्रेद एउमेद ।)

अर्थ - शौरसेनी भाषा में यदि शब्दान्त्य हलन्त 'मकार' हो और उस हलन्त मकार के आगे 'इकार अथवा एकार' हो तो ऐसे 'इकार अथवा एकार' के माथ में विकल्प से हलन्त 'शकार' की गम प्राप्ति होती है। इकार और एकार सम्बन्धी खदाहरण इस प्रकार क्रम से हैं —(१) सुक्तम् इद्म इत ाणम खथवा ज़त्तामिण=यह (बात) सही है। (२) सहश इदस=सरिस णिम खयवा सरिसामिण गह समान--(एक जैसा है) इन दोनों उदाहरणों में 'इम. के स्थान पर 'शिग' की प्राप्ति हुई है, यो ार' में 'गुकार' को श्रागम प्राप्ति को समभ्र लेना चार्ह्य। यह श्रागम प्राप्ति वैंकल्पिक है, अब र्गिय 'इस्त' के स्थान पर सिएल की शांति नहीं हुई है । 'ए∓ार' सबधी उदाहरस यों हें—(१) किं एतऌ= ेणेरे अथवा किमेद = यह क्या है ? (२) एवं एतत्=एव णेद अथवा एवमेद = यह ऐसा ई । इन उदा-र्णों में 'एर' के स्थान पर विकल्प से 'रोट' रूप की प्राप्ति हुई है, यो 'एकार' में 'णकार' की व्यागम-^{दित को} विकल्प से जान लेना चाहिये ॥ ४-२७६ ॥

एवार्थे य्ये व ॥ ४–२८० ॥

एवार्थे रचेत इति निपातः शौरसेन्या प्रयोक्तन्यः ॥ मम रचेत्र तम्मणस्म । सोरपेत n fi

अर्थ — 'निश्चय वाचक' संख्त-ग्रह्यय 'गव' क स्थान पर छथवा 'एय' के धर्य में शीरसेनी-था में 'रवेद' छाब्यय रूप का प्रयोग (क्या जाना चाहिये। जैसे —(१) मम एव ब्राह्मणस्य=मम-^{ाव वस्}मणस्त=मुक्त ब्राह्मण काही। (२) स एव एप ≔ सो य्येष एसी=वह ही यह है। यों इन दोना ीइम्णों म'एव'कस्थान पर रथेव'की प्रास्ति हुई है ॥ ४- ⊏० ॥

हञ्जे चेट्याह् वाने ॥ ४-२८१ ॥

र्गारसैन्याम् चेट्याह्वाने हुञ्जे इति निपातः प्रयोक्तव्यः ॥ हत्रने चदुरिके ॥

अर्थ - *।सो को मधोधन करते समय में श्रथवा बुलाने के समय में शौरसेनी भाषा में 'हर्ने' ^{१६५२ ६}। प्रयोग किया जाता है। जैसे—अरे ! चतुरिके '= हड़जें चटुरिके '= धरे पतुर दासी [।] धर ^{[दिमान} दामो ॥ ४ २८१ ॥

हीमासहे विस्मय-निर्देटे ॥ ४-२८२ ॥

धारम्म करके सूत्र सम्या ४ २०४ के धन्तर्गत प्रदेशित कर दिया गया है और गेर समा विषम आन् भाषा के समोन ही जानना तदनुमार सूत्र सख्या १-४ से प्रारम्म करके सूत्र नदया ४ २१६ तह । विधि विधानों को शौरमनी-माषा के लिये भी कहियत कर जाना । यो प्रत्येक सूत्र में प्रदेशित पीरन सीमा प्राकृत भाषा के लिये हैं यैसा ही शोरसेनी भाषा के लिये भी स्वयमेव सम्मा लेना नात्वि ।

शीरमेनी मापाका मूल आधार प्राष्ट्रत मापा ही है और इसीलिय सरहत भाषा माप्टर मर भी तुलना करने में जिन नियमों का तथा जिन विधि विधानों का मुयोग एव प्रदर्शन किया जाता। उन्हीं नियमों का तथा उन्हीं विधि विधानों का प्रयोग एव प्रदर्शन भी शीरसेनी मापा के निय क्षित्र मकता है। सूत्र-सर्द्या ४-२६० से ४-२८३ तक में विधित भिन्नटा का स्वरूप स्वयमेव प्यान में अपन चाहिय। बुद्ध एक दशहरया था हैं—

मम्कृत	प्राष्ट्रत	1-	शौरसेनी	हिन्दा
चान्तर्घदि =	श्चन्तावेई =		श्रन्तापेश =	्रमध्य की बरिका
बुवति—जन =	जुबइ धणो =	,	जुवदि—जणो =	, अयात स्त्रानुश
मन शिला=	मणमिला =		मणमिला =	मैन शोल एक प्रशा

यों प्राष्टत माया के कोर शौरसेनी भाषा य एक ही जैसे शन्तों में पूर्ण साम्य होते हुए मो तो या किंदि कन्तर दिखलाई पड़ रहा है उसका सभाषा ≀ सूत्र संख्या ४२६० से लगाकर सुत्र मंदया ४ ८४ ८४ वर्णित विधि विधानों से कर लेना चाहिये । शेष सब कार्य प्राष्टत के समान ही जातना ॥ ४२६६ ॥

इति शाँरसेनी-भाषा-विवरण समाप्त



अथ मागधी-भाषा व्याकरण प्रारम्भ

अत एत सी पुंसि मागध्याम् ॥ ४-२=७॥

मागध्या भाषायां सौ परे व्यकारस्य एकारो भवति प्र मि प्रक्लिंगे ॥ एप मेपः । (एशे) रो । एरो प्रस्तिरो ।। करोमि भदन्त । करेमि भन्ते ।। अत इति किम् । सिही।कस्ती । गिली ॥ ्सीति किम् । जल् ॥ यद्वि "पोराण मद्ध-मागह-भासा निषयं ह्यह सुत्त " इत्यादिनापंस्प ।र्थमागध भाषा नियतत्त्रमाम्नायि वृद्धै स्तदपि प्रायोस्येत् विधान्त बच्चमाण सचणस्य ॥ .यरे श्रागच्छइ ॥ से तारिसे दक्यसहे जिइन्दिए । इत्यादि ॥

अर्थ --मागधी मापा में श्रकारान्त पुल्लिंग में प्रथमा विभक्ति क एक बचन में "सु" प्रत्यय क थान पर थन्त्य ''श्रकार'' की ''एकार'' की प्राप्ति हो जाती है। जैसे —एप मेप = ण्शे मेशे≍यह मेड़। ^{3हर = एशे} पुलिशे = यह खादमी | कशेमि भदन्न = करेमि भन्ते=हे पुरुष ! मैं करता हैं। इन चदाहरणों ^{में प्रथमा} विभक्ति के एक वचन में और सबोधन के एक वचन में "एकार" की श्वित स्पष्टत प्रदर्शित की गई है।

परन — 'श्रकारा त' में ही प्रथमा विभक्ति के एक वचन में 'एकार' की स्थिति वर्यों कही गई है ? उत्तर - जो शब्द पहिलग होते हुए भी खकारान्त नहीं हैं, उनमें प्रथमा विभक्ति के एक बचन में पाप्तस्य प्राचय 'सु' क स्थान पर ''एकार'' की प्राप्ति नहीं पाई जाती है इसलिये श्रकारान्त के लिये ही ऐना विधान किया गया है।

उदाहरण कम से इस प्रकार हें -(१) निाध = णिही-राजाना () करि = करी = हायी (१) गिरि:=गिली=पहाइ इत्यादि । इन चदाहरणों से झात होता है कि ये इकारान्त हैं इ शिलये इनम ^{म्यमा} विभक्ति के एक ज्ञचन में प्राप्तस्य प्रत्यय ''सु'' के स्थान पर ''एकार'' की प्राप्ति नहीं हुई ई, यो पन्यत्र भी जान लेना चाहिये।

महन -पुल्लिग में हो "एकार" की प्राप्ति होती है, ऐसा भी वर्धों कहा गया है ?

उत्तर — जो शब्द ऋकारान्त होते हुए भी यदि पुल्लिंग नहीं हैं तो उन शब्दा में भी प्रयमा विमहित के एक वचन में प्राप्तब्य प्रत्यय 'सु'' के स्थान पर 'एकार' की प्राप्ति नहीं होगी। जैसे — ^{सरम्=जल=}पानी । इस दशहरण में ''जल' शष्द श्रकारान्त होते हुए मी पुल्लिंग नहीं होकर नपु मक निंग बाला है इसलिये इस शब्द में प्रथमा विभावत के एक बचन में "जले" नहीं हो कर "जले" रूप ही क्ता है। यों चन्य अकारान्त नपुसक लिंग वाले शब्दों के मबच में माबह सात च्यान सें रखी जानी पाहिये।

श्रापं वादो युद्ध पुरुषों को एमी मान्यता है कि "अर्घ मागधी" माप सुनिधित है, काल पुरानी है और इसिलिय इसक नियमों का विधान करने की खावरवक्षा नहीं हैं यह बात करेश विद्यान करने हैं और इसिलिय इसक नियमों का विधान करने की खावरवक्षा नहीं हैं यह बात करेश विद्यान करने हैं और उन्हों के अनुकून नियमों का निर्धारण करने हैं जो कि काम माग माधा का विधान करने हैं और उन्हों के अनुकून नियमों का निर्धारण करने हैं जो कि काम माग माधा का नियम में उपलब्ध हैं, अब पुराख वादियों के मत से अतिकृत बाव का विधान नहीं दिया बार हो है जैसे — कतर आगन्छति — क्यरे आगन्छड़ = हो में में कोन आता है (२) सताहरा इसाह कि निरिय — से तारिस इक्सिस जिझन्दिय-वह जैसा इत्रियों को जातने याला है बैसा हा हु में भी सहन करने वाला है। इन उदाहरकों में यह प्रश्तित किया गया है कि जा पर अगाहत पुरिन्य का भी सहन करने वाला है। इन उदाहरकों में यह प्रश्तित किया गया है कि जा पर अगाहत पुरिन्य का ई के समा प्रमा विभक्ति के एक बचन में सु अत्वय करधान पर प्रशार की हो प्राप्त पर्रित का गई है, यों 'अर्थ-मागर्था' माथा में ववलटर रत्रहव का हा समर्थन किया गया है और इसा हा पुष्ट कि हो है सस्त्र का निर्माण किया गया है। यों प्राचीन मान्यवा को हो सरक्षण प्रदान किया गया है। अत इसमें विशेष का प्रदान किया गया है। सह मा का प्रस्ति है सम स्त्र का निर्माण किया गया है। यों प्राचीन मान्यवा को हो सरक्षण प्रदान किया गया है। अत इसमें विशेष का प्रदान कि नहीं है।। ४--द्या

र-सोर्ल-शी॥ ४-२८८ ॥

मागध्या रेफस्य दन्त्य सकारस्य च स्थानं यथा सर्य लकारः तालव्य शहार्य भवि ॥ र ॥ नले । कले ॥ स । हरो । शुद्र । शोमण् ॥ उमयो । शालगं । पुलिशं ॥

> लदश प्रग-नमिल शुल-जिल त्रियलिट-मन्दाल लागिद्दियुगे॥ बील-थियो पक्सालद् मम शयलम वरण-पम्पाल॥१॥

जर्थ —मागवा माया में रेकस्य 'रकार' के स्थान वर और दास्य सकार' के स्थान वर बन में 'लकार' और वालस्य 'राकार' की प्राप्ति का नातो है। उदाहरण इन प्रकार में 'राकार' के प्राप्ति का वदाहरण —नर = "जन्मनुष्र। कर =कले =हाय। 'मनार' में 'राकार' की प्राप्ति का वदाहरण —हर = देने =हन पंछी। सुतम = गुरं =लक् के का। सोमनम् = ग्रोमण = गुन्दर। यहे एक से पद में से 'सकार' चा जांव तो भी उन नोती मकारों क स्थान वर 'राकारी' को प्राप्ति की प्राप्ति

" फिनर सुत्र की पूर्वित में जा गाया बद्धून का गई है जमम यह बत्साया गया है कि सागर्य साथ में रकारों के स्वान वर किकारों की, सकारों के स्वान वर 'राकारों की, तकारों के ब्वान वर 'एसार्य की, 'जकारों में स्थान वर सकारों की चीर को महत्तक बद्धून में स्थान वर दिख्य क्यों का सम स्थान में जातो है तथा वसमा विस्तिक में जाकारान्त का स्वान वर गणाशानों की चारेग पानि हा नाला है।

अर्थ — भक्ति के कारण वेग पूत्रक कुकते हुए देवताओं के मस्तकों से गिरते हुए सन्दार जाति के अरु फुबो से जिनके दोर्जाचरण शोमायमान हो रहे हें, पेम भगवान महावोर जिनेश्वर मेरे सम्पूर्ण भाष की मैतको अथवा कीचड ना प्रजालन कर दे अथवा दूर करहें।

उपरोक्त वर्षा परिवर्तन खथवा वर्षा श्रादेश का स्वरूप का से बतला निया गया है, जो कि प्यान इन गाय है ॥ ४ २८८ ॥

स-पो॰ सयोगे सोऽप्रीष्मे ॥ ४-२८६ ॥

मागध्या सकार पकारगोः मयोगे जतमानथोः मो भनति, त्रीष्मशब्दे तु न भन्नति । उद्यक्तीषायग्नादः ॥ स । पक्सज्ञदि हस्ती । बुक्ष्यदी । मस्कली । विस्मये ॥ प । शह्क-रातु । कस्ट । निस्तु । शस्य-कन्नते । उस्मा । निस्कल । धनुस्यवड ॥ श्रग्नीष्म इति किम् । गिम्ह वाश्ले ॥

परन -- 'माध्म' शब्द मे रहे हुए हुजन्त पकार' की हनन्त 'स कार' की प्राप्ति क्यों नहीं हुई ई ?

उत्तर -चू कि सस्टत भाषा में उपलब्द 'माध्य' शब्द का रूपान्तर भाषधी माषा में 'गिन्ह' हो देवा नाता है, इमिलये प्रथ कर्तों को भी 'प्रोध्म' शन्द में रहे हुए हलन्त 'वहार' के निये उपरोक्त नियम के प्रतिकृत विषान करना पढ़ा है। इपका उदाहरण इस अकार है --प्रोध्म यासर वार्मिट पाटा है = में प्रश्नुका दिन । यों 'प्रोध्म' का क्यान्तर 'गिन्ह' हो जानना ॥ ४ -=६॥

Fल=निश्चय ही छान । (३) *विद्यापर =भागत = विय्याहले आगदे =* विद्यापर (देवता विशेष) न्नाग्या है ।। 'य' के जगहरण -(४) याति=यादि जाता है । (२) यथासस्पम्=यधा झलूय=समान रूप । भाग । (३) यानवर्तम् = याणवत्त = वाहन विशेष का होना । (४) याति = विद = मन्यासी ॥

इसी व्याकरण के प्रथम पाद में सूत्र मख्या २८४ में 'ख्रादेशीत ' के विधानानुसार यह बतलाया या है कि संकत भाषा के शब्दों में यदि आदि में यकार' हो तो उसके स्थान पर 'जकार' की प्राप्ति हो शंता है, इस विधान के प्रतिकृत मागधी भाषा में बनार' कस्थान पर 'बनार ही होता है, 'जकार' ार्रे होतो है, ऐमा बतलाने के लिये हा इस सूत्र में 'ज और 'दा' क माथ साथ 'य भी लिखा गया है। ही कि ध्यान में रखने के योग्य है। यों यह सूत्र उक्त सूत्र मटया १ २४५ के प्रतिकृत्त है अयवा अपवाद वहरु हे, यर मा कहा जा सकता है। जैसे — यति ≔यदी ≕ माघ ध्ययता सन्यासी॥ ४ २६२ ॥

न्य-गय-ज-इजां ज्ञ ॥ ४-२६३॥

मागध्या न्य एय-ज्ञ-ञ्ज इत्येतेषा द्विरुक्तो जो भवति ।। न्य । श्रहिमञ्ज कुमाले । श्रञ्ज-[रा । शामञ्ज गुले । ऋञ्जका-प्रलुख ॥ एव । पुञ्जपन्ते । श्रवम्हञ्ज । पुञ्जाह । पुञ्ज ॥ छ । ञाविशाले । शब्दक्ते । अपक्ता ॥ क्त्र । अनुजली धण्जुनए । पन्नले ॥

अर्थ -- सत्कृत भाषा क शब्दों में रहे हुए 'न्य, एय, इ, ब्ज के स्थान पर मागधी भाषा में द्विय न्त्र' की प्राप्ति होतो है। जैसे—'स्य' कि उदाहरसा —(१) आभिमन्यु-फुमार =अहिमञ्जकुमाछे= मुंन नामक पाइव का पुत्र । (१) अन्य दिशम् = अठठा दिश = दूमरी दिशाको । (३) सामान्यगुण = ^{गम्ळ}गुणे = माघारण गुण । (४) कन्यका *चरण=क्छलका चरुण* = पुरो की सगाई करने मन्यन्यो भिन्न विशेष ॥ 'एय' के उदाहरण —(१) *पुण्ययनन = पुञ्जवन्ते =* पुष्यवाले, श्वच्छे क्मीं वाले । (१) निद्मण्यम्=अवम्हञ्ञ=बाह्यण के श्राचनम् करने के योग्य नहीं। (३) पुण्याहम =पुञ्जाट=श्राशी-विद्योर (४) पुण्यम = एक्ज = पवित्र काम, शुभ कार्य । 'झ' के चदाहरण —(१) प्रज्ञाविद्याल = ञ्जाविज्ञाने = विशान बद्धि बाला । (२) सर्वज्ञ = हायवञ्जे = मन पुत्र जानने वाना। (१) ^{विता}=भवञ्जा ≅ित रस्कार, खनादर । 'कन' क उदाहरण —अञ्जलि =अञ्जली = हेवेनी से निर्मित ि विशेष (२) *धमञ्जाय = धणञ्जय = ग्रज्*न पाद पुत्र । (३) पञ्जर *=पञ्जले =* शम्प्र विशेष 14-18311

ब्रजो ज:॥ ४–२६८८॥

मागच्या जजे जकारस्य ज्जो भवति ॥ यापनाद ॥ वज्जिदि ॥

गर्थ -सस्कृत नापा में रही हुई घात 'प्रन' क 'ज व्याजन फ स्थान पर मागधी भाषा में हिन्य िव' की प्राप्त होती है। यां यह नियम उपरोक्त सूत्र मख्या ४-२६२ क लिये व्यववाद स्वरूप ममना जाना गहिया बदाहरण यों है —बजाति = बञ्जिदि = वह नाता है ॥ ४-३६४ ॥

छस्य रचोनादी॥ ४-२६५॥

मागष्यामनाठौ वर्तमानस्य छस्य तालव्य शकाराक्षान्तः चो भवति ॥ गर्न गन्त उरचलदि । विरिचले । पुरचित ॥ लाचिणिकस्यावि । आवन्त-वरसलः । आवन्त-वरसने विर्यक् भेचते । विरिच्छि वेच्छर् । विरिच्चि वेस्कदि ॥ अनादाविति किम् । छाने ॥

अर्थ —सम्रत मावा में बदि किमो भी पद में छुडार छादि खदार के रूप म नर्ग रहा है हों है हो र हतन्त खबस्या में भी नहीं हो तो उस 'छुडार' र स्थान पर मागशी मावा में 'इल त क्षलर राम् क साय साथ 'चडार' की प्राप्ति हो जातो है। यो खनादि 'छुडार' के स्थान पर 'श्र' हो प्राप्ति मापा में जाननी चाहिये। जैसे —(१) माच्य, मच्छ = मक्च, मक्च = लाओ, लाओ। (२) कच्छिन = उक्च छाड़ि = वह उछलवा है। (३) पिन्छिल = पिक्चिल = पण बाला। (४) पुण्छाति = दुव्यिक वह पूछता है।

व्याकरण के नियमानुमार सम्क्रत भाषा म प्राक्षत भाषा म भाषि हिन स्वतन है स्थान रे 'छकार' को माप्ति हुई हो तो उस स्थानावन्न 'छकार' क स्थान वर भा-भागधी भाषा म 'हण्यन राष्ठ्र राकार महित चकार' को-स्थान 'छ्य' की पाप्ति हो लाया करता है । जैन — (१) आएउन -व्यावण्य आयण्या-वच्छा यो = खाबम्न-वश्यके = जिस हो में भाषना को प्राप्ति हुई हो यह। (०) निर्वेट हेन्स्य निर्विच्छा वेच्छाइ = विरिधेईच वेस्काई = चह देवा देखता है।

पदन —'अनादि में रहे हुए 'छकार' के स्थान पर हा 'रच' की माहि हाती है, चेहा वर्षे का गया है ?

उत्तर —सर्वेकि यदि छकार' व्यञ्जन 'शब्द के कादि में' रहा हुवा होगा हो १८ एछार है स्थान पर 'रच' की प्राप्ति नहीं हागी। जैमे —झार =छारे =छार = जलने व परनात चचा हुवा शाह व्यथप खार पनर्थ विशय। यो खादि 'छहार' का रच' की प्राप्ति नहीं है 11 ४-३६५ 11

चस्यप्तकः ॥ ४-२६६ ॥

मागष्यामनादौ प्रतमानस्य वस्य 🔀 को जिल्लामूक्षीयो अपित म प्रिकं ल 🤾 यो । अनादाप्तियेव । स्वय-यल-दला । स्वय अलग्रा १त्ययः ॥

अर्थ - मंद्युत मापा में कानादि रूप से रहे हुए 'स' के स्थान पर मानर्यत्साय में 'नियान हे द द्र व' बो शामि हो जाती है। कैमे - ११) यहा : यद्रिक = यत्त नाति का न्यून विशेष ! (-) होग्री = स्टू द्वारोग = राह्य, बाल क्यन्तर जाति का द्य विशेष !

प्रश्न -- अनादि रूप से रहे हुए 'च' के स्थान पर ही मागरी भाषा में 'जिल्हामुलीय 🖰 क' वी माप्त होती है, ऐसा क्या कहा गया है ?

उत्तर - यदि 'त्रकार' श्रनादि म नहीं होकर न्नादि म रहा हुत्र्या हागा तो उसके स्थान पर मागर्या भाषा में 'जिह्ना मूलीय है क' की प्राप्ति नहीं होगी। जैसे -क्षय-जन्धरा = खय प्रजन्न = नण हुण बादल । यहा पर आदि चकार को खकार की शाप्ति हुई है ॥ ४ २६६ ॥

स्कः प्रेचाचचोः ॥ ४-२६७ ॥

मागध्या श्रेचेराचवेण्य सम्य सकाराक्रान्तः को भन्नति ॥ जिल्हामृत्तीयापवादः ॥ सदि । श्राचस्कदि ॥

अर्थ -सस्तत भाषा के 'प्रेच्न' श्रीर 'श्राचच्न' में स्थित चकार' के स्थान वह मागर्था भाषा मे त्त्रत मकार' महित 'ककार' की शाप्ति होती है। यह सूत्र चपरोक्त सूत्र मन्या ८ २६६ के प्रति धापनाद रहप स्म है। बदाहरणों यों हं —(ग) पेक्षते =पेस्कारे = वह देखता है। (२)आचक्षते =आचम्कारे = क्ष कहता है ॥ ४ ^६७ ॥

तिष्ठ श्चिष्ठः ॥ १-२६= ॥

मागध्यां स्थावातीर्यस्तिष्ठ इत्यादेशस्तस्यचिष्ठ इत्यादेशो भगति ॥ चिष्ठदि ॥

अर्थ —साकृत धात प्या' क स्थान पर 'तिषठ' का आन्या होता है स्रोग उसी आदेश प्राप्त नेष्ठ' घातु हुप क स्थान पर भागधी मापा में चिष्ठ' घातु हुप का आदेश प्राप्ति हा जाती है। जैसे — ^{नेखात}=चिष्डादि= यह बैठता है । ॥ ४ २६८ ॥

अवर्णाद्वा डसो डाह' ॥ ४-२६६॥

मागध्यामनर्गात् परस्यट सोडित् श्राह इत्यादेशो वा भनति ॥ हगे न एलिशाह कम्माह र्जी। भगटत्त-शो(बदाह कुम्भे। पत्ते। भीमशेखस्म पत्र्चादो हिराही प्रदि। हिडिम्बार नियशोरेण उपणम्बि ॥

अथ — मग्गापी भाषा म पन्धी विभक्ति कल रुवचन में श्रकागन्त पुल्चिंग में श्रथपा नपुसर ीम मातिष्य म यय 'इस् = स्क के स्थान पर विकल्य में डात = चाह' प्रत्यय का खाइरा-प्राप्ति होती ^{1 सूत्र म चित्र}ित्तत 'डाह' प्रत्यव में स्थित 'डकार' स नजा शर्कों में स्थित चरा 'खकार' को दा ^{हा} मर्थात लोव स्थिति श्राप्त होता हूं, ऐमा लाख्यं प्रदर्शित है। उदाहरण या है—(१) अटम न इहश

-श्रामो डाहं वा ॥ ४-३००॥

मागष्यामवर्णात् परस्य श्रामोनुनासिकान्तोडित् श्राहादेशो वा भवति ॥ शरापाते सुद्द । पत्ने । नोलेन्दार्ण ॥ व्यरययात् प्राक्ततेषि ताहँ । तुम्हाहँ । श्रम्हाहँ । मिरिहार्ष् कम्माहँ ॥

अर्थ — मागयी भाषा में चकारान्त पुल्तिम खबरा ततु न हिला वाले राह्यं हे पराधिन ने सहुवचन में प्राप्तव्य पर्थय याँ चथया याँ के स्थान पर विषक्त में खतुनांनित महिल 'हाहूँ = साहूँ हैं प्राप्ति में ता प्राप्तव्य पर्थय याँ चथया याँ के स्थान पर विषक्त में खतुनांनित महिल 'हाहूँ = साहूँ हैं प्राप्ति में ता है। स्थान हारा में 'खाहूँ प्रस्व हैं प्राप्ति होता है। स्थान हारा में 'खाहूँ प्रस्व हैं में विषक्त खतारान्त राग्ते के जन्म बाद्य कहार' का लोग है। स्थान स्थान हार्य हैं हैं - सर्था पुर्णे का में के विविच्छ पत्त होने में पढ़ा विभक्ति खादा प्रथ्य ये खयबा का का वर्गहरण भी यें हैं — माग्यानार्थि सिल्या का ना मागवी भाषा में प्राप्त उक्त प्रस्त विव्या का मागवी मागवी भाषा में प्राप्त का स्थान हमा प्रथा का स्थान का प्रथा का स्थान का प्रथा के स्थान का प्रथा का स्थान का स्थान

श्रहं

11 8-2 24

मागरपानह ययनीः स्थाने

गरति ॥

भीवले । हमे भवता ॥

वर्थ -सस्त्रत भाषा में उपलब्ध उत्तम पुरुष वाचक श्सर्वनाम रूप 'श्रहम श्रीर वयम' के स्थान र मामधो भाषा में केवल एक ही रूप 'हमें' की आदेश प्राप्ति होती है । जैसे - भ्रहम शकावतार तीर्थ श्वामा धीवर = (१) हमे *शक्तावदालातिस्त-णिवाशी धीवल* = शक्रावतार नामक तीर्थ का रहते ाना में मच्छोभार हूँ। (२) वयम्सपाप्ता = हगे शपत्ता = हम (सब) श्रानन्द पूर्वक पहुच गये हैं॥ ें इन दाना दृष्टान्तों में 'श्रहम श्रीर वयम' के स्थान पर 'हगे' रूप की श्रादेश प्राप्ति हुई है ॥ ४ ३०१ ॥

शेषं शौरसेनीवत् ॥ ४-३०२ ॥

मागध्या यदुक्त ततोन्यच्छीरसेनीवद् द्रष्टच्यम् ॥ तत्र तो दोनादौ शौरसेन्यामयु-स्प-(४-२६०) ॥ पितशर्र् यावुत्तेशामि-पशादाय ॥ अवः कचित्-(४-२६१) ॥ यले कि एशे हन्दे कलपत्ते ॥ वादेस्तावति (४-२६२) ॥ मालेववा धलेध वा । श्रय दाव शे श्रागमे ॥ श्रा ामन्त्र्ये सी वेनोनः (४-२६३) भो कञ्चुइया । मो वा (४-२६४) भो राय्।। भनद्भगनतोः े २६६) एरु भर्न शमणे भयन महाबीले । भयव फदन्ते ये अप्यणो प्रभ के उिन्फिय पत्तस्म X क पमाणी कलेगि ॥ न ना योंच्यः (४-२६६) ॥ अच्य एगे सु कुमाले मलयकेंद् ॥ यो धः २२६७) ॥ यले कुम्भिला कथेहि ॥ इह हचो ईस्य (४ २६८) ऋो शल घ यय्या थो शल घ ॥ ो मः (४-२६६) ॥ मोदि ॥ पृवस्य पुरतः (४-२७० ॥ त्रपुरवे ॥ क्ता इय दूर्णो (४-२७१) र्कि सु शोभणे ब्रह्मणे शित्ति कालय लञ्जापलिग्गहे दिएले ॥ कृ-गमी डहुम्रः (४-२७२) हुम। गहुम ॥ दिरिचे चो: (४ २७३) ॥ अमच लप्त कश विक्सिद् इदोरपेर धागरचिद ॥ विदेश्व (४ २७४) ॥ श्रले कि एशे महन्दे कलयले शुणी ग्रदे ॥ भविष्यति स्मिः (४ २७५) ॥ ^{॥ वहिं} सु मदे लुहिलप्पिए भिनस्मिदि ॥ अतोडसेर्डा दो डाद् (४-२७६) ॥ यह विभागुलायणाटी ि पाविमि ॥ इदानीमो दाणि (४-२७७) ॥ शुर्द्ध दाणि हमे णकानयालतिस्त-णिवाशी घीवले ॥ म्मिचाः (४-२७८) । ता याव पविशामि ॥ मोन्त्याएगो वेदेतोः (४ २७६) ॥ युत्त ग्रिम । ृतिस िषम ॥ एनाये रथेन (४-२=०) ॥ मम रथेन ॥ इङने चेटनाह्वाने (४-२=१) ॥ इङने चटु-वेके ॥ हीमाणहे जिस्मय-निर्वेदे (४-२=२ ॥ विस्मये । यथा उदात्त राघरे । राचमः ही गिए जीयन्त-वण्चा मे जगणी ॥ निर्देदे ॥ यथा निकान्त भीमे । राचसः हीमाग्रहे पनि-^{विन्ता} हमे व्देश निय-त्रिधियो द्वानशिदण । स नन्तर्थे (४ २८३) ॥ व स्नामलीपमध्यया तिषाला ॥ श्रम्म हे हपे (४ २८४) ॥ श्रम्महे एखाए शुम्तिलाए शुपलिगढिदे मन ॥ ही ही ^{तिरुद्धस्य ४ २८५) ॥ ही ही मथन्ना मे मणोलधा निगनयस्तस्त ॥ शेप प्राकृतवत् (४-२८६)} ^{॥ मागच्यामि दीर्घ हुस्रै मिथी कृता (१-४) इत्यारम्य तो दोनादौ गीरमेन्यामयुक्तस्य} 19-२६०) स्त्यम्मात् प्राग् यानि सत्राणि तेषु यानि उदाहरणानि सन्ति तेषु मध्ये अम्नि तद रम्यात्येव मागध्याममृति पुनरेव निषानि मयन्वीति निमागः स्वयमभ्यूख दर्गनीयः ॥

अर्थ — मागधी भाषा में 'शाप्तन और शीरमेंना' दे श्रीतिशत्त जा हुन्न परिवर्तन क्ष्यशाहरूम हाता है वह अवर सूत्र संख्या-(४ रद ६) में (४ २०१) में व्यक्त कर दिया गांग है, सेर परिवरन के द्वा में इस सूत्र में और इस हा हित्त में कि इस हित्र में कि स्वारत हा परिवर्तन माग है कि नियम माग प्रहार का परिवर्तन माग है सागधी में रूपान्तर करने की दशा में 'शाकृत भाषा में तथा शीरमेंनी भाषा में कित्र परिवर्गन का कि माग में कि खानुसार जानना चाहिये। इस क्कार के महत्र के साथ-माथ 'प्राप्टत तथा शीरमों में दिन्त के साथ-माथ 'प्राप्टत तथा शीरमों में हिन्दी स्था पूर्वक जिन्द का माथ हिंग सुन सुनों के साथ उदाहरण भा शृक्ति में दिन गांधे हैं, जिन्हें में हिन्दी स्था पूर्वक जिन्द का स्वारत है। इस हम हम हम स्वारत हम स्वारत

- (१) सूत्र मंख्या ४-०६० म बनलाया ह कि 'नकार' का 'दकार' होता है तरुपार 'मागवा घाट' ६ उपादरण इस प्रकार है —प्राधेशत् जायुक्त रुपामि-प्रशादाय =पविशाद वाहर्ते स्माधिरणादण्य स्वामी की प्रमन्तना के लिय सर्वेण्ड प्रवश करा ॥
- (२) सूत्र-सर्या ४२६९ म वहा गया है कि हलन्त स्वत्रान क परचात रहा बाज 'तहार' हो है 'दकार' हो जाता है। जैसे —गरे ! किस एव महान्त करतल = भरे ! किएसे महन्द प्रपर = स्र यह महान हथेनी है ?
- (ह) सूत्र सखवा ४-९६२ में लिखा गया है कि 'तावत' अञ्चय क स्नादि 'नहार' के स्थान पर बैटेंन्स रूप से 'दकार' भी प्राप्ति होती हैं। जैसे —अयम् तावन तस्य आगम', (अयुना) माएन वा सा यत या=अय दाव हो आगमे, (अदुवाा) मालेच या घोट्च वा=यह वमदा साममन हा गया है, (वह मारी खथवा रचा वरों। यों 'तावत' क स्थान पर 'साव' रूप यो प्राप्ति हुई है।
- (४) सूत्र सरया ४२६६ में सहत किया है ि इन् शन्त बाज शब्दा के मनायत के हरवयन है है प्रयय परे राने पर चन्य इक्टन 'तकार' के स्थान पर जिक्कन में 'खाकार'की शास्ति होता है। है। र भो फज्युकिए ! =भो । पञ्चका=धरे पञ्चकी ॥
- (५) सूत्र मख्या ४ २६८ से यह उब्हेल किया गया है कि 'नहारान्त' शहरों के वश्वभन में में प्रतिक रहने पर कारत 'नहार' करथान पर विकल्प मा 'महार' का आस्ति होती है। लेंने —भोरावर्ग ' भी राज = है राजा।
- (ह) सूत्र मध्या ४ २६५ सं यह प्रवर्शित क्या गया है कि-भवन' स्तीर 'स्ववन् मध्यो क प्रवर्श विश्व क रावस विश्व क रावस विश्व क रावस के स्वत्य प्राप्त होते वर 'मिश्व वर 'स्वार क रावस कर कार के स्वत्य 'स्वार क रावस कर 'स्वार क रावस कर 'स्वार क रावस कर 'स्वार के स्वार के प्रवर्श कर 'स्वार के स्वार के स्वार के स्वार के स्वार के स्वार कर स्वार

ा) मूत्र सच्या ४-६६ में यह कथन किया गया है कि शौरसेनो में 'ये' के स्थान पर द्वित्व रुप' भी इन्तर से प्राप्ति होतो है। जैसे —आर्थ 'एए खु कुमार मलय केतु = अय्य 'एको खु कुमाले मलय [= हे चार्य । ये निश्चय ही कुनार मलय केतु हैं।

ः) सूत्र सख्या ४२६० में यह विचान प्रविष्ट किया गया है क शोरमेनो में विकल्प स थ' क स्वार 'च' मे प्राप्ति होती है। जैमे — जेर कुम्मिरा कथ्य = अ के सुम्मिला कर्षाह=त्र्यरे कुम्मिरा ! कहा॥ ः) सूत्र सख्या ४ -६८ में यह उल्लेख किया गया है कि — 'इह त्र्यय्य के 'हकार' के स्वान पर व्यीर मिन कालीन मध्यम पुरुष के बहुवचन के प्रत्यय 'ह' के स्थान पर शौरसेनी में विकल्प में थ' होता । वैम — अपसरत आर्यो । अपसरत = अ हा रुष अस्या औदालध = हे स्वार्यां श्वाप हटें, स्वाप हटें ॥

- (१०) सूत्र सख्या ४ २६६ में विधान किया गया है जि-सोरसेनी भाषा में 'भू = भव्' धातु क कार' को विकत्व से हकार की प्राप्ति होतो है। खयवा प्राप्त कार को पुन विकत्य में भकारकी प्राप्ति वाती है। जैस — भवति = भोदि (खयवा होदि)=वह होता है।
- (११) सूत्र सख्या ४- ७० में कहा गया है कि-शीरसेनो में 'पूब' शन्द के स्थान पर 'पुर' । गंधारंग प्राप्ति विकल्प से होती हैं जैसे —अपूर्व = अपुरवं = अपोक्षा, विलन्स ॥
- (१) सूत्र सख्या ४ २७१ में सूचित किया गया है कि शोरमेनी भाषा म मन्यन्य कर्रन मूत्र का प्रविद्या के स्थान पर 'इय और दूख' ऐसे से प्रत्या की खाइश प्राप्ति जिक्कत म हाती है। जैम य लड़ शोमन बाहमणी उसी जाति कुरता राज्ञा परिष्रहो उत्त = किं जुन शोमणे बहमणी शि ति विव त्रज्ञा पित्रगृहे विण्णे=क्या निश्चय ही तुम श्रेष्ठ बाह्मण हो ऐमा मान करके राना द्वारा भानित किय गये हो। यहां पर 'किलिय' पर में 'क्त्वा' के स्थान पर 'इय प्रत्यय की खादेश प्राप्ति है।
- (१२) त्र-सख्या ४-२०२ में यह उन्तेख है कि-'फ़ धातु और 'गम' धातु में 'कत्वा' प्रथ्य क गन ११ 'हित पूर्वक (भन्त्य असर क लोप पूर्वक) 'अडुम' प्रत्यय की झान्रा-आरित विस्त्य माना ।वैन —हरश-फडुअ=करके ॥ गत्या-महुअ = जाकर के ॥ यों 'कडुम' की प्राप्त ममफ लना गिरा
- (१४) सून सत्या ४ ७३ में यहा गया है कि -वर्तमानशाल य सत्य पुरुष क एक्ष्यन म निम स्वय 'इ' स्रोर ए' व स्था पर नि' प्रत्यय रूप की प्राप्ति होती है। चैम --अमारव राशम जिन्म हत एक आगच्छाति=अमस्स्व न्ट 🖰 कहा विक्तित्व हर्दाव्यय आगश्चिति = राम नाम हामश्ची विक्ति हत स्वर ही वह स्वाता है स्वयंत्रा स्वारही है। यहा पर 'फ्रागश्चिति म 'इ, ए कर्यान पर 'है हो ब्रोग हुसा है।

- (१५) सूत्र सस्या / २०४ में यह समभाया गया है कि नवहारान्त शाहुओं से वरस्तरूष्ण अन्य पुरुष क एकत्रवान में प्रान्तथ्य प्रयय 'ह खीर ए' के स्थान पर दे' की भी प्राप्त रान है। के अरे ! किम एम महान्त परुषक श्रुयते = अले कि एके महान्ते कर्म्यतः हालांभवः खो ! सः को लाहल वयो सुनाई दे रहा है ? इम स्वाहरण में 'शुणीखदे' में ह' का प्रया हुषा है।
- (१६) सूत्र मख्या ४-२०४ में यह सूचना को गई है कि शीरमनी भाषा में भाषेष्वा।इन्ह प्रययों में 'हि, इता खीर हा' के स्थान पर 'सित' रूप को प्राप्ति हाता है। जैन —सहा सुत्र मुक्त मुक्त स्था विय भाषेष्याति = ता पार्टि स गढ़े हिलापिए भाषिनिसादि = २म स्था म बहा एवा दूधाहा । प्रमी हागा ॥
- (१७) सूत्र सस्या ४ २७६ म यह बसलाया गया है वि खरारान्त शक्ती ग वेपण विश्व पदवचन में 'खादो और खादु ऐस दा प्रययों वा खादश शाध्य हाता है। जैम — एटमि मामु हा मुद्रास प्राप्नोमी=शहापि भागुलायणांचे सुद्दं गांगीन = म भी भागुरायण म मुश के। शाध कारा यहां पर 'मागुलायणादो' का रूप दिखलाया गया है।
- (१८) मूत्र मख्या ४ १०= म समकाया गथा है रि॰ शारमती भाषा में 'तापात गराह व पर 'ता' शब्द मज को त्रावेश मान्ति होती हैं। जैन सस्मान् यागन् वाविशामि≕ मा पाड़ र पेट" = इस कारण म जब तक मैं भगरा वरता हैं।
- (१०) मुत्र महत्वा ४२७६ म लिखा गया है कि वीरमेशो माथा म वरापर्य म ६ वा र 'इकार' सथया वकार' हो तो इन 'ईकार अथका 'बनार' न पूर्व में विवकर म हवन्त क् इन क्षा प्राप्ति होता दें। जैसे — (१) युक्तम इसम ≂युक्त विश्व = विवक्त हैं। (३) क्यों 'े सान्दिर्हों जिस यह समाव हैं॥ इन बनाहरखों में इसे वे पूर्व म 'मुहार' का व्यागत मार्गित हुं हैं क
- (१९) मूत्र मध्या ४ २८० मे गु चा ११या गया ८ १०-शौश्मनाआया म छ। छ। १ ४३४ स्थान वर 'रयथ' ष्यव्य स्व थ। श्योग विया चाना धाहिए। र्सम *- मम छवन्मम स्वेत - स*्तिहै
- (२२) गृत सरमा १८ का सहस्रतिकाम दिया स्वर्ग है । इति हो भावा में शिक्ष विद्या अपना है। असे असे विद्या असे विद

- (२३) सूत्र सख्या ४ २८२ में यह कथन किया गया है कि-'खाइचर्य छोर रोद' प्रकट करने के वर्ष में शोरसेनी भाषा में 'हीभाणहें' ऐसे शब्द रूप शब्दाय का प्रयोग किया जाता है। जैसे -मही 'जीवन्त वत्ता मम जननी = हीमाणहे जीवन्त वश्चा मे जणणी = धाश्चर्य है कि मेरी माता मरे पर जीवन पर्य त के लिय प्रेम भश्वा रखन वाली है। यह कथन 'रास्तर' नामक एक पार नदात्तरापत्र नामक नाटक में व्यक्त व रता है। वों 'ही का खहें' श्रव्यय विस्मय श्रर्थ में कहा राया है। निर्देद सेंद अर्थक अन्यय के रूप म प्रयुक्त किय जाने वाले ही माण ह अन्यय का उदाहरण विकान्त भीम नामक नाटक मे आगे चद्युत किया आ रहा है। -हा ! हा !! परिश्रान्ता चयम् एतेन निज-^{| विवे} दुर्द्यवादितन = हीमाणहे पलिस्सन्ता हमे एदेण निय-विधिणो दुर्धवादिदेण = श्ररे ! श्ररे ! यह द्वारा का बात है कि हम इम हमारे भाग्य के उर्ध्यवहार से- (खोटे तक्टीर के कारण से) अत्यन्त परशान हा गये हैं || यह उक्त एक 'राक्तन' वात्र के मूँह से वहलाई गई है ||
- (१४) मूत्र सख्या ४ २८३ म यह वर्णन किया गया है कि -शौरसनी में निश्चय अर्थक माफ़त श्रव्यव 'ननु क स्थान पर 'रा श्रव्ययका प्राप्ति होतो है । जैम --ननु अवसर-उपसरणीया राजान = ण भवशकोपशप्यणीया रायाणो = निश्चय ही राजाची (का सवा म) समयातुमार ही (खबमर्से भे अनुकृत्ता पर ही) जाना चाहिय ॥
- (१४) सूत्र सरया ४- ८४ में यह उत्लख विया गया है कि-शांग्सनी में हर्ष व्यक्त करने क छार्न में 'थमाहे' ऐस शढ हत खब्यय का प्रयाग किया जाता है। जैस —अहो " एतम्ये सूमिलाये सुपरि-गाठीत भराग्=पम्महे ॥ एआए ज्ञाम्मलाए ज्ञापालिगाढिरे भर = श्रापने इस सुर्मिला क लिय (इम षाभूषण विशेष का) श्रद्धा गठन किया है, यह परम हप का बात है।
- (P·) मूत्र सख्या ४ = ४ म यह व्यक्त किया गया ह कि-शारसेनी माया में जब कोई विदृष्ध ^{(माह} धादि ममदारें) ऋषना हप व्यक्त करते हैं, तथ व 'ही ही' ऐमा शब्द बालते हैं स्त्रीर यह शब्द मध्य क श्रन्तर्गत माना जाता है। जैसे —आ हा हा । सपन्ना मम मनोरथा प्रियवयस्याय-धी-हीं " सपन्ना में मणोल्धा पियवयस्तरस = अहाहा !! (वड ही हप का बात है कि) प्रिय मित्र द चित्र मरो जो मन का वल्पनाए थी, वे मब का सब (मानद्) सम्बन्त हुड हें ॥
- (नेह) मूत्र मत्या ४- =६ म मब सामान्य मृचना के छप म यह मतियान किया गया है कि शह ममा निभान गौरमना भाषा के लिय बाहत भाषा क सविधान व अनुमार ही जानना। यों यह फलि ार्थ हुआ कि गागधी भावा के लिय भा व सभा कियमार्थान्यम लागू पहल हैं, जो कि प्राप्टन मापा है विवेत्या शास्त्रनी भाषा क लिय लिख गयाँ। इती जान की मपुष्टि क लिये इना गूप का युत्त ो रेश शीरमनी भाषा कृतिय लिखित सूत्र सन्या ८ २०० सः लगारर ४२०० तर कम्बर्गेका उदाररण प्तंह ब्ट्घुन विय हैं।।

उपरोक्त सूचना क अतिरिक्त प्रथ कर्ता आचार्य थो ने 'वृत्ति में स्व-मदश १ ४ में शास्त्र १४ वे चारों पारों के सूत्रों को सम्मिलित करते हुए सूत्र सहया ४-२४६ तक के सूत्रों ने बर्तित महा प्रश्ना प विधि विधानों का 'अधिकार' इस माग ही भाषा के लिये भी निश्चय-पूर्वक जानना' मेना राष्ट्रन 1-१० क्या है। इन मूर्रों में जो जो बदाहरण है, जो जो परिवर्तन लोप, चागम, चारेश, प्रापव, प्रधारण विकार वादि व्याकरण-सम्बन्धी व्यवस्थाएँ हैं, वे सब की सब मागधी मापा के लिय मा है, एना धान धाहिय । पाठकों का चाहिये कि ये ऐसी परिकल्पनार्वे कर लें चीर तर्क पूर्वक इन्हें मन्यक-प्रकार म १९७० समस्य में ११ ४-३०२ ॥

इति पागधी-भाषा-व्याकरण-समाप्त



अथ पैशाची-भाषा-व्याकरगा-पारस्भ

ज्ञो बनः पैशाच्यास् ॥ ४-३०३ ॥

पैभान्या भाषाया बस्य स्थाने ञ्जा भग्नति ॥ पञ्जा । सञ्जा । सब्पञ्जो । ञान । विज्ञान ॥

अर्थ - पैशाची भाषा म सस्कृत शब्द रूपों का रूपा तर करने पर 'झ' क स्थान पर 'ब्बा' की शिप्ति होता हूं। जैसे —(१) प्रज्ञा = प्रव्या = (मिश्चट बुद्धिः () मेह्या = सब्बाः = नाम, भावना (३) प्रवृत्त = मब्बाब्यो = मब ज्ञानन बाला। (४) झान=ब्बार=झान और (४) विज्ञान=विज्ञान = विज्ञान। ॥४३०३॥

राज्ञो वा चिञ् ॥ ४-३०४ ॥

पैशाच्या गझ इति शब्दे यो जकारम्तस्य चिन् श्रादेशो या भनति ॥ राचिना लिपत । ^{क्ष्रा} लिपत । राचिनो यन । रब्जो धन । झ इत्येय । राजा ॥

शर्थ —सःकृत पर राझ' में रहे हुए 'झ' क स्थान पर पैशावा भाषा में धिक्रप से 'चिक्र' वर्ण ^{द्वा} श्राद्य प्राप्ति होती है । जैस —रा*झा लपित = राचिआ लपित=रैं* व्हिपक पत्त होने से-र*्ञा लपित* न्याता स वहा यथा है, (२ रा*झ भन = राचिओ भन=दैं* व्हिपक पत्त होने से 'रञ्ओ भन-राना वा भर'।

पञ्च — इत् वा उल्जेख क्यों विया गया है?

उत्तर'-जर्हा पर 'राझ' से सर्वाधत झ' का श्रमाव होगा वहां पर 'चित्र ' की प्राप्ति नर्से होगी। वैष--'राज्' शब्द से तृतीया विभक्ति क एकवचन में 'राजा कव यनने पर मो इम 'राजा' पद का रूपा ^{१९प्}राचो भाषा में 'राजा' हो हागा। यों 'झ' को विशेष थित को जानना चाटित्र ॥ ४ ३०४॥

न्य-रायो र्ज्जः ॥ ४-३०५ ॥

र्पणाच्या न्यएयोः स्थानं ञ्लो भवति ॥ कञ्जका । द्याभेमञ्जू । प्रुञ्ज रम्मो । ग्र_{िह}

थय - मध्रत भाषा क वने में रहे हुए वर्ण न्य' खोर 'ख्य प स्थान वर पैशाया शापा में 'इक्स' भै 'भि सा है। जैम --(१, कन्यरा-क्छत्रश = पुत्रो। (२)आभिमन्यु=भाभिमञ्च = चुर्तुन

सो नः॥ ४-३८६॥

र्पंशाच्यां ग्रासस्य नी भवति ॥ गुन-मन-युत्तो । गुनेन ॥

अर्य — संस्कृत मापा के शब्दों म रहे हुए 'खहार' क स्थान पर पैतावो म,पा में 'तरा' प्राप्ति होती है। जैसे —(१, ग्रुण गण युक्त = ग्रुन गन युक्ती = ग्रुख के समूह म पुन।(२) दून्य गुनन = ग्रुण हारा गुख से ॥ ४ ३०६॥

तदोस्तः ॥ १–३०७ ॥

र्षशाच्या तकार-दकार्चोम्तो भवति ॥ तस्य । मगवती । परवती । यतः । रसः मतन परवसो । सतन । तामोतरो । पतेमो , वतनक । होतु । रमतु ॥ तकारस्यापि अः विधानमादेशान्तरबाधनाथम् । तेन पताका वितिमो इत्याद्यपि मिद्र भवति ॥

कार्य — सरहत मापा के राहता में रहे हुए 'तहार' यां और दहार' वर्ग के र्यात पर देल्ह भाषा में 'तकार' की मानि होती है । यहां पर तकार' के स्थात वर पुन 'तहार' का है । वाहता पर तकार' के स्थात वर पुन 'तहार' का है। वाहता पर 'तहार' की श्रात्म के मुनार तहार' के रही पठ मून सत्या प १६० कि विमान के मुनार तहार' के रही पर 'तहार' की श्रात्म तह ता है हो तहा है। हो ता। पून मन्यि पन श्रान वर वहाहों में हैं । भी 'वितिहों के स्थात पर 'वितिहों ही होगा। पून मन्यि पन श्रात वर वहाहों में हैं । भी मणती = मन्यती = देवता विरोप, पेडवय वाहितों । हो पार्थनी = पर्यति = मगरेही पे पर्यो, पर्वत पुर्यो। (१) हमन = सर्व = सी वा सत्या।। दे से मन्यति व वहाग निर्मे हैं । पर्यक्त = सहारण में हैं — (१) श्राप्य परवहां = मतन परविशे = सामित व वग म पहा हु हो।। (१) हहमन = सत्य = नहां, पर १। हमी हम स्व च पर कामी। (४) प्रदेश = प्रतेशे = देश का पर पर हमें व = पर कामी विरोप। (१) परवनम = यतनक = मुला। हो मणन = हिर्मे । = होनू = होने। (३) दहन हम रसह में ले।। १ १००।

· ्री को छ: ॥ ४-३०= ॥

पैशाच्यों सकार स्य क्ष्मारी मयति ॥ मीळ १ कुळ जातः , म्यूकं । समार्ग ह

सर्य —मेरटन भाषा क सार्वो ५ रह हुउ 'लहरा' वर्ग क शान वर वैशान, नावा में 'इंड ' वर्ण नी बाहरा मानि होनो हैं। सेने —(१) झीनम =मीळे =गीन भने सर्वो,र १६) वनस मही

श-षोः सः ॥ ४-३०६ ॥

पैशाच्यां श्रपोः सो भगित ॥ श्रः । सोभित । सोभन । ससी । सको । संदो ॥ प । हेसपो । विसानो ॥ नकगचत्रादिपट्-शम्यन्त सूत्र।क्तम् (४-३२४) इत्यस्य नावकस्य नाध-।वर्षियोगः ॥

अर्थ — सस्कृत मापा के राब्दों में रहे हुए 'राकार' वण और 'पकार' नर्ण के रयान पर पैरााची मापा में 'सकार' वर्ण की खादेश प्राप्ति होती है। 'रा' के उशहरण — (?) शोभाति (अयवा शोभते)= i माति=वह शोमा प'ता है, वह प्रकाशित होता है। P, शोभन = सोभन=शोमा स्वरूप।। 'शे शेति = सत्ती=चन्द्रमा। (४) श्रकः = सको = इन्द्र। (४) शैं ल = सत्ती=शत्ता।। 'प' के उशहरण — (१) विगम = विसामी = जो बराबर नहीं हो, जो खायविद्यत हा। () विपाण = विसामी = मीत।। एक विवास के स्वाप्ति मापा में 'तकार' वण को स्वारित प्रविच उशहरण में 'विपाण भी स्थत 'णकार' वर्ण के स्थान पर पैशाची मापा में 'तकार' वण को मारा-प्रतिक की जाकर 'णकार' वे खमाब सुचक जो स्थित प्र-शिंत की गई है, उमका रहस्य पृक्त में

इत सख्या ४ २२४ को ब्ट्यून करक समफाया गया है। निसका नाध्यं यह है कि सूत्र सख्या १-१७७ में भारत्म करके मूत्र सख्या १-२६४ तक का सविधान पैशाची भाषा में लागू नहीं पढ़ना है। इस । विशेष भागकत्म बागे सूत्र सख्या ४ २२४ में किया जाने वाला है। तब्तुमार स्पकार' क स्थान पर 'नकार' हो स्थिति को जानना चाहिये। यों यह सूत्र बाधक स्वरूप हे स्थीर इस प्रकार यह इस दाया को जनस्थित

हृदये यस्य पः ॥ ४-३१० ॥

हरता है।। ४ ३०६ ॥

पैंगान्यां हृदय शब्दे यस्य पो भवति ॥ हितपकः कि पि कि पि कितपके श्रत्य

अर्थ —सस्त्रत भाषा के शहर 'हृद्य' में अवस्थित 'यकार' वर्ण क स्थान वर पैशाची भाषा म 'कार' वर्ण की आदेश प्राप्ति हो जातो है। जैसं —हृदयकस् = हितपक = हृद्य, दिल ॥ विमापि किमापि वैरिषेक अर्थस् चिन्तयमाणी = किं पि किं पि हितपके अत्थ चिन्तयमानी=हृद्य में सुद्ध-भी पुत्र मा (काराष्ट्र सा।) अर्थको मोचतो हुई॥ यों 'य' का 'व हुमाई॥ ४-३१०॥ का पुत्र। (३) पुण्य-कर्मा = पुञ्ज-कम्मी = पवित्र कर्म करने वाला। (४) पुण्याह = पुञ्जाह = पुञ्जा

गो नः॥ ४-३८६॥

पेंगाच्या गकारस्य नो भवति ॥ गुन-गन-युत्तां । गुनेन ॥

अर्थ — सरका भाषा के शब्दों में रहे हुए 'सहार' र स्थान वर पैरावो भाषा में 'करा' र प्राप्ति होती है। जैसे — (१, मुण गण-युक्त = गुन गन युक्तो = गुल के समृह स युक्ता (९) क्षेत्र गृनेन = गुण द्वारा गुल से ॥ ४ ३०२ ॥

तदोस्तः ॥ ४-३०७ ॥

प्रशाच्या तकार-दकारचोम्तो भनित ॥ तस्य । भगनती । वन्नती । मनं ॥ रण मतन परवसी । सतन । तामोतरी । पतेणो , जतनक । हीतु । रमतु । तकारस्यानि अ विधानमादेशान्तरबाधनार्यम् । तेन पताका वेतिमो इत्याद्यपि मिद्ध भनित ॥

अर्थ — सस्रत माया के शहरों में रहे हुए 'तहार' वर्ष और दहार बर्ग हथात पर देंगा भाषा में 'तकार' की माप्ति होता है। यहां पर ततार क स्थान पर पुन 'तहार' का हो आहां। सवलाते का सुग्य कारण यह है कि पाउट सृत्र सम्या >-- देठ क विधान क सनुवार तहां के पर 'दकार' की अनुवाित न कर ला इस निद्धा क अनुवार ततां। के स्थान पर 'वाली हो। कीर 'वितिषो' के स्थान पर 'वेलिंग हो होगा। तूप मन्त्र घत ज्ञन्य प्रशास द्व वशाह वित्ता विदेश, ऐर्डिंग मार्जिं। १३ पावती - प्यत्र = स्थाह है। (१) सम्पर्ता = सम्पर्वा = देवना विदेश, ऐर्डिंग मार्जिं। १३ पावती - प्यत्र = स्थाह है। (१) सम्पर्ता = प्यत्र = स्थाह है। विदेश के प्रशास कारण है न्या के परवा । १३ सम्पर्ता व्यवस्थ न परवा । १३ स्थाह है। व्यवस्थ न स्थाह है। व्यवस्थ न स्थाह है। व्यवस्थ न स्थाह है। सम्पर्त विदेश कारण है न स्थाह है। सम्पर्त विदेश है। व्यवस्थ है। इस्थ है

्र्री द्यः ॥ ४-३०८ ॥

पैशार्क्यों लकार स्प त्रहारी मत्रवि ॥ मील १ कुल जाने , सिक्ति किस्ति ॥

अर्थे —संस्ट्रन भाषा क शस्त्रों व स्ट्रेड्डन 'लकार' वर्त व स्थान वर पीराश साथ है 'हरू वर्षों की बादिश मानि हो गे दें जिस —(१) झाँ उम समीज स्तरील घर मधीस । (*) इन्हरू ह कत श्रथवा कट व । (३) जलम = कळ = पानी । (४) सलिलम = सक्टिज = नल श्रथवा कोटाis । (४) कमलम = कमळ = कसल पदम ।। ४ ३०८ ।।

श-पोः सः ॥ ४-३०६ ॥

पैणाच्यां शयोः सो भनति ॥ श । सोमति । सोभन । ससी । सको । संस्रो ॥ प । समे । विसानो ॥ नकगचनादिपट्-शम्यन्त स्त्राक्तम् (४-३२४) इत्यस्य नाधकस्य नाध-वींवं योगः ।।

अर्थ - संस्कृत भाषा के शब्दों में रहे हुए 'शकार' वण और 'पकार' वर्ण के स्थान पर पैशाची ाप में 'सकार' वर्ण की आदेश प्राप्ति होती है। 'श' क उगहरण —(?) शोभाति (अथवा शोभते)= भिति=बह शोमा पता है, वह प्रकाशित होता है। २० झोभन = सोभन=शोभा स्वह्नप्र॥१३) ।शि = तसी = चन्द्रमा । (४) হাক = सको = इन्द्र । (५) হাল = सखो=राख ॥ 'प' के उनाहरण — १) विसम = विसमो = जो बराबर नहीं हो, जो ऋव्यवस्थित हा। () विपाण = विसानो = मीत ॥ म श्रन्तिम उदाहरण में 'विषाण' से स्थित 'जकार' वर्ण के स्थान पर पैशाची भाषा में 'नकार' वण को शहा मिति की जाकर 'एक।र' की अभाव सचक जो स्थिति प्र-शिंत की गई है, उमका रहस्य पृत्त में व सदया ४ २२४ को चद्रधत करक समक्ताया गया है। निसका ताध्यर्थ यह है कि सूत्र सहया १-१७७ में ारम करके मूत्र सख्या १-२६४ तक का सविधान पैशाची भाषा में लागू नहीं पडना है। इस । विशेष ^{९८|इ}रण शागे सूत्र सख्या ४ ३२४ में किया जाने वाला है। तदतुमार एकार' के स्थान पर 'नकार' ^{हा स्थिति} को जानना चाहिये। यों यह सूत्र बाधक स्वरूप हे प्योर इस प्रकार यह इन वाधा को उपस्थित हरता है।। ४ ३०६ ॥

हृदये यस्य पः ॥ ४-३१० ॥

पैशाच्यां हृदय शब्दे यस्य यो भवति ॥ हितवक। किं वि कि वि हितवके श्रत्य विन्त्यमानी ॥

अर्थ -सस्टूत मापा के शहर 'हृद्य' में अवस्थित 'यक्तार' वर्ण के स्थान वर पैशाची भाषा में 'फार' वर्ण की आदेश प्राप्ति हो जातो है। जैसे —हृदयकम् = हितपक = हृदय, दिल ॥ विमापि किमापि ^{हिर्फे} ^{शर्यम्} चिन्तयमाणी=िकं पि किं पि हितपके शत्यं चिन्तयमानी=द्वाय में शुद्रभी शुद्र मं (अस्तर सा) क्यर्यको मोचतो हुई॥ यों 'य' का 'व हुमाई॥ ४-३१०॥

टो स्तुर्वा ॥ ४-३११ ॥

पॅशाच्यां टाः स्थाने तुर्वा भनति ॥ इतुम्बक ॥ ८

अर्थ -- मारत भाषा क शब्दों म रह हु० 'टकार' वर्ण क स्थान वर पैशाधानाव स'र मी विकत्य स श्रादश बावि होती है। जैस —सुटुम्यकम् = मुतुम्यकं श्रवण पुरुम्यक = कुन्न 用ノさ(*)1

वस्त स्त्नः ॥ ४-३१२ ॥

पॅशान्या क्त्या प्रत्ययस्य स्थाने तून इत्यादेशो भवति ॥ गातृन । रन्त्न । रि पित्तन । ऋधितृन ॥

अर्थ - मंस्कृत भाषा म समय प्रर्थत कुर्त्त बनाने क लिय बातुकी में जैम 'बारा' इबर प्राप्ति होती है, बैस ही पैशाना भाषा में ऋक 'कत्वा' प्रत्यव के स्थान पर 'तूर' प्रत्यव की कारान होनी हे । जैस —(१) गत्या =गन्तुन = जा हर क । (•) रत्या = रस्तुन = रस्तु करर । (३) हानैः हासितन = हैंन फर का (८) पथायीरणा = क्षातुन=रह कर के, (५) पाटिला = पठिना + ५६ वर्ष इत्यादि ॥ ८ १२ ॥

दधून-त्यू नो प्ट्यः ॥ ४-३१३ ॥

पैशाच्या म्ट्या इत्यस्य स्थानं स्थून त्यून इत्यादेशी भावः । पूर्वत्यासारः ध्र्त । नत्थ्रन । तध्र्त । तत्थ्रन ॥

अर्थ -- मरहत भाषा म बाबा प्रत्यय क स्थान पर प्राप्त होते वासे प्रत्यय एशा छ स्याह पैशाचा माथा में 'स्तृत कीर 'त्रूत' वेस ही प्रवद कवा की काहेग ता'त होती है। वह सूर पूर्वेंड है सख्या / ३४२ क प्रति व्यवसार स्वत्व वृत्र है। उदाहरण की हैं —(१) मध्यम = नाम व्यवसार महि गारा परका (क) तरहवा = तथ्यन व्ययस मरम्ब = तीव करके। ॥ १३ का

र्य-स्न-प्टा रिय-सिन-सटाः वर्शचत् ॥ ४-३१४॥

रीमाच्यां य म्तप्टां स्थाने यथा-माय शिव मिन मट श्याउँगाः कार्यिश पर्शी मार्गो । भारिया । स्नातम् । मिताते । क्टम् । क्वर्ट । क्वचिदिति क्मि । गुरुक्ते । गुरु तिहा ।

भर्म --गंग्रत भाषा के शहरों म रहे हुए स' 'स्त' ब्लीर 'स्ट्र' क स्थान वर वैर'व म का म है ा स 'रिय', 'रिमन' चीर 'बट क चार्च का हव वर देखी आणे हैं। बैसे -(१) आवी=कार्य

क्ता। (२) स्नातम् = सिनात=स्नानं क्या हुन्ना। धुलाया हुन्ना श्रोर (३) कप्टम् = कसट = पीडा. वेश्ना ॥

परन — 'कही कहीं पर ही होते हैं, ' ऐमा क्यों कहा गया हे ?

उत्तर —र्खोकि अनेक शर्कों में 'यं' 'स्न' और 'ष्ट' होने पर भी 'रिय', 'सिन' और 'मट' की र्शाप्त होता हुई नहीं देखा जातो है। जैसे —(१) सूर्य = सुज्जो=सूरज। (२) स्नुपा = सुनुसा = पुत्र बर्। (३) तुष्ट = तिठठो = प्रशन्त हुन्ना, मतुष्ट हुन्ना ॥ ४ ,१४ ॥

क्यस्येच्यः ॥ ४-३१५ ॥

र्षशाच्या क्य प्रत्ययस्य डय्य इत्यादेशो भन्नति ॥ गिरयते । दिय्यते । रमिरयते । डिग्यत् ॥

अर्थ - मस्कृत भाषा मे कर्मीण प्रयोग-भाव प्रयोगके खर्थ में 'क्य = य' प्रत्यय की प्राप्ति होती है, िनुमार उक्त 'य' प्रत्यय के स्थान पर पैशाचा मापा में 'इय्य' प्रत्यय की श्वादेश प्राप्ति होती है। जैसे — (१) गीयते = गिय्यते = गाया जाता इ। () दीयते = दिय्यते = विया जाता है। (३) रम्यते = ^{6मियते =} सेना जाता है और (४) *पठयते = पठियते =* ९ढा जाता है, इन्यादि ॥ ४ ३१४ ॥

कृगो डीर: 1 ४-३१६॥

पैशाच्या कृतः परस्य क्यस्य स्थानं डीर् इत्यादेशो भगति ॥ पुपुनतसने सञ्चम्म-रव ममान कीरते ॥

अर्थ ⊸पैशाची मापा में कर्मिण प्रयोग, भावे प्रयोग के श्रर्थ में ह' धातु में 'क्य≔य' प्रयय क षात पर 'डीर = ईर प्रन्यय का त्रादेश पानि हाता है। प्राप्त प्रत्यय 'डीर में स्थित 'डकार' इ सज्ञक हान म 'ह' थातु में अवश्यित श्रात्य स्वर 'ना' का लाप हो जाता हे ऋौर यों अवशेष हलन्त घातु 'क्' म रह दूर' प्रत्यय की प्राप्ति होगी। उदाहरण यों हे -प्रथम-दर्शने सर्वस्य एव सम्मान कियते = पु छ ^{हत्तत} सध्यस्स ^{प्रयेष} समान कीरते ≔प्रथम दर्शन में सभी वा सम्मान किया जाता है।।४३६।।

यादृशादे दु हित: ॥ ४-३१७ ॥

पैणाच्यां योद्दण इत्येतमादीना ह इत्यस्य स्थाने तिः इत्यादेशी भवति ॥ यातिमी। ^{[निद्यो} । क्तिमो । भवातिमो । अञ्जातिमो । युम्हातिमो अम्हातिमा ॥

अर्थ —माक्त भाषा में 'बाहश, ताहश' खादि ऐसे जो शब्द है, इन शब्दों में आवश्यिन 'ट' से ^{रत वर दे}गाची-भाषा में 'ति' वस्तु को खादेश प्राप्ति होती है। जैमें —(१) साहरा =सातिमी= हरात चतुरात चदूर से ! (३) त्वन चतुमाता, तुमात् = तरे मे तुमः मे ! (४) मतुःसरः। संस्थाः सरे स सुकः मे । ॥ ८ २२१ ॥

त दिदमोष्टा नेन स्त्रियां तु नाए ॥ ४-३२२ ॥

पंजाच्या विदिद्माः स्थाने टा श्रत्ययंन सह नेन इत्यादेशों महि ॥ मी न्ये नाण इत्यादशो भगति ॥ तत्य च नेन कत्-सिनानेन ॥ सियाम् । प्रति च नाष ४'' इसुमध्यतानेन ॥ देति किम् । एवं चिन्तयन्तो गती मी ताण समीपं॥

सर्य — पैराधी भाषा में 'तद' भर्यनाम खीर दश्म' भर्यनाम क पुलिया रूप में हर्ग रंभीत क पुलिया रूप में हर्ग रंभीत क पुलिया रूप में हर्ग रंभीत के प्रक्षपन में 'टा' पर्यय सीहत खर्यान 'ख्या + श्रत्यय के स्थान पर नेन' रूप भा पोरी राज्य हैं है से — (१) तर + टा = तेन = नेन = तम (पुरुष) सा (२) इड्डम + मा = शनन = रंभीत (३) मा । इसी प्रकार से क्ट 'तर्द्र और इन्यू मय गानी क रंगीत रूप म तुनियानियात क का का गा शत का का नेपा शत का सानेपा सान का सानेपा सान

प्रकृत — मूल सूत्र में 'टा' एम तृताया विमक्ति के एकवपन के प्रश्य की कई मंद्रेश हैं। सवा है ?

उत्तर — तर् भीर 'इन्यू मयनामों वो चन्य विमित्त्यों में इम प्रवार 'स्ता चीर करा स्थान वर उक्त रीति से बो चनाय 'रूवें' व प्रार्थित ही होते हैं, इप्रतिव किय विभिन्न में बान 'रूवें' व प्रार्थित ही होते हैं, इप्रतिव किय विभिन्न में बान चारिय, नन्युवार नृत्राया विभिन्न में गेमा हो। मा मुख्या में रिक्तिया विभिन्न के किया निर्माण है। मा मुख्या में रिक्तिया विभिन्न के किया मार्थित करा है। मार्थित करा है

पैशाच्या यदुक्तं ततोन्य च्छेपं पैशाच्या शीरसेनी वद् भगति ॥ श्रव समरीरी भगवं कर पनी एस्य परिव्यमन्ती हुनेय्य । एमं निवाद भगनतीर कव तापस-नेम-महनं कत ॥ विसं श्रविद्व-पुरव महा घन तन्द्र्न । भगन यति म वर पयच्छिम राज च दाव लोक । ताव विष तराती न्येन तिद्वो सो आगच्छमानो राजा ॥

अर्थ-पैशार्चा भाषा मे अन्य भाषा ब्रॉ की अपेदा से जो कुछ विशेषताएँ हैं, वे सूत्र संख्या १२०२ से ४ २५२ तक के सूत्रों में बतला दी गई हैं। शेष सभी विधि विद्यान शौरसेनी मापा के समान ी जानना चाहिये। शौरसेनी मापा में मो जिन अन्य भाषाओं के विधि विधानों के ऋतुमार जी कार्य होग हैं, उस कार्यको अनुरुत्ति भाइस पैशाची भाषा में विवेक-पूर्वक कर लेनी चाहिये। जो विधि वियान पैराची भाषा में लागू नहीं पडने वाला है, उनका कथन आगे आनेवाले सूत्र सख्या ४ ३२४ में ^{इया जाने} वाला है। वृत्ति में पैशाची मावा श्रीर शौरसेनी मावा की तुलना करने के लिये कुछ उदा ^{१रण} दिये गये हें, चन्हीं की यहाँ पर पुन उद्घृत किया जा रहा है, जिनसे तुलनाक्षक नियति का इन्छ मामास हो सकेगा । (१। अथ सदारीरी भगवात् मकर ध्यन अत्र परि भ्रमन्ती भविष्यति=अय सस ^{ीरो भगव म हर धजो एत्थ परिकम मन्तो हुचेथ्य = धब इमके बाद मूर्त्तिमन्त होकर भगपान कामदेव} ^{वहीं पर} परिश्रमण करते हुए होंगे। (२) एव विधवा भगवत्या कथ तापस वेश ग्रहण कृतम् =एव विवाए भगवतीए कथ तापस वेस-गहन कत = इस प्रकार की (श्रायु और वैमव वाली) भगउठी ^{स (रान} हुमारी द्यादि रूप विरोप स्त्री से) कैसे तापस येश (साध्वीपना) महण किया गया **है**। (३) हेंहने जहण्दपूर्व महाधने हष्ट्वा = एतिस आतिहु-पु र च महा धन तद्रधून = जिसको पहिसे कमी ^{या नहीं} देखाई, ऐसे महाधन को (विपुत्त मात्रावाले झोर बहु मूल्य वाले घन को) देख कर छे। (४) हे भगवन् ! यदि माम् वर प्रयच्छति राज्य च तावत् लोकम् = भगव यातः मे वर पयच्छति ^{। जंच ताथ लोक = हे भगवान्।} यदि श्राप मुक्ते परदान प्रतान करते हैं तो मुक्ते लोकान्त तक का ^{१६२} माप्त होवे । (४) तावत् च तया दूरात् एव हब्द स आगच्छमानी राजा=ताष च तीय ^{एको खेव} विहो सो आगच्छमानो राजा = तब तक आता हुआ वह राना उसने दूर से ही देख ^{क्षिया} गया ॥ इत उदाहर**ों** से विदित होता है कि पैशाची भाषा में शेप समी प्रहार का विधि विधान हौरसेनो क समान ही होता है ॥ ४-३२३ ॥

^{न क–}ग–च–जादि–पट्–शस्यन्तसूत्रोक्तम् । पेशाच्यां क–ग–च– ज–त–द–प–य–वां ॥ ४–३२४ ॥

मायो सुरु (१–१७७) इत्यार्≠य पट्-शमी-शान-सुवा-सप्तवर्षेपादेण्टः (१-२६४) तै पारपानि सुनासि तैर्येदुक्तम् कार्ये तत्र भवति ॥ मरुक्तित् । सगर-प्रच-यचन । विजय क्षेत्र सप्ति । मतन । पाप । त्र्यायुर्व । तेनरो ॥ एनमन्यसृत्रासामप्युदाहरसानि दप्टन्यानि ॥

इति पैशाची-भाषा-व्याकरण-समाप्त

अथ चूलिका-पैशाची-साषा-च्याकरण प्रारम्भ

चूलिका पैशाचिके तृतीय-तुर्ययोराद्य-द्वितीयौ ॥ ४–३२५ ॥

चृतिका पैशाचिके वर्गाणा स्तीय-तुर्ययोः स्थाने यथासख्यमाद्यद्वितीयाँ भवतः ॥

कर । नकर ॥ मार्गणः । मक्षनो ॥ गिरितटम् । किरि-तट ॥ मेषः । मेखो ॥ व्याद्यः ।

स्वी ॥ धर्मः । राम्मो ॥ राजा । राचा ॥ जजरम् । चबर् ॥ जीमृतः । चीमृतो ॥ निर्मरः ।

किन्नो ॥ सम्भरः । छन्छरो ॥ तडागम् । तटाक ॥ मडलम् । मटलं ॥ डमरुकः । टमरुको ॥

किन्नो ॥ सम्भरः । स्वे ॥ दका । दका ॥ मदनः । मतनो ॥ कन्द्रपः । कन्त्रणो ॥

किन्नो ॥ रमसः । रम्भो ॥ रम्मा । रम्फा ॥ भगवती । फकरती ॥ नियोजितम् । नियोचितं ॥

किन्नो विकक्षक्षात्म । पदिमा इस्पस्य स्थाने पटिमा । दाढा इत्यस्य स्थाने ताठा ॥

अर्थ - चृतिका-पैशाचिक भाषा में क वर्ग से प्रारम्म करके प वग तक के अन्तरों में से वर्गीय काष अत्तर क स्यान पर अपने ही वर्गका प्रथम अन्तर हो जाता है और चतुर्थ अन्तर के स्यान पर षाने ही वर्ग का द्वितीय आत्तर हो जाता हैं। क्रम से इन सन्वन्वी उदाहरण इम प्रकार हैं —(१) 'ग' कार के उदाहरण—(छ) नगरम्=नकर = शहर । (व) मार्गण = मककनो = याचक मागनेवाला । (त) ^{मिरिन्तटस्}किरिन्तटं=पहाड का किनाग ॥ (२) 'घ' कार क उदाहरण —(अ) मेघ =मेखो=बादल। (व) व्याप = वक्तो=शेर चित्ता (स) धर्म =खम्मी=धूप॥ (३) 'ज' कार के चदाहरण —(ध) ^{⊽ना≈राचा}=राजा-नृपति (च) कर्जरस्=चच्चर=कमजोर, पीडि़त । (म) जी*सूत =चीम्सो=* ^{मन मात्ता}॥ (४) 'झ' के चदाहरण —झझर =छच्छरो=झाझ बाजा निरोप ॥ गिर्झर =निच्छरो= म्तास्त्रीत ॥ (४) 'डकार' के चराहरण —(छ) तडागम् =तटाके = वालाव। (व) मडडम् = ^{मुदुक}=मन्द, व्यथवा गोल । (स) *उमस्कः = टमस्को =* बाजा विशेष ॥ (६) 'टकार' के उदाहरण — (म) गाडम् =काठ =किठिन मजवूत । (ब) पण्ड =सण्ठी = नपु सकः (स) हक्का = ठक्का = बाचा ितात (4) 'दुकार' क चदाहरण — (का) मदन = मतनी = कामदेव । (य) क्लार्प = क्लाप्पी = ^{कानदेव} । (स) हामोदरः =तामासरो=श्रीकृष्ण-वासुदेव ॥ (न) घकार' के उदाहरण —(श्र) ^{म्यर्}ए = मथुर = मोठा । (ब) *चान्यव* = पन्यवो = माइ बन्धु । (स) धृली = धृली = धूल-रज्ञ (६) ं हा हराहरण —वालक =पालको =वण्वा !॥ (१०) 'मपार' के बदाहरण —(घ) रमव = ^(एक)=सहमा, एकदम । (य) रम्भा=रम्का=श्रप्सता विरोप। (स) भगवती=ककवती=देर्पा, भोनते (११) 'जकार' का चदाहरण —नियोजितम् =नियोखित =कार्य में लगाया हुन्या ॥

इति पैज्ञाची-भाषा-ठयाकरण-समाप्त

अथ चृलिका-पैशाची-साषा-व्याकरण प्रारम्भ

चूलिका पैशाचिके ततीय-तुर्ययोराद्य-द्वितीयौ ॥ ४-३२५॥

चृलिका पैशाचिक वर्गाणा तृतीय-तुर्ययोः स्थाने यथासख्यमाद्यद्वितीयाँ भवतः ॥

गर। नकर ॥ मार्गणः । मकनो ॥ गिरितटम् । किरि-तट ॥ मेघः । मेखो ॥ व्याद्यः ।

स्त्रो ॥ धर्मः । एम्मो ॥ राजा ॥ राचा ॥ जनरम् । चत्र ॥ जीमृतः । चीमृतो ॥ निर्मर ।

व्यो ॥ ककरः । छुच्छरो ॥ तडागम् । तटाक ॥ मंडलम् । मटलं ॥ डमरुकः । टमरुको ॥

१म् । काठ ॥ पएढः । सठो ॥ डका । ठका ॥ मदनः । मतनो ॥ कन्दपं । कन्तपो ॥

शिररः । तामोतरो ॥ मधुरम् । मथुर् ॥ वान्ध्य । पन्थ्यो ॥ धृली । धृली ॥ वालकः ।

लिको ॥ रमसः । रफ्यो ॥ रम्भा । रम्फा ॥ भगगती । फक्वती ॥ नियोजितम् । नियोचितं ॥

विद्याविकिकस्यापि । पडिमा इत्यस्य स्थाने पटिमा । दाढा इत्यस्य स्थाने ताठा ॥

अर्थ. - चूलिका-पैशाचिक मापा में क वर्ग से प्रारम्म करके प वर्ग तक के अन्तरों में से वर्गीय लाय बहर क स्थान पर अपने ही वर्गका प्रथम अन्नर ही जाता है और चतुर्थ अन्नर के स्थान पर षत ही वर्गका द्वितीय अत्तर हो जाता है। क्रम से इन सन्वन्यी बदाहरण इम प्रकार हैं —(१) 'ग' शर के उराहरण—(श्र) नगरम=नकर = शहर । (व) भागण = मक्कनी = वावक-मागनेवाला। (स) ^{मि(स्तटस्-}किरिस्तट=पहाड़ का किनाग ॥ (२) 'घ' कार क उदाहरण--(छ) मेघ =मेखो=बादल। (व) व्याप = चक्खो=शेर चित्ता (स) धर्म =खम्मो=धूप॥ (३) ज' कार के चदाहरण:—(छ) ^{एता-सचा}=राजा-नृपति (व) जर्जरम् =चच्चर=कमजोर, पीडित । (स) जीमृत =चीमृतो = पनवारत ॥ (४) 'झ' के चदाहरण —झझर =छच्छरी-झाझ बाजा विरोप ॥ निर्झर =िच्छरी= स्तासीत ॥ (४) 'डकार' के उराहरण —(छ) तडागम् =तटाक = वालाव । (व) मरङम् = ^{मरुड=सम्ह}, घववा गोल । (स) उमरूक =टमहकी =बाजा विरोप ॥ (६) 'ढकार' के च्याहरण — (ध) गाडस् =काठ = कठिन-मजनूत् । (ब) थण्ड- =सण्ठो = नपु सकः (स) डक्का =ठक्का = बाचा ^{दिरात (3)} 'इकार' क उदाहरण — (घ) मदन = मतनी = कामदेव । (व) फन्दर्ग = फन्तप्पी = मान्दे । (स) हामीहर =तामातरी=श्रीकृष्ण-वासुदेव ॥ (म) धकार' के उदाहरण —(झ) ^{कुरस्=मगुर=मोठा}।(व) *पान्चम* =पन्ययो=माइ बन्धु। (स) धृली=यृली=पून-रज्ञ (६) 'व' हा व्हाहरण —यालक =पालको = यव्वा ।।। (१०) 'मकार' के वहाहरण'—(ध) रमस = ^{रहतो=सह्मा,} ण्करम । (य) रम्मा=रम्फा=धन्सरा विशेष। (स) मगवती=फक्रयती=देषी, ^{भातती} (११) 'जकार का बदाहरण *-नियोजितम्=नियोचित=*कार्य में लगाया हुमा ॥

चूलिका पैशाविक-मापा में परस्पर में खन्य विधि विचानों द्वारा होने वाले परिवर्तनों की संशक्षि फलपना भी स्वयमेव कर लेनी चाहिये, ऐसी विशेष सूचना प्रत्यकार दृक्षि में 'एक्सन्वर्ष' शर्ते ह दे रहे हैं ॥ ४ २>= ॥

इति चूलिका-पैशाची-भाषा-व्याकरण्-समाप्त

अथ ऋपभ्रंश-भाषा-व्याकरण-प्रारंभः

स्वराणां स्वराः प्रायोपभ्रंशे ॥ १-३२६॥

अपमंशे स्वराणां स्थाने प्रायः स्वराः भवन्ति ॥ कच्छु । काच ॥ वेण । वीण ॥ ं बाह्य बाहु ॥ पट्टि । पिट्टि । पुट्टि ॥ तेणु । तिणु । तुणु । सुकिट्ट । सुकिस्रो । सुकृदु ॥ नत्रो । किलिनस्रो ॥ लिद्य । लीद्य । लेद्य ॥ .गउरि । गोरि ॥ प्रायोग्रह्णाद्यस्पापश्रंशे |वन्त्रो वन्त्र्यते, तस्यापि क्वचित् प्राकृतवत् शौरसेनी वच कार्य भवति ॥

भर्य — अवश्रक्ष भाषा में सस्कत-भाषा के राज्यों का रूपान्तर करने पर एक ही शब्द में एक ही सर के स्थान पर प्राय विभिन्न विभिन्न स्वरों की प्राप्ति हुआ करनो है और यों विभिन्न स्वर प्राप्ति से एक ही शब्द के अनेक रूप हो जाया करते हैं। क्रम से उदाहरण इस प्रकार से हें —

i i	
^{१६} रूत-राज = अप अरा-स्पान्तर	= हिन्दी
(१) छत्य = यन्च स्त्रीत कान्च	= कास!
(१) वचन = वेण ग्रीर वीण	= यचन।
(३) बाहु = बाह, बाहा श्रीर बाहु	= सुन्ना।
(४) पच्ठ = पहि, पिहि श्रीर पुहि	= पीठ ।
(१) एष = तसु तिसु घौर तसु	= तिनका।
(६) मुख्त= सुकिंदु और सुकियो तथा मुख्दु	= व्यन्दाकामः।
ं	=गोला, भीगा हुया।
(c) बंबा = विह, लीह और तेह	=तकीर चिन्द।
(६) गीरो= गडिर श्रीर गोरि	≃सुन्दरो व्यथवा पार्वती ॥
भे वराहरणां से विदित होता है कि ध्यवभ्रश भाषा	में एक हा स्वर के स्थान पर अनेक प्रकार के स्वरों
भेशित हुई है। मूल सूत्र में जो 'शाय' ध्रम्यय प्रहण क्यि। निया गया है, उस का तारार्थ यही है कि ध्रम् असामाय में क्या असामाय में क्या असामाय में क्या असामाय में क्या क्या माया माया माया माया माया माया माया म	
ि देशीर वहीं वहीं पर शौरले नी मापा के समान मी हो जाया करता है। यर तब खाने यथा स्थान पर दर्श्याया जायेगा, इन तारवर्ष को 'माया के समान मी हो जाया करता है। यर तब खाने यथा स्थान पर दर्श्याया जायेगा, इन तारवर्ष को 'माय ' कञ्चय से मूल तूत्र में ममन्माया गया है। ४३२६॥	
राज्या आवता, इम तात्पर्य को 'प्राय ' श्रव्यय से	ते मूल सूत्र में मगमाया गया है ॥ ४३२६ ॥

स्यादौ दोर्घ-हृस्वौ ॥ ४-३३० ॥

अर्थ — खपन्न रा भाषा में खकारान्त राह्यों में श्रवमा विमिक्त और हितीया विमिक्त र वचन में 'सि तथा खम्' शत्ययों के स्थान पर 'ख' अत्यय को खादेश प्राप्ति विकल से होता है। विधान खकारान्त पुलिंग खौर खकारान्त नपु सक लिंग वाले सभी राह्य के लिये जानता। वराहरण लिये पुत्ति में जो गाथा चट्छून की गई है टसमें 'दह्महु, भयक्त, सक्त, लिगान, चिह बच और पहिंच राह्यों में प्रथमा-विभिक्त के एक वचन में पुरिलंग में 'ख' अत्यय की खादेश प्राप्ति 'की गई है। इसी प्रक्ष 'खन्महुं और खमुहु 'पर्दे में हितीया विमक्ति के एक वचन में पुरिलंग में 'व' प्रत्यय की खादेश प्राप्ति 'की गई है। इसी प्रक्ष खमुहु और खमुहु 'पर्दे में हितीया विमक्ति के एक वचन में पुरिलंग में 'व' प्रत्यय की खादेश प्राप्ति सद्भाव प्रदिश्चित किया गया है। यों खन्यत्र भी प्रयमा हितीया के एक वचन में समक्ष लेगा चाहिय। गाथा का सस्कृत तथा हिन्दो भाषान्तर यों जानना चाहिये —

संख्त —दृशमुख भुवन भयकर तोपित शकर', निर्गत रथपरे थास्डः ॥ चतुर्भुख पण्मुखस्यास्या एकस्मिन् लागित्या इपैरेवेन पटित' ॥

अर्थ —सतार की भयकर प्रतीत होने वाला. खोर जिसने ग्रहादेव शंकर हो (अपनी तशरा। सतुष्ट किया था, ऐसा दशमुल वाला रावण श्रेष्ट रथ पर चढ़ा हुआ निक्ला था। चार मुह बाल महा का खोर छह मुख वाले कार्तिन्यजी का प्यान करके (मानो उनको कृषा से उन दोनों से दरा मुखें। प्राप्ति की हो, इस रीिंत से) देव ने-(भाग्य ने-एक ही व्यक्ति के दश मुखों का) निर्माण कर दिवा है वह प्रतीत हो रहा था। ४-३३१॥

सौ पुंस्योद्वा ॥ ४-३३२ ॥

श्रपश्र शे पुर्लिमे वर्तमानस्य नाम्नोकारस्य सी परे श्रोकारो वा भगित ॥ श्रमालिश्र-नेह-निवद्दाह, जोश्रम्ण-लक्खु वि जान ॥ विरस-सएए वि जो मिलह; सिंह ! सोक्यहँ सो ठाउ ॥ १ ॥ पुरसीति कि १ श्रमहिँ श्रमु न मिलिल, हिल ! श्रहरे श्रहरू न पृतु ॥ पिश्र जो श्रनिहेँ मुह-कमलु प्रगह सुरत समतु ॥ २ ॥

अर्थ — अपन्न रा भाषा में स्थारान्त पुल्लिंग राध्तों में प्रथमा विमक्ति के एक बचन में '। प्रत्यय के स्थान पर विकल्प से 'खो' प्रत्यय को प्राांत हाती है। जैसा कि उपरोक्त गाया में जो' कीर '। सर्वनाम रूपों में देखा जा सकता है। यो स्थपन्न रा भाषा में स्थकागन्त पुल्लिंग राग्तों में प्रथमा विणी क एक वचन में तीन प्रत्यय होते हूं, जो कि इस प्रकार हूं —(१) 'उ' (४-१३१), (२) 'खो' (७) (४३१ स्वीर (३) ''लुक्-०" (४ २४४) ॥

उपरोक्त गाया का संस्कृत में श्रीर हिन्ही में रूपान्तर निम्न प्रकार से हैं -

##*********** अगलितस्नेह-निर्शृतानां, योजनलचमपि जायताम् ॥

संस्कृतः — अगलितस्नेह – निर्देत्तानां, योजनलद्यमि जायताम् ॥ वर्षशतेनापि यः मिलति, सिख ! सीख्यानां स स्थानम् ॥१॥

अर्थ —जिनका परस्पर में प्रेम नहीं टूटा है और यदि वह श्रस्तह है तो चाहे वे (प्रेमी) लाख इता भी दूर बसे जाय, (तो भी कोई चिन्ता की बात नहीं है, क्योंकि जब कभी चाहे सो बर्गे में भी का मिलना होता है, तो भी हे सिल । वह (मिलना) सुखों का ही स्थान होता है।

परन -- मूल सूत्र में "पुल्लिंग में ही" ऐसा उल्लेख क्यों किया गया है ?

उत्तर'— झकारान्त में नपु सकलिंग वाले भी शब्द होते हैं, और उनमें प्रथम। विमिष्ठ क एक वन में "श्रो" प्रत्यव की प्राप्ति नहीं होती है, इसिलये "श्रकारान्त पुल्लिंग" शब्द का उल्लेख किया गया है। श्रकारान्त नपु सकलिंग वाले शब्दों में प्रथमा विमिष्ठ के एक वचन में केवल दो प्रत्यय ही होते हैं, जो कि इस प्रकार हैं —(१) "ड" और (२) 'लुक-०"। यों "श्रो" प्रत्यय का निषेप करने के लिये "पुषि" ऐसे पद का मूल सूत्र में प्रदर्शन किया गया। उदाहरण के रूप में जो दूसरी गाया ने "श्र्म की गई है, उसमें "श्रा, भिलिंड, सुरंड और समन्त "श्रादि शब्द प्रथमा विमिष्ठ के एक वचन में होने पर भी ये शब्द श्रकारान्त नपु सकलिंग वाले हैं श्रीर इसीलिय इनमें "श्री" प्रत्यय की प्राप्ति नहीं हो पर भी ये शब्द श्रकारान्त नपु सकलिंग वाले हैं श्रीर इसीलिय इनमें "श्री" प्रत्यय की प्राप्ति नहीं हो हिंद "ड" प्रत्यय की प्राप्ति हुई है। यों श्रन्यत्र भी समक्त लेना चाहिये। गाया का सम्छत श्रनुवाद हिंदी सहित इन प्रकार है —

हिन्दी — हे सिख ! अर्गो से धाग भी नहीं भिल पाये थे, और होठ मे होठ भी नहीं भिला था, व्याभियतम के मुद्रा कमल को (बराबर) देख भी नहीं पाई थी कि (इतने में ही) हमारा रिव जो हा नोमक सेल समाप्त हो गया ॥ ४३३२॥

॥ एड्डि ४-३३३॥

अपन्न शे श्रकारस्य टायामेरारो भगति ॥ जे महु दिएणा दिश्रहडा दइए पत्रसन्तेण ॥ ताण गणन्तिएँ अगुलिउ जन्त्ररिश्राउ नदेण ॥१॥

अर्थ — अवभ्य हा मापा में आकारान्त शब्दों में छतीया विमक्ति के एक बयन में प्राप्तव्य "टा" है स्वान पर (वैकल्पिक रूप से) "स्" प्रस्वय की आदेश प्राप्ति होती दें। जीना कि नापा में आये द्वप पर 'दहएँ'' से बिदित होता है। *इचितेन =इइ*एँ=पितसे ॥ मूल गाया का सन्छत अनुवार पूर्वक हिली अर्थ इस प्रकार से हैं —

संस्कृत — ये मम दत्ता दिवसाः दियतेन प्रवसता ॥ तान् गणयन्त्याः (मम) अंगुल्यः जर्जरिताः नखेन ॥

हिन्दा — विदेश जाते हुए प्रियतम पितदेव ने (पुन लीट आते के लिये। मुक्ते जितने दिनों की वात कही थी, उन दिनों को नरा से गिनते हुए (मेरी) आगुलियों ही घिस गई है, (परन्तु पितदेव विद्रों से नहीं लीटे हें ।) ॥४-३३३॥

क्ति नेच्च ॥ ४-३३४॥

त्रपभ्रशे श्रकारस्य हिना सह इकार एकारश्र मवत ॥ सायह्र उप्परि तसु घरइ, तन्ति घन्लह रयणाहं॥ साम सुभिच्छ विपरिहरइ, समासेह सलाह ॥१॥ तले घन्लह।

अर्थ — खपध रा भाषा में खकारान्त राध्यों में सप्तमी विभक्ति के एक वचत में प्राप्तम प्रस्तय "कि" के स्थान पर "इकार" खीर 'एकार" प्रस्तयों की खादेश प्राप्ति होती है। ऐसा होते हा खमरान्त राध्यों के खन्त में रहे हुए 'ख' स्वर का लोप हो जाता है और तत्वरचात् रोप ब्वट्ट जना है। इस "इकार" की स्वीजना की जाती है। जैसा कि गाया में दिये गये पर 'तिलि" — 'लि" में लाना जा सकता है। इस ''ठांल" में सप्तभी बोधक प्रत्यय "इकार" की प्राप्ति, हुई है। गाया जा महान खीर हिन्दों भाषान्तर क्रम से इस प्रकार हैं —

सस्कृतः—सागरः उपरि तृणानि घरति, तसे दिपति रत्नानि ॥ स्वामी सुभूत्यमपि परिहरति, समानयति रातान् ॥

हिन्दी — समुद्र धास प्यादि तिनरों को तो ऊपर सतह पर घारण करता है और बहुमूहर रहीं को ठेठ नीचे पेंद्र में रखता है। (तदनुसार यह सत्य ही है कि) स्वामी खच्छे सेवकों वो तो स्वाग देता है खौर दुष्ट (सेवकों) का मन्मान करता है। यहाँ पर 'तले' पद के स्थान पर खपभ्रश में 'तिन' पर झ प्रयोग दिया गया है। 'ए' कार पद्म में 'तले' भी होता है।। ४ २३४॥

भिस्येद्वा ॥ ४–३३५ ॥

अपमंशे अकारस्य मिसि परे एकारी वा भवति ॥

गुणहिं न सपइ कित्ति पर् फल लिहित्रा भुञ्जन्ति ॥ केमरि न , लहड जोड्डिय, जि नय लक्ष्मेहिं घेष्पन्ति ॥ १ ॥

अर्थ —श्रवभन्न भाषा में श्रकारान्त राब्दों में तृतीया बहुवचन वोषक प्रत्यय 'मिस= हि हिं' है परे रहन पर उन श्रकारान्त राब्दों में श्रन्त्य वण 'श्र' कार के ध्यान पर विकल्प से 'य' कार की प्राप्ति होत्रा है। जैसांकि गाथा में श्राय हुए पद 'लक्स्प्रेहिं' से जाना जा सकता है। द्वितीय पद 'गुणहिं' में फल्स श्रकार को 'एकार' की प्राप्ति नहीं हुई है। यो दोनो प्रकार की दिव्यति को जान लेना चाहिये। 'खगाया का सस्क्रन श्रीर हिन्दी श्रनुवाद क्रम से इस प्रकार है —

सम्कृतः — गुर्णैः न सपत्, कीर्ति पर फलानि लिसितानि भुंजन्ति । केसरी कपर्दिकामिं न लभते, गजाः लच्चै गृहान्ते ॥

हिन्दो —गुणों मे केवल कीर्ति मिलती है, न कि घन सपित्त । मनुष्य उन्हीं फर्नों को मोगते हैं, ब कि माग्य द्वारा लिसे हुए इ ते हें । कशरीसिंह गुग्र सम्पन्न होत हुए मी उसको कोई मी एक कोड़ी से में कोदने को तेंयार नहीं होता है, जबकि हाथियों को लास रूपये देकर मी लोग खरीद लिया परते हैं॥ १३१९॥

डसे हें-इ॥ ४-३३६॥

श्रस्येति पञ्चम्यन्त विपरिणम्यते । अपभ्र शे श्रकारात् परस्य डमे हें-हृ इत्यादेशौं ^१ नाः॥

्डिट्टर्टेर्ग्य्यडं फलडँ, जसु म्हुपल्ला वब्जेड ॥ स्रोति महद्कुसुप्रसु जिस्ते ते उच्छिमि घरेड॥ १॥ वच्छहुगुस्दड॥

संस्कृत — ध्वात् गृहाति फलानि जन, कड पह्नवान् वर्जयति ॥ तथापि महाद्रम सुजन इव तान् उत्सगे धरति ॥ १ ॥

अर्थ —मनुष्य युत्त से (मघुर) फलों को तो महण कर लेता है किन्तु बसी युत्त के हरूवे बतों का होड़ देता है। तो भी वह महा युत्त कत पतों को गञ्जन पुरुषों के समान अपनी गोद में ही पास्य कि रहता है। जैसे सज्जन पुरुष कट्ठ अथवा मीठी सभी वार्तों को सहन करते हैं, वैसे ही युत्त भी वर्ष परिस्थितियों को सहन करता है। ४-३३६॥

भ्यसो हुं॥ ४-३३७॥

अवभ्रशे अकारात् परस्य भ्यस पचमी बहुवचनस्य हुं इत्यादेशो भगति ॥ दूरुहारो पडिउ खलु अप्पणु जग्रु मारेह ॥ जिह गिरि-सिंग हुं पडिअ सिल अन्तु वि चूरू करेह ॥१॥

अर्थ — अपन्न रा मापा में अकारान्त शब्दों में पत्रमी विमक्ति के बहुवयन में भावच्य अर्थ 'भ्यम्' के स्थान पर 'हुं' प्रत्यय की आदेश प्राप्ति होती है। जैसा कि गाया में आपे हुए पर 'गिरि-सिंगहु = गिरि - यू गेभ्य = पहाड़ की चोटियों से' जाना जा सकता है। एक गाया का सस्त हिन्दी अनुवाद अम से इस म्कार हैं —

सम्कृत — दूरोष्ट्रायोन पतितः राज्ञ श्रात्मानं जर्न (च) मारयित ॥ यथा गिरि-श्वोम्य पतिता शिज्ञा श्रन्यदपि चूर्यो करोति ॥

अर्थ —एक दुष्ट आदमी जब दूर से ऊचाई से छलाग लगाता है तो खुर मी मरता है और दूसरों को भी मारता है, जैसे कि वहाड़ की चोटियों से गिरी हुई वही शिला अपने भी दुषहें हु^{क हे कर} हालती है और (उसकी चोट में आये हुए) अन्य का भी विनाश कर देती है।। ४ ३३०॥

डसः सु-हो-स्तवः॥ ४-३३८॥

श्रपञ्जंशे श्रकारात् परस्य ङ सः स्थाने सु, ही, स्सु इति त्रय श्रादेशा भवन्ति ॥ जो गुख गोवइ श्रप्रखा, पयडा करह परस्सु ॥ तसु हर्जे कल्लि-जुगि दुल्लहहो बलि किज्जरं सुश्रयस्सु ॥ १ ॥

अर्थ —श्रपश्च श मापों में श्रफारान्त शब्दों के पच्छी विमक्ति के एकवचन में श्राप्तव्य प्राप्त 'क स्थान पर 'सु, हो श्रीर 'स्सु' ऐसे ठीन प्राययों की श्रादेश शक्ति होती हैं । सूत्र-सत्या ४ १४४ से ह्मी विमक्ति में 'लोप' रूप श्रवस्था की प्राप्ति भी हो सकती है। इनके उदाहरण गायानुसार षम से इस प्रकार हैं—(१) परस्तु = परस्य = दूसरों के, (२) तसु = तस्य = उसके, (३) दुल्लहहो = दुर्लगस्य = दूसरें के, (२) तसु = तस्य = उसके, (३) दुल्लहहो = दुर्लगस्य = दूसरें के बीर(४) सुअणस्य=सुजनस्य = सज्जन पुरुप के।। इन चदाहरणों में 'तु, हो श्रीर रसु' प्रत्यय के पे के। इस प्रद्यान देशा जा सकता है। 'तुक्' प्रत्यय होने पर 'जण श्रयवा जणा=मनुष्य का' ऐसा कि वी।। १९२० का परिक्रत हैं स्व

सस्कृतः—यः गुणान् गोपयति आत्मीयान् प्रकटान् करोति परस्य ॥ तस्य ऋहं कलियुगे हुर्लभस्य बर्लि करोमि सुजनस्य ॥ १ ॥

हिम्ही —में अपनी श्रद्धाजलि रूप सद्मावना इस कलियुग में दुर्लभ वस सज्जन श्रीर भट्र पुरुष हिल्मे प्रस्तुत करता हूँ जो कि अपने स्वय के गुर्गों को डाकता हैं, अपने गुर्गों की कीर्ति नहां करता है और दूगरों के गुर्णा को प्रकट करता है 11 ४-३३८॥

ब्यामो हं॥ ४-३३६॥

श्रपभ्रंरो श्रकारात् परस्यामोहमित्यादेशो मवति ॥ वणह तङ्ज्जी मंगि न वि तें श्रवड-यडि वसन्ति॥ श्रह जणु लग्गि वि उत्तरह श्रह सह सह मज्जन्ति॥१॥

वर्ष — चपश्रश मापा में धकारान्त शब्दों के पष्टी बहुवचन में प्राप्तव्य सन्द्रत प्रत्यय 'खाम्' के बात पर 'ह' प्रत्यच की धादेश प्राप्ति होती हैं। इसी प्रकार से सूत्र-सख्या ४-३४४ से 'लुक्=०' रूप से भ वर्षी विभक्ति में प्राप्ति हो सक्ती हैं। उदाहरण रूप से गाया में सर्पाहत पर इस प्रकार हैं — (1) तणह च्हणानास् = तिनकों क। गाया का सस्द्रत धौर हिन्दी धनुवाद क्षम से इस प्रकार हैं —

संस्कृत:— ह्यानाम् हृतीया मङ्गी नापि,(= नैव), तानि अवट तटे यमन्ति ॥ अथ अनः लगित्वा उतरति अध सह स्वय मन्जन्ति ॥

हिनी — जी पास नदी नाला छादि के किनारे पर चगता है, उसकी दो ही खबस्यार्गे होती हैं, है ही खबस्या का खमाव हैं, या तो लोग उनको परइ करके उतरते हैं खयवा उनके साथ स्वय द्वव रहा है ॥ ४ ३३६॥

हु वेदुद्भयाम् ॥ ४–३४०॥

भपश्रशे इकारोकाराम्यां परस्यामो हु ह चादेशां मनतः॥ दर्ड बढावड् विश्व तह्हु सउण्डिह पक्क फलाई॥

सी वरि सुक्ल पहड़ म्या निम्करण हिन्दालन्ययाह ॥ १॥ प्रायोधिकारात् क्षचित् सुपोपि हु। ''' में मुक्त विद्यार सामि श्रहो, गरुआ मुरु विक्ते वि॥ ﴿﴿ ﴾ हु दिसिहिं सहई दीपिण करें वि॥ १॥

गर्थ — व्यवभ्रश भाषा में इकारान्त और उकारान्त राब्दों के पाउ विर्माण के बहुवन में सम्बन्ध में प्राप्तस्य 'आम्' के स्थान पर 'हु और ह' ऐसे दो भरयों की धादेश गिति होती है। सम्बन्ध में प्राप्त प्रत्य 'आम्' के स्थान पर 'हु और ह' ऐसे दो भरयों की धादेश गिति होती है। कि प्रथम गाथा में धाये हुए निस्नोक्त पहें से जाना जा सबता है। (१) तस्तु निरूप के, (२) सउणिहज़कु — नीनां — पिच्चों कें (लिये) प्राप्त कें खप्ता धीनि माणकों में 'बहुवी और पण्डी' विभक्ति एक जैसी ही होती हैं। इसिल्ये वृक्ता पद 'मंदाशह' पण्डी में होता हुष्टा भी बहुवी विभक्ति कें प्रति हैं —

सस्कृतः—देव घटयति वने तस्त्यां शक्तनीनां (कृते) पक्य-फलीन ॥ तद् वर सीख्य प्रिनिष्टानि नापि कर्णयोः छल-वचनानि ॥

अर्थ — मान्य ने वन में पिचयों के लिय छुत्तों पर पके हुए फलों का निर्माण क्या हैं। ऐना होना पिचयों के लिये बहुत सुलकारी हां हैं, क्योंकि इससे (पेट पूर्ति के लिये) पिचयों, यो हुए पुर्वा के बचन तो कानों हारा नहीं सुनने पड़त हैं, अर्थात राल वेचन कानों में प्रवेश तो नहीं करते हैं ॥ १॥

'पाय' श्राधकार से 'हु' प्रस्यय इकारोन्त उकारान्त' शब्दों क लिये सप्तमी विभक्ति सहविष् में भी प्रयुक्त हाता हुआ देखा जाता है। सप्तमी के बहुवेषन में हि' प्रस्यय की प्राप्ति आते आते आते स्वर्म स्व संट्या ४-२४७ से जीनना चाहिये। यहाँ पर 'हु' प्रस्यय वी तिहि के लिये हिताय गामा में 'दुइ=' ह्याँ = दों में ऐमा 'पद दिया गर्या है। हितीय गांधा का सम्बत्त तथा हिन्दी अनुराद क्रम स इन प्रकार हैं —

संस्कृत — धनलः विद्यति (विद्यतः) स्वामिनः गुरू मार प्रेचय ॥ श्रह् किंन गुक्तः द्वयोर्दिशो राडे के कृत्वा ॥ २ ॥

अर्थ — (क्विं वरूरमा है कि एक विवेती) सफेर वैज अपन (एक और जुते हर) खानी में भारी बोक स (जदा हुआ) देस करन अस्यत्यत है ज का अनुमय करता है और (अपने आप के लिये क्वपना करता है कि) – में दो, विमानों में क्यों नहीं विमानित कर दिया गया, जिससे कि में जुर को दोनों दिशाओं में दोनों और जोत दिया जाता ॥ ४ ३४ ।।

इसि-भ्यस्-होनां हे-हु -हयः ॥ ४-३४१ ॥

श्रपत्र शे इदुद्-स्या परेपा ङ सि-स्यस-ङि इत्ये तेपां यथासल्य हे, हु, हि इत्येते श्रय गरेगाः गरन्ति ।। इसे हें।

> गिरिहें सिलायलु, तरुहें फलु घेष्ण्ड नीसावँन्नु ॥ घरु मेन्लेष्पिणु, माणुसहं तो चि न रूच्चइ रन्नु ॥ १ ॥ भ्यसो हुं । तरुहुं-चि बक्कलु फलु मुखि नि परिहणु श्रमणु लहन्ति ॥ सामिहुं, एचिउ श्रमालुउ, श्रायह भिच्चु गृहन्ति ॥२॥

डे हैं। श्रह विरत्त-पहाउ जि किल हि घम्सु ॥ ३ ॥

अर्थ — अपभरा भाषा में इकारान्त शन्हों के और उकारान्त राष्ट्रों के पवमी विमक्ति के एक-वषत में प्राप्तव्य सन्द्रत प्रत्यय 'इसि के स्थान पर 'हे' प्रत्यय की आदेरा प्राप्ति होती है। इन्हीं राष्ट्रों के पदमी विभक्ति के बहुवचन में प्राप्तव्य सस्कृत प्रत्यय 'श्यम्' के स्थान पर 'हु' प्रत्यय की आदेश प्राप्ति होता है और सम्भी विभक्ति के एकवचन में शाहब्य सर्कृत प्रत्यय 'हि' के स्थान पर 'हि' प्रत्यय की आदेश प्राप्ति जानना चाहिये। इन तीनों प्रकार के प्रत्ययों के व्याहरण कम से उपरोक्त नीनों गायाचों में दिये गये हैं। जिन्हों में कम से संस्कृत-हिन्दी अनुवाद सहित नीचे च्यूष्त कर रहा हूँ। 'छसि-है' के ब्याहरण — (१) गिरिहे-निरे =पहाढ़ से। (२) तरुहे-वरो = एक्त से। गाथा का संपूर्ण अनुवाद में हैं—

सम्बद्धः—गिरं शिलातल, तरोः फल गृह्यते नि सामान्यम्।। गृह मुक्त्वा मनुष्याखां तथापि न रोचते व्यरण्यम्।।

अर्थ — इस विश्व में सोने के लिये सुल पूर्वक विश्वत शिला तल पहाड़ से जाम हो सकता है और लाने के लिय बिना किसी कठिनाई क प्रच स पल प्राप्त हो सकते हैं, फिर मी प्राप्त्य है कि ध्वनेक धिनाईयों से भरे हुए एटस्थाश्रम को छोड़ करके मनुष्यों को वन वास रुचिन्सर नहीं होता हैं। व्यरप्य-न्त्रित अच्छा नहीं मालूम होता है। 'श्यस्— हु' के टप्टान्त यों हैं — (१) तरह ज्वरुप्य — वृद्धों से धीर (३) साभिष्ठ = रशक्तिस्य = मालिकों से। यों होनों पढ़ों में प्रचमी विमक्ति के बहुवपन में 'श्यस' स्वयं के स्थान पर 'हु' प्रक्ष्य का खादेश प्राप्ति हुई हैं। गाथा का धनुवाद यों हैं —

सस्कृत:—तरभ्य श्रवि वन्क्लं फल प्रनय श्रवि परिधान श्रणनं लभन्ते ॥ स्वामिभ्यः इयत् श्रधिक (श्रमालुजं) श्रादर् भृत्याः गृह्यन्ति ॥ २ ॥

हिन्दी — जिम तरह से मुनिगण वृत्तों से छाल तो परिनने के लिये प्राप्त करते हैं और प्रश्न सार्व है लिय प्राप्त करते हैं, उसी तरह से नौकर भी (अपनी गुलामी के ण्यन में) अपने स्वामी से भी आने पीने और पिहनने की सामग्री के श्रतावा केवल (नकती रूप से) थोड़ा सा शादर (गाउक्षे) श्राधिक गाप्त करते हैं। (फिर मी श्राध्वर्य हैं कि वन्हें वैराग्य नहीं श्राता हैं)॥२॥ 'ब्रिट्टीह' बाह्यल यों हैं.—किलिहि=ककी=कितियुग में। पूरी काव्य-पिक का सम्कृत पूर्वक हिन्दी श्रतुवाद यों हैं ---

संस्कृतः---श्रय विरत्त-प्रमाव एव फत्ती धर्मः।॥३॥

हिन्दी'—कलियुग में निश्चय ही धर्म छति स्वल्प प्रमाव बाला हो गया है। ॥ ३॥ ४ १४१॥ :

ब्राट्टी गानुस्वारी ॥ ४–३४२ं ॥

त्रपञ्जरो श्रकारात् परस्य टा वचनस्य खान्तस्वारावादेशी मवत ॥ दर्र पर सन्तेख ॥

जर्थ — ध्यपश्चरा मापा में धकारान्त राष्ट्रों के तृतीया विमक्ति के ध्रव्यवन में प्राप्त्य सहरूर प्रत्यय 'टा' के स्थान पर (१) 'पा' छोर (२) 'छानुस्वार' यों दो प्रत्ययों की छारेग प्राप्ति होती है। है। अप ध्यारेग प्राप्त के पूर्व भूल छाड़ रूप धकारान्त शब्दों के छान्त्व स्वर 'छा' के स्थान पर स्वनस्था च-१४ से 'प' की प्राप्ति होती । यो प्राप्त शत्ययों का रूप (१) एण छोर (२) 'प' हो जायगा। से संख्या १-२७ से 'एए' के स्थान पर 'पए' रूप की भी विकरण से प्राप्ति होगी। इस प्रकार 'से रुगीय विमक्ति के प्रक्वचन में छाकारान्त शब्दों में तीन प्रत्यय हो जायगे। जैसे —(१) जियोण, (२) डिएवें (३) जियों । वृत्ति में दिया गया उदाहर्य इस प्रकार से हैं — दृष्ट प्रथमन्त्रण = दृष्यतेन प्रवक्ता न्यावास करते हुए (विदेश जाते हुए) पतिन्य से ॥ इस वाव्य में 'ण' छोर 'ब्रतुस्वार' दोनों प्रवर्थों हा प्रप्रयोग प्रवर्शित कर दिया गया है। शब्दान्त्य 'खकार' के स्थान पर 'णकार' को प्राप्ति, भी हुई हैं। ॥ ६ १४९ ॥

एं चेदुतः ॥ ४-३४३॥,

थ्रपुत्र शे इकारीकाराम्यां परस्य टावचनस्य ए चकारात् गातुम्बारी ' मवन्ति ॥ ए ॥

> श्रीमारं उण्हर होई जगु वार्ष सीश्रलु तेर्गे॥ जो पुरा श्रीमां सीश्रला तसु उगह चरा केर्गे॥१॥ गामुस्वारी।

ं विष्यित्र-स्वारउ जह वि पिउ तो वि तः स्वायिहि स्वन्छ ॥ स्विमाय दहुत जह वि पहः तो तें स्वर्गि कन्छ ॥ २ ॥ प्यमुकारादप्युदादार्याः ॥

क्यं —श्रवश्र'श भाषा में इकारान्त श्रीर उकारान्त शब्दों में, पुर्लिंग श्रीर नपुसक्तिंगों में हीवा विमक्ति के एकवचन में प्राप्तव्य संस्कृत प्रत्यय 'टा' के स्थान पर 'ए' प्रत्यय की प्राप्ति होती हैं। एक सिवाय मूल-सूत्र में श्रीर वृत्ति में प्रदर्शित 'चकार' से सूत्र-सख्या ४ ३४२ में वर्शित प्रत्यय 'श्रनुस्वार ाग ए' की अनुष्टति भी कर लेनी चाहिये। यों इकारान्त उकारा त शब्दों में तृतीया विभक्ति के एक |वन में 'ए, श्रनुस्वार श्रीर ख' इन तीन प्रत्ययों का सद्भाव हो जाता है। इन के श्रविरिक्त सुत्र-सख्या २४ से प्राप्त प्रत्यय 'गा' पर विकल्प से घ्यनुस्वार की प्राप्ति भी हो जाती है। 'प' प्रत्यय के उदाहरण शोक प्रयम गाथा में इस प्रकार दिये गये हैं —(१) अगिनना =अग्निएं = श्रीन से, (२) वातेम = ण=हवा से। श्रनुस्वार का चदाहरण —(१) अग्निना = अग्नि-द्यग्नि से। द्वितीय गाया में 'गु' व्यश्रीर 'श्रनुस्वार' प्रत्येय का एक एक चदाहरण दिया गया हैं, जो कि इस प्रकार हैं — ^{१) अरिगण=अरिनना=श्रारिन} मे श्रीर (२) त=तेन=उससे, तथा (३) अरिंग=अरिनना=श्रारिन । वे बदाहरण इकारान्त पुल्लिम शब्द के दिये गये हैं और चकारान्त पुल्लिम शब्द के चदाहरणों की लाना स्वयमेव कर लेनी चाहिये, ऐसी सूचना पन्यकार पृत्ति में देते हैं। चपरोक्त दोनों गाथाच्ये का क्ति एव हिन्दी अनुवाद कम से इस प्रकार है ---

सस्कृत —श्रान्निना उष्णं भवति जगतः; वातेन शीतलं तथा। यः पुन श्रग्निना भीतल . तस्य उप्णत्वं कथम् ॥ १ ॥

हिन्दी --यह मारा ससार श्राग्न से उष्णता का श्रनुभव करता है श्रीर हवा से शीतलता का ^{;नृभद करता है, परन्तु जो (सन्त-महात्मा) ऋग्नि से शीतलता का ध्यनमब कर सक्ते हैं, उनकी} व्यव नितर पीड़ा कैसे प्राप्त हो सकती है ? अर्थात् स्याग शील महात्मा को विषय कपाय रूप द्यान त्र मा पीड़ा नहीं पहुँचा सकती हैं।

संस्कृतः--विप्रिय कारकः यद्यपि प्रिय तद्पित आनय अद्य। अग्निना दग्ध यद्यपि गृहं, तदपि तेन अग्निना कार्यम् ॥ २ ॥

हिन्ती — मेरा पित सुमे दुःख देने वाला हैं, फिर भी उसको बाज (हो) यहाँ पर लाबो। र्पोंकि बन्त से गत्वा वह मेरा स्वामी ही हैं) जैसे कि ब्रग्नि से बचिष सारा घर जल गया हैं, फिर ेर्पा श्रीन का त्याग किया जा सकतो हैं ? अर्थात क्या दैनिक कार्यों में श्रीण की व्यावस्य बता पढ़ने रधान का उपयोग नहीं किया जाता है। ॥ २ ॥ ४ ३४३ ॥

स्यम्-जस्-श्सां लुक् ॥ ४-३४४ ॥

^{अपम्र} शे सि, अम्, जस्, शस्, इत्येतेपा लोपो मवति ॥ एइ ति घोडा, एह यति ॥ ^{१ ३३०}) इत्यादि । श्रत्रं स्यम् जसा लोप ॥

अर्थ — खपन्न श मापा में सबीधन के बहुवचन में सहाश्रों में प्राप्तन्य प्रत्यय 'जत' है शान पर (विकल्प से) 'हो' प्रत्यय रूप को खादेश-गिति होता हैं। इस सूत्र को सून सल्या ४ ३४४ क क्षान पर खपवाद रूप समम्ता चाहिये। चदाइरण इम प्रकार हैं —हे तरूणा । हे तरूण्य (च) हात गण, आत्मन घात मा फुरूत = तरूणहो । तरूणिहो । गुणिड महें, करतु म अप्पहो पाड = चरे नश्युक्त और खरे नवयुवियों। मैंने (सत्य) ज्ञान मात किया हैं, इमितिये तुम अपने धापको (विवक्ष्मांत्र के हात कर के) आत्मनचात मत करो। यहाँ पर 'तरुणहा और कर्मणहो' पद सबीपन बहुवचन इस्त्र प्राप्त होकर 'हो' प्रथ्यानत हैं ॥ ४-२४६॥

भिस्सुपोर्हि' ॥ ४-३४७ ॥

व्यवज्ञरो मिस्सुपो स्थाने हिं इत्यादेशो मनति ॥ गुर्याहं न सं१६ किति पर (४-३३५) ॥ सुप् ॥ माईरहि जिव मारह मगोहि तिहि वि पयद्वह ॥

अर्थ — अपभ्र श भाषा में हतीया के बहुवचन में भारत्य प्रत्यय 'मिस्' के स्थान पर 'हिं प्रत्य की आदेश प्राप्ति होती हैं, इसी मकार से सप्तमी विभक्ति के बहुवचन में भी प्राप्तव्य प्रत्य 'हिं?' के स्थान पर भी अपभ्र श भाषा में 'हि' प्रत्यय की आदेश प्राप्ति होती हैं। दोनों के कम से उदाहरण सम् मकार हैं —

(१) पूण न सपत् कार्ति पर = गुणाहि न सपड़ किसी पर = गुणों से सपित नहीं प्रांच ही आ तकती हैं। (पूरी गाया सूत्र-सख्या ४३३४ है होता) (२) भागीरथी यथा भारते त्रिप्त मार्गेष्ठ प्रवर्तते = भाईराहि जिल्ले भारह मार्गेष्ठि तिर्दि विषयहह = जैसे गाग नही भारतवर्ष में छान मार्गों में बहतो है। यहां पर 'क्रगोहि कीर्द तिर्दि' पर्दे है सप्तमी बहुषचत-बोधक-कथ म 'पुप्' प्रत्यय क ह्यान पर 'हिं प्रश्यय को बादेश प्राप्ति देखी जाती है। ॥ १८-२१०॥

स्त्रियां जस्-शसोरुदोत्॥ ४-३३८॥

श्चपभ्रं गे स्वियां वर्तमानानाम्नाः परस्य जस शसयः प्रत्येकपुदोवानादेशी भवतः स्रोपायवादी ॥ जस । श्रंगुलिउ जन्जरियाउ नहेंच ॥ (४--३३३) शसः । सन्दर-सन्वज्ञाउ विस्तालिखीमो पेन्छन्ताय ॥ १ ॥

वचन-मेदान्न यथा-सल्यम् ॥

ेत्रय — अपन्न शामार्गिसभी प्रकार के स्त्रीलिंग शब्दों में प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में . शक्त प्रस्तव अस के स्थान पर 'ख' छोर 'छो' ऐसे दो प्रस्तवों की छादेश प्राप्ति होती है, इसी प्रकार म १ दा स्त्रीलिंग शस्त्रों के द्वितीया विभक्ति के बहुवचन में भी प्राप्तब्य प्रत्यय 'शस' के स्थान पर चक्त र बीर 'ख' ऐसे दो प्रत्ययों की श्रादश प्राध्ति जानना चाहिये। यों प्रथमा द्वितीया के बहवचन में उक्त प्रत्ययों की सयोजना करने के पहिले प्रत्येक स्त्रीलिंग शब्द के धन्त्य स्वर को विकल्प से हुस्व के स्यान पर क्षपत की और दीर्घ स्वर के स्थान पर इस्व स्वरस्व को प्राप्ति भी क्रम से हो जाती है। ऐपा होने से रोबें विविक्तयों के बहुवचन में प्रत्येक शब्द के लिये चार चार रुपों की प्राप्ति हो जाया करती है। बर् सूत्र सूत्र सख्या ४ ३४४ के प्रति अपवाद रूप सूत्र है। दोनों हो विमक्तियों के बहुवचनों में समान रूप म प्रसम्बों का सदमान होने से 'यथा सख्यम' ऋर्थात 'क्रम से' ऐसा कहने की छावरयकतो नहीं रही है। शर्नो विभाक्तयों के कम स उदाहरण इस मकार हैं ---

- (!) भगुल्य जर्निरिता नखेन = अगानित जन्मियात नहेण = (गणना करने के कारण से नन से अगुलियाँ नर्जरित हो गई हैं, पीडित हो गई हैं। यहाँ पर प्रथमा विभक्ति के बहुवचन के अर्थ में ^{'र'} प्रत्यय' की प्राप्ति हुई है । पूरी गाया सूत्र सख्या ४-१३३ में देखना चाटिय ।
- (२) सुन्दर-सर्वामीः विलासिनी प्रेक्षमाणानाम्=सुन्दर-सर्वागाउ *षिछाछिणीओ* (विडाप्तिणीओ) पेच्छन्ताण सभी व्यर्गों से सुन्दर व्यानन्द मग्न श्त्रिक्यों की देखते हुए (पुरुपीं) के लिये (भगवा पुरुषों के हृत्य में) ।। यहाँ पर भी द्वितीया विभक्ति के वहुवचन में कम से 'व' स्पीर 'स्पो' भ्नयों को प्रदर्शित किया गया है ॥ ४ ३४८ ॥

√√ / II 38 € −8 II Ū 5

ष्यपभरो स्त्रियां वर्तमानान्नाम्नः परस्याष्टायाः स्थाने ए इत्यादेशो भवति ॥ निश्र-मुह-कर्राहे वि मुद्ध कर श्रन्थारह पडिपेक्खह ॥ ससि-मडल-चिद्मए पुरा काई न दूरे देवलह ॥ १ ॥ अहिं मरगय-कन्तिए संवलिश्र ॥

मर्थ —अपन्न श मापा में सभी प्रकार के कीलिंग शब्दों में इतीया विभक्ति के एकवपन मे ^{बारुक्य प्रायय 'दा' क स्थान पर 'ए' ऐसे एक ही प्रत्यव की आदेश प्राप्ति होती है। आदेश प्राप्त प्रत्यव} र को संयोजना करने के पहिले शाष्ट्र के छन्त में रहे हुए हस्त स्वर को टॉर्फ स्वर की छीर दीर्फ स्वर को हैत शर को मान्ति विकल्प से हो जाती हैं। यों कीलिंग शब्दों में छतीया विभक्ति के प्रवयन में धम से ध्वा वैकलिक रूप से दो दो रुपों की प्राप्ति होती है। जैसे —चिन्द्रकया = चिन्न्यर्= चांद्रती से। यहाँ ११'१' म्च्य के पूर्व 'वंदिमा' से 'वंदिम' हो गया है। (२) कान्त्या = कान्तिए=क्रांति से खामासे॥ पृषि में ही गई गायाओं का चनुवाद अस से इस प्रकार हैं-

सस्कृतः---निज मुख करें: अपि मुग्धा करं अन्यकारे प्रतिपेवते ॥ शशि-मडल-चन्द्रिकया पुन-किं न द्रे पश्यति १॥

हिन्दी — (विषयों में श्रासकत हुई) मुग्वा (की) श्रपने मुल को किरणों से भी प्राप्तार है श्रपने द्वाय को देख केती हैं, तो फिर पूर्ण चन्द्र-मडल की चादनों से दूर दूर तह क्या नहीं देख साथ हैं ? श्रयवा किन किन को नहीं देखती हैं॥ १॥

(२) सस्छत *—यत्र मरकत-कान्त्या सवाठितम् = वार्हि मरगय-कान्ति*ए सवाठिय=तर्धे श मरकत मणि की कान्ति से व्यामासे पेराये हुए को ब्याच्छादित को। (गाया,खरूर्ण् ई) ॥२॥ हो रूर्षे की फल्यना स्वयमेव कर लेना चाहिये॥ ४-३४६॥

डस्-इस्योहें ॥ ४-३५० ॥

व्यपश्रंशे स्त्रियाम् वर्तमानान्नाम्नः परयोङ्स् ठसि इत्वेतयोई इत्यादेशो भर्ताः इस । तुच्छ मज्महे तुच्छ-जम्पिरहे ।

तुष्कष्क-रोमायनिहे तुष्क-राय तुष्कपर हासहै।
पिय-चयणु अनहन्ति-अहे तुष्कर्माय-नम्महं निरासहै।
अन्तु जु तुष्क्षत्र तहे घणहे त अक्तायह न जाह।
कटिर यणं तह शहरहहे जें मणु निष्चि स्माह॥ १॥
टिसे:। फोडेन्ति ने हियहर्जे अप्यस्तु तहें पराई करस्यथ्य।
रक्तेज्ञ लोअहो अप्यस्त वानहे जाया विमम यस ॥ २॥

अर्थ — अवश्व श मापा में कीलिंग शहरों में पंचमी विमित्त में प्रात्तस्य प्रत्य 'दिम' हे सार्व पर 'हे' प्रत्यय रूप को आदेश पित होती है। इसी प्रकार से पृष्टी विमित्त में मा प्रात्तस्य प्रत्य कर्ष के स्थान पर है' प्रत्यय के लो आदेश प्राप्त हो जाया करती है। सूत्र सख्य 'हे 'प्रत्यय के लोव होने के सूर्व प्रत्यय है' का लोव मो प्राय हो नाया बरता है। इसके कि रिस्त प्राप्तस्य परिवार है। इसके कि रिस्त प्राप्तस्य हो' की सयोजना करने के पूर्व अववा है 'प्रत्यय के लोव होने के पूर्व दिनित्र शास्त्रस्य कि नाय करती है। इसके कि राह्य में दीर्घ अपित से हरक्ष में कि प्रत्य के होते हैं और पत्र सहसे में हो का स्वाप्त करने में हिंद के पह्तव में नी प्रत्य के लोव होते हैं और पत्र करने से हो साया करती हैं, यों पंचमी विभित्त के पह्तव में नी राह्य होते हैं और पत्र विभिन्त के एक प्रचान में पार रुपों की प्राप्ति का विवान जानना चाहिये। युक्ति में प्यसी और ब्यु विभिन्त के एक प्रचान में पार रुपों में हैं से विभिन्त के रुपों में प्रत्य को स्वर्ध है, उत्तर्भ प्राय हुन पूर्व में के स्वर्ध क

सस्कृतः--तुच्छ-मध्यायाः तुच्छ जन्पन-शीलायाः।

तुच्छ।च्छ रोमावन्या तुच्छ रागाया तुच्छतरहासाया ॥

त्रियत्चनमल्तममानायोः तुच्छकायमन्मथनित्रासायाः ।

श्रन्यद् यतुन्छं तस्याः धन्यायाः तदाख्यातुं न याति॥

श्राधर्मं स्तानान्तर् मुग्धाया येन मनो वत्मनि न माति॥

भर्य — सूचम ध्यर्थात पताली कमरवाली, श्राल्प बोलने के स्वभावनाली, पतले श्रीर सुन्दर केशोंगानी, श्रत्य कीपवाली श्रयवा श्राल्प रागवाली बहुत थोड़ा हँसनेवाली, प्रिय पित के बचनो मो नहीं
गान करने से दुवले शरीर वाली, जिसके पताले धौर सुन्दर शरीर में, कामदेव ने निवास कर रक्षा है
ऐमा, इतनी त्रिशेषताश्रों वाली उस धन्य श्रयोत श्रहो भाग्यवाली सुग्वा नायिका का जो दूसरा भाग
प्रत्न है-श्रयोत पताला हैं, उस का वर्णन नहीं किया जा सकता है ॥ श्रयनी चचलता के कारण से पिर
प्रत्म करता हुशा जो सूदम श्राकृतिवाला मन विस्तृत मार्ग में भी नहीं समाता हैं, श्राक्षर्य हैं कि ऐमा
वर्ष मन (वक्त नायिका के) स्यूल स्तनों के मध्य में श्रवकाश नहीं होने पर भी यहाँ पर समा गया है।
वर्ष पत्र प्रत्में में पत्नी विभक्ति बोधक प्रत्यय 'ड स् = है' का सद्भाग स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया
विद्या श्रव पत्रमी बोधक प्रत्यय 'है' वाली गाथा का श्रवताद यों हैं —

सस्कृत:—स्कोटयत यो हृदय ब्रात्मीय, तथो: परकीय का पृखा ॥ रत्नत लोका ब्रात्मान वालाया: जातो निपनी स्तर्ना ॥३॥

्रिनी — गो (स्तन) ख़ुद के हदय को हो विश्कोटित उरक उत्पन्न हुए हैं, उनमें दूसरों के लिये त्य हैंसे हो सकतो हैं ? इसलिये हे लोगों ! इस बाला से व्यवनी रत्ता करों, इसके ये दोनों स्तन व्ययन्त विषक्ष प्रकृति के-(पातक स्वमाव के) हो गये हैं ॥ ३॥ इस गाथा में 'बालहें' पर पचनी विमक्ति के विषक्ष के रूप में कहा गया हैं ॥ ४ ३४०॥

भ्यसामो हुः॥ ४-३५१ ॥

थप्त्र रो स्त्रियां वर्तमानान्नाम्न परस्य भ्यस श्रामश हु इत्यादेगो मत्रति ॥
भद्रा हुत्रा जु मारिशा पहिणि महारा वन्तु ॥
सञ्जेज्जन्तु वयसियहु जड मग्गा परु वन्तु ॥ १ ॥
वयस्पाभ्यो वयस्यानाम् वेत्यर्थः ॥

अर्थ — छावस्रश भाषा में स्त्रीलिंग वाले शर्व्यों में पचमी विभक्ति के बहुवचन में प्राप्तप पर 'भ्यस' के स्थान पर 'हु' प्रत्यय की खादेश प्रांति होती है। इसी प्रकार से पन्ठी विभक्ति के बहुवका में ह प्राप्तन्य प्रत्यय 'छाम्' के स्थान पर 'हु' की छादेश प्राप्ति (विकल्प से) जानना चाहिव।सुम्झरु ध-२४४ से इस प्राप्त प्रत्यय 'हु' का प्राय लोप हो लाया करता है। इस सविधान के श्रतिष्ठिय में विशेषता है कि इस प्राप्त प्रत्यय 'हु' में ख्रथवा 'लोप विधान' के पूर्व श्र्वीलिंग शर्मों में रहे हुए धन्त सा को विकल्प से हस्व से दीर्घरव की और दीर्घ से हस्वत्व की प्राप्ति मी होतो है। यों प्रयमी विमांत्र हो बहुवचन में स्त्रोतिग शब्दों में दो रूप होते हैं श्रीर पप्ठी विमक्ति के बहुवचन में चार चार हर हो हो हैं। उदाहरण के रूप में गाथा में जो पद 'वयसिखंदु' दिया गया है, उसकी पवनी और पर्छा हे बहुनस में दोनों में गिना जा सकता है। जैसेकि —चयस्याभ्य श्रथवा वयस्यानाम =चर्वतिआःनीकी है श्रथवा मित्रों के बीच में । पूरी गाथा का संस्कृत हिन्दी रूपान्तर यों है —

सस्कृत - भन्य भृत यन्मारितः भगिनि ! श्रश्मदीय कान्तः । श्रलंजिज्यत् वयस्याम्यः यदि भग्नः गृह ऐष्यत्॥

अर्थ — हे वहिन । यह बड़ा श्रन्था हुआ, कि मेरे पित (युद्ध में युद्ध बरते करते) मार्^{त्र व} यदि वे हार कर (अववा कायर बन कर) घर पर आ जाते तो मित्रों से (अववा मित्रों हे बीर में) लिजन किये जाते। (उनकी हैंसी उड़ाई जाती) ॥ ४-३४१ ॥

हे हिं॥ ४-३५२ ॥

व्यपश्चंशे स्त्रिया वर्तमानान्नाम्न परस्य होः सप्तम्येकाचनस्य हि इत्यादेशा भवति

वायसु उड्डावन्तिच्चए पिउ दिद्भिउ सहम नि ॥ श्रद्धा वल्या महि हि गय श्रद्धा फुट्ट तढ ति ॥१॥

अर्थ--- अपभाश मापा में स्त्रोलिंग शस्त्रों में संश्मी विमक्ति के एरवचन में प्राप्तस्य प्रस्तव हैं। के स्थान पर 'हि' प्रत्यय रूप की व्यादेश नामि होती है। प्राप्त प्रत्यय 'हि' की सवाजना करने कर् ह्योर्लिंग शर्ट्स के अन्त्य स्वर की विकल्प से 'हस्त्रत्व से दीर्पस्व' की बीर 'दीर्पस्व से हस्त्रच' की प्रा' हो जाती है। इस प्रकार से व्यवश्च श भाषा में समी सीजिंग वाचक शर्दों के सन्तमी विगितित एकवचन में दो दो रूप हो जावे हैं। नैसे -महिंहि, महीहि = पृथ्यी पर । घेणुहि, घेर्रिह-नाय पर गाय में । मालढिचाहि, मालढिबहि=माना में-गाला पर । गाया का धाउाद में हैं —

संस्कृत —नायस उद्घापयन्त्या वियो दृष्ट सहसेति॥ अर्थानि वलवानि महां गवानि, अर्थानि स्फुटिवानि वटिवि ॥

हिन्दी -शकुन शास्त्र में मकान के मु डेर पर बैठकर कीए द्वारा 'काँव काँव' किये जाने वाले राद से किसी के भी घारामन की सूचना मानी जाती हैं तद्तुसार किसी एक स्त्री द्वारा कीए की कॉव-कौं बाचक व्वति की सुनकर उसकी उड़ाने क लिये ज्यों ही प्रयत्न किया गया तो अचानक ही उसकी अपने प्रिय पति निदेश से घर खाते हुए दिललाई पडे । इससे उस ह्यी को हर्प मिश्रित रामाञ्च हो भाग श्रीर ऐसा होने पर उसके हाथ में पहिनी हुई चूडियाँ में से छाधी सो घरती पर गिर पड़ा श्रीर श्रामी 'तड़ाक' ऐसे शब्द करते ही तडक गई । ४ ३४२ ॥

क्लीवे जस्-शसोरि ॥ ४-३५३॥

श्रपश्र शे क्लीचे वर्तमानान्नाम्त. परयो जेस्-शसो इं इत्यादेशो भगति ॥

कमलइ मेल्लवि अलि उल्लंड करि-गडाइ महन्ति॥ असुलह मेच्छण जाह भिल ते ए नि दर गणन्ति ॥ १ ॥

अर्थ —अपभ्रश मापा में नपु सक्लिंग वाले शब्रों के प्रथमा विमक्ति के बहुवचन में और दिनीया विभीक्त के बहुवचन में भी प्राप्तव्य प्रस्यय जम् ऋीर राग्' क स्थान पर केवल एक ही प्रत्यय 'इ' ही बारेश प्राप्ति होती है। त्रादेश प्राप्त प्रत्यय 'ह' की मयाजना करने के पूर्व नपु सकलिंग वाले शारी क थनय स्वर को विकल्प से 'हस्यत्व से दोघ न' और दोघव से हस्यत्व' की प्राप्ति कम से ही जाती ६। यों इन विभक्तियों में दो दो रूप हो जाया करते हैं। जैने —नेत्तइ, नेत्ताइ=श्रॉंबों ने श्रयवा श्रॉंबों धा धणुइ, धणुइ=धनुष्यों ने छीर धनुष्यों को। अच्छिइ, अच्छीइ=नेत्रों ने छोर नेत्रों को। पृत्ति में रा हुई गाया में (१) आल-उलड़=अलि फुलानि = भैंवरों का समूह प्रयमा बहुवचनान्त पर है। (२) ^{इमलड्}-कमलानि = कमलों को तथा (३) करिगडाइ = करिगडान् = हाथियों के गंड-स्थलो को, ये म प दिवीया बहुवचनान्त है। पूरी गाया का अनुवाद इस प्रकार है -

सस्कृत:--कमलानि मुक्त्वा श्रलि कुलानि करिगडान् कांचन्ति ॥ अपुत्तभ एप्टु येपा निर्मंधः (भित्त), ते नापि (= नैप) द्र गणपन्ति ॥१॥

हिन्दी --भेंवरों का समृह कमलों नो छाड़ कर हह दियों के गड़ स्थलों की इन्द्रा करते हैं, इस ने यही रहस्य है कि जिनका आमह (अथवा लदय) फठिन वस्तुमों को प्राप्त करने का होता है, वे दूरी हा गणना करापि नहीं किया करते हैं ॥१॥४ ३४३॥

कान्तस्यात उ स्यमोः ॥४-३५४॥

थपभ्रशे क्लीवे वर्तमानस्य ककारान्तस्य नाम्नो योशारस्तस्य स्यमोः पर्या उ रिगरेगो मनित ॥ अनु जु तुच्छउ तहें धणहे ।

भग्गर' देक्खिव निगय-वहा वहा पसरिखाउ' प्रस्तु ॥ उम्मिलाइ समि-रेड चिवँ करि कर्माला पियस्मु ॥१॥

अर्थ — व्यवश्र शापा म नतु मरुलिंग वाले शब्दों फे ब्यन्त में 'ककार' वर्ण हो होत है। कि कार' वर्ण का सूत्र सख्या १-१७० से लोव हो जाने पर शेष रहे हुए ब्यन्य वर्ण 'बकार' में दर विमक्ति के एकवचन में ब्रीर हितीया विमक्ति के एकवचन में प्राप्तव्य प्रत्य 'व' और 'लीव हव पृत्त ' स्थान पर केवल 'व' प्रत्यय की ही व्यादेश प्राप्ति होतो हैं। व्यत्य वर्ण 'क' को लोव हो जान पर शेष र हुए 'ब्यं वर्ण को 'वद्वचर्त रगर की सज्ञा प्राप्त हो जाती है। ऐसे शब्दों में ही वक्त दोशों विमक्ति एकवचन में केवल 'व' प्रस्थय की ब्यादेश प्राप्ति जानना चाहिये। जैसे — नेनकप्र-नेतर्ज चाँव ने क्या व्याप्त को। अक्षिकप्र-अन्ति उज्जाव ने ब्यायां ब्याँव को। गाया में ब्याये हुए प्रथम हिंग विमक्तियों के एकवचन वाले पद इस प्रकार से हैं —

(१) भगनक=भगगउ=ट्रती हुई को भागती हुई को । (२) प्रमृतक=ममरिश्रउ=पैच्याई को । (३) तुरुद्रकम्=तुरुद्रज =तुरुद्र का ॥ पूरी गाया का खतुवाद यों है ─

संस्कृतः -- भग्नक दृष्ट्वा निजक वत्त, वत्त प्रमृतकं परस्य ॥ उन्मीतृति शशित्रेखा यथा करे, करतातः प्रियस्य ॥ १॥

हिन्दी —श्रपनी फीज को भागने हुए श्रयवा बिदारते हुए देख करहे और शर्ते की पीह र जीवते हुए एव फैजते हुए देख करके मेरे श्रियनन के हाय में तलवार यों चन हतो हुई शत्रुओं के गर्र का काटती हुई दिखाई देने लगी कि जिस प्रकार खाकाश में बगते हुए बाल-चन्द्रमा की 'रेमा द्रव लेखा' सन्दर दिखाई पड़ती है ॥ ४ २४४॥

सर्वादे इ सेही ॥ ४-३५५॥

अपन्न से सर्वादे रकारा तात् (तस्य टमेर्ड) इत्यादेणी भवति ॥ बहा होन्तउ यागरे । तहा होन्तउ यागदी । कहा होन्तउ यागदा ॥

गर्थ — यथघ रा भाषा में 'सर्व = सध्य' खादि शकारान्त सर्वनामों के बन्मी विभिन्न हर्ष प्रचन में भाष्त्रय पत्यय 'इति' के स्थान पर 'हा' प्रस्तय रूप को खादेश शास्त्र हो। है। तैसे — यस्मात् भवान आगत = जहां होन्तड आगदो = जहाँ में खाप खाये हैं। (२) सम्मात् भवान जागत = तहा होन्तड आगदो=यहाँ से खाप खाये हैं। (३) क्स्मात् भवान् आगत' = कहाँ हो देश खारादो = कहाँ से खाप खाय हैं। ४ ३४४।

किमो डिहेवा॥ ४-३५६॥

अपभ्रंशे किमो कारान्तात् परस्य इसे हिंहे इत्यादेशो वा भनति ॥

जड़ तहे तुट्टज नेहडा मइं सुहु न वि तिल-तार॥ त किहे म्केहिं लोश्राणेहिं लोडज्ज समवार॥१॥

अर्थ — खपधर। मापा में 'किम्' सर्वनाम के श्रङ्ग रूप 'क' शब्द में पचनी विनक्षित के एकवचन में प्राज्य्य प्रत्यय 'इसि' के स्थान पर 'डिहे = इहे प्रत्यय रूप की आदेश प्राप्ति विकल्प से होती है। दिहें ' न्यय में 'इकार' इत् सक्षक होने के खड्ग रूप 'क' के अन्त्य 'श्र' का लोप होकर शेप छम रूप हलन्त 'ईमें 'इहें प्रत्यय की सयोजना की जानी चाहिये। वैकल्पिक पच होने से पद्मान्तर में 'काहा और इस' रूपों की भी प्राप्ति होगी। उदाहरण के रूप में गाथा में 'विहे पद दिया गया है। जिसका अर्थ है - किम नारण से 11 पृथी गाथा का अनुवाद यों हें —

सस्कृत:--यदि तस्याः बुट्यतु स्नेह मया सह नापि तिल्लारः (१) तत् कस्मात् वकाभ्याम् लोचनाभ्याम् दृश्ये (यह) शतगरम् ॥

टिन्दी — यदि उसका प्रेम मेरे प्रति दृट गया ई श्रीर प्रेमका श्रश मात्र मी मेरे प्रति नहीं रह ^{क्}गो है वो फिर में किस कारण से उसके टेढ़े टेढे नेत्रों से सैक्झों बार देखा जाता हूँ ? श्रर्यात वो फिर ^{फुने} यह बार बार क्यों देखना चाहती है ? ॥ ४ ३५६॥

डे हिं ॥ ४-३५७ ॥

^{श्रपभ्रं}शे सर्वादेरकारान्तात् परस्य हो: सप्तम्येक वचनस्य हिं इत्यादेशो भगति ॥

जहिं किष्पुज्जइ सरिया सरु छिज्जइ खिगाया राग्या ।।

चिहं तेहइ भड-घड नियहि कन्तु पयासइ मग्या ॥ १ ॥

एयहिं श्रिक्खिंह सावण्य श्रुज्जहिं भद्दा ॥

साहज महिश्रुल्-सत्यिर गण्डे-त्यले सर्ज ॥

श्रुप्ति गुम्द सुह्ज्छी-तिल-यणि मग्ग सिरु ॥

चहे सुद्धहे सुह-पुक्क श्रावासिज सिमिस् ॥ २ ॥

हिश्रुद्धा फुट्टि तुड्जि करि कालक्येवें काइ ॥

देक्यज ह्य-विहि किहं ठाइ पह निणु हुक्स सुचाइ ॥ ३ ॥

अर्थ —अपन्न श मापा में 'सर्व = सन्त' आदि प्रकारान्त सर्वनाम वापक शर्षों इ हर विभक्ति के एकवचन में सरहतीय प्रत्यय 'डि' के स्थान पर 'हिं' मध्यय की बादेश माप्ति होती है। हुंचे दी गई गाथाओं में छाये हुए निम्नोक्त पद सप्तमी विमक्ति के प्रकवचन में 'हि' प्रत्यय रे साथ हर -ार्ड रासप्ट सप्ट

- (१) जहिं=यास्मिन् (घ्ययवा यत्र) = जिसमें (घ्ययवा जहाँ पर),
- (२) तर्हि = 1c1स्मिन (यथवा तत्र) = उसमें (यथवा वहाँ पर).
- (हे) एक्फर्डि = एफस्मिम = एक में, (४) अन्तर्डि = धन्यस्मिन = दगरे में, (४) धी कारिमन् = कहाँ पर । तीनों गाथाओं का संस्कृत खोर हिन्दी खतुरीद झम से इम प्रसार हैं 🕶 🕡

संस्कृत:-यस्मन् कन्प्यतं शरेण शर, छिद्यते खड्गेन एड्ग ॥ वस्मिन वाद्यो भट घटा निवहें कान्त प्रकाशयति मागम ॥ १ ॥

हिन्दी --जहाँ पर अर्थात् जिस युद्ध में बाण से बाण काटा जाता है। श्रवना बाटा जा रम श्रीर जहाँ पर तलवार से तलवार काटी जो रही है, ऐसे मयकर युद्ध में रखनीर रूपी वारलों के मनूह (मेरा वहादुर) पति (श्रम्य बोरों को) (युढ कला का श्रादर्श) मार्ग वनलाता है (श्रथवा सतना रहा है

संस्कृतः-एकस्मिन् श्रदिण श्राप्तणः, श्रन्यस्मिन् माद्रपदः। माध्य (अथया माध्य) महीतलसंस्तरे गण्ड स्थले शरत्॥ श्रमेषु ग्रीव्म सुसासिका विलाउन मार्गशीर्प. । तस्या मुग्वायाः मुख पक्रजे श्रावासित शिशर ॥ २ ॥

हिन्दी — स काट्य रूप रलोक में ऐसी नायिका की स्थिति का वर्णन किया गया है, ही अपने पति सें तूर स्थल पर श्रवस्थित है। पति विवाग से इस नायिका क आँकों में अपु प्रगह प्रश होता रहता है, इससे ऐसा मालूम होना दै कि-मार्नो इसकी एक खाँद में शावण मास का निमासना है चौर दूतरी में माद्रपद मास है। (पत्र चौर पुष्पों से निर्मित) इसका भूभि तल पर विद्रापा 🖫 थिस्तरा बसत ऋतु के समान खथवा गांघ मास के समान प्रतात होता है। वसके गाला पर शरहर मो खामा दिवाई देती है खौर खद्ग खद्ग पर (रियोग जनित बप्णुना के कारण से) प्राप्त स्त्री थामास प्रवीत हा रहा है। (जब वह शांति क लिये) विल उसे हुए मेर्तो में बैठवी है तो वेना मा होता है कि मानों वहाँ पर मार्ग शार्य मास का मसय चल रहा है । ऐसी उस ग्रुग्वा मायिहा के उ यगल को स्थिति है कि मानों उसके मुख-कमल पर 'शिशिर' खतु का निवाम स्थान है॥ २॥

सस्कृत —ट्द्य ! स्पृट तटिति (शब्ट) छत्वा काल चेपेण किम् ॥ परयामि इत विधि क स्थापयति स्वया िना दू स शतानि ॥ ३ ॥

हिन्दी —हे हदय ! 'तडाक' ऐमा शब्द करके खयवा करते हुए फटजा विदीर्ण होजा, ऐमा करने में बिलन्व करने से क्या (लाम) है ^१ क्योंकि में देखता हूँ कि-यह दुर्गाग्य तेरे सिवाय थ्रान्यत्र इन सेंक्ड्रों दुर्धों को कहाँ पर स्थापित करेगा ? श्रर्थात् इन श्रापतित सेंकडों दुःसों को मेलने की श्रपेत्ता से तो मृत्यु हा बरण करना ही श्रेष्ठ है ॥ ४-३४७ ॥

यत्तरिंकभ्यो इसो हास र्नवा॥ १-३५८॥

श्रवभ्रशे यत्तत्-किम् इत्येतेम्यो कारान्तेम्य परस्य डसो डासु इत्यादेशो वा भवति ॥

कन्तु महारच हलि सहिए निच्छइं हसइ जासु॥ श्रत्थिहिं सत्थिहिं हत्थिहिं नि ठाउ नि फेडह तासु ॥१॥ जीनिउ कासुन वल्लहरु घणुपुणु कासुन इहु॥ दोरिण वि अवसर-निविडियाइ तिए-सम गण्ड निमिट्ट ॥२॥

अर्थ —अपन्र स भाषा में ''यत्' तत् और किम्' क्षर्वनामों क स्रकारान्त पुल्तिंग स्रप्रस्या गें ^एश विमक्ति के एक वचन में संस्कृतीय प्रत्यय "डस" क स्थान पर 'डासु= प्रासु'' प्रत्यय की विकल्प से भारत प्राप्ति होती हैं। ''डासू'' रूप लिखने का उत्पर्य यह है कि 'यत्= ज', ''उत् = उ'' स्वीर 'हिम्≈क' में स्थित अन्त्य स्वर ''श्रकार'' का "डासु≕आसु' प्रत्यय जोड़ने पर लोप हो जाता है। र्वे 'हासु" में स्थित "हकार" इत्सझक है। गाथाओं में इन सर्वनामों के जो उदाहरण दिये गये हैं, वे ^{क्त स} इम प्रकार हैं —(१) जासु=यस्य=जिसका, (२) नासु=तस्य=उसका श्रीर (३, कासु=क्स्य= हिमहा ॥ गायाथो का अनुपाद निम्न प्रकार से है —

संस्कृत:-कान्त अस्मदीय हला संचित्रे ! निश्चयेन रूपति यम्य ॥ श्रस्त्रं शस्त्रेः हस्तै रिष स्थान मिष स्फोटयति तस्य ॥१॥

हिन्दी —हे सिंस ! हमारा कान्त-प्रियपित-जिम पर निश्चय से रूठ जाता है-स्रयवा कीप इरता है, तो उसके स्थान को भी निश्चय ही छक्त्रों से, शक्त्रों में छोर (यहाँ तक कि) हार्यों से भी नेट कर दता है ॥१॥

सक्तरतः—जीवित कस्य न बल्लमक, धन पुनः कस्य नेष्टम् ॥ दे थपि श्रामर निश्विते, त्वाममे गण्यवि विशिष्टः । शा

हिन्हीं —िकसको (खपना) जीवन प्यारा नहीं हैं ? श्रार कीन ऐसा है जिसको कि पन (प्राप्ति) े माहांचा नहीं है ? व्यथवा धन व्यारा नहीं है ? क्लिन्तु महायुक्तय रहिनाइयां व सुर्जी में भी ध्ययस समय पड़ने पर भी दोनों हो ही (जीवन तथा घन हो भी) तण घात तिनके दे तथान है जिस्ते है। अर्थात दोनों का परित्याग करने के लिये विशिष्ट पुरुष तत्वर रहते हैं ॥२॥४ १४८॥

स्त्रियां डहे ॥ ४-३५६॥

अपभ्रशे स्नीलिंगे वर्तमानेश्यो यत्तत्-क्रिश्यः परस्य इसी डहे श्लादेशो वा सर्व जहें केरत । तहें नेरत । कहें केरत ॥

अर्थ — अपन्न श मापा में कीलिंग वायक सर्वनाम 'या = जा', सा' और 'घा' के प्री विमिक्ति के एकवचन में संस्कृतीय प्रत्यय 'डम्' के स्थान पर 'डम्ट्- छम्ट्' प्रत्यय की विद्युष्ट से आहेर मांग होती हैं। 'डम्टे' का लिखने का यह रहस्य है कि 'जा, सा अथवा ता और मा' में स्थित अन्य सर 'घा' का 'डम्टे- अप्टे' प्रत्यय जोडने पर लाथ हो नाता है। यो 'डम्टे' प्रत्यय में अवस्थित 'डकार' स्मावह है। खदाहरण कम से इस प्रकार हैं — १) यस्या कृते = जम्हे करड़ = जिसके लिये। (२) तस्या कृत = तम्हे करड़ = इसके लिय और (३) एस्या कृते = क्ट्रे करड़ = विस्ते लिये।। ६ १४६॥

थत्तदः स्यमोर्धं इं ॥ ४-३६० ॥

थ्यप्रशे यत्तदोः स्थानं स्यमोः पर्योययामरयं प्रु वं इत्यादेशा रा भग्तः॥ प्रगणि चिट्ठदि नाहु भ्रु वं रणि करदि न श्रन्ति ॥१॥ पत्ते। तं गोळियड ज निन्वहड ॥

जर्थ — खपन्न रा भाषा म 'यत' सर्वताम के भथमा विभक्ति व गहरायन में ति पत्य भी होने पर तथा हितीया विभक्ति के एकरचन में 'खम' प्रत्यय प्राप्त होने पर मूल शप्य 'यन' की ध्यम होने पर तथा हितों है। इसी विभक्ति में प्रु' रूप को विकल्प से खादेश आि होनों है। इसी प्रधार संत्त ' सर्वताम में भी प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सि' प्राथय की सर्वोजना होने पर तथा निधा विभक्ति के एकवचन में 'खम' प्रथय जुड़ने पर मूल शप्य 'तत' और विमक्ति प्रथय शर्में के स्वान पर होनों विभक्तियों में 'अ' रूप को विहरूप से खादेश प्राप्ति होनों है। वराहरण इस प्रकार के दें सिमी विभक्तियों में 'अ' रूप को विहरूप से खादेश प्राप्ति होनों है। वराहरण इस प्रकार के दें सिमी विभक्तियों में 'अ' रूप को विहरूप से खादेश प्राप्ति होनों है। वराहरण इस प्रकार के दें सिमी वर्गिक निक्तियों में 'अ' रूप को विहरूप से खादेश प्राप्ति होनों है। वराहरण इस प्रमुप को वर्गिक वर्गिक निक्तियों के स्वान वर्गिक से प्रवाद से सिमी वर्गिक के स्वान वर्गिक से वर्गिक के सिमी प्राप्ति होनों। वराहरण वो है —त योशिक इस निव्यवहरू नव अरूपते यत विवेदरि (उससे) यही बीना जाता है, जिसके यह निवाहना है। धर देहना

इदम दमुः क्लीवे ॥ १-३६१ ॥

श्रपञ्जशे नपु'सक लिंगे वर्तमानस्येदम स्यमो परयोः इग्रु इत्यादेशो मनति ॥ इग्रु-इतु तुह तपन । इग्रु कुन्तु देवसु ॥

अर्थ — खपभ्र रा भाषा मे इदम् सर्वनाम के नपु सविता वाचक रूप में प्रथमा विभक्ति में भारव्य प्राप्त होने पर मूल शहर दिस्। बीर 'क्स्य' दोनों के स्थान पर दोनों विभक्तियों क व्यवचन में 'इस्' रूप की खादेश प्राप्त होने (है। जैसे —(१) इहस कुछस = इसु कुछ = यह कुल = यह वश। (२) तम तृणम् =तुर तण्ड = तुम्हारा धाम खयवा तम तण्यं = तुह तण्ड = तुम से सम्बन्ध रक्षनेवाला (यह कुल है) (३) इन कुछ पर्य = हुर कुछ देश। ४ ३६१॥

एतदः स्त्री-पु'-क्लीवे एह-एहो-एहु ॥ ४-३६२ ॥

श्रवश्र शे स्थिता पु सि नपुंसके वर्तमानस्येतद स्थाने स्यमोः परयोर्यथा-सख्यम् वह

एह कुमारी एहो नरू एहु मरोरह-ठाखु॥ एहउँ वढ चिन्तन्ताह पच्छह होइ निहासु॥ १॥

अर्थ — अपभ्र रा मापा में 'एठत' मर्वनाम के पुल्लिंग में प्रथमा विमक्ति के एकवचन में 'ति' म्लय माप्त होने पर सून हाइद 'एउत' थीर 'प्रत्यय' होनों के स्थान पर 'पहो' पद रूप की आदेश प्राप्त हाती हैं । इसी प्रकार से 'एउत' सर्वनाम के प्रीक्तिम में भ्रथमा के एकवचन में तथा द्वितीया के एकवचन में मूल शब्द थीर प्रश्यय न स्थान पर 'एह' 'द रूप की आदेश प्राप्त के प्रथमा के एकवचन में तथा द्वितीया के एकवचन में मूल शब्द थीर प्रश्यय न स्थान पर 'एह' 'द रूप की आदेश प्राप्ति जोननों हैं । नपु सक्तिम में भी 'एउत' सर्वनाम की प्रथमा के एकवचन में मूल शब्द तथा प्रत्यय दोनों के स्थान पर 'एह' पद रूप की आदेश प्राप्ति जाननों पिहिय ॥ चराशरण हम से यों हैं — (१) एयो नर = एही नरू=यह तर पुरुष । (२) एया कुमारी = एह उमारी = यह कन्या । (३) एतन्मनोरथ स्थानम् = एतु मणोरए- वाणु = यह मनोरय स्थान ॥ पूरी नाया का स्मुवाद यों हैं —

सस्कृत — एपा कुमारी एप (श्रह) नरः एतन्मनोरय-स्यानम् ॥ एतत् मृखोणा चिन्तमानाना पश्चात् मवति विभातम् ॥ १ ॥

िन्दी — यह फन्या ई खीर में पुरुष हूँ, यह (में) मन-पन्यना हो। का स्थान है, यों मोन्दो हुए पूर्व पुरुषों के लिये शीष्ट्र हो त्रात काल हो जाता है (खार उनकी मनो कामनाएँ उने की स्यों ही रह यहाँ है।) ॥ १॥ ४३६२॥

एइर्जस्-शसोः ॥ ४-३६३॥

अपभ्रयो एतदो जस्-शसो परयोः एइ इत्यादेशो मवति ॥ एइ ति घोडा णः पति (३३०-४) एइ पेच्छ ॥

अर्थ — अवध्या मापा में 'एतत' सर्वनाम में प्रथमा विमक्ति बहुवपन वावक प्रस्य 'प्रम्'
प्राप्ति होने पर तथा द्वितीया विमक्ति बहुवचन वाचक प्रत्यय 'शस्' की संयोजनी होन पर मृत र
'एतत्' और प्रत्यय' दोनों के स्थान पर होनों ही विमक्तियों में 'एइ' पर हव की खारेश सित होते।
जैसे — एते ते अञ्चा =ण्ड ति चीडा=चे वे (हो) घोडे। (२) एपा स्थळी=एह धारि=घह मूरी
एतान् पत्र्य = एड पेच्छ ≈ इनको देखों। ४-१६३।।

अदस ओइ **॥ ४-३**६४ ॥

श्रपभ्र गे श्रद्धाः स्थाने जम् गतीः परयो गोह इत्यादेणो भविति ॥ । जह पुच्छह धर बङ्घाई तो बङ्घा घर स्रोह ॥ विद्दत्तिश्र—जण्-श्रम्धद्वरणु कन्तु कुढीरह जोह ॥ १ ॥

श्रम्ति वर्तन्ते पुच्छ वा ॥

गर्थ — घ० घरा मावा में 'श्रद्धा' सर्वज्ञात में प्रथमा विप्रत्ति के बहुववन में 'त्रा' प्रस्थ प्राप्ति होने वर तथा क्वितीया विभक्ति के बहुववन में 'त्रास्' प्रस्य वी मयोजना राने वर गूल शार' भार खीर प्रयथ' दोनों के स्थान वर दोनों हा त्रिमक्तियों में 'खोड' वद रूप की खादेश प्राप्ति होनों है। तैन खमी = खोद = वे (श्रयवा ये) खीर खमून् = खोद = वतको (खयवा इतने)। । वतु मार्थित वाच उद्याहरूख वो हैं —(१) जमूनि वर्तनेनों = औड पहुन्ते = ये होते हैं खपवा बरतते हैं। (२) जमूनि इच्छो औए पुच्छ = वनको पूछो । (३) घर ओड़ = मुह्याणि अमूनि = ये घर, इत्यादि॥ गायां, खमुवाद यों हैं —

सस्कृत - यदि पुन्छण महान्ति गृहाणि, तद् महान्ति गृहाणि श्रमृति ॥ विह्नलित - सनाम्युद्धरण कान्त कुटीरके परय ॥ १ ॥

हिन्दी —यदि श्रम बड़े घरों के मन्दन्य में पूछना चाहते हो तो परे घर वे हैं। उस से नाई हुए पुरुषी का बढ़ार दरने बालें (मेरे) वियतम को कुरीर में (मूजवड़े में) देखी १६१४-३६४॥

इद्म यायः ॥ ४-३६५ ॥

श्रपत्रंभे डदम् शब्दस्य स्यादौ श्राय इत्यादेशो भगति॥ श्रायइ लोश्रहो लोश्रणः जाई सरइ न भन्ति ॥ श्राप्प दिष्टइ मडलिश्राहिं पिए दिष्टुइ विहसन्ति ॥ १ ॥ सोसड म सोसड च्चित्र उश्रही गडवानलस्स कि तेण ॥ ज जलाइ जले जलगो श्राण्या वि कि न पडजन ॥ २ ॥ श्रायदो दडू∼कलेवरहो ज वाहिउ तं सारु ॥ जइ उट्टन्मह तो कुहह् श्रह डडमाइ तो छाहु ॥ ३ ॥

जर्थ — अवभ्रश भाषा में 'इर्म्' सर्वनाम के स्थान पर विभक्ति बोधक प्रस्यय 'स अस् स्थादि । सर्वोजना होने पर 'आय' अङ्ग रूप को खादेश प्राप्ति हाती है। जैसे —(१) आयइ=इमानि≃ये। (-) आएण=एतेन≈इससे। (३) आयहो = अम्य = इसका, इस्यादि॥ गाधाओं का सस्कृत एव हिन्दी खुताद कम से यों है —

संस्कृत — इमानि लोकस्य लोचनानि जाति स्मरन्ति, न भ्रान्तिः ॥ श्रिपे दृष्टे मुकुल्पन्ति, भिये दृष्टे निकसन्ति ॥ १ ॥

हिन्दी —इसमें सदेह नहीं है कि-जनता दी ये श्रॉखें श्रवने पूर्व जन्मों का स्मरण करती हैं। वर हरें श्रविय (यार्ते) दिखलाई पड़ती हैं तब ये बद हो जातो हैं श्रीर जब इन्ह निय (बार्ड) दिखलाई क्षित्र हैं, तब य खिल चटनी हैं श्रथमा ये ख़ुल जाती हैं॥ १॥

संस्कृत'--शुप्यतु मा शुप्यतु एव (= वा) उद्धि वहानतस्य कि तेन । यद् व्यत्तति जले, ज्वत्तन एतेनापि किंन पर्योप्तम् ॥ २ ।

हिन्दी — समुद्र परि पूर्णे रूप से सूचे अथना नहीं सूचे, हमत बढ़वानल नामक ममुद्री धानि हो हमा (बालर्ष) है ? क्ष्मोंकि बदि यह बढ़वानल नामक प्रचढ़ अगिन जल में जलती रहता है वे हमा विनाही पर्योत नहीं है ? अर्थात् जल में खिन का जलते रूना ही यथा विशिष्ट शक्ति सामता का केंडर नहीं है ? ॥ २ फ

सम्हतः — श्रस्य दग्धक्तेवरस्य यद् वाहित (= लप्बम्) तत्सारम् ॥ यदि श्राच्छादाते तत्कथ्यति यदि दहाते तत्त्वारः ॥ ३ ॥

हिन्दी —इस नश्वर (छीर निकन्मे) शरीर से चो इन्छ मी (पर-सेवा चाहि रूप) कार्यकी ^{मिति} कर ली जायतो यही (बात) सार रूप होगी, फ्योंकि (मृत्यु मान होने पर) यदि दम हो डॉड कर [808]

रखा जाता है तो यह मह जाता है छौर यदि इमको जला दिया जाता है तो केवल राख सेक्ट्र है है।। ४ ३६५।।

सर्वस्य साहो वा ।। ४-३६६॥

यपभंशे सर्न-शब्दस्य साह इत्यादेशो वा भवति॥ साहु वि लोउ तहप्पत्त्व वहुचणहो वणेण॥ नद्रप्पणु विषावित्रह हत्यि मोध लहेण॥१॥

पद्मे । सन्त्रु वि ॥

अर्थ — अपन्न रा भाषा में 'सर्व' भवेनाम के स्थान पर 'सन्व' अनुस्त की शांत होने विकल्प स 'सर्व' के स्थान पर 'साह' अन्नरूप की शांति भी देती जाती है। जैसे — वर्ष = हा साहु=सब। यों अन्य विभक्तियों में भी 'साट' के रूप समक्त जेना चाहिये॥ गावा का अनुगर् में (---

सस्कृत —सर्वोऽिंग लोकःप्रस्पन्दते (तद्यप्प्तद्वह्) ग्रह्न्वस्य कृते ॥ महत्त्रं पुनः प्राप्यते हस्तेन शुनंन ॥ १ ।

हिन्दी — (विश्व म रहे हुए सभी मनुष्य महत्वन भाम करने के लि। तहरुहाते महा है व्याहुलता मय मावनाएँ रखते हैं, वरन्तु चड्डपन तभी प्राप्त किया ना महता है, जबकि मुख्य हो हो। १ वर्षा त्यान दिया जाता है। प्रार्थान त्याम से ही दान से ही प्राप्तन की भारत था जा महता है। १ वर्षा

किमः काइं-कार्णी वा ॥-४-३६७ ॥

अन्ध्रणे किमः स्याने काइ करण इत्यादेशी वा मनतः॥, लइ न सु यावड द्ह घर कार्ड अही सुर्ट तुन्सु " प्यणु जुर्सेडड तठ सहिए सी पिठ होइ न मन्सु ॥ १॥

काइ न द्रे देवस्य ॥ (२४६-१) ।

फोडेन्ति ने हियहत यदगण्ठ ताह पराई करण घण ॥
रक्तेजनहु लोशहो प्रप्या वालहे नाम विमम घण ॥२॥
सपुरिम कंगुहे प्रणुस्ति भग करने करपेण ॥
निवै निमै बहुराणु लहाई तिवे निवै नमहि मिरेण ॥३॥

जइ ससयोही तो ग्रुइय ख्रह जीवह निघेत।। निर्हि वि पयारेहिं गहय घण किं गज्जहि खल मेह ॥४॥

अर्थ — खपश्रश भाषा में 'िंक' सर्वनाम के स्वान पर मूल द्या रूप से 'काइ' खीर 'क्वण' ऐसे गर्मों की आदेश प्राप्ति विकल्प से होती है। पत्तान्तर में 'िंक' खग रूप का सद्भाव भी होता है। इं के विमक्ति वाचक रूपों का निर्माण 'शुद्धि' आदि ख्यवा 'इसी' खादि इकारान्त शब्दों के समान जाता चाहिये। इन्छ न्दाहरण इस प्रकार है —(१) किम्-क्या = क्यो ख्यया किस कारण से।) का=राण = कैसी १ (३) केन = करणेण = किस कारण से। (४) किम्-किम्-क्यों, इत्याद ॥ से में शुगई गायाओं का खनुवाद कम से इस प्रकार है —

संस्कृतः-पदि न म आयाति, दृति ! गृह किं अधो मुख तम ॥ वचन यः खडयति तव, सिखिने ! सिप्रयो भगति न मम ॥१॥

हिन्दी — नायिका अपनी दूती से पूछती है कि — हे दूते यदि वह (नाय ह) मेरे घर पर नहीं भाता है, तो (तू) अपने मुख को नीचा क्यों (करती है) हे सिय ! जो तेरे बचर्नों का नहीं भानता है अथना तेरे जचनों का उझहन करता है, वह मेरा प्रियनम नहीं हो सकता है'॥१॥

सस्कृतः—स्कोटयतः यौ हृर्य श्रात्मीय, तयोः परकीया का घृणा १ रत्तत लोका श्रात्मान नालायाः, जातो निपमी स्तनौ ॥ २ ॥

हिन्दी — जो स्वयं के हृद्यं हो चीर करक ध्रयवा फीड करके उत्पन्न होते हैं, उनमें दूर्गी के किये स्वा के भाव कैसे अथना क्यों कर हो सकते हैं ? हे लोगों ! ध्रपना बचाव को, इस बाना के स [किर्यो गीर) पठोर स्तन चरवन्न हो गय हैं ॥ र ॥

संस्कृत -सुपुरुषा, कनो अनुहरुन्ति भण कार्येण केन १ यथा यथा महत्त्व लमन्ते तथा तथा नमन्ति शिरसा ॥३.।

संस्कृतः — यदि सस्तेहा तत्मृता, श्रय जीवति नि म्तेहा ॥ द्वाभ्यामपि प्रकाराभ्यां गतिका, धन्या, कि गर्जिम १ श्रव मेव ॥ ४ ॥

हिन्दी — ध्यपनी नायिका से दूर (विदेश में) रहते हुए एक नायक उपदर्ते हुए मेर बेस्के करता हुआ अपनी मनीभावनाएँ यों व्यक्त करता है कि —"यदि वह मेरी प्रियतमा मुक्त मेप्रेम रा है तो मेरे वियोग में वह अवश्य ही मर गई होगी श्रीर यदि वह लीवित है तो निश्वय हो समग्रे हिन्ह सुक में ग्रेन नहीं करती है, कारण कि वियोग-जनित दुःख का उसमें अमाव है। होनों हो बहार है गविया मेरे लिये श्रन्छो हैं, इसलिये हे दुष्ट बादल ! (ध्वर्थ में हो) क्यों गर्नना करता है ? तरा गर्नेग ह न तो मुक्ते रोट करपन्न होता है, श्रीर न सुख ही खरवन होता है ॥ ४ ॥ ४-३६० ॥

युष्मदः सौ तुहु ॥ ४-३६८॥

श्राभित्रो युष्मदः सौ परे तुर्हु इत्यादेशो भवति । ममर म रुण काणि रण्णाडह सा दिसि जोई म रोई॥ सा मालइ देसन्तरित्र जसु तुहुँ मरहि निश्रोह ॥१॥

अर्थ ─व्यवश्च श माया में "सू-तुम" वाचक सर्वनाम "युष्पद्" में प्रथमा दिमछि इ एक दब्ध में भाप्तव्य प्रत्यय "मि" की प्राप्ति होन पर मूल शब्द "युव्वद्" छोर प्रत्यय दोनों के स्थान पर "हर्हें "श् रूप की व्यादेश प्राप्ति होती है। जैसे —त्लम् =तुडु =तु ॥ गाथा का व्यतुवाद यों है —

सरकृत:-अमर ! मा रुख फुखु शब्द इरु, तां दिशं विलोक्तय मा रुदिहि ॥ सा मालती देशान्तरिता, यस्या तर्न झियते नियोगे । १॥

*हिन्दी —*हे भवरा ^{। '} क्या कुण-हण कुण' शब्द सत कर, त्रम दिशा को देख और करन इन कर । यह मालती का फूल तो बहुत ही दूर है, निसके वियोग में तू मर गहा है ॥ १॥ ४-१६=॥

जस्–शसोस्तुम्हे तुम्हइं ॥ ४-३६६ ॥

श्रवञ्जरो गुग्मदी जिस शसि च प्रत्येकं तुम्हें तुम्हई इत्यादेशी महतः ॥ तुम्दे तुम्हइ जाग्रह ॥ तुम्हे तुम्द६ पेच्छइ ॥ ययन मेदो ययासल्य तिपृत्पर्धः॥

अर्थ'--- अवश्वरा मापा में 'तू-तुप" बावड मर्बनाम 'युरमद्" शहर में प्रश्मा विभीत है बहु उगा म "वाम्" प्रत्यय की प्राप्ति होते पर मूल शब्द "युष्मदू ' बीर "जस-प्रत्यय' होती के स्वाव की "तुरदे श्रीर तुम्हद ' ऐसे दो दर हर्षों की चारेश प्राप्ति होती है। इसी प्रकार से इस "युक्तर" हर्ति है द्वितीया विमिक्त के बहुत्रयन में 'शस्' बत्यय की संयोजना बरने पर मूल शहर "तुरनरू' और "वन्यर शस् ' दोनों के स्थान पर प्रथमा विमक्ति के बहुबचन के समान हो "तुम्दे श्रीर तुम्दर ' देसे हा स मानी की व्यान्त्री माप्ति होती है। तैसे --यूपम जानीय=मुन्दे जाणह व्यवधा मुन्दहं आणह = गुम हार्

हो। यमान पर्यति = तुम्हे पेच्छइ अथवा तुम्हइ पेच्छइ = तुमको वह देखता है- आपको वह देखता है। इन आदेश प्राप्त पर्दों को प्रयक् पृथक् रूप से लिखने का ताल्पर्य यह है कि "दोनों ही पद" प्रथमा श्रीर दिवीया विभक्ति के बहवचन में समान रूप से होते हैं, क्रम से नहीं होते हैं। यों "ययासस्य" रूप का क्रयांत "क्रम रूप" का निपेध करने के लिये ही "वचन-भेद' शन्द का ब्रन्ति में उल्लेख किया गया है ॥ ४-३६६ ॥

टा-इयमा पइंतइ ॥ ४-३७० ॥

श्रवभ्रं रो युष्मद् टा ङि श्रम् इत्येतै। मह पइ तइ इत्यादेशी भवतः ॥ टा । मुद्द मुकाह वि वर्-तरु फिट्टइ पत्तत्त्वण न पत्ताणं।। तुह पुणु छाया जह होज्ज कहिव ता तेहि पत्तेहिं ॥श॥ महु दिश्रव तइ ताए तुहुं सिन श्रने विनिडिज्जइ ॥ पित्र काई करउ इउं काह तुहु मच्छें मच्छु गिलिउजड ॥२॥

टिना।

पइ मइ' बेहिं नि रण-गयहिं को जयसिरि तब दे।। केसिह लेपिया जम-वरिणि मण सह को थके है ॥३॥ एव तहाँ ॥ श्रमाः

> पड मेल्लन्तिहे महु भरणु मई मेल्लन्तहो तुज्कु ॥ सारस जस जो वेग्गला सो कि कृदन्तही सज्भु ॥४॥

एवं तइ ॥

अर्थ - अपभ्रश मापा में युष्पद्' सर्वनाम में तृतीया विमक्ति के एकवचन में 'टा' प्रत्यय का दोग होने पर गूल शब्द क्योर प्रत्यय दोनों के स्थान पर 'पइ क्योर तइ' ऐसे दो पदों की नित्य क्यादेश प्राप्ति होंगे हैं। इसी प्रकार से इसी 'युप्तद्' सर्वनाम में सप्तमी विमक्ति वाचक 'ब्रि' प्रत्यव की संप्राप्ति होन परमूल राष्ट्र और प्रत्यय दोनों के हो स्थान पर 'पह और तह' ऐसे दो पड़ों की नित्य चादेश पानि बानना चाहिये । यही सयोग द्विनीया जिमकि वाचक प्रत्यय 'धम्' के मिलने पर भी मून शब्द 'गुप्दू' भीर प्रत्यय 'श्रम्' दोनों का लोप होकर दोनों के स्थान पर भी 'पइ छीर तइ' पदा वी धादेश प्राप्ति नित्यमंव हो जाती है। मुल सूत्र में "टा, डि, धम्' का कम व्यवस्थित नहीं होकर वो खव्यवस्थित का बन्काया गया है व्यर्थात् पहिले 'हितोया, वृतीया और मममी' का कम बनलाना चाहिये या वहीं वर रिनीया, सप्तमी श्रीर द्वितीया' का कम बतलाया है, इसमें 'सूत्र रचना' से सम्बन्धित निद्वति कारण रूप अर्थ — अपभ रा भाषा में जुस्मद ' सर्वनाम राब्द के साथ में पचनी विमक्ति क एहरक है 'ह सि' भराय को सयोजना होने पर मूल राब्द 'युम्मद ' और प्रत्यय 'ह सि' होनों हो के खान पर जिस्स 'तह अथवा तुम्म अथवा तुम्म अथवा तुम्म दे कीन पर स्पों की आदेश प्राप्ति होतो है। जैस — जन का परा तुम्म अथवा तुम्म अथवा तुम्म है कीन पर स्पों की आदेश प्राप्ति होतो है। जैस — जन का परा तुम्म अथवा तुम्म अथवा तुम्म है से स्पाप्त ' क्यों प्रत्य 'हम' हो कि स्थान पर के सत्य ' हम' हो ते पर हती प्रकार से मूल शब्द 'युम्मद ' और प्रत्यप 'हम' हमें हो के स्थान पर वेसे ही 'तब, अथवा तुम्म अथवा तुम्म हमें समान रूप से ही इन तीनों पर हते हैं के स्थान पर वेसे ही 'तब, अथवा तुम्म अथवा तुम्म हमें समान रूप से हो इन तीनों पर हते। होते के अथवा वा अथवा तुम्म से देवे गये व्याहरणों का कनुतार राष्ट्र प्रकार से हैं —

त्यम भवत खायवा भवेत खागत =(१) तउ होन्तउ खागहो- (२) तुस्म हो तउ छागा (३) तुप्र होन्तउ खागदो = तेरे से खयवा तुम्ससे खाया हुआ। (खयवा प्राप्त हुआ। होवे॥ 'गर्न' प्रत्यय से सम्बन्धित खादेश प्राप्त पद रूपों के खदाहरण गावा में दियं गये हैं, तद्युसार गावा का कर्तुश यों है —

> संस्कृतः—तत गुण-संपर्द तत्र मति तत्र व्यत्तत्तरां सान्तिम् ॥ यदि उत्पद्य श्रन्य-जनाः मही-महले शिवन्ते॥१॥

हिन्दी — (मेरी यह कितनी चरकट मावना है कि) इस पृथ्वी महल पर चरान्न हो हर इन्त्र पुरुष यदि तुन्दारी गुण-संपत्ति को, तुन्दारी युद्धि को चौर तुन्दारी खसायारण-सञ्चत्त परा संस्थिति हैं-इनका अनुकरण करते हैं (तो यह कितनी अन्द्र्धी वात होगी ?)॥ या नाया में 'तर' पर रूप के स्थान पर कम से तत तुनक चौर तुम' आदरा नात नद क्यों का प्रयोग दिया गया है। ॥ ४-३०२॥

भ्यताम्भ्यो तुम्हहं ॥ १-३७३ ॥

व्यवश्ररी युष्पदो स्वस व्याम् इत्येतास्याम् सह तुम्हह इत्यादेशी भाति॥ हार्रा होन्तउ व्यागदो । तम्हह केरउ वश्र ॥

वर्ध- चवान स भाषा में 'युष्पद्' सर्वताम शहर क साथ में पंचमी विभक्ति बहुवबन मंपह प्रत्यय 'प्रयम्' का संयोग होते पर मूल शब्द 'युष्पद्' खीर प्रायय 'प्रवम्' दोनों के खान पर 'तुर्दर' हने पद-रूप की तित्यमेव चादेश माति होती है। जैसे —युष्पत् = सुग्दर्' = सुप से-आपसे। इसी प्रवार से इसी सवतान सहद 'युष्पत्' के साथ में चतुर्वी बहुवचन मोषह प्रस्थय 'प्यव' का बीर चती विमर्ति हैं बक्षक का बोधक प्रत्यय 'स्थाम्' का सम्बन्ध होने पर मूल शब्द 'युष्मद्' स्त्रीर प्रत्यय दोनों के स्थान पर मा रसी प्रकार से 'तुम्हह' पद रूप की नित्यमेव आदेश प्राप्ति जानना चाहिये। जैसे —

- (१) युष्मम्यम् = तुम्हह-तुम्हारे लिये अथवा आपके लिये ।
- (२) युष्माकम् =तुम्हह=तुम्हारा, तुम्हारी, तुम्हारे श्वीर श्वापका, श्वापकी, श्वापके, इत्यादि ॥

सूत्र में श्रीर वृत्ति में 'चतुर्थी-विमक्ति' का चल्तेल नहीं किया गया है परन्तु सूत्र-सदया ३ १३१ क विभान से चतुर्थी विभक्ति के स्थान पर पष्ठी विभक्ति के प्रयोग करने की अनुमित दी गई है, इसलिये वर्षे पर चतुर्थी विमक्ति का उल्लेख नहीं होने पर भी शब्द-ब्युत्नित को सममाने के लिये चतुर्थी विमक्ति ष श्रादश प्राप्ति भी समका दी गई है। वृत्ति में दिये गये चदाहरणों का स्पष्टीकरण यों हैं --

- (१) युष्मत् भवत् भागत व्यामहत्तं होन्तउ आगरो=तुम्हारे से-(आपसे) आया ह्या-(प्राप्त हुआ) होवे ।
 - (२) युष्पभ्यम् करोमि घनु = वुम्हह् केरस ध्या = मैं वुम्हारे लिये घनुष्य करता हैं।
- (३) युष्माकम् करोमि धनु = तुम्हह् केरत घराः = में तुम्हारे-ध्यापके-धनुष्य की करता हैं। 118 303 11

तुम्हासु सुपा ॥ ४-३७४ ॥

भवभ्रशे युष्पदः सुवा सह तुम्हासु इत्यादेशो भवति ॥ तुम्हासु ठिष्ट ॥

षर्थ - अवश्वरा भाषा में 'युष्पद' सर्वनाम शब्द में नप्तमी विमक्ति बहुवचन बोधक प्रस्यय 'सुप्' हा सपोग होने पर मूल शब्द 'ग्रुप्सद्' स्त्रीर प्रत्यय 'सुप' दोनों के स्थान पर नित्यमेव 'तुम्हासु' ऐसे पर ल हो बारेश प्राप्ति है। जैसे --युष्मासु स्थितम्=तुम्हासु विशं=तुम्हार पर व्ययवा सुम्हारे में रहा माहै। भाप पर अथवा आप में स्थित है।। ४-३७४॥

सावस्मदो इउं ॥ ४-३७५ ॥

भपश्रंशे असमदः सौ परे हुउं इत्यादेशो भनति ॥ तसु हुउ कलिजुगि दूधहहो ॥

वर्ष — भ्रमभ्र श मापा में 'में-हम' बाचक 'ध्यस्मर्' सर्वनाम राग्द में प्रयमा विमक्ति के एक ^{किन} बीयक प्रत्यय 'सि' का संयोग होने पर मूल शध्द 'अस्मद्' खौर प्रत्यय 'मि' दोनों के स्वान पर क्तिम 'हड' पर रूप की ईश्रादेश प्राप्ति होतो है। जैसे — सस्य अह पलियुगे दुर्नमन्य = तमु हर्ड फिंडेगुभे इहाइहो = उम दुर्लम का में कलियुग में। (पूरी गाथा सूत्र मरवा ४-३३= में दी गई है)। रें में कर्य में 'इड' का प्रयोग होता है।। ४-३७४॥

जस्-शसोरम्हे अम्हइं ॥ ४-३७६॥

अपभंशे व्यस्मदो जिस शिस च परे प्रत्येकम् व्यस्हे व्यम्हहं इत्यादेशी मनतः ॥
व्यम्हे थोना रिड पहुत्र कायर एम्न भणिन्त ॥
सृद्धि ! निहालहि गयथा-यल कह ज्ञाय जोण्ड करन्ति ॥१॥
व्यम्बणु लाहिन जे गया पहित्र पराया के नि ॥
व्यवस न सुम्राहि सुहच्छित्राहि जिने व्यम्हह निने ते नि ॥२॥
व्यम्हे देक्खह । व्यम्हह देक्पह । नचन भेदो यथासंख्यनिष्ट्रपर्थः ॥

जर्थ — खपन्न रा भाषा में 'त्रस्तद्' सर्वनाम राष्ट्र के साथ में प्रवास विश्विक वाहुरवन र'स कृत्यय 'जस' की सभाति होने पर मूल राष्ट्र 'खस्तद्' खौर प्रत्यय 'जस' होनों के स्थान पर निवने। प्रार्थ और 'त्रस्त्रहा ऐसे दो पद रूपो की 'खादेश आति होती हैं। जैसे'— ययस मान्द्र चयम जरहां व्यव अवस्त्र हो प्रवास से हिती खास से हिती 'खम्हद् ' सर्वनाम शन्द के साथ में हितीया विभक्ति के बहुवनन को स्वत्रात वाह प्रस्त्रय 'शस्य को संयोग होने पर इस 'अस्मद् ' शब्द और 'शस्य प्रत्य दोनों के स्थान पर सहा हो 'क्यें खौर 'खम्हद् ' ऐसे प्रथमा बहुवनन के स्थान ही दो पर रूपों की प्राप्ति का विधान जानना पारित जैसे — अरुमान्=(खयवा न)= के हि और अम्हद्व = ईसकी खयवा हमें। गायाचों का खतुवार यो हैं —

सस्कृत - चय स्तोकाः, रिपनः बहव ; कातराः एवं भणन्ति ॥ भ्रम्धे ! निमात्तय गगन तलं, कतिजनाः च्योत्स्ना दुर्नन्ति ॥

हिन्दी — योदा युद्ध में जाते हुए अपनी प्रियतमा को कहता है कि — 'कायर होंग जैमा कर हैं कि हम थोड़े हैं और शतु बहुत है, (परन्तु) हे मुन्धे-हे त्रिवतमें ! आकाश को देवी - बाकाश को कर हैं हैं कि कर कर हैं हैं। है। अर्दे विद्या करते हैं।

संस्कृतः—श्रम्लत्रं लागयित्वा ये गताः पथितः परकीयाः केऽपि ॥ श्रमस्य न समपन्ति गुरासिकायां यथा वर्ष तथा वेऽपि ॥ र ॥

अर्थ — जो कोई भी पर दिवर्षों वर प्रेम करने वाल पिश्व क्यांन वाला प्रेम लगा कर (स्तर)
क्रें गये हैं, वे क्यारम हो सुद्ध की शिष्या पर नहीं मोते हीने, जैसे हम (मापिका विरेष) सुत्र है जा
पर नहीं सोती हैं, वैसे हो वे मा होंग ॥२॥

उपर की गावाओं में 'श्रम्हें = हम' श्रीर 'श्रम्हइ = हम' ऐसा समकाया गया है। 'हन को' के श्राहरण यों हैं।

अस्मान् (श्रयवा) न परयति = अस्हे देश्यह श्रयवा अस्ह देश्यह = वह हमको श्रयवा हमें देखता है। इन खादेश प्राप्त पर्दो की प्रयक्ष प्रयक्ष हप में लिखने का तास्त्रये यह है कि दोनों हो पर्र श्राम्त श्रीर छन्हरूँ प्रयमा श्रीर द्वितीया विमक्ति क बहु उचन में ममान रूप से दोते हैं, क्रम रूप में नहीं हो हैं। यो 'यथा-सख्य' रूप का श्रयति 'क्रम रूप' का निपेध वरन के लिये हो 'वचन-भेर' शरद का श्रवे क श्रवन में उन्लेख किया गया है। ४-३०६॥

टा-इचमा मह ॥ ४-३७७॥

अपभंशे अस्मद टा हि अम् इत्येतें. मह मह इत्यादेशो मति ॥ टा । मइ जाखिजं विश्व विरहिश्यह कवि धर होई विआलि ॥ स्वर मिश्वक् कुवि तिह तत्रह निह दिखयरू सम्-गालि ॥ हिना । पह मह वेहिं वि रख-गयहिं ॥ अमा । मह मेझन्तहो तुज्कु ॥

सस्क्रतः---मया ज्ञातं त्रिय ! विरहिताना कापि घरा भगति नियाले । केनल (=१र) मृगाङ्कोपि तथा तपति यथा दिनकरः वयकाले ॥

मर्थ —हे प्रियतम ! मेरे से ऐसी समका गया था कि ब्रियतम के वियोग मे दुःक्षित ध्यक्तियों क ^{विद}क्षत्या शल में शायद कुळ भी सान्त्वना का चापार प्रास्त होता होगा, विन्तु ऐमा नहीं है, देखों ! ^{बद्द}ना भी सप्याकाल में नसी प्रकार में उप्याता श्रदान करने वाला प्रतात हा रहा है, जैना कि सूप वब्धतामय ताप प्रनास करता रहता है ॥१॥ इस गाधा में 'मया' के स्थान पर 'मइ' पर मव हाहरे रिया गया है।

'हि' पा बदाहरण यों है — त्याप माये हयोरिप रेण गतयों = पई मई वेर्ट कि राज-राहि युद्ध तेन में गये हुए तुम्म पर और सुम्म पर दोनों ही पर। (पूरी गाया सूत्र सख्या ४-३०० में रेखें) यहाँ पर 'मिय' के स्थान पर 'मह' का प्रयोग है।

'अम्' का दृष्टान्त इन प्रकार है — माम् मुक्रवतस्वन्नम् मेस्तन्तरो सुरमः मुक्ति हो सार् तरी । (पूरी गाथा सूत्र सरया ४ ३५० में ही गई है) ॥ गाथा के इस चरण में 'माम्' वर हे स्वार । मह' वर प्रदर्शित किया गया है ॥ ४-३५७ ॥

श्चमहेहिं भिसा ॥ ४-३७८ ॥ ः अपभ्रंशे अस्मदो भिसा सह अम्हेहिं हत्यादेशो मनेति ॥ तुम्हेहिं अम्हेहिं वं किमः

अर्थ — अपभ्र रा भाषा में 'खस्मद्' सर्वनाम शब्द के माय में एनीया विभक्ति के सहुद्दर । प्रत्यय 'मिस्' का सयोग होने वर मूल शब्द 'खस्मद्' और प्रत्यय 'मिस्' रोनों के स्थान पर 'बार्गे' । एक ही पद की नित्यमेव आदेश प्राप्ति हाती है। जैसे — युष्माभि अस्मापि यन स्मय नहम् अस्ट्रेहिं ज फिअड-बुम्हारे मे, हमारे से जो किया गया है ॥ ४३==॥

ें महु मज्मु ङित-ङित्-स्याम् ॥ ४-३७६ ॥ अपभ्रंशे अस्मदो टिसिना उसा च सह प्रत्येक महुमुज्कु इत्या

व्यपञ्जरी व्यस्मदो टिसिना उसा च सह प्रत्येक महु मञ्झु इत्यादेशी मनत । होनतउ गदो । मञ्झु होन्तउ गदो ॥ उमा ।

महुकन्तहों ये दोसहा, हेक्सि । म महिहि आलु । देन्तहों हर्ज पर उन्यस्थि जुज्मन्तहो करवालु ॥ जह भग्गा पारकहा तो सिहि । मज्मु पिएण । अह भग्गा अम्हह तला तो तें मारियटेण ॥

अर्थ — धपन्न रा माथा में 'ने हम' वाचक सर्वनाम द्वार 'बरमद्द' के माय में वंबता दिन्द है एक्ष्वपन में 'धिम' अस्यय की मयोचना दोर पर मूल शहर 'बरमद्द' बीर शरवय 'इसि' दोनों हो है नाथ पर निश्यमेव 'मद्द' कीर 'मश्कून' ऐसे दो पर रूपों की खादेश याति होगे हैं। जैसे — मन्य में पार्टी क्यां के प्रश्कू - मुक्त कायवा मेरे से । इसी शकार में देमो मर्बनाम राष्ट्र 'खानद्द' के मान में पार्टी क्यां के एक बचन के प्रस्थय "इस्" का सबय होने पर वसी शकार से मून शब्द "बसनद्द" कीर हावय 'प्रवृ होनें ही के स्थान पर वैसे ही 'महु' और 'मज्झु' ऐसे समान रूप से ही इन दोनों पर रूपों की सदा ही आहेत प्राप्ति वानना चाहिये। जैसे —मम अथवा मे = महु अथवा मज्झु = मेरा, मेरी, मेरे। युक्ति में आया इक्षा पब्चमी अर्थक उदाहरण यों है —मत् भवतु गत =महु होन्तउ गदी अथवा मज्झु होन्तउ गदी अथवा मज्झु होन्तउ गदी अथवा मज्झु होन्तउ गदी अथवा मेरे पास से) गया हुआ होवे॥ पट्टी-अर्थक उदाहरण गायाओं में दिया गया है, जिनका अनुवाद कम से यों है —

सस्कृतः — मम कोन्तस्य द्वी दोषो, सिख ! मा विधेहि श्रालीकम् ॥ २०१४ - ददतः परःश्राह जुर्वरिता, ग्रुष्यमानस्य करवाल ॥ १॥ १

हिन्दी — हें सिलि! मेरे प्रियतम पित में केवल दो ही दोप है, इन्हें त् ध्यर्थ ही मत छिपा। जब ब दान देना प्रारम्भ करते हैं, तब केवल में ही बच रह जाती हूँ खर्यात मेरे सिवाय सब कुछ दान में दे रहे हैं और जब वे युद्ध लेत्र में युद्ध करते हैं तब केवल तलवार ही बची रह जाती है खीर सभी शतु नाम रोप रह जाते हैं। इस गाया में 'मम = मेरे खर्य में 'महु' खादेश प्राप्त पद रूप का प्रयोग किया गया है।। है।

संस्कृतः -- यदि मग्नाः परकीयाः, तत् सिर्धि ! मम प्रियेण ॥ अय भग्नाः अस्मदीयाः, तत् तेन मारितेन ॥ २ ॥

हिन्दी — हे सिल । यदि शतु गण मृत्यु को प्राप्त हो गये हैं ध्ययमा (रण चेत्र को छोदकर के)
भाग गये हैं, तो (यह सब निजय) मेरे प्रियतम के कारण से (ही है) ध्ययमा यदि ध्यप्ते पत्त के बीर प्रत्य रण तेत्र को छोद कर मागं खड़े हुए हैं तो (समफो कि) मेरे प्रियतम के बीर गति प्राप्त करने कहारण से (ही वे निराश होकर रण चेत्र को छोट आये हैं)॥ ।।

इस गाया में 'मम=मेरे' खर्च में 'मब्कु' ऐसे खादेश प्राप्त पद-रूप का प्रयोग प्रदर्शित किया 'या है॥ ४ ३७६॥

श्रम्हहं भ्यसाम्-भ्याम् ॥ ४-३८०॥

भपत्र शे अस्मदो भ्यसा स्नामा ,च सह श्रम्हह इत्यादेशो भगति ।। श्रम्हहं होन्तउ भगदो ॥ श्रामा । श्रह मग्या श्रम्हहं तया । (४-२७६) ॥

वर्थ — घषभ्र श भाषा में 'मैं-हम' वाचक सबनाम शन्द 'धासद्' के साथ में पर्चमी विमक्ति ह बहुवधन घोषक प्रत्यव 'भ्यस्' का सन्यन्य होने पर मूल शब्द 'धासद्' घौर प्रत्यव 'भ्यम्' होनों ही ह खान पर 'धम्हह' ऐसे पर-रूप की नित्यमेव धादेश प्राप्ति होती है। जैसे —धासन्-मग्रहे-सार से भयवा इससे ॥ इसी प्रकार से इसी सर्वनाम शप्द 'धासद्' के साथ में चतुर्यी बहुवपन घोषध वब्धातामय ताप प्रदीन करता रहता है ॥१॥ इस गाथा में 'मयां' के स्थान पर 'मह' पर रूप हा प्रका विया गया है।

'हि' का उदाहरण यों है —त्नायि माथे ह्योरिप 'रण गतयों = पड़ मई वेहि वि रण-गवहिः युद्ध क्षेत्र में गये हुए तुक्त पर श्रीर मुक्त पर दोनों हा पर। (पूरी गाथा सूत्र-सख्या ४-३७० में देता)॥ यहाँ पर 'मयि' के स्थान पर 'मह ' का प्रयोग है।

'श्रम्' का दृष्टान्त इम प्रकार है —माम मुद्ध्यतस्त्य=मइ मेरुलन्त्रही े तुरुम-मुक्त को होही हुर तेरी । (पूरी गाथा सत्र सत्या ४ ३७० में दी गई है) ॥ गाथा के इस चरण में 'माम्' पर हे धार पर 'मइ' पर प्रदर्शित किया गया है ॥ ४ ३०० ॥ 📅 🔭 🤭

अम्हेहिं भिसा॥ ४-३७६॥

अपभ्रं री अस्मदो भिसा सह अम्हेर्हि इत्यादेशी मंत्रति ॥ तुम्हेहि अम्हेहि **ब** किंग्ड ॥ अर्थ - अपुत्र श भाषा में 'चारमद्' सर्वनाम शब्द के साथ में तृनीयां विभक्ति के बहुवचन बारे प्रत्यय ''मस्' का सयोग होने पर मूल शब्द 'बस्मद्' खीर प्रत्यय 'मिस्' दोनों के स्थान पर 'बार्हेडिं वर्हे एक ही पद की नित्यमेव आदेश प्राप्ति हाती है। जैसे —युष्मामि अस्माभि यर कृतर नतुर्ह्हि अम्हेर्हि ज किअउ=तुम्हारे में, हमारे से जो किया गया है।। ४३७५॥

मह मज्भु ङलि–ङल्–भ्याम् ।। ४−३७६ ॥

अपम्र शे अस्मदो हसिना उसाच मह प्रत्येक महु मज्सु इत्यादेशी मरत ॥ म होन्वउ गदो। मन्भु होन्वउ गदो॥ टिसा।

> महु कन्तहों वे दोसडा, हिल्ला म मह्बहि आ छ। देन्तहीं इउं पर उच्चरित्र जुज्मन्तही करवालु ॥ जइ मग्गा पारकडा तो सहि। मन्कु पिएण । थह मग्गा अम्हह तथा तो ते मारियडेण ॥

अर्थ — अपन्न रा मापा में 'में हम' वाचक मर्वताम शहर 'असमद्' के साथ में पंचमी विमित्त है एक्वचन में 'डिसि' प्रत्यय की मयोजना होने पर मूल शान्द 'क्रस्पद्' धौर प्रत्यय 'बसि' दोनों ही है स्थान पर निध्यमेव 'महु' और 'मञ्कु' मेंसे दो पर रूपों की 'झादेश माति होती है। जैसे'—मत्≖महु सी। मञ्जू = मुक्तसे अथवा मेरे से । इसी प्रकार से इसी सर्वनाम राज्य "कामद्र" के साथ में पण्डी विमर्कि व एक बचन के प्रत्यय "इस्" का सबध होने पर उसी प्रकार से मूल शन्द "बहसडू" झीर प्रावय "इस् होनें हा के स्थान पर वैसे ही 'महुं' श्रीर 'मन्तुं' ऐसे समान रूप से ही इन दोनों पर रूपों छी सदा ही शाहेरा प्राप्ति जानना चाहिये। जैसे —मम श्रयंवा मे = मह श्रयंत्रा मण्डा = मेरा, मेरी, मेरे। पृक्ति में श्राया हुशा पञ्चमी श्रयंक उदाहरण यां है —मत भवतु गत =मह होन्तउ गतो श्रयंवा मण्डा होन्तउ गतो श्रयंक उदाहरण यां है —मत भवतु गत =मह होन्तउ गतो श्रयंवा मण्डा होन्तउ गतो =मरे से (श्रयंवा मेरे पास से) गया हुशा होवे॥ पष्ठी श्रयंक उदाहरण गायाओं में दिया गया है, जिनका श्रमुवाद क्रम से यों है —

सस्कृतः - मम कान्तस्य ही दोषी, सिंख ! मा विधेहि श्रलीकम् ॥ ददतः पर श्रह जुर्वरिता, युष्यमानस्य करवाल ॥ १ ॥

हिन्दो — है 'सिक ! मेरे प्रियतम वित्त में केवल दो ही दोप है, इन्हें तू ध्यर्थ ही मत छिवा। अव इतानदेना प्रारम्भ करते हैं, तम केवल में हो मच रह जाती हूँ खर्थात मेरे सिवाय सम इछ दान में दे रहे हैं और अम ने युद्ध जेत्र में युद्ध करते हैं तम केवल तलवार हो बची रह जाती है और समी शतु नाम शेप रह जाते हैं। इस गाथा में 'मम = मेरे अर्थ में 'महु' खादेश प्राप्त पद रूप का प्रयोग किया गया है।। १।।

संस्कृत:-यदि भग्नाः परकीयाः, तत् सिंख ! मम प्रियेण ॥ स्रथ भग्नाः श्रस्मदीयाः, तत् तेन मारितेन ॥ २ ॥

हिन्दी — हे सिल । यदि शतु गण मृत्यु को प्राप्त हो गये हैं अथवा (रण चेत्र को छोड़कर के)
भग गये हैं, तो (यह सब विजय) मेरे प्रियतम के कारण से (ही है) अथवा यदि अपने पण के पीर
पुरुष रण चेत्र को छोड़ कर मार्ग खड़े हुए हैं तो (समफो कि) मेरे प्रियतम के वीर गठि प्राप्त करने
ह डारण से (ही वे निराश होकर रण चेत्र को छोड आये हैं)॥ २॥

इस गाया में 'मम≂मेरे' खर्थ में 'मङ्क्तु' ऐसे खादेश श्राप्त पद-रूप का प्रयोग प्रदर्शित किया ग्या है ॥ ४ ३७६ ॥

अम्हहं भ्यसाम्-भ्याम् ॥ ४-३⊏० ॥

थपत्र शे श्रह्मदो स्थासा श्रामा ,च सह श्रम्हह इत्यादेशी भगति ।। श्रम्हहं हीन्तउ भागरो ॥ श्रामा । श्रह मगगाः श्रम्हहं तथा । (४-३७९) ॥

भर्थ — अवधारा मापा में 'सें-हम' वाचक सवनाम रान्द 'आसाद' के साय में पवमी विमक्ति है बहुबबन घोषक प्रस्तव 'स्वस्' का सम्बन्ध होने वर मूल रान्द 'आसाद' और प्रस्तव 'स्वंम' दोनों हो है स्थान पर 'अन्हरू' ऐसे पद रूप की नित्यमेव आदेश प्राप्ति होती है। जैसे —आसान्जमग्रह-स्नों से अववा इससे ॥ इसी प्रकार से इसी सर्वनाम शन्द 'असाद' के साथ में पतुर्वी बहुबपन मीपक सुपा अम्हासु ॥ ४-३-१ ॥

ि वंपप्र भी अस्मदः सुपा संह अम्हास इत्यादेशी मवर्ति ॥ अम्हास हिन्म ॥

अर्थ — अपश्रश मापा में 'मैं-इम्' वाचक सर्वनाम् शब्द 'असमद्द' के साव में सप्तमी विश्विष्ट वहुवचन के बोठक प्रत्यव 'सुप' को संबोग होने पर मूल शब्द 'असमद्द' और मध्यव स्था श्रे होने है। स्थान पर नित्यमेव 'अम्हासु' देसे पदं-दर्ग की बादिश प्राप्ति हों हो है। जैसे — अरमासु स्थितहरू अम्हासु विश्व-हमारे पर अथवा हमारे में रहा हुआ है ॥ ४३-१॥ २०।

्रित्यादेराध-त्रयस्य संबन्धिनो हिं न वा ॥ ४-३८३ ॥

स्यादीनामाध त्रयस्यं संवन्धिनो बहुप्यवेषु वर्तमानस्य वचनस्यापन्नेशे हिं श्र्याहे वा भवति ॥ कि कि

सह-कवरि-चन्च तहे सोह घरहिं। े ने मर्ल-खन्कु ससि-राई-करहिं॥' ८ कि तत सहिं करल ममर-डल-तुलिश्रा

न विमिर-डिम्म खेल्लन्ति मिलिश्र ॥ १०॥

अर्थ :— सूत्र सख्या ४ ३८२ से ४ ३८८ वह में क्रियाओं में जुड़ते वाले काल बोचक प्रत्यों । वर्णन किया गया है। यों सर्वे सामान्य रूप से वो जो प्रत्यय प्राकृत मापा के लिये कहे गये हैं, लगः वे सब प्रत्यय यपन्न रा मापा में मी, प्रयुक्त होते हैं। केवल बर्जमानकाल में, श्राहार्य में स्त्रीर भिष्य काल में ही योड़ावा सन्दर है, जैसा कि इन मूर्जी में बतलाया गया है। वर्तमानकाल में 'वह-वे' वाचक अन्य पुरुष के बहुवचन में अपश्र श भाषा में प्राकृत भाषा में क्षिक प्रत्यों के अतिरिक्त एक प्रत्यय हिं' की प्राप्ति विश्वेष रूप से और विकल्प रूप से अधिक होती है। असे —शुक्तिन = कर्राह्वं = वे करते हें। धरतः = धर्राह्वं=वे दो धारण करते हें। शोभन्ते = सहाधि=वे शोमा पाते हैं। वैकल्पिक पच होने से पचान्तर में 'तित, न्ते और इरे' प्रत्यों की प्रार्थित भी होगी। वैसे —श्रीडन्ति=वेक्किन्ति, खेल्लन्ते और खेल्लिरे=वे रोलते हैं अथवा वे कोड़ा करते हैं। शृति में प्रदक्ष हुन का अनुवाद यों हैं —

मस्कृतः—मुख-कवरी-प्रन्थो तस्याः शोभा घरतः।

नतु मञ्ज-युद्धं शशिराह् कृरूतः॥

तस्याः शोभन्ते कृरलाः भ्रमर-कृत्त-तृत्तिताः।

नतु भ्रमर-हिम्माः क्रीहन्ति मिलिताः॥१॥

हिन्दी'—उस नाथका के मुख और देश पाशों से बची हुई वेखी अयान चोटी इम प्रकार की ग्रामा को घारख कर रही है कि मानों चन्द्रमा और राहूं' मिल कर क मल्ल-युद्ध कर रहे हों। उनके वालों क गुच्छे इस प्रकार से शोभा को घारण कर रहे हैं कि माना मेंवरों के समृह हो सथीजित कर दिये हैं। अथवा मानों ब्रोटे छोटे वाल-भ्रमर-ममृह हो मिल करके खेल कर रहे हैं। ॥ ४-३=२॥

मध्य-त्रयस्याद्यस्य हि:॥ ४-३-३॥

त्यादीनां मध्यत्रयस्य यदाद्य वचन तस्यापभ्रणे हि इत्यादेणो वा मगति ॥

सप्पीहा पिउ पिउ भणवि कित्तिउ रुग्रहि हयास ॥

तुह जिल महु पुणु वल्लहह विहु वि न प्रिय श्रास ॥१।

शारमने पदे।

बप्पीहा कई बोल्लिओण निग्विण वार इ बार ॥ सायरि मरिश्रह विमल~जलि लर्हाह न एक्ड घार ॥२॥ सप्तम्याम् ।

श्रापहिं जम्महिं श्राप्तहिं नि गोरि सुदिन्नहिं कन्तु ॥ गय-मर्न्तहं चर्चकुमह जो श्राप्तिहह हमन्तु ॥३॥ पदे । रुश्रमि । हत्यादि ॥ अर्थ — वर्तमानकाल में मध्यम पुरूष के एकवचन के क्रर्थ में प्राक्ष्त माथा में वर्णित त्यां है अितिरिक्त अपश्रश माथा में एक प्रत्यय 'हि' की प्राप्ति अधिक रूप से और वैक्विश्क रूप से होती है। जैसे — रोिविय — रूपाहि — तू रोता है। प्राप्त र में 'रूपाहि' — तू रोता है, ऐसा रूप सो होता। आरामनेपदीय दृष्टान्त यों है — लमसे — लहाहि — तू प्राप्त करता है। प्रचान्तर में लहान्दि नू प्राप्त करता है। प्रचानतर में लहान्दि नू प्राप्त करता है। प्रचानतर में लहान्दि नू प्राप्त करता है। प्रचानतर में लहान्दि नू प्राप्त करता है। प्रचानकाल में भी मायम पुरूष क एकवचन के क्रयों में विकल्प से 'हि' प्रत्यय की प्राप्ति चिषक रूप से हाती हुई देखी जाती है। वैसेक — दृद्या — दिक्जहि — तू देना ख्रयोत देने की क्रया करना ॥ गाथाओं का अधुवाद कम से यां हैं —

संस्कृतः — चातक ! 'पिउ, पिउ'; (पिवामि, पिवामि, श्रवना प्रिय ! प्रिय ! हित) भिष्यत्वा 'कियद्रोदिपि हताश ॥ ृ तन जले मम पुनर्नेन्लमे द्वयोरपि न पूरिता व्याशा ॥ १ ॥

हिन्दी —नायिका विशेष व्यपने प्रियतम के नहीं व्याने पर 'पातक'पक्षी को लश्य करक कहती है कि — हे पातक 'पानी पीने की बुन्हारी इच्छा अब पूरी नहीं हो रही है तो 'फर तुम 'में पीआग-में पीजगा' ऐसा वोलकर क्यों बार बार रीते हो? में भी 'भ्रियतम, प्रियतम देशा में लकर निराश हो गई हूं। इसिलये तुम्हें तो जल प्राप्ति में खौर मुफे प्रियतम-प्राप्ति में, दोनों के लिये काशा पूर्ण होनेवाली नहीं है ॥ १॥

सस्कृतः — चातक ! किं कथनेन निष्टुं ख वारं वारम् ॥ सागरे भृते विमल-जलेन, लममे न एकामि घाराम् ॥ २ ॥

हिन्दी — छारे निर्दयी पातक ! (अथवा हे निर्लंडन पातक) बार बार एक ही बाउंडी बहुने में क्या लाम है ? जबकि ममुद्र के स्वच्छ जल से परिपूर्ण होने पर भी, उससे दू एक खूद भी नहीं पात कर सकता है, अथवा नहीं पाता है ॥ ? ॥

सस्कृतः — श्रस्मिन् जन्मिन् श्रन्यस्मिन् । ति दद्याः कृतिम् ॥ गजानां मत्तानां त्यक्ताकुशानाः य संगच्छते इसर् ॥ र ॥

हिन्दी —कोई एक नायिका विशेष खपने पियतम की रेश कुराजता . पूर मुग्य होकर वार्षती सं प्रार्थना करती है कि —हि गीरि ! इस जन्म में भी खौर पर जन्म में भी उसो पुरुषको मेरा पति बनाता, जो कि ऐसे महोनमत्त हाथियों क समृह में भी हैंपता हुआ चला लाता है, जिन्हींन कि-(जिन हाथियों ने कि) बोहरा के देशाव का भी परिस्थाग कर दिया है।। ३॥ ४ ३-३॥

्बहुत्वे हुः॥ १-३८१॥

त्यादीनां मध्यमत्रयस्य मंबन्धि बहुष्वर्थेषु वर्तमानं यद्वचनं तस्यापश्रशे हु इत्यादेशो वा मवति ॥

वित्त श्रव्मत्युणि मृहु-महणु लहुई हुआ सीइ॥ अइ इच्छेहु वईत्तर्याउं देहु म मन्गहु कीइ॥१॥ पत्रे। इच्छह । इत्यादि॥

संस्कृत,---वलो: अभ्यर्थने मधुमथनों लघुक्रीभूतः सोऽपि ॥ यदि इच्छय महत्रवं (बहुत्तराउं) दत्त, मा मार्गयत कमपि ॥१॥

हिन्दी -- मधु नामक राज्ञस की मथने वाले भगवान विष्णु को भी विल राजा से भीव मांगने गरण में छोटा वर्थात 'वामन' होना पडा था, इसलिये यदि तुम महानता चाहते हो तो देखों, परन्तु किंगी से भी मांगो सत ॥'१॥ ४-३-४॥

अन्त्य-त्रयस्याद्यस्य उं ॥ ४-३८५ ॥

त्यादीनामन्त्यत्रयस्य यदाद्यं वचन तस्यापभ्रशे उं इत्यादेशीं वा मर्वात ॥ विहि विद्यादन पीडन्तु गह म घणि करिह विसाउ॥ सपद कडूउं वेस जिवँ छुट्ट श्रम्बद ववसाउ॥ १॥ भीले किन्जन सुश्रायस्सु॥ पर्चे॥ कडूामि इत्यादि॥

गर्भ —श्रपभश भाषा में बर्तमातकाल के कार्य में 'में' वायक उत्तम पुरुष के एकवचन में प्राष्टत भा में प्राक्ष्य प्रत्यय के क्रांतिरक एक प्रत्यय 'ड' की खादेश प्राप्ति विवक्ष्य रूप से बौर विरोध रूप से एंदें हैं। वेंक्षत्विक पक्त होने से पक्तान्तर में 'मि' प्रत्यय की भी प्राप्ति होगी। वैसे.—क्रांगीभ-शह्बर्जन क्रिया है। पद्मान्तर में 'कह्दामि' ह्रप भी होगा | वर्ति करोगि सुजनस्य=बिति क्रियां सुक्रमस्य सक्ता पुरुष के तिये में (अपना) बितदान करता हु। पद्मान्तर में 'क्रियां के स्थान पर क्रियां' रूप भी होगा। गाथा का मापान्तर इस प्रकार है —

संस्कृतः—विधि विनाटयतु ग्रहाः पीडयन्तु मा धन्ये ! कुरू विषादम्॥ संपदं कर्पामि येपमिव, यदिं अर्घति (≔स्यात्) व्यवसाय ॥१॥

हिन्दी'—मेरा भाग्य भन्ने ही पितकूल होने, ब्रीर मह भी भन्ने ही मुसे वीड़ा प्रदान करें, परत हे सुग्धे ! हे धन्ये ! तूरोद सत कर । जैसे में खपने कपड़ों को-(ड्रेस को वेद को) खासाती से पीत लेता हूँ, वैसे ही धन-संपत्ति को भी आसानी से आकर्षित, कर सकता हूँ-बींच सकता हूँ, वीद मेरा व्यवसाय अच्छा है—यहि मेरा धवा फलप्रद है तो सब कुछ शीव ही अच्छा हो होगा ॥ ४-३-३॥

्री बहुत्वे हुं ॥ ४-३५६ ॥

स्यादीनामन्त्यत्रयस्य संबन्धि बहुष्पर्धेषु वर्तमान् यद्ववनं तस्य हु इत्यादेशे इ मवति ॥

खुंग्ग-विसाहिउ जहिं लहहूं पियं तहिं देसहि जाहु।। ।। पंग-दृब्मिक्सें भगाहें विद्युं जुड़में न वर्लाहुं ॥१।

🕬 पर्चे । सहिद्ध । इत्यादि ॥ 💎

अर्थ — अपम स मापा में वर्गमानकाल के अर्थ में 'हम्' याचक, उत्तम पुरेष के बहुववनार्थ माछत मापा में चर्जाय प्रत्यों के अविशिक्त एक प्रत्य 'हु' की आदेश प्राप्ति विकश्य से और विशेष एक प्रत्यों के चित्रों के अविशिक्त एक प्रत्या 'हु' की आदेश प्राप्ति विकश्य से और विशेष एक प्रत्यों की मो प्राप्ति होगी। वैस एप से होवी हैं। वैकल्पिक पद्म होने से 'प्रचान्तर में 'मो,'मा, मा, प्रत्यों की मो प्राप्ति होगी। वैस एक स्माप्ति होगी। विश्व प्रत्या की मो प्राप्ति होगी। विश्व प्रत्या की मो प्राप्ति होगी। अव्यापन का अविश्व का स्माप्ति होगी। विश्व प्रत्या की मो प्राप्ति होगी। विश्व प्रत्या की माम का अविश्व का स्माप्ति होगी। विश्व प्रत्या की सो प्रत्या कि स्माप्ति होगी। विश्व प्रत्या की सो प्रत्या की सो प्रत्या कि स्माप्ति होगी। विश्व प्रत्या की सो प्रत्या कि स्माप्ति होगी। विश्व प्रत्या की सो प्रत्य की सो प्रत्या की सो प्रत्या की सो प्रत्या की सो प्रत्या कि सो सापति होगी। विश्व प्रत्या की सो प्रत्या की सो प्रत्या की सो प्रत्य की सो सापति होगी। विश्व सापति हो

संस्कृत'—विद्र्ग विसाधित यत्र लमामहे, तर्र देशे याम' ॥ रण-दूर्मिनेण मन्नाः विना युद्धिन न' वलामहे ॥१॥

हिन्दी - इस देश की जावेंगे खयवा जाते हैं, जहां पर कि ततेवार से सिद्ध होने वार कार्य की जाम कर सकते हीं। शुद्ध के दुमिंच 'से खर्यात युद्ध के खर्माव से निराश द्वय हम दिना युद्ध क (सुंख पूर्वक) निर्दी रह सकते हैं।। हैं-दिन हम अपने स्वापन से स्वापन से निराश द्वय हम दिना युद्ध क

हि-स्वयोरिदुदेत् ॥ ४-३=७॥

पञ्चम्यां हि-स्त्रयोरपश्चरो इ, उ, ए इत्येने त्रय झादेशा ना मवन्ति ॥ इत्। इस्तर ! सुमरि म सल्लक्ष्य सरला सास म मेल्लि ॥ कनल् ज़ि,पाविय विहि—नसिख तं चरि माखु म मेल्लि ॥ १॥

उत्।

ममरा एरथु वि लिम्बंडर के ति दियहडा विलम्बु॥ घण-पर्चेलु छाया बहुलु फुल्लह जाम कथम्बु॥ २॥

एव ।

प्रिय एम्बर्सिकरे सेन्लु करि छड्डि तुहु करवालु॥ ज कावालिय बप्पुडा लेडि अभग्गु कबालु ॥३॥ पत्रे। सुमरहि। ईर्त्यादि॥

अर्थ — अपन्न रा मापा में आहाथ वाचक लकार के मध्यम पुरुष के एक वन में प्राकृत मापा में इसी अर्थ में प्राप्तव्य पत्थय 'हि और सु' की अपेना से तीन प्रत्यय 'ह, छ, छ' का प्राप्त विशेष रूप स्थीर आदेश रूप से होती है। यह स्थिति वैकल्पिक है, इसलिये इन तीन आदेश प्राप्त प्रत्ययों 'इ, छ, प, क अविरिक्त 'हे और सु' प्रत्ययों की प्राप्ति भी होता है। जैसे — स्मर-अमरि- याद कर। (२) अञ्च मेहिंग = छोद हो। (३) चर = चारि = छा। प्राप्ति में सुमर छु और सुमर हि, मेहन सु, मेहल हि, पर प्रिंद हों हो है। (३) चर = चारि = छा। प्राप्ति में सुमर छु और सुमर हि, मेहन सु, मेहल हि, पर प्राप्ति कि प्राप्ति भी होती, ये उद हरण 'इ' प्रत्यय से सम्बन्धित है। 'छ' का वदाहरण यों दे — विलम्ब = बिलम्ब = प्रत्यां का प्राप्ति भा सी।। ए' का वदाहरण — कुरू = करे = तू कर। प्रतान्तर में 'कर सु, और कर हि' रूप मी होंगे। तीन भाषों का अनुवाद कमरा यों हैं —

संस्कृतः—कुञ्जर ! स्मर मा सल्लकी , सरलान् सामान् मा मुश्च ॥ करलाः ये प्राप्ता विधिवरोन, तार्चर, मानं मा मुश्च ॥ १ ॥

हिन्दी — हे गजराज । हे हिस्त रस्त । 'सल्जकी' नामक स्वादिष्ट पीयों को मत याद कर भीर (उन्हे लिये) गहरेश्वास मत छोड़ा। भाग्य कें कारण में जो पीघे (गाद्य रूप में) भान दूव हैं वन्हीं भें का भीर अपने सन्मान को – आस्म-गोरब को – मत छोड़ा। १॥

सम्हतः — भ्रमर ! अत्रापि निम्बके कित (चित्) दिनसान् निलम्बस्य ॥ धनपत्रवान् छाया पहुलो फुल्लति यावत् कदम्य ॥ २ ॥ हिन्दी — हे भेंबर ! आभी कुछ दिनों तक प्रतीक्षा कर आरे इसी निम्ब पृत्त (के पूर्वो) प (आश्रित रह) जब तक कि सघन पत्तों वाला और विस्तृत छाया वाला कर्मन्य नामक पृत्त ति, (तय तक इसी निम्ब पृत्त पर आश्रित क्षेकर रह)॥ २॥ ।

सस्कृतः - प्रिय ! एवमेव कुरु भन्त, करे त्यज्ञ त्व करवालम् ॥ येन कापालिका वराकाः लान्ति अभन्नं कपालम् ॥ ३ ॥

हिन्दी — कोई नायिका विशेष अपने प्रियतम की वीरता पर मुख होकर कहती है कि है कि तम ! तुम माले को अपने हाय में इस मकार यामकर शतुओ पर बार करों कि जिससे वे मृत्यु को है भाम हो जाय परन्तु उनका भिर अखड़ हो रहें, जिमसे वेचारे कापालिक (खोपड़ी में आटा माग खाने वाले) अराज खोपड़ी को भाम कर सर्के। तुम उल्लाहर को छोड़ दो - उल्लाहर से बार मत को ॥ ४ ३८०॥

वरस्यति-स्यस्य सः ॥ ४-३दद् ॥

अवभंशे भविष्यदर्थ-विषयस्य त्यादेः स्यस्य सो वा भवति ॥ दिश्रहा जन्ति भडण्डहिं पडहिं मणोरह पञ्छि॥ जं अञ्छह् त माणिश्रह होसह करत् म अञ्छि॥ १॥

पन्ने । होहिइ ॥

अर्थ —पाकृत-भाषा में जैसे भविष्यत्काल के धर्य में वर्तमानकाल वाचक प्रस्त्रों के पहिने हैं। की खागम प्राप्ति होती हैं; वेसे हो खनजरा माषा में मा भविष्यत्काल के धर्य में उक्त हैंदे के खात प यैक दिवक रूप से वर्तमानकाल वाचक प्रत्ययों के पहिले 'स' की खागम प्राप्ति होती है। जैसे-भविष्यति = होसइ खथवा होहिइ-वह होगा। गाया का खनुवाद यों है —

सस्कृत:—दिवसा यान्ति वेगे, पतन्ति मनोरवाः पथात्॥ यदस्ति तन्मान्यते मनिष्यति (इति) कुवेन् मा आस्स्य ॥ १ ॥

हिन्दो —िदन प्रतिदिन स्रति वेग से श्वतीत हो रहे हैं और मन मावनाएँ पीड़े पहती जा रही हैं स्थान दानी पड़ती जा रही हैं स्थान द्वारा पड़िया स्थान से हैं सो हो स्थान स्थान से हैं सो हो साम्यता मानता हुआ खालमी हारूर मन बैठ ला ॥ ४ ३६५॥

क्रिये: कीस ॥ ४-३८६॥-

क्रिये इत्येतस्य क्रियापदस्यापश्रंशे कीसु इत्यादेशो वा मवति ॥ सन्ता मोग जु परिहरह, तसु कन्तहो विल कीसु ॥ तसु दहवेण विमुण्डियज, जसु खिल्ल हडाउं सीसु ॥ १ ॥

पत्ते । साध्यमानावस्थात् क्रिये इति सस्कृत शब्दादेप प्रयोग । बलि किङनर्उ अवस्तु ॥

अर्थ-सस्कृत भाषा में खपलक्य 'किये' क्रियापद के स्थान पर अपन्न हा माषा में विकल्प से । ह्युं एस क्रियापद की आदेश प्राप्त होती है । वैकल्पिक पत्त होने से पदान्तर में 'किउनड' ऐसे पद । एका मी प्राप्त होगी। जैसे —िक्रयं=कीस्त्र अधवा किव्व = में करता हूँ में करती हूँ। साम्यमान स्थाय में 'क्रिय' का रूप 'क्रव्य' होगा। जिसकी सिद्धि हम प्रकार से की जायगी — 'क्रिय' में रियत एका सरपा र-७६ में लोप और १-२४८ से 'य' के स्थान पर द्वित्य 'क्रन' की प्राप्ति होकर 'क्रिय' हाता पर 'क्रिय' रूप की आदेश प्राप्ति जानना चाहिये। 'कीसु' क्रियापद को सममने के लिय जो । वा शे गई है, ससका अनुवाद यों है ।

सस्कृत:—सतो भोगान् य परिहरति तस्य कान्तस्य वर्लि क्रिये।। तस्य दैवेनैंव मुण्डितं, यस्य खन्वाट शीर्पम्॥१॥

हिन्दी — में अपनी श्रद्धांजित उस निय व्यक्ति के लिये समर्थित करता हूँ, जो कि मोग सामगी है हो किन्तु जिसके पास मोग सामगी है हो की, फिर मों जो कहता है कि-'में भोगां को छोड़ता हूँ।' ऐसा व्यक्ति तो उस व्यक्ति के समान है, जिसका सिर गड़ा है और भाग्य ने जिसको पहिले से ही 'केश विहोन' कर दिया है अर्थात जिसका क्षित महिले हा कर दिया गया है।। १॥

'कीष्ठ' के बैकल्पिक रूप किञ्जव' का उदोहरण यों है —याँल करोति सुननस्य नबित किजने केष्वसुनमें सर्जन पुरुष के लिये बोलदान करता हूँ। (सूत्र-सख्या ४३१८ में यह गाया पूरी दी गई है) ॥ ११८६॥

भुवः पर्याप्ती हुच्चः ॥ ४–३६० ॥

भवभंत्रो श्वाो घातो पर्याप्तावर्थे वर्तमानस्य हुच्च इत्यादेगो भवति ॥ भारतुं गत्तालु जं यलहं सोच्छेपड, न हु लाहु ॥ सहि ! जह केवें इ तुढि-वसेण, श्रहरि पहुच्चह, नाहु ॥ १ ॥ अर्थ — घपभश मापां में सस्कृत की घों हु मिन के स्थान पर समर्थ हो सक्ते ह करें आर्थात पहुँच सकते के अर्थ में 'हुच्व' रूप की आदेश प्राप्ति होती है । जैसे - प्रम्वति=शृश्याक समर्थ होता है — वह पहुँच सकता है। (२) - प्रम्वनिच-पहुच्चिह = व समर्थ होते हैं — वे पहुच तक्ष्ती गाथा का अञ्चताद यों है —

संस्कृतः—श्रवितुङ्गर्त्वं यत्स्तनयो सच्छेदंक न खेलु लामः । सखि ! यदि कथमपि तृटि वशेन श्रधरे प्रमवति नाय ॥ १॥

हिन्दी — हे सिल । दोनों स्तनों की खित ऊँचाई हानि रूप हा है न कि लाग रूप है। की मेरे प्रियतम अघरों तक (होठों का अमृत-पान करने के लिये) कठिनाई के साथ और दरी रु साथ पहुँच सकने में समर्थ होते हैं॥ ४-३६०॥

वृंगी ब्रुवी वां॥ ४-३६१॥

अपभ्रं शे बूगी घातो बूंब इत्यादेशों वा मवति ॥ बूबह सुहासिउ कि पि ॥ परे । इचल बोप्पिस मलसि , हिड पुस्तुः दूमासस्य, बोप्पि ॥ तोहल जासल एहो हरि जह महु अग्गह बोप्पि ॥ १ ॥

त् , । अर्थ —सम्ब्रुत मापा में । उपलब्ध , 'बोलना' खर्यक घातु 'बू' के स्थान पर खपन्नश भाग विकल्प से,'मूब्', ऐसे घातु रूप,की ब्यादेश प्राप्ति होती है वैकल्पिक पत्त होने से पद्मान्तर में 'बू' हा '

मी प्राप्ति होगी। (१)जैसे — मूर्व=श्रवहः श्रीर मूर्=वह बोलता। है। '(२) मूर्व सुमापितं विवितः स् सुद्दासित किंपि = कुद्र मी सुन्दर स्रयया समझा भाषण बोली। गायाका स्रतुवाद इस प्रकार स रे

संस्कृतः — इयत् उक्त्वा शक्किः स्थितः, पुनद्वं शासन उक्त्रा ॥ तदा श्रद्ध जानामि, एप हरिः यदि मुमाग्रत् उक्त्रा ॥ १ ॥

िन्दी — दुर्वोवन कहता है कि — शकुनि इतना कहकर रूक सवा है, ठहर गया है। प्र दुष्पासन (भी) बोल करके (रूक गया है)। तब मैंने समका अथवा समकता हूँ कि वह आहें है, जोकि मेरे सामने बोल करके खेद हैं। वॉव्स गाया में ब्रिंग घांतु के अपन्न स में तीन विनि क्रियापद-रूप वतलाये गये हैं॥ ४-३६१॥

🚌 📁 ्वजे बुजिः ॥ ४–३६२ ॥

श्रपश्रंशे वर्तते पीतो बुज इत्यादेशी भवति ॥ युजर । युजेप्प । युजेप्प ॥

दृशेः प्रस्सः ॥ ४-३६३ ॥

श्रापत्रशे दशे धीतोः प्रस्त इत्यादेशो भगति ॥ प्रस्मदि ॥

कर्य — संस्कृत भाषा में 'वेखना' क्रयं में व्यत्नव्य घातु 'दश्=परय्' के स्थान पर क्रपप्रश मापा 1 'प्रस्' ऐसे घातु रूप की नित्यमेव खादेश प्राप्ति होती हैं । जैसे —पश्यति = प्रसिद्दि = यह देखता हैं । 1 ११ २६१ ॥

यहे भृगहः ॥ ४-३६४ ॥

अपभ्रमे ग्रहे र्घातो मृ जह इत्यादेशो भनात ॥ पढ मृखहेपिख बतु ॥

वर्ष —सस्कृत मापा में 'म्रहण करना-लेना' खर्य में उपलब्द बातु 'मह्' के स्थान पर श्रवध रा जा में 'गृष्ट' ऐसे धातु-रूप की खादेश भामि होतो हैं। जैसे--(१) मृद्धाति = गृष्ट्द-वह महण बरना
-वह सेता है। (२) वठ गृहीत्वा झतम्=पढ गृण्हेरिपणु झतु = झत-नियम को महण करके-ध्यांकार
वह-पनी-अध्ययन करी ॥ ४ ३६४ ॥

तत्त्यादीनां छोल्लादयः ॥ ४-३६५ ॥

अर्थ — चप्पप्रशासायां में सस्टत की घोतुं मुसद' के स्थान पर समर्थ हो सक्त क षर्थांत 'पहुँच सकने' के बर्थ में 'हुच्च' रूप की खादेश प्राप्ति होती है। जैसे - प्रमवति=पृहुच समर्थ होता है—वह पहुँच सकता है। (२) प्रमयन्ति=पहुन्वहिँ=व समर्थ होते हें—व पहुव मा गाथा का अनुवाद यों है -

सस्कृतः-अतितुङ्गस्व यत्स्तनयो सच्छेदक न पूर्व लॉमः । सिंदा ! यदि कथमपि ब्रुटि वशेन अधरे प्रमाति नाथ ॥ १॥

हिन्दी — हे सिख । दोनों स्तनों की खित ऊँचाई हानि, रूप हा है न कि लाग रूप है। मेरे प्रियतम अधरों तक (होठों का ऋमृत-पान करने के किये) कठिनाई के साथ और दरी देस पहुँच सकते में समर्थ होते हैं॥ ४-३६०॥

ब्रंगी ब्रंबी वां॥ ४-३६१॥

अपअंशे मूगो घातो मूँव इत्यादेशों वा भवति ॥ मूबह सुहासिउ: कि पि ॥ परे। ः, इचर्च नोप्पिणु मत्रणि, द्वित्र,पुर्णुः दूनासणुः नोप्ति ॥ 🕠

ः तोहर्जं नाग्य एही हरि नइ महु अग्गइ बोप्पि ॥ १॥

ु ा शर्य - साइत मामा में। उपलब्ध 'बोलना' अर्थक घातु 'त्रू' के स्थान पर अध्मश मा विकरण से मूब' ऐसे पाषु रूप की आदेश प्राप्ति होती है वैकल्पिक पत्त होने से प्रज्ञान्तर में मूं हो मी,प्राप्ति होगी। (१)जैसे — मूर्ते=पुबह छीर मूर्=वह बोलता है। (२) मूर्व सुमापित किंपिन सुद्दासित किंपि = कुद्ध भी सुन्देर अथवा अन्छा भाषण बोलो । गाथाका अनुवाद इस प्रकार सर्द

संस्कृत:-इयत् उक्त्वा शक्कृतिः स्थितः, पुनदू शासन उक्ता ॥ ्रे वदा श्रह जानामि, एप हरिः यदि भमाग्रत उक्त्या ॥ १ ॥

हिन्दी —दुर्योवन कहता है कि -शकुनि इतना कहकर रूक गया है, ठहर, गया है। दुष्यासन (भी) बोल करके (रूक गया है)। तब मैंने सममा अथवा सममता हूँ कि यह श्राह है, जोकि मेरे सामने बोल करके खंडे हैं। यों इस गाया में हुं भीतुं के अपन्न श में तीन कि क्रियापद-रूप ववलाये गये हैं ॥ ४ ३६१ ॥

👫 🌣 मने र्जुञ: गा ४-३६२ ॥ 🛷

अपभंगे मर्जर्वे धीर्ती दें व इत्यादेशी मर्नर्ति ॥ बुत्रेस् । बुत्रेस्प । बुत्रेस्पि ॥

कर्य — 'वृमना, जाना, गमन करना' अर्थक सम्झत-घातु 'क्रज्' क स्यान पर अपध्र रा मापा मे दुन'ऐसे घातु रूप की आदेश शिक्षि होती है। जैसे — प्रज्ञति = जुलड्= यह जाता है-यह पूमता है क्षता वह गमन करता है। प्रजित्ला=बुन्ने पिप और बुन्ने पिपणु = जाकर के, घूम करके आयशा गमन करु॥ ४३६२॥

दृशेः प्रस्सः ॥ ४-३६३ ॥

अपभ्रशे दशे घीतोः प्रस्त इत्यादेशो भनति ॥ प्रस्मदि ॥

गर्थं —सस्कृत भाषा में 'देखना' अर्थ में उपलब्ध धातु 'दर्गू =पस्य्' के स्थान पर अपभ्रश माषा में 'प्राप्त' ऐसे घातु रूप की नित्यमेव खादेश प्राप्ति होती हैं। जैसे —पश्यित =प्रस्तिद्दि=बद्द दखता है। ॥४३६३॥

यहे र्मृगहः ॥ ४-३६४ ॥

अपभ्रशे ग्रहे धीतो गुंण्ह इत्यादेशो भनात ॥ पढ गुराहेपिणु नतु ॥

अर्थ —सम्कृत मापा में 'प्रहण करना–लेना' द्यर्थ में उपलब्य घातु 'प्रह्' के स्थान पर श्रपश्र रा ^{मापा} में 'गृष्ट' ऐसे घातु रूप की व्यादेश प्राप्ति होती हैं। जैसेः—(१) गृहाति = गृण्हह्=यह प्रहण करना रैन्द लेता है। (२) पठ गृहोत्या ध्रतम्=पढ गृण्हेरिपणु ब्रतु = झत-नियम को प्रहण करक-व्यागणार कार्क-पदो-ब्राप्ययन करो॥ ४-१६४॥

तद्यादीनां छोल्लादयः ॥ ४-३६५ ॥

अपभंशे तिच-प्रभृतीनां घात्नां छोल्ल इत्यादय आदेशा भानित ॥
जियँ तिक्खा लेवि कर जइ सिस छोछिज्जन्तु ॥
को जइ गोरिहे मुह-कमिल सिर सिम कािन लहन्तु ॥ १ ॥
आदि प्रहणाद देशीपु ये क्रियावचना उपलभ्यन्ते ते उदाहार्याः ॥
चुड्डाउ चुण्णी होंइ सह मुद्धि ! कगोलि निहिच्छ ॥
सासानल-जाल-मलिक्षिअउ, वाह-सिलल-सिसच्छ ॥ २ ॥
अन्मड विच्छ ये पयई पेम्मु निश्चचइ जायँ ॥
सन्नासण-रिज-संमग्रहो, कर परिश्चचा तार्गे॥ ३ ॥
हिम्मइ सुदुक्षइ गोरिडी गर्याण पुरुक्ष मेहु॥

अर्थ — ष्यपभरा भाषां में सस्कृत की घोतु हैं मन' के स्थान पर 'समर्थ हो सके क घर्ष । अर्थात 'पहुँच सकते' के घर्ष में 'हुक्च' रूप की खादेश मानि होती हैं। जैसे म्प्रमविद्य पहुँच समर्थ होता है—वह पहुँच सकता है। (॰) मुभवन्ति = पहुच्चिह = व समर्थ होते हैं—वे पहुच पहुई गाथा का खनुवाद यों हैं—

संस्कृतः—श्रवितुङ्गस्व यत्स्वनयो सच्छेदकं न खेलु लामः । सखि ! यदि कथमपि द्वाटि वशेन श्रवरे प्रमत्रति नाय ॥ १॥

हिन्दी'—हे सिख ! दोनों स्तनों की व्यति ऊँचाई हानि रूप हा है न कि लाग रूप है। को मेरे भियतम अपरों तक (होठों का अमृत-पान करने के लिये) कठिमाई के साथ बीर देश के माव पहुँच सकने में समर्थ होते हैं॥ ४-३६०॥

ब्रो ब्र्वो वा ४-३६१ म

अपभंशे बूगो धावो ब्र्व इत्यादेशों वा मवति ॥ ब्वह सहासिउ कि पि ॥ परे। , इचर ब्रोपिए मउणि, हिड्न प्रुख, दूमासख् ब्रोपि ॥

तीहर्ज जागाज पही हरि जह महु अग्गहः श्रीष्म ॥ १ ॥

ाः । अर्थे — सम्हत माथा में 'हपलह्य 'बोलना' अर्थेक घातु 'बू' के स्थान तर अपन्नत पाय विकल्पं से 'मूब् 'ऐसे घातु रूप, की चादेश प्राप्ति होती है वैकल्पिक पत्त होने से पहास्तर में जूं हा भी प्राप्ति होगी। (१) जैसे — मूते - जूब छीर बूक्ट बोलवा है। (२) प्रून सुमापित किंपिन के सुहासिट किंपि = कुछ भी सुन्दर अर्थवा अच्छा भाषण बोलो। गायाका अनुवाद इस प्रकार सर्द

संस्कृतः—इयत् जन्त्वा शक्किनः स्थितः, पुनर्द्व शासन उन्त्वा ॥ , , , तदा श्रद्ध जानामि, एप हरिः यदि समाप्रत उन्त्वा ॥ १॥ १

हिन्दी — दुर्योवन कहता है कि — राकुनि इतना कहकर रुक गया है, टहर गणा है। ! दुष्शासन (भी) बोल करके (रुक गया है)। तब मैंने समका व्यथा सममता हूँ कि यह प्रा है, जोकि मेरे मामने बोल करके खिडे हैं। वो इस गाया में भू बातु के व्यपन्न स में नीन बिं क्रियापद-रूप बतलाये गये हैं। ॥ ४-३६१॥

ग्रांत अने बुन्धिंगा १-३६२ ॥ ं≇

थपभ्रेरी बनते धीतो दें व इत्यादेशी भनति ॥ धूमर । युत्रीप । धूमिश्रा ॥

अर्थ--'धूमना, जाना, गमन करना' अर्थक सम्कृत-धातु 'क्रन्' क स्थान पर खपश्र श मापा में वन' ऐसे बातु हप की खादेश प्राप्ति होती है। जैसे -- ब्रजति = बुनह=वह जाता है-बह पूनता है म्बरावह गमन करता है। ब्रजित्वा≃बुञेष्पि श्रीर बुञेष्पिसु = जाकर के, घूम करके श्रयसा गमन इरहे ॥ ४ ३६२ ॥

दृशेः प्रस्सः ॥ ४-३६३ ॥

अपभ्रशे दशे घीतोः प्रस्स इत्यादेशो भनति ॥ प्रस्मिद् ॥

अर्थ — संस्कृत-भाषा में 'देखना' अर्थ में उपलब्ध घातु 'दृश् = पृश्य' के स्थान पर अपभ्रश मापा में 'प्राम' ऐसे बात रूप की नित्यमेव आदेश शामि होती है। जैसे -परयति =प्रसिद = वह देखता है। 11 8388 11

यहे ग्रीगहः ॥ ४-३६४ ॥

अपभ्रशे ग्रहे धीती गु ण्ह इत्यादेशी भनात ॥ पढ गुगहेप्पिण बतु ॥

अर्थ -सस्कृत मापा में 'प्रहण करना-लेना' अर्थ में उपलब्द चातु 'प्रह्' के स्थान पर अपन्न रा मापा में 'गुण्ह' ऐसे घातु रूप की खादेश प्राप्ति होती है। जैसे --(१) गृहाति = गुण्हर=वह महण वरना ^{(-न्}र क्षेता है। (२) पठ गृहोत्वा व्रतम्=पढ गृण्हेप्पिणु व्रतु=व्रत-नियम को महण करक-र्घ्नाकार हरके-पद्गो-अध्ययन करो ॥ ४ ३६४ ॥

तत्यादीनां छोल्लाद्यः ॥ ४-३६५ ॥

भपभंशे तन्ति-प्रभृतीनां धात्ना छोल्ल इत्यादय श्रादेशा मपन्ति ॥ जिवँ तिवँ तिक्या लेवि कर जह सिस छोद्रिज्जन्तु ॥ तो जइ गोरिहे मुह-कमिल सरि सिम कावि लहन्तु ॥ १॥ भादि ग्रहणाद् देशीपु ये क्रियायचना उपलम्यन्ते ते उदाहार्याः ॥ चूडुद्भाउ चुण्यी होंइ सइ मुद्धि ! क्योलि निहिच्छ ॥ सासानल–जाल–फलिथ्यउ, याह–सलिल–समित्तउ ॥ २ ॥ श्रन्मड घचिउ ये पपई पेम्स निम्नस् जार्वे।। सञ्चासण-रिड-संगवहो, कर परित्रणा गार्ये॥३॥ हिम्रह सुदुवह गोरढी गपयि पुरुपह

वासा-रत्ति-पवासुग्रह विसमा सक्छु एष्ट्र॥ ४॥ श्राम्म ! पश्चोहर वज्जमा निच्छु जे संग्रह थन्ति॥ महु बन्तहो समरङ्गण्य ग्य-घड भिज्जिज जन्ति॥ ॥ प्रमे जाएं कवणु ग्रुण, श्रामुण्य कवणु ग्रुपण ॥ जा वप्पीकी भुंहडी चम्पिज्ञह श्रवरेण ॥ ६॥ तं तेत्तिज जलु सायरहो सो तेवडु वित्यार॥ तिसहे निवारणु पल्वि नवि पर भुट्टश्रह श्रसारु ॥ ॥ तिसहे निवारणु पल्वि नवि पर भुट्टश्रह श्रसारु ॥ ॥

अर्थ — संस्कृत भाषा में 'छोलना-छिलके छतारना' खर्यक उपलब्ध घातु 'तक्ष' हे त्यान। खपन्न रा भाषा में 'छोल्ला' ऐसे घातु रूप की खादेश प्राप्ति होती है। यों खन्य खनेक घातु घनन्न शर्म में खादेश रूप से प्राप्त होती हुई देखी जाती हैं। उनकी खादेश प्राप्ति का विधान स्वयमेश समस्त्र स्व चाहिये। एति में खाई हुई गायार्थी का भाषान्तर क्रम से इस शकार है —

संस्कृतः—यथा तथा तीच्छान् करान् लात्वा यदि राशी श्रवविष्यत ॥
तदा जगति गौर्या मुख-कमलेन सदशतां कामपि श्रलप्स्यत ॥१॥

हिन्दी —(बिना विचार किये) जैसी तैसी तीइण कठोर किरणों को लेकर के घन्द्रमां (क्य मुक्तियों के मुख की शोभा को) झीलता रहेगा तो इस समार में (झमुक नायिका विशेष के) गीरी हम कमल की समानता को कही पर भी (किसी के साथ मा) नहीं प्राप्त कर सकेगा ॥१॥

सस्कृतः---क्रङ्कण चूर्णी-भवति स्वय सुग्धे ! क्रेपोले निहितम् ॥ श्वासानल ज्वाला-सतप्त पाष्य-जल-सित्तकम् ॥२॥

हिन्दी —हे (मुन्दर गालों वाली) मुख नायिका । स्वास निरमस लेने से उत्पन्न गर्मी क्षण आतिन की ज्यालाओं से (फाल से) गरम हुआ और बाब्य क्षयीन भाग के (अथवा नेतों के ब्रांस रू अल स भीगा हुआ दम् गाल पर रक्षा हुआ (मुन्हारा यह) कंडर-यूड़ी चूर्ण पूर्ण हो जावगी—ह आवगी। गरम होकर मीगा हुआ होने से अपने आप ही वड़क कर कक्षण टुकड़े दुकड़े से आवगी इस गाया में 'वायय' धातु के क्यान पर 'मुन्तका' बातु का ब्रयोग किया गया है, जो कि देशन है।।।।।

हिन्दी - प्रेमी के दो कदमो का अनुकरण करने मात्र से ही परिपूर्ण प्रेम निष्पन्न हो जाता है-प्रयमावनाएँ नागृत हो जाती हैं और ऐसा होने पर जो जल उच्छा प्रतीत हो रहा या और जिस चन्द्रमा का किरणें बच्चता उत्पन्न कर रही थी, वे तत्वाल ही निवृत्त हो गई अर्थात प्रेमी के मिलते ही परम राजलता का त्रानुभव होने लग गया। इस गाथा में 'त्रानुगस्य' क्रियापद के स्थान पर देशज भाषा में प्रतस्य 'श्रद्मह वचित्र' कियापद का प्रयोग किया गया है ॥ ३॥

सस्कृतः-हृदये शन्यायते गौरी, गगने गर्जति मेघः॥ वर्ग-रात्रे प्रवासिकानां विषमं सकटमेतत् ॥ ४॥

हिन्दी -(प्रियतमा पर्ता को छोड़ करके विदेश की यात्रा करने वाले) प्रवासी यात्रियों को वर्षा-कालोन रात्रि के समय में इस भयकर सकट का अनुभव होता है, जबिक हदय में तो गौरी (का वियोग-दुख) कांटे के समान कसकता है-दुःख देता है स्त्रीर स्थाकाश में (उस दु ख को दुगुना करने बाना) मेघ अर्थात् बादल गर्जता है। इस गाथा में 'शल्यायते' सस्कृत क्रियापद के स्थान पर देशज ^{कियापर} 'खुडकद' का प्रयोग किया गया है श्रीर इसी प्रकार से 'गर्जित' सस्कृत धातु रूप के बदले में ^{रहान घा}तु-रूप 'घुडुकह' लिखा है, जोकि ध्यान देने के योग्य हैं ॥ ४ ॥

सस्कृतः-अम्य ! पयोधरी वज्रमयी नित्य यी सम्प्रखी विष्टतः ॥ मम कान्तस्य समराङ्गगके गज-घटाः मङ क्तं पातः ॥ ४ ॥

हिन्दी —हे माता । रण-स्तेत्र में हाथियों के समूह को विदारण करने के लिये जाते हुए-गमन हरते हुए मेरे प्रियतम के सम्मुख सदा ही जिन वकासम कठार दोनों स्तनों की (स्मृति) सम्मुख रहती है, (रम कारण से उसको कठोर वस्तु का भजन करने का सदा ही अभ्यास है और ऐसा होने से हाधियों ह समूह को विदारण करने में उन्हें कोई कठिनाई अनुभव नहीं होती **है)।। ४।।**

सैस्कृत:-पुत्रेण जातेन को गुण, अवगुण कः मृतेन॥ यत् पैतृकी (वप्पीकी) भूमि आक्रम्यते ऽपरेग ॥ ६ ॥

हिन्दी —यदि (पुत्र के रहते हुए भी) बाप दादाओं की कर्जित भूमि राष्ट्र द्वारा दवाली सांवी ्मिष्कृत कर लो जातो ई तो ऐसे पुत्र के उत्पन्न होने से व्यथवा जीवित रहने से क्या लाम हैं। सीर ^{रिसे निहर}में पुत्र के) मर जाने से भी कीन सी हानि है ? (निकम्मे पुत्र का सी मरना अथवा जीवित रिनादोनों हा एक समान ही है)। इस गाया में 'घणीको और यन्पिण्जह' ऐसे दो पर्ने की प्राप्ति रिएउ मापा से हुई है, जो कि प्यान में रखने योग्य है ॥६॥

संस्रुतः--तत् तावत् लल सागरस्य, सं तावन् विस्तारः ॥ त्यो निवारण पलम्पि नैव. पर शब्दायते व्यसार भाषा हिन्दी — समुद्र का जल खाति मात्रा वाला होता है और उमका विस्तार मी खायिक हाता है किन्तु थोड़ी देर के लिये भी थोड़ी सो प्यास भी मिटाने के लिये वह समर्थ भही होता है, फिर भा निष्का गर्जना करता रहता है, (खपनी महानता का खानुमव कराता रहता है)। इस गाया में 'पुटठुमइ' ऐव जो क्रियापद खाया है, वह देशन है। यों खपन्न रा भाषा में खनेकानेक देशन पूर्वे का प्रयोग हिया गर है, जिन्हें स्वयमेव समक्त लेता पाढ़िये॥ ४-३६४॥

श्रनादें स्वरादसंयुक्तानां क-ख-त-थ-प-फां, ग-घ-द-ध-व-भाः ॥ ४-३६६ ॥

श्रपश्चंशेऽपदादौं घर्व मानानां स्त्ररात् परेपामसंयुक्ताना क स्र त थ प फां स्थाने वर् सख्य ग घ द व भाः शायो भवन्ति ॥ कस्य मः ।

> ज दिट्टउं सोम-ग्गहणु श्रसहर्हि हसिउ निमक् ॥ पिश्र-माणुस-विच्छोह-गरु गिलिगिलि राहु मयकु ॥१॥

खस्य घः।

श्रम्मीए सत्यावत्थेहिं सुधि चिन्तिज्जह माणु ॥ पिए दिहे हल्लोहलेख की चैश्रह श्रप्पाणु ॥२॥ तथपकानौ दधवमा ।

> संबंधु करेप्पिणु कथिदू मई तसु पर समलउं जम्स ॥ जासु न चाउ न चारहिंद, न य पम्हट्टउ धम्स ॥ ३ ॥

श्रनादाविति किम् । सबधु करेप्पिणु । श्रत्रः कस्य गत्व न मत्रति ।। स्वरादिति हिम् गिलिगिलि राहु मयङ्कु ॥ श्रसयुक्तानामिति किम् । एकहिं श्रविखरि सावणु ॥ मार्ग धिकारात् कचित्र मवति ।

> बह केवँह पायीस पिठ श्रकिशा छट्ट करीस ॥ पाणीठ नवह सरावि जियँ सन्यङ्गे पड सीस ॥ ४॥ ,तश्र, कियशक पड़िद्धश्रठ कश्रण-कन्ति पयास ॥ ,गौरी-सयस-विणिज्यस्ट न सेवह वण-यास ॥ ५॥

अर्थ — सखत भाषा में क. ख. त. थ, प श्रीर फंडतने श्रचरों में मे कोई मी श्रचर रहि क दे प्रारम में नहीं रहा हुआ हा और संयुक्त भी अर्थात किमी अन्य अत्रर के साथ में भी मिला हुआ नहीं हो एवं किसी भी स्वर के पश्चात रहा हुआ हो ता अपभ्रश म 'क' क स्थान पर 'ग'. 'ख' के स्थान वर व'. 'त' के स्थान पर 'व'. थ के स्थान पर 'घ'. 'प' क स्थान पर 'च' छीर 'फ' के स्थान पर 'म' र्ध प्राप्ति हो जाती है। ऐसी ऋादेश प्राप्ति नित्यमेव नहीं होती है परन्तु प्राय करके हो जाती है। वैस —'क' क स्थान पर 'ग' प्राप्ति का खदाहरण —शुद्धि कर = सद्धि गरो =पवित्रता को करने वाला। 'ब' स 'घ' -- सखेन = सघेँ = सख से । 'त' का द -- जीवित = जीवित = जीवन जिंदगी । 'य' का घ --व्यितप्=क घटु = कहा हुआ। 'प' का 'ब' --गुरू-पदम् = गुरू वयु = गुरू के चरण को। 'फ' का 'म' -मक म्=समल् = सफल ॥ वृत्ति में ऋाई हुई गाथाओं का भाषान्तर कम से वों हें —

सस्कृतः-यद् दृष्टं सोम-ग्रहणमसती।भः हिमत निःशहूम् ॥ प्रिय-मनुष्य-विचोभकर, गिल गिल, राही ! मृगाद्वम् ॥ १ ॥

हिन्दी - 'राह' द्वारा चन्द्रमा को प्रहेण किया जाता हुआ जब असती अर्थात काम भावनाओं से पुक्त श्त्रियों द्वारा देखा गया, तब उन्होंने निष्ठर हो कर हसते हुए कहा कि— है राहु ' थिय जनों म विज्ञोम-घबराहर्ट पैदा करने वाले इस चन्द्रमा को तू निगल जा-निगल जा। इस गाथा में 'विज्ञोम-^{इर' क} स्थान पर 'विच्छोह−गरू' पद का रूपान्तर करते हुए 'क' के स्थान पर 'ग' की प्राप्ति प्रदर्शित की ग्रहे॥१॥

संस्कृतः-श्रम्ब ! स्त्रस्थावस्थे सुरोन चिन्त्यते मानः ॥ त्रिये दृष्टे व्याकलत्वेन (हल्लोहल) यश्चे तयित श्रात्मानम् ॥ २ ॥

हिन्दी —हे माता । शान्त श्रवस्था में रहे हुए व्यक्तियों द्वारा हा सुख पूवक श्रात्म म मान का विचार किया जाता है। किन्तु जब प्रियतम दिखाई पड़ता है श्रथम। उसका मिलन होता है तथ भावनाओं क तमड़ पढ़ने क कारण से उत्पन्न हुइ व्याकुलता की स्थित में वीन अपने (सन्मान) का ^{भाषता} ई-विचारता है ? ऐसी स्थिति में तो 'मलन' की चतावलता~हल्लोध्लपना रहता है। इस गाथा में 'हुसेन' के स्थान पर 'सुर्घिका रूपान्तर करत हुए 'स' श्रक्तर क स्थान पर 'घ' श्रक्तर को प्राप्ति का वाव कराया गया है।। २।।

^{संस्कृतः}—शपथ कृत्ना कथित मया, तस्य पर सफल जन्म॥ यस्य न त्याग, नच व्याग्भटी, नच प्रमृष्ट धर्म ॥ ३ ॥

हिन्दी — जिसने न ता खाग वृत्ति छोडो है, न सैनिक वृत्ति का हो पश्चिमा किया है सीर ा ितुद पर्ने हो ही होड़ा है, उमी का जन्म बिशिष्ट रूप से सफत है, ऐना बात मुक्तम शरय पूर्वक हरा

y = -4फ-ल-त-थ-प-फ' बचर पद के खादि में नहीं होने चाहिये, ऐता विधान क्यों हिश गया है ?

उत्तर —यदि चक्त खत्तरों में से कोई भी अत्तर पद के आदि में -रहा हुआ होगा ता उनक्ष स्थान पर धादेश रूप से प्राप्तस्य अत्तर 'ग घन्द घ व भ' को आदेश प्राप्ति नहीं हागी। जैसे —ह्या = करिपसु=करके, यहाँ पर 'क' वर्स पद के आदि म ड, अठ इसके स्थान पर 'ग अत्तर की आश्तर गिन्न नहीं होगी। या आदि में स्थित अन्य शेप चक्त या की स्थिति को भी समफ लगा चाहिये।

प्रश्न —यदि 'क-प्र-त-य-प-फ' असर स्वर के प्रधान रहे हुए होंगे, तमा इनके स्थान सर हम संगधदध या म' असरों की कम से प्राप्ति होगी, ऐसा भी क्यों कहा गया है ?

उत्तर —यदि य स्वर के पश्चात नहीं रहे हुए होंगे तो इनके स्थान पर आहेरा हम से प्राप्त्र श्वच से प्राप्त्र श्वचारों की आदेश प्राप्ति होगी, ऐसी अपभ्र श-मापा में परपरा है, इस लिय स्वर से परे हान पर ही इनके स्थान पर उत्तर अच्छों को आदेश प्राप्ति होगी, ऐसा समकता चाहिये। जैमे —मृगाइप= मयङ्कु = चन्द्रमा को। इस उदाहरण में हलन्व व्यञ्जन 'ह' के पश्चात 'क' वर्ण आया हुआ है जोडि 'क्वर के पर वर्ती नहीं होकर 'व्यञ्जन' के पर वर्ती है इमलिये 'क' के स्थान पर 'ग' वर्ष की आदश प्राप्ति नहीं हुई है। यों अन्य उक्त शेष अच्चरों के सम्यन्य में मा 'स्वर परवर्तिश्व' के सिद्धान्त को ध्यान में रखना चाहिये।

प्रश्न — अस्युक्त अर्थात इसन्त रूप से नहीं होने पर ही 'क-स-त थ । फ' के स्थान पर 'गपर घ व भ' स्थानों की क्रम से आदेश श्राप्ति होती है, जेना क्यों कहा गया है ?

उत्तर —यदि 'क ख त य प फ' व्यव्जन पूर्ण नहीं है श्रयीत म्यर से र हत होकर अन्य दिमा दूसरे व्यव्जन के माय में ये श्वदार रहे हुए होंगे तो इनक स्थान पर 'ग पन्य प प म' व्यव्जनों की कम स्थान पर 'शापन्य शादित को होगी, ऐसी श्वपन्न रा भाषा में परपरा है, इसित्तय 'श्वसपुक श्विति' हो उत्तित श्रीर मद्भाव किया गया है। जैसे —एकिसन श्वदित्त आवता = एकि श्विति ही मायतु = एक श्वांत में श्रावता (श्वर्यात श्वांतु श्वों को मज़ी । है। इस उदाहरण में 'क' के स्थान पर 'ग' व" की श्वादरा प्राप्ति नहीं हुई है। यो शेष श्वन्य उक्त व्यव्यवनों क सचय में भा स्वयमेव कल्पना कर सना चाहिये। पूरी गाया सूत्र-सत्त्वा ४-२४७ में प्राप्त की गई है।

वृत्ति में प्रन्यकार ने 'प्राय' काय्यय का प्रयोग करक यह माधना प्रदर्शित की है कि इन प्रक्र क्यञ्जनों के स्थान पर प्राप्तब्य व्यद्यनों को क्यादेश प्राप्ति क्यी कमा नहीं मो होना है। तैमे कि ─ त-मिक्या=नहीं किया हुआ । नवके=नवह≅नये में । इन उदाहरणों म यह बवलाया गया है कि 'क' 'सर क वधान रहा हुआ है, खनादि में स्थित है और ऋसयुक्त भी है, फिर भी इसके स्थान पर हा रूप से प्राप्त को खादेश प्राप्ति नहीं हुई है। यों खन्य उक्त शेप व्यक्तों के मयब में 'भाग' कथ्य का ध्यान रखते हुए जान लेना चाहिये कि सभी स्थानों पर आदेश प्राप्ति था होना भी नहीं है। वित्त में चाल्लिखत चीथो एव पाँचवी गाथा का मापान्तर कम से इस प्रकार है —

संस्कृतः — यदि कथचित् प्राप्स्यामि प्रियं अकृतं कीतुक करिष्यामि ॥ पानीय नवके शराये यथा मर्वाङ्कोण प्रवेच्यामि ॥ ४॥

हिन्ती —यदि किसी प्रकार से सयोग नशात् मेरा श्रवने प्रियतम से भट हो जाजगी हो में कुछ श्रारवर्ष जनक स्थिति उत्पन्न कर दूँगी, जैसोकि पहिले कभी भी नहीं हुई होगी। में श्रवन सपूर्ण हिं श्रवने प्रियतम के शरार के साथ में इस प्रकार से श्यात्म सात् (एकाकार) कर दूँगा, जिस हिं तय बने हुए सिट्टी के शराबले में पानी श्रवने श्रापको श्यात्म सात् कर देता है। ॥ ४॥

संस्कृत:--परय ! कर्णिकार प्रफुल्लितक काश्चन कांति प्रकाश ॥ गौरी वदन-विनिजितकः नत्त सेवते वनवासम् ॥ ५ ॥

हिनी — इस किंकिर नामक द्वन्न को देवो । जो कि ताने कृतों से लदा हुआ होकर परम ग को घारण कर रहा है, सोने के समान सुन्दर काित से देदीच्यमान हो रहा है। गौरा के (नािय का कि हो आगापूण सीन्य सुख कमल की शोमा से भी श्विषक शोमायमान हो रहा है, फिर भी खारवर्ष के दह वन-वाम ही सेवन कर रहा है। इस गाया ही कि तन कर रहा है। इस गाया हीं वित्त कर रहा है। इस गाया हीं कि प्रकाश । पदों में 'क' वर्ष के स्थान पर 'ग' वर्ष की खादेश शामि नहीं हुई है। 'नेन्तक और विनिर्जितक 'पदां में भी कम से प्राप्त 'क' वर्ण तथा 'त' वर्ण के स्थान पर भी कम से शाम 'क' वर्ण की और 'द' वर्ण की खादेश शामि नहीं हुई है। यों खनेक स्थानों पर 'प्राय' खब्यय से 'त्र 'वर्ण की और 'द' वर्ण की खादेश शामि नहीं हुई है। यों खनेक स्थानों पर 'प्राय' खब्यय से 'त्र 'वर्ण की करना चाहिये॥ ४॥ ४-३६६॥

मोनुनासिको वो वा ॥ ४-३६७॥

श्रप नशेऽनादा वर्तमानस्यासयुक्तस्य मकारस्य श्रद्धनासिको वकारो वा मवित ॥ इक्ष्मलु । भर्वेरु ममरु ॥ लाबियाकस्यापि । निर्वे । तिर्वे । तेर्वे । नेर्वे ॥ श्रनादावित्पेत । पु ॥ भ्रमपुक्तस्येत्पेव । तक्षु पर समलु जम्मु ॥ -

मर्थ —सस्टत भाषा के पर में रहे हुए सकार के स्थान पर अपन्न श माषा में रूपान्तर करने पर जि^{क्}र कहित 'वकार' की अर्थात 'वें' की कादेश प्राप्ति विकल्प से उस दशा में दो जाती है जब कि वह 'मकार' वर के खादि में भी नहीं रहा हुखा हो तथा सबुक रूप से मा नही रहा हुखा हा ! वेसे — कमलम्-कर्वेलु ध्यया कमलु-कमल फूल !! अमरः—मर्वेठ ध्यया ममह-मॅंग्रा ! इन वराहाणों में 'महार' पर के खादि में भी नहीं है तथा सबुक रूप से भी नहीं रहा हुखा है ! ध्याकरण सम्बन्धी निवमों से क्ष्म्र हुए 'मकार' के स्थान पर भी ध्युनासिक सहित 'वें' की उत्पत्ति भी विकल्प से देखी जाती है ! वेस — यथा=जिम ध्यया जिवें-जिस प्रकार, जिस तरह से । तथा=तिम ध्यया तिवें - चम प्रहार स ध्वया चस तरह से । तथा = तेम ध्यया चेवें = चस प्रकार खयवा जिस तरह से । तथा = तेम ध्यया चेवें = चस प्रकार ध्यया चस तरह से ।

प्रश्न — 'आनोदि' में स्थित 'मकार' के स्थान 'पर ही वें' का विकल्प मे आदेश श्री हात है, ऐसा क्यों कहा गया है ?

उत्तर —यदि 'मकार' पर के आदि में रहा हुआ हो तो उसके स्थान पर 'बँकार' की आहे। प्राप्ति नहीं होगी। जैसे —मदन-भयगुज्यदन कामदेख। यहाँ पर 'मकार' के स्थान पर 'बँकार' नर्ग होगा। क्योंकि यह मकार आदि में स्थित हैं।

प्रश्न — 'श्रसयुक्त' रूप से रहे हुए 'मकार' के स्थान पर ही 'वॅकार' होगा, ऐसा भी क्यों का गया है ?

उत्तर —'संयुक्त' रूप से रहे हुए 'मकार' के स्थान पर 'बँकार' की ध्यादरा प्राप्ति नहीं होती है, ऐसी खपन्न रा मापा में परंपरा है, इसलिये 'सबुक्त' मकार के लिये 'बँकार' की प्राप्ति का निपेव किया गया है। जैसे —जन्म=जन्मु = जन्म होना-उत्पत्ति होना। यहाँ पर 'मकार' सबुक्त रूप से रहा हुया है इसलिये 'बँकार' की यहाँ पर खादेश प्राप्ति नहीं हो मकतो है। तस्य पर सफल जन्म = तमु पर समक्ष जन्मु = चसका जन्म यहा ही सफल है। पूरी गाया सूत्र-सख्या ४-३६६ में ही गई है॥ ४३६७॥

वाधो रो लुक्॥ ४-३६८॥

श्रवश्रंगे सर्वोगादघो वर्तमानो रेफो लुग् वा मनित ॥ जह केर्नेह पाबीस ^{वित्र} (देस्रो-४-३६६) पर्व । जह मग्ना पारकडा तो सहि ! मञ्सु विषेख ॥

अर्थ — सन्छत मापा के किसा भी पद में यदि रेफ रूप 'रकार' संयुक्त रूप से धीर वर्ष म वर्ष यर्जी रूप से खर्थीत खपी रूप से रहा हुआ हो तो उस रेफ् रूप 'रकार' का खपथंग-मापा में विश्वा से लोप हो जाता है। जैसे —यदि ध्यंचित प्राप्त्यामि प्रियं = जह वेवें इ पात्रीमु पिउ = यदि किसी भा तर्र से प्रियतम पित को प्राप्त कर लूँगी। इस उदाहरण में 'प्रिय' क स्थान पर 'पिउ' पद का लिल कर्ष 'प्रिय' में स्थित रेफ रूप 'रकार' का लाप अर्शित किया गया है। पद्मान्तर में जहाँ रेफ रूप 'रकार' को लोप नहीं होगा, उसका उदाहरण इन प्रकार मे दें —यदि मन्ना परकीया उत् मध्य ! मन प्रियं = इंग

मगा पारकडा तो महि । मञ्कू प्रियेण=हे मिल । यदि शतु पच के लड़ीये (रण चेत्र को छोडकर) माग परे हुए हैं तो मेरे पति (की जीरता के कारण) मे (ही) ऐमा हुआ है । इस दृष्टान्त में 'प्रयेण' है स्यान पर 'प्रियेशा' पर का ही उन्तेख कर ह यह मशस्त्राया है कि रंफ रूप 'रकार' का लोप कहीं पर क्षता है और कहाँ पर नहीं भी हाता है। यों यह स्थित उभय पत्तीय होकर चैकल्पिक है। ४ ३६८।

अमृतोपि क्वचित् ॥ ४-३६६ ॥

व्यवभ्रशे कचिदविद्यमानो पि रेफो भन्ति॥ बासु महारिसि एँउ मणइ जड़ सुड-मत्थु पमाणु ॥ मायह चलण नवन्ताह दिवि दिवि गद्गा-ष्हाण ॥ १ ॥

फचिदितिकिम्। वासेण निभारह-एम्भि बद्ध ॥

अर्थ - साफ़न मापा क किसी पर में यदि रेफ रूप 'रकार' नहीं है तो भा ध्वपन्न श मापा म नम पर का रूपान्तर करन पर उस पद में रेफ-रूप 'र कार' को आगम प्राप्ति कमा कमी हा जाया करती ई। र्तम — स्थास = ब्रास = स्थाम नामक ऋषि विशेष । पूरी गाया का रूपा तर यों है —

सस्कृत:--च्यास-महर्षि एतद भण्ति यदि श्रति-शाम्त्र प्रमाणम् ॥ मात्रणां चरणी नमता दिवसे दिवसे गङ्गा स्नानम् ॥ १ ॥

हिन्दी —महाभारत के निर्माता ब्यास नामक बड़े ऋषि फरमात हैं कि यदि वेद श्रीर शास्त्र ^{मुद्}चे हैं याने प्रमाण रूप है ता यह बात सब है। के जो विनीत जारगाणे प्रतिदिन प्राप्त काला में अपनी [तन।य मानाव्यों क चरणों में श्रद्धा पूर्वक नमस्कार प्रशास करते हैं ता उन विनोत मरापुरयों को विना गगा स्नान किये भी 'गद्गा में स्नान करने म उत्पन्न होने वाले पुष्प' पितने पुष्प की भारित धनी है।। १ ।

प्रमन —कचित अर्थात कभी कभी को रेफ मद 'रकार' की आगण शांकि हाला है, ऐसा क्यों ह्हा गया है ?

उत्तर —श्रनेक पर्रो में कमी तो रेफ रव 'रकार' की भागम-पाप्ति हो जाती है और कमी नहीं भी क्षतो है इमलिये स्वचित् अध्यय का उपयोग किया गया है। धैम — स्यामनापि भारत स्तरमे पदम=वासण विभारह-प्रक्रिम बद्ध=स्थान ऋषि क द्वारा भी भारत रूपी स्तरम में घांपा गया टै-करा गरा है। इस उराहरण में 'वासेएा' पर में रेफत्रूप 'रकार' का भागम न्हा हुआ है। (२) व्याकाणपु = प्रागरण कौर बागरख≔क्यावरण शास्त्र । इन तरह स रेप-रूप 'रहार' को त्रागम न्विति को जापना षाहिये ॥ ४ ३६६ ॥

श्रापद्विपत्-संपदां द इः ॥ ४-४०० ॥

अर्थ'-सस्ट्रत मापा में चवलस्य 'ब्रापद्, विवद् सवद्' शस्त्रों में उपश्यित धन्त्य स्यात 'दहार'

'प्राय ' अव्यय कें माथ उक्त विधान का उल्तेस होने से कमी कमी 'आपर विषद् सपद्' में गई

थपश्रंशे थ्रापद्-विपद्-(सपद्)-इत्येतेषां दकारस्य इकारी मनित ॥

थ्रणुढ करन्तहो पुरिसहो श्रावड शावड ॥

विवइ । संपइ ॥ प्रायोधिकारात् । गुणहिं न संपय किनि पर ॥

के स्थान पर खपश्च श भाषा में 'इकार' स्वर की खादेश प्राप्ति (कमो कमो) हो जाती है। चैसे-(१) आप!=आवड=खापति-तुल । (२) विवद = विवड = विवीत्त मक्ट। (३) सपद = सप! = मणी सुख ॥ गाथा के चरण का स्पान्तर यों है —

अनय कुर्वेत पुरुपस्य आपद् आयाति = धणड धरन्तको पुरिसही आयह आवह = धनीति क्ष रुरने वाले पुरुप के (लिये) आपनि आती है।

है। यों सर्वत्र समफ लेना चाहिये॥ ४४००॥

हुए अन्त्य व्यव्जन 'दकार' के स्थान पर 'इकार' रूप की आदेश प्राप्ति नहीं भी होती है। भैमे— आपद — आवय अथवा सामया। (२) विषद् = विवय अथवा विवया और (३) सफ्ट्र = मपया। मपया।। गाथा के चरेख का रूपान्तर चों हैं — गुजै न सक्त कीर्ति पर = गुणों हे न सप्य किति पर = गुणों से संपत्ति (घंन द्रव्य) नहीं (प्राप्त होती हैं-होता हैं) पर जु कीर्ति (हो प्राप्त होती हैं) हम इष्टान्त में 'मपद' के स्थान पर 'मपइ' पद का प्रयोग नहीं किया आकर 'मपय' पर का प्रयोग विया गरा

कथं-यथा-तथां थादेरेमेमेहेधा डितः ॥ ४-४०१ ॥

श्रवश्रंशे क्य यथा तथा इत्येतेषां यादेख्यवस्य प्रत्येकम् एम इम इह इष इत्येते

हितधरार श्रादेशा मक्ष्ति ॥

केम समप्तर दृष्ट दिख्य किघ रयणी छुडु होड ॥

नत-वहु-द्रवय-लालस्तर वहह मणोरह सोइ ॥ १ ॥
श्रो गोरी-मुह-निज्बब्बड वहलि लुक्क मिपळू ॥

श्रम्नु विज्ञो परिह्मिय-तणु सो मिर्ने मर्गेई निसक्टू ॥ २ ॥

विम्बाहित सणु रयण-वणु किह दिउ मिरि श्रायन्द ॥

निह्नम-रसु विए पिश्चवि जलु सेमहा दिण्णी सुह ॥ ३ ॥

भग सिंह ! निहुअउं तेवें मह जह पिउ दिहु सदोसु ॥ जेवें न जाग्यह मज्सु मणु पक्खाविड्य तासु ॥ ४ ॥ जिवें जिवें विद्वम लोग्रग्यह ॥ तिवें तिन वम्महु निश्चेय-सर ॥ मह जाग्यिउ प्रिय विरहिश्चहं कविधर होइ विश्वाली ॥ __ नवर मिश्रह् नितिह तवह जिह दिग्यस् स्वय-गालिना ॥ ॥

एव तिध-जिधाबुदाहार्यो ।।

सस्कृतः--क्षय समाप्यतां दृष्टं दिन, क्षयं रात्रिः शीग्रं (छुडु) मवति ॥ नव-वप्-दर्शन-सालसकः यहति मनोरयान् सोऽपि ॥ १ ॥

हिन्ही —िकस प्रकार से (कम शोमता पूर्वं) यह दुष्ट (खर्यात् कष्ट-श्ववं) दिन मनाप्त होगा खौर कम रात्रि जल्दी होगी, इम प्रकार की मनो मायनाओं को 'नई क्याही हुई पानी को देवने की बीम लालमायाला' वह (नायक विशेष) खरने मन में रखता है खयवा मनेरपों को पारण करना है। इस गाया में 'कम्' अन्यय के स्थान पर खादेश-त्राम 'केम और किय' खन्यय रूपों का प्रयोग किया गया है। १ सा

सस्कृतः-मो गाँरी-मुख-निर्जितकः, वार्दलं निर्लीनः मृगाद्भः॥ श्रन्योऽपि य परिभृततनुः, स क्यं भ्रमति निः ग्रह्मम्॥ २॥ हिन्दी — खोह 1/ सूचना अपूर्व अव्यय) गीरी (ताविका विरोध) क मुत्र कमत की शाम से हार लाया हुआ यह चन्द्रमा बादलों में छिप गया है। दूमरे से हारा हुआ अन्य कहें भी हो, वह निहरता पूर्वक (सन्यान पूर्वक) केंसे परिश्रमण कर मकता है? इस गावा में क्य क स्थान पर 'स्मिं' खादेश प्राप्त कर का प्रयोग कियाँ गया है। 'र ॥'

सस्कृतः-विम्याधरे तन्त्र्यां रदन-प्रशः कथं स्थितः श्री धानंद ॥ निरूपम रसं त्रियेण पीत्वेव शेपस्य दत्ताः प्रदाः ॥ ३॥

हिन्दी — हे श्री खानन्द ' मुन्दर शरीर वाली (ववले शरीर वाली) नाविका क लाल लाल होते पर दानों द्वारा व्यक्ति चिद्ध, किस प्रकार शोभा को धारण कर रहा है ? मानों विवतम पित दर से व्यद्विचाय व्यमूच रस का यान किया जाकर के (होठों में) व्यवशिष्ट रम क लिय मोल मोहर लगा दो गर्र है; (जिससे कि इस व्यमूच रस का व्यवस्थ कोई भोभान नहीं कर मके) इस गाया में कथे व्यवस्थ क स्थान, पर 'किह' व्यवस्थान कर का व्यवस्थान किया गया है ॥ ३॥ .

संस्कृतः—मण सितः ! निभृतक तथा मिय यदि त्रियः हेष्ट सदीपः ॥ ' यथा न जानाति मम मनः पदापतित तस्य ॥ ४ ॥

हिन्दी'—हे सित ! यदि मेरे विषय में मेरा प्रियतम तुम से सहोप देखा गया है तो तू निस्ते हो कर (प्राइवेट रूप में) सुने कहते । सुने इस तरी के से कहि जिससे वह यह नहीं जान सके कि मेरा मन उसके प्रति-श्रव पत्तपात पूर्ण हो गया है। इस गाया में 'तथा' के स्थान पर 'तवें' किला गया है और 'यथा' के स्थान पर 'जेवें, का मयोग किया गया है। अग गया है। अग गया है। इस गाया में 'तथा' के स्थान पर 'जेवें, का मयोग किया गया है। अग

सस्कृतः—यथा यथा विक्रमाशः लोचनयोः ॥ श्रपभ्रश्,—जिनें, निर्दे, लोझसह ॥

हिन्दी — ज़ैसे जैसे दोनों ने में फ्रां व इता को। यहाँ वर 'यवा, यवा कन्यांन वर 'त्रिवें, प्रिकें' का प्रयोग किया गया है।

सस्कृतः--तथा तथा मन्मथः निजक-शरान् ॥ व्यवभ्रशः--तिवं तिवं वम्महः निश्रय-सरः॥

हिन्दी —पैसे बैसे कामदेव खपन बाजों को । इम'चरख म 'तथा, तथा' का जगह पर 'निये, तियें' ऐसे खादश प्राप्त रूप लिस्ते गये हैं ।

सस्टल — मया ज्ञात विष ! विरहितानां कारि घरा भवति विकासे ॥ केनल (=पर्) स्वाङ्गीय तथा तथित यथा दिनकर चयकाल ॥ प्र॥ हिन्दी — है प्रियतम ! मुक्ति ऐमा जाना गया था कि प्रियतम के वियोग म दु जिन व्यक्तियों के लिय मध्या-काल में शायद कुछ मो मारवना हा खाधार पान होना हागा, किन्तु ऐपा नहीं है। 'रैलो ' चन्द्रमा मी मध्याकाल म उभी प्रकार से उद्याना प्रांत करने वाला प्रतीत हो रहा है, जैमाकि पूर्व उप्यानामय नाप प्रदान करना रहना है।' इम गाया में 'तथा' खञ्चय के स्थान पर तिह' रूप की खान्श प्रांत करने लिला गया है।। १॥ धान्श प्रांत प्रकार कि बीर 'यथा' को जगह पर 'तिह' खादेश प्रांत खञ्चय कर लिला गया है।। १॥

इमी प्रकार में 'कथ, यथा और तथा' अध्यय पूर्वे के स्थान पर आदेश गांति के रूप में प्राप्त होने वाले अन्य रूपों के चटाहरणों की कल्पना स्वयमत्र कर लोनी चाहिये, ऐसी प्रन्यकार की सूपना है। । ४ ४-१ १।

याद्यताद्यकोद्दगीदशां दादे हे हः ॥ ४-४०२ ॥

श्रवभ्रणे याद्दगादीना दादंरवयास्य बित् पद्द इत्यादेणो मगति ॥ मड भणिश्रउ बलिराय ! तुद्द केहउ सम्मण एद्र ॥ जेहु तेहु न वि होइ, वद ! सह नारायणु एहु ॥ १ ॥

अर्थ —सस्कृत भाषा में उपलब्ध 'याटक ताटक, फीटक् बीर ईंटक्' शर्त्स में खबियित यत्य भाग 'दक्ष' के स्थान पर खपश्र श भाषा में 'हित पूर्व र' 'ण्ट् ' खश रूप की आदेश प्रांति होती है। हित' पूर्वक कहने का तात्वर्य यह है कि 'दक्' भाग क लाव हो जाने के प्रधान रोप रहे हुए 'या, ना, की भीर है' के अन्त्य स्वर 'खा, और हैं' का भो लोर हो जाता है और नत प्रधान ही 'प्रा' खंश रूप की मंदेश प्रांति होकर पूर्व सथि खबस्या प्राप्त होकर कम में यों खादेश प्राप्त रूपों को प्राप्ति हा चानी है। से —याटक = जेह = जिसवे ममान, ताटक = उह = वसर समान, फीटक् = पेह = हिम क समान और दिप = पह = इसक समान। खादेश प्राप्त रूप विशेषका होग से विशेषक के स्वान ही विमन्तिया म भा नके विभिन्न रूप यन जाते हैं। गाया का भाषान्तर यों है —

सस्कृत --- मया मणितः पित्तरात्र १ त्र की हम् मार्गेण ५९.॥ याहक्-वाहक् नापि मत्रति मूर्छ १ स्यय नारायकः ईहरू ॥ १ ॥

हिन्तों —हे राजा मिले। मेंने तुम्हें कहा था कि यह मौगने बाला किम प्रकार का दिलागे है ? है मूर्त । यह मेमा वैमा मिलारी नहीं हो मकता है किन्तु इम प्रकार मिलागे। के रूप में रूप में भगवान गरायम विम्तु है।। १ ॥ यों इस गाया में 'बाट्ट, ताटक कीटा कीर ईट्ट का बात पाटन म 'बहु, बहु, केहड कीर पहुं रूपों का प्रवात किया गया है।। ४ ४०२ ॥

श्रतां डइस: ॥ ४-४०३ ॥

व्यवभ्रमा यादगादीनामदन्तानां यादश-तादश-कीदशेदशानी दादेखयवस्य दिव् ध्रदस इत्यादेशो भर्वात ॥ जडसो । तहसो । कदसो । ध्रदमो ॥

अर्थ ---सस्टत मापा में उपलम्ध 'याहक ताहक, कीहन थीर ईहरा' स्वर्श मंग्रि 'धत्-ध' प्रत्य की प्राप्ति होकर जन ये शब्द कम से याहरा, ताहरा, बीहरा थीर ईहरा' रूप में पिएत हो जाते हैं, तब ध्वप्त शं-भाषान्तर में इन राष्ट्रों क धन्त्य धवयब रूप हरा' क स्थान पर 'दित' पूर्व 'ध्वहम' अध्यय की धादेरा प्राप्ति हो जाती है। हित-पूर्व के कहने का तात्वर्ष यह है कि इन राष्ट्रा के ध्वप्त की धादे हैं भाग में ध्वप्त खबयब 'दश' के कोप हो जाने के प्रधान रोप रहे हुए शम्मीर 'या, ता की थीर है' मात में ध्वप्त खबयब 'दश' के कोप हो जाने के प्रधान रोप रहे हुए शम्मीर 'या, ता की थीर है' मात में ध्वप्त खबयब 'दश' के कोप हो जाने हैं होता है और मरपरचान हलत रूप से रहे राधांश में ही 'ध्वस्त' ध्वप्तेय ह्वाति की सिध हो जाती है। जैस ---यादश = बहसी = जिसके समान। ताहरा= तहसी = चमक समान। जीहरा = कहसी = किसके समान धीर ईटश = धहसी इसके ममान। ये विश्वर स्वरूप वाले हैं, इसलिये समावों के समान हो इनके विमक्ति-यायक रूप मा पनते हैं। ४४०३॥

यत्र-तत्रयोस्त्रस्य डिदेत्ध्वत्त् ॥ ४-४०४ ॥

अवभ्रंशे यत्र-तत्र-शब्दयोस्तस्य एत्यु अतु इत्येती दिवी भागः॥ जह सो घढदि प्रयाददी केत्यु ति लेप्पिणु सिक्सु॥ जेत्यु वि तत्यु वि एत्यु जिग भण वो वाहि सारिक्सु॥ १॥ अनु दिदो । तनु दिदो ॥

अर्थ — सरहत मापा में उपलम्य 'यत्र बीर तव' खब्यय रूप शर्दों का सपन्न रा मापा में रूप तर करने पर इनके खत में खबरियत 'त्र' माग क स्थान पर 'दिम' पूर्वक 'ए-सु बीर असु' एम हो 'खादेश रूप खशा माग' की प्राप्ति होतो है। 'दित' पूर्वक कहने का तास्त्र्य यह है कि 'यत्र बीर तव' में खबरियत 'त्र' माग क लोप हा जाने के परचात शेंगांग 'य' खीर 'त' में वियत खत्य 'ख' का भी लाप हीकर खादेश रूप में प्राप्त होने साल 'एक्स अथवा खत्य' को उनमें मंधि हो जाता है। जैने — पंप्र = जिल खीर तत्र' को ताता है। जैने — पंप्र = जिल खीर तत्र-वाल खीर ताल खीर तत्र-वाल खीर ताल खीर लाल खीर ताल खीर ताल खीर ताल खीर ताल खीर ताल खीर लाल खीर लाल खीर लाल खीर

सस्कृतः—यदि स परयति प्रजापति, क्वापि सात्वा शिषाम् ॥ यत्रापि सत्रापि सत्र सगति, भस, तदा तस्याः सरवीम् ॥ १ ॥

हिन्दी --यदि विश्व निर्माता ब्रह्मा इस विश्व में यहाँ पर, वहाँ पर श्रयवा कहीं पर भी (निर्माण-बता की) शिचा को पढ़ करके-अध्ययन करके-(पुरुषों का अथवा स्त्रियों का) निर्माण करता. तमी उम सुन्दर स्त्री के समान अन्य (पुरुष का अथवा स्त्री) का निर्माण करने में समर्थ होता। अर्थात सह ं नायिका) सन्दरता में वेजीड है।

इम गाया में 'यत्र' के स्थान पर जेख़्य' का प्रयोग किया गया है श्रीर 'तत्र' के स्थान पर 'तेख़्य' धम्य रूप लिखा गया है। शेष स्वों के कम से उदाहरण यों हैं -

- (१) यत्र स्थित = जत्त ठिदो=जहाँ पर ठहरा हुआ है।
- (३) तत्र स्थित = तत्तु ठिशे=वहाँ पर ठहरा हुचा है। यों कम से धारेश प्राप्त चारों घष्यभ ह्या की स्थिति का समभ लेना चाहिये॥ ४४०४॥

एत्थ्र कुत्रात्रे ॥ ४-४०५ ॥

अपभ्रशे कुत्र स्रत्र इत्येतयोस्त्रशब्दस्य डित् एत्यु एत्यादेशीं भन्नति ॥ केत्य वि लेप्पिण सिक्स ॥ जेत्य वि तेत्य वि पत्यं जगि ॥

अर्थ —संस्कृत मापा में उपलब्ध 'क्रुज धीर ध्यज' धरुवरों में धवस्थित धन्त्य ध्यक्तर 'ज' के ध्यान पर अपन्न रा भाषा में 'डित' पूर्वक 'ण्खु' अवयव को आदेश प्राप्ति होती है। 'डित' पूर्वक फहने का अर्थ यह है कि 'कुत और अत्र' अध्यय शब्दों के अन्त्य असर 'त्र' के लोप हो जाने के परपात शेप रि हुए शब्दांश 'कु बीर थ' में अवस्थित अन्त्य स्वर 'उ' और 'घ' का भी लोप हो इर तक्ष्यस्वात् घादेश हव से प्राप्त होने वाले घवयव रूप 'प्रधु' को उन शेपाश बाइरों के साथ स्विध हो आही है। तैसे — इत्र=देख्=कहाँ पर-कहाँ पर १ और अत्र=एख्=यहाँ पर अथवा इसमें ॥ द्यन्य दहाहरस इस महार है --

- (१) कुत्रापि लाखा शिक्षाम=बेख वि लेपिग्य मिक्स = कहीं पर भी शिक्षा की प्रहण करके! यहाँ पर 'क्रब' के स्थान पर 'केरब' का प्रयोग है।
- (२) यत्रापि तत्रापि धत्र जगति=जेख् वि वेख् वि पत्य जगि = जहाँ पर-वहाँ पर यहाँ पर इस पगतु में ॥ इस चरण में 'झत्र' के स्थान पर 'प्रायु' श्रम्यय रूप का प्रयोग प्रदर्शित है ॥ ४ ४०४ ॥

यावत्तावतोर्वादेर्मउमहि ॥ ४-४०६ ॥

श्रपभ्र में यावत्तावदित्यन्यययो वैकारादेखयबस्य म उं महि इन्यें। प्रय आदेशा मदन्ति ॥

जाम न निरहंद कुम्भ-यहि-सोह-चरेड-चडक ।। ताम समचह मंयमलंह पद-पद यज्जद रख ॥ १॥ तिलह तिलंतण ताठ पर जाउँ न नेड गलन्ति ॥ नेहि पणहुड तेन्जि तिल तिल फिट्ट यि सज्ज होन्ति ॥ २॥ जामहि विसमी फज्ज-गई जीवहं मज्मे पद्द॥ तामहि श्रम्थउ इयरू जणु सु-श्रमुवि श्रम्तम् देद ॥ ३॥

अर्थ —संस्कृत मापा में उपलब्ध 'यावत छीर तावत' छठवर्थों में स्वशिधत सन्य प्रस्तर 'यत' फे स्थान पर अपसरा भाषा में 'म, उ छोर माई' ऐमे तोन तीर आदेश कम म होन हैं। पैमे — यायत = जाम स्थवा जार्च छथवा जामाई = ज्ञव तक, जितना । तावत = ताम स्थवा नाउ छवदा तामाई = च्य तक, उत्ताम स्थवा नाउ छवदा तामाई = च्य तक, उत्ताम स्थवा ताउ छवदा तामाई = च्य तक, उत्ताम स्थवा ताउ छवदा तामाई = च्य तक, उत्ताम स्थवा ताउ छवदा उत्ताम स्थान कि वाच कि वाच प्रमान पर स्थान पर स्थान पर स्थान कि स्थान कि

सस्कृतः —यावत् न निपत्ति कुम्मतरे, सिंह-चपेटो-चटात्कार ॥ तावत् समस्ताना मद कलाना (गर्जाना) पटे पदे वाधते दका ॥१॥

हिन्दी —जब तक मिंह के पञ्जे की चपेटों का चटारकार बाने बाव (हायियों के) गण्ड-वज पर खंबांत् गर्दन-तट पर नहीं पहती है, तभी तक मदोनार्स मभी हाथियों के छग दग पर (९द पर पर प्राणे पंत्रनि चटला है कि मानों) डमरू बाना बज रहा हो। इम गाथा में 'यावत्' के 'स्वान पर 'आम' का प्रयोग किया गया है और 'तावत' के स्थान पर 'ताम' बहुवय परों को स्थान दिया गया है॥ र ॥

सस्कृतः—ितलानां विल्तत्वं वाउत् परं, यावत् न स्नेद्दाः गलन्ति ॥ स्नेद्दे प्रनष्टे वे एव विलाः विलाः भ्रष्टवा छलाः भगन्ति ॥ २ ॥

। दिन्दी--विजों का विलयना तमी तक है, पब तक कि तल महीं निकरता है। तह वं निश्य खानें पर येही तिल विलयने से अच्छ होकर (पीवेत हाकर) दाज रूप यहनारे लग वाते हैं। इस गाया में 'यावत् चौर तायत्' क स्थान पर कर्म स 'जाड चौर नाव' रूपों का अयाग समन्ताया गया है।। •॥

ं संस्कृतः—याग्रह् विषमा कार्यवितः, बोवानां मध्ये श्रापाति ॥ तान्य् श्रास्तामितरः ननः गुत्रनोऽप्यन्तर दंदानि ॥ ३ ॥ हिन्दी —जब मानव जीवों के सामने कठोर श्रयवा निवरीत कार्य स्थित रत्यन्न हो जाती है, वब साधारण श्रादमी की तो बात ही क्या है ? सजन पुरुष मी बाबा देने लग जाता है। इस गार्थी में 'यावत्' के स्थान वर 'जामहि' लिखा है श्रीर 'जाउत' को जगह पर 'तामहि' बतलावा है। यों कम में 'जाम, जाउ श्रीर जामहि' तथा 'ताम, ताउ श्रीर लागहिं' श्रस्थय पदों को स्थिति समकाई है।। ४ ४०६॥

वा यत्तदोतोडे वड: 🖪 ४-४०७ ॥

अपभ्रशे यद् तद् इत्येतयोरत्यन्तयो र्यायनावतो र्वकारादेरवयपस्य दित् एवढ इत्या-देशो वा भवति ॥

जेरडु अन्तरु रावण-रामह, तेरडु अन्तरु पट्टण-गामई ॥ पचे । वेनुलो । तेनुलो ॥

अर्थ —सस्वत भाषा में चवलस्य यह और 'तर्' सर्वनामों में जब परिनाण वायक प्रस्यव 'धवु-धान' की प्राप्ति होकर 'जितना' अर्थ में 'यावत शर्र बनता है तथा 'इतना' धर्म में 'तावत' शर्य के प्राप्ति होकर 'जितना' अर्थ में 'यावत शर्र बनता है तथा 'इतना' धर्म में 'तावत' शर्य के प्राप्त प्राप्ति होती है। 'दित पूर्वक 'ण्या अर्थ माषा में 'ढित' पूर्वक 'ण्या अर्थ माषा में 'ढित' पूर्वक 'ण्या अर्थ तथा के लोव हों की होती है। 'दित पूर्वक लेगा किले का तास्वर्य यह है कि 'यावत और तावत शर्यों में 'वत' अत्रयय के लोव हों हो। है। 'दित पूर्वक लेगा किले का तास्वर्य यह है कि 'यावत और तावत शर्यों में 'वत' अत्रयय के लोव हो ना के प्राप्त माग 'या ना प्राप्त चात्र के स्वाप्त माग 'या ना तो से स्वया कर्यों में 'वादेश भारत 'प्यार्थ माग को माथ होकर कम से इनका रूप 'जेवह और ताट' यन जाता है। जैसे —यावत चेवडचित्रता। तावतचेवड च उतता। यैकल्विक पत्त होन में प्राप्ता माग माग क्यार्थ में द्वितीय रूप 'जेतुल और तावत' में लेतुन एत्त्वल क्यार तावत और तावत' में लेतुन च्यावत च क्यां में तावतचेतुलो च अर्थ में द्वितीय रूप 'जेतुल चौर तेवल' भी मिद्र हो जाते हैं। जैसे —यावतच क्यार साम्यों नावतच्येतुलो च अर्थ माग च च व्यवह अर्थ कर सित्र साम में है च व्यवह अर्थ कर सित्र साम च स्वर प्राप्त माग च च व्यवह अर्थ कर सित्र साम में है च व्यवह अर्थ कर सित्र साम चीर साम में है च व्यवह अर्थ कर साम चीर साम में है च व्यवह अर्थ कर साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग कर साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग कर साम चीर साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग कर साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग कर साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग कर साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग कर साम चीर साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग चार साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग कर साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग कर साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग चार साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग चार साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग चार साम चीर साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग चार साम चीर साम में है । अर्थ रुप माग चार साम चीर साम चीर साम चीर साम चार साम चीर साम चीर साम चार साम चीर साम चार साम चार साम चार साम चीर साम चीर साम चीर साम चार साम चीर साम चीर साम चार साम चार साम चार साम चीर साम चीर साम चार साम चार साम चार साम चीर साम चार साम चार सा

वेद-किमोर्घादे ॥ १-१०८॥

श्रपभ्रशे इदम् निम् इत्येनगोर्त्वन्तयोरियत् कियता वंकाराडेश्ययम्य टित् एउड इत्यादेशो वा भवति ॥

एनडु थन्तह। देवडु अन्तरु ॥ वर्षे । व्युली । यत्तनी ॥

लर्थ- मंस्कृत माथा में उपलम्य 'इदम् श्रीर किम्' सर्वनामीं में परिमाज-बायक राग्य 'बान-श्वत' की प्राप्ति होकर इतना श्रीर कितना' श्वयं में कम से 'इयत श्रीर क्वियत' पहीं का निर्माण हाता ई. इन बने हुए 'इयत और कियत' पर्दों के श्रान्थ श्रावयत रूप शत्' के स्थान पर श्रापन्न साथा में विकरा स 'डिन' पूर्वक 'एवड' खबयब रूप की खादरा भावित हाता है। 'डित् पूर्वक' वहां का रहत यह है कि 'इयत श्रीर कियत' पदों में से अन्त्य अवयन रूप 'यत् का लाव हो जाने क परवात् राव रह हुए शक्शश 'इ ब्योर कि' में स्थित 'इ' स्वर का भा लोव हो कर आदेश शब्द 'एवड' सब्दोश का मंत्रि होकर रूम से ('इयत' के स्थान पर) 'एवड' की खीर (कियत्' के स्थान पर। केवड' की धादेश पाष्ति हो जाती है। जैसे -इयन् ऋन्तर=एबद्ध ऋन्तर -इतना फर्य = इतना भेद। कियन् भन्तर= ययह अन्तर-= कितना फर्फ ? कितना भेद ? वैकल्पिक पश होत से पचान्तर में मूत्र संख्या ४ ४१४ में 'इयत्' के स्थान पर 'ण्याल' की प्रान्ति होगी छीर 'कियत्' के स्थान पर 'केतल रूप मी होगा। इपन हियत् मुख=ण्तलु वंत्रलु सुह्≈इतना कितना सुद्ध ॥ ४ ४०८ ॥

परस्परस्यादिरः ॥ ४-४०६ ॥

श्रवञ्चा परस्परम्यादिरकारी भनति ॥

ते मुग्गडा हगवित्रा जे परिविद्वा ताई॥

यवरोपक लोयन्ताई सामिउ गनिनउ जाई॥१॥

अर्थ -संस्कृत भाषा में पाये जाने वाले विशायण रूप 'वरस्वर' में स्थित चाणि 'वरार' व स्थान पर व्यवस्त्र रा मापा में 'ऋकार' को कारेश मामि हो जातो हैं। जैसे--परश्वरस्य = व्यवराज्यहु = व्यापम वा।। गायाका रूपान्तर मस्टत भाषा में श्रीर हिन्दी भाषा में बग ने इस प्रकार है 一

संस्कृत:-ते मोगला हारिता, य परिविष्टाः वेपाम्। परस्तरं युष्वमानानां स्वामी पोडितः यपाम् ॥१॥

टिन्ही --परस्वर में युद्ध करन चाले चिन गुगर्नों का स्वामी पीड़ित था-दु खी था, चीर इमितिये उनमें म पो बप गय थे, वे मुगल (म्झेन्च्र जाति क मैनिक) हरा दिय गय-उन्हें परावित का दिया गया । इस साथा स परस्पर फ स्थान पर 'सबसोत्पर्र' पर का उपयोग करत हुए छादि प्रकार के स्थान वा अवार की प्राप्ति प्रदर्शित को गई है।। ४ ८०६ ॥

> कारि-स्थेदोतोहच्चार-लाघवम् 211

श्रवप्रदी कादियु "यञ्जनेषु स्थितयी: ए औं त्येवपी.

'ब्रायो माति ॥

* (8·§

गुर्वे विलिज्बह माणु ॥ (४-३६६) तसु हर्ड कलि-

नम्य श्रद्द कलियुने दुलमम्य = तमु हर्षे किल जुनि दुल्लाद होँ = कलियुन में उत दुर्लम को में। गौंपर दुल्लाद हाँ पद में गहे हुए 'व्योकार स्वर को स्थिति द्वस्य रूप से समसाई गई है। (२) गुरू-नगय=गुरु जल्हाँ = गुरू सन के लिये।। ४-४१०।।

पद्मन्ते उ-हुं-हि-हकाराणांम् ॥१-४११॥

थ्यपश्रयो पदान्ते वर्तमानानां उं हुं हिं ह इत्येतेषां उज्ज्ञारणस्य लाघर प्रायो भगति ॥ श्रन्तु जु तुच्छजं तहेँ घणहे ॥ यश्चि किज्जजँ सुश्रणस्य ॥ दइउ घडावइ यश्चि तरुहु ॥ तरुहुँ नि वक्षलु ॥ सम्म-निसोहिड जहिं लहुनु ॥ तणहें तहुजी भिन्न नि ॥

अर्थ — अपन्न श भाषा के पर्दों के अन्त में यदि 'उ. हु, हिं, ह' इन चारों अन्तों में में कोई में चन्नर आ जाय तो इनका चचारण प्राय हाथ रूप से हाता है। उन्नहरण रूम में इम प्रकार हैं —

- (१) जायद् यतुच्छ तस्या' धन्याया =च्यन्तु जु तुच्छउँ तहेँ घलुहे= वस सीमाग्यसालिती र्गानका के दूसरे मो जो (श्रज्ञ) छीटे हैं। इस घरण में 'तुच्छउ' को 'तुच्छउँ' लिख कर इम 'व' को द्वाय 'प से 'डे' ऐसा प्रवृशित दिया है।
- (॰) वर्लि करोसि सुजनस्य = बल्लि किज़र्जे सुख्रणस्यु=सज्जन प्रत्य के लिये में चित्रहान करता है। इस गार्थाहा में किज्नुत के स्थान पर 'किज़्जुं' लिख कर 'डें' को स्थित द्वस्य रूप से समझाई है।
- (३) देव पटयति बने तरूणां=१६३ घढाबद बणि नरुष्टु = विधाता-(सदा) जगन में पूर्वी पर बनाता है। इस गाया माग में 'तरुष्टु' पर में 'हु' की स्थिति का भाय 'इस उरुसन्न क अनुमार द्वार के रूप में प्रदर्शित नहीं की गई है।
- (४) तरुम्य चिव वरुत्त=तरुट्टें विषञ्च=चुकों से भी छाल (रूप वश्य) इन वर्से में रहे हूए 'नहुँ' में हुं' की 'हुँ' लिय वर उचारण की लघुता न्यिनाई है।
- (४) पद्त-विभाषित यत्र समामद्रे = लगा-विवाहित सहि सहर्दु = सनशर (के वन) मे साम हो। वाना (साम) अर्दो पर हम प्राप्त करें। गाया के इम माग में 'सहतु क्रियापर म समय सहर 'ई' की हैं नहीं लिए कर सचु बचारण की वैकल्पिक स्थिति को मिक्क की दें।

सस्हनः—श्रम्ये ते दीर्षे लोचने, श्रम्यद् तद् मुल् यूमलम् ॥ श्रम्यः मधन म्तन मारः, तदन्यदेन मृत्य कमलम् ॥ श्रम्य एव केश कलापः, सः श्रम्य एव प्रायो विविः ॥ येन नितम्बनी पटिता, सा गुण लान्यय निधिः ॥१॥

दिन्द्री — (नायित्रा विशेष का एक कवि वर्णन करता है कि) — उनका दोनों सही सही होतें छुछ छीर ही प्रकार का है—य ने तुलना में छनिर्वचनीय है। उनका दोनों भुजाएँ (भी) धनाणात्व है। उनका नघन छोर रुठार एवं उन्नत स्तन मार्र है। उनके मुख कमल की शामा भी चढिनीय है। उसके छेशों क ममूद की तुलना श्रन्य में नहीं की जा सकती है। वह विधाना ही (महा ही) प्राप का दूपरा हो मालम पहला , जिसन कि पेनो विशाल नितन्त्रों वाली तथा गुण पर्व मौन्द्र्य के मंद्रार रूप रुपयों है। इस हान्यों रूप का निर्माण रिका का निर्माण किया है। इस हान् में 'प्राय' के मार्न्श्रेष प्राप्त कप 'श्राव' का उपयोग हिंदा गया है। हारा है। इस हान्यों है। इस हान्यों प्राय' के मार्न्श्रेष प्राप्त कप 'श्राव' का उपयोग हिंदा गया है। हारा है। हारा है। इस हान्यों है। हारा हो हारा है। हारा है। हारा हो हारा है। हारा है। हारा हो हारा हो हो हारा है। हारा हो हारा हो हारा है। हारा हो हारा हो हारा हारा हो हारा है। हारा हो हारा हो हारा हो हारा हो हारा हो हारा है। हारा हो हारा हो हो हारा हो हारा हो हारा हो हो हारा हो हारा हो हारा है। हारा हो हारा हो हो हारा हो हारा हो हो हो हो हो है। हारा हो हारा हो हो हो हो हो हारा है। हारा हो हो हो हो हारा हो हो हारा है। हारा हो हो हो हो हारा है। हारा हो हो हो हो हो है। हारा हो हारा हो हो हो हो है। हारा हो हो हो हो है। हारा है। हो हो हो हो हो हो हो है। हो हो हो हो है। हो हो हो हो हो हो हो हो हो है। हो हो हो हो है। हो है। हो है। हो है। हो है। हो हो हो हो हो हो हो है। हो हो हो हो हो हो हो हो है। हो हो हो हो हो हो हो है। हो हो हो हो हो हो है। हो हो हो हो हो हो हो हो है। हो हो हो हो हो हो है। हो हो हो हो है। हो हो हो हो हो हो हो है। हो हो हो हो हो है हो है। हो हो हो हो है

सस्कृतः—प्रायो सुनीनामि भ्रान्तिः ने मणीन् मणपन्ति ॥ श्रम्ये निरामये परम पदे अधापि स्तर्य न समन्ते ॥२॥

हिन्दी — शक्सर करक बहुत करके मुनिर्धा में भी (प्रान दर्शन चारित्र क प्रति ; भारि है विवरीतता है, (इस विवरीतता के कारण से माला फेरते हुए भी क्यम) वे मणकों का ही गिर्म है श्रीर इसी कारण मं श्रमी तक 'श्रमुध शास्त्रत श्रीर हुन्छ रहित िरामय भीस पर की नहीं भाग बर सक हैं। इस गाया में 'भाय' का अगह पर 'भाइब रूप को स्थान दिया गया है।।री।

सस्कृतः—श्रश्रु अलेन प्रायः गीर्याः मित्र । उद्दश्ते नपन सर्भी ॥ ते सम्मुखं संप्रेषिन दत्तः तिर्थम् वात परम् ॥२॥

दिन्दी — है सिटा [†] उस भीरा (सायशा विश्वच) कही में व्यक्ति रूपी सम्बद्ध स्था समाव स्थान रूपी है से स्थाप समाव स्थान स्थाप है से से स्थाप समाव स्थाप स्था

संस्कृत — १ प्यति दियः, रोषित्यामि अह, रप्टां मामसुन्यति ॥ प्रायः णतान् मनोरयान् दृष्कर द्यति कारयति ॥॥॥

रिन्से —(बोइ एक नायिका व्यवनो भाषी में बहती है कि) मेरा वियतम पति आर्थेंग, में (बसक प्रात क्षत्रम) राप कर्रों भीर बद कुछे क्षोचत हुई त्येंगा तो मुक्त मनावेगा-गुरा क्षते का ाप्तन करेगा। यों मेरे इन मनोरथों को यह कठिनाई से वश में आनेवाला प्रेभी पित प्राय पूर्ण करेगा भयवा करता है। इन गाथा में 'प्राय' के स्थान पर आनेश प्राप्ति के रूप में होने वाले चौधे शध्द भीमन्त्र' को प्रदर्शित किया गया है ४॥ ।४ ४१४॥

वान्यथोनुः ॥ ४-४१५॥

थपभ्रशे अन्यथा शब्दस्य अनु इत्यादेशो ना भनति ॥ पने । अन्नह ॥ निरहाशल-जाल करालिथा, पहित्र कानि नुद्धिनि ठिययो ॥ अनु सिमिर-कालि सीथल-जलहु नृम् कहन्ति हु उद्विसया ॥१॥

ं अर्थे — 'श्रन्य प्रकार म-दूररी तरह संदम श्रय मे श्रयुक्त होने वाल सस्कृत श्रन्यय रान्द् 'श्रन्यया' के स्थान पर श्रप्रश्न सामाग में विक्रत्य म श्रयु रान्द्र रूप की आदश प्राप्ति होती है। वैकत्तिक पद्म होने से पद्मान्तर म 'श्रम्नह' रूप का ना प्राप्ति हागो। जैसे — श्रन्यया=श्रमु श्रयवा श्रमहः सन्य प्रकार से श्रयवा दूमरो तरह से। गाथा का श्रमुवात्र यों हैं —

संस्कृतः—विरहानल ज्याला करालितः पथिक कोऽपि मङ्क्ता स्थितः ॥ श्रन्थथा शिशिर काले शीवल जलात् धूमः कृतः उरियतः ॥१॥

हिन्दी — खपनी वियतमा पत्नी के त्रियोग रूपो श्रीम की ज्वालाघों से पीठित होता हुमा कोई यात्री-पृथिक विशेष जल में झूबको लगाकर ठहरा हुमा है, यदि चह (श्रीम ब्वाला में ब्वलित) नहीं होता तो ठड को ब्रातु में ठडे जल में म पूँजा (वाष्प रूप) वहाँ स उठता ⁹ इस सुन्दर बहुवनामयी गापा में 'बन्यवा' के स्थान पर खानु खड़च्य रूप का श्रयोग ब्रह्मित क्या गया है । ४ व'स्रा

क़ुतस. कउ कहन्तिहु । ४-४१६॥

थान्न शे इतम् शन्दस्य कड, कहन्तिहु इत्वादेशी भातः ॥ महु वन्तद्दो गुट्ट-द्विश्वद्दो कड सुम्पदा उत्त न्ति॥ थह रिड-रुहिर्रे उन्दर्गड थह खपणें न मन्ति॥१॥ पृमु कहन्तिहु उद्विश्वद्य॥

सर्थ — 'यहाँ स' इय क्षय से प्रयुक्त किये जान वाले संग्रृत अध्यय गरः 'युत' व श्यात वर ष्यपप्र रा मोपा में 'कड कीर कहन्तिहु' ऐस दो कायय शहर कवों को कादग प्राप्ते होनी ई। जैन — पुना≔कड कीर कहन्तिहु=कहीं सरी गामा से क्रम से इन रानों वा प्रयाग दिया गया र. इस हा अनुवार या ई — मुस्कृत ---मम कान्तम्य गोष्ठ म्यितस्य, क्र्व. छटीरशाणि जन्निन ॥ यय रिपुरुचिरण थाद्वैवति यथ थारमना, न भ्रान्तिः ॥१॥

हिन्दा — खबने भयन में रत्ते हुए मेरे श्रियतम पांत देव की उबस्थित में नौं शहरी है मे—(दर्श से-किस बारण सा अधिन हारा जल सबती है ? (क्योंकि तेसा होने पर) उन भौपदियाँ का याना कह (विति दव) शाउयों के रक्त म उनहां जुन्ता देवा अथा अधिन त्युर के (लहत हुए शार म में निहल हुए) एन से उन्ह सुन्ता देवा, इनमा ने किस कर ने नी नी हाई बन्त नहीं है। इस गाया में 'इन' के स्वान पर आनेश प्राप्त कर 'हन' का बयात किया गया है। हिंदी

(२) पृत्त करियन = धृत्त करिनेतह वहित्रव = धूर्यो कर्तो स-(किय कार्य से) बठा हुया है ? इस गाया चरण में 'कुत्र' के स्थान पर खन्द्रा प्रात दिनाय रूप 'क्हरिनेह का प्रवर्गत क्या गण है।। ४४१६॥

ततस्तदोस्तोः ॥ ४-४१७ ॥

अपभ्रमे ततम् तदा इत्यतमे स्तो इत्यादेगो मनति ॥ अड मम्मा पारक्षडा, ती सिंह ! मन्सु विष्ण ॥ ऋह मम्मा ध्यम्बह तलाती ते मारिप्रदेग ॥१॥

मंस्कृत --यदि भग्ना परकीयाः, ततः मस्ति । मन विवेश ॥ श्रम मानाः सम्मदीयाः, तदा तेन मास्तिन ॥शा

हिन्दों -- इ मान ! वदि शतुनात मृत्यु को श्राप्त हा गये हैं, चाववा (रण एउ का होड़ कर के भाग गये हैं में (बद गय विजय) मरे लियनम क कारण म (हो है)। शपका यह बारो पर व बीर युरुष रण ऐंग्र को होड़ करके माग लड़ हुत हैं ही (भी मगम्म कि) मरे लियनम के बीर गति मान करने

```
[ 38k ]
भागक्षत्र । अनात्र । हृत्या ज्यात्र । त्यात्र । त्यात्र । स्य
इ हारण से (दी वे निराश होकर रण देत्र को छोड आये हैं)। इस गाया में 'तत और तदा' अध्ययों के
सान पर एक जैसे ही रूप वाले 'तो' श्राञ्चय रूप का प्रयोग किया गया है ॥ ४-४१७॥
<sub>[व-परं-संगं-पुर्व-मा-मनाक-एम्व</sub> पर समाणु धृषु में मणाउं ॥४-४१८॥
       <sub>श्चपभ्र</sub>'शे एवमादीनाम् एम्बाद्य ग्रादेशा भवन्ति ॥
                  विष सगमि कंड निहडी, विश्वही परोक्सडो केम्ब १
                  मह विन्नि वि विन्नासिन्ना, निह न एम्प न तेम्प ॥१॥
        एवम=एम्म ।
          पग्म पर । गुणहिन सपह, किंचि पर॥
                     कन्तुल सीहही उगमिष्यह, त महु खिएडउ माणु॥
           समम समाग्रुः ॥
                     सीह निरम्पय गय इण्ड् पिउ पय-रम्ख-समाणु ॥२॥
                       चञ्चल जीविन, प्रुवु माणु पित्र रुसिन्जर् फोर्र ॥
                        होसिंह दिसहा, हमया दिव्यं वरिम-मयाइ ॥३॥
             घवमी घुउः।
               मो म। मधीण कर्राह विसाउ ॥ प्रायो ग्रहणात्॥
                         माणि पणहुर जर् न तणु तो देमहा चर्जन ॥
                          मा दुज्जण-फर-प्रत्नेविह देमिज्जल मिमज्ज ॥॥॥
                          लोणु वितिज्नह पणिएण, अभियल मेह ! म गज्छ ॥
                           बालिउ गलंड सुसुपडा, गोरी विम्मड व्यन्तु ॥४॥
                             विह्य पण्डर्ष वह इउ विद्विह जण-मामस् ॥
                             कि वि मणाउं मह विव्यही समि व्यत्तहरूर न व्यनु । दे।।
                   मनाको मणाउ ॥
                     क्षर्य -- महत्त्व भाषा में पाय चाने वाने बान्यों का द्यपप्रश भाषा में भाषा हर करने पर बनम
               हुद परिवर्तन हो जाती है, वसी परिवर्तन का महिमान इस
परिवर्तन हो जाती है, वसी परिवर्तन का महिमान इस
परिवर्तन हो जाती है, वसी परिवर्तन का महिमान इस
                यरो पर 'बारेश प्राप्ति के नाम से लिया गया है। सत्यदी की
```

(१) एत=एम्ब=इम प्रकार से अववा इम नरह से। (२) पर=पर=हिम्बु=वम्नु। (३) मम= ममगणु=नाथ। (४) भूष = भू बु=निश्चव हो। (इ) मा = मं=मत, नहीं। (६) मनाव्=मताव व्योदा सा भी-अल्प भी। इन्हीं काञ्चवों का भ्योग कम से गावाओं में नगकावा गया है, तरतुनार इन गाया है का मश्वत में तथा हिन्दी में भाषान्तर कम से इ। प्रकार से हैं —

संस्कृत — शिय सगमे कयं निहा १ वियस्य परोधे कथम् १ मया द्वे व्यपि विनाशिते, निद्रा नैंग न तथा।।

हिन्दी — प्रियतम पतिदेव के मम्मेलन हाने पर (तुप्त के कारण से) निक्षा कैस था महती है ? श्रीर प्रियतम पति देव के वियोग में भी (वियोग-चिन्त दु प्र होने के कारण से भी) निद्रा होने था मवती हैं ? मेरी निद्रा नेनों ही प्रकार में नष्ट हो गई है, न इस प्रचार से श्रीर न उम प्रकार म। इप गाया में मश्कृत खम्यव 'ण्व' के स्थान पर 'प्रव' वा प्रयोग समक्ताया गया है। 'क्ष' क स्थान पर 'फ्र' ' श्रीर 'तथा' के स्थान पर 'तेम्ब' की स्थिति की भी कहन्ना स्थयमेव कर सेना पाहिए ॥१॥

(२) गुर्गो न सबत कीर्ति पर न्युणीह न सबद किसि वर न्युणों से सदसी नक्ष (बाम मार्गा है) किन्तु कीर्ति (ही माप्त होती है) । इस चरण म 'वर' खब्बव के स्थान वर खाईरा प्राप्त खम्बव ८९ 'वर' का खब्बोग किया गया है ।

सस्कृत —कान्त यत् मिहेन धेपेनीयेते, तन्मम खण्डित मानः॥ सिंह नीरचकाम् गजान् इन्ति, प्रिय पदरर्घ ममम्॥

हिन्दी — यदि मेरे पति की बुलता सिंह से को बादी है तो इससे गेरा मान मेरा गीरब-सरिवर हो जाता है, क्योंकि निह तो ऐसे हाथियों को मारता है, जिनका कि कोई रफ्क नहीं है, (सर्वात रहा है होन की मारी में कोई वीरता पहीं है), सबकि मेरा विश्वतम पतिरेव तो रहा करने वासे मैनिगी के माग राष्ट्र राजा को मारता है। यो सुलता में मरा पति किंह से भी। यह यह कर है। इस गामा म 'सन' कारवय क स्थान पर 'समाणु' काव्यय का प्रयोग श्रुतिंग विधा गया है।। ।।

मस्कृतः—चञ्चल बोजित, जुनं मरखं, प्रिया रुप्यते यय ? मजिप्यन्ति दिवसा रीपयुक्ताः (स्थाना) दिच्यानि यय शुजानि ॥३॥

हिन्ही —जीवन चंचल है सर्घात विसो भी चल में तस्य हो महता है कीर मृतु भूव सार्व तिक्षित है में। ऐसा फिति में है प्रियतम पतिष्ठव ! राष यति काप नयं किया जाय है पदि शेव ग्रुष्ठ दिन स्वतीत होंगे में। हमारा फ्रयेक हिन 'इवलाक में मिन जान वाले मी में। वर्गों के ममान सहवा की। वही बाटा मा महत्र कैमा प्रतीप होगा। इस ग या में 'भूष' के स्वात पर बाईश मात हव 'भूष' का प्रकेष दिया गया है। 124

'मत नहीं' श्रथक मा' श्रव्यय के स्थान पर 'में' के प्रयोग का उदाहरण यों है-मा धन्ये ! पृत्वियात्म्=म घणि । करि विताच=दे घन्यशील नायिके । तू रीद को मत कर-खिन्न मत हो । 'प्राय ' क साथ प्यादेश प्राप्ति का विधान होने से अनेक स्थानों पर 'मा' के स्थान पर 'मा' का ही और 'म' का माप्रयोग देखा जाता है। 'मा' छोर म' के उदाहरण गाया सख्या चार में और पाँचमें ऋम से बतलाये गा है, उनका श्रमुवाद यों है --

मस्कृत:-माने प्रनष्टे यदि न ततुः तत् देश त्यजेः॥ मा दुर्जन-कर-पन्लवैः दश्यैमानः भ्रमेः ॥॥॥

हिन्दी - यदि आपका मान मन्मान नष्ट हो जाय वो शरीर का ही परित्यांग कर देना चाहिये थीर यदि शरीर नहा छोडा जा मफें तो उस देशका ही (खपने निवासन्त्यान का ही) परित्याग कर देना वाहिये, जिसमें कि दुष्ट पुरुषों के हाथ की अंगुली अपनी फोर नहीं उठ सके अर्थात में हाथ द्वारा अपनी भार इशारा नहीं कर सकें छोर यों हम उनके थाने नहीं घम सकें गंधा

सस्कृतः - लवण विलीयते पानीयेन, अरे राल मेच! मा गर्ज ॥ ज्यालित गलित तत्कृटीर्य, गोरी विम्यति श्रद्य ॥४॥

हिन्दी'--नमक (श्रथवा लावण्य सीन्दर्य) पानी से गल जाता है-याने विगल जाता है। धरे हुप्ट बादल ! तु गर्जना मत कर । जली हुई वह मोंपड़ी गल जायगी और वममें (बैठी हुई) गौरी-(भागिका विशेष) श्राज गोली हो जायगी भीग जायगी ॥४॥ चौथो गाया में 'भा' के स्यान पर 'मा' हो लिखा है और पाँचवीं में 'मा' की लगह पर फेवल 'म' ही लिख दिया है।।

सस्कतः-विभागे प्रनष्टे वकः ऋदी जन-सामान्यः॥ किमिप मनाक मम प्रियस्य गशी अनुहरति, तान्य: ॥६॥

हिन्दी - सपित के नष्ट होने पर गरा प्रियतम पविदेव टेदा ही जाता है अर्थात अपी मान-स मान-गीरव को नष्ट नहीं होने देता है और प्राद्धि की प्राप्ति में याने संवप्नता प्राप्त होने पर सरल सीवा ही जाता है। मुक्के चन्द्रमा की प्रवृत्ति भी ऐसी हा प्रतीत होता है, वह भी कमाची के घटने वह टेटा-पकाकार हो जाता ई खीर कनाथों की मपूर्णता में मरल याने पूर्व दिलाई देता है। यों कुछ ष्रतिर्वचनीय रूप में चन्द्रमा मेरे पविदेश की थोड़ी भी नक्ल करता है, धान्य काई मी ऐमा नहीं करता है। इन गावा में 'मनाकू' अञ्चय के स्थान पर 'मजाव' रूप का प्रयोग किया गया है।।इ॥ ४ ४६८॥

किलायवा-दिवा-सह-नहे: किराहवइ दिवेसहु नाहि ॥ ४-७१६ ॥

श्रपभ्रशे किलादीनां किरादय श्रादेशा भवन्ति ॥ 'किलस्य किरः ॥

किर खाइ न पिश्रह, न विद्वह बिम्म न नेवह रूप्रहड ॥
इह किवण न जायह, जह जमही खणेण पहुचह द्वहड ॥१॥
प्रथमो हाइ ॥ श्रह वह न सामह एह सोडि ॥ प्रामोधिकारात ॥
जाइन्जइ तिह देसहइ जन्मह पियहो पमाण ॥
जाइन्जइ तिह देसहइ जन्मह पियहो पमाण ॥
जाइ श्रावह तो आणिश्रह श्रहमा तं जि निमाण ॥२॥
दिवो दिवे । दिवि दिवि गङ्गा-यहाणु ॥ सहस्य सहु ॥
जाउ पवसन्तें सहु न ग्रयश्च न प्रश्न विश्रोप तस्सु ॥
जाउ पवसन्तें सहु न ग्रयश्च न प्रश्न विश्रोप तस्सु ॥३॥
नह नीहिं ।

एचहें मेह पिंथन्ति जल्ल, एचहें चडवानल श्रावट्टर ॥ पेक्यु गही रिम सायरही एकवि कथिश्रनाहिं श्रोहट्टर ॥॥॥

अर्थ — इस सूत्र में भी अध्ययों का हो वर्षांत है। वर्त्तुतार सस्कृत मापा में उपलग्य अध्ययों के स्थान पर अपश्च श मापा में जिस रूप में आदेश प्राप्ति होती है, वह स्थिति इस त्रकार से हैं —(१) किल = किर = निरुप्य हो। (०) अथवा = अह्बह = अध्यवा = विकल्प से इसके बराबर यह। (३) दिग = दिवे = दिन-दिवस। (४) सह = सहु = साथ में। (४) निह = नाहिं = नहीं। यों अपश्च श मापा में 'किल' आदि अध्ययों क स्थान पर 'किर' आदि रूप में आदेश प्राप्ति होती है। इन अध्ययों का व्ययोग ग्रुत्ति में दो गई गाथाओं में किया गया है। उनका अनुवाद कम स इस प्यार है.—

सस्कृतः—िकल्ल न खादति, न पित्रति न विद्रवति, धर्मे न व्ययति रूपकम् ।। 'इह कृपयो 'न 'जानाति, यथा यमस्य चयोन प्रभाति दृतः।।

हिन्दी —िनश्चय ही कजूम न (धन्छा) खाता है थीर न (धन्छा) पोता है। न सहुपयोग ही करता है थीर न धर्म-कार्यों में हो अपने धन को न्यय करता है। किन्तु छत्तपु इस बात को नहीं जानता है कि अथानक ही यमराज का दूत आकर चुण मर में हो उसको उठा लेगा। उस पर मृत्यु का प्रमान हाल देगा। इस गाया में 'किल' अथ्यय के स्थान पर आदेश प्राप्त 'किर' अञ्यय का उपयोग समकाया गाया है।।।।

सस्क्र- — खयवा न सुवशानामेष दोष = खहबई न सुवसह एह खोडि = खयवा श्रेष्ठ वंश वार्लो ा-उत्तम खानशान वार्लो का-खह खपराध नहीं है। इस गाधा चरण में 'खयवा' के स्थान पर 'खहबद' स्व के खारेश प्राप्ति वतलाई है। 'श्राय' रूप से विवान का खिधकार होने के कारण से 'खयवा' के खान पर खपश्रश मापा में खनेक स्थानों पर 'ख़श्वा' के बान पर खपश्रश मापा में खनेक स्थानों पर 'ख़श्वा' के बान पर खपश्रश मापा में खनेक स्थानों पर 'ख़श्वा' कर भी देखा जाता है। इस सम्बन्धी उदाहरेख माथा सट्या टो में वो है —

मस्कृतः —यायते (गम्यते) तस्मिन् देशे, लभ्यने श्रियस्य प्रमाणम् ॥ यदि श्रागच्छेति तदा श्रानायते, श्राथवा तर्रेत्र निर्माणम् ॥२॥

हिन्दी — में उस देश में जाती हूँ, जहाँ पर कि प्रियतम पतिदेव की प्राप्ति के चिद्ध पाये जाते हों। पिंवह श्राता है तो उसको यहाँ पर लाया जायगा अथवा नहीं खावेगा तो में वहां पर ही खपने प्रार्ण 'हूँगी। इस गाथा में 'खथवा' की जगह पर श्रहवा' रूप लिखा हुआ है।।।।

सस्क्रत —िदेवसे दिवसे (दिया दिवा) गङ्गा-स्नानम् =िदिव-दिवि-गगाण्डासुच्ययेक दिन ^{गगा}स्नान (करने जितना पुण्य प्राप्त होता ई) इस गाया-पद में 'दिवा' के स्थान पर 'दिये≕दिवि' ^{रूप} का चल्लेख किया गया है।

सस्कृतः - यत् प्रवसता सह न गता न मृता वियोगेन तस्य ॥ लज्ज्यते सदेगान् ददतीभिः (अस्माभिः) सुमग जनस्य ॥३॥

िन्द्री — जब मरे पतिदेव विदेश यात्रा पर गये तब में बनके साथ में मो नहीं गई भीर उनक रेषाग में भी (बिग्ह जिन- दुख से) मृत्यु वा भी नहीं प्राप्त हुई मृत्यु भी नहीं प्रार्ट्स, ऐसा स्थिति में 'क्डों मदेश भेनते में सुक्ते लज्जा अपातों हैं। इस गाथा में 'सह' अध्यय क स्थान पर आदश प्राप्त 'मार्ट्स' क्ष्यय का प्रयाग प्रदर्शित किया गया है ॥३॥

मस्कृत —इतः मेघाः पिरन्ति जल, इतः गडरानलः श्रावर्तते ॥ श्रेवस्य गमीरिभाग् सागरस्य एङापि कण्डिता निर्धं श्रवस्त्रयते ॥४॥

हिन्दी —समुद्र के जल को एक चार तो ऊपर से मेघ बादल-पाने हैं और दूमरी कोर चन्टर स पुदानिन उसको चपने उन्होंच वरती नाती है। यों समुद्र की गर्मारता को देखा कि इनकी एक यूद मी पप म नहीं पातो है। इस गाथा म 'नीह' चन्यय क स्थान पर चपचर मोगा में नाहिं' चन्यय रूप की केपणा की गई है।।४॥ ४ ४१६॥

> परचादेवमेवेवेदानीं-प्रत्युतेतसः पच्छड पम्बङ् जि एम्बह् पच्छिउ एत्तहे ॥४-४२०॥

श्रपभ्रशे परचादादीनां पच्छड इत्यादय श्रादेशा भगन्ति ॥ परचातः पच्छड । पच्छड् होइ विहासा ॥ पत्रमेवस्य परगड । एमगड सुरह समचु ॥ एवस्य जिः ॥

\$

जाउ म जन्तउ पद्मवह देक्सउं कड पय देह।। हिव्यह तिरिच्छी हउं जि पर विउ डम्बरह करड ॥१॥ डदानीम एम्बर्डि।

हरि नच्चाविउ पङ्गण्ड विम्हड पाडिउ लोउ॥ एम्प्रहिं राह-प्रयोहरह ज भावड त होउ॥२॥ श्रस्यतस्य पचलिउ॥

> साव-सत्तोगी गोरडी नवरवी कवि विम गण्डि॥ भडु पञ्चतिष्ठ सो मरइ, जासु न सन्गइ कण्डि॥३।

इतस एत्तहे ॥ एत्तहे मेह पिय्रन्ति जलु ॥

अर्थ — मार्कत भाषा में पाये जाने वाले अध्ययों के स्थान पर अपन्न रा भाषा में अमी आहेरा प्राप्ति होती है, उसीका वर्णन चाल है। वदनुसार इस सूत्र में छह अव्ययों की आदेश प्राप्ति समझाई गई है। वे छह अव्यय अथ पूर्वक कम में इस प्रकार से हैं —

- (१) परचात= पच्छद = वाछे-बाद में ।
- (२) एउमेव = एम्बइ = ऐसा ईस इस प्रकार का हा।
- (३) ण्व ≕ति≕ दी-निश्चय ही।
- (४) इननोम = एम्बहि=इसी समय में श्रमी।
- (४) प्रतंयु॰= पण्चलिख=वैपरात्य-बरटापना ।
- (६) इत = एत्तहें-इम तरफह्मर एक छोर । यां नंश्हताय श्रव्यव पश्चात' श्रादि क स्थान वर 'पक्छह' श्रादि रूप स श्रादेश प्राप्ति होती है । उपगेक छह श्रव्यवों के उगहरण क्रम म इम प्रकार हैं —
- (१) पश्चाद् मर्वात विमातम्≔पच्छद हाइ विहासाु=पाछे (सत्हाल ही) प्रभातन्त्रात कार्ण हो जाग हैं।
- () एउमेव सुरत सगाभम्=ण्म्बइ सुरव सगत्त=इम प्रकार म ही (हमारा) तुरक्ष (रिक कार्य) समाप्त हो गया ॥

(३) मंस्कृतः—यातु, मा यान्त पल्लवत, द्रन्यामि कति पदानि ददाति ॥ हृदयं तिरश्चीना श्रहमेव पर क्रियः श्राहम्पराणि करोति ॥१॥

हिन्दी — यिं (मेरा पित) जाता है तो जाते दो, जाते हुए उसको मत बुलाओ ! मं (मी) देखतो हैं कि वह कितने दिय भरता है ? कितनी दूर जाता है ? क्योंकि में उसके हृदय में (आगे बदने के लिये) याया रूप हो हैं। (अर्थात मेरा वह परित्याग नहीं कर मकता है)। इसलिये मेरा भियतम (जाने का) आडम्बर मात्र हो (केवल बोंग हो) करता है। इस गाथा में 'अहमेव' पद के स्थान पर 'हव नि' पद का श्योग करके यही समकाया है कि 'एव' अन्यय के स्थान पर अपभ्र स मापा में 'नि' अन्यय रूप की धारेश मीति होती है।।।।।

(४) सस्कृतः—हरि नर्तितः प्राङ्गणे, विस्मये पातितः लोकः ॥ इदानीम् राधा-पयोधरयाः यत् (प्रति) माति, तद मनतु ॥२॥

हिन्दी —हिर (कृष्ण) खागन में नोचा खयवा नचाया गया खौर इसमे जन-सोघारण (दर्शह-वर्ग) खारचर्य (सागर) में हृव गया (खयवा खुवाया गया) (सत्य है कि इस समय में राघा-रानी के दोनों स्वनों को जो सुख मां खन्छा लगता हो, वह होवे । उमके खनुमार कार्य किया जाये)॥ इस गाथा में 'इदानी' खब्यय के स्थान पर खपन्न रा मापा में 'यम्बहि' खादेश प्राप्त-खन्यय रूप का प्रयोग प्रस्तुत किया गया है ॥२॥

(४) सस्कृत ---सर्वेसलावएवा गारी नवा कापि निप-ग्रन्थि ॥ भट प्रस्थत स प्रियते यस्य न लगति कएठे ॥३॥

हिन्दी —वह सर्व-चावच्य-मोन्दर्य-सपन रमणी इन्हा नवीन ही प्रकार की (धारवर्य जनक) विष की (जहर की) गाठ है निमक कठ का खालिंगन यहि (खानक) नवपुरक पुरुष नहीं करता है तो उन्टा मृखु की प्राप्त होता है। (जहर के खास्वादन से मृत्यु प्राप्त होनी है परन्तु यह जहर बुद्ध सनीता हो है कि जिसका यदि आस्वादन नहीं किया जाय तो उन्टी मृत्यु प्राप्त हो जाती है)। इस खपन्न रा द्वद सें 'प्रसुत' खब्यय क स्थान पर 'पर्यालव' खादेश प्राप्त कम्यय रूप का प्रचलन प्रमाणित किया है।।३॥

(६) इत मेषा विवन्ति जलं=यत्तहे मेह विश्वन्ति जलु=इम तरफ (इवर एक चोर तो) मेन मादल-जल को वीते हैं। इम चरण में 'इत 'कं स्थान पर'यत्तह रूप की खादेश प्राप्ति समाग्नाई दे ॥४ ४००॥

विषर्गोक्त-वर्सनो-बुन्न-बुत्त-विच्चं ॥४-४२१॥

ध्यपभरो विषएए।दीनां बुन्नादय यादेगा मवन्ति ॥ तिषएएस्य गुन्नः ।

मर्ड बुत्तउ तुहु धुरु धर्गाहं कमरेहि निमुत्ताड ॥
पह विष्णुः घरल न चढहः भरु एम्बह बुन्नउ काह । । १।।
उक्तस्य बुत्तः । मर्ड बुत्तउ ॥ वर्रमनो ,विषाः । जं मणु विचि न माड ॥

अर्थ'—सस्कृत मापा में पाये जाने वाले दो छूद्न्त शब्दों के स्थान पर और एक सज्ञा वाचक शब्द के स्थान पर जो खादेश प्राप्ति खपन्न शांभाषा में पाई जाती है, उसका मिष्णान इस सूत्र में किया गया है। वे इस प्रकार से हैं —(१) विषण=जुल्लक्ष्मेर पाया हुआ हुआ हुआ हरा हुआ। (२) वक= चुत्त=कहा हुआ, बोला हुआ। (१) वर्मन्=विद्य=मार्ग रास्ता॥ इन आदेश प्राप्त शब्दों के च्याहरण पृत्ति में दिये गये हैं, तरनुसार उनका अनुसद कम से इस प्रकार हैं —

संस्कृत:—मया उनतं, त्वं धुरं धर, गलि धुपर्मेः (कसर) विनाटिता ॥ त्वया विना धन्न नारोहतिं मर , इदानी निष्वण किम् ॥१॥

हिन्दी — मुक्त से कहा गया था कि 'को रेवेट बैल ' तुमं ही खुरा को भारेर्ण करो। हम इन कमजोर चैठ जाने वाले वैलें से हैरात हो 'चुके हैं। यह भार तेरे बिना नहीं उठाया जा सकता है। अबे तू दु खी खथवा उरा हुआ खथवा उदास क्यों हैं। इस गाथा में कुदन्त शाद 'विषरण' के स्थान पर खपश्रहा भाषा में खादेश प्राप्त 'बुजड़' शाद 'का प्रयोग समक्राया है।।१॥

- (२) मया चत्तम् = मह जुत्तच=मेरे से कहा गया खमवा वहा हुखा । इस वरण् में 'उत्तम्' के स्यान पर 'जुत्तव' की खादेश प्राप्ति वनलाई है ।
- (३) येन मनो धर्माति न साति न जं मगु विश्वि न माइ = निस (कारण) मे मन माग्रो म नहीं समाता है। इस गाया चरण में 'बर्क्माने' पद क स्थान पर 'बिडिच' पद की खादेश प्राप्ति हुई है। बीं बीची खायेश प्राप्त शब्दों की स्थिति को समक्त लेना चाहिये। ॥ ४-८२१ ॥

शीघादीनां वहिल्लादयः ॥ ४-४२२ ॥

अपभागे शीवादीनां विहल्लादय खादेगा मान्ति ॥

एक्क् कळाइ ह नि न खानहीं खलु वहिल्लाउ नाहि ॥

मह मिचला प्रमाणियउ पह नेहउ सलु नाहि ॥१॥

फारस्य बहला ॥

निर्मे सुपुरिस तिये क्षप्तलंड, निर्मे नह तिव वलवार ॥ निर्मे लोदर तिमें मोहरहा हिया विदाहि काह ॥२॥ व श्रस्पृश्य ससर्गस्य विद्वालः ॥

जे छड़े विशा रयण निहि श्रप्य ति घल्लान्त ॥ तह सह्वह विट्टालु परु फुक्टिजन्त भगन्ति ॥३॥ भयस्य द्रवक्षः ॥

दिवेहिं विहत्तउ छाहि, वह सचि म एक्क्स नि द्रम्मु ॥
को वि द्राक्षउ मी पडह, जेण ममप्पह जम्मु ॥ ४ ॥
धान्भीयम्य धप्पण ॥ फार्डेन्ति जे हियडउ धप्पण्ड ॥ दण्टे ट्रेंहिः ॥
एकमेक्ज जड नि जोएदि हिर सुहु सञ्चायरेण ॥
तो वि द्रेहि जहिं क्हिं नि राही ॥ को मक्ड सबर नि दहुन्यणा नेहिं पल्हा ॥४॥

गादस्य निचट्टः ॥

विहमें कस्सु थिश्तगाउ, जोव्यणि कम्सु मरङ् ।। सो लेखडउ पठानिश्रङ, जो लग्गङ निच्चट्ट ।६॥ श्रक्षाधारग्रस्य सङ्कर ॥

विह ससक्ष्म विह मयरहरु कहिं परिहित्यु कि मेहु॥ द्र-डियाह वि सज्ज्ञणह हां श्रमहूलु नेहु ७॥ वीतुकस्य काइ.॥

कुञ्जरु व्यानह तरु-धरह कोष्ट्रेग धल्ला हरणु ॥ मणु पुणु एवहिं सल्लाहिं जड पुन्छह परपत्यु ॥८॥ क्रीहायाः खेट्टः ॥

पेह्रय क्य मम्हेदि निच्छ्यं कि वयम्बहा। श्राणुरचाउ भचाउ श्रम्हे मा चय सामिश्र ॥६॥ रम्यस्य राण्णः॥

सरिदि न सरेदि, न मर्वरेदि निव उजनाय-वर्गेदि ॥ देस रवण्या होन्ति, वद ! निवमन्तेदि सु-व्ययेदि ॥१०॥ भद्भुतस्य दक्षरिः॥ सस्कृत—(१) एक कदापि नागन्छसि, श्रान्यत् शीघ यासि ॥ मया मित्र प्रमाणितः, त्यया यादशः (स्य यथा) सलः न हि ॥१॥

हिन्दी—सुम कभी भी एक बार भी मेरे पास नहीं खाते ही खोर दून ी जगह पर तुम शीवता पूर्वेक जाते हो, इससे हें मित्र ! मेंने ममक लिया है कि तुन्हारे समान तुष्ट कोई नहीं है। इस गाधा में "शोघ" क स्थान पर "वहिल्ल उ" पर का त्रमंग समकाया ही 1 १ ॥

संस्कृत- (२) यथा सत्पुरुषाः तथा कनहाः, यथा नद्यः तथा नलनानि ॥ यथा पर्वताः तथा क्रीटराणि, हृदय ! खिद्यमे क्रिम् १ ॥ २ ॥

हिन्दी—जितने मज्जन पुरुष होते हैं उनने ही अगड़े भी होते हैं। जिननो निया हाता है, चतनेही प्रवाह भी हाते हैं, जितन पहाड होते हैं उननो हा गुफाएँ भा हातों हैं, इमिनये ह हाय ग्रि खिल क्यों होता है ? इस प्रियम में अनुकूलताएँ और प्रतिकूचताएँ ता प्राप्ति-अनन्त काल म उत्प्र होती ही आई है। इस छद में 'कलह" के स्थान पर "चवल ' पद प्रयुक्त हुआ है।। र ।।

सस्कृत —(३) ये मुक्त्या रहन निर्धि, व्यातमान तटे चिपन्ति ॥ तेपा राखाना समर्गः क्षेत्रल फुल्कियमाणाः अमन्ति ॥ ३ ॥

हिन्दी —जो शास रहतों के भड़ार रूप सभुद्र को छोड़ करके अपन आपका समुद्र के किनारे पर फेंक देते हैं, चन शाओं की स्थिति आरएश्य जैसी हो जाती है, और वे सिर्फ हूमरां की फूक से आया क करते हुए आनिश्चित स्थानों पर भटकते रहत हैं। इस गाथा में "अन्पूरण संसर्ग "के स्थान पर "विहालु" पर का प्रयाग हुआ है ॥ ३ ॥

सस्कृत (४)—दिवमै श्रजित साद मृतः! सचितु मा एकमिष द्रम्मम् ।।
किमिष भय तत् पतति, येन ममाध्यत जन्म ॥ ४ ॥

हिन्दी-- यरे सूर्त ! जो द्वाद्य भी प्रांत निन तेरे से कमामा नाता ई उसको खा, उसका उपमाग कर खौर एक पेसे काभी सचय मत कर, क्योंनि अवानक ही बुछ भी भय (ग्रृत्यु धादि) च्या सर्वनी है। इस छन्द में " मय " पट का जगह पर च्यश्र्यरा भाषा में " द्रवकठठ " पद का प्रयाग क्यि गया है ॥ ४॥

सस्कृत (४)-स्फोटपतः यो हृद्यं आत्मीय = फोडेन्ति जे हिश्चडत अपणाउ =

जा (दोमों स्तन) अपने खुर के हर्य को हो) फोड़ते हें—विस्फोटित हो कर उमर आते हैं । इस गाया-चरण में सस्क्रन पर " आसीय ' के बहते में " अध्यत " पर प्रदान किया गया है । (६) ऐकीक यद्यपि परयति हरिः सुष्ट मर्भादरेग । तथापि द्विट यत्र कापि राधा, कः शक्तोति मयगीतुं नयने स्नहेन पर्यस्ते ॥॥॥

हिनी — यद्याप हरि (भगवान् श्री कृष्ण) प्रत्येक नो श्रन्छी तरह से श्रोर रूण श्रादर के साथ करते हैं, तो भी उनको हथ्दि (नजर । जहाँ कहीं पर भी गामानी है, वहाँ पर जाकर जम जाती है। पर साथ हो है कि प्रेम में परिपूर्ण नेयों को (श्रपनी प्रियनमा से) दूर करने के लिये-(हटाने के लिये) भीत समर्थ हो पकता है ? इस श्राप्तश्रा-काव्य में 'हुंटि' के स्थान में 'ट्रेंटि' शुरू लिखा गया है ॥ श्रा

सस्कृतः—(७) विभन्ने कस्य स्थित्त्र १ योजने कस्य गर्वः १ स लेखः प्रस्थाप्यते, यः लगति गाहम् । ६॥

हिन्दी — घन सर्वात्त के होने पर भी किपका (प्रेमाकर्षण) स्थिर गहा है ? चोर यो बन के होने पर भी प्रेमाक्ष्मण का गर्ब किसका स्थाई ग्हा है ? इसलिये नैसा प्रेम पन भना काय, जो कि तत्काल ही प्रगाद रूप से —िनिरियत रूप से —इन्ट्रय को हिला सके —इन्द्रय को खाकर्षित कर सक, (ऐमा होने पर वह प्रियतम शोध हो लोट खायेगा)। यहाँ पर ' गाउन् " के खर्थ में " निन्बट्ट. " शब्द लिखा गया है ॥ इ ॥

सस्कृत(८)—कुत्र शराघरः कुत्र मकरघरः १ कृत्र वर्धी कृत्र मेषः १ दूर स्थितानामपि सज्जनानां भनति स्रसाधारणः स्नेडः । ७'।

हिन्दी। —कहाँ पर (फितनी दूरी पर) चन्द्रमा रहा हुआ है और समुद्र कहाँ पर अवस्थित है है (तो भी समुद्र पन्द्रमा के प्रति उत्तार-माटा के रूप में अपना प्रेम पर्दातत करना रहना है। इसा प्रकार स मग्रूर पन्द्रमा के प्रति उत्तार-माटा के रूप में अपना प्रेम पर्दातत करना रहना है। इसा प्रकार स मग्रूर पाणे प्रकारन लगता है। इन पटनाओं को देख करके यह कहा जा महना है कि अनि दृश रहत हुए भी सजन पुरुषा का प्रेम परस्तर में असावारण अर्थान अली कि हाना है। इस गांधा में अमाधारण प्राम्य स्थान पर अपने अपने स्थान पर अपने स्थान स्

सस्कृत (६)-इञ्जारः अन्येषु तरुवरषु वीतुकेन धर्पति हस्तम् ॥ मनः पुनः एकस्या मन्तक्यां यदि पृन्छय परवाधम् ॥ = ।

हिन्दी —हाथी अपनी सुढ को केवल सी इन यहा हा । र शे खन्य क्यों वर र दला है। यदि उन मध्य बात की पुछते हो तो यही है कि उम हाथों का मन ता वामन से मिर्फ कर 'मान्न के लाक इस पर ही आकर्षित होना है। इस एंद में मक्तन-वर 'की तुके र' के क्यान पर आक्षार गापा में कोडू प' विकासवा है।। ला संस्कृत--(१) एक कदापि नामच्छिति, व्यन्यत् शीघ्र याति ॥ मया मित्र प्रमाणितः, त्यया यादशः (त्व यथा) खलः न हि ॥१॥

ाहरूरी—तुम कभी भी एक बार भी मेरे पाम नहीं खाते हो और दूवरी जगह पर तुम शीजरा पूर्वेक जाते ही, इससे हे मित्र ! मेंन समक लिया है कि तुम्हारे समान तुष्ट भोई नहीं है। इस गाधा में ह "शोघ " के स्थान पर " बहिलाउ" पर का प्रसाग समकाया है। १॥

संस्कृत- (२) यथा सत्तपुरुषाः तथा कनहाः, यथा नद्य तथा प्रतानि ॥ यथा पर्वताः तथा कोटराणि, हृदय ! सिद्यसे प्रिम् १ ॥ २ ॥

हिन्दी—जितने मञ्जन पुरुष होते हैं उनने ही ऋगड़े भी होते हैं। विननी निया हाता है, उतनेही प्रवाह मी होते हूँ, वितने पहाड होते हैं अतनी हो गुफाएँ भी हाता है, हमलिय ह हाय ग्रि खिल क्यों होता है ? इस विश्व में श्रुतुकूलताएँ श्रोर प्रतिकूनताएँ ता अवादि-श्रवन्त काल म अस्य होती ही श्रार्ष है। इस छुट में 'क्लह " के स्थान पर "चयल " पर प्रयुक्त हुआ है ॥ २॥

सस्कृत —(३) ये मुक्ता रतन निर्मि, व्यात्मान तटे चिपन्ति ॥ तेवा शखाना समर्गं क्षेत्रल फ़्रुत्कियमाणाः अमन्ति ॥ ३ ॥

हिन्दी —जो शाख रहनों के भड़ार रूप समुद्र का छोड़ कर के अपने आपका समुद्र के किनारे पर फेंक देते हैं, उन राखों की स्थिति आसुरय जैसी से जानी है, और वे सिर्फ दूसरों की फूक स आयान बरते हुए अनिश्चित स्थानों पर भटक्ते रहत हैं। इस गाधा में " अम्पुरय सक्षर्य " के स्थान पर "विहालु" पर का प्रयाग हुआ है॥ ३॥

सस्कृत (४)—दिवसै थर्जित साढ मृख! सचितु मा एकमिप प्रमम् ।। क्रिमपि भय तत् पतित, येन ममाप्यते जन्म ॥ ४॥

डिन्दी — यरे मूर्ख। जी कुछ भी प्रांत दिन तेरे से क्यामा नाता है उसकी दम, उसका उम्मीय कर खौर एक पेसे का भी सचय मत कर, क्योंकि खनानक ही दुछ भी भय (मृत्यु खादि) जा सकी है। इस छन्दें में "भय" पद का जगह पर, खबकें श्रमापा में "दूबकका " पर का अमीय क्यि। गया है। एस

सस्कृत (४)-स्फोटयतः यो हृद्यं व्यात्मीय = फोडेन्ति जे हिब्रडत अलगउ =

जा (दोमो स्तम) अपने खुर क न्दय वा हो) काइते हैं — विस्कोटित डोकर उमर आते हैं । इस गाया-चरण में सरकृत पद "आसीय" के बन्ते में " अपन्त " पद प्रदास्किया गया है ! (६) एकँक यद्यपि परयति हिरि: सुष्ट सर्वादरेगा। तथापि डब्टि यत्र कापि राघा, कः शक्नोति सर्वशीतुं नयते स्तहेन पर्यस्ते ॥४॥

िनी — यशिष हरि (भगवान् श्री कृष्ण) प्रत्येक को अन्हीं तरह से श्रोर प्ण श्रादर के माथ किते हैं, तो भी उनकी दृष्टि (नजर । जहाँ कहीं पर भी राग्यनानी है, वहीं पर जारर नम जाती है। श्रम्य हा है कि प्रेन म परिपूर्ण नेत्रों को (श्रपनी प्रियतमा से) दूर करने के लिये-(हटाने के लिये) कैत समर्थ हा है कि प्रेन सह श्रम्थ क्षा के लिये) कैत समर्थ हो दक्तर है ? इस श्रम्थ अनुभाका या है। श्रा

संस्कृतः—(७) विषये कस्य स्थितः १ योग्ने कस्य गर्वः १ संस्रेखः प्रस्थाप्यते, यः स्नगति गादम् ।६॥

हिन्दी — घन सर्वात्त के होने पर भी किपका (ग्रेमाकर्षण) रिथर गहा है ? ख्रीर योदन के होने हो मो प्रेमाइपए का गर्छ किसका स्थाई गहा है ? इसलिय बैसा प्रेम पत्र भना जाय, जो कि तत्ज्ञाल । प्रमाह रूप से—निरिधत रूप से—हृद्य की हिला सके —हृद्य की ख्राकर्षित कर सक, (ऐमा होने । स्वह विश्वतम शोग्र ही लीट ख्रावेगा)। यहाँ पर ' गाडम् " के ख्रार्थ में " निच्चटू, " शब्द लिखा । से ॥ ६ ॥

संस्कृत(८)—कुत्र शराधरः कुत्र मकरधरः १ कृत वहीं कुत्र मेवः १ द्र स्थितानामपि सज्जनाना भरति स्रसाधारणः स्नेटः । ७'।

हिन्दी। —कहाँ पर (कितनी दूरी पर) चन्द्रमा रहा हुआ है और ममुद्र कनौं पर अवश्यित है है तो भी समुद्र कन्द्रमा के प्रति क्यार-भाटा के रूप में अपना जेम पनिश्ति करता रहता है। इसो प्रकार अपन्य पत्ती परती पर रहता हुआ भी मेच को (बादल को)—नेवकर क अपना ममुग्याणा काशन कलाशन कामता है। हम घटनाओं को देख करके यह कहा जा मक्ता है कि अति दूर रहते हुए भी भवत पुरुष को प्रेम परसर में अमाबारण अर्थात अर्थीक हाता है। इस गांवा में " अमाबारण अर्थीत अर्थीक हाता है। इस गांवा में " अमाबारण ' सेंह ह स्थान पर अपनेश भाषा में ' अन्दृत् " शहद को देश किया गया है। अर्थ

संस्कृत (६)-कुञ्जरः श्रन्येषु तहम्येषु क्रांतुरेन घर्पति हस्तम् ॥

मनः पुनः एकस्या सन्तन्त्रयां यदि एन्झ्य परमाथम् ॥ = ।

हिन्दी — हाथी व्यवनी सृद को केवल फीड़ा यहा हा। र हा ब्राय श्लों पर र इता है। यदि पुत्र मध्य यात ही पूछते हो तो यही है कि चम हाथी का मन ता वास्तव में भिर्यण क 'यद्वधी नामक 'हैं पर ही क्षावर्णित होता है। इस छंद में मस्कत – यद 'कीतुकें व' स्थान पर ब्राध्य हा सपा में कें हुख' किया गया है।।।।। (१०) क्रीडा कृता अस्मामि निरचय कि प्रजन्यत ॥ श्रनुरक्ताः मक्ता अस्मान् सा स्यज स्वासिन् ॥६॥

ाह-दी – हे नाथ ' हमने ता मिर्फ रोल किया था, इसलिये आप ऐसा क्यों कहते हैं ९ स्यामिन् ! हम आप मे अनुराग रखते हैं और आप के मक्क हैं, इसलिये हे दीन द्याल ' हमाश परिस्य नहीं करें। यहाँ पर कीडा' के स्थान पर 'खेडू ≈ खेडू य' शब्द व्यक्त किया गया है ॥६॥

मस्कृत —(११) सरिद्धिः न सरोमिः, न सरोवरैः, नापि उद्यानवर्ने ॥ दशा रम्याः मपन्ति, मूर्खं! निवसिद्धि सुक्षनैः ॥१०॥

हिंग्नी - खरे वेथकूफ ! न तो नांद्यों से, न मीलों से, न तालावों से कौर न सुन्दर छुन्दर क से खयवा बगोवों से ही देश रमणाय हाते हैं, वे (देश) तो केवल सब्बत पुरुषों के निवाम करने हो सुन्दर खीर रमणीय हाते हैं। इस गाथा में 'रम्य' शब्द के स्थान पर 'रवरण' शब्द को प्रश्याि किया गया है ॥१०॥

सम्झतं ---(१२) हृदय ! त्वया एतद् उक्त मम श्रग्रतः ग्रतवारम् ॥ म्झटिन्यामि प्रियेण प्रवसता (सह) श्रह मण्ड ! श्रद्धतसार ॥११॥

हिन्दी —हे हृदय । तू निर्लंडन है और आइवर्य मय हंग से तेरी बताबद हुई है, क्योंिह तूने हैं आगे सेंकड़ों बार यह बात कहा है कि जब प्रियतम् बिदेश में जाने सर्गेगे तब में अपने आपको विशेष कर दूँगा अर्थात् कट जाउगा। विशेष कर दूँगा अर्थात् कट जाउगा। विशेष हिंदी हुई है, प्रेन्स किर में कट जायगा। वे उस्तात्म सेंवड़ों था निर्विक कह द्यं में बदल हुई है, प्रेन्स किर मा समय खान पर हृदय विशेष हुई है, प्रेन्स किर मा समय खान पर हृदय विशेष हुई है, प्रेन्स किर मा समय खान पर हृदय विशेष हुई है, प्रेन्स किर मा समय खान पर हृदय किर किर मा समय खान पर हृदय किर हुई है, प्रेन्स किर मा समय खान पर हृदय किर किर हुई है। इस पर हुई है, प्रेन्स किर मा समय खान पर हुदय किर किर हुई है। इस पर हुई है। इस ह

(१३) मस्कृत — हे मिद्रा 'मा विधेहि खली ध्मू — हे हेल्लि 'म मङ्गारि खालु — हे महेला है। भूठ मत बोला — श्रथा अपराध को मत डॉक । यहाँ पर 'सदी' अर्थ में 'हेल्लि' शब्द का प्रयोग किंग गया है।

(१४) मंस्कृत:—एका इटी पञ्चिमः रुद्धा, तेषा पञ्चानामिष पृथक् पृथक्-बुद्धिः ॥ भिगिनि ! तद् गृह कथय, कथं नन्दत् यत्र कुडम्य आत्मच्छन्दकम् ॥१२।

हिन्दी -- एक छाटो भी म्ह्र्यपदी हा श्रीर जिसमें पाँच (प्राणी) रहते हो तथा एत पाँचों ही हैं बुद्धि खलग श्रलग दग से विचरती हो तो हे चहिन ! बी ता, वह पर खानन्द्रमय कैसे हो सकना है, डा कि सम्पूर्ण कुटुम्ब हो (जहाँ पर) स्वद्यन्द शीति से विचरण करता हा । (यह क्यानक शरार सी हारार से सम्बन्धित पाँचों इन्द्रियों पर भो घटाया जा सकता है।) इस गाथा में 'पृयक् पथकू' खट्यय इ खान पर अवस्र रा माचा को दृष्टि से 'जुद्रा जुक्र' खट्यय को प्रस्थापना की गई है ॥१२॥

(१४) सस्कृत —यः पुनः मनस्येन व्याकुलीभृतः चिन्तयित ददाति न द्रम्म न रूपकम् ॥ रति वश अमण शीलः कराग्रोल्लालित गृहे ०व कुन्त गणयित स मृह ॥ १३॥

हिन्दों —वह महा मूर्ख है, जो कि मन में ही घबराता हुआ माचना रहता है थोर न दमहो देवा है थोर न राया ही। दूसरे प्रकार का महा मूर्ख वह है जो कि गण अथा मोह के वहा में हो कर घूमता रहता है और घर में हो भाने को लेकर हाथ के अप भाग में ही घूमाता हुआ के उन गणना करता रहता है। कि में दिन मान कर बात रहता है। कि में दिन मान कर बात के कि में दिन में दिन में दिन कि में दिन में दिन कि में दिन में दिन कि में मान कर बात है कि में दिन कि में मान कर बात है कि में दिन कि में मान कर बात है कि में दिन के मान कर बात है कि में मान कर बात है कि में दिन के मान कर बात कि मान कर बात है कि में दिन के मान कर बात है कि में दिन के मान कर बात है कि मान कर बात क

सरहत —िन्ति व्यक्ति बाद मूर्य । =िवेडि विदत्त उ खाहि बढ । हे मूर्ख । प्रति दिन कमाये हुए (बाय-पदार्थों) को खा। (कजूनी मत कर)। इस चरण में 'मूर्ख' शब्द बाचक दितीय शब्द 'वर' का अनुयोग है।

सर⁻त (१६)—नवा फापि विष-मन्यि = नयली क विसगरिठ≈ (यह नायिका) हुछ भ^ह हो (खनोखी हो) विषमय गाठ है इस गाथा-पाद में नूतनता थावक पद "नवा "के स्थाप पर अपश्रा मापा में 'नवली "पद का ब्यवहार किया गया है। पुल्तिग में "नयल " होता है स्त्रीर फीलिंग में "नवली " लिखा है।

सम्बन्धत (१७)-चलाम्या वलमानाभ्यां लीचनाभ्या ये राया दृष्टा वाले ! तेषु मकर-घजावस्कनः पतित अपूर्णे काले ॥ १४ ॥

हिन्ने -श्रो योजन सपन्न मन माती बालिका । तेरे द्वारा चचल श्रीर फिरते हुए (बल खाते हैं) होनों नेजों से जा (पुरुष) देशे गये है, उन पर उनकी) योजन-ध्रवस्था नहीं पाप्त हाने पर भी (योजन काल नहीं पक्ते पर भी) काम का येग (काम भावना) हठात-रोोग्र ही (बल-पूर्वक) श्रोजन काल है। यहां पर "शायता-श्रायक = हठात्-वाचक" मंहहत शहर " श्रवाकर " के स्थान पर साहेश प्रायता-श्रायक हठात्-वाचक" मंहहत शहर " श्रवाकर " के स्थान

सस्कृत(१=)'-पदि अर्घति व्यवसाय' = ह्युहु अम्बर् ववमाउ =

य[ि] ट्यीपार सफल हा जाता है। इस गाथा-चरण में "यदि" ऋष्यव के स्वान वर "खुडु " ^{कट्यव} को स्थान दिवा गया है। मस्कृत (१६)-गत म केमरी, भिनत बल निश्चिन्त हरियाँ री ॥ यस्य सनन्त्रिना हुकारेण, ग्रुखेम्यः पतन्ति तथानि ॥१५॥

हिन्दी — घरे दिरणे। वह मिंह (तो अब) चला गंधा है, (इसलिये) तुम निश्चिन हाकर जन को पीआ। जिस (मिंह से) सम्बन्धं रखने वाली (भयकर) गर्नना से हुँहार से (बान क लिय में ह में प्रहण किये हुए। घान के निनके (मा) मुर्चे से गिर जाते हैं, (ऐभी हुकार घाला मिंह ने अब चला गया है)। इस गाधा में "सम्बन्धिना" पर के स्थान पर अन्नन्ना भाषा में "केर — केरर" पर की अनुसन्ता समाने हैं। १४॥

संस्कृत -ष्यय भगना श्ररतदीया = श्रह भगा। श्रम्ह तला = यदि हगारे से सन्बन्ध रलन वाले भाग गये हैं ख़यवा मर गय हैं। इन गाथा-पाद में "सबव "वाचक श्रर्थ में "तला" पर का प्रयाग किया गया है। यों श्रमध्यरा भाषा में सबय-पाचक " अब में "वर खोर तल " दोनों प्रकार क शब्दों का ब्यवहार देखा जाता है।

सस्कृत (२०)-स्यस्थावस्थानामान्त्रपन सर्वोऽपि लोक 'करोति ॥' श्रातीनां मा मेंपी: इति य' सुजनः स ददाति ॥१६ ॥

हिन्दी - आनन्द पूर्वक स्तस्य अवस्या में रहे हुए मनुष्यों के नार्य तो प्रत्येक आत्मो बातयात करता हो है (और ऐसी ही रीति इस स्वार्थमय सभार को है), परन्तु दुलियां को जो ऐसी यात क्हता है कि " तुम मत हरों", वही सज्जन हैं। " अमय बचन " कहने वाला पुरुष ही इस लोक में सज्जन कराता है। इस गाया में " मा भैयों " के स्थान पर अवश्च रा भाषा में " महसीमडी " की आदेश-प्राप्ति को विधान समझता गया है ॥ १६॥

सस्कृत (२१): यदि रूच्यसे यद् यद्-दृष्ट तस्मिन् हृदय ! सुग्व स्वभाव ! लोहेन स्फुटता यथा घन (= तापः) सहिष्यतं तावत् ॥ १७ ॥

हिन्ने —क्दरे मूर्य-स्वमाव वाल हृद्य । यदि तू जिम क्रिस क्रो देवता है, उम उनमे श्रापिक अथवा मोह कान लग जाता है तो तुम्के उपी प्रकार म कृत्र छोर चाट महन कानो पहेगी, जिम प्रकार कि दरार पढे हुण-लाहे को " अपिन का तान श्रीर घन की चोटें " सहन कानी पहती हैं। इम गाया में संरहत-याम्यारा - "यद्-यद् रूप्ट, तत् तत् " के स्थान पर अपन्न रा-भाषा में "ब्राइट्टिया = ब्राइट्टियण" ऐमे पद रूप की आदेश प्राप्ति का उल्लेख किया गया है ॥ १०॥

इस सूत्र में इक्कीस देशज शन्दों का प्रयोग समस्ताया गया है, इनमें मतरह शक्तें का उल्लेच तो गाथाओं द्वारा किया गया है और शेष चार शब्दों का स्वत्य गाया वालों द्वारा प्रविति है। ॥ ४-४२ ॥ हुहुरु-घुग्र्घादय शब्द-चेष्टानुकरणयोः ॥ ४-४२३ ॥ 🕟

ष्रपश्र रो हुहुबदिय शब्दासुकरणे घुग्धादयस्चेष्टातुकरणे ययासल्य प्रयोक्तच्या ॥ मई जाणिजं सुद्धीसु ६उ पेम्म-द्रहि हुदृहत्ति॥ नन्निश्रचिन्तिय सपडिय निर्मिय नाम भडिति ॥१॥

धादि प्रहणात्।

खज्जह नउ कमरकोहि पिज्जड नउ पुष्टेहि ॥ एम्मह होह सुहच्छडी पिए दिहें नयसेहि ॥२॥

इस्यादि ॥

श्रान्जिनि नाहु महुन्ति वरि मिद्धस्या चन्देइ ॥ तादिजि विरहु गनमप्रेहिं मम्डु-घृग्विउ देर ॥२॥

श्रादि ग्रहणात्।। सिरि जर -खपडी लोग्रडी गील मणियडा न बीस।। तो नि गोहडा करानिया ग्रहर उद्र-वर्डम ।।४॥

इस्यादि ॥

अर्थ — खप्त रा भाषा में राध्नें के खनुकरण करने में खर्यात धरित स्वया खारान की नहन रने में 'हुहुठ' इत्यादि ऐसे राध्द विशेष बोने जाते हैं और चेटा के खनुकरण करन में खर्यात अपूर्ति यवा कार्य की नहन करने में 'छुत्य' इत्यादि ऐसे राध्द विशेष का उच्चारण किया जाता है। नयाहरण रूप में दो गई गायाबों का खनुवाद कर म या है —

सस्कृतः—मया झात र्मदयानि खह प्रेम-हरे हुदूरु गण्टं कृत्या ॥ केरलं खचिन्तिवा संपतिता त्रिप्य-नाः ऋदिति ॥१॥

हिन्दी-मोंने सोषा था खबवा मेंने समका था कि 'हुहुठ-हुहुठ' जब्द करके में पेम करी (पियवम-सबोग रूपी) बानाय में खुर गक्षा हुबकी लगाऊ गी, परन्तु (दुर्भाग्य में-) बिगा विचारे की सपानक ही (पठि के) विद्योग कभी नीका फट से (पर्शो से) खा समुश्वित हुइ।

'एति में खारि' शब्द मत्या किया गया है, इसस कर्य सहसा भी खतु रह ह वाने कर खारुति को परिवाटो भी समक्त लेना चाहिये, खेसे कि गोधा-सत्या हिश्रीय में 'कमरक' शब्द वर्ष 'पुट् शब्द की परया करक इस बात की पुष्टि यो गई है। बक्त गोधा का खतुकाद वो है — सस्कृतः — खाद्यते न कमरत्क शब्द करना, वीयते न षुट् शब्द करवा ॥ एवमवि भनति सुखासिका, प्रिये दृष्टे नवनाभवास् ॥२॥

हिन्दी — भियतम वो दोनों ख्राँका से देखने पर भी (पूर्ण वृत्ति का खनुभव नहीं होता है क्योंकि वह तृत्ति प्राप्त करने के लिये ख्रन्य खाद्य पदार्थों के समान) न ता 'कसरक-डसरक' शब्द करके लाग हा ला सरता है ख्रीर न 'घुट्-घुट' शब्द करक पीया हो जा सकता है। किर भी परम खानद धीर खरयधिक सुख का यों खनुभव किया जा सकता है। शा

चेष्टानुकरण के बदाहरण गाथा-सक्या नृतीय खीर चतुर्य में दिये गये हैं, जिनका मस्का बतु बाद सहित हिन्दी भाषान्तर क्रम से इस प्रकार है —

संस्कृतः-श्रद्यापि नायः मर्मेव गृहे सिद्धार्थान् बन्दते ॥ त्रावदेर विरद्दाः गवावेषु मर्केट-चेष्टां ददाति ॥३॥

हिन्दी — (मेरे प्राण् नाथ प्रियनम विदेश जाने की तैयारी कर रहे हैं और खानी वि सानी नाथ मेरे घर में ही (मगलार्थ) मिल-प्रभु को यदना कर रहे हैं, फिर भी विरह (जिनत दुःछ की हुँकार) (मन रूपी) खिड़ कियों में चन्दर चेष्टाओं को (शुग्व घुग्व जैनी पोड़ा-सूचक ध्वनियों को) प्रदर्शित कर रही है।। ३।। ' आदि' शब्द के महण करने से अन्य चेष्टा सूचक शब्नों का ममझण मी समस लेना चाहिये, जैमा कि गाया सख्या चतुर्य में ' उट्ट-बद्देल' शब्द का संमद किया हुआ हैं। उक्त गाया का अञ्जवाद यों है —

सस्कृतः-शिरसि जरा रागिडता लोम पुटी; गले मणयः न निंशतिः ॥ तथापि गोष्ठस्थाः कारिता भुग्धपा उत्थानोपवेशनम् ॥ ४ ॥

हिन्दी —इन सुन्नरों के मिर पर जोर्ण-रार्ण-(फरो ट्री) फंबली मात्र पड़ी हुई है छीर गर्न में सुरिकल से बीत फंब की मणियां वाली कंठो होगी, फिर भी (देखें। इनके खाक्रप के मीन्य के कारण से) इस सुग्वा हा'। (खाकर्षित होकर) कमरें में ठहरें हुए इन पुरुषों ने (कितनी बार) वर्ठ बैठ (इस सुग्वा को देखने क लिये) को है ? इस गायां में 'बेट्टा-अनुकरण 'के धर्य में 'बट्ट पर्टम ' नेते देशज शब्द का प्रयोग क्या गाया है। यो खबक सा-मापा में 'ध्वित के खनुकरण करने में छीर चेट्टा के खनुकरण करने में छीर चेट्टा के खनुकरण करने में खीर चेट्टा के खनुकरण करने में थीन के खनुकरण करने में थीन के खनुकरण करने में थीन के देशज शब्द का जाता हुआ देखा जाता है। ४-४२ है।

घइमादयोऽनर्थकाः ॥ ४-४२४ ॥

अवभंशे ध्रमित्याद्यो निषाता अनर्यकाः प्रयुज्यन्ते ॥

श्चम्मिष्ट पच्छापावडा पिउ कलहिश्चउ विश्रालि ॥ घह विवरीरी बुद्धडी होइ विगासही कालि ॥ १॥ श्रादि-ग्रहणात खाडं डस्यादयः॥

अर्थ — अपभ्र रा भाषा में ऐसे अनेक अव्यय प्रमुक्त होते हुए देसे जाते हैं, निनका कोई अर्थ म्ही होता है। ऐसे अर्थ-होन दो अव्यय यहाँ पर लिसे गये हैं, जो कि इस प्रकार से हैं, —(१) पई और (२) खाई। यों अर्थ हीन अन्य अव्ययों की स्थित को भी समस लेना चाहिये। उराहरण के रूप में पह ' अव्यय का प्रयोग पृत्ति में दी गई गोधामें किया गया है। जिसका अनुनाद इस मकार से हैं -

सस्कृत:—श्रम्ब ! पश्चाचाप: प्रिय: कलहायित: निकाले ॥ (नृस) विपरीता बुद्धि: भगति विनाशम्य काले ॥१॥

हिन्दी — हे माता । मुक्ते श्रह्मन्त परचात्ताप है कि मेंने समय और प्रसग का विचा विचार किये ही (कित-समय का खवाल किये विना ही) अपने पति से महादा कर हाला । सच है कि विनारा के समय में (निपत्ति आने के मौके पर) बुद्धि भी विपत्ति हो जाती है, उत्ही हो जाती है ॥१॥ इस गाया में श्रम्य इति क्यान से सम्य धर्म हीन श्रम्य इति क्यान से सम्य धर्म हीन श्रम्य क्यान से सम्य धर्म हीन श्रम्य क्यान स्वाप्त किया गया है। 'श्रादि' शब्द के क्यान से सम्य धर्म हीन श्रम्य क्यान से सम्य धर्म हीन श्रम्य क्यान से सम्य धर्म हीन श्रम्य क्यान से सम्य स्वाप्त के सम्य स्वाप्त के स्वाप्त के स्वाप्त के सम्य होना स्वाप्त के सम्य स्वाप्त के सम्य स्वाप्त के सम्य स्वाप्त के स्वाप्त के सम्य स्वाप्त हो। स्वाप्त के सम्य स्वाप्त है ॥४-४२४॥

ताद्रथ्यें देहिं-तेहिं-रेसि-रेसि-तर्णेणाः ॥ ४-४२५॥

अवभ शे वादथ्यें चीत्ये केहिं वेहिं रेसि गिं तथेण इत्यने पञ्च निवाताः प्रयोक्तव्याः ॥ होद्रा एँ६ परिहामढी यह मण करणहेँ देसि ॥ हउँ किज्जाउँ ता केहिं विश्र ! तुहुँ पुणु अमहि रसि ॥

एव तेहि रेसि मायुदाहायों ॥ वहुत्तगही तर्णेण ॥

अर्थ — 'ताइ वर्ष ' खर्यान् के लिये ' इस खर्य को प्रकट काने ये किये खराभ श-भाषा में निम्नोक्त वान खब्धव शारों में से किसी भी एक खब्बव शहर का प्रयोग किया जाता है। (१) केंद्रिं — के किये, (२) तेहिं — के लिये, (३) रेसि = के त्रिये, (४) रेसि = के लिये, खोर (४) तरोख — के लिये । केंद्राहरण क्रम स इस प्रकार है —

(१ १२मॅम्यार्थे स्व नीव-ऱ्यां कुरु = सग्महो नहि करि जीव द्य = देवलोक के रूचे जीव द्या को करें।

- (२) कस्यार्थ परिमह = कसु तेहिं परिगद्ध = किसक लिये परिमह (किया ताता है)।
- (३) मोचस्यार्थे दमम् कुरु = मोझ बहां रीक्षे दमु करि = माच के लिय इन्द्रिया का दमन करो।
- (४) कस्यार्थे त्यं अपरान् कर्मारम्भान् करोषि=कष्ठ रेसि तु हुँ खबर वम्मारम्भ वर्रात = विसक विये तु दूनरे कार्योरम करता है ?
 - (४) फस्यार्थे श्रतीफ = कामु त्रिण्ण श्रतिड=िक्सके निये मूठ ('बोलना है)। वृत्ति में श्रार्थ हर्षे गाथा का श्रतवाद यों है —

संस्कृतः — विट! एप परिहास श्रियः भण, फस्मिन् देशे १ श्रिक्तः चीखा तत्र कृते, त्रियः ! त्व पुनं श्रान्यस्या कृते ॥१॥

हिन्दों — हे नायक ! (हे प्रियतम !) इस प्रकार का मनाक ('पिरहास = वि तेर) विम दरा में किया जाता है, यह गुक्ते कहो। में तो तुम्हारें लिये चीए (दु:बी) होती जा रही हूँ खोर तुम पुन दिना खन्य (बी) के लिये (दु सी होते जा रहे हो) ॥ इस गाथा में 'के लिये' ऐमे खर्थ मे क्रम से 'कहिं' श्लोर 'रीसि' ऐसे दो ख़क्यय शब्दा का प्रयोग प्रदर्शित किया गया है।

(ं) महत्त्रस्य क्रते = बहुत्तखहो तथेख = बहुद्यन (महानता) क लिये । या शप ा इंडयप शब्द 'तेहि खीर रेसि' के दशहरणा की कराना भी स्वयमेव कर लेना चाहिय । ये झब्बय है, इमलिय इनमें विश्वकि वाचक प्रत्ययों की सयोजना नहीं की जाती है ॥ ४-४२४॥

पुनर्विनः स्वार्थे हु. ॥ १-४२६ ॥

श्रवभागे पुनर्धिना इत्येताभ्या परः स्तार्थे हुः प्रत्ययो मनति ॥ सुमरिज्जइ त बहाहुँउ ज बीसरड मणाउ ॥ जहि पुणु सुमरणु जाउ गउ तही नेडही नड नोउ ॥१॥

विश्व जुज्में न वलाह ॥

श्रमं —सूत्र-सन्त्या ४ ४२६ से प्रारम्य करके सूत्र संग्या ८४६० तक में स्थापिक प्रत्ययों की वर्णन क्यिया गया है। शम्य में निवमानुनार स्वार्थिक प्रत्यय की सयोजना होन पर भी मून श्रम्य में किना भी प्रकार की न्यूनाथिकता नहीं हुआ करती है। मूल श्रम्य वर्षों वा स्था ही रहता है। इस सूत्र में यह बतलाया गया है कि सरकृत मापा में चयतक्य 'पुनर् श्रीर बिना' अध्यय श्राप्तों से श्रम्थ श्राप्त करा में रूपान्तर होने पर 'हु' प्रत्यय की स्थायिक प्रस्थय में रूपान्तर होने पर 'हु' प्रत्यय की स्थायिक प्रस्थय में रूपान्तर होने पर 'हु' प्रत्यय की स्थायिक प्रस्थय में रूपान्तर होने पर 'हु' प्रत्यय की स्थायिक प्रस्थय में रूपान्तर होने पर 'हु' प्रत्यय की स्थायिक प्रस्थय में रूपान्तर होने पर 'हु' प्रत्यय की स्थायिक प्रस्थय में रूपान्तर होने पर 'हु' प्रत्यय की स्थायिक प्रस्थय में रूपान्तर होने पर 'हु' प्रत्यय की स्थायिक प्रस्थय में रूपान्तर होने पर 'हु' प्रस्थय की स्थायिक प्रस्थय में रूप म

'हु' में स्थित 'डकार' वर्ण इत् सहारु है, तदनुषार 'पुनर्=पुण' में स्थित 'अनस्य 'श्रकार' का लोप होने पर तस्यशात् स्थायिक प्रस्यय के रूप में 'उकार' वर्ण को प्राप्ति होकर 'पुणु' रूप बन जाता है। इसी प्रकार से 'विना' श्रव्यय शन्द में भी श्रन्स्य वर्ण 'श्राकार' का लाप होकर तथा ग्यार्थिक प्रस्यय रूप 'उकार' वर्ण की सयोगना होने पर इसका रूप 'विग्लु' बन जाता है। उदाहरण क्रम से यो हें —

(१) य विना पुन अवस्य मुक्ति न भवति=ज्ञमु विग्तु पुरा भिन्नु अवमें न होइ=जिसके बिना किर से अवस्य ही मुक्ति नहीं होती है।

इस उराइरण में 'पुन ' के स्थान पर 'पुगु' िखा हुआ है और 'िना' के स्थान पर दिगु' को जगड दी गई है। यों स्मार्थिक प्रत्यय 'दु=व' की प्राप्ति होने पर भी इनके अर्थ में कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ है। यों सर्वत्र समक्त लेना चाहिये। गाथा का खनुत्राद यों हें —

(१) सस्कृत:—स्मर्यते तद् बल्लम, यद् निस्मर्यते मनाक्॥ यस्य पुनः स्मर्ख जातं, गतं, तस्य स्नेहस्य किं नाम १ ॥१॥

isन्द्री —िज्ञम माधाजा मा विस्मरण हा नाने पर भी पुत्र समरण कर लिया जाता है, नो ऐमा स्नइ भी निय होता हैं, परन्तु निसका पुन स्नरण करने पर भी यदि उसे मूला दिया जाय तो बद्द 'स्नेट्ट नाम से क्रैसे पुकारा जा मकता है दिस गाथा में 'पुन' के स्थान पर स्त्रायिक प्रत्यय के साथ 'पुणु' श्रुव्यय का प्रयोग समक्राया है।

(२) बिना युद्धेन न बलामद्दै=विन्तु जुरुमें न बलाहु=हम बिना युद्ध के (सुल पूर्वक) नहीं रह मक्ते हैं। इस गाथा-चरण में 'विना की जगह पर 'विन्तु' खम्बय रूप मा प्रयोग किया गया है। ॥४-४ ६॥

अवश्यमो डॅ-डी ॥ ४-४२७ ॥

श्रवभ्रशेऽनरयमः स्नाथं हें ह हत्येती प्रत्यो मनतः । जिन्मिन्दिउ नायगु विस करहु जसु श्रविमहं श्रवहं ॥ मृलि विशहुह तु विशिहे श्रवमं सुफ्द पर्राण्ह ॥१॥ श्रास न सुश्रहि गुडच्छिश्रहि ॥

अर्थ —मंश्ट्रन-भाषा में उपल्या 'खबरवम्' खळ्य का खपभरा भाषा में क्यान्तर करने पर रेममें 'रमर्थिक' प्रत्यय के रूप में 'कें भीर क' ऐमें दो प्रत्ययों को मयोजना हुमा करनी है। रसर्थिक प्रत्यय 'कें खीर क' में रियत 'ठकार' वर्षा इसतार होने में 'खबरमम्≔खबर' में विवन खन्य 'खकार' बर्चे का बीर को जाता है और तत्वरपात् खबरियन इनन्त खबम्' खठ्यय में 'कें भीर क' दो मन से कामि होती है। जैस — द्रधरयम् = अवसे श्रीर अवस = अवश्य-इहर निश्चय। उदाहरण के रूप में प्रश्त गाथा का अनुराद'यों हें —

सस्कृतः — जिह्नेन्द्रिय नायक वशे कुरुत, यस्य अधीनानि अन्यानि ॥ मृते विनष्टे तुम्त्रिन्याः अवश्य शुष्यन्ति पर्णानि ॥१॥

हिन्दी — क्षिमके श्रधीन श्रन्य सभी इन्द्रियों रही हुई हैं ऐसी नायक-नेता-रूप-फिह्ना-इन्द्रिय को श्रपने वश में करा, (क्ष्यों कि इस को वश में करने पर श्रन्य सभी इन्द्रियों निश्चय ही वश मं हो जाती हैं)। जैसे कि 'तुन्चिनी' नामक उनस्रति रूप पौधे की जड नष्ट हो जाने पर उसके पत्ते हो श्रवश्य ही सुसु जाते हें-न्य हो जाते हैं। इस गाथा में 'श्रवश्य' श्रन्यय के स्थान पर 'श्रवसे' रूप का प्रयाग करके इसमें 'हें = एँ' श्रव्यय की स्थार्थिक प्रत्यय के रूप में सिद्धि की गई है। 'श्रवस' का पश्चरूप यों हैं —

सस्कृत —श्रवस्य न स्वपन्ति सुखासिकाया = श्रवस न सुश्रहि सुद्दिश्रश्रहि = अत्र ही (निश्वय ही) वे सुख शैय्या पर नहीं सोते हैं । इस गाथा-चरण में 'श्रवस्यम्' के स्थान पर 'श्रवम' रूप का प्रयोग करते हुए यह प्रमाणित क्या है कि 'श्रवस्यम्' श्रव्यय के रूपान्त्र, में स्वार्थिक प्रत्यय के रूप म 'हन्श्र' प्रत्यय की संयोजना होती है ॥ ४-४२७ ॥

एकश्सो डि ॥ १-१२८॥

श्रवभ्रं'शे एकशरशब्दात् स्मार्थे हि र्मवति ॥ एकसि सील-कलकि श्रह देवत्रहिँ पश्चित्रवाड ॥ जो पुणु सम्बद्ध श्रमुदिश्रहु,'तसु पश्चिर्ने कार्ड ॥१॥

अर्थ —'एक वार' इस अर्थ में फहा जाने वाला सख्तुत-अरुव्य 'ल का 'है। इसका रूपान्तर अपध्रश मापा में कान पर इसमें खार्थिक प्रत्यय के रूप में 'डि' प्रत्यय को प्राप्त होतो है। प्राप्त अत्यय 'डि' में 'डकार' इस्तहारु होने स 'एक्श = एक्स अथवा इक्कप' में रिश्त अन्त्य श्वर 'खकार' का साव हो जाता है और तस्त्रचान् प्राप्त हलन्त रूप 'एक' स्वया इक्कप् में 'डि= इ' प्रत्यय को प्राप्ति होडर स्यवहार-योग्य रूप 'एकसि अथवा इक्कि' को भिद्धि हो जाती है। जैसे —एक्श = एकिंभ बीर इकिंस = एक बार। गाया का अनुवाद यों हैं—

संस्कृत:-एकरा शीलकलिङ्क्तानां दीयन्ते प्रायिश्वानि ॥ य: पुन रागडयति श्रनुदितम, तस्य प्रायश्चित्तेन किम् ॥

हिन्दी - जिन व्यक्तियों द्वारा एक बार शील घट का खडन किया गया है, उनके लिये पायरि वत हम दंढ का दिया जाना हो के हैं, परन्तु जो न्यक्ति प्रतिदिन शील ब्रत का खण्डन करता है, उमके लिये प्रायश्चित रूप दह का विधान करने से क्या लाभ है ? वह तो पूर्ण पापा ही है। यहाँ पर 'एकश' के स्थान पर 'एकसि' शब्द रूप का प्रयोग किया गया है ॥ ४ ४°= ॥

अ-डड- इल्लाः स्वाधिक-क-लुक्च ॥ ४-४२६ ॥

श्रवश्रंशे नाम्नः परतः स्वार्थे श्र. इड इल्ल. इत्येते त्रयः प्रत्यपाः भानितः तत्सित्र-योगे स्वार्थे क प्रत्ययस्य स्वीपश्च ॥

विरहानल -जाल-करालियंड, पहिड पन्यि र्ज दिइड ॥ त्त मेलवि सन्त्रहि परियद्यहिं सा जि कियउ अग्गिइउ ॥ डह । मह कन्तही वे दोसडा ॥ उल्ल । एक कड़ली पश्चहि रूदी ॥

अर्थ -- संहत्त-भाषा में उपलब्ध सज्ञा शन्दों का खान्तर श्रवश्र श भाषा में करने पर उनमें स्वार्थिक प्रस्ययों के एता में तीन प्रत्ययों की प्राप्ति हथा करती है। जोकि क्रम से इस प्रकार हैं --(१) ख, (२) इड खीर (३) हुल । इन प्रत्ययों की प्राप्ति होने पर संस्कृत शब्दों में रहे हुए स्वार्यिक पत्यय 'क' का लाप हो जाता है और तत्वरचात ही इन 'श्र खया हड खयवा इल्ल' प्रत्ययों की स प्राप्ति सज्ञा-शब्दों में हो सकतो है। इह श्रीर इज्ज्ञ' प्रत्ययों में श्रवस्थित स्पादि 'खकार' इसमझक है। तन्तुमार सहा शब्दों में इनकी संयोजना करने के पय सहा-शब्दों में अवस्थित अन्त्य स्वर का लोप ही जाता है और बाद में रहे हुए हल-त सहा शब्दों मे इन 'ढढ न खढ' थोर 'उल्ला=चल्ल' प्रत्यर्थ का सयोग किया जाता है। यों स्वार्थिक प्रत्ययों में से किमो भी एक प्रत्यय को जोड हेने के बानन्तर प्राप्त संता शब्द के रूप में विमोक्त वाचक प्रत्ययों की सपटना की जाती है। जैसे --

- (१) भव-दोषी = भव दोसढा = जन्म मरण रूप समार-दोषों को । यहाँ पर 'दोष' शब्द में आह' मत्यय की प्राप्ति हुई है।
- (a) जीवितक = जीवियम्बड = जिन्दा रहना-प्राण घारण करना । यहाँ पर संस्कृतीय स्वार्षिक मत्यय 'क' का लोप होकर अवधारा भाषा में स्वार्थिक प्रत्यय के रूप में 'ख' प्रत्यय की प्राप्ति हुई है।
- (३) काय-दुटी = काय-कुढुली = शरीर रूपो मर्बपडो । इसमें 'डुन्स = एन्ल' प्रस्यय की प्राप्ति हुई है। यह 'बुटी' शब्द खीलिंग बाचक होने से प्राप्त प्रत्यय 'डुन्ज= तत्व में कीलिंग बावक दायय 'ई' ही मापि सुत्र सख्या ४-४३६ से हड है। पृच्चि में दिये गये उशहरणों का धनवाद क्रम में इस प्रदार है-

(१) मम्जूत:-- निग्हानल-ज्याला-क्रालित: पथिक पथि यद् दृष्ट ॥ तद मिलित्वा मर्जे: पथिकै स एव कत: श्रग्निप्र १॥

हिन्दा - नव क्सी एक बाजी को मार्ग मे विरह रूपी छग्नि की ब्यालाखा से प्रवित्त होता हुआ अन्य यात्रियों न देखा तो सभी यात्रियों ने मिल करके उसकी (मृत अवस्था को शप्त हुन्ना जान कर के) व्यन्ति क समर्पण कर दिवा ।

(२) मम कान्तस्य हो दायी = मह कन्तहा ने दोसडा = मेरे भियतम के दो दोप (हटियाँ) हैं। इस गाथा-चरण में 'नोसडा' पर सें 'डड = श्रड' इम स्वार्थिक प्रत्यय की प्रापि हुई है।

(३) एका सुटी पञ्चिम रुद्धा = एक कड़क्ली पञ्चेहि रुद्धी = एक । छोटी सो) मोंपड़ी पाँच से रुधी (रोकी) गई है। इस गाथा पान में 'क़रतली पद में 'डुल्ल = उल्न' हैसे स्मार्थिक प्रत्यय का सयी नना हुई है ॥ ४४६ ॥

योग जाश्चैपाम् ॥ ४-४३०॥ '

श्रवश्रं श्रे अहहबुद्धानां योगमेदेश्यो ये जायन्ते हडअ इत्यादय प्रत्ययाः ते वि स्तार्षे प्रायो मनन्ति ॥

डहय । फोडेन्ति जे हियहउ श्रपण्ड । श्रत्र 'किसलय' (१-२६६) इत्यादिना

यलुक् ॥ इल्लाय । पृहुल्लाउ चुन्नी होड सह ॥ डन्लाडड ।

सामि-पसाउ सलज्जु पिड मीमा-संधिहिं वासु॥ पेक्खिन बाहु-बलुल्लडा धम मेन्लइ नीमासु ॥१॥

यमामि । "स्पादी दीर्ष-हर्ना" (४-४३०) र्रात दीर्घः । एव बाहुबलुन्तहउ !

श्रत्र त्रयाका योग ॥

अर्थ —सूत्र-साथा ४ ४२६ में 'झ, डह, तुल्न' ऐसे तीन १रार्थिक प्रत्यय कहे गये हैं, नद्तुनार ऋवध्य श भाषा में सह्यार्क्यों में कभी कभी इन शस्त्रकों में से काई भी दो खबवा कमी कभी तीनों भा 🕫 साथ महाओं में जुदे हुए पाये जाते हैं। यों किन्हीं दो के शयश तीनों क एक साथ जुड़ने पर भी सहाधा ्रे के कार्य में कोई भा अन्तर नहा पड़ना है। इन प्रकार से तीनों स्वार्थिक प्रस्तया के योग स, ममस्त रूप स तथा स्वस्त रूप से विचार करने पर बुल स्मार्थिक पत्यथा की संत्या मात हो जाती हैं, जोकि क्रम से इप प्रकार निसी जा मनते हैं — (१) छ, (२) छड, (३) हुन्त, ४४) उटग्र, (४) हुन्तम, (६) बुन्तंबह, (७) बुन्नबढ्य । इनके प्रशहर ए इव प्रकार से हैं -

(१) ते वर्षका पन्या = ते प्रमा कन्तुन्लहा = वे कान पन्य हैं। इस खराहरेख में 'बुल्लहड' भत्यों की समाप्ति हैं।

- (२) तानि इदयकानि फ्तार्यानि = हियटन्ला नि वयत्य = वे हृदय कृतार्य (मफल) हैं। इममें 'बहुन्ल' प्रत्यय है।
- (1) नवान् सतार्थान् धान्ति = म्युल्लडम् मुखत्व धार्थः = नृतन सत-खर्यः (शास्त्र-तारार्यः) को पाण करते हैं। इम में तीनों स्वार्थिक प्रत्यय खाये हें जोकि इम प्रकार से हैं — हुझडढळा = उल्लड्ळ ॥ एति में खाये हुए उदाहरणों का स्टब्ल क्रम से इस प्रकार हैं —
- (१) स्सोट्यत यौ हृद्यं झारमीय = फोडेन्ति जे हिश्रहे इत्याग्य = जो (दोनों स्तन) अपने नुर फें हृत्य को हो विदारण करते हैं। इन चरण में 'हिश्नह उ पर में 'ढहश्र' मेसे दो स्वार्थिक प्रत्ययों की 'के साथ प्रांति हुई हैं। 'हृद्य' राष्ट्र में खबश्यित 'यकार' का सुत्र-सक्या १-२६६ से लोप हुआ है।
- (२) फहुण चूर्णी भवति स्वयं=चूदूल्लउ चुन्नी होइ मद्द=(हाय में पहिना हुआ) करुण अपने आप ही दुकटे दुकटे होक्द चूर्ण रूप हुआ जाता है । इस गाया-पाद में 'चुदूल्लट' पद में 'दुक्लम= च्ल्लध' ऐसे दो प्रत्ययों की प्राप्ति स्वार्थिर-प्रत्ययों के रूप में एक साथ हुई है ।

(३) मस्कृतः —स्वानि-प्रसाद मलञ्ज निय सीमासर्वा वामम् ॥ प्रेचय बाहुबल धन्या मुखति निश्वासम् ॥१॥

हिन्दी —कोई एक नायिका विशेष खपने भाग पति की इस मकार की स्थिति को देख करके खपने आपको घाय-स्वरूप समक्षती हुई परम शांति के गम्भीर निश्वण्य लेती है कि उमके पति के प्रति सेनापति को छपा-दृष्टि है, उसका पति लाज्ञावान् हैं, वह (श्युलेश के मोर्चे पर) देश के सीमान्त-भाग पर रहा हुआ हैं, श्रीर खपने प्रचट वाहु वल का प्रश्निन कर रहा है।

इस गाथा में 'बाहु-यलुल्लडा' पर में 'डुल्लडड = चल्लड' ऐसे दो स्वाधिक-प्रत्ययों की सभावि एर साथ प्रदिश्ति की गई हैं । 'डुल्ल + डड'-इन दोनों भत्यवों में खादि में अवधित प्रत्येक 'इकार वर्ण इससक है इमलिये इनका लोप हा जाता है और रोप रूप में उन्ल + खड' गहता है, तत्पश्चात् पुन सूद-सख्या रे-' क से 'एल' में स्थित अन्त्य 'खकार' का मो लोप होंकर तथा दोनों की मधि होंकर 'उन्लड' प्रत्यय के रूप में इनकी स्थिति बनी रह जाती है। 'बाहु-बलुल्लडा' पर में स्थित अन्त्य स्वर 'आ' की प्राति सूद-संत्या ४-३२० के कारण से हुई है। जैना कि उत्तमें उन्लेख है कि अपन्न श भाषा में सज्ञाओं में विमक्ति-वाचक प्रत्यवों की सवीनना होने पर प्रत्यवान्त-स्थित स्वर कभी हन्त्र से नीर्य हो जाते हैं और कभी दोर्ष से हन्त्र मी हो नाते हैं। ्रि बारु बर्जे च्यातुम् सुझारदः समुद्या के बता को । इस पर में 'हुला स्टर नथे । का कर-क स्टब्ट को यो तीनी हा पिंड करारे की दक्ष गृह कागर विगित सह या गई है। हीन न्यायिक प्रत्यक 'को में हिन्सीकिय प्रदेश हो को झोराना होने से सकत लोग हो गया है। एशि ।

स्त्रियां नद्दन्यद्दीः ॥ १-१३१ ॥

अरकर् किया वर्षेत्रकेमाः आसत्-स्य-ह्योक्त-प्रत्यानंग्यो ही। प्रययो मत्।

रक्ति हिट्टी गोरही, हिट्टी मन्तु निवन्त ॥ कोद्वरामेर्डे कञ्चक्रा सिंहन्यार्थ करन्त ॥१॥

रह हुद्दी स्प्रीत स्ही र

- (१) जैसे -गौरी=गोर+इड=(सह। नर्द-गोरही=पती।
- (२) कृटी=बुडी+हुन्ल+इं=बुडुल्ली=भ्रेंपरा।

पूरी गाया का अनुवाद वीं हैं --

संस्कृतः—विचक ! दृष्टा गीरी ? दृष्टा, मार्गमवलोकपन्ती ॥ अधुच्छ्वासै: कृञ्चुर्क तिमितोद्वानं (भाद्र शुप्क) दुर्वेती ॥

हिन् । — विदेश में खबस्थित काई विगदी मानी खन्य यात्री से पूरता है कि-'बार मुनाडिं।
हमा गुमने मेरी पर्शी को देला था १ इस पर यह इसर देता है कि-'दा, देली थी। वह उस मार्ग इ स्वश्वेशी समा पर देख रही थी, जिस (मार्ग) से थि गुम्हारे खागमन को सम्मावना थी। गुम्हारे विशे श्वेद कापा असू अस से खपनी छंचुडी को भीग रही थी तथा पुन वह मोगों हुई अंसुकी इसके उन्हें अंस की (गरम खासान्छवास से सुमता भी जाती थी। केमा में मैंने मुम्हारों गोंग्डो = पर्वे को दका था।।१॥

(र) एका क्टी पद्मामि कदा = एक कुरुएली पद्मादि कदी - एक छोटी सी मॉपड़ी और वह भी गाँव के द्वारा कथी हुई हैं।। १ १३१।।

थान्तान्ताडुडाः ॥ ४-४३२॥

श्राभ्रशे स्त्रियां वर्तेमानादप्रत्यणान्त-प्रत्ययान्तात् डा प्रत्ययो मवति ॥ व्यववादः ॥

पिउ भाइउ सम वत्तरी ऋगि कन्नरह पहत्र॥ तहा विरहही नासन्त श्रही धुलडिश्रा वि न दिहू ॥१॥

अर्थ — श्रवध्न श भाषा में स्त्रीलिंग में रहे हुए महा शब्दों में स्वार्थिक प्रत्यय लगने के परचात (फीलिंग-बाधक प्रत्यय) हा = छा' प्रत्यय को प्राप्ति (भी) होती है। 'हा' प्रत्यय में अवस्थित 'हकार' वर्ण इत्मज्ञक होन स स्वार्थिक प्रत्यय से संवोजित खीलिंग शब्दों के श्वन्त्य स्वर का लोग होकर तत्पश्चात् ही 'श्रा' प्रत्यय जुड़ता है। यह 'हा=न्ना' पर्यय चपरोक्त सूत्र-सख्या ४-४२१ के प्रति व्यपपाद-सूचक स्थिति षाला है। जैस ---

- (१) बार्लिका = बत्तिहिन्ना = बात ।
- (२) पुलि = पुलिख्या = युलि-रज्ञ हण । इन उदाहरणों में 'डा = आ' प्रत्यय की संप्राप्ति देखी बाबी है। गाथा का पूरा श्रनुवाद यों है -

सस्कृत:-प्रिय: श्रायात:, श्रता वार्ता, ध्वनि: कर्षे प्रविष्ट: ॥ तस्य विरहस्य नश्यतः, धृत्तिरपि न दृष्टा ॥१॥

हिन्दी - प्रियतम प्राणपति लौट बाये हैं. (ऐसे) समाचार मैंने सुने हैं। सनकी खावाज मो मेरे कानों में पहुँची है। (इस भकार की परिस्थिति उत्तक्त हाने पर) अनके विरह से उत्पन्न हुए दूल के नाजा हो बाने से (अब उस दुःख की) घृति भी (अर्थात् सामान्य अशा भी) दृष्टि गाचर नहीं हो रहा है। (अब वह द'ल असतया शान्त हो गया है) । ४४३२॥

घ्यस्येदे ॥ ४-४३३॥

श्रमभ्रशे स्त्रियां वर्त्तमानस्य नाम्ना योकारस्तस्य श्राकारे प्रत्यये परे इकारो भवति ॥ भूलडिया नि न दिहु ॥ स्नियामित्येव । भूति कन्नडर पर्द्र ॥

भर्थ - अपन्त्र श भाषा में खीलिंग वाल सज्ञा शब्दों के अन्त मे अवस्थित 'अकार' को 'आ' भत्यम की प्राप्ति होने के पूर्व 'इकार' वर्ण की प्राप्ति हो जाती है। अर्थात अन्त्य श्रकार 'श्रा' के पहिने

'इकार' में बदल जाता है। जैसे — घृलि = धृलि + ठड = चूलड, घूलड + चा = धूलडिया। यहाँ दर 'युलड' राज्य म अन्त्य 'खकार' को 'खा' प्रत्यय की प्राप्ति होने दर 'इकार' वर्ण रो प्राप्ति को गई है। पूर गाथा-चरण के लिये सुन-सर्वा ४-४३३ देखें।

पत्रन —सृत्ति में ऐमा क्यो लिखा गया है कि-श्रीलिंग वाले श^रा में हां 'श्रकार' की 'श्रा' प्रत्यय को प्राप्ति के पूर्व 'इकार' वर्ण की प्राप्ति होती है ?

उत्तर --यदि म्त्रीलिंगवाले राटरो के जातिरिक पुल्लिंग चयत्रा नवुमकलिंग वाले राटर हांग हो उनमें अवस्थित अन्त्य 'खकार' की 'इकार' की शास्ति नहीं होगी।

जैस — ध्विन क्लों प्रविष्ट = कुणि क्लाउइ पहटू = माधाज कान में प्रीयष्ट हुई। यहाँ पर 'क्लाइ' शब्द में व्यन्त्य 'श्रकार' को इकार की प्राप्ति नहीं हुई है ॥ ४ ४३३ ॥

युष्मदादेशीयस्य डारः ॥ ४-४३४ ॥

श्रवम्र हो युष्पदादिस्यः परस्य ईव प्रत्ययस्य डार इत्यादेशो मनति ॥ सदेसें काइ तुहारेण, ज सङ्गहो न मिलिज्जह ॥ सहस्रोत्वरि पिएं पाणिएस पित्र ! पित्राम कि स्टिंगड । १॥

दिक्कि श्रम्हारा कन्तु । दिहिणि महारा कन्तु ॥

अर्थ —सस्हत-मापा में 'बाला' खर्ष में 'ईय' प्रत्यय को प्राति हुझा कानो है, यह 'इव' प्रत्यय 'इम, तुम, में, तू. वह और ये इन पुरुष पोषक सर्वनामों के साथ में जुदा करना है और ऐमा होने पर 'हमारा, तुम्हारा, मेरा, तेरा उतका और उनना' ऐमा द्र्य में खप्त प्रतिश्वनित होना है। यों इस अर्थ में खप्त प्राप्त में देस 'ईय' प्रत्यय क स्थान पर नवगेल पुरुष योगक सर्वनामों के साथ में 'खार' प्रत्यय को खादिश प्राप्ति होती है। पास्त पत्थय 'खार' में ख्रवश्यन जाद 'हनार वर्ण इसीहण होने से उन पुरुष योगक सर्वनामों में स्थित खन्त्य स्वर का लाप हो जाता है और तत्यवात ही रोप 'हे हुए उन हलन्त सर्वनामों में 'छार=खार' प्रत्यय की मयोजना हुखा करना है। वैसे —खरमाणम्= खम्हारडें=हमारा । युप्तदीयम् = तुन्हारकं=हमारा । युप्तदीयम् = तुन्हारकं=हमारा । सरीयम्= खम्हारडें=हमारा । स्वरीयम् = सन्हारवं=मेरा । साथ का कन्नाह यों है —

सस्हतः—सर्देशेन कि युष्पदीयेन, यर्सगाय न भिल्पते॥ स्वप्नान्तर पीतो पानीयेन, प्रिय ! विपामा कि छिपते॥१॥ हिन्दा - तुन्हारे संदेशे से क्या (लाभ) है ? जविक (मदेशा गात्र में ला) तुन्हारे समागम की प्राप्ति (परश्रर में भिन्ने से होने वाले लाम की प्राप्ति तो) नहीं होती है । जैसे कि हे प्राप्यपति भिय- तम ! स्वत्म पत्र पत्र के स्थान वह में स्वत्म पत्र के स्थान पर करते से क्या प्राप्त भित्र के स्थान पर प्राप्त भी मां ती पहि है ॥शा

- (२) परंप खरमदीयम् फान्तम् = दिक्तिः खन्दारा वन्तु = हमारे वित को देखो । यहाँ पर भी 'खम्मनयम्' के स्थान पर 'खन्दारा' पर वो प्रस्यावित करके 'खार = खार' प्रत्यय को सिद्धि की गई है ।
- (३) भागिति ! श्रास्तदीय चान्त =विहिश्च ! महाग कन्तु = हे बहित ! मेरे पति । इस उदाहरण में 'स्वारा' पद में 'खार' प्रत्यय खाया हुआ है । यां सर्वेत्र 'ढार = खार' प्रत्यय की स्थिति को समक्त लेना विवे ॥ ४ ४३४॥

अतोर्डेच्ख∙ ॥ ४−४३५ ॥

श्रवश्ररी इद-कि-यत्-तद्-एतद्भ्यः परस्य अतोः प्रत्ययस्य डेनुल इत्यादेशो भगति ॥ श्नुलो । केनुलो । तेनुलो । तेनुलो । पनुलो ॥ -

अर्थ — सरकृत-मर्यंताम शब्द 'इदम्, किम, यत्, तत् थोर एतत्' में जुडने वाले परिमाण्-वाचक प्रस्य 'श्रतु = श्रत्' क स्थान पर अवश्ररा भाषा में 'डेतुल' प्रस्यय की आदेश-भामि होती है। आदेश माम प्रस्य 'डेतुल' में 'डकार वर्ण' इत्सबक है, तरतृतार इस 'डेतुल = एतुल' प्रस्य की प्राप्ति होने के पूर्व उक्त मर्यनारों में रहे हुए खन्त्यय हलन्त व्यञ्जन का तथा ज्वास्त्य स्त्रर का लोग हो जाता है श्रीर तस्त्रण्यात् हो गेग रूप से रहे हुए हनन्त शाव्दों में इम 'एत्तन' प्रस्यय की सप्राप्ति होती है। जैसे कि —(१) इयत् = व्युलो = इतना। १२) कियत् = केतुलो = कितना। (३) यावत् = जेतुलो = कितना। (४) तावत् = तेत्तुलो = इतना श्रीर (४) प्रतावत् = एतुलो = इतना। ४४३४॥

त्रस्य डेत्तहे ॥ ४-४३६ ॥

श्रपभ्रशे सर्वादे: सप्तम्यन्वात् परस्य त्र प्रत्ययस्य डेत्तहे इत्यादेशो भवति ॥.

एसहे तेसहे बारि घरि लच्छि निसंग्ठुन धाड ॥ पिश्र-पत्रमद्भार गोरडी निच्चल कहिं नि ठाड ॥१॥ अर्थ —सस्कृत भाषा में उपलम्य सबेनाम शन्तों में मसमी बोधक जा 'त्रप्' प्रत्यव लगता है, उन 'त्रप्' प्रत्यय के स्थान पर श्रवधश भाषा में डेक्क्ष्टे प्रत्यय की व्यादेश प्राप्ति होती है। प्राप्त प्रत्यव 'डेक्क्ष् में श्रविश्यत 'डकारयण्' इस्तवाबाला है, तद्युनार इस 'डेक्क्ष्टे' प्रत्यय की सप्तामि होने के पूर्व सर्वनाम शन्दों में स्थित श्रन्त्य व्यञ्चन मा श्रीर उपान्त्य स्वर का लोग हो जावा है श्रीर तत्वरवात् ही इस 'डेक्क्ष्टे प्रत्यय का सयोग हाता है। जैसे —

(१) सर्वत्र=सन्वेत्तहे≈सब स्थानों पर I

(२) क्रुन=येत्तहे = वहाँ पर।

(३) यत=जेत्तहे=जहाँ पर।

(४) तत्र = तेत्तहे - वहाँ पर।

(४) अत्र = एत्तहे = यहाँ पर ।

गाथाका अनुवाद यो हैं —

संस्कृतः--- अत्र तत्र द्वारे गृहे क दभीः विसप्छता माति॥

प्रिय-प्रश्रप्टे गाँरी निथला कापि न तिष्ठति । १॥

मैं में हो खरिसर प्रमितवाली जहनी भो घर-घर में और द्वार द्वार पर यहाँ बहाँ घूनती रहती है। इन गाया में 'खत्र, तन' शब्दों के स्थान पर 'एसहे और तेत्तहे' शम्में का प्रयोग करते हुन 'त्रव' प्रत्य हे स्थान पर खादेश-पाल प्रत्यय देत्तहें = एसहें 'की माधना की गई हैं। इस 'देत्तहें = एसहें' प्रत्य की मर्प नाम शब्दों में संप्राध्नि होने के परवात् ये शब्ध खब्य रूप हो जाते हैं, यह बात ब्यान में रहनी साहित्र। ॥ ४-४३६॥

हिन्दी - जैसे पित से भ्रष्ट हुई की कहीं पर मी स्थिर हो कर निश्चल ऋप से नहीं ठए ता है।

स्व-तलोः प्पणः ॥ ४-१३७ ॥

श्रवस्र में स्व तलां: प्रत्ययो: प्यण इत्यादेशों मवति ॥

वहृष्पशु वरि वावियह ॥ प्रायोधिकारात् । वहृचलहो विरोण ॥

शर्य - मंयकार ने अपने सरकृत व्यावरण में (हेन० ८-१ में) भाष-वावर अर्थ में 'रा चीर तसं प्रत्यवों की प्राप्ति का संविधान किया है, बन्हों 'रब चीर नरा' प्रत्यवों के स्थान पर अपन्न रा प्राप्त

म 'प्पण' प्रस्तप को कादेश प्राप्ति हानी है। जैसे —महत्वं=महाराणु=मद्रना-गण्डनता। (श्) महत्त्वं पुन' प्राप्यते=पटुष्पणु परि पाविद्यह=यद्गारा तमी प्राप्त हिया सा सकता है। हा बहाहरखों में 'पर्व क स्थान वर 'त्यल' प्रत्यय को प्रावाधित किया है। आवध्य द्रा भाषा में "प्रतेक तिवय ऐसे हैं, लोकि 'माय' करके लात हुद्धा करते हैं, तातुवार 'त्यल' प्रत्यय के स्थान वर प्राय करके 'त्तल' प्रत्यय (२-१४४ के खतुवार) भी आयो करता है। जैसे —(१) महत्वम् = महत्तत्त = महत्ता-सन्त्रतता।(२) महत्त्वस्य कृते = वक्ष्तलही तस्तेल = वक्ष्तलही वस्तेल = वक्ष्तलही = वक्ष्तलही = वक्षति = वक्ष

तव्यस्य इएववउं एववउं एवा ॥ ४-४३=॥

श्रवभ्रमो त्वय प्रत्ययस्य इएववउं एवाउ एवा इत्येते त्रय श्रादेशा भवन्ति ॥

एउ मृषहेष्विणु भुं मह जह प्रिंउ उन्वारिज्जह ॥ महु करिएन्वउ किं पि ग्रांवि मरिएन्यउ पर देज्जह ॥१॥ देसुचाडणु तिहि–कढणु घण-वृष्टणु ज लोह ॥ मजिट्ठए श्वद्दरचिए सन्यु सहेन्वउ होह ॥२॥ सोएवा पर वारिश्रा, पुष्फर्नाईहिं समाणु ॥ जग्मेवा पुणु को घरह, जह सो वेउ पमाणु ॥३॥

भर्थ —'चाहिये' इस खर्थ में सस्कृत मापा में 'तन्य' म्त्यय की प्राप्ति होती है, इस खर्थ में प्राप्त होने पाले 'तन्य' प्रत्यय के स्थान पर अपन्नश मापा में तीन प्रत्यवों की खादेश प्राप्ति हुन्ना करती है, जीकि क्रम से इस प्रकार हैं —

- (१) ६पट्यत, (२) एटवड खोर (३) एया। जैसे —क्तंब्यम्=करिएब्बड करेब्यड खोर करेबा=करना चाक्ष्ये। तोनों प्रत्ययों को समकाने के लिये धृत्ति में जो गाथाएँ दी गई हैं, उनका खानुबाद कम से यों हैं —
 - (१) सस्कृतः—एतद् गृहीत्वा यन्मया यदि प्रियः उद्वार्यते ॥ मम कर्तव्यं किम्पि नापि मर्तव्य पर दीयते ॥१॥

हिन्दी —(नोई सिद्ध पुरुष विशेष अपनी विद्या की सिद्धि के लिये किसी नायिका विशेष की धन स्वादि देकर उसके बदले में बालदान के लिये उसके पति की लेना चाइता है, इस पर वह नायिका कहती है कि —) यदि यर (घन-संपत्ति) प्रहण परके में अपने पति का परित्याग कर देती हैं तो किर मेरा इस भी कत्त्र य शेष नहीं रह जाता है, सिवाय इसके कि में मृत्यु का आर्किंगन कर लें. । अथान तरास्रात् सुक्ते मर जाना ही चाहिये। इस नाया में 'कर्चक्य और मर्तक्य' पदो में आये हुए 'तक्य' परव्य कर्क्ष पर खपभ्र रा भाषा से 'इएटवर खादेश माप्त प्रत्यव का प्रयोग दिया गया है और ऐपा करते हुए 'ईर्र एठवर्ज और सरिएटउट' पदा का निर्माण किया गया है ॥१॥

सस्हतः—देगोच्चाटन, शिद्धि-कथन, पन-कुट्टनं यद् लोके ॥ मिल्रष्टवा श्रतिनक्तया, सर्व सोडव्य मवति ॥२॥

हिन्दी — मिन्छा नाम याला एक पीचा होता है, जोकि श्रत्यधिक लाल वर्ण पाला होता है बोर इम लालिमा के कारण में हो वह जम साधारण द्वारा 'खाकर्पित किया जाकर सर्व प्रयम को जह मून से हो उपाड़ा जाता है खोर तरप्रचान् श्रमिन पर प्रयास के रूप में खून ही प्रकाया जाता है, एनं इसके बार 'रग प्राप्ति क लिये' लाहे के भारा धन से कूटा जाता है, या श्रम्की रक्त वर्णता के कारण से उसे सम्बद्धन सहन करन योग्य स्थिति याला बना। पड़ना हैं।

इस गाया में सरहत पर 'सोडज्य' के स्थान पर खपन्न श-भाषा में 'महेन्वड' पर का प्रथाग कात हुए यह समम्काया गया है कि 'तच्च' प्रस्थय के स्थान पर खपन्न श भाषा में द्वितीय प्रस्थय 'एन्वर्ड' का खाडेरा प्राप्ति हुई है ॥२॥

सस्कृतः — स्विविच्य पर वारितं पुष्पवतीमिः समान्म् ॥ जागरितन्यु पुनः कः धरति ? यदि स वेदः प्रमाणम् ॥३॥

हिन्दो — शतुमती स्त्रियों के माथ 'मोता चाहिये' इतका निषेध किया गया है। तो किर ऐवा भीत हैं ? जिमको जागता हुआ रहना चाहिये। इतके लिये येद ही अभाए स्वरूप है। इन गाया में 'स्वित्तस्य श्रीर चागरितव्यं वहों में काय हुव 'तव्य' प्रस्थय क स्थान वर श्रवस्था माया में हताय प्रस्थय 'ग्या' का अयोग करते हुए 'भावता और जगोत्रा' वर स्था का निर्माण किया गया है। ।दे।

यो मंस्कृत-प्रत्ययं 'तस्य के स्थान पर अपश्चम मापा म उप प्रकार से तीन प्रत्यया की खारेत प्राप्ति भी स्थिति को ममफ लेना पाश्चि । 'चाहिये' ध्यर्थक इम इन्दर्न का मंस्कृत व्यावरण में 'बिपि इन्दर्न' के नाम में उत्तिल निया जाता है। अभेजी म इसकी (Potential Passive Participles) वर्षो हैं ॥ ४ ४३=॥

—र्यत्य इ–इउ–इवि–श्रायः ॥ ४–४३६ ॥

श्रपश्चेरी क्त्या प्रस्पपस्य इ इउ इति श्रवि इत्पेते चत्यार थादेशा भवन्ति ॥ इ ।

हियाता जह वेरिया, घणा तो कि व्यक्ति चडाहु॥ श्रमहाहि वे हत्थाता जह प्रशु मारि मराष्ट्र ॥ १॥ इउ । गय-घड भन्जिउ जन्ति ॥

इवि ॥ रक्सइ मा जिस-हारिगी, वे कर चुम्बिन जीउ ॥ पदिविम्बस-मुंजाल जलु बेहिं स्रहोडिस वीउ । २॥

श्रिम्।। पाह विछोडिन बाहि तुरुं, हउ तेवँड को दोस्।। हिश्रम-ष्ट्रिउ बड् नीसरहि बाण्उ मुझ सरोस्।। ३॥

भर्य — 'करके' इस धर्य में मन्द्रन्य फुदन्त का विधान होता है। यह फुदन्त विश्व की सभी धर्यांचीन चीर प्राचीन मापाओं में उपलम्प ई। सरकृत खीर अपभ्र स खादि भाषाओं में भी नियमातुमार इसका चरिनद्र है। सद्भुसार सरकृत भाषा में इम अर्थ में 'क्स्वा' प्रत्यय का सविधान होता है और अपभ्र स मापा में इस क्र्स्वा' प्रत्यय के स्थान पर खाठ मत्ययों को आदेश प्राप्त होती है, इन आठ
प्रत्यों में से पार प्रत्यों की व्यवस्था तो इसी सूत्र में की गई है और रोप चार अस्यों का मविधान
प्र-सक्या ४-४४० में प्रत्यु-रूप से किया गया है, इसमें यह कारण है कि ये रोप चार प्रत्यय समय
परन्त में भी अपुक्त होते हैं और हेस्थ-जुदन्त में भी काम में आते हैं, यो उनकी स्थिति उमय रूप वाली
है इसिलय उनका विधान प्रथक सूत्र को रचना करके किया गया है। इस सूत्र में समय-कुदन्त के अर्थ में
जिन चार प्रत्यों की रचना को गई है, वो इस से इस एकार हैं—

- (१) इ. (२ इ.३, १३) इबि छीर (४) छाबि ॥ जैसे एत्या= (१) विरे, (२) करिड, () करिबि जार १४) वरिज=करके । (२) लब्ध्या=(१) लिहि, (२) लिहिर, (६) लिहिब और (४) लक्ष्य-जास करक-पा करके । पृत्ति में चारों प्रत्ययों को समस्ताने के लिये चार गायाएँ उद्घत की गई हैं, उनका छनुराद क्रम म यों हैं —
 - (१) मस्कृतः हृदय ! यदि वैरिको धनाः, तत् कि अभ्रे आरोहामः ॥ अस्माक द्वाँ दस्तौ यदि पुनः मारियत्वा भ्रियामहे ॥१॥

हिन्दी —हे हृत्य ! यदि ये मेघ (बादल-ममूह) (विरह-दु स बस्वादक होने से) श्यु रूप हें तो क्या इ हे नष्ट करने के लिये जाकाश में ऊपर चर्चे ? छरे ! हमारे भी दो हाय हैं, यदि मरना ही है तो प्रथम श्यु को मार करके पीछे हम गरेंगे ॥१॥ इम गाया में 'भारवित्या' पद के स्थान पर 'मारि' पद का बपयाग करते हुए 'क्स्वा' प्रस्थय के छार्य मे छ श्रुश्च में 'ह' प्रस्थय का प्रयोग सम्काया गया है।

(२) मस्कृत: —गज-घटान् भिरमा गरुझन्ति = गय घड भविजव जन्ति=हाथियों के समृद्द की भेद कर क जाते हैं। यहाँ पर 'भिर्ना' के स्थान पर 'भविजन' जिल करके द्वितोय प्रस्थय 'इन' का स्थरूप प्रदर्शित किया गया है। पर श्रापध्य रा मापा में 'इएव्यव चार्यरा मास प्रत्यय का प्रयोग किया गया है श्रीर ऐमा करते हुए '‡'र एव्यव श्रीर मरिएव्यव परा का निर्माण किया गया है ॥१॥

मस्कृतः—देगोच्चाटनं, शिष्ति-कथन, धन-कुट्टन यद् लोके ॥ मुख्यिया श्रीतरक्तयाः सर्वे मोहन्य मुब्ति ॥२॥

िनदी — मॅलिया नाम वाला एक वीचा द्वाता है, जोकि श्रद्यविक लाल वर्ण वाला होता है चौर इन लालिमा के फारण स हो वह जन माधारण द्वारा 'श्राकर्षित किया जाकर मर्व प्रयम ना जड़ मून म हो उपाड़ा जाता है श्रोर तरस्पान् श्रमिन पर प्रयास के रूप में खून ही प्रकाया जाता है, एवं इमरु सार 'रंग प्राप्ति के लिये' लाहे के भारा घन स पृष्टा जाता है, यो श्रपनी रक्त वर्णना के कारण से उसे मय इस

इस गाथा में सरहत 17 'सोडट्य' के स्थान पर खपभ श-भाषा म 'सहेट्वर' पर पा प्रयाग क'ने हुए यह समकाया गया है कि 'तट्य' प्रत्यक्ष के स्थान पर खपभ्र श भाषा में द्वितीय प्रत्यय 'एटरेड' की प्यादेश प्राप्ति हुई है ॥२॥

सस्कृतः — स्वितृव्य पर वाहितं पुष्पवतीमि समानम् ॥ जागरितव्य पुनः कः धरति ? यदि स वेदः प्रमाणम् ॥३॥

सहार करने योग्य स्थिति बाला बनना पहना है।

हिन्दी —ऋनुमती स्त्रियों के माथ 'सोना चाहिये' इसका निर्णय क्या गया है। नी किर ऐना भीन है ? निमको जागता हुआ रहना चाहिये। इसके लिये बेंद ही अनाण स्वरूप है। इन गाया में 'स्विष्तन्य खीर जागरिनव्य' पर्नो में खाय हुत 'तव्य' प्रत्यय क स्थान पर खरश्चरा प्रापा म गृतीय प्रत्यव 'प्या' का प्रयाग करत हुत 'नोएवा खीर नमोवा' पश्न्हर्या का निर्माण स्थि। गया है।।।।।

यो संस्कृत-प्रत्य 'तत्व के स्थान पर ध्यप्रश्न मापा में उक्त प्रकार से तीन प्रत्यों की आहेरा
प्राप्ति की स्थिति को समक्त लेना चाहिये। 'चाहिये' श्रयंक इम श्रदन्त भा तस्तृत व्यावरण में 'विषि
श्रदन्त' के नाम में उन्लेख विया जाता है। श्रमंत्री में इनकी (Potential Passive Participles) पर्दें।
हैं ॥ ४ ४३- ॥

र्पत्र इ−इउ-इवि-ध्यवयः ॥ ४-४३६ ॥ °

श्यपभने क्ता प्रत्यपस्य इ इउ इति अति इत्येत चत्तार यादेशा भवन्ति ॥ इ ।

हिष्यहा जर वेरित्र, पणा तो कि प्रविभ चढाहु॥
- श्रम्हाहि ये हत्यहा जह पुणु मारि मराष्ट्र॥ १॥

इउ । गय-घड मिनज जन्ति ॥

इवि ॥ रक्सइ मा विस-हारिणी, वे कर चुम्बिन जीउ ॥ पिडिनिम्बस-मुंजालु जलु जेहिं थहोडिस पीउ । २॥

यनि.।। पाह विछोडिन जाहि तुहु, हउ तेवँह को दोसु ॥ हिमय-हिउ जह नीसरहि जागउ मुझ सरोसु ॥ ३॥

कार्य — 'कर के' इस कार्य में मन्यन्य कुरन्त का विधान होता है। यह फुरन्त विश्व की सभी फर्वाचीन चौर प्राचीन भाषाओं में उदलब्ध है। सरकृत चौर अवध स खादि भाषाओं में भी नियमा- उपार इसका छितरह है। सरकृत स्थाप में इस अर्थ में 'करवा' प्रत्यय का सिवधान कीता है बीर अरघ स माधा में इस 'करवा' प्रत्यय के स्थान वर प्राठ भरवर्यों की खादेश प्रांत हाती है, इन आठ प्रत्ययों में से चार प्रत्ययों की ज्ववस्था तो इसी सूत्र में की गई है और शेष चार प्रत्ययों का सविधान कृत-सख्या भन्य के स्थाप पर प्रत्यय सबध क्रिक्त के अर्थ के सिवधान क्रिक्त के अर्थ के सिवधान क्रिक्त क्रिक्त क्रिक्त के सिवधान क्रिक्त क्रिक्त

- (१) इ. (२ इ.१, १३) इवि खोर (४) खाव ॥ जैसे एरान=(१) वरि, १२) करित,) करिवि खार १४) वरिवि=करके १ (२) लब्दा=(१) लहि, (२) लहिर, (२) लहिवि और (४) १६वि=प्राप्त करवे-पा करके । एत्ति में घारों प्रत्ययों को समम्ताने के लिये घार गायाएँ उद्घृत की गई , उनका खनुराद क्रम म यों हैं —
 - (१) मस्कृत:—हृदय ! यदि वैरिको घनाः, तत् कि अभ्रे आरोहामः ॥ अस्माक द्वी दस्ती यदि पुनः मार्ग्यत्वा मियामहे ॥१॥

हिन्दी — हे हृं य ' यदि ये मेघ (बादल ममूह) (बिरह दु ख बत्वादक होने से) शब्ध रूप हें ो क्या इ हे नष्ट करने के लिय खाकाश में ऊपर पर्टें ? खरे ! हमारे भो दो हाथ हैं, यदि मरना ही है ा प्रथम शब्द को मार करके पीछे हम मरेंगे ॥१॥ इन गावा में 'मारयिद्वा' पर के स्थान पर 'मारि' पद ज बपयोग करते हुए 'क्स्वा' प्रस्थय के खर्ष में खाउंछ शों 'इ' प्रस्थय का प्रयोग समकाया गया है।

(२) सस्कृतः —गज-घटान् भिर्मा गर्छन्ति = गय घड प्रजित्र जन्ति=हाधियों के समृद्द को भेद कर क जाते हैं। यहाँ पर 'मिर्स्वा के स्थान पर 'मज्जित्र' लिख करके द्वितीय प्रस्थय 'इन' का स्वरूप प्रदर्शित किया गया है।

(३) मस्कृत:--रधित मा निषहारिखी, द्वाँ करी चुम्बिन्वा जीवम् ॥ प्रतिविम्बित मुझाल जलं, याभ्यामनवगाहित पीतम् ३॥

हिन्दी — (जिसके खालिंगन करने से काम-विकार रूप विष दूर होता है ऐसी) विष को हरत बरने बालो वह नाथिका शिष खपन दानों हायों का युक्तन करके खपने जीवन को रहा कर रही है क्यांकि इन दोनों हाथों ने जल क जादर इवकी लगाय विना ही उस जल का पान क्या है, निपम नि मुख राना का (खपया मुख नामक पाम निशेष का) प्रतिविक्त पढ़ा है। इस छुद में पुनिक्ता पहां रहे हुए सवष कुरून वाचक प्रत्यय क्त्या क स्थान पर स्थान पर स्थान के स्थान में 'चुन्धिक पद हा निर्मा करके तर्दर्शक 'इवि' प्रत्य का सथान सुचित दिया गया है।। १॥

(४) सम्कृत:--बाहू निच्छीटय याहि स्व, भवतु नथा की दीपः ? हृदय स्थित. यदि निः सरसि, जानामि मुझ. सर्रापः ॥४।

हिन्ही — खरे मुख ! यि तुम भुनाओं का छुड़ा करक जाते हो तो इपने बीन मा शेष र्रं खथवा श्रेतती हानि है ! क्योंकि तुम मेरे हत्य में बसे हुए हैं। बीर ऐसा हान पर यदि तुन मेर हावरें में निकल कर भागा तो में जानें कि मुख मुक्त से रूप हैं। वहाँ पर संबंध करत खर्य में 'विष्यादर' प आवा हुखा है, जिसका भाषान्तर खपन्ने रा माषा में 'विद्योदिवें' पर वे रूप में क्या है बोर ऐसा हर हुए मब्दा-हरून खर्य वाचक-प्रस्तव 'क्रवि' हा प्रयोग हिया गया है ॥शा यो पारें प्रदार के प्रयाचें प रिश्वति को समग्र सेना पाढ़िये ॥ ४-४ ६॥

एष्प्येष्पिग्नेट्येविग्वः ॥ ४-४४०॥

श्रवभ्रमे क्या प्रत्यरस्य एप्पि, एप्गिणु, एप्रि, एप्गिणु इत्येत चरवार क्षावेमा मर्गन

जेप्पि असेसु क्रमाय-बत्तुं देव्पित्तु अभउ जयस्सु ॥ लेवि महत्यम्य सितु लहाहिं महाणवित्तु तत्त्वस्तु ॥ १ ॥

ष्ट्यग्योग उत्तरार्थः ॥

अर्थ — इस सूत्र में भी सबय इरन्त-वाषर प्रत्यवा का ही बर्युन है। ये प्रत्यव हावयं हर्त है वर्ष में भी भागुक होते हैं, इमिलवे इन प्रत्यवों का एक साथ पूर्व-सूत्र में नहीं निवत हुए इवक् मूत्र के रूप में इनका विधार दिया गया है। इस व्ययं को प्रत्यित करने के निवे पूक्ति में 'पूक्ष्य-दात और 'उत्तरार्थ ऐस दो पर काम नीर वर दिये गये हैं। 'पूष्य-याग' का तारार्थ यही है कि इन प्रत्यवों का प्रस्था करन हर्दन (क्यांत हरवर्ष-इस्त । के किये भी है। 'उत्तरार्थ 'पर का यह कथ है कि इन प्रत्यवों का वर्णन कीर सम्बन्ध कारों के सूत्र से भी जानता। को संबध इस्त क कर्म में (कीर देवर हरुल के कार्य में भी) जो चार प्रत्यय (विदोव) हाते हैं, वे काम से इस प्रकार हें —(१) एपिर, (२) एपिसा, (३) एवि कीर (४) एबिसा । जैसे —हत्या ० एरेपिर, करेपिसा, करेबिसा खीर करेबि=करके। (हेवर्य-फुरन्त में कार्य में 'करने के लिये' ऐसा तास्त्रयं उत्भृत होगा)। वृत्ति मे जो गाथा उद्धृत की गई है, जसमे बक्त प्रत्ययों मो कम से इम प्रशार से व्यक्त किया है —

- (') जिल्या = जेप्पि = जीत करके।
- (२) दस्वा = देल्पिग् = दे परफे।
- (३) लात्या = लेवि≈ले फरके खयवा प्रहण करके।
- (४) ध्यात्वा = भागविगु = ध्यान करके-चितन करके ।

पूरी गाथा का अनुवाद यों हें -

मस्कृतः—जित्ना श्रणेप कपाय-नल, दन्ता श्रभयं जगतः॥ सात्ना महावत शिन समन्ते ध्यात्वा तस्त्रम्॥१॥

हिन्नी – भव्य प्राष्ट्रो ख्रथवा मुक्कु प्राष्ट्री सर्व प्रथम सन्दूर्ण कपाय समृह को जीत कर के, तराश्चात् विश्व प्राणियों को ख्रभयदान देकर के एवं महाव्रती को प्रहण करके खन्त में वास्तविक द्रन्य रूप करवा का ध्यान करक मोत्र पर को प्राप्त कर लेते हैं ॥ ४-४४० ॥

तुम एवमणाण्डमण्हिं च ॥ ४-४४१ ॥

श्रपञ्जने तुम: प्रस्वयस्य एवं, श्रण, श्रगह, श्रगहिं इत्येते चत्वारः, चक्रारात् एप्पि, एप्पिणु, ०ति, एतिणु इत्येतं, एव चाष्टावादेशा भवन्ति ॥

> देव दुक्कर निश्चय-घणु करण न तड पहिहाह ॥ एम्पइ सुहु भुज्जगह, मणु पर भुज्जगहिं न जाह ॥१॥ जेप्पि चएप्पिणु सयल धर लेविणु तचु पालेवि ॥ विणु मन्तें तिरथेसरेण, को सक्कह भुवणे ति ॥२॥

अर्थ — 'क लिये' इन खर्च में हेटार्य-कुदन्त का प्रयोग होता है खीर यह फुदन्त भी विश्व की सभी भाषाओं में पाया जाता है, तदलुनार सस्क्रत भाषा में इन क्षदन्त के निर्भाण के लिये 'तुम्' प्रस्वय का विधान किया गया है और इस प्राप्त प्रस्वय 'तुम' के स्थान पर खपश्चरा भाषा में खाठ प्रस्वयों का सविधान किया गया है। जोकि खादेश प्राप्ति के रूप में कहे जाते हैं, वे खादेश प्राप्त खाटों ही पुरस्क से इम प्रकार हें — (१) ण्वं, (२) श्रामः, (३) श्रामः, (३) श्रामः, (४) श्रामः, (६) श्रिमः, (६) श्रिमः, (३) श्रीमः श्रीर (८) णियाः, । इन श्राठ प्रस्वयों में से किसी भी एक प्रत्यय की घातु में लोद देने पर उपधा 'कं लिये। ऐमा प्रयं प्रतिष्वभित हो नाता है। जैसे — (१) त्यम्तु = प्रवन्त = प्रवन्त हो के लिये। (२) मोतु = मुख्य = भोगो के लिये। (३) से वितु = सेवण्डं = से ना करने के लिये। (४) मोतु = मुख्य हिन्दों के लिये। (३) सेवितु = सेवण्डं = से ना करने के लिये। (४) मोतु = मुख्य हिन्दों के लिये। (३) हुनं = करेंवित् । १४) क्यू म्वक्रेयि = करेंवित् = करेंवित् । १४) क्यू म्वक्रेय के लिये। श्रीमं प्रश्ना भाषां में अपरोज श्रामं के प्रयोग का में यो किया गया हैं —

- (१) 'पर्व' प्रत्यय, दात = देव = देने के लिये।
- (२) 'ख्रण' प्रत्यय, भतु = करण = करन के लिये।
- (३) अणह' प्रत्यय, भोवतु = भुखनई = भोगने के लिये ।
- (४) 'बर्णाद्द' प्रत्यय, माक्त् = भुञ्जणहिं = भी ने क लिय।
- (k) 'पांप' प्रत्यय, जेत्=जे देव=जीतन क लिये।
- (६) 'ण्डिससु' प्रत्यय, स्यन्तु =चण्डिसु =छाइने के लिये।
- (७) 'एवि' प्रत्ययः पालियनुम् = पाले नि = पाल न करने के लिये। '
- (द) 'मविस् प्रत्यय, सातु = संविस्तु = सने के लिये। उक्त दोनों गाथाओं का 4रा ऋतुराद कम से यों है --

मस्कृतः-दातु दूष्करं निजक धन, कर्तुं न तपः प्रतिमाति ॥

थद सुख मोबतु मनः, पर मोबतु न याति । १॥

हिन्दी — चाने घन का दान में देने क किये दुष्कासा करानय होती हैं, तप बरन क निर्णे मायनार नहां करान होती हैं और मन सुरा का भोगने के लिये ज्याहम सा रहना है, वरन्तु सुरा भागन क सिरे संयोग पहीं प्राप्त होते हैं ॥ भा दम गाया में हेन्दर्य-क्ट्रन्त के रूप में प्रमुक्त किय जान यात वार वराय कराक किये गये हैं, भीकि हुए। नार्य से ज्यर लिय दिये गये हैं। है।।

मन्द्रतः — जेतु त्यक्तु मक्लां घरा, लातु तप. पालियतुम् ॥ निना गान्तिना तीर्थेरराग्य, रः शक्नीति भुवनऽपि ॥२॥

हिर री - सर्वे प्रथम सम्दुर्ण प्रप्ता को जीतने वे लिये और सरारपान पुन नमका (वेरा च पूर्ने रीति से) परित्याग करने क सिये गर्च जानों को प्रदेश करने क निय नथा सर का वालने के लिये (में हन से भ्रमाधारण कार्यो का करने के । अपे) भगवान् शान्तिनाथ प्रमु के सिवाय दूमरा कीन इस विश्व में समर्थ हा सकता है। इस गाया में हेटवर्ष फ्रास्त के खर्य में प्रयुक्त किये जाने वाले शेप चार मन्या को उत्योगिता बतलाई है, जा दृष्टान्त रूर से ऊत्र लिये जा चुक हैं।। ४४४९।।

गमेरेप्पिग्वेप्प्योरेलु ग्वा॥ ४-४४२ ॥

धपभ्रशे गमेर्घातोः परगोरेष्पिणु एष्पि इत्यादेशया रकारस्य लुग् भवन्ति वा ।

गम्प्पिणु वाणारिमिहि, नर श्रह उन्नेणिहि गम्प्पि ॥ मुद्या पराप्रहि परम-पत्त, दिन्यन्तरह म जस्पि ॥१॥

पद्ये ।

गङ्ग गमेष्यिषु जो मुग्रह, जो सिव-तित्य गमेष्प ॥ कीलदि तिदसायास-गड, सो जम-लोड जिणेष्य ॥२॥

कथें —स्वपन्न भाषा में 'जाना, गमन करना' स्वर्यक घातु 'गम्' में सबथ-स्टरन्त व्यर्थक प्रत्यय 'एपिसु स्त्रीर मिर' ना सवाजना होन पर इन प्रत्ययों में स्वयध्यित स्वादि स्वर 'एकार' का विकल्व से लोप हो जाता है। जैने —गश्या≔र्गान्धसु स्वया गर्मेद्रासु स्त्रीर गम्प्पि स्वयया गर्मेदि ≕डाकर के। इन्हों चागें प्रा ना प्रयोग पृष्ति में दी गई गायाओं में किया गया है, जिनका स्नुवाद इन प्रकार से हैं —

सस्कृतः - गत्या वाशाणसीं नरा स्त्रथ उज्जयिनीं गत्वा ॥ मृताः प्राप्तुयन्ति परम पद, दिव्यान्तराणि मा जन्य ॥१॥

हिन्दी — मनुष्य सर्व प्रथम बनारत तोर्य को जाकर के और तस्त्रश्चात् उन्पायती तीर्य को जाकर के मृत्यु प्राप्त करने पर सर्वोत्तम पद को प्राप्त कर लेते हैं, इमलिये खन्य पवित्र तीर्थों भी बात मत कर ! इस नाथा में एप्तिसु और एप्पि पृत्ययों में खब्स्पित खादि स्वर 'प्कार' का लांप-स्वरूप प्रवरिति किया गया है ॥१॥

सस्कृतः—गङ्गा गत्ना यः प्रियते, य शिवतीर्थ गत्ना ॥ क्रीडिति त्रिदशावासगतः, स यमलोक जित्ना ॥२॥

हिन्दी — जो प्वित्र गुगा नदी के स्थान पर जाकर मृखु प्राप्त करता है अथवा जो शिज्तिर्थन बनारस में जाकर मृखु प्राप्त,करता है, वह यमलोक को जीनकर इन्द्रादि देवताओं के रहने के स्थान को प्राप्त करता हुआ परम सुख का अनुभव करता है। इस गाथा में 'गमेप्पिणु और गमेपि' वहों में रहे हुए 'पुरित्मु तथा परित' प्रस्ववों में आदि 'पुकार' स्वर का अस्तित्व क्यों का त्यों क्यक किया गया है। या 'पैकलिक स्थित को समम केना चाहिये॥ ४-४४२ ॥

तृनोण्यः ॥ ४-४४३ ॥

अपन्न रो तनः प्रत्ययम्य श्रवाश्च इत्यादेशा मनति ॥ इत्यि मारणउ, लोउ बोह्नमउ, पढहु रज्जणउ, सुणउ भसणुउ ॥

शिर्य — कं स्वभाववाला' खयवा 'याला' खर्य में गर्य 'कतू '। धर्य में साहत मापा में 'छर्-न अस्यय की माति होतो है, तद्तुनार इन 'तच्' अस्यय के स्थान 'वर खपन्न हा भाषा में 'खगर्य' के स्थान 'वर खपन्न हा भाषा में 'खगर्य' के में अस्यय की खादेश माति का संविधान है। जैसे —कर्तु = करण्य = क्रतेवाला खपवा करने वे स्वभाव थाथा। मार्गविष्ठ = मार्गण्य = मार्गवेवाला खपवा मार्गे के स्वभाव बाला। खद्वाल = खजाण्य = नहीं जान्ने बाला। यह 'खण्ड्य' भ्रयय बातुखों में जुड़ता है चीर धातुखों में जुड़ते के वर्षात वे शहर मंत्रा स्वस्य बाले बन जाते हैं, प्य उनके रूप खाठों विभक्तियों में नियमानुमार चलाये आ मक्ते हैं। शृश्त में प्रश्त उदाहरणों का स्वष्टीकरण्यों में हैं —

- (१) हस्ती मारयिता=इत्यि मारणुड=हाथा मारने के स्वभाव वाला है।
- (२) सीक क्ययिता = सोड बोझणव = अन-मावारण बोलने के स्थमान वाला है।
- (वे) पटह यादिवता=पटहू विज्ञाणव=दोल धावाज श्रथवा प्रतिभ्वति वरत क स्थाप वाला है।
- (४) ग्राक् भाषता=मुण्ड मनण्ड= इत्ता भीक्ते के स्थमाय वाता है।। ४४०६॥ इतार्थे न-नउ-नाइ-नावड-जण्-जण्वः ॥ ४-४८८॥

थपत्र शे इव शब्दस्यार्थे न, न3, नाइ, नागइ, जिल, जसु इत्येते पट् गवन्ति ॥ न ॥ न मञ्ज-जुञ्कु समि राष्ट्र करहिं॥

नउ ॥ रिव-व्यत्यमीय ममाउत्तेव किंग्ठ निर्एए न दिएए ॥ चर्मे सण्डु धुणालिश्रहे नउ जीवगणु दिएए ॥१॥

नाइ ॥ चलियात्रलि-निवश्ण-मण्य धण उद्धन्सुम्र नाह ॥ यद्गद-विरद्ध-महाद्दही थाह गर्वे मह नाह ॥ २ ॥

नायद् ॥ पेनस्तिषणु सुदू जिल्ला-घरहो दीहर-नयण मनाणु ॥ नायद् गुरु-मण्डर-मिरिउ, जलणि प्रयीमद्र लीखु ॥२॥

जिस्ता प्रस्पप-इसुमहो मिल्कि गिर्दि मनलु प्रहेड ।। मोहद इन्द्र नीलु लक्षि कराह बरहुउ ॥ ४॥

जलु ॥ निरुत्तम-रसु पिएं पिएवि जलु ॥

- (१) सस्कृतः मान्न युद्धं इव शशि शहू कुठत = न मान्न जुज्म सिम राहु करि = पहलवानों की लड़ाई के समान चन्द्रमा और शहू दोनों ही युद्ध करते हैं। यहाँ वर 'इव' अब में खादेश प्राप्त राज्द 'न' का प्रयाग किया गया है।
 - (२) सस्कृतः—रन्यस्तमने समाकृतेन कच्छे वितीर्थः न ह्विनः॥ चक्रोण खण्डः मृणालिकायाः नतु जीवागेतः दत्तः॥१॥

हिन्दी — सूर्य-देव के अस्त हा जाने पर पबड़ाये हुए चकवा नामक पत्ती के द्वारा कमिलती का टुकडा यद्यपि मुख में प्रहण कर लिया गया है, परन्तु उमको गले के अन्दर नहीं उतारा है, मानी इम बहाने उसने अपने जीवन को रत्ता क लिये 'अर्याला-भागल' के समान कमिलनी के टुकड़े को धारण किया हा। इस गाथा में इय' अर्थक द्वितीय शब्द 'नव' को प्रदर्शित किया है ॥र॥

(३) संस्कृतः - वत्त्रयावलीनिषत्तनभयेन, धन्या ऊर्घ्य - भुजा याति ॥ बल्लम विरह-महाहदस्य स्ताध गरेपतीव ॥ २॥

हिन्दी —वह घन्य स्त्ररूपा सुन्दर नायिका 'श्रवनी चूहियाँ कही नीचे नहीं गिर जाय' इस श्राशका से श्रवनी सुजा को ऊपर उठाये हुए ही चलता है। इमसे ऐसा भतीत होता है कि मानो वह श्रवने प्रियतम के नियोग रूपी महाकुड के तिलये की स्थिति का श्रवसघान कर रही हो। यहाँ पर 'इस' फे स्थान पर श्रादेश प्राप्त तृतीय राज्द 'नाइ' को श्रयुक्त किया गया है ॥२॥

(४) सस्कृत: —प्रेच्य मुख जिनगरस्य दीर्घ-नयन सत्तावएयम् ॥ नतु गुरु-मत्सर् मरितं, ज्वलने प्रविशति लवणम् ॥३॥ हिन्दी —मगयान् जिनेन्द्रदेन के सुनीर्प खाँखों वाले सुन्दरतम मुख को देव कर बातों महान् हैप्यों मं भर। हुन्ना लयण मसुद्र बड़वानल नामक खानि में प्रवेश परता है। सवल मेसुद्र बदनी सीम्यना पर एव सुन्दरता पर खानिमान करना था, परन्तु जम उसे जिने दूरे ने मुख क्रमन को सुन्दान। का खतुभन हुन्ना तम यह मानों लज्ञा-प्रस्त हावर खानिक्तान कर नहा हो, यो प्रतीत होता है। इस इन्द में 'इय' खब्यय के स्यान पर प्राप्त चीय शब्द 'नायह' के वेयोग की सममाया गया है।।।।।

(४) सस्कृतः—चम्पक-कृतुमस्य मध्ये मखि ! भ्रमरः प्रविष्टः ॥ गोमते इन्द्रनीलः नचु कनके उपवेशितः ॥ ४॥

हिन्दी — हे सिल्ला (देलो यह) भँवरा चन्यक-पुत्र में प्रविष्ट हुन्ना है, यह इस प्रकार से सोनायनान हो रहा है कि मार्ज इन्द्रगोल नामक मणि मोने में जड़ दी गई है। यहाँ पर पाँग्यें सहर जिथा क प्रयोग को प्रदर्शित किया गया है ॥॥।

(६) संस्कृतः—निरुवम-रस वियेण वीत्या इत्र=निरुवम रसु विण विवित्र ज्ञाणु -वियतम वृति र हारा खदिनाय रस का वान करके 'इनक समान। यस वर 'इव' कर्य में छट्टा शहर 'म्या' लिखा गया है है ॥ ४-४४४॥

र्लिममतन्त्रम् ॥ ४-४४५ ॥

श्रवक्षणे लिद्गमतन्त्रम् व्यभिचारि प्रायो भवति ॥ गमहम्मइ दारन्तु । अत्र पुद्धिग स्य नपु मकत्वम् ॥

> थन्मा : लग्गा सुद्गरिहि : पहित्र रहन्तत्र वाह ॥ जो एहा गिर्-गिल्ग-मणु सो,कि धगुई घगाइ,॥२॥

श्रत्र श्रन्मा इति नपुंत्तकस्य पुस्ताम्॥

े पाड विलग्गो यान्त्रदो मिरु न्हमिर्ज सन्यस्य ॥ सो पि कटारह हत्यहउ पलि किन्त्रउ कन्तरस्य ॥ २ ॥

शत बन्त्रही इति नपुसकस्य स्त्रीत्वम्॥

मिनि चडिया सन्ति, एतसई पुणु डालई मोडिनि ॥ तो वि महद्दम् सत्रयाह् यगराहित न करन्ति ॥ ३॥ अत्र डालई इत्यत्र स्त्रीनिक्षम्य नष्ट सक्त्यम् ॥ अर्थ — अवभरा भाषा में शब्दों के लिंग के सम्पन्य में शेष युक्त व्यवस्था पाई जाती है, तह-तुनार पुलिंग शब्द का कभी कभी कभी नमु सबलिंग के रूप में व्यक्त कर दिया जाता है श्रीर कभी कभी बर्ग सकलिंगवाले शब्द को पुलिंग के रूप में लिख दिया जाता है, हमी प्रकार से कीलिंगवाले शब्द को भी प्राय नमु सक्तिंग के रूप में प्रदर्शित कर दिया जाता है और नमु सकलिंगवाले शब्द को भी कीलिंग करूप में प्रमुक्त किया जाता हुआ देखा जाता है, यों गय हाने वाली हम व्यवस्था को प्रथकार ने वृत्ति में प्यिमवारी' व्यवस्था के नाम से कहा है। इस दोष-गुक्त परिपाटी को समकाने के लिये पृत्ति में जा नगहरण दिये गये हैं, हनका अनुवाद क्रमश इस प्रकार महें —

(१) सम्कृतः — गजानां सुन्धान् दारयन्तम् = गय कुन्धदं दारन्तु = द्वावियो के गरह स्वलो को चीरते एको। यहाँ पर 'कुन्ध' शहद को नपु सकलिंग के रूप में व्यक्त कर दिया है, जबकि यह शब्द पुर्लिंग है।

(२) सस्कृत:--- प्रश्नाणि लग्नानि पवतेषु, पथिकः श्रारटन् याति ॥ यः एषः गिरिम्रयनमना सर्कि घन्यायाः घृणायते ॥१॥

हिन्दी — पर्यं में फे शिल में पर लगे हुए खयवा क्षके हुए वादलों को (लद् व करके) यात्री यह कड़ता हुआ जा रहा है कि—'यह मेव (क्या) पर्वतों को निगल जाने की कामना कर रहा है अयवा (क्या) यह वस सीमाग्य शालिनी नायिका से चुणा करना है! (क्योंकि इस घन श्याम मेघ माला को देखने से उस नायिका क नित्त में काम-वापना तीन्न रूप से पीड़ा पहुँचाने लगेगी) इस छन्द में मेध-वापक शब्द भें सुला कर के पुहुता के रूप में लिखा है, जबकि वह नपुसक्तिगवाला है ॥'॥

(३) मस्कृत —पादे विलानं श्रन्त्र, शिर सस्तं स्प्रन्वात् ॥ तथापि कटारिकाया इस्तः विलाः क्रियते कान्तस्य ॥२॥

्हिन्दी — कोई एक नाथिका श्वानी सिल से श्वाने प्रियतम पति को रण-होत्र में प्रदर्शित बोरता के सम्बन्ध में चर्चा करती हुई कहती है कि — 'देली ' युद्ध करते करते उसके शरीर की श्वान्ति ह्याँ वाहिर निकल कर पैरों तक जा लटकी है और शिर घड से लटक सा गया है, फिर भी उसका हाथ कटारी पर (छोटी सी तलागर पर) शातु को मारने के लिये लगा हुआ है, ऐसे बोर पति के लिये में बलिदान होती हैं।' इस गाथा में 'श्वन्त्रहो' शब्द की फीलिंग के रूप में बतलाया है, जबकि यह मपुसक्रतिंगवाला है ॥ गा

(४) सस्कृतः—शिरमि श्रारूटाः खादन्ति कत्तानि, पुन शाखाः मोटपंति ॥ तथापि महाद्रुमाः शक्तनीना श्रवराधितं न कुर्वन्ति ॥ ३ ॥

हिन्दी — देखो । पत्तीगण महानृत्तां की सर्वोच्च शाखाव्यों पर मैठते हैं, उनके फलों को रुचि-पूर्वक बाते हैं तथा उनकी डालियों को तोडते हैं-मरोडते हैं, फिर भी उन महानुत्तों की कितनी उत्ती उनारता है कि ये न तो उन पत्त्रियां को व्यवसायी हो मानते हैं क्रीर्त न दन पत्तियों के प्रति कुछ भी हानि 🚓 प्राकृत व्याकरण 🌼

पहुँचाने को कामना हो करते हैं। (यही ग्रुंचि मन्त्रत पुरुषों की भी हुर्जन पुरुषों के प्रति होतो है)। इस गाया में 'खालड़' राष्ट्र खाया है, जाकि मूल रूप से फीलिंग्याशा है फिर भी उसहा प्रवाग को वर् नयुमकर्षिम के रूप में कर दिया गया है। यों खपन्न रा भाषा में खोक स्थानों वर वाई बान बाला दिन सम्बन्धी हुट्यंबस्था की कल्पना स्वयमेय कर खेती चाहिये॥ ४ ४४४॥

शीरसेनीवत् ॥ ४-४४६ ॥

श्रवश्रेण प्राय शीर-सेनीवत कार्य मनति ॥

सीनि सेहरु खणु निर्णिम्मबिद्, राणु करिठ पालम्बु किंदू रदिए ॥ विहिद्द खणु सुपड-मालिए ज पण्यणः स नमहु कुसुम-दाम-नोदण्ड कामहा ।१॥

अर्थ —शीरसेनी मापा से व्याकरण-सब्धित जो नियम बवनियम एवं सविधान है, वे सब प्रारं अवश्वरा भाषा में मा लागू पहते हैं। यों शौरसेनी-भाषा के अनुभार प्राय अपेक कार्य अरुध रा नावा में भी देखे आते हैं। जैसे —

- (१) निवृ ति=नि युद्दि = चारमा परिश्रह से रहित पृचि को।
- (२) विनिर्मापितम् = विणिम्मविद्य=स्थापित विया हुद्या दै, उमका ।
- (३) कृतम् = फिद्र = फिया हुना है।
- (४) रत्या = रहिग=कामनेत्र की सी रति क।
- (x) विश्ति = विद्यु = विद्या गया है।

इन उदाहरका में शीरसेनी भाषा से मंबिपन नियमों के श्रामुगर कार्य हुन्ना है। पूरा गामा अ श्रामुगर पों दें —

> मंस्कृतः—शीर्ष शंसरः चर्ण निनिमापितम् ॥ चर्मं क्यंडे प्रालम्य क्रत रस्याः ॥ बिहितं चर्मं सुन्द-मानिकार्यं॥ तन्त्रत दूसम-दास-पोटमट हामस्य ॥१॥

दिन्हीं —कामदेवाँ नीतवण्ट मगवान शंदर को कारती कारता से दिगान के निवे दूरते !"

िर्मित पतुप भी उठाया। सर्व प्रथम उतने छाग भर के लिये उत्तरो खबने शिर वर खामुवण के रूव में शियावित किया, तत्वधात् रित के पषठ में चल भर कि किये उत्तकों लटकाये रक्ष्वा और खात में शकर क गते में पढ़ों हुई मुख्ड भाला वर छाण भर के लिये उमका स्थापना की, ऐसे फामदेत के पृष्णों से बने हुए पतुष को तुम नमस्तार वरो।।१॥ ४ ४४६॥

व्यत्ययर्च ॥ ४-४४७ ॥

प्राक्ततिविभाषालच्छानां च्यत्ययथं भवति ॥ यथा मागच्या 'तिष्ट्रशिष्ट' इत्युक्त तथा प्राक्त पैशाची-शौरसेनाष्यपि भवति । चिष्ठदि । व्यवश्रशे रेफस्यायो या लुगुक्तो मागच्यामपि मवति । शद मालुग-मालके बुम्न शह ४-यशाई गाँचिदे इत्याद्यन्यदपि दृष्टव्यम् ॥ न केवलं मापालच्याना त्याद्यादेशानामपि व्यत्ययो भवति । ये वर्तमाने काले प्रामेद्वास्ते भृतिपि भान्ति । यह पेच्छइ रहु-त्यायो ॥ व्यय प्रेचांचक्री इत्यर्थः ॥ व्यामासइ स्यणीव्यरे । व्यावमापे रचनीचरा-नित्यर्थः ॥ भृते प्रसिद्धा वतनानेषि । सोक्षेत्र प्रम वर्षको । शृणीत्येष वर्षक इत्यर्थः ॥

अर्थ---नाहत, शोरसेनी, गागधी, पैशानी, चूनिका पैशानी छोर खपस्र स मापायों में व्याकरण सम्बन्धी जो नियम व्यनियम खादि विधान हैं, उनका पास्वर में व्यत्यय खर्थात् एलट-पुलट पना भी पाथा जाता है। जैसे मागधी-माथा में 'तिष्ठ' के स्थान पर सूत्र सख्या ४ २६६ के खतुसार 'विषठ' रूप की खादेश-प्राप्ति हातो है, जमा प्रकार ही। 'शाहत, पैशाची छोर शौरसेनी' भाषाओं में भी होता है। जैसे --तिष्ठति=चिष्ठदि=चह चैठता है। खपस्र श भाषा में सूत्र-सख्या ४ ३६६ में ऐमा विधान हिया गया है कि-'अप रूप में रहे हुए रेफ रूप 'रकार वर्ण का विष्कर से लोप ही जाता है, यही नियम मागधी भाषा में भी देखा जाता है। भाषाचों से सम्बन्धित यह व्यवयय केवल नियमोपनियमों में ही नहीं होता है किन्तु काल बोधक प्रक्यों में भी यह व्यव्यय देखा जाता है, तश्तुसार वर्तमानकाल-वाचक प्रक्यों के सद्भाव में भूतकाल वाचक खर्य भी निकाल (ल्या जाता है और इसी प्रकार से भूत-वान बोधक प्रक्यों के सद्भाव में स्तुकाल वाचक खर्य भी निकाल (ल्या जाता है और इसी प्रकार से भूत-वान बोधक प्रक्यों के सद्भाव में स्तुकाल वाचक खर्य भी सिकाल (ल्या जाता है और इसी प्रकार से भूत-वान बोधक प्रक्यों के सद्भाव में स्तुकाल वाचक खर्य भी सिकाल (ल्या जाता है और इसी प्रकार से भूत-

- (१) श्रथ प्रेचांवके रघु तनय = अह पेन्छह रहु-तण्ड्रो=इसके बार में रघु के लड़के ने देखा।
- (२) श्रावमापे रचनीचरान् = धामासइ रयखोधरे = रास्तों यो फहा। इन उदाहरणों में वर्त-मानकाल वाचक 'इ' प्रत्यय का श्रासिल्य है, पग्न्तु 'धर्य' भूतकाल-वाचक कहा गया है, यो काल-वाचक न्वत्यय इन मावाओं में देला जाता है। मुतकाल का सद्भाव होते हुए मी श्रर्थ वर्तमानकाल का निकाला जाता है, इस सम्बन्धी उदाहरण यों हैं —गुणोति एप वपठः मोहाश्र एस वपठी = यह भीना (बामन) सुनता है। इस उदाहरण में 'साहीश्र' क्रियापद में भूतकालोन प्रत्यय 'हीश्र' की प्राप्ति हुई है, परन्तु श्रर्य वर्तमानकालोन हो लिया गया है। यो काल वायक प्रत्यमें में भी व्यत्यय श्र्यति इन मापाओं में देली काठो है। ४-४४०।

शेषं संस्कृतवत् सिङ्म् ॥ ४-४४= ॥

शेप यदत्र प्राकृतादि भाषासु श्रष्टमे नोक्त तत्सप्ताच्यायीः निवद्ध सस्कृतपदेव सिद्धम् ॥

हेट्ट-ष्ट्रिय-स्:-निवारणाय, छत्तः श्रहो इव[ं] वहन्ती ॥ जबह ससेसा वर।इ-सास-दूरुवसुगा पुहवी ॥ १ ॥

यत्र चतुर्ध्या आदेशो नोक्तः स च सम्कृतवदेव मिद्धः । उक्तमपि क्रचित् सम्कृतवदेव मत्रति । यथा प्राकृते उरस् शब्दस्य सप्तस्येक वचनान्तस्य उर उरस्मि इति प्रयोगी भगतन्त्रपा क्रचिदुरसीत्यि भगति ॥ एव मिरं । सिरस्मि । सिरसि ॥ सरे । सरस्मि । सरसि ॥ मिद्र-प्रदेश मङ्गलार्थम् । ततो आगुरुषच्छोत् स्वास्पुद्यक्षेति ॥

अर्थ —इस खाठवें अध्वाय में प्राकृत, शौरसेनी खादि छह भाषाओं का न्याकरण निया गया है और इन भाषात्रा की विशेषतात्री के साथ साथ अनेक नियम तथा उपनियम समकाये गये हैं, इनक श्रतिरिक्त यदि इन भाषाश्रो में सस्कृत भाषा के समान पदों की, अत्ययों की, श्रव्ययों की बादि बातों की समानता दिखलाई पडे तो उनकी सिद्धि सरकृत-भाषा में उपलब्ध नियमोपनियगों के अनुमार समक लेती चाहिये । तरनुतार सस्टत-भाषा सम्बन्धी सम्पूर्ण व्याक्षरण की रचना इस ब्राटवें बध्याय के पूर्व रचित साठों ऋष्यायों में की गई है। ऐसी भलामण प्रन्यकार इस सूत्र की शृत्ति में वर रहे हैं, सो ध्यान में रत्नी जानी चाहिये । प्रन्यकार कहते हैं कि-'प्राकृत क्यादि छह मापाओं से सम्बन्धित जिस विधि विधान का इरलेख इन खाटवें श्रध्याय में नहीं किया गया है, उस मम् रूर्ण विधि विधान का कार्य संस्कृत ज्याकरण के श्रतुमार ही तिद्व हुन्ना जान लेना चाहिये।' जैसे,—श्रव स्थित-सूर्य निवारणाय≕हेट्ट द्वियस् निवारणाय=नीचे रहे हुए सूर्य का गरभी को खबवा धूप को रोकने के लिये। इस उदाहरण में 'तिवा रणाय' पद में संस्कृत मापा के चतुमार चतुर्थी विभक्ति के एक वचनार्यक प्रत्यय 'झाय' की प्राप्ति हुई हैं। इस प्राप्त प्रत्यय 'स्राय' का सबिधान प्राकृत मापा में कहीं पर भी नहीं है, फिर भी प्राकृत-भाषा में इसे त्रशुद्ध नहीं माना जात। हैं इनतिये इसकी सिद्धि संस्कृत भाषा के ब्रनुमार कर तेनी चाहिये। प्राइन भाषा में छाती त्रर्थक 'दर शब्द है, जिसके दो रूप तो सप्तमी विमक्ति के यक्यचन में प्राकृत भाषा के अनुसार होते हैं और एक तृनाय रूप सस्कृत भाषा के अनुमार भी होता है। जैसे —दरमि=परे श्रीर चरम्मि ऋथया चर्रास ≕द्वाती पर ह्वाती में । दूसरा, उदाहरण यों ई —शिरसि ≕िसरे चौर सिर्मम थ्रथवा सिरसि≕मन्तक में अथवा मस्तक पर । तीसरा उदाहरण पृत्ति के अनुसार इम प्रकार स है ─ सर्ति = सरे और सरिम व्यथवा सर्रात = तालाव में व्यववा तालाव पर । यो संस्कृत माथा के व्यतुनार प्राष्ट्रत आदि मापाओं में उपलब्ध पदों का सिद्धि मस्कृत क ममान हो ममक कर इन्हें शुद्ध ही मानना चाहिये ।

सूत्र क खन्त में 'निद्धम्' ऐसे मगल वाचक पर को रचना 'मगलाचरण' की हरिट से की गई है। इससे यही प्रतिष्यानत होता है कि इस प्रन्य के पठन पाठा वर्तवालों का जीवन दीर्घाष्ट्रवाला स्रोर स्वस्य रहनेवाला हो तथा ये खपने जीवन में खभ्युत्तय स्र्यांत सफलता तथा यर। पात करें। स्त्राचार्य हेनच दूरेमी पश्चित्र-कामना के साथ इस खस्युत्तन प्राय का समाधि क्रते हैं।

रुत्ति में दी हुई गाथा का पूरा श्रनुवाद मम से यो हैं —

सस्कृतः—श्रधः स्थित-सर्यं-निवारणाय, छत्र श्रधः इव वहन्ति ॥ वयति संजेषा वराह-श्वास-द्रीत्चिप्ता पृथित्री ॥१॥

हिन्दी —चराह श्रवतार के तीर्ण श्वाम से दूर फेंकी हुई पृथ्वी शेष नाग के फर्णो के साथ जय सील होती है। नीचे रहे हुए सूर्व के कारण से उत्पन्न होने वाले ताप को गेकने क लिये मानो शेष नाग के फर्णों को ही छत्र रूप मे परिणत कश्ती हुई एव इन्हें भीचे वहन करती हुई जय जिजवशील होती है। ॥ ४-४८८॥

> इत्याचार्य श्री हेमचन्द्र विर्वितार्या सिद्ध हेम-चन्द्राभिघान-स्वोपझ-शन्दातुशासन-ृष्टचानष्टमस्याज्यायस्य चतुर्थः पादः

> > समाप्तः ॥

इति श्री हेमचन्द्र धार्चार्य द्वारा चनाई गई "सिद्ध हेमचन्द्र' नामक प्राकृत ज्वाकरण समाप्त हुई। इसमें श्राठरें श्रध्याय का चौवा पाद भी समाप्त हुआ। इसको बृत्ति भी मूल प्रथकार द्वारा ही चनाई गई है।

समाप्ता चेय सिद्ध हेमचन्द्रशब्दानुशासनरृत्तिं।
"प्रकाशिका" नामेति ।

मूल प्रन्थकार द्वारा ही इस ऋष्टाध्यायी "सिद्ध हेमचन्द्र" नामक न्याकरण पर जो वृत्ति ऋर्थात् टीका बनाई गई हैं, उसका नाम "प्रकाशिका" टीका है, वह भी यहाँ पर समाप्त हो रही है। (यन्थ-कर्ता द्वारा निर्मित प्रशस्ति) धासीत्विशा पतिरमुद्र चतुः ममुद्र-भुद्राद्धितचितिभरचमवाद्वदण्डः ॥ श्री मूलराज इति दुर्धर वैरि कुम्भि !! ' क्एठीरवः शचि जलक्य कलावतस ।रिम तस्यान्वये ममजनि । ध्रवल-प्रताप-तिरमद्यतिः चितिपति र्ज्ञंयसिंहदेवः। येन स्व-पश-सवितये पर सुंधांशो, श्री मिद्रराज इतिनाम निज व्यलेखि ॥२॥ ,सम्यग् निपेव्य चतुरश्चतुरीप्युपायान्, जित्बोपग्रुज्य च भुन चतुरन्वि काश्चीम् । विद्या चतुष्टय विनीत मति जितातमा, काष्ठामवाव पुरुषार्थं त्वतुष्टये यः ॥ ३ ॥ तनातिविस्तृत दुरागम विश्कीर्ण-

तनातावस्त्रतं दूरायमः ।वधकायः-शन्दानुशासन-समूहं क्दियितेन । स्रम्ययितो निरवमं विधियत् न्वधत्तं, शन्दानुशासनमिदं मुनि हेमचन्द्रः ॥ ४॥

प्रशस्ति भावार्य — पीतुक्य वंश मे प्रमक्त प्रता भी मूलराज नाम वाला प्रष्यात नृपति हुआ है। इसने श्रपन चाहुबल के त्राभार पर इस प्रध्वी पर राज्य शायन चलावा। इसी वंश में महान तेनस्वी जयसिंहदेव नामक राजा हुआ है, जाकि 'सिद्धराज' उपाधि से सुशाभित था। यह नापने सूर्यनाम प्रति याले वंश मे चन्द्रमा के समान सोम्य, शान्त श्रीर विशिष्ट प्रमावयांना नर राज हुआ है।

दम चतुर भिद्धराच जयसिंह न राचनीति सम्यन्धा चारा चरायों का माम, दाम, इष्ट बीर भेद' का व्यवस्थित रूप से उपवेश किया चीर हम घरनी पर ममुद्रान्त नक विचय प्राप्त करक राज्य सदमी का उपयोग किया र चारों विधाची द्वारा च्यपनो शुद्ध चुद्धि को विनय शीस बनाई चीर सन्त म कारों प्रकारों की माधना करके यह जितासा देव मना। चित विरत्त, दुर्बोध और विप्रकीर्ण व्याकरण प्रत्यों के ममृह से दु ली हुए श्री सिद्धरात जयसिंह न सर्वाण पूर्ण एक नृतन शहरानुशामन अर्थात् व्याकरण को रचना करने के लिये आचार्य श्री हेमचन्द्र स शर्थना का श्रीर तद्वमार आचार्य हेमचन्द्र ने इम सिद्ध हेम शहरानुशासन' नामक सुन्दर, सरल, श्मारनुण सम्पन्न नइ ब्याकरण की रचना विधि पूर्वक सम्बन्न का।

> [प्राष्ट्रत व्याकरण प्रथ का परिमाण २९८४ श्लाक जितना है] हिन्दी—व्याख्याता का मगलाचरस

(प्राकृत)—चत्तारि श्रष्टु-दम-दोष, विद्या जिलारा चडन्नीमा ॥
परमञ्च-निष्टि-श्रष्टा, मिद्धा सिद्धि मम दिसतु ॥ १ ॥
(मस्कृत)—सर्ने भानतु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः ॥
मर्वे भद्राणि परयन्तु, मा करिचद् दुःख माग् भनेतु ॥२॥

मृयात् कल्यागं-भशतु च मंगलम्

📲 प्रत्यय-बोध 🚉

≫□€€

सन्द्रन-भावा के सना-बाब्दों में तथा सबनाम-बाब्दे में एव छातुआ में जो विश्रति-बाधक स्थ्य जोडे जाते हैं, उन विश्रति-वासक प्रथमों ने स्थान पर प्राप्टन-भाषा में सादेश-प्राप्ति हाती है, तन्तुसार उन मून प्रथमी वी क्रांनिक-मूची इस प्रभार से हैं —

(१) सज्ञा-सर्गनाम-सर्गधित-प्रत्ययः--

विभक्ति	=	एक वचन	ta.	ग्रह्बयन
प्रथमा		सि		जय (अम्)
द्वितीया		अम्		धय (अस)
तृतीया		टा (आ)		(भिम)
चतुर्यी		ਤੌ (ए)		भ्यम्
प्रवमी		टसि (श्रस्)		म्यस
पप्टो		डस् (अस)		आम्
सप्तमी		sি (হ)		सु

(२) घातु-प्रत्यय~पर्तमान~कालिकः —

	परम्मैपदी					द्यारमनेपदी	
पुरुष	एक वचन	बहु वचन)]]	पुरुष	=	एक वचन	वहु बना
उत्तम	मि	मस्		उत्तम		ξ	मह
मध्यम	िंग	ध]]]	मध्यम		से	ध्य
भाग	ति	अन्ति		ध्य		ते	अन्ते

सीट --(१) प्राप्त-भाषा म दिवसन व स्थान पर बहुबबा का हो प्रयोग क्या जाता है, अन म_ा पा दिवसन सबधी मूळ सस्ट्रत-प्रवर्षों को लियने को भावस्थ्यता नहीं है, यह ब्यान में रहे :

- (२) वतमान-नान व अतिरिक्त त्रेष नाल-बोचन तथा विभिन्न लनार-बोचन नस्तृत-प्रदर्शी ने स्थान वर जनरल रूप से और समुक्तय-रा स प्राष्टत भाषा में विजिद्ध प्रस्थवों नी सप्राप्ति प्रदर्शिन को पहें है, अब वन विजिध और अर्थाण्ड सकारों के सन्द्रन प्रत्यों की सूची भी यहाँ पर नहीं निम्मी है।
- (३) "मुत्मद और अस्मद्र" सबनाभी ने समा अप सबनामों ने निद्ध हुए विअप्ति-प्राप्त गहिन अमर वर्षे वे स्वान पर प्राप्त-भाषा में विनिष्ट जादेस प्राप्ति होने का मिलपान है, सन्तुनार सन भून सहहुत सर्वनाम-पंत्रपी वर्षों का हमन्य महतून-स्वाहरण प्रार्था से जान नेना चारिये।

न्नसंकेत-बोधक्र

अ	k:a	ध ड्यय
अक	==	धरमर धातु
मप	=	अप भ्रम मापा
उप	=	उपसम
ਚਮ	=	सबमक सया अवमव चातु
		अथवादी लिंग वाला
कम	=	समिणि-याच्य ।
क वर्	=	ग मणि वतमान-शृदन्त
£	=	कृत्य प्रत्ययान्त ।
पृद	=	9 दन
ক্লি	=	क्रियापद
क्रिः वि	=	त्रिया विरोपण ।
मू पै	=	चूलिका पैशाची भाषा।
সি	=	त्रिलिंग ।
दे	=	दशज
न	=	नपु सवलिंग ।
Ĩ	=	पुलिंग।
पुन	=	पुलिंग नपुसकलिंग ।
पुस्ती	=	पुलिंगतथास्त्रीलिंगः
ů	=	पैशाची भाषा।
प्रयो	=	प्रेरणाथक णिजन्त ।
ब	=	बहुवचन।
भ ह	=	भविष्यत् कृदन्तः।
ম ৰি	=	भविष्यत् काल ।
भूमा	=	भूतकार ।
भू कृ	=	भूत-कृदात ।
मा	=	मागवी भाषा।
व ष्ट	=	वतमान जृदत्त।
वि	=	विशेषण ।
घौ	=	गौरसेनी भाषाः
सव	=	सवनाम ।
स ष्ट	=	सबाधक कृदन्त ।
सक	=	सकर्मक घातु।
स्त्री	=	स्त्रीलिंग
म्ब्रीन	=	स्त्रीलिंग तथा नषु सक्लिय ।
ह क	=	हत्वय कृदन्त ।

1

प्राकृत-व्याकरगा के तृतीय पाद में ं सिद्ध किये गये शहरों की

-} कोप-सूची ह

(पद्धति परिचय-योग मं प्रथम शब्द प्राण्त नाया का है,द्वितीय ग्रक्षरात्मक लघु सकेत प्राक्तन गब्द की व्या-करण गत विरोषता का सूचक है, ततीय कोच्छा तगत दा द मूल प्राकृत दाख के सस्कृत रुपा तर का अववोधक है छोर चतुप स्थानीय नार हिन्दी-सात्पय घोषक है। इसी प्रकार से प्रथम ग्रार पाद सस्या की सथा दूसरा छक सूत्रों नी त्रम सस्या को प्रवन्तित करते है। यो य्याकरण गत बग्दों का यह नव्द कीय जातस्य है।

श्र व (च) और, पुन, फिर, अवघारण, निश्चय इत्यादि, ३ ७० । श्रद्द अ (अति) अनिशय, उत्तरप, महत्व पूजा आदि अयक,

। एए१ ई श्चक्रखराहें न (अक्षराणि) अक्षर, वर्ण, ज्ञान, अधिनस्वर,

3 8381

श्चरमीपु ((अन्ति आग,३२०,१२५। श्चरामग्रम्मिन (अङ्गें अगे) प्रत्येक अगमे, ३१। श्रद्धीश्र अव (वासिष्ट) बैठा, ३ १६३।

श्राच्छेदन, व्याच्छ्वज्जेदन, व्यन्छोश्रह (स्यीयते) बैठ जाता है, ३ १६० ।

श्राज्य अरा अरा अराज, ३-१०५।

(हे) श्रज्ञ !,(हे) धरजी ¹पु (हे आय ¹) हे श्रेष्ठ ¹ हे मुनिराज 1 ३ ३८।

श्चिष्ठिञ्च स्त्री (हे आर्यें !हे साघ्वीजी महा !३४१ ग्राट्रएह् वि (अव्टानाम) भाठी ना, ३ १२३

श्रद्रएहं (अप्टानाम्) आठो का, ३ १२३ । श्रद्वारसरह वि (अप्टादगानाम अठारहो का, ३-४२३।

श्राणाइएए वि (अनाचीणम) अनाचरित, ३ +३४ । श्रद्धा पु (अध्यन्) माग, रास्ता, ३-५६ । श्रद्धाणो पु (अध्यान) माग, रास्ता, ३,५६ ।

श्रन्ते वि (अन्या) दूसरे, ३ ५८।

द्यन्तर्हिम (अयस्मिन्) अय मे, ग्रयं पर, ३ ५९ श्चन्नम्म (अयस्मिन) अन्य में, ३ ५९। म्प्रन्तस्य (अयस्यिन् धाय म, ३-५९। श्रान्तेसि (अयेपाम्) अयो का, ३-६१। ध्यन्नेसि (अयासाम्) अय (स्त्रियो ना,

3-48 1 ध्यत्पा पु (आत्मा) चेतन तस्य, जीव, आत्मा,

३-५६ ।

(हे) श्राप्प, (हे आमन्) हे आत्मा, ३४९ श्रद्भा (आत्मना) आस्मा द्वारा, ३१४, ५७। न्प्रत्वरा (आत्मना आत्मा द्वारा, ३१४। क्रद्यणिखा (आत्मना) आत्मा द्वारा, ३ १४, ५७ ,

श्चप्पासो पु (आत्मा) आत्मा, जीव, ३ ५६ । श्राप्पार्गेस (आस्मना) आत्मा द्वारा, ३-५७।

श्रमृसय (असी) यह अयवा वह, ३८८ । श्रम स्त्री सर्वे (असी) यह (स्त्री), ३-८७।

ष्ट्रामुनपुसर्वे अद) यह, ३८७ । श्चमुम्मि (अमुध्मिन्) इसमें, इस पर, ३ ४६, ८६।

श्रक्तिसर्वे । अहम) में ३ १०५ । द्यस्मि सर्वे (माम) मुलको, ३ १०७ ।

श्रम्भो अ (अ।श्चर्यं जयॅ) आरचय-अर्थक अन्यय,

₹ ₹₹ ;

प्रम्ह सब (वयम्) हम, ३ १०६ । श्चरह (माम्) मुचना, ३-१०७। श्चम्ह (अस्मान्) हमनो, ३ १०८। श्चम्ह (अस्माभि) हमारे से, ३१०। श्चम्ह् (मम) मरा, ३ ८१३ । ध्यस्ह (अस्मारम्) हमारा, ३ ११४। व्यन्द्रशो (अस्मत्) हमार से.३-११२ । श्चमहिम (मिष) मुझ पर, ३११६। थम्हस् (बस्मास्) हमारे पर, ३१७। धारहारा (अस्मावम्) हमारा, ३-११४। थ्यम्हारा (अस्मात्रम्) हमारा, ३-११४। धम्हास (अस्मास्) हमारे पर, ३-११७। श्चम्हा सुन्ती (अस्मत्) हमार से, ३ (१२। श्रमहादि (अस्मामि) हमारे हारा, ३-११० । श्चम्हाहितो (अस्मन्) हमार से, १-११२। श्रम्हि (अहम्) मैं, ३ १०५। ध्यम्हे (वयम्) हम, ३-१०६, १४७, १४८। भ्रम्हे (अस्मानम्) हमार, ३ २६, ११४। श्चम्हे (अस्मात) हमको, ३ १०८। श्रमहै (अस्माभि हमारे द्वारा, ३ ११०। थ्यम्हीहें (अस्मानि) हमारे द्वारा, ३-११०। प्रमहेसु (अस्मासु) हमार में, हमारे पर, ३ ११७ । ध्यम्हे गुत्तो (अन्मत) हमारे छे, ३-११२ । श्चम्हा (वयम्) हम, ३-१०६, ३४७ । श्चमहा अस्मान्) हमको, ३-१०८। ध्यम्ही (अस्मावम्) हमारा, ३ ११४। इय सव ,अयम्) यह ३ ७३ । ष्प्रयम्मि (अस्भिन्) इनमे इन पर, ३ ८४, ८९ । ।यास्त्री (धना) बकरी, ३३०। (बराण राव (अपरेयाम्) दूसरों का ३-६५ । विरेसि सर्व (अपरेषाम्) दूसरों 🖅 ३ ६१ । ।म अर । अस्) होना, ३-१४६। हिह (अहिम) मैं है, ३-१४६ 1 सि (असि) 🏋 है, व-१४६, १८०। र्जात्य (मिलि) कह है ३-१४६, १४०, ६४८। म्हा, मह (स्म) हम है ३ १४७ । द्यासि (शामीन्) वण्या ३ ६४ ।

षामि (मानी, मानन) नू या, मै था, ३ १६४।

च्यहेसि (अर्थान जावी , जावन्) यहतू, मैं चा ३ ११४ द्यारम स्व (अस्प) इतका, ३ ७४ । व्यक्ति सव (अस्मिन् । इनमें, ३-७४ । व्यक्त सर्व (जु अर्थो, हर्रो अर्थो, नतु अर्द) यह, ३-८० । व्यक्त सर्व । जहुरा में, ३-९ ०५ । १४०, १४८, १६४ । व्यक्त सर्व । जहुरा में, ३-१०५ । व्यक्त स्व (अयहा) जनवा, चा, ३ ०३ । व्यक्ति स्व (अयहा) जनवा, चा, ३ ०३ ।

[21]

न्त्रागमा वि (सागन) आया हुआ, ३-१६, १९, ३० ५०, ५२ । न्त्रागस्त्रो वि (जागन) आया हुआ, ३ ५५, १२४, १२६ १२९ ।

[\$]

इ सर्व (तव) तेरा, ३९९ । इश्रराई वि (इतराणि) अग्य, दूगरं, हीन,त्रयम, ३ (३४) इद्यरे वि (इतरा) अग्य, ३ ५८ । इसमो सब (इदम्) (एतन्) यह, इमहो, १-७९, ८५। इद सब (इदम्) यह, ३-७९ १ इमं सब (इदम्) यह, ३-७२, ७०, ७८ । इसी (बयम्, यह, ३-७२, ७३ ! इमा स्त्री (इयम्) यह, ३-७२, ७३ । इभिद्या स्त्री (इयम्) यह, ३-७३ । इमे पु (इमें, इवान्) मे, इनहो, दै-अन, ७७ । इमिणा (अनेत) इससे, ३६९ । इमेख (बनेन) इममे, १६९, ७२, ७०। इमेहि (एमि) इन्हें, ३ ३० । इम्स अस्य) इसका, ३-७४, ८१ इमीए, इमाण अनया) इसमे (स्थी), १३२ इमाण (बासम्) इनकी स्थी, ३ ६१, ८१ इमीर्ण, इमार्ग (तासाम्) इनका स्त्रोत) १ १२ । इमेसि (अस्मिन्) इसमें, ३-६१, ८१ । इवस्मि (बहिमन्) इममें, ३ ६०, ७४, ७०, ७६ ; इसस्मि (बस्मिन्) इमर्मे, ३०७५, ७६ । भ (इह) वहां पर, इम बगद पर, ३००% वर ।

[\frac{2}{5}]

विस्मि सब (अस्मिन्) हममे ३ ८४।

[3]

बच्छा पू (जगा) बैल सांट २ ५६ ।
च्छाहो पू (नरमाह जरसाह इत उत्तम, मामस्य
२-८१ ।
ग्रेजोश्च पू (उद्योतम) प्रवाश मा, २-१२७ ।
वक्त मय (नय) तुन्हारा, २ ९९ ।
उद्योदि सर्व (युग्मारि) आप द्वारा ३ ९५ ।
वस्ति सर्व (युग्मारि) आप द्वारा ३ ९५ ।
वस्ति युग्मारि) आप द्वारा ३ ९५ ।
वस्ति युग्मारि) आप द्वारा, ३ ९५ ।
वस्ति युग्मारि) आप ग्रेजिंग १९ ।
वस्ति (युग्मारि) तुम त, २ ९८ ।
वस्ति (युग्मारि) तुम त, २ ९८ ।
वस्ति (युग्मारि) आप द्वारा, ३ ९५ ।

दवगयस्मि वि (चपगते) व्यतीत हो जाने पर, ३ ५७ । [ऊ]

[\sigma]

ण्य (एतत्) यह, ३ ८४, ८६ १३४।
पए (एते) ये, ३-४,५८,८६।
पद्मस्स (एतस्य) इनका, ३ ८१।
पद्मस्य (एतस्य) इसका, ३ ३२।
पद्मस्य स्त्री (एतस्या) इसका, ३ ३२।
पद्मस्य स्त्री (एतस्या) इसका, ३ ३२।
पद्मस्य स्त्री (एतासाम इनका, ३ ३२।
पद्मस्य स्त्री (एतासाम इनका, ३ ३२।
पद्मस्य स्त्री (एतासाम इनका, ३ ३२।
पद्मस्य (एतस्यन्य) इसमे, ३ २६,८१।
पद्मा पु (एतस्यन्य) इसमे, ३ २२।

ए सव (तव) तेरा, ३९९।

पद्माउ पु । एतस्मात्) दगमें, ३ ८२ ।
एत्राहितों, एआहि, गु एतस्मात्) इनसे, ३ ८२ ।
एत्राह्मा पु (एतस्मात्) इमम, ३-८२ ८६ ।
एत्राह्मा पु (एतस्मित्) इमम, ३-६० ।
एत्राह्मा पु (एतस्मित्) इसम, ३-६० ।
एत्राह्मा पु (एत्राह्मात्) इसम, ३-६० ।
एत्राह्मा पु (एत्रा) वोद्दे वोई एत्, ३ ५८ ।
एत्राह्मा वि (एत्रेन्म) प्रत्यत्व वोई कोई, ३-१ ।
एत्राह्मा वि (एत्रेन्म) प्रत्यत्व से ३-१ ।
एत्राह्मा वि (एत्रेन्म) प्रत्यत्व, हर एक, ३-१ ।
एत्राह्मे अ (इदानीम) इस्त समय में, अधुना ३ ८२,

मत्तो अ (अन) यहां पर, ३ ८२,८३।
पृत्य अ (अन) यहां पर २-८०।
पृत्य, पृत्विणा सव (एतन) इनसे, ३-६९।
एतया स्त्री (अजा मादा भेड़, ३--६९।
एस सव (गप यह, २-१,८५,१४७।
पुसा सव स्त्री पुषा) यह, ३-२८,८५८६।
पुसु सव पु (गपु) इन पर, २-७४।
पुसो सव पु (एप) इनके द्वारा, ३-७४।
पृही सव पु (एपि) इनके द्वारा, ३-७४।

[ओ]

[事]

फइ पु (पवि) अविता करने वाना विद्वान पुन्य,

कड्छा अ (नवा) क्य, निम समय, ३-१४२।
कड्छा अ (नवा) क्य, निम समय, ३-१४।
कड्छा अ (नवी) नाम निवासे का, ३-१८३।
कड्छा पु (नवी) नाम म मरने वाल, ३-४८।
कड्छा पु (है यत) है करने वाल, ३-४८।
कड्छा पु (है यत) है करने वाल, ३-४८।
कड्छा पु (वर्षा) काम ना करने वाला, ३-४८।
कर्म अ (कुत) नहीं पर, ३-६५७१।
कमलस्य न (नमलस्य) कमल ना, ३-२३।
कमलाओं रनी (नमलम्या) छट्टी मा, ३-२३।
कमलाओं रनी (नमलम्या) नमल जेते सुन्य वाली, ३ ८७६
कम्हा सव (नरनाम) निवासे, ३९६, ६८।

क्य एद (प्रतम) निया हुमा, ३ १६ ५३, २४, २७, २९ | काला व (क्दा) निस समय म, वस ३ ६५ । ११९, १२४, १२० ।

षयक्ञो वि पु (पृत्राय) जिसी काम सप्ण कर लिया हो ऐसाध्यक्ति, ३७३।

क्यप्पणामी वि (पृत प्रणाम) नमस्त्रार विया हुवा, 3 804 1

पर-क्रिया (ष्ट) करना धरेसि सम (नरोमि) में नरसा है, ३ १०५। परसे सक (करोवि) तू करता है, ३ १४५ । करण सम (बराति वह बरता है ३१४५। क्षाह सब- (वरिष्यामि) में वरूमा ३-१७०। काहिमि सक (करिप्यामि मैं कर गा, ३ १७०। काहिन्न मक बरिष्यति। वह बरेगा, ३ १६६ । काही सब (बरिप्यति से बरिप्याम यह बरेगा से प्रारम वरते हम वरेंगे, -१५२।

क्रामी सव (करिप्यति से करिप्याम) वह परेगा स प्रारम बरवे हम वर्रेन, १६२। काही द्यासमा (करिष्यति से मरिष्याम यह करेगा से प्रारम नरवे हम परेंगे, १६२। धारेइ भेर (कारयनि) यह कराता है,३ १४९ १५३

कराजह, करावेह, प्रेर (मारवित) वह बराम है 3 880 € कारायेद्द प्रेर कारयि।) वह कराता है 1-9५३।

काराबी खड़, बराबिउनड कार्उनड प्रर नमणि उमसे बराया जाना है ३ १५२, १५३।

काञ्चण हुद्र (शृत्वा) वरव, -१५७ । श्य वि (मृत) विवाहका ३ ७३, १०५ । क्यावि (त्रता) की हुई, ३७ । क्त रिख वि बातिम्) बरावा हुआ, ६ १५२, '५ कर।विद्यावि (नारियम) ररामा हुआ :-१५२, १७३ किन्ना, वि अलं के माय) । अल्बिओ = अगक्ता) सुलोभिय की हुई, ३ १३५ ।

क्रयल पु (क्रतन) हाम हथती, ३ ७०। करिछी स्त्री (गरियो) हस्तिनी, हविनी, दे देर । क्ष्रत्यं, क्ष्रयं १ (नाध्यम्) नविना, नाम्य, दे-१४२ । यह क्ष (क्यम्) वते, विस तरह, ३ ५६ । इहिंब (मुत्र) महा पर, १-६०, ६५।

२०, ५१, ४५ ४६, ७०, ७७, १०९, ११०, ११८ माला वि स्मी (बाला) स्वाम वग बानी, तिरनार वरने वाली, ३ ३२।

काली वि (वाली) स्वाम वर्ण वाली, १ १२। कालेंग् पु (माला बान से, मध्य मे, ३ ११७ । फासवा, कामव पु (हे मा"मा) हे नानिन, ह हबन ३३८ ।

फाइ सक (करियामि) म वहाँगा, ३१७०। काहिइ सब (करिष्यति) यह नरा, ३ १६६ । काहे व (बदा) विस समय मे. ३ ६५। विणो सव (बस्मात्) विगमे, ३ ६८। विश्वहरस, किश्वहिमि त्रिया (बीसरिय्यामि) मैं रहूरि वरुगा, १-१६९ ।

किस्सा मय (गरमा) निन (रिन) गा, ३-६४। फीअ, कीश्रा, कीइ, कीए सव (गरवा) विस् (म्बी) का, ३ ६४ ।

कीस सर्वे (बस्य) बिसका, ३-६८ । हुन्द्रीय स्त्री (बुध्या) कॉल से, पट से, ३ ४६। कुरान्ति सर्व (भूपनि) ये बरत है, ३ १३०। कुमारी स्त्री (बूमारी) अविवाहिता लड्डी, रे १२। कुरुचरा, कुरुवरी वि (बुहचरा) बुहण्य वी रहने वानी

3-98 1 बुरा । (बुलम्) वर्ग, जाति, ३ ८० । कुविध्या नि (बुगिना) कुद्ध स्त्री ३१०५। येस बारो प्रतिशमास्त्र) वेद्यो वा मार, दे १५४। को सब (क) बीन, ३-७४।

का, सब (का) की (स्त्री) दे हैं। किं सव (शिम्) पया, ३ ८०, १८५। के सब के) यौन (यह बना पु.) ३ ५८,०१,१४३ ! बाद्यो सर्वे (बरमात्) विस्ते, र १६। बाट, भीत सर्व (बस्या) किस (स्वी) मा. ६३)। र्क्ष् राव (वम्) विश्वयो, ३ ३३-७३। केरा पु (बन) बिसमें हारा, ३ ६०, ७१ । क्रिया प (बेन्द्र) विसक्ते हारा, ३ ६९ । वस्त सव (करा अभवा बन्में) विम्रवा, दिन के रिने,

1 57 5 द्याम स्त्री (कन्याः अपना कन्य) विनकी, विनक तिय, १ ६३ ।

क्षांप्रत्यी (बस्या, बस्य) विमानी, विमाने लिए, विस्सा, काम, वीसे, कीए, कीखा, काड कीछ, (बस्या, वस्य) विमानी, तिस्य क्ष्मी का लिस, दे देते, दुधा

खास स्त्री (कामाम्) तिन न्त्रियाया, ३३६ ६९। मेर्सिपु (मेन्स् अथया नेपाम्) कित्रये छिये जिनना, ३६१,६२।

६६१, ६२। स्त्रों अ, (पुत , परा से, किस तरफ से, ७१। स्त्रों, क्ष्मों अ (पुत) वहा से, किस तरफ से, ३०१। क्ष्मता मर्व (बस्मात) किसते, ३-६६, ६८। क्ष्मि, जिजो साव (बस्मात्) विसमे, क्षिय पर, १६५। क्षमि, क्षिस, साव (बस्मिन्) विसमे, क्षिय पर, १६५। क्षसि, क्षिस, क्षांद्रिस्त्री (बस्माम) विस (स्त्री) म,

कासु-कीसुस्त्री (वासु) वित्त स्त्रिया म, ३ ३३ ।

[य]

क्षमाविद्य वि (क्षमितम्) मार्क विया हुआ, ३-१५२ । क्षमासमग्रो पु (क्षमाध्यमण) क्षमा गुण याला साधु, ३ ३८ ।

खलपुषि (हेसलपू) हे सलिहान को साफ वरने दाले, ३४०,४३। खलपुष्णावि (गलप्या, सलिहानको साफ वरो

खलपुर्या व (मनच्या, साठहान का सफ कर व याठे में द्वारा २ ४२, ४३ । खलपुर्यो वि (सलप्त सिल्हान मो साफ

वरने वाले का, ३-४३। खाणिश्रावि (खानिता) खुदबाई हुई, ३ ५७। स्नामिश्रवि (क्षमितम्) खमाय हुए को,३-१५२, १५३।

खामिवनइ, खामी अह स कि (क्षम्यते) उनसे समाया जाता है, ३ १५३ ।

खामेइ स त्रिया (क्षामयित) वह क्षमा कराता है ३-१५३।

स्तेन से) प्रावाश मे, ३-१४२।

[ग]

गई स्त्री (गिनि) गिति, गमन, चाल, ३८५। गडन्द्रांस्त्री (गवया) मादारोझ, रोमडी, पशु विशेष, ३-३५। गज्ञ ते अव (गजित्त) वे गजता वरते हैं, ३ १४२। गच्छं सन (गिमप्यामि) में जाऊता, ३ १७१, १७२। गय वि (गत) गया हुआ, समझा हुआ, ३-१४७। गय वि (गतम्) ""-, "३-१५६। आगडो वि (आगन) आया हुआ, ३ १६, २३ २९, ३०, ५०, ५२, ५४, ९७, १११,

१९८, ११९ १२४, १२६, १३६। ज्यायांमा वि (उपगते) प्राप्त होने पर, ३५७। सगच्छ सर्व (सगस्ये) मैं स्वीकार करू गा,३-१७१। सगामेई अर्क (सप्रामयति) यह युद्ध कराता है,

३-१५६। गय वि (गत) गया हुआ, बिता हुआ, ३-१५६। गरुस्रोधाइ अर्क (गुरुरिया प्रति) वडेकी तरह आच-

रण बरता है, ३-१३८। शरुष्राष्ट्र अय (अगुरु गुरु भवनि) यस मही होने पर भी यश जैसा बनता है, ३-१३८।

गाम पु (प्राम) वसति, गाव, ३-१४२ । गामे पु (प्रामे) ग्राम मे, ३ १३५ ।

गामिष पु (हे प्रामणी) हे बाम नायक, हे गाव मुन्तिया ३४२। गामिण पुःमामण्यम्) बाम नायक मो, मुखिया को, ३-१२४।

> गामणिणा पु (प्रामण्या) ग्राम नायक से, मुखिया से, ३-२४, ४३।

> गामिणिणो पु (प्रामण्य) प्रान नायक वा मुस्तिया का, ३४३।

गावा पु (प्रावा) पत्यर, पाषाण, ३-५६ । गावार्षो पु (ग्रावा) पत्यर, पाषाण, ३ ५६ ।

गिरी पु (गिरि) पवत, (च्पावलि) ३-१६, १८, १९, २२ २३, २४, १२४।

शुण पुन (गुण) गुण, पर्याय, स्वभाव, धर्म,

गुणा पु न (गुणा) ,, ,, ,, ३ ६४,८१ । गुरू पु (गुरू) गुरू, पूज्य बढा, ३ ३८,१२४ । ,, गुरू, (रूपावित) - १३८,१२४ ।

,, गुरू, (रूपावलि) " ३८,१२४। गोद्यम, गोजमा, पु (हे गोतम !) हे गीतम, ३ ३८। गोरी स्त्री (गीरी) न्त्री, गुस्त मुदर वण वानी, पानती, ३३२। गोरीखा, गोरीजो स्त्री (गीय अपवा गीरी) सुन्दर न्त्रियो की, ३-२८।

[4]

[두]

च अ (च और, ३७०, ४२। चड

> चडन्द्रो, पडको, वि 'चतुन्य) बार ते ३ १० । चडिंह, घडिंह वि (धतुन्ति चार द्वारा, ३ १७ । चडमु, पडमु वि (धतुन्तु) नार में नार पर, ३ १७ ।

चन्नसह वि (चनुस्तिम) चार वा, ३ १२३। चन्नः वि सत्तार) चार वा गमूह, ३ १२१। चनुतिस वि (चनुतिस्ति चौतीम, ३ १३६। चनुतिस वि (चनुतिस्ति चौतीम, ३ १३६। चनुतिस्ति वि (चेरास) धार, ३ १९२। चनुतिस्ति व्या (चेरान) ह मूठ बोल्ने वाची, ३ १८। विस्तित्ता पु (वाचा) वीचक, मन्त्र पन, ३ १४२। विस्तिस (चिंग्न) विश्वाल ते, साम समय ते, ३ १४। विरस्ति पु (चीरान्य) (चीरान्य चार वा, चीर ने, चीरसा पु (चीरान्य) (चीरान्य चार वा, चीर ने, ३ १४।

चौरेशा पृ (पोरेण) (पागत पार द्वारा, चोर से, ३-१६६।

श्चित (एव) ही, ३-८५ ८० I

[🛭]

द्रान्ह वि (क्यान् घर का, ३-४२) द्राचा स्त्री (क्या) कान, कान्ति प्रश्वित्व वसाह, व-2८। द्रारो स्त्री (क्या) , , , , ३०,३४। द्रिह्—संस्क क्षक (द्रेल्यानि) वे द्र्यमा, ३००१। [🔄]

जबह् धर (ज्या, ज्या) यह विजय प्राप्त रामा है ३१५८। जल न (जल) पानी, ३१६। जलोन्लिखाइ वि (जर्मादवानि) जल ए नीय हम

-१६।

जर्हि सब (यहिन्द् निममें, दे २०।

जा स्व (या) जो, दे देश।

जाश्चलि जब (जाया, उरान्त होते हैं, र-६',।

जाश्चला (जारी) उरसीत, पुन, दे देट।

जाश्च सब (यानि) जो, दे २६।

जाश्चा सब (यरमाव्) जिन्म, दे ६६।

जाश्च सब (यरमाव्) जिन्म, दे १६।

जाश्च सब (यरमाव्) जिन्म, दे ११।

जाश्च सब (यरमाव्) जानन वाना, दे ११।

जाश्च सब वेपाय्) जिन्म पुरमा) वा, दे ६६।

जाश्च सि प्राच वेपाय्) जिन्म (यानाम में बाना है)

दे १५४।

दे १९४।
जामादाणी पु (आमानार जागातृत् अनेव जानाता,
जामागावा की, ३८४।
जामाया पु (स्थाता) जमार, पुषं भा वित, १४८।
जामाया पु (स्थात्ती) जमार, पुषं भा वित, १४८।
जामाया पु (स्थात्ती, १४४, ४७ ४८।
जामाया (पर्या) निजय, १६९।
जानि मय (पर्या) निजय, ६६।
जाहि मयं (पर्याम) निजय, १९०। म, ३६०।
जाहि मयं (पर्याम) निजय, १९०। म, ३६०।
जाहि स्थानिक, निजय, भाषाय में ३६९।

जयह किया (ज्या) कर विजया होता है है है है है जिल्ला कि (जिला जीते विवाह, द देंदें) निम्मुनरीत मुल्लाकरों भीवन बीलागी है व्येष्ट विलाग करें (यह जिल्ला मिला, विवाह साम, विवाह साम, तम सक (तिम, जेम) भोजा बारो, राजो, ३-२६। विस्मा सब ,यस्मा) जिल (स्मी) वा ३-६४। जाध सब ,यस्मा जिल स्मी बा, ३-६४। जाध्या, जाद्दा जीउ, जाए सब (मस्मा) जिल (स्मी) बा, ३-६४। जीस सब (यस्मा) जिल स्त्री) बा, ३-६४।

जुनी दु (युवा) जवार, युवन, १ ५६। जुनाम नत्। दु (युवान्तर) जवार दुनम, १-५६। जुरासी दु (युना) जवार, युवन १ ५६। जेसव (य) जी (पुरस), १-५८, १४७,।

जेण सव (यन) जिम (पुरुष) से, ३ ६९ । जेसि सव (येपाम्) जिनका, ३ ६१ ।

जास सर्व (यथाम्) जिनका, ३ ६१ । स्रो

जी सब स्त्री (या) जो (स्त्री), २ ३३। ज सब न (यत्) जो, २-१४६। ज सब पु (यम्) जिसकी, २-२ । निस्त्री सब (यत्) जिसकी, विनवे द्वारा, ३ ६६। जसस सब (यस्य) जिनका ३ ६३। जास सब प्रस्त्रो जिनका ३ -६३।

जिस्सा, जीस, जीश्र, जीश्रा, जीह जीए सव (यस्या) जिस (स्त्री) ना, ३-६४।

जाश्रो, जम्हा सब (यस्मात जिमम, ३-६६ । जहिंसर्व (यह्मिन्) जिसम, , ६०। जाहिं, जीए, जाए सब (यन्यान्) निम स्त्री में,

३ ६०।
जे सब पु (ये) जो, ३ ५८, ४४७।
जोझी, जीखो सब (या) जो (स्त्रिया, ३ ३३।
जाइ सब न (यानि) जो, ३ २०।
जास्य सब स्त्री (यासाम्) जिन्हा, ३ ३३।
जास्य सब पु (यवाम्) जिन्हा, ३-६१, १३४।
जेसि सब पु (यवाम्) निक्ता ३ ६१।

ा जास्मिन, जास्मामि सक (जनामि) में जानता हु, ३-१५४।

जाणावेइ ग्रेर (नापयित) वह बतलाता है, ३ १४९ । समगुजाणामि मक (समनुजानामि) में अनुमीदन बरता हूँ, ३-१७७ ।

समगुजारोदना सर (समनुजानामि) मैं अनुमोदन

बरता है, ३ १७७

[45]

म्हा-म्हाथ वि (ध्यातम्) घ्याया हुआ, विचार विया हुआ, ३-१५६ ।

[]

द्विद्या नि स्त्रो (स्थिता) ठहरी हुई, ३७०। (ठ)

ठिस्र वि (स्थितम्) ठहरा हुआ, ३-१६, २९, ३०, १०९ ११५, ११६, ११८, ११६।

(હ)

[ग]

ण सव (तम्) उसको, ३ ७७।

स्प सव (इमम्) इतका, ३ ७७।

स्प सव (माम्) मुशकी, ३-१०७।

स्पारां पु (तर) मनुष्य, ३ ३।

स्पार्य (अतया) इसमे, ७०।

स्पार्थ सव (तामा) उसमे, ३-७०।

स्पार्थ सव (एताव, एनाव, अमून) इनको इन्हे, ३ ७७, ८७

१-७, १०८, १९८, ११०, ११०।

स्पार्थ, सव (तेन, अनेन, अनुना) उससे, इससे, ३-७०,

ऐहिसन (तै। उनम, ३७०। स्रो सन (अस्माकम) हमारा, ३-११४।

[त]

99 1

त अ (तत्) वाक्य आरम्भक अन्यय विशेष, २-८६। त न सब (तत्) बहु, उसको, २ ८६। त स्थो सब (ताम्) उसको, २-२३। तेण सब (तेन) उससे, २-६९,१०५,१६०। तेण सब (तेन) उससे, २ १३७।

तस्म सर्वे प्र (तस्य) चरारा, ३ ६३,८९,१८६ । तास गर्वे पु (सस्य) उसका, ३-६३। ताप, तिस्सा, सीमे, सर्व स्त्री (क्षस्या) उसका, ३ ६३, \$Y, \$Y ! सीख, तीबा, तीइ, शीए, सब स्त्री (तस्या) उमना, 4-481 तम्हा सव (तस्मात्) उपसे, ३६६६७। ताओं सर्वे (तस्मान्) उसते, ३-६६ सी सब तस्मात्। उससे, ३-६७। तीन, सान, सब (सा) वे (स्त्रियो), ३ ३ । स, सब सम्) उगकी, ३-ग्१। सम्मि सर्व (तस्मिन्) उनम, ३-११। तहि सब, (तस्मिन्) उनमें, ३-६० । शीए, ताए, वाहि, सब स्त्री (तामाम्) उममें, ३ ६० । ते, सय पु (ते) य, ३ ५८,६५,८६,४४७, ४८। नाच्या राव स्त्री (ता) वे, ३-८६। तासा सब प्र (तेयाम्) उनवा ३-६१। तांग्रा मब स्त्री (तासाम्) इतशी, ३ ३३,८१ । तेसि सव प्र (तेपाम जनका, ३ ६१ ६२,८१,१ ४। मास सम स्त्री (सामाम्) वनना, ३-६२ । तेम् सव पू (तेपु, बर्ग, व ३५। तीष्प्र सव स्त्री (तामु) उनमें, ३-११८। तद्वाथ (तदा) उत समय म, तय ३-६५। तक्ता पु (तदा) सब्ही बाटने वाना बहुई, ३-५६। सवलाणी पु (वना) स्रको बाटन वाला बर्ड, २ १६ । सण न (तृणम्) तित्रका, पात, २~३७ । सत्ती धर्व (स्वत) मुझग ३-१६। समिम सब (तरिमात्र) उसमें, ६-६९। सम्र " " (म्यायसि)-३-१६,१८,१९,२२ २३,२४ । साम मर्व (तम्या । उत्तरा, ३-६३ । ताला म (तदा) उम समय तद, 4-६५। सास सर्वे (तम्य) उसना *-६२। ताहे अव (तदा) तब दे६५ । तिखडा स्त्री, (तिबटा) विजय गाम की रागनिती, 3-001 तिरिष्ठ संच्या वाषक वि (वीता) धीन, १ १२१ । तिटाई संस्या वि (त्रयानाम्) भार का, दे १२३, । (तरहं हस्या वि (पदामाम्) गीन का दे ११८,१२३ ।

तिस संस्या वि (तिष्) तीन में, ३-१३ र । सीहिं सम्या वि (त्रिमि) होन से, ३ ११८ चीहितो संस्या वि | त्रिमि | वीत हे, १ ५८। विस्सा सर्व स्त्री [सस्या] उत्तरा, ६ ६४, १ ४ : तिस संस्या वि [त्रिप] सीन में, ३ १३५। तीए सब स्त्री तस्या] उसका, ५६४.। सीस सस्या वि [विष] तीन में. ३ ११८। चीहि, वीहितो सम्या वि । विभिः विभ्यः। धीव है, तु सब [सब, युष्माकम] तेरा, तुम्हारा, ३ ९९, १०० । तुम सब [स्वम्, स्वाम्] तू, तुप्तको, ३ ... ९२, tx4, 140, 144, 1011 तुस सब [स्वया] तुझत, -९४। ते सव [स्वया] [गुम्बम] [हव] वेहाने, तरे निये, तेगा, ३-८०, ९८, ६९, १४ । तुह सब [स्वम्, स्वाम्, स्वत्, तम, स्विम] मू, तुशका सुसस, तेरा, तुलमें, ३ ८०, ९०, १२, ९६ 99. 107 1 तुई सव [तव नुन्यन्[तुन्हारा, तरे निए " ! ! । सुम धर्व [स्वाम्, स्वया, धव, स्वयि] सुत्रकी, दुमने वेरा, गुलमें, ३ ८०, ९०, ९२,९६,९९,१०२। सुरहे सर्व (यूयम्, स्विय, युव्यात) सुम, तर पर, तुम ३ ९१. ९३ । तुम्ह सर्व (यूपम् युव्यान) मुम, मुमको, ३ ९१ । तुक्क गव यूमम् युष्मान्, युष्मानम्) गुम, नुमना, 4-54,031 तुडम सब (तुम्यम्, तय, स्वत्) तेर लिए तेरा तुमन 2-96, 99, 2001 तुम्ह सर्वे (पूपम् सव, तुम्यम् स्वत्, मुप्पावम् तुन, ता तरे निये तृत्रम, तुम्हारा, दे ११। ते (त, तु) मर्थ (स्वया, तूम्यम् तक) तुमत, तर विवे वेस, ६-८०, ९४, ९९ । तेल सर्व (तेत्र) उगते, ३-६९, १०५ १६० । तो व (तदा, तस्मान्) तब, उन समन, ३-३० १८० । सोसियछ वि (तीवितम्) गुग विया हमा वे १०० 17 " " 3 140 5 तामिख वि (वोविवन्) स्वर-वर (स्वर) गीमता वरना, लुवरामो-मु-ग मर (खरगम) हम ही ग्रण वर्ष ₹, ₹-₹¥7, ₹**4**६ 1

वुत्रश् लनः (स्वर्धात वह वीघ्रता परता है २-१४५ । वुत्रश्चे अनः स्वर्धात) हु वीघ्रता परता है २-१४५ । तुत्रश्ह लकः (स्वर्धा) तुन वीघ्रता परो, १ १७६ । तुत्रस्तु लनः (स्वरन्तु) च वीघ्रता गरें, २-१७६ । तुत्रस्तु लनः (स्वरन्तु) च वीघ्रता वरें है १-१७८ । १ रते हैं, १-१७८ ।

[뀍]

यण्या पु (स्तनी) दोषुच, दो प्रयोपर, ३-१३०।

[द]

दच्छं सक (इहमामि) मैं देखू गा, ३-१७१। देमदेसाखद्द, दमदमाद अच (दमदनायते) दम् दम् गव्द करता है, ३ १३८।

देशे

देच्छ सक (द्रस्यामि) में देखू गा, ३ १७१ ।
दीमह सक (इस्पते) दिखलाई देता है, ३-१६९ ।
दिद्वी नि (हस्ट) देशा हुआ, ३-९० ।
दिद्वी नि (हस्ट) देशे हुआ, ३-९० ।
दिद्वी नि (हस्ट) देशे हुए, ३-१०५ ।
दासमह सम्ला (दर्शयति) यह दिखलाता है ३-१४९ ।
दमगढ सस्या वि (दशानाम्) दत्ता था, ३ १२३ ।
दिह (दशानाम्) ३-१६, १९ २०, २२, २३
२४, २५, २६, ३७, १२४, १२८ ।

या

विक्षित (ददस्य) तूं तै, ३-१७४।

देष्ठ सक (ददस्य) तूं तै, ३-१७४।

दाह वाहित सक (ददियो) मैं देक गा, ३१७०।
दाख, यु त, (वात) यात उत्तया त्याय, ३-१०।
दिख, दालत, पु (दात्व) दान देने वाला, ३-३९।
दि त, (तव) तेरा, ५-९९।
दिख पु (दिया) ब्राह्मण, ३-१६।
दिख पु (दिया) ब्राह्मण, ३-१६।
दिख पु (देवी) ब्राह्मण, ३-१६।
दुवें कि (दें) यो, ३-१२०।
दुवें कि (दें) यो, ३-१२०।

दुहिन्ना स्त्री (दुहिता) सहकी की जहकी, ३ ३५ । दुहियाहि स्त्री (दुहितामि) लक्ष्मी की पुत्रियौ द्वारा, ?-३५ । दुहिचासु स्थी, (दुहितापु) लडकी की पुत्रिवा मे ३-३५। दूसेइ सब (दोवयित) वह दोव युक्त कराता है, ३-१५३ दे सर्व (स्वया) तुससे, ३-९४ । दे सव (मव) तेरा, :-९९। देव पु (देव) देव, परमेश्वर, इ-१८। देवस्य पु (देवस्य) देव का, परमेश्वर का, १-१३१ देवाय पु (देवाय) देव के लिए, ३-१३२। देवाण पु (देवानाम) देवताओ का, ३-१ १, १३२। देवा पु ।देव) देवता, ३-३८। देव पु (देवम) देवता को, ३-११ : देवस्मि पु (देवस्मि) देव मे, ३-११। देविन्दी पु (देवे द्वः देवताओं मा स्वामी, इद्र, ३ १६२ । दो सख्या वि (द्वि) दो, ३ ११९,६२० । द्योपिया वि (हे) दो, ३-३८,१२०,१३०,१४२। दोएह वि (इयो) दी ना, ३११९,१२३। क्षेपह वि (इयो) दो का, ३ ९२३। दोसन्तो वि (हाम्याम्) दो से, ३-१३०। होसु वि (दयो) दो में, ३-११९,१३०। दोहिंतो वि (द्राभ्याम्) दो से, ३-११९,१३०।

[9]

दोहि वि (द्वाभ्याम्) दा से, ३-११९।

दोहिं वि (हाम्याम्) दो से, ३१३०।

घर्ण, न (यनम) धन-सम्पत्ति, ३-५०,४२,४३,५५,५६,६३
७९,८६,९९,१००,११३,११४,१९८,११४,९२४।
धर्णस्म, न (धनस्य) धन-सम्पत्ति का, ३-१३४।
धन्ना स्त्री, (य-वा) एक स्त्री का नाम, चाय स्त्री,३-८६।
युव्चा स्त्री (दुद्धिण) लक्ष्मी को लक्ष्मी, ३-७३)
धेर्मु स्त्री (धेर्मु) नव प्रमुखा साम, दुधार-पठकेवाली
गाय, (क्पावलि) २-१६,१८१९,२०,२१,२३,
२४,२०,२९,१२४।

न अ (न) नहीं, ३- ०५,१३५,१४१,१४२,१६०,१७७,

(60)

तरम सब पु (तस्य) उत्तरा, ३ ६३,८१,१८६ । तास सब पु (सम्य) उसका, ३-६३। ताप, तिस्ता, तीम, सब स्त्री (तम्या) उसना, ३ ६३, \$Y, \$Y 1 सीद्य, तीवा, तीइ, सीए, सर्व स्त्री (तस्या) उमना, 4-581 तम्हा सय (तस्मात्) उमने, ३६६६७। ताओं सव (तस्मात्) उत्तते, ३-६६ तो सब सहमात्। उससे, ३-६७। क्षीत्र, तार, राव (ता) वे (स्त्रियाँ), ३ ६ । सं, सव तम्) उनको, ३-- ११। त्तस्मि सर्व (तस्मिन्) उनमें, ३-११। सहि सब (सहिम्यू) उनम, ३-६०। सीए, साए, ताहि, सब स्त्री (सामाम्) उगर्म, ३ ६० । ते, सर्वे पु (त) थे, ३ ५८,६५,८६,१४७, ४८। ताधा सव स्त्री (ताः) वे, ३-८६। ताण सब पु (तथाम्) उनका ३-६९। ताग्रा सव स्त्री (सामाम्) बानी, ३ ३३,८१ । तेसि सब पू (तेपान जाना, ३ ६१ ६२,८१,१ ४। नास सब स्त्री (तागाम्) उनगा, ३-६२। तेमु सब पू (तेषु, उनमं, ३ ३५ : तीस सब स्त्री (तामु) डामे, ३-११८। सङ्ख्या अ (सदा) उस समय में, सब ३-६५ । सक्ता पु (तथा) लाडी बाटने बाना बढ़ई, ३-५६। सक्खाणां पु (वना) रुपड़ी बाटन बाला बढ़ई, ३ ५६ । सण न (मृणम्) तिनका, पात, ३-३७ । नसो सब (खता) तुसमे ३-६६। सम्मिसम् (सहिमन्) उसमें, २-१९। सरू "" (मगवनि)-३-१६,१८,१०,२२,२३ २४ । साम सर्व (सम्या) उनका, १-६६ । साला म (तदा) उन मनय तब, ३-६५। साम गव (तस्य) उत्तरा -६२। लाहे अव (तदा) तव ३६५। तिखाडा न्त्री (तिबटा) चित्रण नाम शी रागतिनी, ३७०। विदिश्व संस्था पापक वि (चीनि) मीन, १ १२१ । तिएइ सम्या वि (वयातान्) तीन वा, ६ १२३, ।

तिग्रहें बन्या वि (प्रयापाय्) गीत श्रा,द-११८,१२५ र

तिसु संस्था वि (तियु) ती । में, ३ १३५ । तोहि सब्या वि (विभि) शीन में, ३ ११८ सीहिती संस्या वि | त्रिभि] शीन से, ३ १५८ । तिस्सा सर्वे स्थी [तस्या] उत्तरा, ३ ६४, १३४ । तिस सस्या वि [बिप्र] शान में, ६ १६५। सीए सर्वे स्त्री 'सस्या | उसका, 4 ६४,1 चीस सस्या वि [त्रिष्] तीन में, ३ ११८। र्तीहि, तीहितो सभ्या वि श्विमिन, विम्य । श्वीत में, तु सब [सब, युष्नारम] तेरा, तुम्हारा, ३ ९९, १०० । तुर्म सब [स्वम्, रताम्] सू, तुराका, ३ ९०, ९२, ₹¥६, ₹¥८, ₹६¥, ₹७२ € तुम सब [स्वया] सुप्तते, : ९४ । ते सम [स्वया] [तुम्यम] [तव] दशमे, नेरे निम, तेग, वे-८०, ९४, ६९ १४३ । तुह सब [स्वम्, स्वाम्, स्वत्, तब, स्ववि] तृ, नुग्रश युसरा, तेरा, बुशमें, ३ ८० ९०, ९२, ९६, 99, 809 तुद्द् सय [तव तुन्यम्[सुम्हारा, तरे निए. ३-९९ । लुम सव. [स्वाम्, स्वमा, तव, स्विम] तुनाको, नुसने वैरा, मुतर्म, ३-८० ९०, १२,९६,९९,१०२। सुम्हे सर्व । पूपम्, शांव, पुरमान्) तुम, केरे गर, तुन 3-41, 44 1 सुम्ह सर्व (यूपम्, युध्मान्) सुम, सुमको ३ ९६ । लुउक्त सर्व मूचम्, युग्मान्, युव्माकम्) पुम, सुमनी 3-51, 511 तुरुम सय (तुम्बम्, तब, स्वत्) नरे विष तेश तुप्ति ₹-**₹**, *₹, १०० 1 तुन्द्र सर्वे (यूपम् सव, तुन्यम् स्त्रा, दुव्यातम तुन, वेश वेरे निये गुपने मुस्तास, १ %! ते (त, तू) मन (स्वया मुख्यन्, मन) मुनन, नेर विदे क्ता, ३-८०, ९८, ९६ १ तेण मर्व (तेन) उनमे, 4-६९, १०५ १६० । सी अ (श्रदा, सहवात्) तक, यस गमय, ३ ३० १८० १ तोस्राबन्ध वि (वीचित्रम्) शुग्न किया हुआ र १५० सोसिक्स वि (सोविजम्) स्वर-व्यक (स्वर) ग्रीयना गण्याः गुपरामो-मु-म अर (सरवास) हर होरापु वर्ष E, \$-244, 1951

तुत्राए वक, (स्वरयति यह बीधता वस्ता है ३-१४% तुवासे अव ारतरयाति) सु शोधाता गरता है ३-१४५। तुवग्ह अक (स्वया) सुम भी घना वरो, ३-१७६। तुषरन्तु अर (स्वरन्तु) व शोधता गरें, ३ १७६ । तुषरेज्ञ, तुषरेज्ञा सनः । त्ररयन्ति) वे पीधना र रते हैं, ३-१७८।

िथी

यग्या पु (स्तनी) दोनुष, दा पयोषर, ३ १३० ।

[द]

द्च्छं सक (इस्यानि) मैं देख गा, ३-१७१ । देमदमाध्यह, दमदमाइ अक (दमदनायते) दम् दम् शब्द बरता है, ३-१३८।

दर्श "

दच्छ सक (इहसामि) मैं देखू गा, ३-१७१ । दीमइ सक (दृश्यते) दिखलाई देता है, ३-१६१। न्ट्रि वि (हप्ट) देखा हुआ, ३-९०। दिद्रा वि इच्छा) देने हुए, ३-१०५ । दर्रिसइ सक (दशयति) वह दिखलाता है ३-१४९। दमरह सस्या वि (दशानाम्) दशो ना, ३ १२३। दहि (द्यावित) ३-१६, १९ २०, २२, २३ २४, २५, २६, ३७, १२४, १२८।

दा

देहि सक (ददस्य) तू दे, ३-१७४। देस सक (ददस्व) सू दे, ३-१७४। दाह, दाहिमि सक (ददिष्ये) मैं देऊ गा, ३ १७० । दाण, पुन, (दान) दान उत्सव स्याव, ३-१६। दाय, दायार, पु (दात्) दान देने वाला, ३-३९। ि सव (स्वया) तुझसे, ३-९४। दि ,, (तव) तेरा, ३-९९। दिश्य पु (द्विज) श्राह्मण, ३-१६। दिवसारापु (दियसानाम्) दिना का। दुरिण वि (द्वे) थो, ३-१२०। दुद्धन (बुग्यम्) दूष, क्षीर, ३२९।

दुवे वि (है) हो, ३ १२०, १३०।

दुहिन्ना स्त्री (दृहिता) लडकी की लडकी ३-३५। दुर्दिआहि स्त्री (दृहिताभि) लडवी की पृत्रियौ द्वारा, २-३५ । दुहिस्रासु स्त्री, (दुहितापु) लहकी भी पुत्रिवा मे ३-३५। द्सेइ सब (दोपयति) वह दोप युक्त कराता है, ३ १५३ दे सव (स्वया) सुझसे, ३-९४। देसव (मव) तेरा, *-९९। देव पु (देव) देव, परमेश्वर, ३-३८। देवस्य पु (देवस्य) देव का, परमेश्वर का, १-१३१ देवाय पु (देवाय) देव के लिए, ३-१३२। देवारा प्र (देवानाम) देवताओ बा, ३-१ १, १३२। ऐवापु।देव) देवता, ३-३८। देख प (देवम) देवता की, ३-११। देवस्मि पु (देवस्मि) देव में, ३-१२। देखिन्दी पु (देवे द्र विवतामा का स्वामी, इद्र, ३-१६२। दो सस्या वि (द्वि) दो, ३ ११९,६२०। दोरिए वि (है) दो, ३-३८,१२०,१३०,१४२। वि (द्वयो) दो ना, ३११९,१२३। दोएह वि (इयो) दो का, ३ १२३। दोसन्तो वि (द्वाम्याम्) दो से, ३-१३०। दोसुवि (हया) दो में, ३-११९,१३०।

[日]

दोहिंतो वि (द्वाम्याम्) दो से, ३-११९,१३०।

दोहि वि (द्वाम्याम्) दो से, ३-११९।

होहिं वि (हाम्याम्) दो से, ३-१३०।

धरा, न (धनम) धन-सम्पत्ति, ३-५०,४२,४३,५५,५६,६३ ७९,८६,९९,१००,११३,११४,११८,११९,१२४। धण्हस, न (धनस्य) धन सम्पत्ति का, ३-१३४। ' धन्ना स्त्री, (घाषा) एक स्त्री का नाम, चन्य स्त्री,३-८६ । थुत्र्या स्त्री (दुहिता) लडकी की लडकी, ३-७३। धेर्ण स्त्री (धेनु) नव प्रसूता गाय, दुधार-वरूडेवाली गाय, (रूपावलि) ३-१६,१८,१९,२०,२१,२३,

78,70 79,1781

स व (न) नहीं, ३- ०५,४३५,१४१,१४२,१६०,१७७,

1601

नह स्त्री (नदी), हे नद्द । (हे नदि ह नदी, ३-४२। सक्ष स्त्री (नदीम्) गदी वा, ३-३६। नगान्दास्त्री (नताह) पनि वी ब'हन ३-३५। नम् सर (नम्) भारो पारण स फुल्ना, सक (नम्) नमस्यार बरना। नवेउन में (गम्यते) नमस्नार शिया जाता है, निविज्ञे, प्रविज्ञ, प्रे (नम्यते) नमस्कार विया जाता है, ३ १६०। नविश्र वि (निमाम्) तमाया हुना, ३ १५६ । वि (नतप्) तमा हुआ, प्रणत, उस्प, जिसकी नमस्यार विया गया ही बहु, ३ १४६। उन्नम वि (देगक (?) समुप्रत, ऊचा ३१०५। ब्रह्मामिश्र वि (उप्रमित) कवा हिया हुआ, ३-७० । नमी व (तम) नमस्कार, ३ ४६,४०१। नयगुर प. (नयाति) श्रीत, ३ १३० । नयरे न (नगरे) शहर मं, ३ १३५। नग्रह्ह सस्या वि (नवानाम्) नव (९ का, ३ १२३ । निषष्ट सक (परयति) वह दलता है, ३ ५६ ३ निविधाया वि (तिपृणित तिदय, बदणा रहित, ६ ३८। निट्र मी वि (निष्ठर) यश्रद आदमी ३ १४६ ।

निर्धेर्मन्ता मद (ययगिष्य) वारण करने बाश होता, ६-१००। निर्दि स्पी (पिथम्) गताने पो, ३ १०। नीला नीजा स्पी. (नीजा) सेस्या यिरोत, नील्यन यासी १ २२।

[प] बहुबाई, बहुबाखि मंद्रहरूको नमनों का देन्दर्स

विश्विष्य स्त्री दे० (प्राविका भाताको दारो दे रहे। प्रस्वस्कृतामा वि (प्रश्वास्त्र) प्रति का दे-दे देश। प्रदेश पर्देश पर्देश स्वर्धा है, दे हेश्य। प्रदेश प्रदेशका, प्रतिद्विष्ट गर्दा प्रतिप्ति वेट प्रदेश प्रदेशका, प्रतिद्विष्ट गर्दा प्रतिप्ति वेट प्रति है हैं। प्रतिद्विष्ट पर (पर्देश जन्मे पर्देश को दे हैं है। पढिस्र वि (पठिम्) परा हुना, ३ १४६ ।
पाडिस्र वि (पाजिम् । परावा हुना, ३ १५६ ।
पहिल्लाह सर (पितमानि । सात्म होना है। १-८०।
पहलूर नहर सरग नि (सन दहानव) पर्मु ।
पन् वाहद होर (पानमनि) वह निराम है दे-१०३।

पाइड् प्रेर ,पानवनि) बह निराम १ दे-१०६। पश्चित्रवाण पु (पाधिवानाम्) स्वत्रश्चा चा १८८। पद् " - """ व पाइड् पर (पादवनि) यह चलान है दे देश।

जराजनते थन (जनाजन) जराज हात है, ।
पहट्ट वि (अमृष्ट) भूता हुआ, १ १०५ ।
परिह्य पु, (परिभवं) निरम्हार को, ३ १८० ।
(हे) पहु पु (हे अमा) ह ईचर १ ८ ।
पहुरितरे अब (अभवन) हा अभावनीम हा है, १ १८० ।
पहु पु, अमु) ईत्यर, ३-८ ।
पाजम पु (आमृष्) गणी मृतु म १ १ ३ ।
पायनिर्मास्त में, (परान्ताः पाप के अनित भाग हाग,
१ १८४ ।

वाया पु (बारो बायेर, ३ १२०।
पि क्ष (क्षरि) भी, ३-१३७।
(ह) विक्ष पु (ते जित) है लिंग, ३ १९, ४०।
विक्षों पु वि (क्षर्य) प्यास, ३ ८९।
पद्यस्म वि क्षिया प्राप्त । विक्षरें पु (ते जित के प्राप्त) विषय १ १०।
विक्षरें पु (विक्षरें पु (तिक्षरें पु)))

वित्रन्द्धास्त्री (तिरूप्यमा) िता को बाँउन वृत्रीः १४०१ वित्ररा) दु (तिरूप) स्थिता को, ३-४४।

निर्देशित हमी (पृष्टे) गोठ पर, ३ १३४ । पुरिसो पु (पुरा) व्यक्ति, आपनी, १८६८० /८३ पुरिसा पु पुरा। अन्य आर्थी, ३-८८ ।

पुरुषी स्त्री (पृथिती) चर्ता पृष्टि, १-१६६ । वृत्राणी, वृता पु (प्रमा, मूट १-५६ । चन्छ-

पेरल्ड गर (इन्डे, बह न्या दे, 3-रू.)

पेच्छ, तक (मेसस्य) देन, वेसो, वे ४,४ १४,९६, १८,२१, २२,२६,२८,३६,५०,५२ ५व, ५४ ४६,७०,७९,९३,१०७, ०८,१२०, १२१,१२२,१२४,१२९ ।

पेच्छमु सन (प्रसास) तू देता ! ३-१७३।
पेच्छ उसक (प्रेसास) तू देता ! ३-१७३।
पेच्छासि मन (प्रेमे) मैं देसना है, ३-९३।
पेच्छामु सन (प्रसो) मैं दर्गू, ३-१७२।
पेमान (प्रेम) स्नेट, ३-२५।

पैस्मस्स न प्रेम्ण) स्नेह ना, ३ १०। प्रकास पु (प्रकास) नगस्तार, ३-१०४।

[P]

रुजन्ति अर (पुक्तन्ति) पूलते हैं, खिलते हैं, ३ २६ ।

[4]

उन्हा पु (ब्रह्मा) ब्रह्मा, विषाता, ३–५६ । स्व्हार्यो पु (ब्रह्मा) ,, , ३–५६ । हु वि (बट्ट) बहुत ३–१४१ । सिनो, वाला, पु (बाल, बाला) बालक अनेक बालक, ३-२४ ।

विदिया सल्या वि (डी) टा, २-१२०। वे सल्या वि (डी) टा, ३-११६,१२०। बीहड् अव (बिमेति) वह बरता है १ १३४,१३६। बीहन्ते मक (बिन्यनि) वे बरते ह, ३ १४२। युद्धी को (बुद्धि) बुद्धि मनि प्रता, ३ १९,२०।

(रूपावित) ३-१६,१८,१९,२०,२३,२४, २७ २९,४८,१२४।

ने सस्या वि (द्वी) दो, ३-१२०। वे एसा सक्या वि (द्वी) दो, अथवा दो नो, ३ १२०। वेदि, वेहिन्तो, सन्या वि (द्वान्याम्) दो ने,

3-8891

वें सुसस्या वि (द्वया) दा म, ३-११९। वेसह सस्या वि (द्वया) दो ना, ३-११९। म् अव्यक्तीसक (अन्नतीत) बोला, ३-१६२।

[H]

भण् मक (भण्) बोलना, कहना । भण्मिसन भणामि) मैं नहना हू मैं बोलता हूं,

६-४१। भगामी सब (भणाम) हम कहते हैं, हम बोलतें है, ३-०६, १५५।

भणमो, भिषामो सक (भणाम) हम बहते हैं, हम बातते हैं, ३ १५५।

भिष्य वि (भणितम्) कहा हुआ बोला हुआ ३ ७० भणिए वि (हे भणिते) हे कहने वाली, हे बोलने वाला, ३ ४ ।

मत्ता पु (भता) पति, (रुपावली), ३४४, ४५। मत्तुषा पु (भतृत्) पतियो ना, (भतु) पति से, पति ना, ३४४।

समाद्वह प्रेर कि (आगमिति वह युगाता है, २०१५१। सरह तक (स्मरति) वह स्मरण करता है, याद करता है, ३१३७।

भिश्मे सन (समराम 'हम स्मरण करते है ३-१३४।
भवस्य न १भवन) भवन, मकान १ २९।
भाभेद्र मेर (आमयति) वह पुनाता है, ३ १५१।
भावा पु (आता) भाई, (रपावली) २ ४७,४८।
भावा पुर (भाववि) वह चितन बराता है, ३ १४९।
भुत्त वि (भुवत्या भागा हमा, --९५।

भोच्छंसक भवि (भोक्ष्ये)में भोगुगा, ३१७१। भूअक होना "

होमि कक (भवति) यह होता है, ३ १४५। होइ कक (भवति) वह होता है, ३-१४४, १७८। होमी कक (भवाम) हम होते हैं ३ १५५। होमी कक (भवाम) हम होते हैं ३ १५५। होन्त कक (भवन्ति) व होते है, ३ २६। हासु आजायन (भव, भवतान्) तृ हो, ३ १७५। होज विधि (भवतु) यह होने, ३ १७८। होजनह, होजनह, होजनह विद्याल, वह होता है, -१७८।

होज्जिहिइ भवि (भविष्यति) वह होगा, ३-१७८। होज्ज्जन्त विधि (भवतु) वह होग, ३-१७८।

होज्ज विधि (भवतु) यह होव, ३-१५९ १६५, महत्ती, ममत्ती, महत्ता, मश्मती, शव (वत्) tus, tus : भूगमे, ३ १११ र होज्ञा विधि (नवतु) वह होते,३ १५६,१७८,१७९ । ममची, ममाहिती, ममामुत्ता, स्मेम् चा, तर हुउत्र विधि (भव भवतात्) मूहा, ३-१८० । (सहमय्) ह्यारे ते, ३ १३३। हीज्जद्द बतें. (मवति) यह होता है, ३-१६५ । मह, सम, सह, कहा, सबस्त, सब्ही, सर्व (बब) केत् होस्स,हो हिमि, होश्मामि, होहामि, श्रव (मनि-व्यामि) में होजगा, ३-१६६, १६७ १६९। मक्क, मक्काण, प्रमाण, मनाण, मनानं, होज्जरसामि, होज्जरस, हाव्जहायि, भवि (भवि महाण महारा नवं (श्रमातम्) हमारा, हमारे, ध्यामि) मैं होऊ गा, ५-१७८ । हामी, दे दिश हुवीक्ष मृत (अभवत्) वह हुआ ३ १९३। सि, सद्द, ससाद्द, सद, से, गव , ्मवि) गुर बर, होइचड्र नाय वन (गूपी) उत्तरे हुना जाता है, मे रेश्य । (मह. मे रेश्य) 7 (40 I समस्मि, सहस्मि, सञ्ज्ञस्मि, ग्रेश (पनि) गुत्र पर, होइउनइ भाव बम (भूयते) उत्तवे हुआ जाता है, 1 785 5 3-160 1 ममेलु, महेलु, मञ्मेलु, ममनु महत् गण्डप् हरं भाषेइ प्रेर (मावयति) यह चितन मराना है (अस्मामु) हमारे पर, हम पर, हमारे म, दे-११०। 7-149 1 मर्-मारइ सक (मारयित) वह मारताहै १ १५३ । होन्तो हेतु (अभविष्यत्) होता हुआ, होना, सर् थव वि (भिषे) मैं मरता है, ३ १४१। मलिखाई वि (महितानि) गराले हुए, १११५। हीमाग्ही हेलु (अमविष्यय्) होता हुमा, हौता महिला स्त्री (महिता) स्त्री नारी, ३-८६,८७ । पहुष्पिरे धर (प्रभानत) दा प्रभावशील होते है, महिले स्त्री । ह महिले !) हे भारि ! व-४५३ महिलाची स्त्री (भिल्ला) नारी गण, १८६१ 1-847 1 भूमिसु स्त्री (भूमियु) पृथ्वियो मे, १-१६। मही स्त्री (मही) पृथ्या भूवि एक नदी, इन्द स्थित भे सव (युषम्, युष्मान्, स्वया युष्माभि , युष्मानम् तुम 1-64 1 महुत मयु) शहद, १-२५। नुमको, नुससे, नुम्हारा, ३-९१ ९३,९४,९५, देशह्रीन (हमपु!)हगर्य, १०६७। 900,804 1 (#910ft)-3-94,24,20,7 ,77 73,38, भेक्छ, भवि (भेयवामि) मैं नेत्र हुँगा, -१७१। 24 24,894,8951 भगादद, ममारेद, भगावद, मगावेद, भागेद, प्रेर मात्रा स्त्री (गानू=मात्राः जनगी, माशा ३-४६ व (चानवति) यह युगाता है, ३ १५३ । माइगर्गो पु (गानु-गन्) गानावा का नदूर, १-४६ ह मि माइ-देवा पु (मानू-४व) माना रण रावद् ३ ४६ १ माइण म्पी (गापृणान्) माताबा शा, शा, क, १-४६ र मा बच्ह्या स्त्री ,मातृष्यमा) मारा की बहुत मोती, र ४१ र बिस मद (मर्म्) में, ३१०%। माउठ स्त्री (मात्र माता के लिये, ३ ४६) मी सथ (बयम्) हुम, ३१०६ । मानि म (मधी यागः वन-भगक) गहेती भी दुगर है स. गम. मि. भिम. मग्ह, गर्व (माम्) मुत्तको अर्थे में प्रमुख दिया जाने बाता बच्च वित्या 4-900 1 मि. मे. मग, मगत, मगाइ मह मवाइ, नव ₹ १•५1 गारच-संदाक्षा पु. (मार्थान्त्रव) मारत ४ 🗊 हा^{राष} (मया) पुत्रस, देन्द्रण ।

1-601

म ..

मात, सर्व (समा) गुर्शते १ ९०० १९० ।

माला स्त्री (माला, माला, ३ ३६, ८८ १२४। रूपार्वाल ₹-२७, ३०, ३६, ४१, ८८, १२४, १२६, १२७, १२९।

मि सब (माम्) मुमक्ते, ३, १०७।

मोल-

पम्मीलन्ति सक (उमीलन्ति) वे सोलते है, ३ २६। मुका वि । मुक्ता) मान में गये हुए छूटे हुए ३ १३४।

मुन्य आजा (मृत्य) छोड ३-२६। मीच्छ सक भवि भोदयामि, में छोड़ गा, ३-१७१। मुणिस्स पु (मृतये) मृति वे लिय, ३-१३१।

मुणीए। प्रातम्य) मृतियो वे लिय. ३-१५१। मुद्धा स्त्री (मुग्धा) मोहित हुई स्त्री, नायिना वा एक

भेद. --२९. ८६ ।

रूपावली --३-२९ मुढा पू (मूर्घा मस्तक, सिर, ३५६। मुद्धारा पु (मूर्घा भारतक, सिर ५ ५६। मुद्धित्राच, मुद्धित्राच, मुद्धित्राइ स्त्री (भुग्विनाया) मृत्या में, मुखा ना, १ २९।

सह न (मुसम्) मु ह, बदन, मुख, ३-२९।

महस्स न (मृतस्य) मुल का, ३ १२४, १२४। मुहा स्त्री वि (भूवी) मृतवाली, ३ ७० । में सब (मया, मम, मया) मुझसे, मेरा, मेरे पर ३-१०९

993. 194 1 मेहाप (भेषा) बादल, ३ १४२। सो सर्वे (ययम्) हम, ३ १०६। मोही पु (मोह) मूहना, अज्ञान राग, चित की व्यानता

मिस सब (अहम्) में ३-१०५। स्ह, बिह, महो, अन कि (अस्मि स्म) में ह, हम है,

2-8801

३८७।

यि ।

या-जामि अन (यामि मैं जाता हू, ३१४७ ।

[1]

रईको रईव रईहिन्तो स्त्री (रत्या, रत्या, गत्याम) रति से, रिन मे, ३ ५९।

रक्खसाण पु (रापवानाम्) राधनो ना, की, के, 3-185 1

रएए। पु (राजा) राजा से, राजा द्वारा, ३-५१। रित स्त्री (रात्रिम्) रात्रि को, ३ १३७। ₹म

र्मित सम्बाध कु (रात्वा) रमण करने, त्रीडा करवे. ३ १३६।

श्मिजनन्ति अक (रमाते) श्रीटा करते हैं, "-१४२। रयाणाइ न (रत्नानि) अनेक ग्ल, मणि, ३ १४२ : रहवई प (रधुपति) रामच इ. ३ ७० । राष्ट्रणा प (राज्ञा) राजा द्वारा, ३-५१। राया प् (राजा) राजा, नृत ३-१३६।

म्द्रपावलि-३-४९, ५०, ४१, ५२, ५३ ५४ ४५,५६ । रायाणां पु (राजा) नृप, ३ ४९, ५६, । राह प (राह) ग्रह, विशेष, ३ १८० । रिद्धीश्रो स्त्री ऋद्वय) विविध संगत्तिया, ३ ५८ । रुद-रोप्छं वक भवि (रोदिष्यामि) मैं रोऊ गा,३ १७१। रुसिंख हु (रोपवित्मु) कोध करने के लिये, ३ १४९। रे, रे अ (रे रे) अर, अरे, तिरस्कार, सूचक अव्यय, 3-361

रेहिन्त अक (गजते) शोभिन होते हैं, ३ २२, १२४। रोइत्था सक (रोचध्ये) तुम चाहते हो, ३-१४३ । रोच्छं अक भवि (रोदिप्मामि) में रोऊ गा, ३-१७१।

िली

लभू

लहेडज. लहिडजेडज सब (लम्यते) प्राप्त किया जाता है, ३-१६०।

लुद्धी वि (लब्धः) प्राप्त विया हुआ, ३ १३४ । लर्द्धन वि (लब्ब प्राप्त किया हुवा, प्राप्त,३-२३। लह पु (लघु) छोटा, हल्का, एक मात्रा वाला अक्षर,

3-438 1 लहुआइ सक (ल्युकरोति) वह छोटा करता है. ३-८७ ।

निष् लिहामि, लिहमि सक (लिखामि) मैं में रेखा करता ह, ३ १'

लुख वि (ज़नम्) बाटा हुआ, छित्र, ३ १५६ । (जिझ) लोए पु (ह जिय-छाक[†]) हे ससार निजेता, ३-८। लोहिमाइ, लोहिमाधइ अरु (लोहिगायते) वह साल होगा है, ३-१३८।

[व]

वोच्छं धर भवि (बदयानि) में बहुंगा, ३-१८९।

युग्रह भाषे प्रयाग वत (उच्यते) वहा जाता है,

यच्छा पु (बृजाद) अनेक ब्रुगों को, ३ २०,२६ । (ब्रु त

बण्छे प (व्यान्) अनेव वृशों भी, ३-४, १४,१८,२६ ।

1 748 1

वृग, १-४।

बच्छो पु (बृग) वृद्य, तह, ६-२, २१।

बन्छ पु (युगम्) युक्त को, भ-५।

वच "

बच्छरस पु (वशस्य)वृद्धाना, ३-२९ । यच्छे पु (बुशान्) गृन को, ३-४, १४, १८, २६। बन्द्राचा पु (ब्शार्) वृक्ष से, १८। बन्द्रेश, बन्द्रेश प् (ब्ह्रीन) बुक्ष द्वारा, बन्ते मे, 1 20 1 यण्डीम्, बण्डस् पु (वृक्षेत्र) वृत्र मे, ३-१५,१६ । रूपावलि---३-२, ४, ५, ६, ७, ८, ९, ११, १२, १3, 94, १4, १६, १८, २०, २१ २२, २६, २७, २९, १४७ । वर्ण ४ (वनम्) जास, ६-२५, ६७ ८८। वणाइ, यणाणि न (बनानि। अनेन प्रयम,३ ८८, मश्याति, उत्ती रि (यणनीय) मर्गन ने याम्य, १ (७९) यन्य यन्गति सक्. (कार्ड) मैं बादना करता हूं, ३ ०० । सन्दे एक. (बार) ' " " 3 (6.837) ध्यापुत (वपते) उक्ति वपत, वचत, ३-२९। मयुलाई न (बचनानि) शश्तिमी विशिष कपन, ३-२६ । सर्यं छव (बयम् १म, ११०६) यस-वरामि अह. (यगामि में बार करता है, दे १३५। शहाब्दाइ शब (बदिन) यर पुष्त होता है, यह मूलता है 1-1741

यहरम,वहाउ,षहाय म (बपाय) मान्ते के निव व १३६ । यह स्त्री (यपू) बहु, ३ ४२। बहु स्त्री (वपून) बहु का. ३ १२४। रूपायांज- ३ २० २९, ३६, ८२, १२८ । बाउणी प (बायब, विविध हवाएँ, (बायुक्त) इक्षाते की, ३-२० ३ थाऊ प (बायव) विविध हवाएँ ३ २० । रुराप्रलि—३ १९, २० १२५ १२९। बाण्डला प्रेट. सक (पानवित यह विरामा है. 1 (का याशिद्य प (वाणिज) यतिया स्वीतारी ३७३। वायत पू (बापन) विभिन्न हमाएँ, ३ २० । धाश्रक्षो प्र (बायव) विविध हवाई, ६ २० । वायायेग्रज्ञा प्रेर गर (पातवेष) शिराव, १ १७३१ वि व (वि) भी, १-८५, १४२। विद्यान स्त्री. (तिताँद) बेदिका, हवन-स्पान, शीरण, विधारो प् (विशार) दिवति, प्रदेशि का विषया परिणाम, ३ २३ । विच्छुहिरे मर (विधुन्याते) रिगीम करते हे भंगा है। छठते हैं, ३ १४२। विज्ञानतीय न (विष्तु-चोत्रम्) त्त्रिनी का प्रकार, 3 9701 विक्रजेक्त प्रेर (विधेत) नापा बाता है, ३ १६० । विद्धा वि (विद्धा) में भीगी गई ३ १०५। विग्णि, बेविया, शस्या वि ।(इ) हो, ३ १००३ विसद्धेण वि (रिपुड़ीन) निर्दोष में, निर्पन व, १ १८ । थिद्वित्र वि (विद्विष्) जिनका दिया किंग पना में वह जास्यान, वे-४६ र विद्य पूर्व (विष्यू) चाँन सामू, पप्तूर, व-19 : वे संस्था दि है, दी, ३-1२+। (नि) देश त्री त्रिवातिक (ग्वदेशीच्य) (विदेशकी, श्लाप क्रम्यामा जानः ११८१। बेण्ड्यूं, भवि सक (वेरियामि) मैं बाहुँगा, ३ व्यहें ह a ran tel tell येथ (कांपना) शरावडि 10.1621 वेविरीत स्त्री (नेपनगीन या) स्रोत साले की 1 144 1

वस्थामि अर (उज्ञाति) त गुरुरा है १ १००।

वसुसत्याति (इयो) दोम, ३१६। विहि (वेहिना,) मन्याति (इस्म्याम्) दोमे, दोडारा, ३११९। वासव (युष्मारम्) सुरहारा, ३-१००।

वाच्छ निव सम । यहमामि) में महुंगा, २-१७१।

[ग]

राम् "

उत्तमामेइ उत्तममायइ, उत्तममायेइ, प्रेर व 'उपज्ञानयिति)-वह दाप्तः कराता है, ३१४९। शुप्-

सूमइरे वन (जुप्पति) गूलना है, २-१४२ । सोनिम्रा वि (गोपितम् सुलावा हुआ, ३-१५० । सोसविम्रा वि (गोपितम) सुरु।या हुआ, ३-१५० ।

सुणड, मुणेड सुणाड, विधि 'वृणोतु। यह सुने, सोन्छ भवि मव (बोध्यामि, में सुनूगा, ३-१७°। रुगविति ३ ७२।

F 27 1

[#]

स सव त्सा) यह, ३-३।
सद्धावन (सन्नीमि) में समय हाता हूँ, ३१४०।
सगन्द्र मि (सगस्ते) में साथ-साय जाजेंगा, १७१।
सत्यद्व वि (सगुष्ण) मुष्याजाना, ३-१२,।
मत्त्यद्व सत्त्यद्व सस्या वि (सस्तानाम्) सात ना,
३-१२।

ममर, पु (समये) समय मे, ३-१३७। ममण पु श्रमण) साधु, भिगु ३-१२३। समिति स्त्री (हश्रमणि!) हमाघ्वी! -४२। समस्तुझासामि, समसुनागामि) मैं अच्छी सरह से जानता हूँ, :-१७०।

समित्रिष्ठ वि (समित्रिया) युत्त, सहित, ३-४६। समिद्धि स्त्री (समृद्धि) समिद्धि, धन सम्पत्ति ३२३। सम्म न (समेन गम) सुत्त, ३५६। सन्द्रोवि —स्टाविक २३५८,५९, ६०, ६९। सन्द्रस्त वि (सवस्त, सब के, ३८५। सध्ये वि (सर्थे) सव, "-१४७।
सञ्चाल वि (सर्वेपाम्) सभी के, ३८५।
भडगहि वि (सर्वेपाम्) सभी के, ३८५।
भडगहि वि (सर्वेपाम्) सव में, सव पर ३६०।
सध्यस्य वि (सर्वेपाम्) सव में, सव पर, ३, ५९.६०।
सध्याल वि (सर्वेपाम्) सव ना, सभी वा, ३६१।
समहरस्स पु (सासप्रस्य) चन्नमा का, ३८५।
मसारसे (स्वसा) बहिन, भगिनी, ३-३५।
सहन्तो विचावितित कक (असहिन्यवा) सहन् वरने वाला
होता, "-१००।
महास्रा पु (स्वभाव) स्वभान प्रवृति, निसन, ३८५।

महाध्रा पु (स्वभाव) स्वभाग प्रकृति, निसग, ३८५। महिस्त्री (सली) सहेली, सगिनी, (स्पावलि) ३-२७ २९ ३६. १२४।

३६, १२४। महि०ई वि (सहदयै) सुदर विचार वाले पुण्पो द्वारा ३६५।

सिंहिकार्या वि (सिंहितेश्य) सिंहिना से, साथ वाला से २-१३४। सास्त्री सब सा) वह (स्त्री,) ३, ३३, ८६, १७३।

सा पु (स्वान) कुत्ता, अथवा कुनिया, ३५६। सायो पु स्वान) कुत्ता, ३५६। सामलीए स्त्री (स्यापनया) स्यामा स्त्री से, ३-१५३। सायरे पु (सागरे) समुद्र मे, ३१४२।

साहज, साहुआ पु (साधव) अनेक साधु, ३ २१। साहुणा माहुणो स्थी (साधनी) उपायवावी, हेतुवाली, ३-२१।

सि अर्क (अपि) तू है ३ १४६। सि सब (एतेपाम) इनका, इनदी, ३८८। सिर न (पिरस्) मस्तन, सिर, ३-८५। सीअज्ञत्तस्मा न (शीतश्यन) ठडकपना, ३-१०। सीभावरस्म पु (शीमावराय) मगौदा धारन ने लिये

" ३ १३४। सील न (शीलम्) ब्रह्मचय, प्रश्ति, स्वभाव, सदाचार,

३-८१। सुश्रोपुः स्तुतं)पुत्र, लडवा, ३-३४। सुकम्माणे, सुकन्माणोपुः (सुक्मणं) अच्छे कामोको, ३-५६। मुख्याहा, मुख्याही स्त्री (पूर्वासा) एक स्त्री का नाम,

3-371

सुष्ट न (मुराम्) मुग, आराम, चा, ३ २६, ३०। स्मद्ररे अव (सुप्यति) सूमता है, ३-१४२। से गव (अस्य इसत्रा, १-८१, १८०। मी सर्वे (गः) यह, ३-३, ४६, ८६, १४८, १६४। मोध्यइ अर (योषी) यह मार वरता है, ३-७० । साच्छ मवि० गर (श्रोप्यामि) मैं गुतूँचा, ३-६७ , 1 504

स्था-

चिद्रइ अग (तिम्ठति) यह ठहरता है, ३-७९। टासि अक निष्टमि) मू टहरता है, ३-४ ५ । ठाइ बर (विष्वति) यह टहरता है, ३-१५५ । ठामी अप (निष्ठाम) हम ठहरते हैं, ३-१५५ । चिद्रह अर (निष्ठय अयवा निष्ठन) तुम टहरते

हा, तुम ढ्रा, ६-९ । चिट्रन्ति अब. (तिष्ठिन्त) व टहरत है, ३-२०, २६, २८, ५०, ५२ ५५, ५६, १२२, १२४। टासी, ठाहो, ठाहीच, सन (मस्यात अनिष्टत तस्यी) यह टट्रा मा यह टट्रा, यह ठर्र पुका था 3-1571 ठाही, बर (विष्ठ, विष्ठे , विष्ठमा) तू दहर, 1-20x +

द्विषा, दि (न्यिता) ठहरी हुई, ३-३०। ठिष्य वि शियगम् रहा हुआ, "-२९ ३०, रे. रे. रेर्थ, रेर्ड, रेरंट रेर्ड रेर्ड :

ठिह्मा वि (पिया) यह हुए ३-१०, १०/।

[3]

है सब (अहम्। मैं, ३- ००१। हत्या पु हाती) दो हाय, ३-१३+ ।

हरधुएए।भिष्प वि (हम्तोग्नामित) जिपने शव वर महा 2441 f. ab 1 20 1

हिंग्स पु (हरिया) हरिया, मृग, ६-१८०। हरि, हुरी, पु (ह हरे !) हे हुरि ! ह महादेव ११८। हरिख्ळ ! प (ह शरिषाच्डू !) हे यक र १८०३ हरियाहियं पु (हरियाधियम्) विह का मृत्राव की

ह्लहा स्त्री (हर्ष्टित, हस्दी बीवपि-तिगव 1-14 1 हलहो स्त्री (हरिद्रा) हत्यी औपथि-विरा इस-(पातु-हॅगना) म्यापन-३ २८ ३२ ३६, १३६

188 180, 14- 14 144 x40 40 12 125 120 \$44 \$64 103 101 109 toc 1/1 1/1

दसइ अन (हमति) यह हमता है, ३-८७ । हासिचा प्रेर (हातिया) हैंबाई वर्ड है एकई हुई 1 204 1

हाहामा पु (हाहात्रम्) (हाहात्म) गपर्व वार्ति के देवा का गामव जाति व देवों के दिव ३-१ ४ १३९। हिस्त्य न (इस्प) इन्य.३-१४० । हिद्याएता म (हृदयन) हदय ग. वे ८०। हन्ति सर (मयन्ति) वे हाते है, दैन्दर । हाक्ष्य वि (हाम्। हावा हवा ज्यन क्या हुना, कैनी भी होइ अब (भवति) बहु हाता है, ३ १४५ । हाउस विधि अर भरतु) बर होत --१५९, १६% 1 *07,005

चतुर्थ-पाद की शब्द-सूची

(如)

श्रह उप (अति) बहुत, ४२५। %इन्छइ घर (गच्छति) यह जन्ता है १६२। श्रद्वद्वत्तरम् न (अतितु गत्वम्) बहुत क सापना,३९० । श्रद्दमत्तह वि (अतिमत्तानाम् बहुत मस्त पागल हुओ का, ३४५। अंश्तिए वि (अतिरक्तया) बहुत लाल रग वाली हुई से. ४३८। श्रहमी वि (ईहम) ऐसा, ४०३। अर्देह अर (गच्छति) वह जाता है, १६२। श्रमुन (अध) आसु, ४१४, ४३१। श्रहिषु (अधि) पाव, पैर, ८८। ष्पक्रस्थ अप (आपन्दति) यह राता है, वह चिल्लाता हे, १३९। श्रक्रमइ सन (आत्रमते) वह आक्रमण करता है, दवाता है, १६० । अफ्कुसइ सक (गच्छित, वह जाता है, १६२। श्रिक्खगुर व पू [आस्यातुम] कहने वे निये, ३५०। श्रक्तिवद्य सक [आक्षपति] वह मानेप करना है,१४५ । श्रविखर्हि पुस्त्री न [अक्षिमि] आक्षो से, २४७,३°६। ध्यक्तीडेइ सक [कपति] म्यान से तलवार को लीचता, है, १८८ । श्रासद्व वि (अक्षये) नाश नही होने पर, 8881 श्राम म अग्री आगे का भाग, उपर का भाग, ३२६। श्चागदो अ [अग्रत] आगे से सामन २८३ । श्वराष्ट्र अ (अग्रत) आगे, सामने, ३९१, ४२२। श्चरमञ्जू च (अपलक) सामने वाला, ३४१ । श्रागलुपु (अगलः) विवाह सद करने की लकडी,४४४। श्रश्मिट्ड वि (अग्निष्ठ) आग में रहा हुआ, ४२९। व्यक्ती पुस्त्री (अग्नि) आग, वह्नि ३४३, । श्चरघड् अक (अहति) वह योग्य होता है, ३८५ । श्चम्बद्द सक (राजते) वह शोभता है चमक्ता है, १००। अग्याश्रह सक (आजिधित) वह सू पता है, अग्याडइ सक (पूरयति, वह पूर्ति करता हैं, पूरा करता 2581 ŧ,

श्यक्तह पु (अ कुशानाम् । अ कुशा ना, ३४५,३८२। ऋद्व स्रद्वपु (अङ्ग) मरीर के अग ३३२। च्यगहिंदु (अर्द्ध) शरीर वे अगो से ३३२। श्चरोप (अंगे अगपर, अगमे, ६३ । श्राम् इ सन (पूरयति) वह पूर्ति करता हैं,वह पूरता १६९। श्चमुलिंड स्त्री (अ गुल्य) अ गुलियां, 3-31 त्रमुलियो स्त्री (अ गुल्प) अ गुलिया 286 1 श्रचिन्तिश्र वि (श्रतिन्तिता) विना सोची हुई' ¥23 1 श्चन्छ, श्चन्छड् अक (आस्ते) बैठता हैं, २१५, ३८८ । श्रन्छते, श्रन्छति अव (आसी) बेटता है, ३१९। श्चच्छदे,श्चच्छदि अक (आस्ते) वैठता है, २७४। श्चच्छुड अक ४०६। ध्यच्छ वि (बच्छ) स्वच्छ, ३५०। श्च(च्छ्रअक (आस्स्व) तू बैठ, ३८८ १ श्रक्टिछन्दद्व सक (आच्छिनत्ति) यह घोडा छेर करता है, १२५। श्रमो (भाय) थेप्ठ पुरव, श्रद्ध अ (अद्य) आज ३४३, ४९८। सक (मपति) वह खीचता है, जीतता है, অদ্রান্ত १८७। श्रक्किदिश स्त्री (अन्यदिश) दूसरी दिला को, २९३। श्राञ्चली पुस्त्री (अञ्चलति) हायका सपुट २९३ । श्रद्भातिमो वि (अयादृश) दूसरे के जैसा, २९३। ख्यट्टइ-परिच्यट्टइ सक (अटति, ययटति) घूमता है २३० । थ्यष्ट्र सक (पवध्यते) वह बवाय बरता है, ११९। अडो**द्दिर वि (**अनवगाहितम) नहीं स्नान किया हुआ, X561 श्रष्ट्रम्खइ सक (क्षिपति फेन्ता है, 1851 श्यग् च्छ्रइ सक ्कपनि) म्यान से तलवार की सीचता है. श्रणन्तर वि (अनातर) व्यवधान रहित, २७७। अपणल पु (अनल) अग्नि, ३९५, ४१५, ४२९।

श्रणाइउन्नड वमणि त नायते। नही जानाजाता है,२५२ । श्रमुत्तर वि (अनुत्तर) श्रेष्ठ ३७२ । श्रासुदिश्रहुन (अनुदिवसम्) प्रति दिन 8261 श्रगुरत्ता ३ वि (अनुरता) प्रेम में लगे हुए, 8 21 छागुवच्चइ सन (अनुवजित) वह अनुसरण करता है, १०७। श्रागुपञ्च अक (गच्छति) जाता है १६२। श्रपहड् सक (भुनितः) खाना है, ११०। श्र्वतिट्र वि (अहष्ट) नहीं देखा हुआ, ३२५। पु (आरमा) जीव, आस्मा, १५३। श्रता श्रह्थ न (अथम्) द्वात को, श्चत्यमणि । (अस्तमन अस्त होने पर, ४४४। श्रात्यहि न (अस्त्रै) अस्त्रा से, ३५८। श्रद्धमागह् वि (अध मागः। अध मागधवाला, २८७ । अ (शय) अब, बाद, श्रध ₹**२३** | वि (अधम) पुष्पहीन, **ଅ**धण श्रधिन्नइ वि (अधीनानि) वश मे रही हुई, ४२७। (अाय) अनीति, अयाय, ४०० । अ (अयथा, नहीं तो, ४१५। यन श्चान्तकः न (अन्तरम्) मध्य भीतरः, ५० ४०६,४०७ 806 I श्चन्तेश्चारि वि (अन्तश्चारिन्) बीच म जाने वाला, २६४। ध्यन्त्रही स्त्री अत्र) आतडियाँ ४४५। श्चन्दायदी स्त्री (अन्तर्वेटी) वेदी वा आतरिक भाग, श्चन्देवर न (अन्त पुरम्) राविया का महल, २६१ । श्चनधारहर (अधकारे) अधकार म, ३४९। श्चन्त, विलिग वि (बाय) द्वरा, १७२। श्चन्तु पिरिंग वि (अय) दूपरा, ३७,३५०, ३५४, ४०१, ४१ ग. ४१४, ४१८ ४२२ । श्रम्म वि (अप) दूसर को, २७०। श्रन्में वि (अप) दूगर म २७०। खप्रहे मद (अयस्या) दूगरा के लिय, ४२५। श्चन्नहि सव (अय हिम्द्) दूसरी में, ३४७, ३८३, ¥77 I श्चम्त सव (अन्ये) दूसर ही (दो) ४१४। ध्यन्नद् स्व अयानि। दूसरी ४२७। , 🤈

श्रद्ध अवित्र) अय स्वान एर, Y(५) श्रन्नाइमो वि (अयाहरा दिमरे के जैसा ४१३। वि (अपूर्व) सनोसा, ७०। अपुरव वि (अपूर्वम्) अनाता, २७० । श्चपुरसे वि (अपूरम्) अनोगा ३०२। चपुरुव ति (अपूर्व, अनीमा, "७०। वि (अपूर्णे) अपूर्ण में ४२२। श्रपुरइ वि (आत्मीयम्) सुद को ३५०, ६७, श्रापएय आरमान) अपने भी, ' ४२१। श्रदाइ सव (आत्मान) अपने की, ३३८, ३४० श्रद्भणा सव 1401 खपणें (आत्मना) खुद के द्वारा, g ¥141 श्चरपग् (आरमीयस्य) खुद ये, ¥47 1 (आत्मान) खुद घो, 3701 श्रापगु (आत्मन । मुद वे, 1071 खलगा g 88£ 1 श्रपहो (आरमन) गुद न, (आत्मानम्) अपा को, - 95 1 श्रापागु (सदिशति) वह सदेश देता है. श्रपाहर 1601 वि (अप्रिये) जो प्रिय नहीं है। श्रदिक 264 ((आत्रात) दबाया हुआ, ३४८० श्रापुरणो भत ह (अफनान्या) दिसमा पल उन्द स्त्री श्रफ्लोटया म नहीं आया हो, २८३। 7971 (अत्रहाण्यम्) पाप, श्रवद्याञ्ल (मम् अथना अनु) (अनुगम्य । पीऐ प्रध्महर्मचित्र पाछ जावर न्देर ! (अभ्यथने) प्राथा। में, मौहन में, श्चडमत्यणि ₹24 1 (अभागि) मध, बादस, आशा चटमा 484 1 (मगच्छिति) माग-नाय जाता है स्त्रश्चित्रहरू सक 1636 348 8 (अम्युद्धरणम) उदार, द्रमुद्रस्यु 8/0 l (अभयम्) भव रहिनै। श्रभेड , समध्यम्) मही दहा हुआ १८०। घमगु (अभिगमु अनुन का पुत्र, २०५। अभिमन्त्र

जमारव) मन्त्री, प्रधान, ३०२।

श्रम सव (अमूम्) उनको, 8 4 1 धम्बरम् (अस्तरवमः) राष्ट्रापः, न ₹७६ 1 भ्रमिह स्त्री (अम्बा याना 858 1 प्रमहे (हर्षे निपात्र) हय ब्यक्त करना 1 50 E 85F र्घाम स्त्री (अम्बा) मात्रा 3261 धम्भीव स्त्री (ए जम्ब) हे माना ३९६ । 23413 सव (वयम) हम 1 305 अस्तर्ह (अस्तारम) हमारे, ३७९ सव 360 890 855 836 I अम्हास सव (अमास् हमारे मे 268 1 श्रमहाष्ट सुव (अस्मावम) हमार, 1 005 यम्हे मर्व (ययम अस्मान्) हम, हमकी ३७६, 855 1 श्रमहेहिं सर्व (अस्मामि) हमारे स, ३७१, ३७८, 827 I अम्हातिसो वि (अस्मादन) हमारे जैमा ३७। श्रमहारा वि (जस्मदीय) हमारा, ३४५ 8481 यर्ग ч (अयम यह 3001 (यपनि भ्यान में में तल्यार खीचता अयञ्च इ सक 8601 स्रदय वव (जद्य) आज, २९२ । वि (आय) थेष्ठ उत्तम, श्रद्य 3 3 1 खय्यो २७७ । (आय पुत्र) पति, भर्ता, थ्रय्यउत्त प २६६ । (आयपुत्र) श्रय्यउत्ता पु २६० । अय्यमिस्सेहिं वि (जाय निश्नै) ग्राप श्री से, २८३ । श्रय्या स्त्री (आर्या थेप्ट उत्तम, ३०२। थ्ययुगे (अजून) पाडव. 4 1 939 श्रप्' सक (अप्य) अपण कर ۹ ۱ घरे (अरे सबोधन सूचक अ यय, ४ /८। अ० यर्ज सक (ग्रज्जइ) बमाता है. 1001 श्रविनदन्द सक (अज्यते) कमाया जाता है, २५२ । (अलम्) बस, सनाप्त वरो, 1 500 श्रलहिन्तऋहे स्त्री (अलममानाया) नहीं प्राप्त हुई ना, 4X9 1 श्रलिउलइ म (अलिबुलानि) भन्नरो ने समूह, ३४३ ।

ग्रमञ

g

अ (अरे) सत्रोधन सूचक अन्यय, थले ३०२। श्रक्षारथह मन (उत्भिपति) वह ऊचा फेंबता है, १४४। श्रक्तिश्रद्ध सक (उपसनि) समीप मे जाता है, १३९ 1 श्रक्ति उद्द सक (अपर्यात) यह अपण करता है, ३९ । ग्राह्मीश्रद्ध सक (आलीयते) यह आता है जोडता ह ५४। श्रक्षीशो वि (अलीन । भेंटा हुआ, जागत, 481 श्चनश्चक्र बहु सक् (परयति) वह देखा है. 1221 श्चा अध्यनश्च ह सब (ह नादयनि) वह खदा बरता है, १२२। ध्याधामइ सन (पर्वति) वह देखता है, 1611 श्चायक्ताइ सक (पदयति) वह दसता है, 1 558 श्राप्तासु पु (अवगुण । सराव आदत ३९५ : थ्यवजनसङ्घ स**व** (गच्छति) जाता है 1521 व्यवद्या स्त्री धवना) अनादर २९३। श्राबद्यहिन (अवन्सटे) कुए वे पिनारे पर, ५३९ । श्रवत्यह स्त्री (अवस्थानाम्) व्यवस्थाओ का, 8551 श्रवसम्बद्धः सक (परयति) वह देखता है 1611 अवयश्मइ सक (परयति) वह दखता है, 1 .38 श्रायासह सन दिल्प्यति वह आलिगन वरता है 1901 श्चात्रय वि (अवद्य नही मारने योग्य, -661 श्रवगइमा वि (अयादश) दूसरे के जैसे 8931 द्मवर|हिंड वि (अपराधितम्) अपराध किए हुए को. 884 1 द्यविषय (उपरि ऊपर ~38 I द्यवरेण वि (अपरेण) दूसरे से, 941 श्रवराधक वि (परस्परम्) आपम मे, 8581 श्रवशाल अक (अपसर) दूर हट, 3071 श्रवस वि (अवश) जो काबूमे न हो, ३७६, ४२७ ख्रद्यमर पु (अवमर) बाल, समय, मीका, ३५८ । श्रवसें म्र अवस्यम्) अवस्य, जन्र, निश्चय, ४२७। श्रवसेंहइ सक गच्छिनि) वह जाता है, १६२ 1008 श्रवहद् सक रचयति) वह बनाता है, 188 श्रवहरइ अक नश्यति) वह माग जाश है १६२ १७८। द्मवहाबेइ सक (कृपा बरोति) कृपा करता है ख्रवहेंद्रइ सक (मुज्वनि छोडना है त्याग करता है,९१ । उभयवलम् आर्पे , दोनों वर्रे, उभयो कार । दोनों सभय, १३८ ध्यवुक्द सम विनापयति) सूचना वरता है,

2 41 त्रागमे 3 (आगम शास्य, आना 3071 (असि) त है হিচ -071 श्राचरकदि सक भागप्ट) यहना है 2001 स्यु होत्रे. .अस्तु । ₹८३ : थाढपह सक (आरम्बते) गुरु निया प्राता है, सन्ता वि (म्त) होते हुझ को, 44° 1 7441 श्चमइहिं स्त्री (ग्रसतीभि ' सराव स्त्रियो स, -९६ । श्रादवइ सक (आरमने) पुष करता है १५५३ श्रमहल् वि (असाधारण) जो सामा य न हो, ८२२ । श्राद्ववोष्ट्रइ सर (भारम्यत) युद विया जाता है श्यसर्गु न (धशनम) लाश, लाना, 384 1 3461 द्यसारु वि (असार) सार रहिन, 294 1 श्राग्रन्द (आनंद) खुशी, प्रसन्ता, ४०१। ध्यसुलह वि (अगुलभ) जो विठन हो, 444 1 व्याग्रहि सम (थानय) माभा 444 1 वि (अरोपम) नि शेष, सब, 1 088 षादन्नह विदो (ध्याकुलाताम् धवडाय हुओं का श्रस्तवदी प् वियपति) धन वा स्यामी २९१। X25 I श्रह व्य (जय) अब, बद, ३३९, ३४%, सव (आदियने) आदर रिया जाता है, ६४। यादग्र ३६५ ३६७, -७९ ३८०, ३००, थाप 884, 880, 855 885, 880 1 परि-पज्जस वि (पर्यातम्) रापी 37 शह सथ (यहम्) मैं, 3021 प्र-पावेमि सव (प्राप्नोमि)मैं प्राप्त वरता है। 11 (जयर) होठ, श्रहरू Ţ 3071 33 1 (अयवा) या, अथवा, व पायइ सक (प्राप्नाति) वह पाता है, २३९। व्यहबह 8 61 11 (अथया) या, अधवा, पावीमु सक (शास्त्यामि) प्राप्त करगी, थाईबा व 488 I 12 श्रहिङलइ सर (दहनि) यह जलाता है 444, 4461 3061 श्रद्धिपश्रश्रह वक पाविश्रद्द सर्व (प्राप्यते) प्राप्त निया राग है, (आगच्छति) वह आता है, १६३, 17 पत्तु वि (प्राप्तम) पाया हुआ हुआ, ३३२ १ २०९ । 11 खहिमञ्जू Ч (अभिपय्) अजुन-पृत्र, २९३। पायिश्र वि (प्रापिन) पाया हुआ, 11 श्वहिरेमइ गन स-गाता वि (सप्राप्ता) पाये हुए, ३०१ । (पूरवित) वह भरता है, पूरता है, 17 वि-वार्थद् अक (ध्याप्नीति) वह व्यात होडा १६९ । ,, g, trt : श्रद्तिलई सर (मांक्षति यह चाहना है, १९२ । स-समावेद मत्र (समाप्तीतिः यह पूरा, द्यदिलघइ सक (बोक्षति) वह चाहना है, 8871 51 वरता है। १४२ (अध) गीने, व्यक्षे द्म० ₹0 1 गमणइ सक (समान्तीति) बहुपूरा बरता 11 [श्रा] 8, 43,1 ममप्पत सक (समाप्पताम्) पूरा करे ४०१ । भागानेह वर (ध्यात्रियते) वह नाम में लगता है, समलु वि (समाप्तम्) पूरा हा गया, 681 \$55, 2401 बाहर बमाणमूत (आयात) आया हुआ, 1 554 443 1 सक (आभाषा) बह गरना है, (आजिध्रति) यह सूँपता है, ११३। च्याइग्घइ सर धामसइ 244 1 (धपनि) भ्यान में सल्वार गोंगता सव (इमानि) य, धाइन्दइ सर व्यावर \$ \$ X 1 ₹, 960 I थायही सव (अस्प) इसका, 1 354 1 (मजनरि) ह्रवता है 2 21 धाएण मर्व (ए१न) इममे. धाउट्ट सक 161 सर्व (अस्मिन) दसमें, धाउस स्व प्र (आवरा') ब्लावा हुआ, 200 1 चायदि \$80 l 3541 ध्यायामइ बच (वरते) गारता है, (एनन) इसछे, गव आएग

१४७ ।

श्चायम्बद्ध बद्ध (वेपन) गांपता है, 3881 पू (आदर । समार मादर, ,, खायरेंग पू (बादरेण) आदर से, ४२२ । 3581 न (बायुधमः शस्त्रका यायुध बार्भइ सक (भारभते) वह प्रारम्भ करता है, 844 1 धारम्भइ सक. (बारभते) यह प्रारम्भ वरता है १५५ । धारहइ सर ,आरोहति। चहना है 7051 धारोग्रह अक उल्लमति) प्रमच होता है 2071 श्रारोलइ सन (पुझित) वह इन्द्रानरता है, १०२। श्रातवराषु न (अ:लपनम) सभावण बानचित, ४२२। धालिहइ सक (स्पृत्तिः छुना है 1521 न (अनीकम् भूठ, आरोप ३७९ ४२२। चाल षालु खड् सक (स्पृश्ति) छूना है 162 3061 800 X88 1 स्यी (आपन्) आपत्ति, श्रावइ अक (आयाति) आना है 1 €3 € আবহ अव (क्षायतते लीटता है, फिरता है, ४१६। श्रावट्टइ घावलि स्त्री (आविलि , पविन, धणा 888 I न (आवास) तिवास स्यान, 885 I यावास थाधासित वि (आवासित) वसा हुआ, 1 UXF स्त्री (आशा अन्ता, उम्मन, ३८१। श्राम श्रासच्छ सन (सभावयति। वह सभावना करता हैं, ३५ सक (कांश्रति) वह इच्छा करता है, १९२। श्राहर च्याहरमञ् अव (आगच्छति) वर्र आता है, 1638 श्राहोडइ सन (ताडयति, वह पीटता है, २७ ।

[इ]

क्ष (अपि भी, ३८३ ३८४,३९०,४३९। ş अक (एनि) अता है आती है (आयाति) इ-एइ ४०६ । " एसी अक (एप्यति) आवेगा, **ል**{ጸ ፣ " एन्त् अक (ऐध्यत आया हुआ हाता, ३५१। " श्चा एट् अक (एतु) जावें, २६५, ३०२। ४०६। वि (इसर) दूमरी, इश्रह २७९। सर्व (इदम् यह, इस হ'নত वि (इयत्) इतना अधिक, ३९१ । भ (भन्न) यहापर, ३२३। इत्थ

इदो अ (इत) इससे, इस कारण ३०२। १६८ । अ (इह) यहाँ पर इघ इन्दर्नाल उप (इन्द्र नील) नीलम, रत्न विशेष 888 1 सव (इदम्) यह, 3581 इम् इप् इच्छाइ सक (इच्छित) वह इच्छा करता है २२५ । सक (इच्छय) तुम चाहते हो, 3681 ६च्छह सक (इच्छय) तुम चाहते हो, 368 1 इच्छह एच्छण न (एप्ठ्रम्) इष्ट लक्ष्य को, 3 X 3 I वि (इष्ट प्रिय, व्यारा, ३५८ । इट्टा अ इह) यहाँ पर, २६८, ४१९ E6

[]

ईस्-पिडक्लइ-सर (प्रतीक्षते । राह देवता है १९३ । ईदिशाह वि (ईटशानाम) इन जैसो वा,

[उ]

ब (पदय) ग्रोताको अपनी और मुख भरने उध ने लिये वहना, ३०६। पु (उदधि) समुद्र, ३६५ । **एखही** चक्षुरइ अक (उत्तिष्ठिति) खडा होता है, उठता है १७ । उक्कुसइ सक (गच्छति) जाता है, १६२ । **उक्षो**स वि (उत्कृप्टम) अधिक से मधिक, १ ४४५ उक्खिवइ सक (उल्झिपति) फेंकता है. १४४। सक (तुडति) वह तोडता है। १ ५६ १ एक्सुहड् सक (चद्घाटयति) वह खोलता है, 331 उगर् सक (रचयति) बह रचता है, बनाता है९४। उगाहर सक (मार्दि) वह माफ करता है १०५। उग्युसइ अक (निदाति) वह निदा छेता है, 131 खघष्ट सक (चटति) वह चढता है, २५९ । **उच्चु**4इ **उच्छङ्ग**े पु (उत्सन) मध्य भाग में, गोद मे ३३६। चच्छल्लान्ति अक (उच्चलान्ति) उछलते हैं, ३२६ । न (उद्यान) बाग, बगीचा, उपवन, ४२२। वि (ऋजुक सरल, निष्कपट, सीधा ४१२। रुज्जेशिहिं स्त्री (उज्जयिनीम्) उज्जयिनी को, ४४२ 1 छजमा-प्रिमाध्य थि (खज्जित) त्यागा हुआ, वक (उतिष्ठति) वह खडा होता है । ७। उट्टइ चट्रब्मइ सक (भाच्छाबते) उन दिया जाता हैं३६५।

```
श्रम्-
                                      > € 1
           (अमि) तूही
      शि
                                      .071
             ,अम्त् ।
                        हाने,
                                      २८३ ।
      स्थ
     सन्तावि (मत्)
                       होत हुअ को,
                                      २८९ ।
श्रसहर्हि स्पी (श्रमतीमि खराव स्त्रियां सं.
                                       98 1
श्चमहल् वि (असाधारण) जो सामा यन हो, ४२२।
श्चसग्र न (गणनम) बाद्य, नाम,
                                     385 1
श्रमार नि (असार ) सार रहिन,
                                     494 1
श्यसलह वि (असुलभ ) जो विटन हो,
                                     2×3 1
       वि
             (अपपम) निरोप, सब,
                                     8801
             अथपनि ) धन वा स्वामी
                                      २९१ ।
श्यस्तवदी प्र
             (अथ) अप, धद, ३३९, ३४%
श्रह
                 ३६५, ३६७ ५७९ ३८०, ३९०
                 ४१६, ४१७, ४२२ ४४२, ४४७ ।
             (अहम् ) मैं,
यह
       सय
                                      1 505
             (अधर) होठ,
                                      33 1
यहरू
        4
                                      8 61
श्रहवह
             (अथवा) या, अयवा,
             (अथवा) या, अयवा,
                                      ¥881
श्रह्मा य
श्रिहि उत्तर मर
                 ( दहनि ) वह जलाता है
                                      २०८।
छदिपश्चिष्ठ अब
               ्बागच्छिति) यह जाता है, १६३,
                                      २०९ ।
                (अभिमायु) अजुन-पुत्र,
व्यक्तिकज्ज
            đ
                                      २°३।
श्रहिरेमइ सक
                (प्रयति) वह भरता है, प्रता है,
                                      1581
व्यहितालाई सन
               (बामति वह चाहता है
                                      १९२।
 द्यहिलधइ सक
                (भाक्षति) यह चाहुगा है,
                                       1 583
                                       ्६७ ।
                (अध) गीचे,
 घसे
          ų۰
                    [আ
                 (व्याप्रियते) यह नाम में रुगता है.
 चाछड्रेड अक
                                        68 1
 बाइन मम्बिन्त (आयात) आया हुआ
                                       4371
                (आजिन्नति) यह म्पना है, ११३।
 ध्याध्यद्य सन
 ध्याइज्यइ सम
                ( मपति ) म्यान मे तल्यार सींच्या
                                   7. 960 1
 धाउद्द अर
                (मन्त्रति, ह्रवना है
                                       8+81
 धाक्ते पूर्व १
                (अाबृत्त ) युलाया हुआ,
                                       300 1
                                      164 1
 ब्याग्रमा पर्व
               (एनन) इपने,
```

श्चाममे Ţ (अगम शास्त्र काना - ३०३) श्चाचस्कदि सब आवष्ट) महना है श्चाद्धरह सम (आरायत) धुरु स्या जाता है, 3441 श्रादवह सन (आर्भो) शह बरता है १५६1, सुर विया जाना है, श्चादनोश्रइ सन (आरम्यने) 344 1 (आगन्द) सुधी, प्रगानता, ४०१। याणन्द चागहि सभ (थानय) साओ 441 विरो (ध्याकुलाताम प्रवहाये हुआँ ना थादन्नह ¥22 I सक (बाहियते) सादर निया जाता है, ८४। थाद≀इ श्राप् परि-पज्जत वि (पर्याप्तम) वापी 11 प्र-पायेमि सक (प्राप्नोमि)में प्राप्त करता हूँ। ,, 3071 पावद सक (प्राप्नोति) वह पाता है रेने१। ,, पावीसु सक (अध्स्यामि) प्राप्त कर्यी, 11 154, 1561 पानिजइ सन (प्राप्यते) प्राप्त किया जाना है, " पत्तु वि (प्राप्तम्) पाया हुआ हुआ, \$17) " पावित्र वि (प्रापित) पादा हुआ, 3201 ज-रापत्ता वि (संप्राप्ता) पाये हुए, ३०१। 12 वि-वादइ अर (ध्यानाति) यह स्वात हाउ 11 8, 1411 स-समावह सन (समाप्नाति। वह पृश ** करता है। १४२ समप्तइ सन (समाप्तीति) वर् पूरा गता ,, 8, 48 1 समप्पठ सर (समाप्यताम्) पूरा करे ४०१ । समलु वि (समाप्तम) पूरा हो न्याः ø #33 X301 4431 सव (आमापने) वह बहुग है. श्चामसङ् 2543 सव (इमानि) ये. व्यायइ 1121 सब (अस्व) इगुक्रा, श्रायहो 384 1 मुख (एतेर) स्मम थाएण 1611 राव (अस्मिन्) दसमें, द्यावहि trs ! श्रायतमाइ अरु (वेपत) शायता है,

द्यायम्बद्ध अव (वपन) वांपता है, 1685 पु (आदर भागान बादर, 388 € ,, धायरेग पु (बादरेण) आदर स, ४२२। न (आयुधमः शस्त्रको चायुध ३२४। धारभइ सर्व (आरमते) यह प्रारम्भ वरता है, 8441 धारम्मइ सक (आरभते) यह प्रारम्भ करता है १५५ 1 थारुहइ सक ,आरोहति। चडना है २०६१ भारोधह अक उल्लमित प्रसम्म होता है २०२ । थारोलइ सक (पुजति) यह इक्ट्रा करता है, १०२ । श्राज्ञवर्षुन (अ।लपनम)सभाषण बानचित, ४२२। **बालिहर् सन (स्पृश्नति) छूना है** १८२। भानु न (अर्जाक्म भूठ, आरोप ३७९ ४२२। 1208 528 षालुखइ सक (स्पृत्तति) छूता है श्रावद स्त्री (आपदा आपत्ति, 800 888 I अब (आयानि) आना हैं १ ७३६ धावइ अब (आवतते लीटता है, फिरता है, ४१६। थावट्टइ धावलि स्थी (आवलि , पविन, श्रेणा 8881 श्रावास म (आवास) निवास स्थान, 8851 थावासिस वि (आवासित) बसा हुआ, ३५७ । स्त्री (आशा अध्या, उम्मेट, ३६३ । श्रीम श्रासघइ सक (सभावयति, यह सभावना करता हैं, ३५ सत्र (कांक्षति) वह इच्छा करता है, १९२। च्याह्ममध् अक (आगच्छति) वह बाता है, १६२। आहोडइ सक (ताहयति, वह पीटता है, २७ ।

[**ξ**]

व (व्यपि भी, ३८३ ३८४,३९०,४३९। Ę अब (एति, अता है आती है (आयाति) इ-एइ ४०६ । " एसी अक (एप्यति) आवेगा, 8681 " एन्तु अक (ऐप्यत आया हुआ होता, 3481 " आ एटु अक (एतु) जावें, २६५, ३०२ । ६श्रर वि (इतर) दूमरा, ४०६ । सर्व (इदम् यह, २७९ । इंग् इसउ वि (इयत) इतना अधिक, ३९१ । ३२३। हत्य झ (अत्र) महापर,

इनो अ (इत) इससे, इम कारण, ३०२। द्ध क्ष (इह) यहाँ पर २६८ । इन्द्रनील उपु (इन्द्र नील) नीलम, रस्न विशेष ४४४ । सव (इदम्) यह, ३६१। इमु इप्-इच्छइ सथ (इच्छति) वह इच्छा वरता है 224 1 सक (इच्छय) तुम चाहते हो, ३८४। इच्छह सन (इच्छय) तुम चाहते हो, इच्छह 3681 एच्छण न (एप्ट्रम्) इष्ट लक्ष्य को, I FXF वि (इष्ट प्रिय, प्यारा, इट्टा ३५८ । अ इह) यहाँ पर, २६८, ४१९ इह

[]

ईस्-पहिक्खइ-सक (प्रतीक्षते । राह देखता है १९३ । ईदिशाह वि (ईहशानाम्) इन जैसो ना,

[उ]

३६५।

१७।

१६२।

२४८ ।

१४४ ।

1941

331

१०५।

7481

३२६ ।

१२।

क्ष (पर्य) गोताको अपनी ओर मुख करो उथ वे लिये कहना, ३०६। पु (उदधि) समुद्र, दखही खष्कुरइ अक (अतिप्ठति) खडा होता है, उठता है सक (गच्छति) जाता है, उरदुसइ वि (उत्कृप्टम्) अधिक से प्रधिक, उद्योस उक्तिखबड़ सक (उत्सिपेति) फेंकता है, चक्खुडइ सक (तुडति) वह तोहता है। **जग्ग**इ सव' (उद्घाटयति) वह खोलता है, सक (रचयनि) वह रचता है, बनाता है९४। उशाहर उग्युसइ सक (माप्टि) वह माफ करता है अक (निद्राति) यह निद्रा रेता है, હઘદ્ **उ**∓च्4इ सक (चटति) वह चढता है, उच्छद्वी पु (उत्सर्ग) मध्य भाग में, गोद में ३३६। **चरुद्रह्मन्ति अन** (उन्चलन्ति) उछलते हैं, न (उद्यान) बाग, बगीचा, उपवन, ४२२। वि (ऋजुक सरल, निष्कपट, सीधा ४१२। उउज्ञ

सञ्जेिए(ई स्त्री (उज्जियनीम्) उज्जियनी की, ४४२ ।

उट्टमइ सक (माच्छायते) डक दिया जाता है ३६५।

अक (उतिष्ठति) वह खडा होता है । ७।

चडमा-उजिमाद्य वि (उज्जित) स्थागा हुआ,

1 2 1

1 X33

प्टू वर्षेत्र अर (उतिष्ठापविश) उठ और बैठ, ४२३। ण्ड्रावन्तिश्रण वि (बहुापयात्या) उहाती हुई के ३५२ I -होणो वि (उड्डीन) आराण में उटा हुवा, २३७। उट्टेइ यह (उडूयो) यानाण में उहना है २३७। प्टुंड उडुन्ति अव (उहुयन्त) आवाश में उटते हैं उरहर वि (उप्णम्) गरम, तप्त, 383 1 **उ**एहत्तरमु न (उप्णत्वम्) गर्मी, 5831 सर (रणदि) वह रोवता है 1 555 उत्तघइ पत्यघड मब (उतिभवित) ऊचा फेंग्सा है 1886 38 **उत्थरलाइ अरु (उच्छल**ि) उछलता है 1881 सन (बात्रमते) यह बात्रमण बरता है **पत्यार** इ १६०। सक (उद्वालयति) वह सीच तेना है, १२५। उद्दालइ वि (अध्वभुजा) ऊना भुजा क्यि दूई ४४४। पद्धसुश्र सर (उद्धमति) यह पूरती है, पूरा करती है, **च्ह्मा**इ १६९ । चद्धूलेइ सक (उद्भूष्यति) व्याप्त करता है धूलि लगाता है, २९। उपसि स्थी (उत्पत्तिम्) उत्पत्ति, प्रादुर्भाव ७२ । उप्परि थ (उपरि) ऊपर 3.81

सक (बन्नामयति)वह कवा रश्न मर मुनाता उप्पेलइ 8 35 1 चध्यक्षप्र सक, (जन्द्रकति)बोलता है, बहुना है, २ । उटमाबइ बन (रमते) रोलता है 1461 उन्मुखड अर (उदभवति) उत्पध होना है ₹ **0** 1 चटमुत्तइ सम (चित्रिगति) उना पेरता है. \$ 68 1 उमच्छद्द सब (वशयति) वह ठपना है, ९३ । खम्मस्यद् अव (अन्याग्ष्यति) वर् सामने माता है

सन (नययति) वहता है

उपालह

उम्मिल्ल इ अब (उम्मीसयति) धमवती है, 348 1 पुरे, दश्मिम, उरमि न (दर्गि) शाती म 886 प्रस्तमद्द्र सर (उल्लमित) तेत्रमुक्त हाता है, २०२। खहलाहाइ सर (उपामयनि) बनर गुमाता है, सुम्लालिङ वि (इल्लासिक) कार मुन्या हुमा, १२०। उल्लुक्क सर (मुक्ति, सान्ता है, भगता है, १९६ ।

उर्त्युएडइ अन (निग्गिनित,परता ह टपरता है,२६। अक (नि मरनि) वह बाहिर निक्छता है रू५६। **चरतु**हुइ **उल्लू** र इ सन (सुइति) वह साइता है, सक (विष्यापय ते, यह ठडा हरेगा है, रिप्र) यह युगाता है, रिप्र) चनमिश्रह सक (उपभीयते) उपना का जानी है, ४१८ जजालममइ सम (उपालभत यह उजाहना देता है । नह । उबेल्लइ अर (प्रमरनि) वह फनना है, उठप्रदिख वि (उयरिना) छोड दा गई है ३.०%। वञ्चाद्यइ अर (उड़ानि) यह सूनता है ५४०। उठबाइ अन (उड़ानि) यह मूगना है ११, २४०। च्ह्यारिक्तइसम् (चद्रायत) छात्र विकामाना है ८ ८३ उठिदयङ्का (उद्विजनि) यह उद्वर्ग बस्ता है २२०)। खठ्येटड सब (उद्घेष्टयति) बह बाधन मुक्त बरना है. 7-11 740 1

उठवेबी पु (उद्देग) मार, रंग खरचक्षांद् अन (उच्चलति) वछ^{न्}ता है, 7341 स्ती (उप्ना) सनाय, गरमी, 7651 चिस्सक्रइ मर्ग (मुज्यति, चिरुप्पति) छाहता है जार फेंश्वा है २१ १४४ ।

[ऊ।

अर (उल्लंसिन) वह सुन हाना है, २०१1 ऊमलइ पू (उच्छवासी) ऊचे दवासी सः X.4 1 उसा सेहि अब (उल्लगति) वह गुश ह्'तर है 180 उसुम्मइ

[y]

8461 ĭт सव (एउन्) इसकी, सम (एताम् इनवी, ३३०,३४४,३६३ ४१४) 102 164, 3031 सव (एतमा) इसग, ''एश्राए Ka£ ı वि (एशावन) ग्यास्त, एकातम [4 'QT) UT, 202, 123, ¥1°, ¥7? त्यः 854' 856 t X151 वि (एक) एक, ाय कु " एम्डिटि वि (एवं)विन्हीं एवं में, देशे वेषेण,रेण्ड 1838

X44.6 एक्स सेकड वि (एत रम) प्रायक का 1558

झ (एक्झ) एक बार, एपमि

वि (एएटम्) इध्द की, एक्य का, ३५३ । | ख्रोत्रम्माह अर (उद्वाति) वह सुखता है, परहरण एतिम वि (ईट्टाम्) ऐमा, ३२३। एत्तरे स (अत्र) यही पर, ¥19, ¥20, ¥35 1 एत्ति इ वि (इयत्) इतना, 3881 एसओ वि (इयान्) इता हो, ४०८, ४३५ । ₹च स (अप) यहाँ पर १२३ २६४। एस ष (वन) यहाँ पर, ३३०,३८७ ४०४ ४०५। एउ मवै (एनत्) यह, २६९ । एदख सथ (एनेन इस से. २८२, ३०२ -"एदिणा सर्वे (एतेन) इम स, ₹96 1 'ण्दाहि सव (एनस्मान्, इम मे, 3501 r.r ल (एवम्) इस प्रकार, ३७६, ४१८। एस्बह अ (एवम्) इन प्रकार हा, ३२२,४२०,४४१। एनइ ल (एवम्) इस प्रकार ही, ४२१, ४२३ । एम्बर्हि अ (इरानीम्) अव, इस सम्य मे, २८७,४२० ए३डु वि (इयत्) इतना, 806 I एव अ (एवम्) इस प्रकार ही २७९ ४२२। एवं विधाए स्त्री (एवं विषया) इस विधि से, ₹२₹ | एशे २८७, ३०२ । सब (एप यह, एम सर्व (एच यह. 370, 760, 880 1 सव (एप) यह, ३३०, ३४४ ३६२ ३६३ Q6 888, 8841 सव (एप) यह ३६२, ३९५, ४०२ ४२२। एह सव (एप) यह, ३६२, ३९ '। ग्हो सब (एप) यह, "एहा 8841

सव (एतद्) य०,

रहंड

[श्री]

3651

क्ष (उन) अथवा, 8011 श्रीश्रक्खह सक (पश्यति) देखता है, १८१ । श्रीश्रागाइ सक (ब्याप्नोति) व्यास करता है. 1881 थोश्रन्दइ सक (आच्छिनति) काटता है १३५ । थोश्ररद्व अक (अवतरति) नीचे उतरता है, ረጀ ፣ चोइ सव (अमृति) थे, ३६४ । श्रोगाहइ व (अवगाहयति) स्नान करता है, २०५। श्रीम्मालइ सन (रोम ययति) जुगाली करता है, 831 श्रोम्बालइसक (छादपति) ढानता है, 9.811 श्रोरसङ् अक (अवतरित) वह नीचे उतरता है, ८५।

88 1 श्रोल्एडइ सब (बिरेचयति)वह झरता है टपनता है २६। स्त्रीयासङ अक (अवनानि) वह शोभा पाता है, १७९। प्रावाहद्व सक (अवगाहमति)यह अच्छी तरह से गृहण काना है, २०५। श्रोशलघ अन (अपसरत) हट जा. ۱ ۹۰۶ छोस्यक्इ सक (तिजिति)वह तीक्षण तेज करता है ०६। छोहड अब (अवतरति वह नीचे उत्तरता है ख्रोहद्रइ सब (अवभाव्यते भ्रष्ट की जाती है, ४१९।

[本]

स्रोहाबद्द सक (आक्रमते वह अक्रमण वरता है १६०।

छोद्दामइ सब (तुलयति) तोलाना है,

स्रोहीरह अक (निदाति) वह नीद लता है

क्ष (निम्) (कथम्), वया, वैसे, ३५०,४२२, क 8811 " कवि सव (को.वि) बोई भी, ३७७, ४०१ 830. ا کُدیج सव (व) कीन, ३७०, ३९६, ४२२, ४३८, 838 8881 " कोइ सव (कावि) कोई भी, ₹28 I " कोवि सब (कोऽपि) कोई भी, ४१४, ४०२ । '' फा सव (का) कौन स्त्री ? 3701 " कोवि सव (कापि) कोई भी, ३९५ । "किन अ (किम न) बयो नहीं, 38-1 " किं सब (बिम्) बीन वया, वयो, २६५, २७९, ३०२,३६५,५६७ ४२२ ४३४, 8.9.884 1 " किपि सब (विमपि) कुछ भी, ३४०, ३९४, ४१८, 8361 แสรั सब (किम्) क्या. -- , ४२६। " के सव (कति) कितने, ३७६। " केवि स (कतिचित्) कुछ, , ३८७, ४१२। " कस्म्र सव (कस्य) किस का, ४४२। " कास सव (कस्य) किम ना 1225 " दहे सव (बृत) वे लिये, 3481 सव (वति, वितने, ४२० । वि (बीह्स) किसने समान, कइभो

अ (गुन) कही मे? ४(६,४१८॥ | कुन्तरो कर पु (बन्दर) बामदेर, सक (बाधति) इच्छा बरता है, फलइ 971 क्रन्ति फड़ा है स्त्री न (क्ट्सी) क्युनामक पौधें का ३६७। कच्चु सर्वं (कच्चित्। वोई 3391 दस्त न 'काय काम, = 44, 804 1 कुउन पुकात) पति, क∘ञ्ज न (बाव) वाम, २४३ । ा (नावण) नाम से, फउर्जे ३६७ । न (बाञ्चन) सोना, स्वप षञ्चरा 3 € 1 फञ्जूइश्रा पु. (बञ्जुबिन्) अन्त पुर का चवरासा, २६३, २०२। पञ्चाया पु (मञ्चन) चोली, स्त्री नी बुर्ती, ४३८। फुटनका स्त्री (बायका) लड़की, बुमारी, २९३ ३०५। कटरि अ (आरचयम) आश्रय की वान है कि,३५०। स्त्री (कटारिकायःम्) कटारी शस्त्रविशेष ४४५ । घटारइ ब्रम्प्--वि (वट) बहुआ, 31 ब इ सक (नवध्यत) नवाय करना, उदालगा, ११९, षदह सब (बपति) म्यान में ने तलवार सीचना, फड्टइ कम्भइ 1631 षड्ढर सर (कर्पामि) सीच लाता है -64 1 कम्माह न (वनके)स्वण में YIXI कणइ सव (वणति) यह आवाज वरता है, २३९। क्रण ह क्रमोइ कशिथ स्रो (वणिशा, एव वण मी 8 8 पू (वृतान) यमसान क्यन्ते कणिद्यारी पु (विणिवार) वनेर, युक्त विशेष, ३९६ । पु (शदम्ब) तृश-विशेष, परिट (मण्डे) गन में, ४ ०, ४४४, ४४६ । " वयस्युषु (बदम्बः'' '' क्एएइइ पु १ (कर्णे) कान मं ४३,४३३। संव (कतर) कीन? कयरो फरणहि पुन (वर्णेषु) वालों में, i cyf कर्~ यत्तिमानेन वि (इतस्तानेत्र, विसने स्तात्र । 300 1 कर लिया है उसके द्वारा, करेड फय्-क्ट्रइ मर (रूपयनि) र॰ना है, 21 क्धेदि-क्हेदि सर, (वधमति) वहता है ६७ । करइ क्धेहि सर (बचयति) सूबहता है, 3021 ** कधिदु वि (श्यितम्) महा गया । 386 . करदि 47 फरन्ति क्षित्न स मृ (वययिग्वा) वहतर वे. 1 > 3 * ** क्त्यइक मा प्र (कव्यत बहा जाता है, ६४९। रहिए सइ " (बस्पने बहा जाना है, २४९ । करहिं स क्यम्) क्ति प्रकार से, २९७ के के। क्धं

144 1 स्त्री (कानि) सावण्य, कानि, 1775 बन्तिए स्त्री (बान्दवा) बांति नं, सावान से, ३४६ । वि (बान्त) सुदर, बोतिबाना, ३४५ ३५१। 340, 346, 344, 363, ¥16 4.81 कन्तस्य पु (बान्तस्य) पनि वे लिय, **884.1** बन्तहो पु (बाग्तस्य) पनिना," \$54, ¥{*, ¥}51 कृदिवर नष्ट सक्य (बल्यान : बस्यना की जातो है, ३५७। न (कमल) वामल, ३०८, ३३३,३९७,४१४। कशलईन (कमलानि), क्यल, क्यार्थाः, कमयसङ्घ अरू स्विपिति। सन्ता है, ₹¥4 1 यम्पेड अन (रम्पते) कांपता है 114 कम्पिता वि, (बपिता) कीपी हुई, 1 1 1 खराकुम्पणीद्या वि (बनुरम्पनीया) देवा 403 6 के योग्य 1110 सब (शुरवरोति) हुजामत करता है, कम्मवर् सर (ज्यमुनिक) वह जयमाग हरता है,18t1 4091 पुन (कमकाम्) कर्मो का, Boo ! " कन्माहें पू (कमणाम्) क्मी का, सप (भुनति) यह साना है, 1 +93 2071 1635 3/11 १८३

फरेंबि - मक (बरोबि) में बरता है, -421 कलोमि — सर (ररोमि) " " 260 L सब- (बरोति) वह बरता है ' १४३, 448' A5" A55 1

सब ,बरोति) वह बरता है, ६१ 234, 24. \$101 ·

सर (गरोभि वह रामा है 111 मर (मुवात) वेकाले हैं, ₹ut,

Y12 1 16%

सक (बुवन्ति) ये करते हैं, 4141

ŗ 42 सक विकासर. 1 o E E 16 TE मर (बढ) बर. 3 64. Y 6 1 करे प (वर) हाय में. 360 u.Ce सर (यहन) सम करो, ३४६ ४०७। करेंग सक् कन्त्र।सम वरी. 7E0 1 फरिसिटि सर (बरिस्यते) बरेगा, 2011 सरीस सक (रिस्पानि में कर गी. 398 1 क्षीम सक् (किया में की जाती है 328 I कर दर्जे सर (क्योंका में खीच लाउँगा, ३८४। सव वरिध्यामि। मैं बरूगा. ~ E 4 2 काहिड सक (वरिध्यति, यह परेगा. 2 8 1 फाहाच्य सक (अवायींत, किया £ 8 8 1 विजनदि, किज्यह सक (बरोति वह बरता à. 708 1 ١, फांरिजनह सक (क्रियते, किया जाता है. 5461 1) फीरह सब, (त्रियते, विया जाता है, 440 1 10 फीरले सक (त्रियत) विया जाता है 3161 किइन्ड सब (करोमि) में करता ह, ३३८, ३८५, 36. 899. 88X 1 फाउ हे क मू (बत्तम्) बरने में लिये , २१४। कर चे सक (कृणीम्) में करूँ अथवा करतीह,३७०। . do. 340 1 स वृ (वृत्वा) बरके, " कविद्य स ह । हता) वरके 76-1 ,, वडव स मृ (बृत्वा) वरहे, 3193. 302 t 17 परिद्ण स कृ, (कृत्वा। करके, 150 काउण स इ (इरवा। बरके. 3881 फलिश्र स क कृरवा। करके. 1 405 37 करेचि स मृ (जस्वा) वरवे. 1 085 73 बरेटिवरा स ह (ब्रुत्वा) करके. 1985 ,, । इनवान) मैं करनेवाला ह. २६५ । **क्**यव भू मृ (कृत ' किया गया है. 17 **किय** उ 1858 " भूक् (बृता) की गई क्य 8221 *1 क्त भू क (इतम्) किया गया 1 455 भ व (कृतम्) विया गया है, कद २९० । 71 किट भू ह (बृतम) किया गया, 886 1 किश्वत (भू ह (इतम्) निया गया, ३७१, ३७८। श्विष्या भू मृ (अनृतम्) नही किये हुए की ३९६। कर्णीश्च वि (करणीयम्) करने योग्यको, २७७।

कायठ्य वि (कत्तव्यम्) गरना चाहिय 28× 1 करिक्ट प्रस वि (क्लब्यम , बरने के ग्रोग्य, ४३८। व य (यवती) करती हुई. क्रस्ट 8311 व. व (कान) बरना हवा प्रस्त 3// 1 करन्तही व क (बनता) करते हए का 8001 करा विद्या वि (वारिता) वराये गये. ४२३ । प (कर) हाय. 886. 838 1 R1 करि प (वरे। हाथ मे 3481 काहि (वरे। विरणी स. 3×6 1 (वराग्र) हाय के आगे का भाग, ४२२। वरक्त इसक (मनिक्त) वह शेहता है. बरवाल प (करवाल) सनवार, ३५४ ३७९, ३८७। करातिश्च व (वराजित) प्रव्वतित, ४१५, ४२९। प (वरि) हायी. es T 345 : सब (कपति) स्थान में से सलवार खीचता है 64. 234 1 सक (जानाति) वह जानता है, घताड 2. 49 1 धलिख्यह वि (बलव्हिनानाम) कलव वाली के. ४२८। क्रस्तयली प (कलकल) कोलाहल, आवाज, २२० । " क्लयले प (क्लक्ल) कोलाहल. 3071 कलहिन्न व (बलहायितः) झगड सिया गया. LXCK क्रिजिशि न (कलियुगे) वलियुग में, ३३८, ३७५, ४१०। छलिहि न (कली) कलियग में. 3681 पु (वलि) झगडा कर्ती २८७ । कले प (कर) हाय. २८८ । कलेखरही न (कलेवरस्य) मृत शरीर का ३६५ । सक (क्वति) यह शब्द करता है, आवाज कवड करता है, २३३। वि (किम) कीन ? क्या ? कवण 340, 340 (" क्वराः वि (कः) कौनमा, 1 275 " फलरोग वि (वेन) विमसे. 1 035 " द्वाराहे वि (वस्मिन) विस म. 824 1 स्त्री (कबरी) वेश-पाश, चोटी, फबरि 1 535 पु (बवला) बवन प्राप्त, कवल 3691 पु (क्वलाव्) क्वला को, प्राप्तों को, २८९। कवले क्वॅल न (कमलम्) बमल, २९७ र कवोलि (क्योले) गाल पर, 3841 न (क्पालानि) खापहियो को, ₹<0 €

क्षम--

किवँ ज ,क्यम) क्ये ? किन प्रकार ? विद्यमह अर (विश्मित) यह लिस्ता है, 1841 60 to 1 विहसन्ति मन (नित्रमति वे शिलते हैं, कियस्प वि (प्रपण) कलूम, *1.1 न (कट्न्य दश पीडा, ३१४ । क्हि अ (क्यम) करे ? किए प्रकार ? ४०१ । किहे फसरक्वेहि । पु (बसन्त् गब्द कृत्वा) सानेममय सर्व (बस्मान) विसम, \$ 48 P होनेपाला शब्द विशेष, फोलदि 823 1 लग (ब्रीडिति) यह धेतना है 🕦 YYY I **प** सग्रह पु (क्यपट्टेंचे) मीना परशने का काला क्षा इ सक (ब्याहरि) वह बुगता है, का शाहान पत्यर विशेष, वसौडी, बन्मा है, ७१। 3401 कसाश्च-यपु (कपाय, कोध-भाग मामा लाम, कुउमहः सल (कुव्यनि) वह कीच बरता है,१९५,२१३३ 8831 बस्ट न (कप्टम) तक्लीफ पीडा, ब न्जर đ युच्चर) हाथी. 1631 7681 बुक्तरह पु (बुक्तर,) हाथी क्द नि अ (स्थमपि) विभी भी प्रवार से३७०,४३६। ¥1 1 ल (शयम्) भैंप जिस प्रकार स, बुट्रम्बक न (बुदुम्बम्) वरिशन, परिवार, 111 प ह २६७। न (बुद्धतम) छेरन भेदा पूणन ¥361 पहिन्तह अ (बुन) वर्रामे, ४१५ ४१६ । <u> शहरा</u> न (नुटोरन) झापडी म, बुटा में, 34 6 1 कुडोरह कहां वि (बन्मात्) विस से, 344 1 बुद्धम्बद्धः न (बुद्धमन्म्) परिजन परिशार, 1554 ३०२, ३५७, ४२२। वह अ (मूत्र) वहां पर, **पु डुल्ली** स्त्री (बुरी: मुरिया, शायबी, ४२२, ४०% महिं पि थ (गुत्रापि) कही पर भी, ४२२। 738 T वि (विम) वया ? २४९, ३४७, ३६७, ३७०, ចាទ័ (सूत्रहरू) आरष्य, गीतुर, 3551 ३८३ ४१८, ४५१, ४२२, ४२८, ४३४। **द**् 121 सव (इरोनि) वह बरना है, वि (बहिचा) काई काच 3361 सुणह -11 त (बुदुम्बनम्) परिजन परिवार, ष्टु तुम्बर्फ काठ वि (गाडम्) मजबूत, 334 I कुमारी स्त्री (ब्रमारी) अविवादित स्टब्सी, 384 1 कामेइ सम (बामयत) इच्छा बरता है, । अर । पु (बुबार) अविवाहित एड्वा,२६१ १०२ १ पु (बाय) शरीर, काय 3401 पु (बुस्भ) कला, घड़ा, (43) वि (गातर) पायर, हरपीय, बायर 20€ | **कु** स्म 355 1 युक्ती प्र (गुक्ती) यह मं, कोलक्योपन (बालनेयम) देर लगाना ३५७ • धुम्मइ पु (बुम्मार्) हावियों ने गण्डाच रों को पालो वि (बारी) बरन वाली, 2561 **\$**84, 884 1 " फालि पु (काले) समय म 814, ¥22, ¥28 I प (बुरमतटे) हावियों में एकन पूर, ४०६) कावालिश्र वि (कापारिक नापड़ी में मागगर नाने वाने कुम्मयहि यु (बुस्मिल) दुवन, 1031 105 दुम्भिला (हुरसा) बालो ने गुण्दे, 1641 দিয়াঃ मक (पीपारि) मगैदता है 1 FX कुरता 300 1 (हुन) हुन, सानदान, दित्ति हत्री (बीर्ति) यश-बीर्ति, ३३५, ३४७, द्वर्त 1116 प्रमुन (बुक बृतको 800, YICI \$25, 8381 प (मृत्यम) पूर्यः ष्ट्रसुस किय स (सपम्) विस प्रकार, वैसे. ¥08 न (ब्राप्त-राव) पूर्णों की माता, १४६ । <u> युपुयदाम</u> হিল ভা वि, (रियन्) बाद्र गीमा, ३२९ । 248 1 षु (हुमुमामुद्र) बामनेत्र, अ (शिल) विश्वय वाधक, १४९, ४१९। फुसुमा उह व्हिर 3141 धक (कृष्यदि सङ्गामी है। किरितट पुन (विश्विटम्) पहाड़ का किनारा ३ ५ । 462 170 1 षु (नपान्तरपः) धनगव है, कुदन्तहो विल म (विस निश्चम बायक, 1575 163 1 (बियत) विभागी केरिय किलिक्टिण्यह ब इ (रमन) श्रीश बरत है, 1161 x02, x1x 1 वि (शिवन्) किया ? **३२९ ।** [पेचलो किलिझको हि (निष्मम्) जन्द गीरा

ध (ब्त्र) वहा पर, क्स अ (कथम्) विग प्रकार ? षम्ब 1358 केंग्स य (शृते) वे लिय ३५९। क(उ म (फ़्ने) में लिय ३७३ । न (सन्निता) गम्ब धी म, मम्ब ध मे, ४२२। फरए दलायइ सन (समारचयित)यह अच्छी तरह से रचता है, 84 1 ∉लि स्त्री (केन्टि) स्दनी वीधा,वेला का गाछ १५७। कर्रे अ (वयम्) कैसे ? \$83, 808 I क्वेंड अ (क्यचित्) किनी अपक्षा स, - ९० ३९६, 1586 षवडु वि (वियत्, वितना? 8061 क्मकलाउप (वेशक्लाप) वेशो वासमूह गुच्छ। ४१४। फसरि (बेमगे) सिंह, चनगात्र, 334, 82-1 **फेस**हिं पु (वेरी) वेश बाल कहंद्र वि (कोहक) बैमा ? विस तरह का १४०२। पेहि ब (ता ध्यें) लिये वास्त 8-41 कोश्रासह अब (विकमति) खिलता है १९४ मोधःइ सक (ब्याहरित) वह बुलाता है ७६ । काट्टरइ न (कोटरागि) वृक्ष का पोला भाग, 8551 छोट्ट मइ क्षक (रमत) यह खेलता है १६८ । कोडिण न (वीत्केन) आइवय म 8351 कोदरह पु (कोदण्ड) धनुष्य को, 88€ 1 कोन्त पु (की त) भाला, हथियार विशेष, ४२२। कोस्टागाल पुन, (कोव्डागारम्) भडार, घ. व, भडार, •९०

[u]

अप (क्षुम्यति) डर से विह्वल होनी है १५४। खडरड खगा पू (सडग) सल्वार ३३० "८६, ४११, पू (खङ्ग) तलवार लगा ३५७ । खबिगसापु (खङ्गेन) तलकार म ३५७। बचड सक (खचिति) वह बसवर वाधता है ८९। सक (मृद्रानि वह मदन करता है खडुह 1 359 खिण्डनइ सक (सन्यते) खोदा जाना है, २४४ । खिशिहिइ सक सनिष्यति) वह खोदेगा, 1886 षसूर पु (क्षण) अति सूधम समय, क्षण, 88£ 1 षरोग पु (क्षणेन) क्षण भर में ही, ४१९, ३७१। | खुट्टइ

सक (खण्डयनि दुवडे दुवडे बरता है खण्डइ 1 258 खरिडत वि ,खडित) दुकरे दुवडे किया हुआ, ४४८। खएड् पुन (सण्डः द्वडा, 788 I खएडइँ पुन (लण्डे) गेटुकडे, 3 % D 1 वि (राण्डी) दुकडे वाली खएडी ४२३ । खन्ति स्त्री (क्षाति) क्षमा, ३७२ । खन्धस्य पु (स्वयात) वधे से ४४५ । (स्कच) कथा, पुद्गसर्विड, पेड वा धड, खन्धा 1 288 स्त्रम्भ (म्तम्भ) सम्भा ३९० । सक (संयते खोदा जाता है, २४४ । खम्मह खिमिहिइ सक (सनिष्यते) खोदा जावना, २४४ । (धमंं) गरमी धूप, सम्भो ३२५ । (क्षय) नाश, २९६ । खय (क्षय काले) नाश के समय मे, खयगालि प ३७७, 8081 वि (खर) तेज, परुप, कठोर, खर 388 1 न पु (खल) नीरम भाग, खल भाग, ३४०, वल ३६७, ४०६, ४१८। पु (खलान) दुष्टाको वनाइ 338 8 पु ज (खल) दुष्ट, निश्चय ३३७, ४२२ । खल् क्लिइडच न (बल्बाटम्) गजा, वेश रहिन, खसफिसिह् अड वि (व्यानुलीभूत) घवडाया हुआ ४२२ । सक (खादित) साता है, बाग्रह २२८ । खाइ सक (खादति) 236 8881 खादन्ति सन (मादिना) खाते ह, 1 255 खन्ति सक (खादित) खाते हें 8881 खाहि सक (खाद) तूसा 8551 याहिइ सक (सादिष्यति) सावेगा, २२८ । सन (सादयत) खाया जाता है, ধ্রেবসম্ভ ४२३। (अनयको निपःत) ४२४। खाइ खिन्जइ अव (खिद्यत) वह खेद करता है, १३२, २२४। बिरइ अक (क्षरित) वह झरता है, टपकता है, १७३ । सक (शिपनि) वह फेंशता है, 1883 खिन्रइ अ (ललु) निश्चय, 3021 ख मक (तुडिन) यह तोडिना है, 1 259

घम्मो

गोरीश्रव्हि स्त्री (गौर्था) गारी वे, महिला वे, ४१४। | घत्तह स्त्री (गौरी) गारी महिला परिन, पावनी, गाली ३२६। मह_-"गेएइइ सर (ग्रहणाति) वह ग्रहण करता है, २०९। "गृण्ह्य सक (प्रहणाति) वह प्रहण करता है, ३३६ । " गृहन्ति मन (ग्रहणित) वे ठत हैं, " घेष्पद्य ममणि (गृहाते) प्रदृण निया जाना ह, २५६, 1 18\$ " घेष्पन्ति वमणि (गृह्मन्ते प्रहुण विय जात 🖟, ३३५। "गैर्गिह्ज्ज्ञ रमणि (गृह्यने प्रत्रण विया जाता है २/६। " गेथिहळास इ गृहीत्वा) ग्रहण करके, 105-"घेत्त्ण स ष्टृ (गृहीत्या) प्रहण वरके, २१० । " मृष्हे त्पिग् स छ (गृहीस्या)प्रतण बरवे, ३९४४३८। " घेत्त, घेत्त्ए, घेत्त-पं-(पहीतुम, गृहीत्वा, प्रहीतव्यम्। च्यहण गरने थे लिय, ब्रहण गरने, ब्रहण करना चाहिये. 21- 1 [19] अ (अनयकोनिपान) अधहीन अध्यय ४२४। घषसङ् न (सबट) (बलहा) अगडे, 8551 घट-" घेडइ मक (घटयति वह बनाना है, रचना है, १२। ' घडदि सम (पटयति।यह बनाता है, जोइना है, ४०४। " घटेह सर (घटपति) वह मिलाता है निर्माण वरता 8, 401 " घडावइ गर (घटपति) यह निर्माण बरता है, ३४० ¹ घंडिछ वि (पंटिन) निर्माण निया हुना, ¥\$¥ 1 " घडिछाउ वि (घटित) निमाम निया गया है, ३३१ । " प्राचारह सम (उद्यानमीन) वह लोलना है, "सम्बद्ध अक (सम्दिन) वह प्रयान करता है ११३। पु (घट , पश्चा, शुस्म, ३५०, ३९५,४३० । " घडुवाय पु (पटाश्रव) भीन पश्चिम ना पुत्र २९९ । स्त्रे (मृपा) पूजा पकरत ३४०, ३६७ । धरा वि, पु (पा) सपा, बहुत बड़े-यड हथाहा, 162 CX, XXC1 '' पश्चा स्त्री वि (पूरा) नकरत, बहुन,४२२, ४३९। न (बारम्) घोर, आपार्र' 45X 1 1 पश

" घरिन (गर) पर म 791, Y44: " घरहिंन (गृह) थर मही ¥\$₹ (घरियों स्त्री (गृहिणी) परिषय की स्वामिना, ३००। सक (शिपनि) वह भेंबता है वह समहता है घसह **₹₹¥, ¥?**₹ 1 " घल्लन्ति सम (शिपति) पेंतर हैं X 577 1 पु (पान) पाट साना 17¢ i घरिषर म्बे (पेप्टाम्) यदर की चेप्टा की ¥<1 : अक (गल्यायते) धरनती है, 2 +4 1 पुरुटेहिं स स (पुट कब्द इतना) पुट् पुत्र क्या बरह, Y+11 घुम्मइ अब (पूणत) वह पूमता है पत्रावार विख्या है !!! घुसलाई सन (मध्नाति) वह मयता है, मदन करना है 1711 . . सक (पित्रति) पाना है घोडइ 490, 384 363 1 घोड़ा षु (अश्या) पीडे, अब (पूमते) यह पूमका है जनाबार स्लि। पालइ 1619 [च]. धीर -२६५, ६२१, ३२०, १४३। (ঘ) भ 846 I (एव) ही, 14,1 (धार) घार বি च उमुहुविपु (च पुष्तः चारमुस बाना प्रशा 1111 ¥2¥ t (सक्रीप) खत्रवाश पणी में, चक 2461 चक्तिवद्य वि (बारवान्त्रिम) गता हुता. चचर रि (बजरम) (मनिका पैगाकी में) बात हुनी 1 178 11 चिच्छित्र वि दे (स्थायनम्) मेरित, विभूतित, चरचुपद गर (भावति) वह घरण कमा। है, सक (तत्ताति) वह धीनता दे कारता नै चन्द्रद 1881

सम (जियति) वह फरना है,

घढ न (गुँडम्) घर ३४१, ३४३, ३५४, ३६५

" घत्तड सर (मवेशयति) बेट रूडा है,

पु (धम) गरमी, भुव,

र (गृहम्) पर,

171 t

1661

13/1

1560

¥34.1

ष≍चलु वि (भञ्चलम्) माल, चपल, 1312 घडर् सक 'आरोहिन। चढ़ता है, 206 880 1 पहिञ्च र विषम् आस्दः। यदाहुमा, ₹ ३१ । चहित्रा वि (आस्दा) चड़े हुए, 8841 चहरू पुन दे (चटारबार) नटश्वार चटका,यपड का शहर, ४०६। बहाह सर (आरोहाम) हम चढ़ते हैं. 43 C . ११० । चरुइ सक (भूक्ते) वह खारा है, सर मुद्दाति यह मदन बाता है, मदलता 8, १२६ 1 964 1 सा (पिशनि) वह पीसता है चदुरिके ₹८₹ 1 स्रो (चत्रिके) हे धत्रिके ! दासी, पदुर्तिके स्त्रं (पतुरिके) हे दाती) चतुरिके 3071 पन्दिमएँ स्त्री (चड्रिक्या) चौदनी से, ५४९ । चमदर सक (मुक्त) वाता है, 220 चम्पय पु (चम्पक)वस विनेष, चम्पा मा पड ४४४। चम्पावएणी स्त्री वि (चन्पशवणी) चन्पा वे पूल के रग-वाली, ३३० (चिम्पिज्जद्व सक (आक्रम्मते दबा ली जानी है ३९५ । त्यनिति छोडता है घयइ CE 1 सव " चय सर (स्वज) छोड स्वाग **4241** " चएउत सक (स्यजे छोड दे, छोड देना चाहिये,४१८। " चएरिवर्ग हे ह (स्यक्तु) छोडने के लिये ४४१ । " चत्त व भू कृ (त्यवत्त) छोड दिया है ३८३,३४५। " चयह सब (शक्तोति) वह समय होता है, 25 1 चरि सक (चर) खा, खाओ, ३८७ । अक (चलति) चलता है चलइ 1188 न (चरण) पैर पाव ३९९ । घलग चलदि अव (चलति) चलता है, १८३। घलन न (चरण) पांत्र पैर. "२६। चलेहिं वि (चलाम्याम्) चवला से ४२२। अक (चलति) चलता है २३१। ঘল্লइ चवष्ट सक (कथयति) वह कहता है ₹ 1 चवइ अब (क्यवति) वह मरता है, २३३। चवेह 8081 स्त्री (चपटा) तमाचा, चप्पड, चाड पु (स्वाम) स्वाम, प्रत्यास्यान, १९६ । चारहडी स्त्री (च प्रारमटी) शीय वृत्ति, सैनिय वृत्ति, 38€ 1

विण्इ सर (विनोति) इबद्वा बरता है, ३३८, 588 1 चुलाइ सक (चिनोति) इकट्टा वरता है चिश्विजनइ सक (चीयते) इक्ट्रा किया जाता हैं, २४४, २४३। चिम्मद्व सन (बीयते) इकट्टा किया जाता है, 1 585 चिखिहिष्ठ सक (चित्रिध्यति) इक्ट्रा वरेगा, २४३ । चिम्मिहिड मन (चिविध्यते) इबद्रा किया जावेगा, 583 1 चिठवह सक (चीयने) इनद्रा निया जाता है, 787, 283 I चिठिअहिड सक (चीयिष्यते) इकट्रा किया जायगा २४२, २४३ । पशिएाइ सक (अच्चि गेति) वह (सोड कर) इकट्रा करता है, २४१। उन्तेइ सक (उन्विनीति) वह तोडकर इकट्टा करना B. 2811 चिट्ठच्छ इ सक (चित्रित्मिन) वह दवा करता है,२४० । चिक्रचन्त्रह, चिक्रचइ चिक्रियल्लाइ सन (मण्डयति) वह विभूषित करता है, ११५। चित्-चिन्तइ सक (चित्रपति) शोबता है, ४२२ । चिन्तेदि सक (चित्रयति) सोवता २६५ । चिन्तयन्ती सर (चित्तवत सोचता हुआ, ३२२। " चिन्तयमाणी मक (चिन्तवती) सोवती हुई, ३१० । चिन्तन्ताह व कु (चित्रमानाता। सोचते हुओ ना ३६२। चिन्तिञ्जइ सह (चिन्तवने) सोवा जाता है, ३९९, 8601 चिन्तित क ह (पिनिन) सोचा हुआ, ₹**२०** | चीमुनो पु (जीमृत) मेध, वर्ष बादल, ३२५ । अक (अध्यते अष्ट हुमा जाता है चूकता है, चुफाई १७७ । चुलाइ सन (चिनोति) इस्ट्रा करता है, २३८ । चुएखोहोइ अव (पूर्णी भवति। वह पूर-पूर दुवडे होता है, ३९५, ४३० ।

। (युम्बति) यह चुम्बन बारता है,

छन्दह

द्धरपइ

द्धहर

च्रिचवि ग १ (च्रिवस्या च्रायन वररा, 2461 चलुधुलइ थर (स्पानति) यह परवता है 1001 चेड्झिड न (क्झूगम) चूटला वरन, हाय का आमृषण, परियां, ३०४, ४३०। चूर करेड मन (पूर्वी करोति) यह वारीक पीसता है, ३३७ । अर (चेतवति) वह सावधान होता है,३९६। चाव्यहरू मन (ग्रहाति) वह घी-वैल आहि लगाता है, **६** स्त्र अ (एवं ही. ६३, ३६५ : [छ] दरत ति (विदेग्ध) अपने आपको बुद्धिमान् समझन वाला, ४१२। ष्टच्छरी पु (शहर) शरा, जल-स्रोत, ३५४। छण्डह थ (राउत) गीमा पाता है, 1001 छत्रु सथ (मुञ्चति छोडता है, 981 स्टूहि सन (स्पन) छोड दे, * 60 I छड्डे विगु स ए (मुनवा) छाडवर मे, ४२२। स्नद्द वि (छ दव । मनमानी मरने वाला, ४२२ । ध्रमपुष्टु पु (पण्पुरा) रह मुल वाला निय-पुत्र कातिवेस, 388 1 सक (टाइयति डोन्पा है, द्यायइ 28 1 श्री (छाया) छाया, द्याया *00, 360 F यु (धार) गान, मान, យគ 154 1 दार्न पु (छाग) यय ग २९५ । दिस वि (मुष्टम्) बनाया पुत्रा, 1261 धिद--" दिन्दइ सक (जिनति) मान्ता है, देनता है, १२४, २१६ । ' हिद्दब्द गय (छियते) देर मर ती जाती है, ३५७, X1X 1 " हिरमुत्व (विष) दूर पर 'त्या है, AAA! " खब्दियुन्द्र सब (आस्टिनित) वह सीच देता है 1 41 द्विषद सर (स्रुपति) बह एम है ₹491 गर (राग्ध) या छुता है, दिवह **₹**≈₹ 1

द्विष्यनद्व सक (स्ट्रायन) छुत्रा जाता है,

(UES

शक (श्युणी यह मुता है,

1221 हेथर प्र (देश) हाति, 147 छ। ब्रिन्नन्त् सक (अनक्षिध्यन) छाला हुआ होगा,३९५। [ब] जग्रहरू खब (स्वरवत) शीधना परना है 1001 " जग्रहन्ता व १ (स्वर्य) गीप्रता बरमा हुमा, १३०। जह थ (यदि) या, अगर, ६८३, ३५१, ३५६, 264, 264, 265 200, 202, 201 164, 250, 331, 494, 455, **38**4, \$99, Y+1, Y10 ¥14, ¥15, ¥23, 826, 8311 यि (याहन) जैमा, जिम तरह का ४०३) जइसो जधों ल (यत) वनोंकि, कारण वि, ¥153 नगु न (जगन्) सतार, दुनियो, \$¥\$ 1 जगि न (जगनि) समार में Sof Aox 1 सभाइ अव (आगति) जामगा है, 601 4161 अगोवा अक (जागश्तिव्य) जागा पाहिने, अवज्ञरियाद वि (जनिता) सोसमी शसिन्शन, ३३% 1261 5461 वर वि (स्वतम्) छाड्रा हुमा, \$54, 105 I पु (अनः) पुरुष, अगु पु (बन) पुरव, १३६, १३७, १३६,४.६, त्रशु

' अगा पु (बना ' पुरप,

अपग्री

जिया

1 075

१८२ । अगु

" जरीगु पु (बनेत) पुरत ",

" जणस्म वु (बास्य) पुरय की,

स्री (अपनी) मादाः

ब्र (इव) गगाः,

व (६व) गमानः

ल (यदि। यति, सगर १८५, ४०१, ४२१।

सव (बात्रमने यह हमण बाहरण करण है,

सब (मिपनि) वह प्रतिता है, बद सामा है,

\$85 P

* ٧٩ 1

4161

\$321 \$321

1365

TYTE

567, 207 1

4+1,441

सव (सपुन्यते) सूमा जाता है

छ्रांबरज्ञ सव (स्परदने) छूता जाता है.

उत्त ञ (यत्र) जहीं पर. 8081 उधा व (यथा) जैसे, जिन प्रवार. 250 1 पन्त स य य (यात) जाते हए थी. ¥ 30 1 पु (यम । यमराज. सम ३७०, ४४२। " जमहा प (यमस्य) यमराज के, 8881 जम्पइ सक (क्यमति) कहना है, ٦ ۱ " जम्पि सक (जल्प) बोलो, वहो, ४४२। जिम्परहे वि (जत्पनशीलाया) बोलती हुई वे ३५०। जम्माबाइ, जम्माइ अक (जम्मति) वह जैमाइ, उनामी लेता है 280 I सम्मद् वन (जायते) यह उत्पन्न होता है, १३६ । न पु (जम) उत्पत्ति पैदा होना, "९६ ३९७, लम्म 422 I जय पु (जय) जीत, विजय, 3001 लयस्य न (जगत) जगन वा, विद्यका, 8601 अ (यदा) जब त्तया **7631** जर स्त्री (जरा) वृद्धापा ४२३। जरह अस (जरित) वह पुर मा होता है, यूढा होता है. ४ ४। जरिज्नह, जीरइ अन (जीयते) जीण हुआ जाता है बुढा हथा जाता है, २५०। 229 1 जल न (जल) पानी. न (जल) पानी, 3061 जल जल् न (जल) पानी, ४२२ ३९५,४१९ 820 1 जलिन (जले) पानी मे. 363, 888 1 जलो न (जले) जल मे पानी में, ३६५ । जलह न (जलात) जल में से ४१५। ग्रफ (ज्वलित) जलताहै, जलह ३६५। पू (ज्वलन) अग्नि, 3541 जलगो जलिशा प (ज्यलने) आग मे. 8881 सक (यापयति) गमन करवाना भेजना ,४०। लवद्द अ (यया) जैसे, जिस प्रकार. সহ 88E 1 नहा सब (यस्मात) जिस्से, ३५५ । अ (यत्र) जहा पर, ३४९,३५७,४२२। वहिं अक (जायते) वह उत्पत्र होता है. १३६। नाथह

লাঃ

अक (याति) वह जाता है,

888, **3**80,

जाइट्रिश्रए सव (यद् यद् हव्ट तद् तद् जो जो देखा गया है, यह वह, ४२२। स्त्री (जातिम्) जाति को, अपने स्वधर्मी सम्-ਗਾਏ दाय की. ३६५। अक वि (जायताम्) (यात्) जावे, (जात) हुआ, जात 337, 870, 87E I जाउँ अव (यावन्) जब नक्, 808 1 अक (जागति) जागता है, 60 1 जागरह न (ज्ञान) जानना, ज्ञान, 191 जाणग ज्ञासिष्ठाइ सक (ज्ञायते) जाना जाता है 330 1 अ (यावत् ' जब तक, ३८७, ४०६ । नाम जामहि अ (यावत) जब तक, ४०६। वि (जातौ) उत्तरत हो गये हैं, ३५०, ३६७। जाया पु (ज्वाला) प्राप्ति, ४२९, ३९५, ४१५। जाल जाव अ (यावत) जय तक. २७८ । ਗਾਰੱ अ । यावत) जब तक, 388 1 सक (यापयति) वह गुजारता है, वह बरतता जावेह है. **%**ਾ जि व (एव) ही, ३४१, ३८७, ४०६, ४।४ ४१९, ४२०, ४२२, ४२३, ४२९।

" जयह सव (जयनि) जीतता है, २४१ । " जिलाइ सन (जयति) वह जीतना है, २४१ । " जिए उन्ह कमणि (जीयते) उससे जीता जाता है 283 1 " जिठ्यह कमणि (जीयते) उससे जीता जाना है २४२ : " जेप्पि स ह (जित्वा) जीत करके. 880, 888 1 " जिसोदिव स कु (जित्वा) जीत करके 885 1 " जेऊएा स, क (जित्वा) जीत करके, २३७, २४१। जिएिक्सि स कु (जिल्ला) जीत करके, " निज्न अ व (निजितक) जो जीत लिया गया है, 808 1 " विशिषित्रश्रह नि (विनिजितन) जो पूरी तरह से जीत लिया गया है, ३९६। जिइन्टिए वि (जितेद्रिय) निसने अपनी इद्रिया की जीत निया है, २८७। पुवि (जिन) तीम कर अग्हिल, ४४४। जिए ४४१ । जिटिमन्दिर न (जिन्हेन्द्रियम्) बिह्वा इद्रिय की ४२७ ।

ı,ž

जिम्-नेवद्व यि (धाषत्) जिनता, 1031 जह उ " जिमइ, जेमड मक (भुक्ते) माता है १९०। वि (यावत्) तित्रा, X\$3 F " जिम्मइ सक (भुक्त) गाता है, जेह वि (बाहुक । जना 403 F जियेँ म (यया) जिम प्रकार, ३३०, ३३६,३४७, सव (य) जा १३०, ३१२ ११८ १४१ स्रो ३५४, ३७६, ३८४, ३९५, ३९६, ३९७, 330, 368, Yet You'Y C. 822, 358, 350 808 I AN ALL! जिह अ (यया) जिस प्रनार, ३७७, ४०१ १ " जु सव (म) पी, ४८ ३१० ३५७, ३५४ ३६० अह अ (यया) जिस प्रकार, 300 1 \$40 \$65 311 8161 जीर पू (जीव) जीव, आत्मा, ४३९। की (या) जो स्था, 454. 384. 331 नीमृतो पु (जीमूत) मेथ, बादल, 1 055 341, 216 . 10, र्जाव्---296 270 5.6, " जीवइ अर (जीवांत) वह जिदा है, 8+3 828, 814 ३६७ । " जीवन्त वि (जीवत) जीवन-पवत २८२, ३०२। >>11 " लेख सब (बा) जिसी, " जीव पु (जीव) जीव, आत्मा, 818 X St 1 XXX " ਜੋਂ मब (यस) अर, " जीबी पु (जीव) जीव आहमा, 220 · 31 31 " जासु मव (यथ्य) विसरा, 570 386, 388, " जीवह पू (जीयानाम्) त्रीवों का, अरमाओं का ४०६ जीविड न (जीवतम्) जीवन, जिदगी ३५८, ४१८। " जहे सब (यामान्) मिनमे, 328 1 जोहर थर (लज्जिति) यह लज्जा पाती है 1031 " अहि क ,यत्र) यहां पर, १८६, ४११,४.६। जुद्यञ्च अ (पूर्वन-पूर्धन) अनग अन्त * 77 1 " जैहिं सर्व (याध्याम्) जित्र दो म. र मुगरम्) जोडा, दो का मुग्म, 8 \$ \$ 1 ज्ञा " जे सब (मे) जा ३३६, ३८०, ३६०, ३७६, ३८० ज़ुबच्छड सब (जुनुप्मति) पृणा बरता है Y 29x Ya4, 288, 288, 2 41 जुत्रसद्ध सब (जुनुष्वति) पृणा बरता है 18 " जोह सब (यवाम्) जिनका, सक (गुज्यो। जोडा। है युक्त करना है १०९ जुरतई जोश्रमु ७ (योजन) परिवास विनाज, बार कीव, देश ! बर (पृथ्वा) युद्ध-सडाई करता है, २१७ । ागहर सक (पार्याता देगता है, लुउम्बरतही व ह । गुरवमातस्य। सहाई करत हुए वा ३७९। " जोइ सव (पन्य) दगा ३६४, १६८१ जुउन ा (एडेन) युद्ध मे, ३८६, ४२६ । ' जोड्रान्डें वह (दूरवे में देशी बाती ह सर (युज्यो) बोदना है, जुङगइ 1051 ' जोश्रन्तिहेव र (पन्यन्या) देनती हुई र, १३६। वि (युत्तः) इतित, माग्य ग्रहित, 305 | धुत्ता " जोष्प्रस्ताह व प्र (गुष्यमातात्राम) एको हुमा मा जुसर वि (युक्त) बुद्द जाऊँ, ₹¥01 4051 वि (गुन्तम्) सहित, याग्य, उथित, २७९ । ज़र्स स्वो (ज्योतस्ताम् भाषानी का, 2011 जीएह सन (युग्रा) वर् बोल्ना है, tet i ुत्पइ 423 t লি स एव) हो, जुबदि जायो पु (पुर्वत जा) महिताओं ना तमूह २८६ सर (विदार्भयो होता है १३२, १३%। 211-जुश्ह मक (बञ्चयति) ठमना है, 152 " श्रापति गर (शागारि) जारण है, ७,४०३ ४१० । ज्रवह ₹₹\$ थ दि (पाषन्) जब तक, जितना ४००, ४०४ **डेस**नी " याण्डीद सरू (अनाति) बाजा है ज्ञ (यत्र । बहाँ पर 1111 " ज्ञानह मह (अभिष) मुन भगा म नेखु ४२२ । १ (बादर) बार भाग है। वि अ (वचाडि) बहाँ वर मी, ४०४, ४०५। " सम्बद्द, द्वातः <u>चेन्तु</u> ₹10 €

स (पना) जिल्लारार, ३९० ४०१।

जेवें

" जाश्चिम्बद, ज इम्बद्

" अणाइक्त सर (न जायते) नही जाना जाता है, [न] वान न (ज्ञानम) भान \$031 " जागुउ सक (जारीयाम्) में जानू", ३९१, ४३९ । िं ह " जाणिचँ वि । नातम) ज्ञाना गया, ३७७,४०१,४२२। टमरुको पु (हमहक्) बाजा विशेष, ३२५ । " जाणिकण, णाक्रण स र जात्वा) जान गरके ७। टिशिटल्लइ सर (भ्रमति) घूमता है फिरता है 1838 " जाणिष्य, गाथ वि (ज्ञातम) जाना हुआ, जोना दि बहिषाइ मक (मण्डयनि) वह विभूषित करता है. गया. ७ । [3] ' आणुत्रेत् सन (आतापयत्) आना देते, **⊅**७७ 1 " श्राण्त वि (क्षानप्तम्) आज्ञा दिया हुआ, २८३। दका स्त्री (बन्का) वाजा विशेष ₹₹41 " विष्णवह सम (विनपयति) विनति करता है, ३८। सक (स्थापयति) यह स्थापित करता है 673 ३५७ । [76] ठा उ न (स्थानम) स्थान जगह, ३५८ । सक (तिष्ठत्) वैठे, स्थिर हावे, ५४२ । ठाड भावह अक (बिलपति) विलाप करना है, 180. न (स्थानम) स्थान, जगह, १६ ३६२। ठाग १४८, १५६, २०१, २/९ 3/9, ४२२। पु (झयर) वाद्य-विशय, झांच, ਵਿ] भन्छरा ३२७ । अक (शीयते) नष्ट हाता है टपक्ता है, १३०। भड़ड (डमध्य 'वाजा विशेष डमरुको ३२७ : **कडित** व (झटिति) भीघ, °66 1 न (आडम्बराणि) बनावटी कामो को,४२०। ह्रस्वरष्ट भड़प्बहिं व (मीधम्) झटपट, 3661 ड₹इ अक (त्रस्यति) वह भय खाता है, १९८। सक (भ्रमित) घूमता है, भाग्टइ 9581 सक (विवति) पीता है, 201 डल्लइ सक (भामति) घुमता है 4775 १६१। सक (दहिष्यत) जलाया जायगा, ड हहिइ २४६ । भरह अक (क्षरति) झरता है, दगकता है ৬४, " डडमइ सक (दहाते) जलाया जाता है, २४६,३६५ । 1503 " द्वजिमहिद्व सक (दहिष्यते) जलाया जायगा, २४६ । भालकित्राउवि (सतप्तम्) तपा हुआ जला हुआ ३९८ । न (शाखा) वृक्ष ने वड बडे भाग, ४४४। डालइ भाष्ट्रह सर्व (ध्यावति) ध्यान करता है ६ २४० डिम्भ पु (डिम्म) बालक ₹**८२** । क्ताइ सक (ध्यायति) ध्यान वरता है, ६, ३४०। डिम्भइ अव (समते) वह खिसकता है, 1991 " भाइविं सर्व (ध्यात्वा) ध्यान करने -38 : **डु**द्ग िहि पु (पवतेषु) पवतो पर, **የ**የሂ 1 भागावाम् स ह (ध्यात्वा) ध्यान वरके. १ ०४४ डाङ्ग₹ पु (गिरि) पवन, 8451 प न (ध्यान) ध्यान, कास [8] अक (क्षीयते) क्षीण हाता है क्रमण नष्ट भिजइ हाता है अक (विवतते) वह धसता है गिर पडता है, दसङ ११८ । िमाउता अक (क्षयामि) क्षीण होती है, स्त्री (ढक्का) बाजा विशेष, सक जुगुप्सति भृणाकरता है, ढक 2081 पु (ध्वनि) शब्द, भावाज, ४३२, ५३३ । दक्षा स्त्री (ढनना) बाजा विदेशि, 8901 मुच्य सक (छादयति। वह डाकता है, सती (बुटी) झीपडी, बुटिया, ४१६, ४१८। दक्ष 2 1 मुम्पडा वि (अद्भुत्) आश्चय जनक, दक्किर 1558 सक (स्मरति) याद वरती है, खेदपूर्व ह भूगइ सक (भ्रमति) वह धूमता है, पिरता है, १६१। चितन वरती है, ७४। ढएढल्लाइ दएढोलइ सक (मवेषयति) यह खोजता है, मासिख वि (शित्रम्) (जुब्दम्) सेवित अगराधित 1229 **डिक्**क्इ अक (वयमोगजति) साड गरजना है १४८। ٠ ९﴿

दमइ सर (अमति वह पूमरा है णिरणासद सव (परयति नध्द मेता है, मात्य है, सम (गवेपयति) हृद्ना है, 11838 दुग्दुन्नह 1361 सर (भ्रमति) वह भ्रमण वरता है दुमइ १६१ । शिरम्यह अर (निसीवने) छित्रा है, XX 1 प्र (विट) शयक, दारम िरिणक्तइ सक (पिनव्टि) पीनता है रेकून करता है, YRY I दाल्ला पु (विट) नायर, 3201 ter i णिरिलामद यक (गण्डति) जाना है 16.1 िगा अ (तितराम्) निहित्तन, प्रशी, ダガント णि'लज्बह सक (तिनीयत) नेंद्रा जावा है स न्यित ग थ (न) नहीं, = 55 1 रिया जाता है 44. अर (गुप्यते) यह ध्याकुर होता है, OEL 401 शिली छाई सक (जसीयी छित्र जाता है 141 • सक (गुप्यति वह निम्न हाता है, १५०। िएतुकाइ सब (निहीयने) छित्र जाना है 441 म, (इव, मुगान, जसा, 1 25 ण णि त्या 🕏 गय न्हति) तोहश है 1775 अ (भू) निक्चय अथक क्षका अर्थेक ३०२। गु खिल्ल पइ अब (उल्लानि) यह उल्लामत शोगा है अर (मारात्रान्तो नमति) दास ने वा ण ग्रवह 1 905 स नमना है, १४८ व्यक्ष जिल्लुप्रश्रह सब (मुझ्यति)) बह छोडताहै, ٠,, ম্যুদ্রি म (वपरीरव) उल्हे अध म बहा जान वाला खिल्लू रह रव । छिनति) वह बादता है, \$381 440, 3x3, Y361 **गिषह**ष्ट मह (गच्छति) वह बाता है, 167 1 HIT णाग अब ्नश्यात्रि वह नष्ट हाता है 100, (७ यह इ पु वि (राष्) स्वामी, मारिक माध 350 शिवहड़ सर (पिनव्टि) यह पीसता है, 17.38 बि (नाप) स्थामी, मानिक, गाहा 1 635 शिधाशी वि (निवानी) रहनवाला, 2011 शिष्यारह नक (वासेकित बराति) एव अस्य से देगता श्यिदवस्त श्रदः (पृयामदनि, स्पष्ट मद्यति) वह अनग ŧ. ξĘ 1 होता हैं, यह स्पष्ट होता है णिउड्ड अप (मण्जिति)वहद्वताहै 1011 शिध्यरह सक (दुल कथ्यात) वह दुल बहुता है, १ । फि, च्यल्रह सम (धारति। मन्ता है, टपनता है 1 F05 (ग्रिटकाड सक् (ग्रिस्ति) वह बारना है, श्चिम्छल्लइ समा (धिनित्त) यह रेदवा है, बाटता है गिव्यक्तेइ सर (दु म मुञ्चनि) वह दुम का छात्रा 1888 1. 47 1 शिक्सरइ मर (क्षयित) यह शीण होता है, ₹01 विक्याह अव (विशासकी) वह विवास बरना ! श्चित्रभाइ सर (ध्यायति) यह देगताई निरोक्षण 1441 मरवा है € 1 शिव्यामद सन (मापुता बोस्ट मानित्यं वरीति। क्षित्रसोसद् यन (छिनसि) यह देदना है बाहना है, 11 1 वह धीप से होड की मलिन करता है. तिमुद्ध अर (माराजानी गमति) भार से दवहर 1271 पिट्ट खड अर (सन्ति) वह टपनना है पूना है, 101 । 9861 नगा है धर (विवस्ति) वह गम जापा है खिहरसङ्ग मन (गम्बाति) वह गमन करता है 15.1 थर (अराटाम गरोति) यह निरमेप्ट होता i def शिहालहि गर 'निमानव) दम, देनी to; ₹¢\$1 णिही, गिहि वि निम (निमि) समाना,४/४, चित्रषद् गर (काम न्द्रे , संनाप की दश्या करणा है शिमद गक्ष (ग्यस्यति। यह स्थापना बारता है, १०९ । YY 1 यर्वे (मु + रदम्) यह, ₹45, 1#21 ग्रिम स्पिदीहरू मकः (तिशाचीतः निपत्तीत) बह विशाण है सब रुप्टिंग) जाता है धब्र व्यवस्था है विस्महद माग बरता है उदे ! 1523

७९।

सक (गच्छति) वह जाता है আঃ १६२ । गागइ सक (गण्छनि) वह जाता है, १६२ । गोरवइ सव (युम्झनि साने वी चाहना है, 41 णीरवड् सक (आक्षिपित) यह आक्षेप करता है, १४५ ।

गीनुक्कइ गर (गच्छति। यह जाता है १६२। णोनुञ्छइ सक (आच्छोटयनि) आच्छोटन बरता है, ७१ णालुइछ्रहमक (निष्पतित) यह पतन करता है 991 अब (रमते यह फ्रीडा बरता है, 1525 थाहरमाइ सव (गच्छति) वह जाता है 957 1 णोहरइ अब (नि सरित) वह बाहिर निकलता है,

खीहरह अव (आक्रादति) वह आक्रादन गरता है, 1361

ग्रुसइ: े सक (छादयति) यह ढाकता है, २१ 1 रू'मइ सक (पत्यति वह स्यापित कर है, १९९। गुमज्बङ् क्षक 'निमज्जति) वह ड्बता है गुल्लइ सक (क्षिपति) फेंकता है प्रेरणा बग्ता है, गुन्बद्द सक (प्रकाशयति) प्रकाशित वरता है, ४५ । ग्रुमइ सक (छादयति) ढाक्ता है, छिपाता हैं, २१। गेद सव (न्+इदम्) यह, 305 णोल्लइ सक (क्षित्रित) फेंकता है, प्रेरण। करता है, 1831

रहाह थक (स्नाति) वह स्नान करता है 188 यहासू ् न (स्नानम्) नहाना स्नान, २९९, ४१९ ।

[त]

" त सब (तत् तम्) वह उसनी, ३२६, ३४३, ¥25, 320, 3x0, 345, 350, ३६५, ३७१, ३८८ ३९४, ४१४, ४१८, ४१९, ४२०, ४२२, ४२९ 888 F

" तेण सव (तेन) उससे, ₹\$ 1 सब (तेन) उस से, उनको, ३३९, ३४३,३७९, " तें

४१४, ४१७ ।

" तथा सब (तया) उससे, अव्यय,(तदा) तब, २६३। " ताए सब (तया) उससे, ₿**७**0 1 " लीए सब तस्या) उससे, ३२१, ३२३ । " तस्य सव (तस्य) उसका, २६०। " तस्म सर्वे (तस्य) उत्तका, 8881

" तम् भव (तस्यः (तस्मै उसका, उसके लिये, ३३८, ३४३, ३७४, ३८९, ३९६, ३९७, ४१२,

४२८ ।

" तासू सत्र (तस्य' उसना, ३५८, ४०१। ' तहों सव (तस्य) उसका ३५६ ४२६ । " लाए सव (तस्या) उसके, 322 1

" सहे सब तस्या उसका, ३५०, ३४४ ३४९,३८२, 808, 888 1

" तहिं सब (तस्मिन्) उममे ३५७, ३८६, ४९९। सव (ते)वे, ३५३, ३७१, ३७६, ४०६ ४०९, ४१२, ४१४।

"ति सव (ते) वे, ३३०, ३४४, ३६३। सव (ते) वे ३३६, ३८७।

" तेहिं सव (तै) उन स, ३७०। " तहि सब (तै) उन से,

४२२ । ' ताह सब (तयो) उन दोनो के, ३५०,३६७,४०९।

" त'हें सब (तेपाम्) उनका, ३००। " तह सव (तेपाम्) उनका, ४२२।

तह, तहें सर्ग (त्वया) सुममे, ३७०, ४२२। तइज्जो वि (वृतीया तीसरी, 338, 888 1

सव (त्वत्) तुझमे, तइत्ता वि (ताहश) उसके समान, तइसा 8031

त्तसने न (दशने) देखने पर, ३१६ । सक (तक्यति) तक करना अटकल लगाना, तकइ

350 1 सक (तक्ष्णोति) वह छीलता है सीखा करता तक्खइ

€, 1888

सक (तदगोति) वह छीलता है, तीला करता तच्छइ ŧ, 1839

न (तडागम्) तालाव, नटाक **₹₹** 1 सक (तनोि) वह विस्तार करता है, । एहं } तहरू

तहत्ति न (तट्+इति) 'तडाक्" ऐसा वरके, 347, 720 1

तद्यप्पद्धइ अक (स्प दते) तहपना, व्याषुल होना, ३६६ । पुन (तटे) किनारे पर, तीर पर, ४२२। तडि

ी} वह विस्तार **करता है**, तड्ड

संबंधिय

सव

तमइ

तमम्

तहां

सहिं

ता

साउ

ताठा

ताहें इ

पु (तपस्यन्) र गास्त्री !

पून (तरम सक्या।

श्रम (त्रस्पति वह हरता है,

सव (सन्यात् उपने उपन्यस्य मे

अ (तना) तब, २०८, ३०४, १३०।

सक (नाइ १८) यह वीरता है तारत प्रशाह

वि दशगु दशा में,

श्रांगत) गर्ना पर,

म (तायत) सब तर,

स्त्री (न्यूरा) बहा डॉर, नह

* (71

1118

1351

1711 His'

141

ī t Ŧ

444 X 21

गर्व (तननि, यह विस्तार करना है तहपद्र 1 055 तस्य (तृप) धाम, 1868 058 र (तृणानम्) तिसीं मा, ३ ९, ५११। तसह सन (सनति। वह प्रचाता है, तगुडु ₹30 I तगुउ पु (तनय पुत्र बेटा, YYO I सब वि 'तस्यदम्। उमका यह तगुउ : 4 1 म (तिहिमन्दा^क) जस समय म, ३७६ तगा ₹८0, ४१७ %P२ I संखेख थ (एउं) में लिये, ३६६, ४२५, ४३७। तस्र न (सप्र) दारीर 808, Y761 ?गु म (तनु = सपु) पतना, तुबन, पण्डा, ४०१। तशस्त्र न (सहबन्य) सहवका, X70 1 तन्तु व (तत्र) वहाँ पर, X0X1 ल (तप) वहीं पर स्य 322. तदा म (सत्) उनमे, 9501 न (नपा) उत्ती प्रवार सं, तथा २६० । वि (तनु) याश, ३२६ । तमु तर्— " तथइ स (सपति) यह तपता है गरम हाना है, 1005 " मतदाह अ । मापिति । यह मनप न रता है १४० । सर्दोस् यु (देवसेपु शीवान 375 : त्रशास्त्र सप (भगति) यह पुराता है । ₹• 1 सर् सरइ अर (मननोति) वह समय होता है ረፋ **२३**७ । " ती।इ, तरिवतद्वयर (ताया) तरा जाता है, पार श्या जाता है २५० । " उत्तरह मर (उत्तरति वह इतरता है, पार बाहा है, 435 1 पु (तर) शाह, पह मृत्र । .001 " तर्मे पु (अस) तास 323 " सक्त पू (तथाःम्) वृक्षी वा, 1358 ' स्ट्रहुं यु (नाम्य) युगो स ६४०, ३४१, ४११ । सराहरि पु ,गरवर्ग वनी ग, ¥4- 1 तरणां पु. हिताला ह । ३४६, ३५०, ३६७ । विशिन्ध वि (विपर) लिसा " तहिक्ती पू कालम्म) दे बबान पुरंप । इन्हें । तिकिन्द्री नि (निक्तिराही ने मर संबद्धान्द्रद्द्र गर्कः (भवति , यह भ्रमण काना है 👚 संब हुने म (त्रा महिये, हेर मत्री

तातिमा वि (साहमा) उनके जैसे 3(41 सापसबेप प्र (सारतवेप) भगनी का बन, न 143) ¥ \$1. अ तावत। तय नक्, साम Yet : 1 तामहि म (तावत) तथ तभ, सामातरी पु दामीनर) नाम विरोप ३००, ३१५० सारिस वि (ताइम्) उसम् जसा 3611 तालिखरटइ सर (भगति वह भगत करता है अन 2136 पु (ताप) नाप, गरमी ताव अ (तावत्) तव तक, २६२, ६२१, ३३१। ताय श (तावर्। तब तक, 2791 : ताँद्र 1431 वि (सीम्पान्) होगां को, पैनां का तिस्या सक् (तीक्ष्णयति) यह सीमा करना है, ३४४ हर् िषसंड fr (ge) देखा हुआ, ११४, ११६, ११६ / तिट्टा 446.1 ठ्य) पाग गुन, -तिण । ग 4211, ** तिरापुन तुम) मान तुम वि (विभि) सीत में (तियु लात में अपने , विहिं ा (सीर्गम्) पवित्र स्थान नार्गमय नित्यं tire up, वि (तिश्म) तेग्ह ी *111 तिदम तिन्तुप्रशामु वि (विकितीदानम्) गामा, मीर धूवा 211 3/21 निधिर न (तिनिर) समस्तर सर (आर्टी धवर्ष) यह गीला होता है निग्मष्ट 4161 - • 6 . \$ 5 * 1 41x 1 1241 181 | feft re ft (fr't) ftror \$ 55. 7 frit) ma feites fin-frit, Vet ? ११४। तिमा

तिलह पु (तिलानाम) तिलो गा 8061 वहर धक (त्रटयति) वह द्वटता है 1 719 " तिलबणिन (तिलवने) तिला के सेनाम ३५७। तुम्बिणिहे स्त्री (तुम्बिया) फल विशेष के, ४२७ । " विस्तार पु (तिसतार ?) तिसो मे तेल के समान, तुलइ सक (तुलयति) तीलता है, ठीक २ निश्चय बरता है, ३५६ । २४। तिलत्तरा न (तिल्ख) तिला वा तिलपना, ४०६। तुलिश्र वि (तुलित तुलाहुआ, °ረን t तिवँ अ (तया) उसी प्रकार मे ५७६, ३९५ तुहारेण सर्व (त्वदीयेन) तुम्हारे से 8.81 तूगत् तूगतीन (दूगत्) दूगसे 1958 07F उर्श, ३२३। तियेँ तियेँ म (तथा तथा) उसी उसी अवार स, ३४४ अक (तुप्यति) वह सतुष्ट होता है, त्मह २३६। ₹60, 808 1 न (तृणम्) धास, लिनका, **३२९**। स्स् तिमहे वि (तृष) प्याम वे 384 1 " सुराष्ट्र न (तृणानि) तिनके, ४२२ । तोर्ड न पु (तेजनम्) कान्ति को, प्रकाश को, १०४। अर (पास्तीति) वह समय होता है, ८६। तेत्र्यण तु—तुँह सब (त्वम्) स्र ३३०, ३६८, ३७०। तेश्रवइ अब (प्रदीपयति) वह दीपता है 8081 ३८७, ४०२, ४२१, ४२५, ४३९। तेत्तइ अ (तत्र) वहाँ पर, ५३६ । तहेँ सर्व (स्वण) तुससे, (स्वाम्) तुसको तेतिया वि (तावान् उतना, ३९५ । (त्विय) तुझ पर, ३७० ४२२। तेत्तला वि (तावत्) उनना, 1 808 तुम सव (स्वत्) तुममे, (तव) तेरा, तेत्यु 1225 थ (तत्र) वहीं पर 808 S0X 1 से सर्व (तव) तेरा, ४३९। तेम्ब ४१८ । व ,तथा) उस प्रकार से, ,, तुह सब (स्वम् स्वाम्, तव) तू, तुझकी, तेश, तेवँ अ (तथा) उप प्रकार से, 383, 390, 358 300 3631 808 1 लुज्मु सब (स्वत्, तव) मुझसे, तेरा ३६७, ३७०, तेवॅए अ (तथा) उस प्रकार से ३९७, ४३९। तवडु वि (तावान्) उतना, 1 00F , FOr ३९४, ४०७ । त्तख सव (स्वत्) तुमस, (तव) तेरा, षु (देवर) पति का छोटा भाई तेवरा 3281 ३७२ ४ ५, ४४१। तेहड् वि (तथा) उस प्रकार से, ३५७ । तुध्र सव (स्वत्) (सव) तुझमे, तेरा तेहिं म (तादर्ध्य गरयय उसने लिय, 307 1 ४२४ । तुमाती, तुमातु सव (स्वत्) तुनते, ३०७, ६०१, तेह वि (ताद्श) उसके जैसा, 807 I तुम्हे सव (यूयम) तुम, (युव्मान्) तुमकी, ता अ (तदा, तस्मात) तय, उस कारण से,३३६, 1 935 ३४१ ३४३, ४६४ ३६७, ३७९, ३९१. " तुम्हइ सर्व (युष्मान्) तुमका, 3581 ३९५, ३९८, ४०४, ४१७ ४१८, ८१६ " तुम्हेहि मव (युष्मामि) तुझसे, ३७१, ३७८ : 8" R 873 849, 888 1 " तम्हद्व सव (युष्माकम्) तुम्हारा, ३७३। तोहइ सक अक (तुडित) वह तोडता है, भागता है, " तुम्हाहँ सव (युप्माक्षम्) तुम्हारा . 200 | वह द्गटता है, ११६। तुम्हास सव (युव्मामु) तुम्हारे मे, ₹981 तोसिश्र वि (तोषित)जिसने मतीप कराया है, ३३१। वि (तुच्छ , तुच्छ हलका, नगण्य, ३५०। ति अ । इति) एसा, इस प्रकार, ४२३, ३०२, " त्च्छ, व (तुच्छ हलका, नगण्य, ३५०,३५४, ₹५२, ३५७। 488 i सव (तद् तम् 'वह, उमको, " तुच्छ्रयर वि (तुच्छतर) ज्यादा हलका, ३५०। त्वर्, तुवरइ अक (त्वरयित) वह शोधता करता है, अक (शुट्यित) वह दूटता है, ११६, २३०। त्रृह " तृष्टुउ सक (त्रुटयतु (यदि) हुटे, -481 " तूर्इ अन स्वरित),यह शीम्रनाकरना है, १७१। ਰੁਫ਼ਿ स्त्री (त्रुटि) यूनता, कमी, दीय, ३६०। " त्वरन्तो व ह (त्वरन्) शीध्रता करता हुआ, १७०।

```
तहब्ह
         सक (तनति, वह बिस्तार मरता है
                                       १३७ ।
                                 1846 9481
तगु
              (तण) घास
         न (तुणानाम्) तिरशेका, ३३९, प्रश्रा
तग्रह
          सक (तनि। वह फनाता है,
तगई
                                      १३७।
          प (तनय पुत्र वेटा,
तगुर
                                      8801
          सव वि (तस्येदम्) उसका यह
तगुड
                                      -E 1
                (तस्मिन्काले) उस समय मे, ३७६
तया
                            ३८०, ४१७ %२२ ।
तसेस
          ब (मृने) के लिये, ३६६, ४२५, ५३७।
        न (तनु) शरीर
तसु
                                 808, 8761
तगु
         न (तनु = लघु) पतला, दुबल, याडा, ४०१।
तत्तरस
        न (तत्वस्य) तत्त्ववा,
                                      890 I
       अ (तत्र) वहाँ पर,
तन्तु
                                     Y. 81
       क्ष (तत्र) वहाँ पर
त्तस्थ
                                      327 1
       अ (तत) उमसे,
तदा
                                     2501
तथा
        अ (तयः) उसी प्रकार से,
                                     २६० ।
        वि (तनु) थोडा,
तनु
                                      ३२६।
त्र —
 " तबइ अ (तपति) वह तपता है गरम होना है,
                                      ३७७ ।
 " सतदाह अ (सतपति । यह सताप नरता है १४०।
तत्त्रनेस पु (दपऐषु शीशों मे
                                      ३२६।
तमाडइ सघ (भ्रमति) वह घुनाता है
                                       301
सर तरइ अब (शबनोति) वह समय होता है
                                        ረ६
                                      २३/।
 " ती।इ, तरिवनइ सक (नीयने) तैरा जाता है, पार
                          किया जाता है २५०।
  " छत्तरष्ट्र सक (उत्तरित वह उतरवा है, पार जाता है
                                      1888
         षु (तर) झाड, पड, दृष्टा
                                      100
 " तस्हे पु (तरी) गृरसे,
                                      384
 "तरुष्ठ पु (तरुणाम्) वृक्षो का, 🕠
                                      8881
 " त्रह्म पु (सध्य ) वृत्रों से ४०, ३४१, ४११ ।
तस्त्रप्रहिंपु (तस्वरै वृशों से,
                                     840 1
तकणही पु (हे तरुणा ह ३४६, ३५०, ३६७ ।
" सक्तिको पुरहत्तरूष) हें जवान पुरुषो । ३४६।
सक्षय्ययद्वसक (भ्रमति, वह भ्रमण करता है, १६१।
तांका तले न (तन) तले में, ठेठ नीचे मे
```

२६३ । तवस्मि पु (तपस्विन्) हे तपस्वी । पुन (तपम्: तपम्याः। त्तव 11188 ससङ अक (त्रस्यनि वह हरता है, 1961 1 वि दशमु) दशा में, तमसु 13751 सत्र (सम्मात् उसने उम कोरण से, १५१) तहा त्ति अ 'तत्र) वहाँ पर, f ex " व (तदा) तव, २७८, ३०२, ३७०। ता य (तावत) तब तर, ताउ 80E 8131 स्त्री (दण्दा) वहा दाँन, दाद, 1 885 ताठा ताहेइ सक (ताडवित) वह गीरता है ताइन करता है । 169 तातिसो वि (ताष्ट्रया) उसके जैसे Bto1 , तापसबेप पु (तापमवेप) नपस्वी का वेप, " - 23 1 अ तात्रतः)तवतक, ¥ 51 } ताम तामहि अ (तावत) तव तक, 8051 लाभोतरी पु दामीदर) नाम विरोध ३०७, १२५। . तारिसे 9631 , बि (ताइग) उनरे जसा \$0 F } तालिश्रएटइ सर (भ्रमनि वह भ्रमण करना है ¥+21, ताव पु (ताप) ताप, गरमी य (तावत्) तब तक, २६२, -२१, १२३। साव 4841 : ਗੱੜ श (तावत्। तच तक, वि (तीदणान) तीला की, पना की, १९५। सक (तीदणयति) यह तीला करता है, १४४। **चिद्ध**वा िक्सोइ वि (इष्ट) देखा हुआ, ३१४, ३२१, ३२३। तिट्टा 1461 मण) धास, त्ण, तिण ३२९ १ ह ,, तिरा न तृष) घास तृष वि (त्रिभि) सीउसे (निषु तीन में देवेश) तिहिं

तिर्दि वि (विभि) तीर से (बियु तीन में ३४०। तिरथ न (तीयम्) पवित्र स्थान, वारा मप, ५६४, ४४१। तिर्म वि (विदश्व) तेरह, सिन्तुच्यासु नि (निम्ताद्वानम्) गीला, और मूला, ४११।

तिभिर न (तिभिर) अधकार ३८२। तिम्मइ अक (आर्ड्डी भवति) यह गीला होना है ४१८।

४५८ । विरिच्छि वि (नियम) तिरछा १६५, ११० । १४६ । विरिच्छी वि (नियम निरछा तेत्र, वक, ४१४ । १६६ । विरिच्छिय वि (नियम) निरछा, दुटिन, २६५ । १३४ ।

तिलहपु (तिलानाम) तिलो वा ४०६। तिलबर्शिन (तिनवने) तिलों के सेनों में ३५७। तिलतार पु (निलतार ?) तिलो में तल के समान, 344 1 तिसत्ताम् न (तिलख) तिलो का तिलपना, 808 1 तिवँ व (तथा) उसी प्रवार मे. 404, 384 ३९७ ४२२। तिवेँ तिवेँ म (तथा तथा) उसी उसी अकार स, ३४४ 1 40% (03) तिसहे वि (तुष) प्यास वे. 384 1 शेरड अन (शबनोति) वह समय होता है, ८६। तु—तुर्देह सब (स्वम्) नू १ ००४ , ८३४ , ०६४ 360, 800, 821, 824 8391 तहें सब (स्वण) तुलस, (स्वाम्) तुझको, (स्विवि) तुम पर, ३७० ४२२ । तुम सव (स्वत्) तुझमे, (तव) तेरा, 3661 " त सब (तब) तेरा, ४३९ । तुह् सर्व (स्वम् स्वाम्, तव) सू, तुझको, तेरा, 358 300 3631 ,, तुज्ञमु सव (स्वत्, सव) तुझसे, तेरा ३६७, ३७०, ५७२, ३७७ । तख सब (त्वत्) तुससे, (तव) तेरा, 302 8 4, 888 1 तुध्र सब (स्वत्) (तव) तुझसे, तेरा तुमातो, तुमातु सव (त्वत्) तुझसे, ३०७, ३२१ ।

" तुम्हे सर्व (यूपम्) तुम, (युष्माम्) तुमको, ३६९।
" तुम्हइ सव (युष्माम्) तुमको, ३६९।
" तुम्हह सव (युष्माम्) तुमको, ३७१, ३७८।
" तुम्हाह सव (युष्माकम्) तुम्हारा, ३०३।
" तुम्हाह सव (युष्माकम्) तुम्हारा, ३०३।
" तुम्हाह सव (युष्माकम्) तुम्हारा ३००।
" तुम्हाह सव (युष्माम्) तुम्हारे म, ३०४।
तुम्हा वि (तुष्य , तुष्य हत्तका, नगण्य, ३५०।
" तुष्हाद वि (तुष्य हत्तका, नगण्य, ३५०, ३५४,

१११।

" तच्छवर वि (तुच्छतर) ज्यादा हलका, ३५०।
तुद्दद अक (तुद्यि) वह हटता है, ११६, २३०।
" तुद्दुव अक (तुट्युव) (यदि) हुटे, -५६।
तुद्धि स्त्री (तुटि) यूनता, कमी, दोष, ३६०।

| वहद् ग्रक (बुटयित) यह दूटता है 8161 त्मिवणिहे स्त्री (तम्बाया) फल विशेष के, ४२७ । सक (तुलयति) तौलता है, ठीक २ निश्चय त्त्रह वरता है. २४। तुलिश्र वि (तुलित तुलाहुआ, 3621 तुहारेण सर्वे (खदीयेन) तुम्हार से 8-81 त्रात त्राती न (दूरात) दूर से ३२१, ३२३। तूमइ अब (तुष्यति) वह सतुष्ट हाता है, २३६। त्सु न (तृणम्) घास, तिनका, **३२९** । " सृगाइ न (तृणानि) तिनके, 8221 तेश्रण न पु (तजनम्) कान्ति नो, प्रकाश को, १०४। अक (प्रदीपयति) वह दीपता है तेश्रवइ 1805 तेत्तइ अ (तत्र) वहाँ पर, ४३६। तेतियो वि (तावान् उतना, ३९५ । तेत्त्वा वि (तावत्) उनना 8001 तेत्थ अ (तत्र) वहांपर 808, 80X 1 तेम्ब थ (तथा) उस प्रकार से, 8861 तेवँ अ (तथा) उप प्रकार से, ३४३, ३९७, 80P 1 तेवँए म (तथा) उस प्रकार से ३९७, ४३९। बि (ताबान्) उतना, तबडु ३९५, ४०७। पु (देवर) पनि का छोटा भाई तेवरा 1856 तेहइ वि (तथा) उस प्रकार से ३५७ । तेहिं ल (तादध्यें परवय उसने लिय, ४२५। तेह वि (तादश) उसके जसा, ४०२।

३९५, ३९८, ४०४, ४१७ ४१८, ४१६, ४२२ ४२३ ४५९, ४४४ १ सोडइ सक अक (सुर्खात) वह तोकृता है, भागता है वह ह्रटता है, ११६ । सोमिश्र वि (तोषित) जिसने सनाप करपा है, ३२१ । सि ज इस्ति) ऐसा, इस प्रकार, ४२३, ३०९,

व (तदा, तस्मात) तब, उस कारण से,३३६,

वे४१ वे४वे, बहर, वेह७, वे७९, वे९१,

३,५२,३५७। प्र सव (तद तम् वह उपनो, ३६०। स्वर्, तुबरङ अक (स्वरयित) वह सीधना करता है,

"तूरइ अक त्वरति) वह है, १७१।

" त्वरन्तो व इ (स्वरत्) "

ता

" तुरन्तो ष कृ (त्वरन्) शीधता करता हुन्ना १७१। " तरन्तो व ह (स्वरन्) घो झता करता हुआ, १७२। " त्रिक्यो वि (त्वरित) मीझता क्या हुआ, १७२। थि] अक (तिप्ठति) वह ठहरता है, १६,८७। यदः 77 71 अव (पत्रति) नीचार्गा वरोति) बहुनीचे जाता है, २५९। थ झें ड अर्क (तिष्ठति) वह ठहरता है, ₹७० / थण (स्तन) कुच, पयाधर,स्तम, ३४० ३६७। थणह (स्तनानाम्) स्तनो वा, थणहारु पु (स्तनभार) स्तना का बील 818 . थल वि (धरम्) धारण करन वाल मो 3261 थलि स्त्री (स्थली) जगह, स्थान, ३०,३४४,३६३। न (स्थानम्) जगह, स्थान, यास १६। न (स्थाम्) बल, बीयं परात्रम, थाम २६७ । थाह पु (स्ताघ) थाह तला, गहराई का अत, थिप्पइ श्रक (तृप्यति) वह तृप्त होता है, १३८, १७५। **थि**रत्त्रणंड न (स्थिरत्वम्) अचचलता स्थिरता, ४२२ । सब (स्तूयने) स्तूति विया जाना है, शुक्रम २४२ । युखी स्त्री (ध्ली) धूल, रजकण, ३२५। पु (स्थेय) यागाधीश, पसला वरने वाला थथ्रा २६७ । थोवा वि (स्तोना) अल्प थाडे, ३७६। [4] वि (दियत) प्रिय भैम पात्र, मित, ३४०, दइउ X18.8681 वि (द्यितेन) पति मे, " दहुए \$ \$ \$, 488 1 " दश्ज न (दैवम्) भाग्य, " दइवग्र न (दैवन) भाग्य मे, ३८९। प न (दैदेन) भाग्य से, ' धइप ₹ \$ \$ \$ दंमण न पु (दशा) अवलोकन शिरीक्षण, ४०/। अ (अवम्बन्द) शीधता पूर्वक, 330 1 दहवह अ (गीधमेव) जन्दी ही, ४२२ । दहयहउ वि (दग्ध) जलाहुआ, ६इ 750 1 पु (दम्मम्) सोनं का सिक्ता, 232 1 दम्मु ४३२, ४३३ । वि (हप्टा) देखी गई, न्ट्रि

ति (दृष्ट) देखा गया, ३५२, ३९६, ४१९ ।

दिट्टउ

" दिट छु वि (दुष्टम्) गीच मी, (दण्ट) देखा गया, 8091 " दिट्टो स्त्री (दृष्टि । नजर, wat : " ट्रिंड वि (दृष्टम्) देख लिया गया है, -0 (1 " हिंदू वि (दृष्टे) देख हैने पर देखा हुआ होने पर ४२३। '' न्द्रिह वि (दृष्टे) दसने पर, 3441 दिट् वि (दृष्टे) देखा जाने पर, ₹\$६ ! " दिद्रा वि (हप्टा / देखे गय है, X331 " तिड्रा वि (हव्ट) दसा गया. 388. 333 1 " खतद्र वि (बहष्ट) नही देखा हुआ, 375 ! " दह्छ हे हा (हप्दुम्) देखने के लिये, 2691 " न्ट्ठ्या स मृ (ह्प्टवा) देख करने, 1 \$35 " तद्धून स मृ (हप्टवा) देल करके ३१३ ३२०। " तत्यून स कु (हच्टवा) देख बरवे, ३१३ ३२३। " टट्टा अ (दब्टब्यम्) देखना चाहिय, दबने योग्य, - 23 1 " दरिसइ सक (दशयति) दिखलाता है, बतलाता है, 371 " दक्लचइ सक ्दशयति) दिसलाता है 371 "दसष्ट मक (दणयति) दिखलाता है 156 " दिपजान्त व ह (दश्यमान) दिखलाया जाता हुआ, 8961 37 1 '' दावइ सक (दशयति) यतलाता है, सक दबाति) देता है 1909 दलह दह-हिडअइ मक (दहाते) जलाया जाना है 28£ 1 " दह्द ३६५। बि (दग्ध) जलाया हुआ, " म्ड्रा \$84 1 वि (दग्धा) जलाई हुई, दशमुख) रावण, व्य**१** । दहसह " देसि 8241 प (देशे) देश में, " देइ 236, 808 820, सक (बदानि देता है 825,8531 " दे।द सक (ददाति) दता है, २७३। 2861 सेर्वत सक (बदाति) दता है, " देश्नि 8881 सब (दत्त दो देते हैं, " देह 1825 सब दत्ता देखा,प्रदान वरी, 1906 " देन्तही थि (दपन) देते हुए का, " देन्तिहि (दिन्तेहि") मि (ददवीमि) दे हुआँ है, 5541

दुसु=छड् सक (जुगुन्सिन) यह निग्दा करता है, २४०। "देरिस्ए स कृ (दस्वा देवर के, प्रदाा करके, ४४०। | " देश्वाह स क (न्द्या 'देओ, प्रदान करा, दुगुञ्ज् सम (जुगुप्पति) यह घृणा करता है, 81 1 555 " देज्नहिं स व (दीय ते, दिये जाते हैं, वि (दूजन) दुप्ट पूरुप. दुउनस 1288 1 258 " दिय्यते स व (टीयते) दिया जाता है 327 1 दुरह वि (दूप्टम) दूप्ट को, 8081 दुविमक्खें पुन (दुर्भिक्षेण) अकाल स, ' दिज्यह स क (दीयते) दिया जाता है. ३८६ । 8361 सक धवलयति) यह सफेद करता है " दिएगो वि (दत्ता) दी गई है, दुमइ 28 1 ३३०, ४०१। "दिएसो वि (दत्त) दिया हुआ दुच्यणे पू (दूजन) दुष्ट आदमी, 7871 3021 " रिएणा वि (दत्ता) दिये गये थे वि (दूलभस्य दूलभ का, ३८, ३७५,४९०। दुलहहो 1 5 5 5 द्वच्यविश्वदेश वि (दुव्यवसितेन) खराब स्वभाव । ३०२। राणि अ (इदारीम्) इस समय मे, २७७, ३०२। दुट्यवसिरेण वि (दुव्यवितितेन वाले से. **गमोतर**१ पु (दाबोदर नाम विशेष, ३२७ । दारन्त वि (द।रवन) पाडते हए की, ३४५, ४४५। दुिहउनइ, दुम्भइ, दु इहिइ, | दुझ जाना है, दुर्टिभिहड (दुहाते) | दुहा जावेगा, २४५। वालु न (दार) लगडी, बादर, मा अ (तावत तब तब, २६२ ३०२ २२३। न 'दुखम्) दुख पीडा, ३४० । द ह गपह सक (दशयति) वतलाता है, पू (दूतक) सदश ल जाने वाला, 8461 दूष्प्रहर दिश्रहडा पु (दिवसा) दिन ३३२, ३८७। स्त्री (दुति) सदेश लाने ले जाने वाली, ३६७। दृइ दिश्रहा (दिवसा) दिन 356 8861 सक (दूनोति) दूख देता हैं. दूमइ दिग्घा दीघ) धडा, उचा लस्वा, 91 वि (धवलितम) सफेद किया हुआ, २४। द्रामए दिदि स्त्री (दिष्टिम। नजर, 330 1 ४२२ । दूर ७ (दूरम्) दूर, न्द्रिं स्त्री (दृष्टि) नजर, 1888 दूर न (दूरम्)दूर ۹4३ ۱ पु (दिनकर) सूय, दिखयर 1 408 00F द्रादी, दूरादु न (दूरव्। दूर से, २७६ । दिसुर प (दिन) दिन, दिवस, ४०१ र न (हूरे) दूर पर, ३४९, ३६७ । दूरे दिवि दिवि प् (दिवसे दिवसे) प्रत्यक दिन मे ३१९. वि (दूरोड्डानेन) दूर से गिरने से, दुरुट्टार्खे ३३७। 888 i सक (दुष्यति) वह दोप देता है. **438** 1 " दिवेहिं पू (दिवसी) दिनो से, ४२२ । दूमासगु पु (दुश्यासन) नम्म विशेष. ३९१। दिव्यइ वि (दिन्यानि) दिव्य देवता सम्बन्धी ४१८। देवख---दिव्यन्तरह न (दिव्यान्तराण) दूसरे दवलोको को, " देक्ख सक (पश्यामि) मैं देखता हु. १ ७४६ ४४२। " देक्ख स कृ (दप्ट्वा) देख करने, ४३४। दिसि स्त्री ,दिश) दिशा ना, 356 1 " देवन्ख् मक (गश्य) देल देखी, ३४४, ३६१। हिमिहि स्त्री (दिशो) दोनो दिशाओं मे 3801 " दे। केल विस मृ (दुष्टवा देश करके. सक (पलीवइ) जलाती है, प्रकाशित होनी है, 1885 दीप्-पु (देवम्) देवता को, 585 1 १५२ । पु (देशा) देश जनपद, वि (दीष) वहा, लम्बा, **8331** दाहर 888 8881 "देमहि पु (देशे) देश मे, जनपद मे, दीहा वि (दीध) वदा, लम्बा ३८६ । 1 0 5 5 " देसडइ ५ (देशे) देश में, जनपद में, दुश्च्युइ सव (जुगूप्सति वह निन्दा करता है 81 8881 " देभड़ा पु (देश) देश की, सक । जुगुप्सिति) वह घूणा करता है 8161 दुचञ्छड 81 देसन्तरिष्ठ वि (देशा नरिता, दूसरे देश को चरी गई है, वि (दृष्कर) कठिन, कठोर, ४१४, ४४१। दुक्क पुन । दुल) कप्ट पीडा, दुक्ष ३६८ : ३५७ । देसुचवाडग़ा न (देशोन्वाटनम्) अपने स्यान से उत्राहा -वि (दु ससह) दु स को सहन करने वाला, दुक्खसहे 7601 जाना, ४३८।

" -श्रद्-

दो-दोएिश वि (द्वि) दो, 380 3461 दोलेइ अक (दोलयति) हिलता है, भूजता है, ४८। दोसडा वु (दापी) दोष, बुराई, ३७९ ४०२। " दोस्र पु (दीव) ४३९। न (द्रम्मम) दमडी को, सिक्ते को, ४२२। द्रम्मु द्रवक्क न (भयम्) भय, 8271 द्रहो-द्रहि पु (हद) जलाशय में, ¥3 ₹ 1 द्रेहि स्त्री (दृष्टि) नजर, ४२२ । [11] घसाहरू सव (मुञ्चित) छोडता है, 98 1 स्त्री (धाया) नायिका विशेष, ३३०, ४३०, धण 8881 " धर्णा स्त्री (हे धये !) हे नायिका ! ३८५, ४ ८। ' घएहे स्त्री (धायाया नायिकाका, 40, 348, 8 4 8 8 8 8 1 षु (धाजय) अजुा, धशञ्जए 483 F घण-धरा न (धन) धन-सम्पत्ति, ३५८ ३७३। सक (घृणायते) दया नरता है, घणाड ४४५ । धर्गुस्वरह न (धनुष्वण्डम्) धनुप मा भाग 325 धन न (घनमा धन-सम्पत्ति, 3011 पु(धर्म) पम नैतिकता, धम्म ३४ ९६ । घरिम यु (घमें) घम-कार्या मे, ४१९ । पु (धरा ⇒ आधार) सहारा ५७७ । घर षु (घरा = पृथ्वी) सहारा, पृथ्वी, घर **አ**ጻዩ I अर (धरति) आधार रूप चनता है घरह 45£, ३ ४, ४३८ । घरेड मक । घरति) घारण करता है, ३३६ । सक (घरति) धारण करते हैं, धरहिं ३८२ । घरहि सव (धर) घारण कर, ४३१। घालेप सब (धान्यन) धारण करो, ३०२। पु (धवल = बलीवद) बैल, ४२१ । घवल पु (घवर) धोरी बैस, ₹¥0 I " धवलु धवलइ सक (धवल्यति) मफेद करता है, 3K 1 धा-धाइ-धाम्रद अव (धावति) दीहना है, २४० । " निहित्तत वि (निहितम्। रमा हुआ, ३१५ । " श्रिहिद् वि (विहितम) रक्या हुआ, 8461

" सद्हइ, (सद्हमाणों) सन (बद्धाति) विस्तात बरता है, ९३ घाडह धक (नि परति) बाहिंग निकलता है, **७९।** स्त्री (पाराम्) घाग वो (पूद वो), १८३। धार धाव-धाइ वक (धावति) दौहता है, ₹₹८, ४३६ / ' घावइ अक (घावति) दौडता है 226, 2 61 " धुबइ अब (घार्वात) दौहना है, २३८ । ' धावान्त अक (धावन्ति) दौडते हैं २२८ । " धाहिष्ठ अक (धाविष्यति) दोड गा, २२८ । " घाउ अक (घावतु) दीडे, २२८। पु (धीवर) शिकारी, मच्छीमार, 301 3071 धुट ठुम्रइ अन (शब्द करोति शद नो नग्ता है,३९५। स्त्री (धुराम्' धुराको, 4561 धुरु सक (धुनानि) वह धुनता है, ५९, २४१। " धुबद्व सन (धुनाति) वह बपाता है हिलाना है १६। घुणिवनइ घुव्वह सक धूयते। क्याया जाना है, २४०। पु (धूम)धूँवा, व्यान-चिह्न, ४१५,४१६। ध्रमु घृत्तिहिन्ना स्त्री (घूलिना) पूलि, रज-कण, 8351 सव (यत्) जो, 240, 8261 धु अ (ध्रुयम) निश्चय ही, 7861 भ्रुषु [न] अ (न) नहीं, ६३, २६९ ३३२ इत्यादि। न स्त्री (नदी) नदी, जल घारा, 8221 नइ 423, YXX 1 थ (नतु) समान, इव, नउ २२५, ३२८। न (गगरम्) नगर शहर, नकरं 1751 नप प् नस्त, नस्त, नासून, सद्-स्टुइ अक (सटित) नाचना है २३० / 641 ' कड़ अब (पटत् नाचे 901 ' महित्रनद् अन (नृत्यते माचा जाता है, 1301 यु (नप्ता) पुत्री का पुत्र, नत्त्र्या 8551 अर (न दतु) सुग होवै सन्द उ

थ (ननु) (इव) समान, २८३, ३०६,४४८।

१५६, २२६।

" ए.वड् अर (भाराकानों नमनि) बोझ से नमता है

नम्-

" नवडि सक (नमन्ति) नमते हैं नह नहेगा-पु (नखेन) नख से ३३३, ३४८ । * E 19 1 अ (नूनम्-उत्प्रेक्षार्थे)निश्चय ही, ३३० ४४८। " नमह सक (नमन) तुम नमस्कार करो, १३४६ । नाइ व (नूनम् = " ") ४२६ । " नमय सर्व (नमत) तुम नमस्वार करो ३२६ । নাত্ত " नवन्ताह वि (नमताम्) नमस्कार करते हुआ का, सय (तया) उस (स्त्री। से, ३२२। ताए न (नाटकम्) नाटक, खेल, नाड्य २७० । ३९९ । पु (नायक) मुस्य पात्र, ४२७ । " इन्नामइ सक (उन्नामित) ऊँचा उठाना है २६ । नायगु " पनमथ सर्व (प्रणमत) तुम नमस्कार वरो नारायण प (नारायण । ईश्वर, विष्णु 80 - 1 ३२६ । वि मूढ) मूख, मोह-प्रसित, ४२२। नमिल नाति इ बि, (नमनशील) नम्रता के स्वभाव याला, स्त्री (नी) मौका, जल, वाहन, 453 I 2661 नाव व (उत्प्रेक्षार्ये) कल्पना व्यमे ३३१,४४४। नमो नावइ भ (नम) नगम्बार, २८३ १ अ (न) नही, ४१९, ४२२। नाहि नयस X\$X X83 I पुन स्त्री (नयन) आंख, ३६०, ३९०, प (नाथ) स्वामी, मालिक, नाह नयखा न्यनानि। अधि. ४२२। 823 1 नयसिह (नयन) अखा से, ४२३ । सक (पश्यति देखता है, निश्रद् 1335 नर ४१२ ४४२। प (नर) आदमी. " निस्नन्त व क (अवलोक्य ती) देखती हुई, " নত पु (नर) मनुष्य, ३६२। निम्नम्बिधा स्त्री (नितम्बनी) स्त्री, विशाल पृद्वे वाली ४१४ नर्`— निश्रय वि (निजक) अपना, ३४४, ३५४, ४०१ " नच्चइ अन (नृत्यति) वह नाचता है, २२५ । 8881 " नच्चन्तस्स व ष्टु नृत्यत) नाचतं हुए के, ३२६। वि (निगत) निक्ल गया, चला गया, ३३१। निगाउ " नच्चावित वि (नित) नवाया हुआ, ४२० । निरिघण वि (निघृण) दया होन, 3C I निलन्दारा पु (नरेद्वाणाम्) राजाओ के, 300 I निच्चटट् वि (गाडम्) प्रगाड, मजबूत, ४२२। नले पु (नर) मनुष्य, 1335 निच्चल वि (निश्चल) अटल दढ, ४३६ । नव वि (नव) नूतन नई, नया, 8081 निचिचन्तइ वि (निदिचतम्) पवशा ४२२ । " नवइ अक (नमति) नमस्कार करता है, ३९६ । निचिचन्दो वि (निश्चिन्त) चिना रहि।, २६१। नवखी वि (नवा) नई, अनोखी, 820, 8221 निच्य अ (नित्यम्) सदा, हमेशा, 1885 नवरि स (वेबलम् सिफ, ३७७,४०१,४२३। निच्छइ न (निश्चथन) निश्चय स, ३५७ । नवि अ (न + अपि। नहीं भी, ३३०, ३३९ निच्छय अ (निश्चयम) पनका, 8221 ३५६, ३६५, ४०४ ४ १, ४२२। निच्छरी पु (निझर) झरना, पानी का बहाव ३२५। नश्— निच्छढ वि (क्षिप्तम) फेंका हुआ, २५८ । " नस्सइ अब (नश्यति) यह नष्ट होता है, १७८ : निजित व वि (निजित) जीता हुआ. ३७१ : " नत्थून, नद्ध_न व कु (नष्टवा) नष्ट होकर, ३१३ । निजमाश्रद्ध सक (पश्य'त) देखता है, 1525 " नाम इ प्रेर (नाशयति) वह नष्ट कराता है, नियहबाइ सक निहुते) अपलाप करता है, २३३ । २३८ । निद स्त्रो (निद्रा नीद, 1218 " नासन्तत्र्यहो व कृ (नश्यत) नष्ट होते हुए का, निद्दए स्त्री (निद्रया) नीव से, ३३० । ४३२। निइडी स्त्रो (निद्रा) नीद, 1388 " नासवद्द प्रेर (नाशयित) वह नष्ट कराना है, निदाइ अक (निद्राति) वह नींद लेता है, 3 () 121 " पर्णटूइ वि (प्रनब्टे) नाश होने पर, ४९८, ४०६। निन्नेह वि (नि स्नेहा) प्रेम रहित, . EU # " विराष्ट्रइ वि विनष्टे) नाश होने पर, निमिश्र वि (स्थापितम्) रखा हुआ, २५८ । ४२७ । " विश्वासिश्चा वि (विनाधिते)नष्ट हो जाने पर,४ =। विम्मनइ सक (निर्मिमीते) वह बनाना है १९।

Γ

पम्हुह् सव (स्मरति) याद वरता है ल (प्न) किर किन्, ३६६ ४३७,४३८। 180 परि न (पद) (पदानि) हगों की पदो की, ४२० पय परिछाडूद अक (परिवधते) बढना है, २२० । " पयइ न (पदानि) पदो को, (पदे) दो हमा को, ३९५ परिश्रत्ता वि दे (परागना) कैना हुमा, प्रमृत, ₹\$4 1 पयइ सक (पचति) पकाता है. परिश्रन्तइ समा (दिलप्यति) जालिगन करता है, 801 1991 वि (प्रवटान्) खले हए पयहा परिश्रलइ सक (गच्छित) जाता है. 3361 **{ Ę > 1** पय पुन (पदम) पद वी, पैर की, परिश्रल्लइ सक (मच्छति) जाना है, 8551 1525 सक (समरित) याद गरता है, पयरइ परिज्ञालेड सक (वेष्टयति) लपटता है, ৬% • 13% पयरमञ्ज वि (पदरक्षी) शरीर की रक्षा करने वालों के परिगामो पु (परिणाम) फल २०६। परिचायत्र सक (परित्रायध्वम्) रक्षा करो, साथ. ४१८। 7461 अक (शीयल्यकरोति शिथिलता करता है,७०। पयल इ परिल्ह्सइ मन (परिसखने) गिर पडता है, सरक नाता ,, अक (सम्बनकरोति) छटकता है, 90 1 180 1 अक (प्रसरित) फैनता है, परिवादेश सक (घटयति) निर्माण करता है, 991 401 पु (प्रकाराम्याम्) दोनो प्रकारी से परिसामइ अर (शमयति) शान्त होता है पयारहि 3601 1451 प्यामइ सक (प्रकाशयति) चमकाता है. परिहट्ट सक (मदनाति) पर पर करना है, 3461 174 1 पया से इ सक (प्रशासित) चमकाता है. परिहरा न दे (परिधानम्) वस्त्र, कपटा ₹41 / 84 1 पयास पु (प्रकाश) चमक, प्रकाश, परिदासडी पुस्त्री (परिहास) उपहास, हॅसी, ४२५ । 38€1 परिद्याण वि (परिहोण) रहित, कन, पून, परयाकुलीकद वि (पर्यानुसीष्टता) विशेष आष्ट्रल की हुई, ₹0 f परीइ सक (धर्मात) घूमता है। १४३, १६१। २६६ । परोक्खहों न (परोशे) पीछे, बांखा के सामन नहीं होने पर्---8861 " पूरइ सक (पूरयति) पूरा करता है 1828 3021 वि (परस्य) दूसरे का " पुरिश्च पलस्म वि (पूरिता) पूण की गई है, ₹८३ F सव (नाशयित) भगाता है, नव्य करता है, पलावड " पृश्दि वि (प्ररित) पूण की हई, 2401 311 " श्रापुरइ वि (अपूर्णे) परिपूण गहीं हुए में, ४२२। पु (परिग्रह) ससार सम्बन्धी आपक्ति,३०२। पलिगाहे अक (शक्नोति)(करने मे) समर्थ होता है,८६। अ (पलम्) धोडी देर के लिये भी, । अवदा धोडी भी, । पलु पर-बाबरेड अक (ब्याप्नीति)काम मे लगता है. पर वि (पर) दूसरा, ३१५ ३४७, ३७६ ३९५, वि (पर्यस्ते) मरे हुए, परिवूण पलुट्टा ३९६ ३९७, ४४०, ४०६, इत्यादि । सक (प्रत्यागच्छति) सौटता है बादिम आहा पलोट्टइ " परस्त वि (परस्य) दूसरे वा, 336, 3481 1 23 5 परइ सव (भ्रमति) भ्रमण करता है, धूमता है, थव (पयस्यनि) पलटता है, प्रवृत्ति करता है, " 1581 2001 अब (प्रतुटति) जमीत पर छोटता है, २३०। वि (परम) थेप्ट, बडा परम सर्दे ४८५। वि (पयस्तम्) फेंबा हुआ, हुन,विदित्तस,२५८। पामस्थ न (परमाय) श्रेष्ठ काव, धर्मशाय,४२२ । पलोट्ट 200 } अक (पयस्यनि) पलदता है, वि (परवा) दूसरे के वश म पड़ा हुआ, पल्लहर परवसो 175 (पल्लव । अहर परलय २६६, ३०७। " पल्नवहिंप (पल्लवे) अनुगे से, 8161 पराई वि (परवीया) दूसरे से सम्बाध रखने वाली, 840 1 सक [पल्लवयन] पीछा युनाओ 340, 3501 पल्झवध् समा [विरेचपति] [मरु को]बाहिर निकालना पम्हत्यह वि (परागता) (परकीया)दूनर ३७६ । परायो 24 1 सव (प्राप्तुवित) प्राप्त वरते है, 8851 परावदि

वि (प्रायग्रा सामने आगे, पम्हरप्रद्र अव (पयस्यति) पलटना है, 3221 ₹00 | पातग्ग पातुक्रसेवेन न (पादोत्लेपण) पैरा के पटवाने से, ३२६। वि (पयस्तम्) फना हुआ हत, विक्षित, पल्हत्थ सन (पारयति) पार पहुचता है, 681 **₹46 I** पारह वि ,परकीयम् दूसरा से सम्बध्ति, पारकेर 88 1 पवय पु (प्लवग) बानर, कृति, २२० । वि (परवीया) दूसरा की, १७९, ३९८, पवासुत्रह वि (प्रवाधिताम् विदेश मे रहे हुपी का, पाग्कडा 1098 1 895 पविरज्ञ इसक (भनिक्ति) भागता है तोडता है, १०६। पाल को पू (बालक) बच्चा, शिशु, ३२५ । पु (प्रालम्बम्) अवलम्बन सहारा, स्त्री (पार्वती) पवत की पुत्री, सना विशेष, 88€ 1 पञ्चती पालम्ब कृ (पाल्यितुम) पालने के लिये, वालेनिहे 1 588 1005 सक (प्लावयति) खूब भिगीता है, पावेइ 881 पञ्यायइ अक (म्लायति) सुखता है 161 सक (पश्यति। देखता है, पासङ 1335 पशादाय पु (प्रसादाय) प्रसन्नता के लिय, 302 / अ (अपि)भी वि 3021 परचादो अ (पश्चात्) पीछे, 1388 वि (भिय) प्यारा, ३३२, ३५० इत्यादि । पिश्च पसरो पु (प्रसर) फैलाव, १५७ । " विउ प (प्रिय) प्रति, प्यारा, ३४३ ३४२, ३८३, पमाउ पु (प्रसार । प्रसम्रता, 1 0 58 ३९६ इत्यादि । पस्टे (पट्ट) पहिनने का कपडा, पाट-पाटिया, विष (प्रियेण) पति मे, ४०१, ४२३ ४४४। २९० । विश्यस्मु (प्रियस्य) प्रिय के, पनि के, 3 X K + ٧Ę पू (पऱ्या) माग, राह्ना, 850 1 प (प्रियस्य) पति वे. 886, 8891 विश्वहो सक (गच्छति। प्रकथ से गति करता है,१६२। पहम्मइ प्रिये) त्रिय के हाने पर, ३६५, ३९६ fqq अब (धूणित) घूमना है, कांपता है, डोलता है पहल्लाइ 855 1 1 099 विश्ववयासस्म प् (प्रियवयस्यस्य) प्रिय मित्र के, २८५ पु (प्रभाव) शक्ति, सामध्य, पहाउ ३४१। ३०२। पहिंड षु (पविक) मुसाफिर, ४१५ ४२९, ४४५ विद्यास स्त्री (पिपामा) प्यास, तुम 8581 पहिच्या पु (हेपविक !) हेयात्री ! ३७६, ४३१। विच्छड सम (प्रेक्षते) देखता है, 284 1 अक (पभवति) पहुदता है, ३९०, ४१९। विद्रि स्त्री (पृष्ठम) पीछे का, पीठ, पहुच्चह **३२९** । अक (प्रभवति) समर्थ होता है, विश्वित पहुष्पद ६३। वि (पिविछल) स्नेह-युक्त, स्निग्ध, ≎९५ ३ पिछइ १०,४१९। सक (पिबति) पीता है, सक (कथयति) वहता है **पिस**णइ 9 1 " पिऋन्ति सक (पिष्वति) पीते हैं ४१९ ४२०। वीडन्त सक (पीडयन्) दबावें हैरान करें, ३८५ । " पिद्यह सक (पिबत) तुम पीओ, ध२२ । सक (निष्टि) पीसता है च्या करता है १८५ वीमह " विज्ञाइ सक (पीयते) पीया जाता है, १०, ४२१। सक (मार्डि) पींछता है पुसह १०५ । "पिद्यविस वृ (पात्वा) पान करक, 806 8881 सक (पुच्छति) पुछता है, पच्छ इ 901 " पीड वि (पीतम्, पीमा गया है १३५ " पुच्छह सक (पृच्छत, पूछो, पूछते हो, इहर । "ं पिए वि (पीतेन) पीये हुए से, ४३४। " पुच्छह सक (पच्छय) तुम पूछते हा, 8331 " पाइ, पाश्रइ सक (पाति) रक्षण करता है, सक (माष्टि) वाद्यता है २४० 1 पुञ्जुइ 1041 पू (पादे) पैर मे, सक (पुञ्जयनि) इबद्रा करता है पाइ 8841 पुक्रनइ 2021 पागसासमो प्र (पाकशासन) इह पुत्रव्य क्रम्मो वि (पुण्यकर्मा) पवित्र कर्मी वाला, ३०५। २६५ । पाणिड न (पानीय) जल, न (पुण्यम्) पवित्रकाम, २९३ । ३९६ । " पाणिएण न (पानीयेन) जल से, पुळ्यबन्ते वि (पुण्यवान्) पवित्र समी वाला, २९३। ४३४। " पाणिए न (पानीयेन) जल से, वि (पृण्याणाम) पदिश्रो वा 3041 8861 I पञ्चाह

पुट्टिको (पृष्टम) पैट, पीछे	3791	प्यतानेन न (प्रदानेन) हैने से. ३०२ ।
पुदुर्म वि (प्रयमम) पहिला,	२८३ ।	1
पुर्ण अ (पुन) किर, ३४३, ५४९, इ		
	३ इत्यादि ।	
पुत्ति स्त्री (पृतिः हेबेटी !	3301	man Carrier Dr. Comp. 2
पुत्ते पु (पुत्रेण) लडवे से,	394 1	1
पुधुम वि (प्रथम) पहिला,	3 4 1	1 0
पुप्पवईहिं वि (पुणवतीमि) पूली वालियो		1
पुरश्चो अ 'पुरत) अग्रत , आने	२२८ ।	
पुरच वि (पूर्वम्) पहित्र,	३२३।	
परिमहो पु (पुरुषस्य, पुरुष का,	Y00 1	
पुलधाश्रद्ध अरू (उल्लमति) उल्लमित होता		प्रिएण वि (प्रियण। प्यारे से, ३७६ ३९८, ४१७।
पुलण्ड सर्व (पश्यति) देखना है,	१८१।	「 年】
9, 1	ا کی روز ا ا کی رو	· -
पुलीएइ सक (परवित) देवता है	१८१ ।	फमइ मक (स्पृशित) छूना है, १२९,१८२। फकवती स्त्री (भगवनी) देवी, 3२५।
पुसद सक (मार्डि) सोफ करता है.	841	फक्तवती स्त्री (भगवनी) दवी, 3र५। फल्टइ अब (स्पादते) फरवता है थोडा हिलना है,
पुरगृह सर (पुनाति) पवित्र सरता है,	२४१ ।	क्षण है अने दिन दर्श सामिता है बाजा विवास है।
" पुणिक्तइ, प्टब्स् (पूयत) पनित्र निया जार		फरिमइ सक (स्रुधिन)ह्नता है १८२।
पूजितो वि (पूजित) पूजा विवा हुआ,		
	३२२।	
पूसइ अब (अध्यति) पुष्ट होता है,	२ ६ ।	1 "3 3 ' ' " ' ' '
	५ ३९७।	("""
पेरिकटु हे हु (प्रेक्षितुम) देखन में लिय,	३०≎।	1 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
'' पेप्सवु सक (प्रेशम्ब) तू देख, '' ———————————————————————————————————	४१९।	11.06 11. (1.5.11.) 11.1
" पेक्स्सेचि स हा (प्रेक्ष्य) देन करके	₹%0	
'' पेक्सोबिशा स कु (प्रेश्य) देग करके,	ጸጻጸ I	13.6
" पेक्कविस मृ (प्रेश्म) देल गरन,	8401	
" पडिपेक्खइ सक (प्रतिश्वते) (अ.य. कारणो		कुषि। उनस्त य छ (पृत्तियमाणा) फूँ पू आवात हिंदै जात हुए, ४२२ ।
P	, ५४९।	
पेच्छइ सक (प्रेयते) देखता है १८१ ३६		3.22 Att (1141) 114 11711 6
"पेन्छ सक (प्रेनम्ब) तूदेल	३६० ।	
" पेच्छन्ताया व 🖅 (प्रेशमाणानाम देगते	हुओ गा,	Sing an Committee of
	1881	24.415 min 12.110) 5. 1. 6
पेएडयइ सर (प्रम्यापगति रवत है,	.01	फुमइ सर (माण्टि) पोछता है. १०४१ '' सब (भ्रमति) भ्रमण गरता है १६१।
पेस्म पुन (प्रेमन्) स्तेह राग	४२३।	फेहद स्व (स्केटबर्ति) उद्यादन बरता है, देपटी
पेस्सु पुनाजेम) स्नहेशम,	₹९५1	
चेत्रताइ सक (लिनति) फॅरना है	१४३ ।	[य]
पोद्यइ सक (स्थाहरति) पुनारता है,	७६ ।	सङ्घ वि (उपविष्ट) बैठा हुसा, ४४४! '
पीराण वि (पुराण) पुरावा,	2631	
	-	

सक (बृध्यते) समझा जाता है, याचित्रनह, बद्यमह सक (बध्यते) नांधा जाता है,२४७ । चन्मह मज्जति। द्वता है, बीधिहिड सक (बिधियत बीधा जायगा. २४७ । प्रहर वि (बद्ध) बांधा हुआ 399 : बुद्दास वद " बुद्दवि प (बाघ) बाधना (दे) नौकरा ਹਜ਼ਬ 363 1 बुद्धही वृद्धि) बृद्धि, वापीकी वि (पैत्रकी) बाप दादा सम्बन्धी, 384 I ब्रद्धी स्त्री (युद्धि) वृद्धि, बधीहा (चातक) पपीहा, पातक, 363 1 वि (दे) 'वराका) विचारा दीन **बहस्पदी** चपहा 3201 ब्ह्य्बड पु (ब्रह्मन्) ब्रह्मा, विधाता EFII x 21 वस्भणस्म ब्राह्मणस्य। ब्राह्मण वा, ₹60 1 चे " वेहि महासे (ब्राह्मणे) ब्राह्मण मे 3071 वरिहिण ਹੈਮਿ (वहीं) भयर, मोर-पक्षी, 822 1 वसङ सक (बादित पाता है. २४९ । बोधनह 15 बोडिश्र सक (प्राणन बरोति) यह प्राण धारण करता बोल्लइ है २४९। ब लि पु (बलि) बलिनामक राजा CX 8031 चलि वि (बलि) बलवान, बलिप्ठ ₹**₹८, °८**%, 3८9, 888, 88X 1 न (बलम सामध्ये, पराकम 3 18, 880 1 चल् न (बल) सामध्य की. 230 I चोहिं बल्लहरा चहि अ (बहिस) बाहिर ३५७। 148, 848 1 बहिकी स्त्री (भगिनी बहिन, ब्र--बहिस्य ए " ब्रबह स्त्रो (भगिनी। बहिन, **4221** वि (बहक्) अनेक, बहत ३७१, ३७६ । बहग्र वि (बहुल) प्रचुर, अनेक 360 i बहल् बालको (बालक) बच्चा, किशोर 3291 चालहे स्त्री (बालाया) लडकी के. 340 350 वानि स्त्री (हे बाले¹)हे यौवन सम्पन्न बालिका ४२२ । (बाष्प) अनु औस, बाह 8X 8381 भएए। प् (बाह) हाय भूजा बाह ३२९, ४३० । भक्रवती स्रो (बाह) हाथ, भूजा, **438 1** वाहा भगदत्त बाह्य स्त्री (बाहू) हाय, भूजा, ३२९, ४३०। भगवतो विद्राए स्त्री (पुति) हे बेटी, ३३० । स वि (है) दो. विक्रि 8861 बिम्बाहरिय (बिम्बाबरे) होठो के मडल पर 8081 भगव भङ्गि विहि वि स (द्वाम्याम) दो से, दो के लिये, ३६७। विह विस (द्वयो) दो का दो मे, 3631 चीहर अक (विभेति) डरता है 431 वीहिश्र भगगा वि (भीत) इरा हथा. 431 ग्रक (गर्जात) गर्जन करता है, ३७९, ३८०, ३९८, ४१७ ४२२। चुकाइ ९८ ।

अक (मध्यामि) हवा ह ई होऊगी, ४२३ । स मृ (मड बत्वा) ह्रच करके, ४१५। 1858 1 558 (बहस्पति) देवताआ का गुरु, 7291 सक (बुभुक्षति) खाने की इच्छा करता है, प्र। स वि (वे) दो ४३६. ३७९, ३९५, ४२९। स वि (द्वास्याम दा से, ३७०,३७७। (म्राप) (ब्रबीमि) मैं वहता है, २३८ । अब (त्रस्यते) हरता है, 1333 स्त्री (कपरिकाम्) कोडी को 3341 सक (क्यपति) कहता है, ₹ 1 " बोटिलग्रह सक (मध्यते) कहा जाता है, 1 038 " बार्तिच सक (क्यम) कही, \$23 I " बोल्लिएसा म (वयनन) कहने से, बोलने से, ३८३। बोल्लगुउ प् (क्यपिता) कहने वाला, £83 I स्त्री (बोधिम) नान की, गुद्ध धम का लान, १७७ । सक (ब्रथ) तुम बोलो, ३९१ । " ब्रोदिन स कृ । उक्त्वा) बोल करके, वह करके, ३९१। ब्रोधिसा स कृ (उवत्या, बोल करके, कह करके, 388 1 [भ] न (भयेन) हर से. 888 1 स्त्री (भगवती) देवी. ₹**₹**७ । पु (भगदत्त । नाम विशय. 3881 स्त्री (भगवती, देवी, 3001 मगवतीए स्त्री (भगवत्या) देवी से. 373 € प् (भगवान्) ईश्वर, समृद्धि वाला, ३२३। (भगी) विकल्प, प्रवार, कल्पना भेद ३३९, ४११। भक्त भन्तइ सक (भनिक्त) तोडवा है 805 € वि (भग्ना) भाग गये, जिखर गये, ३५१,

7.01

1 908

```
भगगव
          वि (भग्नव) भागते हुए यो, विक्रगते हुए की,
                                        3481
भगगाइ
          वि (भग्नानि)(भग्ना) निराश हए,
                                        324 1
भड
          पु (भट) बीर रण-बीर,
                                        I UZE
          पु (भट) लडवैया,रण-बीर,
भड़
                                       ४२० ।
मण्—
" भग्रह सक (भणित) पढ़ता है, यहना है, २३९,३६९
" भएम्ति सब (भणति) पढते हैं कहते हैं
                                       1301
" भग
         सक (भण, पढ, वह, ४ ५, ३६७, ३७०,
                                       8081
" मर्ग्र सब (भण) वढ, बह, बोल,
                                       8081
" भणांचे स ह (भणित्वा) पढ करके, बोल करवे,
                                       ३८३।
" भएएए-भिएउज्ज्ञ्च-सक ( भण्यते ) पढा जाता है,
                                       २४९
" भणिद्य वि मू (भणितम्) वहा गया था,
                                       3301
" भिष्मित्र भूकु (भणित) वहा गया था,
                                       8021
         पु (भण्ड ) बहुरुपिया, ससा
भएइय
                                      विद्रपन,
                                       ४२२।
भत्त
         पुन (मृत) (भत्तम्) आहार,भोजन, उत्पन्न
                                        103
भत्तांव
         पु (भत्ता) सेवक,
                                       ソママー
         पु (माद्रपद ) भाद्रपन नामवा महीना, ३ ८० ।
भरवउ
         स्त्री (भ्रान्ति ) भ्रम विपरीत समझ ४१४।
मस्तही
भन्ति
         स्त्री (भाति) भ्रम, विषरीत समझ, ३६५
                                        884 1
भन्ते
         वि (भदत्त) पूज्य, वायाण वारक.
                                      ₹८७ 1
         पु (भगर) भैवरा
                                 ३६८, ३९७।
भगर
         पु (अमरा) सवरे,
                                       ३८७ ।
भवरा
भमर उल
          न (भ्रमरकुल) भवरा का समूह,
                                      ३८२ ।
         पु (भगर) भवरा
भगर
         वि (भरवर ) भम उत्पन्न करन वाला २३१।
भयकर
         ति (भगवन्)हे पूज्य । ह कत्याणकारक, २६४।
भयव
         वि ( ' ) "' "
                               " २६४ २६५,
भयव
                                      1 508
        सक (समरति) समरण करता है,
भरइ
                                        1 YU
भरित्र
         बि (मरितम्) मरा हुआ, सपुक्त,
                                      ጸጸጸ I
भरिश्रद
         वि (भूने) भरा हुआ होने पर,
                                      1 534
```

पुन (भारम्) भार, बोहा ₹80 ₹9€, 455 t भलइ सव (समरति) याद शरता है, ug i भति पु स्त्री (नियाय) (द । बदाप्रह, हठ ३५३। वि (भद्रम् भला, उत्तम धरु, भन्ना ₹५१ १ भल्लि स्त्री (भरनी) भाला, बरछी 1101 भयं सव (भवान्) आप, ३०२, २६४ २८३,२८४। भवें र पु (भ्रमर) नेवरा ३९७। सक (भवति) भूकता है, मूला बोला है, भसइ 1241 वि भिषिता] भौरन के स्वमाव वाला,४४३। भनगुउ पु (भनर भैवरा, 8481 भसल भस्टालिका स्त्री (भटटारिका) छ। विशेष,स्यामिनी २९०। भाइ अक (बिभेनि) हरता है, वि (भीत) इरा हुआ, **231** भाइछ स्त्री (भागीरधी) गगा नदी भाईरहि 4¥0 1 भागुलायणादी १ (भागुरावणात् नाम विश्वप से ३०२। न (भारते) भारत वर्ष में 1 085 भारइ भारह न (भारत) देश विशेष **44**1 भारिया स्त्री (मार्या) परनी \$18.1 भातके ा (भारू) मस्नक पर, सलाट पर, 1401 सक (भावपति) वासित करता है, सोचना है भावइ 8201 अब [भासते] चमवत्ता है माल्म हाना है भासइ ₹0\$1 पु [भूत्य] शीवर दास, 344 1 भिच्यु 9141 सक [भिनत्ति] बाटता है नेदना है, भिन्दइ अक [मासत] यमवता है शोगता है, '२०३। भित्रह 431 भौयो वि भीत] इराहुआ, भीमरोण्यस पु [भीमतेनस्य] भीमतेन गा 7891 X18,1 षु स्त्री [भुजी हाय, वर, भुष्ठ 1641 सुक्ध अर (भपति ; कुत्ता भी रता है, भुज-भुज्ञाइ सक (भुनिक्ति) भाषान करना है, पातन करना भुज्ञाइ सक (भुनिक्ति) भाषान करना है, पातन करना 1 013 है अनुभव करता है, " जुज्जनित सब (मृजित्त) भोदन बस्त हैं, भागत हैं, 1141

मुळज्ञइ-मुळ्जिङजड (भुज्यने) भीवन निया वाता है,

4861

" मुझ्ताएड ह ह (भोषनु) भोगने में सिये, 8881 " भुद्रनण[ई हे कु (भोवतुम्) भोगी वे लिये, 8881 स कु (भुषत्वा) भोग करके, मोत्ता २७१ । मोत्तर स ष्टु (भूबत्वा) भोग करवे, २१२ । मोत हे कु (भोवतुम्) खाने वे लिये, २१२ । भोत्तब अ (भोक्तव्यम्) साना चाहिये, 2771 " बुहुक्छइ सक युभुक्षति) खाने की इच्छा करना है, 41 " चवहुखुइ सक (उपभूक्ते । भोगा। है, १११। अब (भ्रम'त घूमता है, फिरता है, १६१। सुमइ बन (भ्रश्यते) गिरता है, भूलता है, भ्रष्ट भुरतह होता है. १७७। ३३१ । भुवस न (भुवन) जगत्, लोक, सुवर्षे न (भुवने) ससार में, लोक मे, 8881 भु हड़ी स्त्री. (भूमि) भूमि, पृथ्वी, जमीन, जगह, क्षेत्र, ३९५ । मू-¹⁷ भोमि अक (भवामि) में होता है, २६० । " होइ अक (भवति) वह होता है, ६०, ६१, ३३०, इ४३, ३६२, ३६७, इत्यादि । " होदि अक (भवति) वह होता है, २६९ " मोदि अक (भवति) वह होता है, २७३, २७४, ২০২। "भोति अप (भवति) वह होता है, 1318 318 " हुच इ अक (भवति) वह होता है, €0, ₹८७ I " हुवइ, भवइ अक (भवति) वह होना है' 103 " हचदि अक (भवति) वह होता है २६९ । " मवदि, हुवदि, भुवाद अक (भवति , वह होता है, २६९। " होन्ति अक (भवित) वे होते हैं **६१, ४२२ ।** "हुन्ति प्रक (भवति) वे होते हैं, 481 " हवन्ति, हुवान्त सक (भवति, वे होते हैं, **₹01** " होन्ति अक (भवन्ति) वे होते हैं, 8061 " हों उ अक (भवतु) होवे, ४२० । " होत अक (भवतु) होवे, ३०७। " होघ, होइ अक (भवय) तुम होते हो, २६८ । " हुवेय्य अक (भविष्यति) होगा ३१३, ३२० । " होउन अक (अभूत्, अभवत् वभूव) हुआ, ३७० ।

" होहिइ अक (भविष्यति होगा, ३८८ । " होम हिँ अन (भविष्यति) होंगे ४१८। " भवि (समिद अब (भविष्यति) होगा, होगी, २७५, 3071 187 व ष्ट (भवन्) होता हुआ, ६४। वि (भूतम्) हुआ हुआ, विभू (भूता) हुए, ३८४। हम्रा वि भू (भूता) हुए, (भूत) हुआ, ३५१। हुत्र। भवित्रा, हवित्रा, भोदूण } (भूत्वा)=होकर, २७१। " होदूण, होत्ता ' होऊण, होब्राऊ सा क (भूत्वा) होकर, २४०। " श्रागुहुत्र वि (श्रनुभूतम्) अनुभव विया हुवा, **EX 1** " परिभवद् सक (परिभवति) पराजय करता है, ६०। " पिरहिविश्र वि (परिभृत) पराजित, तिरस्कृत, ४०१ । " पभवइ अक (प्रभवित) समघ होता है, पहुचता है, 80 I " पहुच्चइ अक (प्रभवति) पहुचता है, ३९० । " प्रमुवेड अक (प्रभवति) समय होता है, ६३। वि (प्रभूत) पहुचा हुआ, समय हुआ, ६४। " समबद्द अक समर्वात) सभावना होती हैं, €01 " समावइ सक (समावयति) सम्भावना करता है, ३५। " श्रमभाबिद वि (अनमावित) सभावना नही निया €0 I हआ, अ (भो) अरे, ओ, २६३ २६४, २८४, भो पुन (भोगम्)इद्रियो के विषय, विषय सुख, भाग ३८९। भ्रश्— " भसइ बक (अस्पते) भ्रष्ट होता है, नष्ट होता है, " पश्मट्र वि (प्रभ्रष्ट) नष्ट हुआ, पनित हुआ, ४३६। स्त्री (भ्रान्ति) भ्रम, निष्या नान, भ्रन्ति भ्रम् सक (भ्रमति) घूमता है, भ्रमण करता है, १६१, २३९। " भवें ह सक (भ्रमति) घूमता है, भ्रमण करता है, 8081 " श्रमन्ति सक (अमन्ति)वे पूमते हैं अमण करते हैं, ४५२।

1575

440 1

1508

7891

7511

734 1

1141

330 1

350 1

1091

1111

141

1905

Yot !

YYY I

1361

1351

1351

ų į

मन्दिन,

7641

111

4171

will

roti

816 835 I

868 853 1

340 ¥ \$ £ 1

```
" अमेडल सक (अमे , अमण करे, धूमे,
                                         8161
                                                 सम्बद्ध
                                                           मक (अमिति) चुगहता है,
" भामेइ प्रेर (अमयति) अमण वराता है, घूमाता है,
                                                           मक (याचते मांगना है,
                                                  मगाइ
                                                  Haug
                                                           सक (याचत) मांगो मागयता मांगा,३८४।
" भगाबद पेर (भ्रमयनि) भ्रमण कराना है पूमाता है,
                                                  सरतसुपु
                                                            पु (मागण) मांगना अवेषण
                                                  स्वर्गासक पु (मागशीय ) अगहन नामय महीना ३५७।
" ममडइ सक (भ्रमति) घूमना है, भ्रमण करता है
                                                  मग्रा
                                                           पु (माग) राम्ता, पथ,
                                         1828
                                                  " सक्तिष्ट ( मार्गे मार्गेष्ट) रास्ती स, शस्ती व
" भ । इइ सम (भ्रमति) पूमता है, भ्रमण नरता है,
                                                  मधव
                                                              (मधवान्) इन्द्र.
" मसाढेइ प्रेर (अमयनि) घूनाता है अमण कराता है
                                                  सच्चइ
                                                           अर्व (भारानि) गव मरता है,
                                                  सन्छर
                                                             न (मत्मर: ईव्या, द्वेप,
" भग्मडइ सक (अमित) धूमता है अमण करता है,
                                                  मच्छ
                                                            पु (मरस्य ) मच्छ, बडी मछली,
                                                  म≂छ
                                                            ५ (महस्येन) मछली स,
" परिवसमन्तो व ह (।रिभ्रमत्) चारा और घूमता
                                                  ३,उज्-मउन्नड अब (मण्जति। स्नान वरता है, हुना है।
                                 हुआ,
                                         323 1
                    { FF }
                                                  " मजनन्ति यक (मज्जिति) स्नान मरते हैं, इसी है।
म
            स (मा) मत, गही, ३४६, ३६५ ३६८,
                                                  " श्रामण्यद् अव (निसीदति) बटती है,
                         ३७९, ३८४, ३८७ ४१८,
                                                           सम (माद्टि) साफ वरता है
                                                  यदग्र
                              83 . 855 8851
                                                            वि (मध्याया ' स्च्य भाग व ली वा, ३६०।
                                                  मज्महे
म-स्मि
          सव (अहम्) मैं,
                                       3-1041
                                                            न (मध्ये) बीच में.
                                                  4 जमे
" #
          सव (माम्) भुझ मी,
                                         ३२३ :
                                                 यक्रिफ
                                                            न (मध्ये) बीच में
" मह
          सव (माम्, मया) मुझकी मुझ से ३३० ३४६,
                                                 मिखद्रव
                                                           स्त्री (मञ्जिष्ठया) मजीठ मे
                                 ३५६, इ यादि ।
                                                           सका मृद्नाति, गर्दन ररता है,
                                                 सदृह
" ममातु सर्वे (भव्) मुझ म,
                                    ३ ७, ३२१।
                                                           सब (मृद्रनाति मसलता है,
                                                 बर्द्ध
" में
          सव (म, वम)मेरा, मेरी, २८२, २८३,३०२।
                                                           सक (मन्यत) मानता है जाता है,
                                                  मगाइ
 " मम
          सर्व (मे, मब)मेग, मेरी २८० २८८,३०२।
                                                  सए(सिला स्त्री (मन शिला) पदाय विरीय
" महु
          सर्ये (यत् मम) मुख से, मेरा, ३३३, ३७०,
                                  ३७९ इत्यादि ।
                                                  मग्रहिम
                                                           वि (मणहिनाम्) पण्डित वी,
" माज्यत सव (मत्, मम) मुझ से, मेरा,
                                                           अ (मनाक) अल्प, योहा,
                                                  गणाउ
" भद्रमु सब (मत् मम) मूच मे मेरा ३६७ ३७९,
                                                            उ (मननि) गन म,
                                                  माशु
                                  ३९८ इत्यादि ।
                                                  माराश्रहा पु सी (मगप) मनिया (मगोन) मनिया
 मउलिश्रहिं अर (मुकुलिंग) बद हो जाते हैं,
                                         3441
                                                                              यो
 भेशे
          पु (मेप) भेड, कत बाता जानवर २८७।
                                                            न (मन ) मन, २४०, ४०१, ४२२, ४२१,
 मकरफेल पु (मकरनेतु) वामन्य, नाम विशेष, ३२४।
                                                  मगुपु
 सफरद्धजी पु (मकरध्वज ) कामदेव, नाम विशेष ३२३।
                                                           पु (मनोरमा ) मन की इच्छार्गे, १८४,३०२।
                                                  मणोदधाः
           पू (मप्ट) बदर,
                                         8731
 मक्द
                                                           पु (मनोरम) मन की इच्छा, ३६२, ३८४,
           पु (मार्गंग) मागने वाला, अम्बपण, ३२४,
                                                  मयोग्द
 मधानी
                                         ३२८।
```

```
मणीरहद्द पुन (मनोरधान्) मन की इच्छाओ को,
                                                  मुङ्ख
                                                         वि (मृता) मर गई है,
                                                  मुएण
                                                         वि (मृतेन) मरे हए से,
                                       8881
                                                         वि (मृता) मरे हुए,
         न (मण्डलम्) समूह, देश, गोल,
                                                  मुश्रा
मएटल
                                       11255
                                               " शालेध सक (मारयत) मारी.
मतन
         पू (मन्त) कामदेव,
                                       30011
         पु (मदन) वामवेब,
मतना
                                       ३२५।
                                               सरगय
         प (मदनम) नामदेव मी
सतन
                                       1806
मत्तर
         वि (मत्तानाम्) पागला का
                                 मतवाना का
                                               गरटट्र
                                                         पून (मरणम) मृत्यू,
                                 $ 2 80E 1
                                               सरग
मत्तो
        वि (मत्त ) पागल, मतवाता,
                                       ₹६० ।
                                               मश्मिष्ठ
मध्र
        वि (मध्रम्) मीठा.
                                        24 1
मिदि
        स्त्री (मति ) बुद्धि,
                                       30₹1
                                                मलह
मन्-माणिश्रद्ध सक (मायते) माना जाता है अच्छा
                                                मलयकेद
                                                मल्लज्ञुक्त न (मल्लयुद्धम) पुरती,
                                       3661
                     समया जाता है,
'समाग्रेड्सक (समाग्यनि) समान दताहै अच्छा
                                                मस्कली
                            ममयता है.
                                                महद्व
                                       ३३४।
सन्तिनो
         वि मित्रत ) मात्रो द्वारा सस्वारित २६०।
         सक (मध्नाति) मधना है विलोडन बरता है,
सन्धह
                                                          पु (प्रहाद्म वडा वृक्ष,
                                        १२१ :
                                                महद्द म
          पुन (म'दार) पुष्प विशेष
                                                 'सदेद्र सुप् (महादुम ) बडा वृष्ः,
                                        2661
मन्दात
म्द्रमीसदी अक (माभपी) मत डरो,
                                                महन्दी
                                                          वि (महान्) बडा,
                                        ४२२।
                                                " महन्दे
          अ (मा } मत, नहीं,
                                  2 C4, 81C 1
                                                          वि (महान्त) बडा,
                                                महमहड्
          वि (मदनतानाम्) मद मे-नशे मे चूर रूओ
मयगलह
                                                           न (महात्रत) वडा प्रत
                                                महब्बय
                                    ना, ४०६।
          पु (मृगोकम्) च द्रको
                                        ३९६ ।
मय क
                                                महाधन
मयगु
          पु (मदन) कामदेव
                                        ३९७
                                                          वि (मदीय) मेरा.
          पु (मकरच्यज) वामदय,
                                                 महारउ
 मयरद्वय
                                        8771
          पु (मक्रमृह) कामदेव,
                                        ४२२ ।
 मयरहरू
           न (मद्यम्) मदिरा शराव,
                                        २९२ ।
 मरय
 मर्-मश्ह अक (म्रियते) मरता है,
                                                 महारिति पु (महपि) वडा मुनि,
                                   २५४, ४२० 1
                                                 महावीरे
 " सर्हि अन (भ्रियसे) तु गरता है,
                                        137
 " मराह छक (छियामहे) मरने हैं, मरेंगे,
                                        ४३९।
 ' मरिएठवड विधि (मतब्य मरना चाहिये,
                                                 महाबीले पु (महावीर)
                                        ४३८ ।
                                                 महिश्चल
 " मारइ अक (मारयति) मारता है,
                                        330 !
 " मारेइ अन (मारयति) मारता है,
                                        1 055
                                                 महिद्ध
                                                         स्त्री (मह्याम्) पृथ्वी पर,
 " मारि स कु मारियत्वा) मार वरके,
                                        ४३९ ।
 " मारिश्रहेश वि (मारितेन) मारे हुओ से, मृत स
                                                 महमहरा
                                                           घ (मा) मत,
                                    ३७९, ४१७।
                                                 मा
  " मारिश्रा वि (मारिते ) मारा गया,
                                         ३५१ ।
                                                           थ (मा)मत
```

३६५ । **883 1** 3071 पुन (मरक्ता नील वर्ण वाला रत्न विशेष, पद्मा, 1886 पु (दे) (गव) गर्वे अहरार, ४२२। 300. 8961 सक (मपति) सहन करता है क्षमा करता है २३५ । सक (मद्नाति) मसलता है. १२६। पु (मलयने तु) नाम विशेष, ₹0₹1 ३८२ ४४४। न (मस्करी) विस्मय, आइचय, २८९ । सक (मानयति) पूजता है, सामात करता है, १९२। ' महन्ति सक (काक्षन्ति) इन्छा करते हैं, ३५३ ा 8841 336 1 २६१ । 1 505 यक (गंध प्रसरित) सुगंध फैलती है ७८। 880 1 महादहरो पु (महाहुदस्य) वडे जलाशय का, ४४४। न (महाधनमा विशाल सम्पत्ति. ३२३। 3461 " महारा वि (मदीय) भेरा, (अस्मदीय) हुँमारा ३५१, ४३४। 38€ 1 पु (महाबीर) भगवान् वधमान स्वामी, २६५ । " ३०२। पु (महीतल) पृथ्वी का धरातल, महिमराडिल न (महीमण्डले) पृथ्वी नामक ग्रह पर,३७२। ३४२। यु (मधुमयन) भगवान् कृष्ण, 3681 ३३०, ३५७। ४१८, ४२२।

४१९, ३६७ ।

मा-माइ अक (माति) समाता है, ३५०, ४२१। " चयमिश्रइ अक (उपमीयते) उपमा दी जानी है ४१८। विनिम्मविद्व वि (विनिमाँपितम्) निर्माण किया गया है ጻጿέ ነ मागु पु न (मान माप, परिमाण, ३३०, ३८७ 388, 880, 816 1 " साणि पुन (माने) मान-सामान पर, 8861 " मार्णेख पुन (मानेन) मान-सम्मान से, २७८ । पु (मानुष) मनुष्य, माणुश ४४७ ३ स्त्री (मातु) माता वा, जननी के, मायहे ३९९ । वि (मारणशील , मारने के स्वभाव वाला, मारगुउ 883 1 मारुदिया पु (मारुतिना) हनुमान से २६० । स्त्री (मालती) पुष्प विदेश वाली लता,३६८। मालइ स्त्री (मालती) लता-विशेष, मालई ७८ । साहड पु (माघ) वर्ष का ग्यारहवा भाष नामक ३५७। मिश्रह पु (मृगाक) च द्रमा, ३७७, ४०१। न (मित्राणि) मित्र, दोस्त, मित्तहा ४२२। मिल्-मिलइ बक (मलति। मिलता है, 3371 " मिलिउजद्व अक (मित्यत) मिला जाता है, 8481 " मिलिया अर्व (मिलित) मिला मिलाप हुआ ३८२ । " मिलिद्यस वि (मिलित) मिले, जुडे, ३३२। मिलाइ अक (म्लामित) म्टान होना है, १८, २४०। " मिलाश्रह यह (म्नायति)म्लान होना है, निस्तेज होता है, २४० । गिरसइ सक (मिश्रयति) मिलाता है, 261 मील्— " मीलइ अर (मीलित) महुराता है मीवाता है, २३२ • " मैलिव म ष्ट (मिलित्वा) इक्ट्ठे होक्र के, ४२९। " चिम्मलइ अब (उपीलति) वह निवसित होना है २३२, ३४४। " जम्मीलइ अब (उमीलित) वह प्रशासमा होता है " निमिल्लाइ-निमीलइ अर (रिमीलति) वह आंध मीपता है, २३२। " पमित्नइ-पमोलइ अर (प्रमोमति) वह सरीय मन्ता है २३२। मह

" मम्मिल्लाइ-संमी नइ अन (समीलति)यह यकुवाना है, 2321 मुगाहा पु (दे) म्नेच्छ-जाति विदेश, YOS ! मुच्— मुखड सर (मुखति) छोडता है, 117 हे ह (मोक्तुम छोड़ने वे लिय 2 31 " मात्त्व स इ' मुक्त्या) छोड करव, २१२, २१०। " मुखाहे वि (मुक्तानम्म) छुट हुश्रा ना, 3001 " मीत्तव्य विधि (मीत्तव्यम) छोडना चाहिये, २१२। अब (मुह्यनि)मोहिन होता है, २०७, २१७। मुच्मह पु (मुझ्ज) गान-विराप, मुझ ¥35 I मुण्- सक (ज्ञा = मुण्) जानना 2441 " मुणिज्जद्द सक (ज्ञायन) जाना जाता है, \$8£ 1 " मुश्चित्र वि (माना जाना है, मुगालिश्रहे स्त्री (मृगालिकाया) कमलिनी का, ४४४। 138 X88 1 मुणि पु (मुनि) सापु, साहीसिम न (मनुष्यत्वमः मनुष्यपना, 10 | म्यह — सक (मुख्य) मूहना, बाल उलाइना शेवा दरा " मण्डह सब मुण्डयनि) बाल उसाइता है, दीशा देव 8. 1141 " म्। ऐंडच्यं व (मुण्डित बार उखारे हुए हैं, ३८९। मुखडमालिए स्त्री (मुण्डमालिकाया) खोपडियों की माला स्त्री (मुद्रा) मोहर-छाप अनत बिह, ४०१। मृद् स्त्री (मुद्राम) मुद्रायो, मृद हत्री (मुख्या) माहित हुई नावित्रा, १४९,४२२ ' मुद्ध हत्री (ह मुग्ध !) हे मोहित हुई नाविशा ३७६ महि 3941 स्त्री मुख्या) मोहित हुई नायिता वे ४२३। मुद्धाः स्त्री (गुग्याया) माहित हुई नाविना के मुद्धहे 3801 स्त्री (मुख्याया) माहित हुई मायिश र, मुद्धहहे 1401 1815 धन (हानन स्टुग्ति मुस्तराता है, मुरह 215 # सव (मुपित घोश परता है, मुमइ 9041 सब (मनति) भागता है तोहता है ग्सुम्रइ न (मुख) मुँह, यदन, ३३२, ४९,इखाँश

न (मुख) मुँह, बदन, ३६७, ४४४। मुह " मुह न (मुख) मुह, बदन, 300 € " मुहहुं न (मुसेम्य) मुँहो से, मुखों से, ४२२ । सब (भनिक्त) भागता है, तीइता है, मृगइ १०६। मृति न (मूले) जह मे, ४२७ । मेलो पु (मेथ) बादल, ३२५ । मलवद्द सक (निध्ययति) मिलाता है, 261 मेल्लइ सक (मुञ्चति) छोहना है, ९१, ४३० । " मेल्लि सक (मुन्द) छोड, स्याग 3201 " मेल्लिवि स ह (मुक्त्वा) छोड करवे, ३५३ । " मेल्लेपिग्रा स वृ (मुक्त्वा) छोड करके, \$88 1 " मेल्लन्सिहें वि (मुश्वन्त्या) छोडती हुई का, ३७० । " मेल्ल तहा वि (मुन्चत) छोडते हुए का, ३७० २७७। मेशे पु (मेप) भेड, ऊनवाला, जानवर, मेहे पु (मेघ) बादल, ३६७ ४१८, इत्यादि। ३६५, ४२२ । पु (मेघ) बादल, मोक्तिहेस वि (मुक्तीन) छोडी हुए मे ३६६ । मोट्टायइ अक (रमते) क्रीडा वरता है, १६८। मोडन्ति सक (मोटयन्ति। मोडते हैं, टेडा करते हैं 8881

[4]

अ (च) और,

य

३२६, ३९६।

२९६ ।

यणवदे पु (जनपद) प्रान्त-देश का भाग, २९२ । यति अ (यदि) अगरचे, 373 | यदि घ (यदि) अगरचे, २९२ । यघाराल्य वि (यथास्वरूपम्) जैसा स्वरूप वाला **२**९२ । यम् यच्छद्द सक धर (यच्छति) वह विराम करता है, देता है, २१५। " निष्यय वि (नियन) निविचत किया हुआ, २८७ । " पयच्छिसि सक (प्रथच्छिस) प्रदान करता है, **३२३।** न (दे.) (जम्बालम्) सवाल घास, जलमल, यम्बाल २०८। यलहला पु (जलधरा) मेघ, बादल, २९६ । ष≍के पु (यक्ष) बाण-व्यन्तर जाति का देव,

सक (या) जाना, गमन करना " यादि सन (याति) जाता है

सक (याति) जाता है, २४०, ३५०, ४४५। '' जाध्यइ सक ्याति) जाता है, " जन्ति सक (याति वे जान हैं, ३८८, ३९५ ४३९। " जाहि सक (याहि) तू जाता है ४२२, ४३९। " जाहु सक (याम) हम जाते हैं, **३८६** t " जाइउज्जाह सका (यायते) जाया जाता है, 8881 " जावेइ प्रेर (यापयति) गमन कराता है, 801 सक (जानाति) जानता है, यागदि २९२ । याग्यनत्त म (यानपात्रम्) जहाज, नाव, २९२ । यातिसो वि (यादश) जैसा, ३१७ । अ (यावत्) जब तक, ३०२। याव वि (युक्तम्) सहिन युत्त ३०२। युम्हातिमी वि (युष्मादश) प्राप के जैसा, ३१७ । सव (ये) जी, ये ३०२। अ (एव) ही, निश्चय पूचक, २७६, २८०, य्येव २८३, ३०२। अ (एव) ही, ३१६ ३२१, ३२३।

[₹]

स्त्री (रति) काम-क्रीडा, मैथुन-प्रवृत्ति,४२२। ₹₹ ≀च-" वक्खइ सक (रक्षति)बचाता है, रक्षा करता है,४३९। " रक्खेज्नहु सक (रक्षत) रक्षा वरो, बचाओ, ३५०, ३६७ । रखोलइ अक (दोनायते) भूनाता है, 861 रच्— " रब्रइ सक (रचयति) रचना वरता है, ९४ । " सत्रार्यद्व सक (समारचयति) अच्छी तरह से रचता है, ९५ । रच्चिस अक (रज्यसे। तू धनुरक्त होता है, ४२२। रञ्जेइ सक (रञ्जयति) प्रसन करता है, ४९ । षु (राना) राजा से, रञ्जा ३०४, ३२०। पु (रान) राजा वा, रञ्जो 1805 रडन्तर व कु (रटन्) प्रोलता हुमा, 834 1 पुन (रण) युद्ध, ३७०, ३७७, ३८६ । रण रिख षुन (रणे) युद्ध में, ३६०। रएएउइ सक (शब्दक्र) शब्द को कर, 3661 २९२। रत्तडी स्त्री (राप्ति) रात, राप्ति, **22 1.**

रदिए स्त्री (रत्या) रतिनःमकस्त्री वे,	BR£ 1	रामह पु (रामयो) (दो) राम दा, ४०७।
रन्तु न (अरण्ण्म्) जगल	3861	राय वि (रागया) प्रेम वाली था, ३५०।
रफमो पु (रभम) औरसुक्य, उत्कठा,	३२५ ।	रायइ अक । राजने) चमक्ता है, शोमता है, १००।
₹¥ <u></u> —		रायों पु (राजा) ३०४,३२०,३२३, २५।
" स्त्रारभइ सक (आरभते) प्रारम्भ वरता है,	१४४ र	राय पु (राजन्) हेराजा [†] ४०२।
रम् —		राथ पु (राजानाम्) राजा की, (राजन्) हे राजा
		2481
"रमद्र अह (रमते) त्रीडा करना है,	१६८।	राइणी पु (रुने, रांग) राजा के जिय, राजा का,
रमाद अस (रचत)	३१६।	75.1
रसद अन (रनव)	२७४।	र्विशा पू (रावण) रागस ना नान विशेष ४०७।
रमत अरु (रनत)	३९९ ।	रावेद नक (रञ्जयति) प्रसन्न गरता है, रण रणाम
"रम्तु अय (रमताम्) यह कीडा करे,	३०७।	851
"रमिश्र स ष्ट (रन्त्वा) क्रीडाकरवे,	२७१।	शह स्त्री (राधा) स्त्री वा नाम विशेष, ४२०।
" रम्तूण स इ (रस्वा) क्रीडा करने,	२१२ :	बाही स्त्री (राया) स्त्री विदेव का नाम, ४१।
" रन्दूण स ए (रत्या) त्रीडा करने,	२७१।	बाहु पु (राहुः ग्रह विशेष, ३८२, ३९६, ४४४।
" रन्ता स इ (र त्या) त्रीडा करके,	२७१ ।	रि व (रे सबोधने) अरे, ओ, १९०।
" रिमिच्यते अन (रम्यते) रमण किया जाना है	, ३१५।	रिश्रह भक (प्रविश्वति) पुसता है, प्रवेग करता है,
रम्पइ सम (तम्गोति) वह छीलवा है,	\$ 68.1	1681
रम्फ्इ सक (तक्ष्णोति) यह शाटता है, पतल	ा बरता	िख पु (रिपु) तुरमन, सनू, ३७६, ३९१,४१६।
₿,	9481	रिग्रह अब (प्रविश्वति, गण्छति) प्रवेत बनता है।
रम्फा स्त्री (रम्भा) अधारा विदेष,	३२५ ।	र्मता है अपरी
रम्भ इ सक (गच्छति) जाता है ,	१६२।	1
रयण पुन (रह्न) रह्न, जवाहर, ४०३	, ४२२ ।	14.616 411 (4661) (1410.1)
'' रयणाई पु ा (रत्नानि)रत्न, जवाहर,	2 3 S I	6182 44 (deserted street 1 51
रयशिष्टारे पु (रजनीचरात्) रादासा मो,	8801	
रया। स्त्री (रजनी) रात्रि,	8091	रुच्च अर (रोचते) अच्छा लगता ह पश्च पश्च पश्च पश्च पश्च भूरी।
रवह सक (रीति) बोलता है, रोता है,	5ई३।	400
र वर्गा वि (रम्या) सुदर,	४२ २ ।	हरूतम् अव (रोगि) आवाज ररना ह, हिम्मुम्मि न (शब्दानुसरसे)गब्द विजय बोलना,१९८।
रिव पु (रिष) सूर्यं,	8881	
रसु पुन (रम) मीठा, सट्टा आदि रस		
आन"द, ४०१	, ۲88 1	हर्-
रह्यरि अ (रयोपरि) रथ में ऊपर,	1356	् श्रिष्ट्रास अन् (सामन प्रतास छ
रहु पु (रघु) नाम विशेष,	880 i	। " सन्धाह वात्र (सादाय) है राहा है।
राचा प्र (राजा) राजा	३४।	1. £12 86 (411414) 46 cint 6 co.
राविचा पु (सना) सना से,	1081	्र रविद्व श्रम (साक्षाय) तर्ह साम दा रहत
राचिका पु (सा) सजाना,	₹081	(1E 94 (6(2)9) (191)
राजपधी-राजपद्दा पु (राजपम) राजमाग,	२६७ ।	रास ह १ (गाद ३५) राग र गा
नाजा पु (राजा) राजा,	३०४।	ं शक्ता संव (वादत्वर) राजरूर
" राजं न (राज्य) राज्य मी,	३२३।	" रासच्य विधि प्र (इदिवन्यम्) सा। पार्दिव, २१२।

" रुव्यइ कम प्र रुद्यते) रोया जाता है " रुविज्ञह कर्म प्र (रुद्यते) शेया जाता है, ₹851 " र यह सक (रुणदि) रोकता है, अटवाता है, १३३ १२८, २३९। " रुम्भइ सक (रुणद्धि) रोनता है, २१८ । " रुक्तइ सम (रणद्वि) रीतता है, २१८ । " स्म्मइ कम प्र (रुध्यते) रोका जाना है २४५ । ' रुन्धिज्ञ इकमंत्र (म्ध्यते) रोवा जाता है, २४५ । " हद्बो वि (हद्वा) रोनी हुई है ४२२, ४२६,४३'। " श्रस्तुरुक्तइ कम ग (अनुरुध्यते) अनुरोध विया जाता " श्रशुरुन्धिउनइ वर्मप अनुष्ट्यते अनुरोध किया जाता २४८ । " चवरु उभाइ कम प्र (उपरुष्यते रोना जाता है,२४८। " उवरुन्धिउत्रह वम प्र (उपरुष्यते) "" " २४८। " सरुज्माइ वम प्र (सरुष्यते) रोका जाता है, "सरुजिमहिङ्कमं प्र (सर्वाघष्यते) रोका जायगा, १४८ । " सक्तन्धिउन्नइ कम प्र (सरम्यते)रोका जाता है,२४८ । " सरुन्धिहिद्व म प्र (सहिचयते) रोका जाश्गा, **386 I** रुवइ अक (रौति) सब्द करता है, 401 रुप् " रूसइ अक (क्ष्यति) क्रोव बरता है २३६ २५८। " रूसेस अक (रोपिप्यामि) कीय करगी, 8881 जाता है, " इद्धितज्ञह कम प्र (रुप्यते) क्रोध किया 1288 " रुट्टी वि (इध्टाम्) क्रोधित को 848 1 रुहिर न (रुधिरेण) खून से, रक्त से, ¥ ? \$ 1 न (रूपक) धन को रपया, स्बद्धर ४१९। वि (रोपयुक्ता) भोष सहित, 1 288 रूसणा रेश्चवद्य सक (मूज्वति) छोडता है, 311 रेसि, रेसि अ (तादध्ये निपात) उसके लिये, ४२५ । रेहइ अक (राजते) शोभा पाना है दीपता है, १००। रोश्रह सब' (पिनिंट) पीसता है, 9681 रोमन्थइ अक (रोम यम ते) वागोलता है, चवाना है,

२४९ | | रोमावलिहे वि (रोमावल्या) वेशवाली का, 340 | रोस पु (रोप) गुम्सा कोब, ४३९। रोसाग्रह सक (माव्टि) घुढ करता है, 2041

[ल] पु (लयम्) विलोनता को, ਜ਼ਤ 418 I लम्ख वि (लदयम) लक्ष्य, उद्देश्य, ३२२। पुन (लक्षी) साखो (रुपयो) से, त्तरपेहिं 33% / लग्— " लग्गइ सक (लगति) लगता है, सम्बंध करता है, २३०, ४२०, ४२२ । " लिगिबि स कु (लगित्वा) लग करके, सम्बाध करके, 3381 " लग्ग वि (लग्न) लगा हुआ, सबध किया हुआ, ३२६। " लागा वि (लग्नानि) लगे हुए सबब किये हुए, ४४५। " विलग्गी वि (विलग्न) लगी हुई, सबध की हुई,४४५। स्त्री (लक्ष्मी) धन-सपत्ति, द्रव्य ४३६। लच्छि लज्ज " लडजइ अक (लज्जते) भरमाता है, 1 0 5 3 "लक्षिउन्नइ कम प्र । लज्ज्यते) लज्जाकी जाती है, ४१६। " लिंचनजन्तु अन (अलिंजिप्यत्) लिंजतः होती, 3X1 : प्र (राना) राजा से, लञ्जा 3-21 सव (स्मरति) याद वरता है, 180 लढड लप्— " लपत्ति सक (लपति) बोलता है, 1285 " लपते सक (लपति) बोलता है, 1884 " लपित वि (रूपित) बोलाहुआ, ३०४, ३२४। " विलवइ सर (विलपति) विलाप करता है, लभ्--" लहिंद्दि सक (लभसे) तूप्राप्त करता है, ३८३ ।

सव (लभते) वह प्राप्त करता है,

सक (लभामहे) हम प्राप्त । करते हैं, ३८६,

६३५ १

¥88 1

" लहद्

लहह

881

```
" लहिमु सक (लभामहे) हम प्राप्त करते हैं,
                                                             पु (स्द्रम्) शिव को,
                                                   तुर
                                                                                          ३२६ ।
" लहन्ति सब (सभाते) वे प्राप्त करते हैं, ३४१, ४१४।
                                                   लुङ्गड
                                                            सव (लुम्यनि। लोभ करता है,
                                                                                          141
" सहिं सक (छभन्ते) वे प्राप्त करते हैं, ३६७, ४४०।
                                                   लुहइ
                                                            सक (माष्टि) पोंछना है,
                                                                                          $0X 8
" सहन्तु सक (धलप्स्यत) प्राप्त किये हुए होते
                                                   लुहिलाप्पिए वि (रुमिरप्रिय) जिमनो रक्त प्रिय है,३०२।
" अलहन्ति आहे वि (अङ्गमानाया) नहीं प्राप्त निये
                                                   ल_∸
                                   हुए यो, ३५०।
                                                   " लुगई सक (लुनाति) काडता है, यूपना है,
                                                                                          2811
" लडमइ वर्षे प्र (लम्यते ) प्राप्त विया जाता है, ४१९,
                                                     लुणिज्जद्द सक (मूयने) बाटा जाता है,
                                                                                          2851
                                                     लुडवड सव (त्रूपते) बाटा जाना है
                                                                                          4841
"लद्दिज्जद्दमम प्र (लम्यत) प्राप्त क्या जाता है,
                                                            सक (छिनत्ति। काटता है
                                                                                          1941
                                                  ल्राह
                                          1258
                                                  लेइ
                                                            सक (लाति) लेता है, ग्रहण बरता है, २३८।
लहरा
          पु (रमस) जत्मुकता, जत्रठा,
                                          1 225
                                                  नवहर
                                                            पु (लेख) लिखाक्ट, अक्ति,
                                                                                          ४२२ ।
लहुई
          नि (लघ्वी) छाटी,
                                                  क्षेदिनसुर
                                          ३४८ ।
                                                             स ह (लात्वा) प्रहुण बरके, ३७०, ४०४,
ल≍कशे
             (रायस) राझस,
          3
                                          २९६ ।
                                                                                          8041
ल इस्य पु (राक्षस) राश्वस यो,
                                          ३०२।
                                                  लेवि
                                                             स हु (सात्वा) ग्रहण व रवे, १९५, ४४०।
नाइवि
          स कृ (लागयित्वा) लगा व रवे, ३३१,३७६।
                                                  लेविशु
                                                             स वृ (लाखा) ग्रहण करक,
                                                                                          XX !
           न (लावण्य) सौन्दय, शरीर-वान्ति, ४ ४ ।
लायएए
                                                  लेड
                                                            स्त्री (रेगा) समीर,
                                                                                          1791
" लायएशा न (छावण्य मीदम, शरीर-शन्त, २२०।
                                                  लहिं
                                                            सक (लाति) वे ग्रहण परते हैं,
                                                                                          1631
लाय
          पु (राजन्) हे राजा !
                                                             पु (लाग) समार,
                                                                                          1426
                                         ३०२।
                                                  लोच
                                                  " लोड
                                                             पु (लोव) ससार, यहनी, ३६६ ८२०,
लायाणी
          पु (राजा) राजा, नृपति,
                                         ३०२।
लायिद
                                                                               645, 585, 883 1
          वि (राजित) शोभायमान,
                                         2661
नालसर
          वि (लालसक् ) उत्वटा वाला,
                                         1 908
                                                  " लोइ
                                                            पू (लाके) ससार में,
                                                                                          1258
          पु (लाभ ) प्राप्ति, फायदा,
लाह
                                         ३९० ।
                                                  " लोखहो पु (लोबस्य)ससार वे,
                                                                                          1541
लिषाइ
         अब (तिलायते) छिपता है,
                                          941
                                                  लोखडो स्त्री (सामपुटी=ववनम्) वयल,
                                                                                         ¥251
         सक (लिह्यते) चाटा जाता है
लिङभइ
                                                                                         YlY!
                                         २४५ ।
                                                  लोञ्जण
                                                            पून (लावा) मौत,
                                                  "लोक्सण्हन पु (लावनानि) शरिं, श्रीमा की,
लिपद
         सक ( किम्पति ) लीपता है, सप करता है,
                                                                                          3541
                                         1881
                                                                                         ¥₹₹ 1
                                                  '' लाश्चर्णहिं न पु (लोचन) अपा से,
लिम्बहइ
        पु (निम्बरे) नीम व पेड पर,
                                         ३८७ ।
                                                                                         175
                                                  "लोप्पण्डिन पु(लोवनै) असिं मे,
लिमइ
         अब (स्विविति) सीना है,
                                         1385
                                                  " लाम्प्रण्ह ा पु (शोवनमी ) दाना जांनी ना, १४%
लिह
         स्त्री (रेसा) सकीर,
                                         ३२९ ।
                                                                                         1908
लिहिश्रा
          वि (त्रिधितम) लिखा हुआ
                                         234 1
                                                                                         3241
                                                 लोक
                                                            वि (?) जा नाधारण,
लिहिज्यह मम प्र (लियत) लिसा जाता है
                                         244 1
                                                            र (स्थय नगर, (नावव्य) गुरुरना, ४९८,
                                                 नोगु
सीता
         स्त्री (सीठा) छेल कीडा,
                                         ₹२६ ।
                                                                                         የጻጿ ፣
लोह
         स्त्री (रेखा) लगीर,
                                         1251
                                                                                         1261
                                                          अर (व्यपिति) गोता है, घटता है,
                                                 लीट्टइ
          बि (सूत्रम्) वाटा हुआ
लुग्र
                                         २४८ ।
                                                           पुन (शोहन) मोह मामन बार् में ४२३।
                                                 लाई
लुकाइ
         अर (निलायते) छिपता है,
                                    44, 1141
                                                           थर (यनते) विश्ववता है, सरवडा है, १८०)
          वि (लीग) एना हुआ, छिपा हुआ,
                                                 रहमइ
सम्ब
                                         8081
                                                           वि (सस्ते) विख्या हुआ,
                                                 रहसिउं
          वि (६ग्ग ) बीमार,
हुरगो
                                         २२८।
                                                           सर (निसीयवे) १७ १
                                                 स्थिक्
          धर (माध्यि) पींछता है,
                                         80X1
शुब्धह
```

वि (बद्धमयी) बच्च जैसी कठीरता बाले. ल्हिमको वि (दे) तिलीन) मध्ट गत, २५८ । विज्ञमा ३९५। [1] वज्जेह सक (बचयति) त्याग कश्ता है 1356 सक (बश्चयति) ठगता है वश्चह 381 अ (इव ममान, सहश सूचक, **43£ 1** व वि (वञ्चकतरा) ठगने वाले, वञ्चयर 8171 यमन् म (यत्वल ' वृक्ष की छाल, ३४१,४१३ । वंचिड स व गत्वा) जाकर के, ३९५ । पु (ध्याघ्र) चीता शेर, ३२५। घक्सो वदर्जात सक (प्रजिति) जाता है, 338 स्त्री (वत्नाम् धोड की लगाम, धाग ३३०। प्रव (विलपति) विलाप करता है, रोता है, बहुबहुहु वग्गोलड सक (रोम ययति जुगाली करता है, चवाये 1861 हए को दबाता है. 49 1 बहवाण्ल पु (बडवानल) समुद्र मे पैदा होने वाली, षकी वि (वना देखी वांशी, 3301 4981 " वका वि (वक्षा) ' ४५२ । वहवानलस्यु पु (वहवानलस्य) समुद्रीय आग का. '' वक्रि वि (वत्राम्याम्) दो टेढी से, ₹441 ३६५ । वंकिम न (वित्रमण) टेढाउन को, 388 Rof 1 वङ्गड वि (महत्) वडा, 180€ 1218 चक्रहर बि (वन) टेढा बोजा, वडुत्तरमु न (महरवम्) बडापना, ३६७ । वच्--न (महत्त्वम) बडप्पन को 1826 बडुतणुउ " बोच्छ सक वदयामि) कहूगा, २११ । न (महत्त्वस्य) बडप्पन के, ३६६, ४२५, षड्त्तगहो " बोत्तरा स कु (उनता) कह करके, 2 (1 ४३७। " बोत्तवेब विधि कु (बत्तव्य) कहना चाहिये, 4881 वडुध्यसु न (महत्त्व बहापना, ३६६, ४३७। न (वचनम्) वचन, वःणी 1886 वि (महाति बडे, वचन वड्डा ३६४। वि ,मह नि) घडे, सक (काशति। इच्छा करता है १९२। बङ्घाइ 3641 षच्चष्ट षच्चई सक 'ब्रजिति) जाता है, 2211 बद्ध वि (मृद्र मूल ३६२, ४०२, ४२२। " अगापनचइ सक (अनुप्रजित) अनुसरण करता है वण = धरेगुन (धनम्) जगल, बन, (दने) बन मे, ३४०, X\$\$ 1 1001 " वरोहिं न (वनैं) जगलो से, वि (वस्सा) प्रेम भावना रखने वाली २८२। 4251 वच्छा वणवास पु (बनवास) जगल में रहना, वच्छहे पु (बृक्षात्) वृग से याद से 375 1 ३१६ । पुन (प्रण) घान, प्रहार, क्षत, पु (वृक्षात्) वक्ष से, झाड से, वगु 8091 बच्छह ३३६। वठा ,दे) बण्ठ अविवाहित, सक् (पश्यति) दचता है, घउत्रष्ठ १८१ । १ ७४४ वं एए छाइ कम प्र (वण्यते । वणन किया जाता है,३४५। अक (त्रस्वति) हरता है, व्यव्यव 1861 कम प्र (याद्यते) बजाया जाता है, वतनक न बदनम्) मुख, षञ्जङ् १०६। ३०७। वि (बाइनशील) बजने के स्त्रभाव वाला, वत्तडो स्त्री (वार्ता) बात, ४३२। घउत्रश्रुड वदली न (दे) (बादलम्) बादल, मेघ, घटा,४०१। 883 I वदेइ मक (यन्ते) बन्दन करता है चन्तरइ सक (कथयति) वहना है, ₹ 1 ४२३ । " वज्ञरिश्रों वि (विश्वत वहा हुआ, वमालइ सक (पुछयति) इकट्टी बरता है, २ । 9001 " वजनरिस्या स क (कथिता) वह करने, वफ = बफइ अक (बलति) छौटता है ٦ ١ 1709 " वजनरन्ती व कु (फथयन्) कहता हुआ पुवि (वमन्) हवर्मी बम्म २ । **२६४।** े वरनरिश्रब्य विधि कु (कयवित यम्) कहना चाहिय, पु (म मथ) कामदेव, वस्मह ३४० । २ । पु (मामय) कामदेव, 188, 808 1 घम्मह न (कथनम्) कहना, कथन, वयसियहु स्रो (वयस्याम्य) सलिया से, **घरत्र**स्य 149 1

वयगु न (वदन) मुक्त, ३८६ । वलगाइ अक (आरोहति) चउना है, 1 205 '' वयसु न (बदन) मुझ, 340; यलगां न (बरणम्) पत्त बरना बरना, 1575 " घयगु न (घचनं) धचन, न (बलनानि) बाहा टेढ़ा पना, 1 07 F वलगाइ 842 F " वयणाह न (यचनानि) यचन शहर, 380 I बल[न्त अक (ज्वसन्ति) जलते हैं, ¥94 I वध्यिदे वि (वर्जित) मना निया हुना, ं वालिस वि (ज्वालिन) जलाई हुई, प्रावानिन, ४१०। २९२ । वर्=वरइ सक (वृणीति) पसन्द परता है २३४। त्रलय पुन (वलय) भूडी कंहण, X4X 1 " बारिष्टा वि (बारित) रोशा गवा था, ३३० ४ ८। वलया पु न (बलयानि पूहियाँ, **347** 1 " निवारेष्ट्र सक (निवारयति) निषेव करता है **२२** । बल्नह वि (वल्लभ) प्रिय पति, , 888.1 " सवरइ सन (सवरति) समेटता है रोनना है, " वलनहरु वि (वल्लमक) प्यासा, ८२ । ३५८, ४२६। " सबरेबि, ह कु (सबरीतुम) समेटने के लिय, ४२२। " बल्तहड् वि (बल्लभे) विव में ब्रिय र निवे, ३८३। " वर वि (वर) श्रेष्ठ, भावा पनि, वयसाड पु (क्यमाय) धमा, क्योपार, ३८५ ४२२। 3001 " वर म (वरं) वरदान की, ₹₹₹ [वश पुन (यश) कापूमे, कारण से, २८८ । " बरही वि (वरम्य)श्रेष्ठ के 8881 वशाहे वि (बनाया) रहने वाली का, KY3 I " वरेहिं वि (वरै) श्रेष्ठों से, ४४२। वरमस वि (बरवल) प्रिय, स्नेही, 1 2441 चरहाडइ अर (नि सरति) वाहिर निवालता है, ७९। वि (वत्ना) त्रिय, लड्डी षश्चा 1.21 वरि स (बर) थेष्ठ, वस्--Yo ! च(रस पुन (वप) बारह महीनों का समय, ३३२, " वसन्ति अक (वसति) रहते है, 17:5 " निवसन्तेहिं वि (निवमदिभा) रहते हुओं से, ४२२। 8161 ब्त् े— " पदासइ सक (प्रवसनि) अप देश की जाना है, १५९। " पत्रसन्तेश वि (प्रवनन्तेन) पर ना में रहने हुए है, " निष्यत्तइ अब (निवतते) सीटना है, ३९५ । " नित्रष्ट्राइ वि (निवृत्तानाम्) पीछ आये हुओ का, ३३३, ३४२, ४१९ । " प्रवमन्ति वि (प्रवमना) प्रवाम में रहन बारे के नाप, इइट १ 4451 'पयट्रद्र अक (प्रयतन) आगे यद्नी है, ३४७ । पुन (यश) कारण से, बत से, FYY ! " पवत्ते ह सक (पवतस्य, प्रवृति करा 3881 160, " विशिष्ण पुन (यनेन) वश स कारण से " विवट्टइ अर (विवर्तते, धतता है, गिर पराः) है, 3501 9161 " वसि पुन (वने) यश मे, कातू में, नियात्रण में, वध्--801 " बहुइ (बधते) बहुता है, २२०। 111 वसुद्याइ थक (उडाति) मृगना है, " परिश्रहृद्द अक (परिवधन) बदुना है, 3161 २२० । े चसुचाति अर (उडाति) मूनता है वप् ---180, " बसुच्रानि अर चडानि) सूमना है, " बरिसइ सक (वपति) बरसता है. 234 1 175 स्त्रा (बगुघा) पृष्यो, षसया अब (बसनि) सीटता है 905 8 यह_-" यहड स्त्री (बहति, बहते) धारण इरना है होता है। " बलाहु अर (वलामह। हम सुख पूषर रहत है, ३८६ 45¢ 1 " षश्चित्रह वर्गे प्र (उद्यते। धारग विमा जाता है, " बलन्तेहिय प्र (यसत मुख पूबर रहते हुओं से, स जावा जाता है, २४५ । ¥33 1 " बुब्मइ वर्ग प्र (उसने) पारण किया जाता है, स सक (गृह्णानि, प्रदेश करता है, 30F वसह 4821 षामा माता है। सर (आरोपित) जपर गढ़ाना है, 801 यसइ

" वाहिन वि (वाहित) प्राप्त हुआ है विकिशाह सक (विभीणाति) वेचता है, 3681 १२। ' उठबहृद्द सक (उदबहति) धारण करता है विकोसड जक (विकोशयनि) कोश रहित होता है, चटाता है, 1036 फैरता है. ४२। " निज्यहरू अर (नियहति) नवीह वरता है, पार पहता जिस हेड सक (विक्रीणाति) बेचता है, प्र**२, २४** । " विक म्ह्राइ सक (वित्रीणाति) बेचना है, 380 I 360 1 चहिल्ल र न दे) (बत्मनि) माग में, व (बाधम्) जल्दा, ४२२ । विचिष ३५०, ४२१। विच्छोलड मक 'कम्पयति) कपाता है बह स्त्री (वध्) बह पुत्र की पत्नी, 9E 1 8081 विच्छोहगर वि विक्षीमनरम्) घनराहट करने वाली वा व (वा) अचना, 3021 बाह अक (म्लायति) सुसना है, 141 को, ३९६। विन्छोडवि स कु (विन्छोट्य) छुडा करके, ४३९ । वाएं पू (वातेन) हवा से, १ ६४६ विजयसेनेन पु (विजयसेनेन) नाम विशेष, विजयसेन से, वाणार्सिह की (वाराणसी) बनारस नामक नगरी को, 1886 8851 विञ्जाण पु (विज्ञानम्) विशिष्ट प्रकार का विशेष ज्ञान, प् (वायस) कीमा, -471 वावस् 1 50F वार अ (बारम्) बार बार पुन पुन ₹८३, विट्टालु पु (दे) (अस्पृत्य ससग) अपनित्र सगति, **४२२** 1 वारि हारे) दरमाने पर, ४३६ । 8251 बिडविड्रई सक (रचयति, बनाता है, ९४ । सक (वालपति) मोडता है, वाविस लौटाता है, ब्राधह 440 I बिढनाच वि (अजितम्) मनाया हुआ, पैदा किया हुआ, बावम्पष्ट अक (श्रमकरोति) परिश्रम करता है, ٤ć **४२२ ।** वात्ररेड अक (व्यात्रियते) काम मे जगता है 681 विदत्तं वि (अजितम् कमाया हुआ, पैदा हिया हुआ, सक (व्याप्नोति) व्याप्त करता है, 1 \$89 3461 बावड यासारित स्त्री (वर्षारात्रि) वर्ण ऋतु भी रात मे, ९५। चिरुष्पड्ड वम प्र (अज्यते) पैदा किया जाता है, २५१ । न (वासम) निवास, रहना 8401 विदयइ सक (अजयति) उपाजन करता है, 1001 बास् पु (व्यासेन) व्यास ऋषि से, विद्वविद्युद्द कम प्र (अज्यते) पदा विया जाता है, २५१। वासेण 4881 विणासहेर्षे पु (विनाशस्य) नाश ना, सक (ब्याहरति) बोलता है, कहता है, ७६। ४२४ । वाहरइ वाहित्यह कम प्र (व्याह्यते) बोला जाता है, विस्तु अ (विना)रहित, ३५७, ३८६, ४२१, ध२६, ४४०, २५३। 8881 चि अ (अपि) भा, ५३२, २३४, ३३५ ३३६, विस्थार पु (विस्तार) फैलाव, इत्यानि । **38**× 1 ३४७, ३४१, विद्ववर्द सक (विद्ववति विनाश करता है, क्षत्र करता विश्रपृद्ध सक (विसवदति) अप्रामाणित करता है १२९। 8. 8851 विश्वमभद्द अक (विज्ञम्मति) विक्सित होता है १५७। विधिणा पुस्ती (शी) (विधे) भाग्य का, भेद का, विद्ययवस्म पु (विजयवमन्) हे विजयवमन् । २८२, ३०२। २६४। विमासित्रा वि (विनाधिते) नष्ट हो गये, ४१८ । विश्वलिद वि (विगलित) नीचे गिरे हुए, 2661 विष्यगालइ प्रेर (नाशयति) नष्ट करता है, पु (विकाले) सभय से पूर्व मे ही, 311 ইডড विध्यिष्ठाश्चारत वि (विप्रियकारक) व्रश करने वाला ३४३ ४०१,४२४। विद्यसम् वि विनीण) बिदारा हुवा, अभित, ४४४। विदिवय वि (विदिय) जो प्यारा न हा, **4231** विउद्य सक (नश्यति) नष्ट रूरना है ₹ 1 वि (विमल) स्वच्छ, निमल, १८३ । विद्योए पु (वियोगेन) जुदाई से, विम्हश्रो पु (विस्मय) आश्चय, 8881 1 80 विद्योह (वियोगे) जुदाई मे, विम्हह्ह् पू (विस्मये) आश्चय मे, ३६८ । ध२०।

विख्याहले पु (बिद्याघर) एव वानि का देव, २९२ विरइ शक (गुप्यति) (भनिक्त) व्याकुत होना है तोडवा है, १०६, १५०। विरमालइ सक (प्रवीक्षते) राह देखता है, विरत (विरल) मोई नाई, कुछ एन, ३४१। विरला वि (विरना 1 11 विरङ्गई सक (तनित) विस्तार करना है,फलाना है, १३७ षु (विरह)वियोग जुदाई, ४१५ ४२९ ४४४। विरह प्र(विरह), 1 858 विरहहा प्र (विरहस्य) वियोग की, जुदार्श्वी ४३२। विरहिश्यह वि (विरहितानाम वियोग वालों के रहिन योता के, ३७७ ४०१। विराष्ट सक (विलीयते ;नष्ट होता है पिघलना है ५६। विरेश्रह सक (विरेचयति) मल यो बाहिर निकालना 35 1 जिरोत्तइ सक (मध्याति) विलोहन वरता है, 1 353 विसम्ब अय (विलम्बस्य) तू देशी कर 1 657 विलासिणीउ स्त्री (विशासनी) आनंद देन वासी .861 धिलिउनइ प्रेर (विलीयते) लजा की जाती है नाट हाना 食 欠7、8 ८1 बितुम्पइ सन (बाबति) इच्छा नरता है 1881 विलोट्टइ अन (विसवदति) वह अनत्य सावित होता है १२९। विषइ स्त्री (विषद्) थिपत्ति, दु स 8001 विवट्टइ अप (वियतन) यह घमता है गिर पडना है 1161 विवरीरी वि (विषरीया) उस्टी, अगुरूत नहीं 8541 विश्— ^{3'} पिबिट्टा बि (परिविष्टा) (गुद्ध में) मन्तितित हुए " प्रतिमामि सक (प्रविशामि) मैं प्रवश करता हूँ 1005 "पित्रशामिसक (प्रविभागि) मैं प्रवेत करी है " प्रविमद्द सक (प्रविगति) यह प्रवेश करता है, १८३। " पविशद्ध सक (प्रविष्ठातु) वह प्रवेश करे, १०२। " पर्योसइ स्व (प्रविश्वति) वह प्रवेत करता है, ४८४। विश्व स्त्री (बीवा) बाबा विगय, ' " पहारीमु मक (प्रदेशामि) प्रविष्ट हो जाजगी, ३९६। चीलियियो पु (बीरविन) महावीर खामी,

" पइट्ट वि (प्रविष्ट,युना हुवा, १४० ४३२, ४३३। ' पहरूच वि (खायवित) जमा हुना, बटा हुमा ब्यह " पर्हाट्ट जि (प्रविष्ठा) प्रवेश पाई हुई, विसवयह सब (दिसक्ति) वह अनत्य सावित होता है, विमगिएठ स्त्री (विष प्रवि)विष की गांड, ४ ०,४ रहे। विसद्रड अरू (दर्नात) पत्रता है, दूटना है, - १०६ । विसएन्न वि (विसप्तृता) अध्यवस्थित, पप-भण्, *** 1 विसम वि (वियम। जो सम न हो, वठीर, ६५० 1026 ' विसमी वि (विषम्) दारण कठोर अनुमान, ३०९। " विमसी थि (विषमः) समान नहा, Yet [" विसमा वि (विषमा) 1111 विमहारिकी वि (विष-हारिका = जनहारिका) बहर दूर करन वाला. ¥111 विसाझो पु (विवाद, शेन, दुन, 1441 " विमास पु (विषान) मानसिक-नाप, ३८५, ४१८। विसागो न (विषाण) गींग, हाथी वान. 3061 विसाहित वि (विद्यापितम्) जिह्न विया हुआ, ३८६, ४१६ विसुर्ष् अन (गिद्यति) सेद अनुमन न रना है, १३२, ३४० विस्न शह अब (शिवन) सु सेंद अनुभव परता है अररा विस्त षु (विष्रमुम्) भगवान् विष्यु का, १८९ । विस्मये पु (विस्मये) आध्रय म 1259 विद्वलिख वि (विह्नातिन) पबराया हुआ, 2441 विह्या पू (विभव) या-मम्पत्ति, 4 . 1 "विह्ये पु (विभवे) धन-मन्मति में, 8351 ,, विद्धि पु (बिमव),, 4161 विहमान्त भार (विवसन्ति) शिसने है पूर्ण है - १५ । विद्यारा पु (दे) (विमातम) प्रमाल, प्रान राम, राम £7, 870 1 विद्वि पु (विधि) माग्य बह्मा, १८५ १८०, ४१४। 1 6.3 जिहारइ अर (प्रतीयते) राह देगता है, 2161 विहेइ जरु (बिमेनि) दश्या है 20 1 बिहाहइ छन (ताब्यति, मारता है। चीतइ गक (वीबपति) हवा बरता है यहा बरता है ¥ 1 175 # 1661

[श] चीस वि (विनित) दस और दम ≈ धीम 823 [धीसरई सक (विस्पर्शन) भूनता है. 1398 10 बीसालई सक (मिश्रयति) मिलाता है, ٦٤'١ शक--" मकड अक (शक्तीति) मकता है समर्थ होता है ८६. सव (प्रजिति) जाता है, 3921 230 827, 888 1 , ब्रुझेर्षि सक् (ब्रजित्वा) जारर के. 3971 " मिझ्बेड गर (शितने) मीवता है, पढना है, ३४४। , बुब्नेप्सिए स ह (यजिरवा) जानर के. ₹९२ | " सिक्खिन सा (शिक्षाने) मीयने हैं, पढते हैं ३७२। 844 I वृत्तव वि (उक्तम) कहा हुआ, " मिक्ख न (शिक्षाम्) शिक्षा को, ४०४, ४०५ । वि (विषण्ग) दु खी, खिन्न, वुष्ठर 8281 शकायदाल तिस्त न (शकावतार तीर्य) एक तीथ का सक (खबयति) जडना है वंघहड 49 1 नाम. 308.3081 ਬੇੜ पु (वेद) हिन्दू धम म आदि सम 1268 वि (सचिन) इत्टठा किया हआ. शिश्विरे वेगाला वि (भिन्न) अलग, पृथव, -49 1 वि (गत) भी, 8801 वेश्वड सक (व्यय करोति। सच करता है, 888 1 যাহ वेदह शम--सब (विष्टते)वह लपेटता है, घेग्ता है 3261 " समुद्र अक (शाम्यति) वह शाम होता है, बेदेह सक (वेडटते) लपेटना है, 281 " नवममड सक (वपशाम्यति वह शान होता है, २३९। चेढिङाइ ब्रेट ,वेध्यवे) सपटा जाता है, 1998 "उवश्वादि अन (उपनाम्यति) वह शान्त होता है, २९९। वेण न (वनन) धवन, शब्द बोल, ₹7€ 1 (श्रमण) माधु तपस्वी, शमरो वेतसो पू (बेतस) ब्ल-विशेष बेंत वा मूल ३०७। पु (म्वजनानाम) अपने आदिमियो ना, ३००। शयणाह बेयु-बेबड अक (बेबते) बापता है, 1 089 वि (सक्लम) सम्पूण, पूरा, 266 1 शयल वेमयइ सक भारति भौगना है नाइना है 1 305 वि (महाम) समान जैमा, . 05 1 वेरिश्च शलिश वि (वरिण 'दूश्मन, शत्रु ४३९। शब्बद्धाः वि (सबज्ञ) सब कुछ जानने वाला, 1 895 वेलवड सक (बञ्चयनि) ठगना है, पीड़ा बरता है शस्त्रजाहे वि (सार्थवाह) समूह का मुखिया, मध नायक, 159 366 1 वेलवह सक (उपालमने) उलाहना देता है, १४६ । न (शण) चास, तृण, 7681 शस्य अक (रमत) भीडा करता है खेलना है,१६८। चेलह वि (सहस्र) हजार, ঘটপ 8801 प् (वप) काडी का पहिनाव हेस, ३८५। वेस शामक्वारा पु (सामाय गुण) साधारण गुण, २९३। वेहवड सक (बश्चयते) ठगता है, 631 वि (स्वामी) मालिक, शामी ₹०२ (चोक्षःइ सक (वित्रपयित) विज्ञति कराता है, 156 पु (सारम) पनी विशेज, सारस, शालशे **326 I** बोउतड सक (बीजयति हुन। बरता है, 41 न (शिर्म्) माया, मस्तिष्क, शिर, शिल २८८ । वोलइ सक , मच्छति , जाना है, 1 675 शिष्--बोलीओ वि (अनिकात) बाता हुआ, २५८ । " सीमड सक (नेपर्यात । बचा रगता है, २३६। वोसरङ सव (विकसति) खिलता है, 1881 " निसिद्ध कु वि (विभिन्ध) विभेष प्रवार वा, 3461 बोसड़ो वि (विकसित) विला हुना, १५८। शुपित-गढिदे वि (मुपरीगृगीत) अच्छी तग्ह से ग्रहण वोसिरामि सक (ब्यूत्-प्रवामि) मैं परिस्थाम करता है, किया हआ, ३०२। २२९ । शुभ-न (व्रतम्) नियम, भर्याना, प्रत्याख्यान, घतु " सोभित वन (गोमत) गोमा गाता है, \$08 1 48Y 1 "सोहड अव (शोभने) शोमा पाते है, 8881 वासु पु (न्याय) 'रामायण के रचियता महा-श्मिलाए सा (मुमिलायाम) | बच्छ तर्गो बानी ३०२ ।

कवि, ३९९।

(नाम विनेष)

416

HIES

साइट्टइ

सहर

सरेहिं पुन (सरोभि) तग्लाबा से,	४२२।
εq [*] —	
" उवसप्पष्ट् सक (उपसपति) पास म सरकता	39 1
" उद्यशापणीब्या वि (उपसपनीया) पात में स	रक्न
	\$021
सलज्ज वि (सलत्रम्) लज्जामहितना	8301
सल्ह्ड सक (स्लामत) प्रशता वन्ता है,	133
सिताल पुन. (सितिन) तत पानी	3611
'' सळ्ळियुन (सलिल) जल, पानी	1001
सिलल बसर्यं ७ (सलिल यमनम, पानी वाला व	
•	101
मलोग्गी वि (सलावण्या) मौडय वाली,	840 1
सस्तीराषु वि (सत्तवण्यम्। सुदरता से युक्त	8881
महाइउँ स्त्री (सल्ल्बी) बृल विनेष की,	1 036
'सटलइहिंस्ती (सल्पक्षीम) सल्तकी नामक वृ	
	ر ٔ دی
'सञ्ब वि (सव) सव,	¥22 I
	63 61
'' सञ्बद्धा वि (सबस्य मबस्मी) सबदा मबके लिय	
''सञ्बहिंबि (सर्वे । सभी मे,	8501
वब्दग वि (सर्वाङ्ग) सपूण, नवनागीर न्यापा	
	8121
सब्बों वि (सर्वाङ्गेण मर्पा, रास, स्पूर्णः	
	1 98 1
सर्व्यगात वि (सर्वाही) सभी वर्गो वाली,	1246
महब्ब्य्ली पु (सबन्) राष मुख्यानने वाला	1031
सञ्चासराषु स्त्री (सवाहान) मन कुछ सा जाने	वासा
शनिन,	899 : J
समयोदी वि (सस्नेहा) प्रेम पहित्र,	3 ६ ० ।
सप्तरोरी दि (समरीर) मरार सन्ति,	₹ ₹₹ 1
मसहरु पु (शगपर) च द्रमा,	४२२ ।
मिस पु (शनि) नग्द्रमा ३८२, ३९४, ५१८	483
समी पुु(सती) याप्रमा	***
ससिरेह की (गनिनेमा) अदमा की सरीर,	3,81
मह्ू '	· ·
" सहसद्भ अर (सहित्यो) महन कीया,	४२२ ।
"सर्देव्वर्त विधि. मू (गोउप्प) महन करन वे बी	4
į.	110 FY

सद्घहि अव (शोभन्ते)शामा पाने है, सहसत्ति अ (सहमा इति) अचानक ऐसा सदाव पु (स्वभाव) प्रकृति, निर्म सहि स्त्री (सिन महेनी ३३३, ३०९ ३६०, ११८, Ros Ada Aso' Att' सहिए स्त्री (सक्षिक) हेमन्त्री 146 1431 सर्हें अ (सह) साव सा स्त्री सव (सा) वह, 442 ¥441 साम्बद्ध सक (बपति) सीवता है, सेनी करना है १८०१ सामग्गइ सव, (शिष्यति) भाविङ्गव करता है. सामन वि (सामान्य) साधारण सामयइ सक (प्रशिक्षते) राह देणता है सामला वि (इयामल) माला वण वाला वि (इयामला) काला वर्ण वाली सामलो सामि वि (स्वामी) मालिक, 1418 845 साभिच वि (स्वामी) मालिक, अधिपति, मासिद्य वि (हे स्वामित्) हे मारित ! सामिश्रही वि (स्वामिन । मालिक के, वि (स्वामिम्य) मालिका म, सामिद पु (सागर) समुद्र, सायर 354, ¥8* I सायरहो पु (सागरस्य) समुद्र वे मायरि य (सागरे) समुद्र मे यु न (गार) धन, ग्याम, इन, पामार्थ, ^{छत} सार सब (प्रहरति) योग बरा। है। सारह सक (गमारवयति) गाफ बरता है हो ह गई सारयह बरगा है पु (मारम) वनी विषय, वयु विषय ३३० । सारम मार्दिक्त् न (साहस्य) समानता, मरीसाई, वु म सारम) स्याय मार, वर, साद वि (सव। सब, साव पु (बावण) संवतं का सहीता, सावगु 163,3611 षु (श्यासन्दर्भागि हो, सास मन (क्यमति) बहुवा है,

सब (संगोति) समेटना है।

व (मह) साय,

अक (राजते) गोमा पाना है,

\$\$\$ 1

t** 1

1681

4421

1508

1718

8.51

154:

\$\$# i

₹¥¥ I

246 |

845 1

₹¥* [

1441

SEX!

1611

X551 411

• Z I

Yet 1

354 1

A56 1

323

1111

7 1

431

सक (मवणोति) सवश्य करता है, ८२। साहरह वि [सव] सभी, सब, ३६६, ४२२ । साह सिंगह न (भृगेभ्य) चोटियो मे, ३३७ । सिच्-"-मिंबह सक (सिञ्चित) सीचता है छिटक्या है ९६, २३९ € " सेश्रद्व सक (सिचिति) भीचता है, ९६ । " सिंतित वि (सिंसिक्तम) भीने हुए, गील हुए ३९५ । मिडिनरीए वि (स्वदन शीलाया) पसीन वाली का २२४। सिद्धत्था विप् (सिद्धार्थान्) मिद्ध पुन्यो नो, ४२३। मिध्---" सिडमह धर (निष्यति) मिद्ध होता है २१७ : " निसेहइ सक (नियेधित) निवारण करता है १३४ । सिनात वि (स्नातम्) स्नान विये हए का ₹ 68 4 सिप्पइ कम प्र (मिच्यते) सीवा जाता है २५५ । सिम्पई सक (सिश्वति) सीवता है ९६ । सिम्मो पु(भ्रोदमा) कफ दारीर की घातु विलय ४१२ , सिक्त न (शिर) माथा, मस्तिष्क 8841 , सिरेशा न (शिरमा) माथे से, ३६७ । , सिरे, सिर्मिम, सिरिम न (शिरसि) माथे पर माथे 886 1 सिरि न (शिरसि) माथे पर, 853 -841 सिरि स्त्री (जी) लहमी, 1908 00\$ सिल स्त्री (शिला) यहा पत्थर विदीप 3391 मिलायलुन (शिलप्तन्म) पत्यर का ऊपरी भाग, २४१। सिलेसइ सक (श्रिप्यति) आलिङ्गन बरता है १९० । मिवतिस्य न (शिवतीयम) शिवजीवाला नीयस्यान ४४२ सिंबु पुन (शिवम्) मोक्ष को 880 l सिञ्चइ सक (सीव्यति) सीता है साधता है, 4 0 1 सिनिर पु (शिशिर)ऋतु विशेष माघ पागुन की ऋतु ४१५ सिसिरु पु (शिशिर) " " 3201 सिद्द सक (स्पृह्विति) इच्छा नरता है, ३४ १९२ / सिद्धिद्वात् (शिक्षिक्यनम्) आगपर पकाना ४३८। सीत्रल वि (शीतल) उडा, शान, 8841 सीत्रालु वि (शीतन) ठडा, शान्त, 383 1 सोध्यला वि (शीतला) ठडी, शान्त, **∄**8∮ 1 सीमा स्त्री (सीमा) हद, मर्यादा, सीमा, 830 I सील न (शील) धम, वत, ब्रह्मचय, 43611

भीळ न (शीलम्, "' 3061 मीतइ सक (कथयति) बहता है, ٦1 सीस पुन (शीपम)माया,(शीपें)माथे पर,३८९,४४६। सीसो प् (शिष्य) चेला, २६५। (सिंह / नातुर, सिंह, 80E 1 सोह (सिंह) नाहर, सिंह 8861 सीहही प (सिंहेन) सिंह से, नाहर से, ४१८ । सव (स) वह, २६७ ३८३, ४१४, ४१८, ४२२ स धन [स्विविति] सोता है, 1 389 सथइ सुश्रहि अक (स्ववित) सोते हैं, ३७६ ४२७। वि पु [सुजन] सज्जन पुरुष २३६,४०६। सुश्रम् वि पु (सुजनम्य) अच्छे बारमी का, ३३८ **सभणस्य** 304, 369, 8911 सहरोहिं वि पू (सूत्रने) अच्छे आदामयो से, ४२२। सुइणुन्ति न (स्वप्नातर) स्वप्न-ग्रवस्था मे, **8531** न (श्रुतिशास्त्रम) बदशास्त्र, सइसत्थ ३९९ । सुकस्म न (सुरुम अच्छावाम, 7581 सकिउ न (सुबूतम्) पुण्य, पवित्र बाम, ३२९ । न (सुकृतम) ' " 3381 सुकिद् न (सुकृतम) " ३२९। सकद सुकदि अरु (शुष्यन्ति) सूखते है, ४२७ । सुक्ख न (सीस्यम) सुख, 3801 सर्घे न (सुखेन सूख से, ३९६, ४१०। सङ्गो पु (सूय) रवि, अर्दित्य, ३१४। वि (सुष्ठु) अच्छा नेष्ठ, सुद्दु ४२२। पु. (शुनक) मृत्ता, सुगाड 885 I सन्त न (सूत्रम्) सूत्र शास्त्र, २८७ । सुनुमा स्त्रो (स्तुपा) पुत्र वधू, 388 1 वि (सुदर) रूपवान्, सुन्दर 3861 सुपलिगढ दो वि (मुपरिगृहान) अच्छा तरह मे प्रहण किया हुआ, २८४। सुपुरिस वि (सुनुरूष) अच्छा पुरुष, ३६७, ४२२। सुभिच् पु (सुभूत्य अच्छा नौकर, 5381 न (स्मरणमः) याद, समृति, सुमरगु 8251 सुन्मिलाए छो (सूमिलया) छो विशेष से, 2681 सुच्यो पु (सूय) रवि सूरज, २६६ । न (सुरतम्) मैधुन त्रिया, ३३२, ४२०। सुरउ सुबंसह पु (सुवशानाम्) अच्छे वदा वालों का, ४१९। सुवरण्रेह स्त्री (सुवण रेखा) स्रोने की लकीर, ३३०।

सुइच्छडी स्त्री (सुनामिशा) मुत महिन बैठर ४२२ । मुहन्द्री स्त्री (मुझाशिका) ,, ५५७ । स्हन्दिखहिस्थी (सुत्रामिकाण मुस्र स्त प्रदेशा मे ३७६ ४२७। पुन वि (मृगग) अच्छा भागः यात्रा,४(०) सुहासिउ न (सुभाषितम्) अच्छी याणी, सुदिया पु वि (ह मुन्दिर्) हे मुल राज, ₹+3 : सर न (मुयम्) सुख, आराम, 340, 888 1 म्--" सबई सब (सूते) जन्म देना है, **⊃**きき | गक (प्रमवति) ज म देती है, बच उत्रश्न करती है 7371 सक (भनिक्ति) भौगता है लोटना है, १०६। सृहद् प्र (मूप) मूरज र्गात, सृर V66, सप, (भविता) नागवा ह, ताइवा है, 10६ म्रह में सव (तस्य) उसवा, २८७ । संव पुन (मल्ल) भाने वा १८७ । सेवइ सब (सेयते) सेवा करता है, ३९६ । मेसहो वि (दोपस्य) बाक्ती बच हुए वा, 807 संहर् अक (रहयनि) नाम बरता है भागता है 1001 सेहरू पु (दोलर) शिगा, घोटी, गस्तर, YYE I मो सव (स) वह २८० इरर इरन नक्त, देशक, दे६७, ७० दत्यानि । मं।ऽपि सच (सोऽपि) पह भी, 908 F सोरखह न (सीम्पाताम्) मूर्गो ता, 3371 मोमन ा (शोभनम) सुदरना, 1305 सामग्यहरम् न (सोम ग्रहणम्) चन्द्र पन्ना ३१६ । मोल्लइ गर (पानि) पराना है, €01 सर (शिविति) पॅक्ना है, 7.31 मोह स्त्री (शोमाम्) भागाका मृद्यता ना ३८२। ₹मस्— " प्रश्यलिद सर (प्रम्सलि) भूता है। 266 ¥7---" धुणुइ गर (स्तीति) स्युति करता है **98 1** " शब्द ६ कर्मप्र (स्तूपन) स्तुति का जाति है ५४२। र ध्रिजिक्षद्रसम् प्र (स्तूपोः स्तुति ना जाति १,२४२ र स्त्या--" सलाइ धर (मंस्पानित) आवार करता है, मनत चरता है

" सात्राय वि (सम्त्यान) निविद, सात, सात्र, १६। स्या--" बिद्रह बर (विष्ठति) टहरता है वैक्रा है, " चिट्रेंदि अन (तिष्ठिति) टहरता है बैठना है " चिप्ठि धर (निष्ठति) ठहरता है बैटता है, २९८, "ठाइ धर (तिष्डनि) ,, , 14, 8141 " ठम्ति अक निष्ठति) ठहरत हैं, बैडन हैं 1375 " ਰਿਤ वि (स्थित) ठहरा हुआ, ¥ 8, 3411 '' ঠিশ্ম র वि (स्पिन) ठहरा हुआ, 441 '' द्विष वि (स्थित) रहा हुआ टट्टरा हुआ, YELI " द्रिश्र वि (स्थिति) " " " 1361 '' ठिख वि. (स्थितम्) ग्ह हुए की, ठहर हुए भी, ०४, 1/11 "द्रिश्रही वि (स्थितस्य) रहे हुए मा, YH ! " ठित्राह वि (स्थितान्) रहे हुमाना, < ₹ 1 " ठिदो वि (स्थित) रहा हुआ, ठहरा हुआ, (**) '' ऊर्चित्र वि (स्थितम्) रह हुए को टल्रे हुए को, 👯। "चिट्रिक साम्र (स्थित्म टहर नरने, 111 " ठाउ ल स मु (स्थिखा) ठहर करा, 141 " ठपड् सक (व्यापित) स्थापना करता है 243 1 " सदृष्ट् अव (उत्तिष्ठत) उठता है, शहा हा है, १०। " उटिश्रा वि (उत्यम) उटा हुआ, गड़ा हुआ, 24 1 133 " चरियाप्री वि (चरियत) ' उद्दिखाउ वि (उतिया) " " YEE, Y'E " उद्गोबद्या वि (उरिवापित्र) उराया हुमा, 9\$ 1 ' चब्रहितदे वि (उपस्पित) हाजिर हुआ 4 f 1 " पट्टिक्सी वि (प्रस्थित) जिमी प्रस्थान क्या ही यहाँ। " परियात्रा वि (प्रस्थित , जिसी प्रस्पान हिया ही पर " पट्टबद् सक (प्रस्थापत्रति प्रस्थात बराता है अङ्ग " पट्टाबह सन (प्रस्वापमा)प्रस्थात बराता है जेवता है है " पठाजिलाइ समें प्र (परयाप्यन) भेशा हुआ होता है ४५२ " पहुचिक्रो नि अस्याचित्र) सेत्रा हुआ, प्रवर्तित, १६३ **432-**पुटुइ अब (म्युन्ति) विभवति पूर्णा है, इन्या है "पुड्य मर (स्ट्रारी) विषवा है पुरात है, हता है

हत्थें पु (हस्तेन) हाय से, " फोड़िन्त सक (स्रीटपित) फोडते ह, विदारण करते 366 I पु (हस्तै) हाथो से, 3461 €स्थिहि ४२२, /३०। " फाडेन्ति सर (स्फोम्बन) दो पोडते हैं 340 1 हण — " फुट्टि सक (स्फुट) पूट जा, फट जा, हु तु इसक (हन्ति) मारता है, घात वरता है, 8861 ४४२ । " 5% " हस्सद्ध सक (हन्ति) २४४ । सक (स्युटितानि। पूट गय, दूट गये, 1 525 " हांगुज़ाइ कम प्र (हयते) मारा जाता है, " मुद्रि ३५७ । २४४। सक (स्फूट) पूट जा, समर्--" हिंग्रिहिड सब (हिन्ध्यति) वह मारगा २४४ । "सरइ सब (स्मरति) याद बरता है, " हम्मइ वम प्र (हयते) मारा जाता है, 1885 98 I " सुमरह सब (स्परित) याद वरता है, " हिम्मिहिइ कम प्र (हिनिष्यते) वह मारा जायगा, २४४। 981 " स्मिरि सन (स्मर) याद नर, '' हम्तब्य विधि कृ (हत्तव्यम) मारना चाहिए, ३८७ । " सुमरहि सक (स्मर) याद वर योग्य है. २४४। ३८७ । "सुमिरिजाइ वम प्र (स्मयते) स्मरण विया जाता है, ' हुन्तू शास कु (हत्वा) मार वरके, **4821** ४२६ । ''हब्रों वि (हत) मारा हुआ २४४ । " विम्हरइ सक (स्मरित, याद करता है, हस्ति सक (ध्निति) वे मारते है, ४०६। ७४, ५५। स्त्रप्--सक (गच्छति) जाना है, 1 25 4 1 हममङ " सुद्राइ अक (स्विधित) साता है नीद नेता है,१४६। हयविहि वि (हतविधि) फूट तकदीर वाला, । ७४६ " सुन्नहिं अक (स्वपति) मोते हैं, ३७६,४२७। वि (हताश⁾जिसको आशा नष्ट हो गई हो वह ह्यास " सीएवा विधि वृ (स्विपतब्य) सीना चाहिये, ४३८। 3281 £1.--" हुर इस सक (हरति) प्रहण करता है, लेता है, २०९, [8] २३४, २३९ । अ (पाद पूरेण) पाद पूर्ति अथ मे आता है " हरिज्ञह वम प्र (हियते। हरण विया जाता है. २५०। £ " होरइ कर्मप्र (हियते '' 103 सव (अहम) मैं, ३३८, ३४०, ३७० ३७५ " हराविष्टा वि(हारिता) हराये गये हैं, ह उ " श्रासुद्द इ अक (अनुहरति) नवल वरता है २५९, ४१८ ३७९, ३९, ४१० / १ ४२० ४२२ इत्यादि ' अस्त्रहर्श्हें अक (अनुहरित) नकल करते हैं, ३६७। हरो पु (हस) सपेद वण वाला पक्षी विशेष " आहरइ सक (भाहरति) छीनठा है खाता है, २५९। 1 226 " बाहरइ सक (ब्याहरति) बुलाता है, ७६, २५६। सब (उत्थिपति) कचा बरता है उठाता है, हक्खुग्रइ '' वाहरिज्जह कम प्र (व्याह्नियते) बुलाया जाता है, २५३ 1888 " खबहरइ सक (खपह्रियते) पूजा की जाती है, २५६। हगे सव (बहुम् भैं, २८२, २९९ ३०१, ३००। " भीदरइ अव (मीहरति) पाखाना जाता है, थ (चेटी--आव्हाने) समय में बोला जाने समय में बोला जाने वाला शब्द विशेष, " परिहरइ सक (परिहरित)छोडता है, २५९ ३३४८९३ हळले ' पहरइ सक (प्रहरित) युद्ध करता है C8, 249 1 २८१, ३०२ १ " पडिहरइ सक (पुन पूरयति)किर स पूरा करता है, २५९ हण्ड सब (शुणोति) सुनता है, 461 " विहरइ प्रक (विहरति) खेलता है, ह्त्यडड पुन (हस्त) हाथ, 8-41 "' सहरह सन (सवृणोति) समेटता है, २५९ । हत्थडा पुन (हस्ती) दो हाघ ४३९ । हरि पु (हरि) विष्णु कृष्ण, 398, 420, 827 1 हत्थि पु (हस्ती) हाथी, गजे द्र, 1 \$88 हरिखाइ पु (हरिणा) हरिण, मृग, दत्थ (हस्त) हाथ, ध२२ । अके (ह्प्यति) प्रसंप्र हाता है, न्या ३३५

(हरम्) महादैवजी मो. ३२६ । हितपके न (हरवन्) , हलं 1101 अ (मायी-आमत्रएो) (सन्दी को युलान के न. (प्रदयी) हृदय म, हला हिदएख * * * ब (रासी बामपछे) अय में बोला जान दृति अब (नवति) होता है, हिचइ 21/1 वाला शब्द, २६०, ३३२ ३४८। अ (आइचर्यां दो तिनात) भारतर वार्तन के 51 हरलीहलेण न (दे) (विद्यामिण घवराहट मे, हटबडी समय म लोला जाने बाना रहा, १८२, १०३। 38€ 1 ल विदूषम द्वारा हव के मनद में केना की દી, દો, अक (भवति) होना है. २३८ । बाम्य हम्म, न्टर देवरे 575 न (दे) (होपितम्। लंबाम हला, पार व हस्— होमगग " इसइ अब (हमित) हमता है, १९६, २३९। CH. 11/ अ (लापु) निरवण, तके संगद, अरिवे का " इसन्तु अर (हरातु) हैंगे, 23 I जान वाना शत, १६० ३१२। " हसित्न सं ष्ट (हसित्वा) हैंस बरने " हस्सइ वर्षे प्र (हम्यने) हमा जाता है 1385 " हुएइ सम (जुहोति) हाम ग'रना है " हसिउज्ञह वर्स प्र (हस्यन) हैंना जाना है 286 1 " हुणिउन्नइ सम प्र (हुयते। हवन विया क्रांता है,रे४र " इसिचें वि (हसित) हैंगा गया, मजाक की गई, हुकारटण् पु (हुकारेण) स्थीतृति प्रशामक राष्ट्र है, ३९६ । हरर को समते, भा 26 1 हस्ती पू (हस्ती) हाथी, :11 पु (हुतवह) अनि नाम करता है, हुदवह हारवह सब (नागमनि । (हारमनि 111 पु (हुताशन) अगिन हुदामणो 311 104 सब (माटिट) साम करता है, हुलइ व (हि) निरचय रूप, ४२२ १ fe सम (क्षिम्ति) में कता है 231 हिध्ययं न (इदय) अभा करण, हत्य, बम प्र (हूयते) हवत विवा जान १ २४ हुस्बद् " हिप्पय म (हृदय अलगण, हृत्य 844 1 अ (शब्दानुबन्धी नियात अन् विशेष की हुहुरु " हिचार्ड न (हृदय) 1001 नकल वरत व समय में बोला बाते काती है न (एदय प्रदयम अन्तरण में " हिस्रह ₹₹¢, ٧٦. 3 ° 4. 670 1 44 वि (भूत) हुआ, हु छ। उ न (हेहन्या) ह नदय हि अन करण! '' हिस्रा 14 म (अप) भिर, हेट्ठ व (हिंधाति । हमिति । हेहि टिघरउँ म (हृदयम्) लृहय यो, ३५०, ३६७ ४२२। अत्र (अमविष्यत्) हुमा शाना, हुमा हेणा, हान्त छी प (हे हृदय !) ह हृदय !-५७ ४२२ ४३९ । दिवस 325, \$34, \$1 हिद्दिम्बाण स्त्री (हिडिम्बाया) हिडिम्बा नामक राम्यमिनी होन्तथी व ए (मवन) (मवत) हैना हुता, का २९९ । हिरुछाद्यदि सब (हिन्द्रवत अमग किया जाता है २९९। न (हृदयम्) हाय अमा काण, १९०। ा हीन्तव व ह (भवप्) शांता हुंबा, ११५, १०६ व **हितपक**

